

सिद्धपद (सिद्धपुर) निवासी-गीर्वाणविद्याभूषण

स्व० शास्त्री दुर्गाशङ्कर उमाशङ्कर शर्मा.

जन्म शक १७९८ आश्विन शुक्ल पूर्णिमा] [स्वर्गवास शक १८६३ भाद्रपद शुक्ल षष्ठी

प्रास्ताविकं किंचित्

समादरणीयाचरणाः विद्वद्वरेण्याः !

श्रौतस्मार्तकर्मानुष्ठानसहायस्यास्य बृहद्ग्रन्थनित्यकर्मसमुच्चयस्याष्टमीमावृत्तिं प्रकाशयतो मे भृशं मोदते चेतः। साम्प्रतमियमस्य पुस्तकस्याष्टमी खल्वावृत्तिः प्रकाशिता भवतीत्येव पुस्तकस्यास्योपयोगितायाः परमं प्रमाणमित्यतोऽस्मिन्विषये किमधिकेन वक्तव्येन।

पूर्वावृत्ताविवास्यामपि त एवाष्टौ विभागाः वर्तन्ते, यैरपेक्षितो विषयः सारल्येन श्रीमतां विदुषा हस्तगतो भविष्यति। परिशिष्टप्रकरणे महालय-मासिकसांवत्सरिकश्राद्धविषयोऽपि प्रदत्त एव। अपरं च यथापूर्वं पुस्तकस्यास्य सौन्दर्ये, वैशद्ये, विशुद्धिमत्त्वे च मया पर्याप्तं प्रयतितमस्ति। सचित्रोपवस्त्रेण दृढबन्धनेन चेदं सुबद्धं वर्तते।

यद्यपि सप्तम्यावृत्यपेक्षयाऽपीयमावृत्तिरतीव महार्घा समजनि तथापि मूल्यमेतस्य यत्किंचिदेव संवर्धितं श्रीमन्तो द्रक्ष्यन्ति।

नेदं निर्हेतुकं निरवधानं वा। एतदर्थमुपयुक्तानां वस्तुजातानां विदेशीयायातप्रतिबन्धवशादेव मूल्यममर्यादं वृद्धिं गतमथ च वैदिकविषयाणां सस्वरमन्त्राणां मुद्रापणमपि न सुकरं स्वल्पव्ययं चेति नाविदितं विदुषाम्।

श्रौतस्मार्तकर्मानुष्ठाननिष्ठवैदिकजगतः सश्रद्धां सेवां चिकीर्षुस्तथाच ग्रन्थस्यास्य लेखकस्य पूज्यपादस्य मम पितुर्वृत्तेः प्रवृत्तेश्च स्मारकमिदं निर्मिमिपुरहमिदानीं द्रव्यार्जनेऽनादरोऽस्मि।

एतेनैव मूल्येनेनोप्यधिकमहदक्षरैर्मुद्रापित (५२५) पञ्चविंशत्युत्तरपञ्चशतपृष्ठात्मकं पुस्तकं न कोऽपि दातुं प्रभवेद्यदि तत्रस्था मन्त्रा अपूर्णा न स्युः । मया तु कण्ठस्थप्रायान् 'इमन्निनऽइन्द्रो०' एतादृशान् मन्त्रान् त्यक्त्वा सर्वेऽपि मन्त्राः सम्पूर्णा एव निहिताः सन्तीति वैशिष्ट्यमस्य ग्रन्थस्येति ।

प्रयत्नेऽस्मिन् श्रीमन्तः सहृदयतया सहानुभूत्या च सत्कृत्य प्रोत्साहयिष्यन्ति मामित्याशासे ।

पुस्तकस्यास्य मुद्रणभारमुद्वहद्भिः मदीयपितृभिर्मित्रवर्यैः "श्री. शास्त्रीजी तुलजाशङ्कर धीरजराम पंड्या" इत्येतैर्महदुपकृतमिति सादरं कृतज्ञतामुरीकरोमि । एतन्मतानुसारेण मया च संशोधने सावधानं विहितेऽपि मनुष्यस्वभावेन त्रुटयो दृष्टिपथं गच्छन्त्येव इति स्वीकृत्यादरेण तत्सूचनार्थमभ्यर्थयामि सज्जनान् ।

अथाद्यावधि श्रीमद्भिरस्मत्प्रकाशनानि सर्वाण्यपि समादरेणावलोकितानि तथैतदप्यस्मदीयमवलोकयिष्यन्तीति विश्वसिमि—

पाठशाला मुम्बई ६ सं २०१० ता० २१-८-५३	विदुषां विधेय यज्ञदत्तः शास्त्री

दो शब्द

आदरणीय महानुभाव,

बृहद्ब्रह्मनित्यकर्मसमुच्चय की यह आठवीं आवृत्ति ही इस पुस्तक की उपयोगिता एवं आपके आदर की परिचायिका है। अतः इस विषयमें अधिक कुछ कहने की या लिखने की आवश्यकता मुझे प्रतीत नहीं होती।

सातवीं आवृत्तिके अनुसार मैंने इसे आठ विभागोंमें बाट दिया है ताकि कोई भी विषय आसानी से ढूँढा जा सके। अनुक्रमणिका को देखते ही आपको इस बातका पता चल जायगा। इस आवृत्तिमें भी अत्यन्त उपयोगी एक परिशिष्ट प्रकरण है जिसमें आप महालय, मासिक एवं सांवत्सरिक श्राद्ध पूराका पूरा पायेंगे।

इसकी पूर्व सातवीं आवृत्तिसे यह आठवीं आवृत्ति मुझे काफी महँगी पडी है, उसके कई विशिष्ट कारण हैं। इसके उपयोगमें आनेवाली कई चीजोंके भाव, विदेशीय वस्तुओंकी आयात पर प्रतिबन्ध आजानेके कारण दुगने, तिगुने बढ गये हैं यह आपको सुविदित है ही। आप यह भी जानते हैं कि वैदिक स्वरोंवाली छपाई भी बहुत कम प्रेसों में होती है और अधिक महँगी होती है। फिर भी मैंने इस पुस्तक में सफेद, चिकने कागज का ही उपयोग किया है और पहले की तरह इस पुस्तक को विशेष शुद्ध और सुन्दर बनाने की भरसक कोशिश की है। साथ में इसे, रंगीन, सचित्र उपवस्त्र (जेकेट) से सुशोभित एवं सुरक्षित बनाने की भी चेष्टा की है। पृष्ठ ५२५ हैं और बाइन्डिंग भी पक्का है। फिर भी इसका मूल्य बहुत थोडा ही बढ़ाया है।

इस पुस्तक के प्रकाशन के केवल दो ही उद्देश्य हैं। एक तो श्रौत-स्मार्तकर्मानुष्ठानप्रेमियों की सेवा करना और दूसरा, इस पुस्तक के लेखक मेरे स्वर्गीय पूज्यपाद पिताजी की धार्मिक वृत्ति-प्रवृत्ति का स्मारक करना।

इस ग्रन्थ में पहलेकी तरह सर्वसामान्य और प्रायः कण्ठस्थ मंत्रोंको छोडकर सभी मन्त्र जगह जगह पर मैंने पूरे दिये हैं। सर्वसामान्य

गणपतिपूजन और षोडश संस्कारविधिको देखने से आपको यह पता चलेगा। इस स्थिति में पूरे मन्त्रों के साथ यदि मैं इस पुस्तक को बडे अक्षरों में देने की चेष्टा करता तो इतने पृष्ठोंमें, इतनी कीमत में, इतने विषय, मैं हरगीज नहीं दे सकता। और पृष्ठसंख्या बढाकर इसकी कीमत अधिक बढा देना मैंने उचित नहीं माना। आशा है पाठक इस बातको सहृदयतापूर्वक सोचेंगे, समझेंगे और मेरे इस प्रयास को सहानुभूतिसे देखेंगे।

प्रस्तुत पुस्तक के संशोधन का पूरा भार मेरे पूज्य पिताजी के परम मित्र एवं वेदशास्त्रादि के पूरे तत्त्वज्ञ **वे. शा. सं. श्री. शास्त्रीजी तुलजाशङ्कर धीरजराम पण्ड्या** ने अपने सिर पर लेकर सहृदयतापूर्वक मुझे जो सहायता दी है उसे भला मैं कैसे भूल सकता हूँ ?।

इस प्रकार संशोधन में भी मैंने पूरा ध्यान दिया है फिर भी हो सकता है कहीं दोष रह गया हो। अत आपसे मेरी विनम्र प्रार्थना है कि क्षमापूर्वक उस ओर मेरा ध्यान अवश्य खींचें ताकि आगामी आवृत्तिमें मैं उसे सुधार सकूँ।

आप महानुभाव आजतक मेरे प्रत्येक प्रकाशनको अतीव आदरसे अपनाते आये हैं, इसलिये मैं आपके प्रति श्रद्धाके साथ कृतज्ञता प्रकट करता हूँ और आशा करता हूँ कि आप उसी आदर दृष्टिसे मेरी इस लघु पुस्तिका को अपनाकर मुझे प्रोत्साहित करेंगे, ताकि मैं ऐसे और भी ग्रन्थ प्रकाशित कर आप सर्व सनातनधर्मानुरागी, श्रौतस्मार्तकर्मानुष्ठान प्रेमी विद्वद्गण की सेवा करता रहूँ और पिताजी की विशेष प्रिय इस प्रवृत्ति को वेग देकर उनकी आत्माको प्रसन्न कर जब तक जीऊँ तब तक उनके पुनित आशीर्वाद पाता रहूँ।

वालुकेश्वर संस्कृत पाठशाला वाणगंगा, बम्बई, ६ अक्षय्यतृतीया सं. २०१९ ता. २६-४-६३	आपका **यज्ञदत्त शास्त्री.**

अनुक्रमणिका

॥ नित्यकर्मात्मकः प्रथमो विभागः ॥ १ ॥

गणपतिपूजन और षोडश संस्कारविधिको देखने से आपको यह पता चलेगा। इस स्थिति में पूरे मन्त्रों के साथ यदि मैं इस पुस्तक को बडे अक्षरों में देने की चेष्टा करता तो इतने पृष्ठोंमें, इतनी कीमत में, इतने विषय, मैं हरगीज नहीं दे सकता। और पृष्ठसंख्या बढाकर इसकी कीमत अधिक बढा देना मैंने उचित नहीं माना। आशा है पाठक इस बातको सहृदयतापूर्वक सोचेंगे, समझेंगे और मेरे इस प्रयास को सहानुभूतिसे देखेंगे।

प्रस्तुत पुस्तक के संशोधन का पूरा भार मेरे पूज्य पिताजी के परम मित्र एवं **वेदशास्त्रादि के पूरे तत्त्वज्ञ वे. शा. सं. श्री. शास्त्रीजी तुलजाशङ्कर धीरजराम पण्ड्या** ने अपने सिर पर लेकर सहृदयतापूर्वक मुझे जो सहायता दी है उसे भला मैं कैसे भूल सकता हूँ ?।

इस प्रकार संशोधन में भी मैंने पूरा ध्यान दिया है फिर भी हो सकता है कहीं दोष रह गया हो। अतः आपसे मेरी विनम्र प्रार्थना है कि क्षमापूर्वक उस ओर मेरा ध्यान अवश्य खींचें ताकि आगामी आवृत्तिमें मैं उसे सुधार सकूँ।

आप महानुभाव आजतक मेरे प्रत्येक प्रकाशनको अतीव आदरसे अपनाते आये हैं, इसलिये मैं आपके प्रति श्रद्धाके साथ कृतज्ञता प्रकट करता हूँ और आशा करता हूँ कि आप उसी आदर दृष्टिसे मेरी इस लघु पुस्तिका को अपनाकर मुझे प्रोत्साहित करेंगे, ताकि मैं ऐसे और भी ग्रन्थ प्रकाशित कर आप सर्व सनातनधर्मानुरागी, श्रौतस्मार्तकर्मानुष्ठान प्रेमी विद्वद्गण की सेवा करता रहूँ और पिताजी की विशेष प्रिय इस प्रवृत्ति को वेग देकर उनकी आत्माको प्रसन्न कर जब तक जीऊँ तब तक उनके पुनित आशीर्वाद पाता रहूँ।

धाल्वेश्वर संस्कृत पाठशाला बाणगंगा, बम्बई, ६ अक्षय्यतृतीया सं २०१९ ता २६-४-६३	आपका यज्ञदत्त शास्त्री.

अनुक्रमणिका

॥ नित्यकर्मात्मकः प्रथमो विभागः ॥ १ ॥

॥ नैमित्तिककर्मात्मको द्वितीयो विभागः ॥ २ ॥

॥ भस्मोद्धूलनरुद्राक्षमालाधारणभूशुद्ध्यादिमहान्याससमन्वितपञ्चवक्त्रपूजनप्रयोगः ॥

॥ देवीयागात्मकस्तृतीयो विभागः ॥ ३ ॥

॥ चतुर्थो विभागः ॥ ४ ॥

॥ यज्ञोपयुक्तविविधदेवतास्थापन—वास्तुपूजनात्मकः ॥

॥ पञ्चमो विभागः ॥ ५ ॥

॥ श्रावणीकर्मसहितविविधमन्त्रप्रयोगात्मकः ॥

॥ षष्ठो विभागः ॥ ६ ॥

॥ ग्रहशान्तिसहितषोडशसंस्कारात्मकः ॥

॥ षोडशसंस्कारप्रयोगः ॥

॥ विविधशांतिप्रयोगात्मकः सप्तमो विभागः ॥ ७ ॥

॥ स्तोत्रादिसंग्रहात्मकः अष्टमो विभागः ॥ ८ ॥

॥ परिशिष्टप्रकरणम् ॥

॥ सर्वतोभद्रमंडलम् ॥

ई. पूर्व अ.

उत्तर

वा. पश्चिम नै.

ॐ

श्रीगणेशाय नमः ॥

श्रीशुक्लयजुर्वेदीयमाध्यन्दिनवाजसनेयिनां ब्रह्मनित्यकर्मसमुच्चयः ॥

नित्यकर्मात्मकः प्रथमो विभागः ॥

॥ १ ॥ अथ मङ्गलाचरणम् ॥

आदौ श्रीगणनाथं सरस्वतीं चैव केवलं भक्त्या ॥ प्रणमामि शङ्करपुरःसरान्यथाविधि तथाऽखिलान्देवान् ॥ १ ॥ तातो मौनसगोत्रजद्विजवरः श्रीठक्कुरोपाधिभृद् गोविंदात्मजभाईशङ्करसुतः श्रीमानुमाशङ्करः ॥ मेनानाम्न्यपि चैव यस्य जननी गङ्गास्वरूपिण्यसौ दुर्गाशङ्कर आत्मजोऽहमनयोर्वन्देऽङ्घ्रियुग्मं मुहुः ॥ २ ॥ श्रीभाईशङ्कराज्जातः स उमाशङ्करो द्विजः । पिता मे सुकृती जन्मप्रदाता गुरुरादिमः ॥ ३ ॥ शुक्लोपाह्वमहानन्दतनयो देवशङ्करः ॥ दीक्षागुरुर्द्वितीयोऽगात्पश्चाद्भूत्वा यतिर्दिवम् ॥४॥ वेदान्तादिबृहद्विद्यां सरहस्यामुपादिशत् ॥ गुरुः श्रीचेतनानन्दब्रह्मचारी तृतीयकः ॥ ५ ॥ स्मृत्वैतान्त्रीन्गुरून्ब्रह्मनित्यकर्मसमुच्चयम् ॥ ग्रथ्नाम्यमुं शुक्लयजुर्वेदीयं द्विजहेतवे ॥ ६ ॥ क्रियते श्रमो मयाऽयं निःसंदेहं परोपकृतयेऽत्र ॥ यत्किञ्चिन्न्यूनं स्यात्तत्क्षन्तव्यं बुधैः स्वयं कृपया ॥ ७ ॥ इति मङ्गलाचरणम् ॥

॥ २ ॥ अथ प्रातरुत्थानम् ॥

ब्राह्मे[1] मुहूर्ते उत्थाय स्वकरतलावलोकनम् । तस्य मन्त्रः—कराग्रे वसते लक्ष्मीः करमध्ये सरस्वती । करमूले स्थितो ब्रह्मा प्रभाते करदर्शनम् ॥

---

१ रात्रेः पश्चिमयामस्य मुहूर्तो यस्तृतीयकः । स ब्राह्म इति विज्ञेयो विहितः स प्रबोधने ॥ रात्रेः पश्चिमयामे तु घटिका षट्क्रमेण हि । वेदाभ्यासे द्विजः कुर्यात्सा वेला पाठदायिनी

॥ ३ ॥ अथ भूमिस्पर्शः ॥

समुद्रवसने देवि पर्वतस्तनमण्डिते । विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे ॥ ततो मुखशुद्ध्यर्थं गण्डूषत्रयं कृत्वा नेत्रे प्रक्षाल्याचम्य गवादिमङ्गलानि पश्येत् । स्वेष्टदेवतां नमस्कृत्य प्रातःस्मरणं कुर्यात् ॥

॥ ४ ॥ अथ प्रातःस्मरणम् ॥

प्रातः स्मरामि हृदि संस्फुरदात्मतत्त्वं, सच्चित्सुखं परमहंसगतिं तुरीयम् । यत्स्वप्नजागरसुषुप्तमवैति नित्यं, तद्ब्रह्म निष्कलमहं न च भूतसंघः ॥ १ ॥ प्रातर्भजामि मनसो वचसामगम्यं, वाचो विभान्ति निखिला यदनुग्रहेण । यन्नेतिनेतिवचनैर्निगमा अवोचुस्तन्देवदेवमजमच्युतमाहुरग्र्यम् ॥ २ ॥ प्रातर्नमामि तमसः परमर्कवर्णं, पूर्णं सनातनपदं पुरुषोत्तमाख्यम् । यस्मिन्निदं जगदशेषमशेषमूर्तौ, रज्ज्वां भुजङ्गम इव प्रतिभासितं वै ॥ ३ ॥ शङ्करं शङ्कराचार्यं केशवं बादरायणम् । सूत्रभाष्यकृतौ वन्दे भगवन्तौ पुनः पुनः ॥४॥ महर्षिर्भगवान् व्यासः कृत्वेमां संहितां पुरा । श्लोकैश्चतुर्भिर्धर्मात्मा

ब्राह्मे मुहूर्ते बुध्येत धर्मार्थौ चानुचिन्तयेत् । कायक्लेशांश्च तन्मूलान्वेदतत्त्वार्थमेव च ॥ ब्राह्मे मुहूर्ते या निद्रा सा पुण्यक्षयकारिणी । तां करोति द्विजो मोहात्पादकृच्छ्रेण शुद्ध्यति ॥ ब्राह्मे मुहूर्ते पुरुषस्त्यजेन्निद्रामतन्द्रित । पश्चात् प्रातः प्रबुद्धं हि श्रयति श्रीगुणाश्रयम् ॥ ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्थाय चिन्तयेदात्मनो हितम् ॥ धर्मार्थकामान्स्वे काले यथाशक्ति न हापयेत् ॥ ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्थाय परं ब्रह्म विचिन्तयेत् ॥ ब्रह्मो मुहूर्तश्च द्वेधा ॥ अन्त्ययामात्मको रात्रेरन्त्यमुहूर्तश्च । १ उत्थाय पश्चिमे रात्रे तत आचम्य चोदकम् । मुखशुद्ध्यर्थमादौ तु गण्डूषत्रितयं चरेत् ॥ २ प्रातर्दर्शनीयानि—श्रोत्रिय सुभगा गाश्च वह्निमग्निचितिं तथा ॥ प्रातरुत्थाय य पश्येदापद्भ्य स प्रमुच्यते ॥ १ ॥ भारद्वाजमयूराणां चाषस्य नकुलस्य च । प्रभाते दर्शनं श्रेष्ठं वामपृष्ठे विशेषत ॥ २ ॥ लोकेऽस्मिन्मङ्गलान्यष्टौ ब्राह्मणो गौर्हुताशन. ॥ हिरण्यं सर्पिरादित्य आपो राजाऽष्टम स्मृत ॥ ३ ॥ ३ ब्राह्मे काले समुत्थाय गणेशादीन्स्मरेत्तत । प्रात स्तोत्रं मङ्गलानि पठित्वा शौचमाचरेत् ॥

पुत्रमध्यापयच्छुकम् ॥ ५ ॥ मातापितृसहस्राणि पुत्रदारशतानि च । संसारेष्वनुभूतानि यान्ति यास्यन्ति चापरे ॥ ६ ॥ हर्षस्थानसहस्राणि भयस्थानशतानि च । दिवसे दिवसे मूढमाविशन्ति न पण्डितम् ॥ ७॥ ऊर्ध्वबाहुर्विरौम्येष न च कश्चिच्छृणोति मे । धर्मादर्थश्च कामश्च स किमर्थं न सेव्यते ॥ ८ ॥ न जातु कामान्न भयान्न लोभाद्धर्मं त्यजेज्जीवितस्यापि हेतोः । धर्मो नित्यः सुखदुःखे त्वनित्ये जीवो नित्यो हेतुरस्य त्वनित्यः ॥९॥ इमां भारतसावित्रीं प्रातरुत्थाय यः पठेत् । स भारतफलं प्राप्य परं ब्रह्माधिगच्छति ॥१०॥ ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी भानुः शशी भूमिसुतो बुधश्च । गुरुश्च शुक्रः शनिराहुकेतवः कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम्॥११ भृगुर्वसिष्ठः क्रतुरंगिराश्च मनुः पुलस्त्यः पुलहश्च गौतमः । रैभ्यो मरीचिश्च्यवनश्च दक्षः कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ॥१२॥ सनत्कुमारः सनकः सनन्दनः सनातनोऽप्यासुरिपिङ्गलौ च । सप्तस्वराः सप्तरसातलानि कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ॥१३॥ सप्तार्णवाः सप्तकुलाचलाश्च सप्तर्षयो द्वीपवनानि सप्त । भूरादिकृत्वा भुवनानि सप्त कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ॥१४ पृथ्वी सगन्धा सरसास्तथापः स्पर्शी च वायुर्ज्वलनः सतेजाः । नभः सशब्दं महता सहैते कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ॥१५॥ इत्थं प्रभाते परमं पवित्रं पठेत्स्मरेद्वा शृणुयाच्च तद्वत् । दुःस्वप्ननाशस्त्विह सुप्रभातं भवेच्च नित्यं भगवत्प्रसादात् ॥१६॥ वैन्यं पृथुं हैहयमर्जुनं च शाकुन्तलेयं भरतं नलं च । रामं च यो वै स्मरति प्रभाते तस्यार्थलाभो विजयश्च हस्ते ॥१७ बलिर्विभीषणो भीष्मः प्रह्लादो नारदो ध्रुवः । षडेते वैष्णवाः प्रोक्ताः स्मरणं पापनाशनम् ॥ १८ ॥ अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनूमांश्च विभीषणः । कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः ॥१९॥ सप्तैतान्संस्मरेन्नित्यं मार्कण्डेयमथाष्टमम् । जीवेद्वर्षशतं साग्रमपमृत्युविवर्जितः ॥२०॥

इत्यादिपौराणिकश्लोकान्पठित्वा वैदिकं प्रातःस्मरणं पठेत् ॥ ॐ प्रातरग्निम्प्रातरिन्द्रꣳ हवामहे प्रातर्म्मित्रावरुणा प्रातरश्विना । प्रातर्भगम्पूषणम्ब्रह्मणस्पतिम्प्रातः सोममुत रुद्रꣳ हुवेम ॥ ३४/३४ ॥ प्रातर्जितम्भगमुग्रꣳ हुवेम वयम्पुत्रमदितेर्यो विधर्त्ता । आद्ध्रश्चिद्यम्मन्यमानस्तुरश्चिद्राजा चिद्यम्भगम्भक्षीत्याह ॥ ३५/३४ ॥ भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमान्धियमुदवा ददन्नः ॥ भग प्रणो जनय गोभिरश्वैर्भग प्रनृभिर्नृवन्त–स्याम ॥ ३६/३४ ॥ उतेदानीम्भगवन्तः स्यामोत प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम् । उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य वयन्देवानाꣳ सुमतौ स्याम ॥ ३७/३४ ॥ भग एव भगवाँ२ अस्तु देवास्तेन वयम्भगवन्तः स्याम ॥ तन्त्वा भग सर्व इज्जोहवीति स नो भग पुर एता भवेह ॥ ३८/३४ ॥ समध्वरायोषसो नमन्त दधिक्कावेव शुचये पदाय ॥ अर्वाचीनं वसुविदम्भगन्नो रथमिवाश्वा वाजिन आवहन्तु ॥ ३९/३४ ॥ अश्वावतीर्गोमतीर्न उषासो वीरवतीः सदमुच्छन्तु भद्राः । घृतन्दुहाना विश्वतः प्रपीता यूयम्पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ ४०/३४ ॥ इति प्रातःस्मरणम् ॥

॥ ५ ॥ अथ मूत्रपुरीषोत्सर्गविधिः ॥

ग्रामाद्बहिर्नैर्ऋत्यामिषुक्षेपात्यये शुद्धमृत्तिकां जलपात्रं चादाय कीटादिरहितस्थलं गत्वा मृज्जलपात्रे निधाय अयज्ञियैरनार्द्रैस्तृणैर्भूमिमाच्छाद्य प्रावृतशिराः पृष्ठतः कण्ठलम्बितयज्ञोपवीतो यद्येकवस्त्रश्चेद्दक्षिणकर्णे निहितयज्ञोपवीतः स्वस्थो घ्राणास्ये पिधाय दिवासन्ध्ययोरुदङ्मुखो रात्रौ दक्षिणाभिमुखो मौनमासीनो मूत्रपुरीषे कुर्यात् ॥ प्राणबाधाभये तु रात्रावहनि वा छायायामन्धकारे च गृहेऽपि यथासुखं मुखं कृत्वा मूत्रपुरीषे कुर्यात् ॥ लोष्ठादिना गुदं परिमृज्य गृहीतशिश्न उत्थाय पूर्वगृहीतमृज्जलपात्रे गृहीत्वाऽऽर्द्रामलकमात्रमृज्जलैर्द्विवारं लिङ्गशौचं कृत्वाऽर्धप्रसृतितदर्धार्धैर्मृज्जलैस्त्रिवारमपानं संशोध्य पुनर्जलैरेव लिङ्गगुदे प्रक्षाल्य शुद्धमृत्ति-

कयैकवारं हस्तं प्रक्षाल्य शुद्धभूमिमागत्यान्यमृज्जलैर्दशवारं वामकरं प्रक्षाल्य ततः करद्वयं सप्तवारं तावद्भिरेव मृज्जलैः प्रक्षाल्य वामदक्षिणपादौ प्रत्येकं त्रिः प्रक्षाल्यान्यजलेन द्वादशगण्डूषान्वामभागे कृत्वा जलपात्रं त्रिः पर्युक्ष्य जलविन्दूञ्जले निक्षिप्योपवीती द्विराचामेत् ॥ मूत्रमात्रोत्सर्गे तु पूर्ववदेकवारं लिङ्गं प्रक्षाल्य वामकरं त्रिः प्रक्षाल्य करद्वयं द्विः प्रक्षाल्यैकैकया मृदा पादौ प्रक्षाल्य गण्डूषचतुष्टयं विधायाचामेत् ॥

॥ ६ ॥ अथ दन्तधावनविधिः ॥

प्रतिपच्छष्ठयष्टमीनवम्येकादशीचतुर्दशीपूर्णिमासंक्रान्तिव्यतीपातव्रतोपवासश्राद्धदिनार्कभौमशुक्रमन्ददिननिषिद्धदिनातिरिक्तदिनेषु ब्राह्मणो द्वादशाङ्गुलप्रमाणेन दशाङ्गुलप्रमाणेन वा कनिष्ठाङ्गुलिवत्स्थूलेनोदुम्ब-

---

१ एका लिङ्गे गुदे तिस्रस्तथा वामकरे दश। उभयोः करयोः सप्त सप्त तिस्रोऽपि पादयोः॥ २ मूत्रमात्रोत्सर्गे तु—एका लिङ्गे करे तिस्र उभयोर्मृत्तिकाद्वयम्। एकैकया मृदा पादौ प्रक्षाल्य तु शुचिर्भवेत् ॥ ३ एका द्वे वाऽथ वा तिस्रो मृदः पादद्वये पृथक्। पादावाजानुतः शोध्य करौ वै मणिबंधनात् ॥ ४ मूत्रे पुरीषे भुक्त्यन्ते रेतःप्रस्रवणे तथा। चतुरष्टद्विषड्द्वयष्टगण्डूषैः शुद्धिमाप्नुयात् ॥ कुर्याद् द्वादशगण्डूषान्पुरीषोत्सर्जने ततः। मूत्रोत्सर्गे तु चतुरो भोजनान्ते तु षोडश ॥ भक्ष्यभोज्यावसाने तु गण्डूषाष्टकमाचरेत् ॥ पुरतः सर्वदेवाश्च दक्षिणे पितरस्तथा। ऋषयः पृष्ठतः सर्वे वामे गण्डूषमाचरेत् ॥ ५ मुखे पर्युषिते नित्यं भवत्यप्रयतो नरः। दन्तधावनमुद्दिष्टं जिह्वोल्लेखनिका तथा ॥ अतो मुखविशुद्ध्यर्थं गृह्णीयाद्दन्तधावनम्। आचान्तोऽप्यशुचिर्यस्मादतः कुर्या दन्तधावनम् ॥ ६ प्रतिपद्दर्शषष्ठीषु नवम्यां रविवासरे। दन्तानां काष्ठसंयोगो दहत्यासप्तमं कुलम् ॥ अष्टम्योश्च चतुर्दश्योः पञ्चदश्यां निजन्मसु। व्यतीपाते च सङ्क्रान्त्यां दन्तकाष्ठं न भक्षयेत् ॥ ७ तत्रादौ दन्तपवनं द्वादशाङ्गुलमायतम्। कनिष्ठिकापरीणाहमृजग्रन्थिविवर्जितम् ॥ कनिष्ठिकाग्रवत्स्थौल्ये सकूर्चं द्वादशाङ्गुलम्। प्रातर्भूत्वा च यतवाग्भक्षयेद्दन्तधावनम् ॥ ८ दशाङ्गुलं तु विप्राणां क्षत्रियाणां नवाङ्गुलम्। अष्टाङ्गुलं तु वैश्यानां शूद्राणां सप्तसम्मितम्। चतुरङ्गुलमात्रं तु नारीणां नात्र संशयः ॥ ९ कनिष्ठिकाग्रवत्स्थूलं सत्वचं निर्व्रणमृजुम्। द्वादशाङ्गुलिकं विप्रे कथितं दन्तधावनम् ॥

रकण्टकिक्षीरवृक्षापामार्गादिविहितवृक्षोद्भवेनाव्रणेन चूर्णीकृताग्रेण प्रक्षालितेन शुष्केणार्द्रेण वा काष्ठेन प्राङ्मुखो मौनेन दन्तधावनं कुर्यात् ॥ निषिद्धकाष्ठानि वर्जयेत् ॥ दन्तधावनकाष्ठाभिमन्त्रणम्—आयुर्बलं यशो वर्चः प्रजाः पशून्वसूनि च ॥ ब्रह्मप्रज्ञां च मेधां च त्वं नो देहि वनस्पते ॥ १ ॥ इत्यभिमन्त्र्य ॥ मुखदुर्गन्धिनाशाय दन्तानां च विशुद्धये ॥ ष्ठीवनाय च गात्राणां कुर्वेऽहं दन्तधावनम् ॥२॥ इतिमन्त्रमुक्त्वा पश्चाद्दन्तधावनमन्त्रं पठेत् ॥ यथा—ॐ अन्नाद्यायव्यूहध्वꣳसोमोराजायमागमत् ॥ सवेमुखंप्रमाक्ष्यतेयशसाचभगेनच ॥१॥ इत्यनेन दन्तान्संशोध्य

१ करञ्जोदुम्बरच्यूत कदम्बो लोध्रचम्पकौ । बदरीतिद्रुमाश्चैते प्रोक्ता दन्तप्रधावने ॥ आम्रम्रातकधात्रीजमधूकखदिरोद्भवम् । शम्यपामार्गखर्जूरीशेलुश्रीपर्णिपीलुजम् ॥ राजादनं च नारङ्गं कषायं कटुकण्टकम् । क्षीरवृक्षोद्भवं चापि प्रशस्तं दन्तधावने ॥ तिन्तिणिबिल्वपृष्ठे च ह्याम्रनिम्बौ तथैव च । खर्जे धैर्ये वटे दीप्ति करञ्जे विजयो रणे । प्लक्षे चार्थसमृत्तिर्वेदर्यां मधुरः स्वरः । खादिरे चैव सौभाग्यं बिल्वे तु विपुलं धनम् ॥ उदुम्बरे च वाक्सिद्धिर्जम्बुके च दृढा मतिः । शैत्रे च कीर्तिः सौभाग्यं पालाशे सिद्धिरुत्तमा । कदम्बे सकला लक्ष्मीराम्र आरोग्यमेव च । अपामार्गे स्मृतिर्मेधा प्रज्ञा वाणी वपुर्धृतिः ॥ आयुः कीर्तिं यशो लक्ष्मीः सौभाग्यं चोपजायते । अर्केण हन्ति रोगांस्तु बीजपूरेण तु व्यथाम् ॥ दाडिमे सिन्दुवारे च कुटजे कुटजे तथा । जाती च करमर्दां च दुःस्वप्नं नाशयेदिति ॥ ककुभेन तथायुष्मान्भवेत्कलिविवर्जितः । तस्माच्छुष्कं तदार्द्रं वा भक्षयेद्दन्तधावनम् ॥ २ प्राङ्मुखस्य धृतिं सौख्यं शरीरारोग्यमेव च । दक्षिणेन तथा कष्टं पश्चिमेन पराजयः ॥ उत्तरेण गवां नाशः स्त्रीणां परिजनस्य च । पूर्वोत्तरे तु दिग्भागे सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥ ३ उच्चारे मैथुने चैव प्रस्रावे दन्तधावने । श्राद्धे भोजनकाले च षट्सु मौनं समाचरेत् ॥ ४ कुशकाशं च कार्पासं पाशश्च ब्रह्मवृक्षजम् । पुत्रमांससमं ज्ञेयं चातुर्थ्यं दन्तधावनम् ॥ कुशकाशं पलाशं च निक्षिप्तं यस्तु भक्षयेत् । तावद्भवति चाण्डालो यावद्गङ्गां न पश्यति ॥ अधश्शुष्कं त्वचा हीनं यत्नेन परिवर्जयेत् । पतितं चातिरिक्तं च कीटविद्धं तथैव च ॥ नाङ्गुलीभिश्च मृद्भिश्च पाषाणैश्च भस्मना । नायसैश्च तथा लोष्टैः सदा दन्तान्मृजेद्द्विज ॥ ५ अयुग्मग्रन्थि यच्चापि प्रत्यग्रं शरभूमिजम् । ऋतुं ऋतुं च दोषं च रसं वीर्यं च योजयेत् ॥ कषायं मधुरं तिक्तं कटुकं प्रातरुत्थितः । निम्बश्च तिक्तके श्रेष्ठः कषाये खदिरस्तथा ॥ मधूको मधुरे श्रेष्ठः करञ्जः कटुके तथा ॥ क्षौद्रव्योषत्रिवर्गाक्तं सतैलं सैन्धवेन च ॥ चूर्णेन तेजोवत्याश्च दन्तान्नित्यं विशोधयेत् ॥ एकैकं घर्षयेद्दन्तं मृदुना कूर्चकेन च । दन्तशोधनचूर्णेन दन्तमांसान्यबाधयन् ॥

तेनैव काष्ठार्धेन वा रजतादिनिर्मितया जिह्वोल्लेखिन्या जिह्वामुल्लिख्य द्वादशगण्डूषाँश्च कृत्वा ॐकारं गायत्रीं च स्मृत्वा शिखां बध्नीयात् ॥ काष्ठाभावे श्राद्धोपवासादिनिषिद्धदिने च पर्णादिना प्रदेशिनीवर्ज्याङ्गुल्या वा द्वादशगण्डूषैर्वा दन्तान्संशोधयेत् ॥ पश्चात्—अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा ॥ यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं सबाह्याभ्यन्तरः शुचिः ॥ १ ॥ इत्यनेनाद्भिः शरीरं मार्जयेत् ॥ तदनन्तरं सूर्यतुलसीगोदर्शनं प्रार्थनां च कुर्यात् । आदित्यस्य नमस्कारं ये कुर्वन्ति दिनेदिने ॥ जन्मान्तरसहस्रेषु दारिद्र्यं नोपजायते ॥ आदित्यं भास्करं भानुं रविं सूर्यं दिवाकरम् ॥ षण्णामस्मरणान्नित्यं महापातकनाशनम् ॥ महाप्रसादजननी सर्वसौभाग्यवर्धिनी । आधिव्याधिहरा नित्यं तुलसि त्वं नमोऽस्तु ते ॥ गावो मे ह्यग्रतः सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठतः । गावो मे हृदये सन्तु गवां मध्ये वसाम्यहम् ॥ ४ ॥ इति दन्तधावनविधिः ॥

॥ ७ ॥ अथ गृहे प्रातःस्नानप्रयोगः ॥

शिलासने दारुजासने वा सूर्याभिमुख उपविश्य हस्तौ पादौ प्रक्षाल्य गण्डूषत्रयं कुर्यात् ॥ आचम्य शिखां बद्ध्वा हस्ते जलमादाय स्नानसङ्कल्पः— विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया

१ जिह्वानिर्लेखनं रौप्यं सौवर्णं वार्क्षमेव च । तन्मलापहरं शस्तं मृदु श्लक्ष्णं दशाङ्गुलम् ॥ मुखवैरस्यदौर्गन्ध्यशोफजाड्यहरं परम् ॥ २ पश्चाद्द्वादशगण्डूषैर्विदध्याद्दन्तधावनम् । स्मृत्वोङ्कारं च गायत्रीं बध्नीयाद्धि शिखां तत ॥ ३ अभावे दन्तकाष्ठस्य प्रतिषिद्धदिने तथा । अपां द्वादशगण्डूषैर्विदध्याद्दन्तधावनम् ॥ ४ प्रात स्नानं प्रशंसन्ति दृष्टादृष्टकरं हि तत् । सर्वमर्हति शुद्धात्मा प्रात स्नायी जपादिकम् ॥ अत्यन्तमलिनः कायो नवच्छिद्रसमन्वितः । स्रवत्येव दिवारात्रौ प्रातःस्नानं विशोधनम् ॥ प्रात स्नानं चरित्वाऽथ शुद्धे तीर्थे विशेषतः । प्रात स्नानाद्यतः शुद्धेत्कायोऽयं मलिनः सदा ॥ नोपसर्पन्ति वै दुष्टाः प्रात स्नायिजनं क्वचित् । दृष्टादृष्टफलं तस्मात् प्रात.स्नानं समाचरेत् ॥

प्रवर्त्तमानस्य अद्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे भारतवर्षे जम्बूद्वीपे रामक्षेत्रे परशुरामाश्रमे दण्डकारण्यदेशे श्रीगोदावर्याः पश्चिमदिग्भागे श्रीमल्लवणाब्धेरुत्तरे तीरे अमुके श्रीशालिवाहनशके अमुकनामसंवत्सरे अमुके श्रीविक्रमवर्षे अमुकनामसंवत्सरे अमुकायने अमुकर्तौ अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकनक्षत्रे ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं मम इह जन्मनि कायिकवाचिकमानसिकसांसर्गिकज्ञाताज्ञातस्पर्शास्पर्शासनभोजनशयनगमनादिकृतकर्मदोषनिरासद्वारात्रिविधतापोपशमनार्थं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थम् (उष्णोदकेन) प्रातःस्नानमहं करिष्ये ॥ इति सङ्कल्प्य पात्रे शीतोदकं प्रक्षिप्य तदुपर्युष्णोदकेन पात्रमापूर्य तेन जलेन गङ्गादितीर्थानि स्मरन् स्नायात् ॥ तीर्थप्रार्थना—पुष्कराद्यानि तीर्थानि गङ्गाद्याः सरितस्तथा । आगच्छन्तु पवित्राणि स्नानकाले सदा मम ॥ नमामि गङ्गे तव पादपङ्कजं सुरासुरैर्वन्दितदिव्यरूपम् । भुक्तिं च मुक्तिं च ददासि नित्यं भावानुसारेण सदा नराणाम् ॥ गङ्गागङ्गेति यो ब्रूयाद्योजनानां शतैरपि । मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति ॥ सुरधुनि मुनिकन्ये तारयेः पुण्य-

---

१ अस्नात्वा नाचरेत्कर्म जपहोमादिक तथा । लालास्वेदसमाकीर्णं शयनादुत्थित पुमान् ॥ स्रवन्ते हि तथुमस्य इन्द्रियाणि स्रवन्ति च । अङ्गानि समता यान्ति चोत्तमान्यधमै सह ॥ अगम्यागमनाच्चैव पापेभ्यश्च प्रतिग्रहात् । रहस्यचरितात्पापान्मुच्यते स्नानयोगत ॥ गुणा दश स्नानपरस्य नित्य रूपं च तेजश्च बलं च शौचम् । आयुष्यमारोग्यमलोलुपत्व दु स्वप्ननाशश्च यशश्च मेधा ॥ २ चित्तमन्तर्गतं दुष्टं तीर्थस्नान न शुद्ध्यति । शतशोऽथ जलैर्धौतं सुराभाण्डमिवाशुचि । यस्य हस्तौ च पादौ च मनश्चैव सुसंयतम् । विद्या तपश्च कीर्तिश्च स तीर्थफलमश्नुते ॥ मनोविशुद्ध पुरुषस्य तीर्थं वाचा यमस्त्विन्द्रियनिग्रहस्तप । एतानि तीर्थानि शरीरजानि स्वर्गस्य मार्गं प्रतिबोधयन्ति ॥

वन्तं स तरति निजपुण्यैस्तत्र किं ते महत्त्वम्। यदि च गतिविहीनं पापिनं तारयेर्मां तदपि च तव मातर्यन्महत्त्वं महत्त्वम्॥ नन्दिनी नलिनी सीता मालती च मलापहा। विष्णुपादाब्जसंभूता गङ्गा त्रिपथगामिनी॥ भागीरथी भोगवती जाह्नवी त्रिदशेश्वरी। द्वादशैतानि नामानि स्नानकाले सदा स्मरेत्॥ आपो नारा इति प्रोक्तास्ता एवास्यायनं पुनः। तस्मान्नारायणं देवं स्नानकाले स्मराम्यहम्॥ सत्यं तीर्थं क्षमा तीर्थं तीर्थमिन्द्रियनिग्रहः। सर्वभूतदया तीर्थं सर्वत्रार्जवमेव च॥ दानं तीर्थं दमस्तीर्थं सन्तोषस्तीर्थमुच्यते। ब्रह्मचर्यं परं तीर्थं तीर्थं च प्रियवादिता॥ ज्ञानं तीर्थं धृतिस्तीर्थं पुण्यं तीर्थमुदाहृतम्। तीर्थानामपि तत्तीर्थं विशुद्धिर्मनसः परा॥ इति स्मरणपूर्वकं स्नात्वा त्रिराचामेत्॥

॥ इति गृहे प्रातःस्नानप्रयोगः॥

॥ ८ ॥ अथ गौणस्नानानि ॥

अतिबाल्यवार्द्धक्यातुरतया अस्वास्थ्ये सति उष्णोदकेनापि स्नानं कर्तुमशक्तश्चेत् गौणस्नानं कर्तव्यम्। यथा-आचम्य संध्याद्यधिकारार्थम् अमुकस्नानमहं करिष्ये इति यथानिमित्तं संकल्पादि कृत्वा स्नानं विधेयम्। गौणस्नानानि-आपोहिष्ठेति तिसृभिर्मन्त्रैः अङ्गानां प्रोक्षणं मंत्रस्नानम्। गायत्र्या दशकृत्वो जलमभिमंत्र्य तेन सर्वाङ्गप्रोक्षणं गायत्रम्। अग्निरितिभस्मेत्यादि मन्त्रैरङ्गेषु भस्मलेपनम् आग्नेयस्नानम्। आर्द्रवस्त्रेणाङ्गमार्जनं कापिलम्। गोरजसाम् अङ्गे लेपनं वायव्यस्नानम्। मृदा-

---

१ असामर्थ्याच्छरीरस्य देशकालाद्यपेक्षया। मन्त्रस्नानादिकाः सप्त केचिदिच्छन्ति सूरयः॥ स्नानं तु द्विविधं प्रोक्तं मुख्यगौणप्रभेदतः। चतुर्विध तत्र मुख्यं गौणं वै षड्विधं भवेत्॥ अशिरस्कं भवेत्स्नानं स्नानाशक्तौ तु कर्मिणाम्। आर्द्रेण वाससा वापि मार्जनं दैहिकं विदुः॥

लम्भं पार्थिवस्नानम्। सातपवर्षेण स्नानं दिव्यम्। आत्मचिन्तनं मानसम्। विष्णुपादोदकविप्रपादोदकप्रोक्षणविष्णुध्यानादिभिश्च स्नानान्तराणि सन्ति तेषां मध्ये यथासंभवं विधेयम्। गौणस्नानैर्जपसंध्यादौ शुद्धिर्न तु श्राद्धदेवार्चनादौ। ब्रह्मयज्ञे विकल्पः॥ इति गौणस्नानानि॥

॥ ९ ॥ अथाशौचे कर्मादित्यागविचारः॥

कात्यायनः—सूतके कर्मणां त्यागः सन्ध्यादीनां विधीयते। होमः श्रौते च कर्तव्यः शुष्कान्नेनाथवा फलैः॥ जाबालिः—जन्महानौ वितानस्य कर्मत्यागो विधीयते। शालाग्नौ केवलो होमः कार्य एवान्यगोत्रजैः॥ सन्ध्यां पञ्चमहायज्ञान्नैत्यकं स्मृतिकर्म च। तन्मध्ये हापयेत्तेषां दशाहान्ते पुनः क्रियाः॥ मनुः—उभयत्र दशाहानि कुलस्यान्नं न भुज्यते। दानं प्रतिग्रहो होमः स्वाध्यायश्च निवर्तते॥ शुद्ध्येद्विप्रो दशाहेन द्वादशाहेन भूमिपः। वैश्यः पञ्चदशाहेन शूद्रो मासेन शुद्ध्यति॥ यमः—सूतके च कुलस्यान्नमभोज्यं मनुरब्रवीत्। एकादशेऽह्नि कुर्यात्तु दानमध्ययनं तपः॥ पराशरः—एकाहाद्ब्राह्मणः शुद्ध्येद्योऽग्निवेदसमन्वितः। त्र्यहात्केवलवेदस्तु निर्गुणो दशभिर्दिनैः॥ आह्निककारिकासु—देशान्तरे मृतं श्रुत्वा गोत्रिणं च स्वबान्धवम्। स्वगोत्री शुद्ध्यते सद्यो मातापित्रोर्दशाहकम्॥ यदि गर्भविपातश्च श्रूयते माससङ्ख्यया। यावन्मासस्थितो गर्भस्तावद्यामाश्च सूतकम्। आचतुर्थाद्भवेत्स्रावः पातः पञ्चमषष्ठयोः। अत ऊर्ध्वं प्रसूतिः स्याद्दशाहं सूतकं भवेत्॥ अजा गावो महिष्यश्च ब्राह्मणी च प्रसूतिका। दशरात्रेण शुद्ध्यन्ति भूमिस्थं च नवोदकम्॥ ग्राममध्ये मृतः कश्चिन्नरो नारी चतुष्पदः। न कुर्याद्भक्षणं च मृतं यावन्न नीयते॥ अपां मध्ये गवां गोष्ठे विवाहे यज्ञमण्डपे। राहोर्दर्शनकालस्य सूतकं न विधीयते॥ इति॥

॥ १० ॥ अथ प्रातःसन्ध्याप्रयोगः ॥

यथोक्तस्नानानन्तरं श्वेतं धौतं वस्त्रं परिधाय उपवस्त्रं गृहीत्वा कुशादिविहितासने प्राङ्मुख उपविश्य सव्यहस्ते कुशत्रयं दक्षिणहस्ते कुशद्वयं धारयेत्-पवित्रधारणम्-तस्य मन्त्रः—

ओ३म् पवित्रेस्थोवैष्णव्यौसवितुर्वः प्रसवऽउत्पुनाम्यच्छिद्रेणपवित्रेणसूर्य्यस्यरश्मिभिः ॥ १२/१ ॥ तस्यतेपवित्रपते पवित्रपूतस्ययत्कामःपुनेतच्छकेयम् ॥ ३/४ ॥

१ उत्तमा तारकोपेता मध्यमा लुप्ततारका । अधमा सूर्यसहिता प्रातःसन्ध्या त्रिधा मता ॥ अहोरात्रस्य यः सन्धिः सूर्यनक्षत्रवर्जितः । सा तु सन्ध्या समाख्याता मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥ २ स्नात्वैव वाससी धौते अक्लिन्ने परिधापयेत् । अभावे धौतवस्त्रस्य पट्टक्षौमादिकानि च । कुतपं योगपट्टं वा द्विवासा येन नो भवेत् ॥ वस्त्रधारणे मन्त्रः (पा० गृ० सू०) परिधास्यै यशोधास्यै दीर्घायुत्वाय जरदष्टिरस्मि । शतं च जीवामि शरदः पुरूची रायस्पोषमभिसंव्ययिष्ये ॥ ३ ॥ उपवस्त्रधारणावश्यकता-होमदेवार्चनाद्यासु क्रियासु पठने तथा । नैकवस्त्रः प्रवर्तेत द्विजो नाचमने जपे ॥ एकवस्त्रं विना पात्रं सव्ययज्ञोपवीतकम् । प्रत्यक्षं तु नदीशौचं कुर्वन्कृच्छ्रमवाप्नुयात् ॥ उपवस्त्रधारणे मन्त्रः-यशसा मा द्यावापृथिवी यशसेन्द्राबृहस्पती । यशो भगश्च माविशद्यशो मा प्रतिपद्यताम् ॥ ४ ॥ काम्यार्थं कम्बलं चैव श्रेष्ठं च रक्तकम्बलम् । कृष्णाजिने ज्ञानसिद्धिर्मोक्षस्तु व्याघ्रचर्मणि ॥ कुशासने ज्ञानसिद्धिर्नात्र कार्या विचारणा ॥ धरण्यां दुःखसंभूतिर्दौर्भाग्यं दारुजासने ॥ वंशासने दरिद्रः स्यात् पाषाणे व्याधिपीडनम् । तृणासने यशोहानिः पल्लवैश्चित्तविभ्रमः ॥ अध्यानतपोहानि कुर्वन्वस्त्रासनं तथा ॥ ५ ॥ सपूलाग्रौ त्रिगर्भौ तु कुशौ द्वौ दक्षिणे करे । सव्ये चैव तथा त्रीन्वै बिभृयात्सर्वकर्मसु ॥ दर्भहीना तु या सन्ध्या यच्च दानं विनोदकम् । असंख्यातं तु यज्जप्तं तत्सर्वं निष्फलं भवेत् ॥ कुशपवित्राभावे हेमपवित्रधार्यम्-जपे होमे तथा दाने स्वाध्याये पितृतर्पणे । अशून्यं तु करं कुर्यात्सुवर्णरजतैः कुशैः ॥ स्नाने होमे जपे दाने स्वाध्याये पितृकर्मणि । करौ सदर्भौ कुर्वीत तथा सन्ध्याभिवादने ॥ उभयत्र स्थितैर्दर्भैः समाचामति यो द्विजः । सोमपानफलं तस्य भुक्त्वा यज्ञफलं लभेत् ॥ सपवित्रेण हस्तेन कुर्यादाचमनक्रियाम् । नोच्छिष्टं तत्पवित्रं तु भुक्त्वोच्छिष्टं तु वर्जयेत् ॥

आचमनम्—अन्तर्जानुहस्तः संहताङ्गुलिना शुद्धजलं गृहीत्वा मुक्ताङ्गुष्ठकनिष्ठेन वामेनान्वारब्धपाणिना ब्रह्मतीर्थेन त्रिरपः पिबेत् ॐकेशवाय नमः स्वाहा । ॐनारायणाय नमः स्वाहा । ॐमाधवाय नमः स्वाहा । हस्तप्रक्षालनम्—ॐगोविंदाय नमः ॥ प्राणायामः—प्रणवस्य परब्रह्मऋषिः परमात्मा देवता दैवी गायत्री छन्दः भूरादिसप्तव्याहृतीनां विश्वामित्रजमदग्निभरद्वाजगौतमात्रिवसिष्ठकश्यपा ऋषयः अग्निवायुसूर्यबृहस्पतिवरुणेन्द्रविश्वेदेवा देवता गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहतीपंक्तित्रिष्टुब्जगत्यश्छन्दांसि तत्सवितुरित्यस्य विश्वामित्रऋषिः सविता देवता गायत्री छन्दः आपोज्योतिरित्यस्य प्रजापतिऋषिः ब्रह्माग्निवायुसूर्या देवता यजुश्छन्दः सर्वेषां प्राणायामे विनियोगः । ॐभूः ॐभुवः ॐस्वः ॐमहः ॐजनः ॐतपः ॐसत्यम् ॐतत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गोदेवस्यधीमहि ॥ धियोयोनः प्रचोदयात् ॥[३]॥ ॐआपो ज्योती रसोमृतं ब्रह्म भूर्भुवःस्वरोम् ॥ एवं पूरकः कुम्भकः रेचकः इति क्रमेण त्रिवारं पठेत् ॥ भस्मधारणम्—वामहस्ते दक्षिणहस्तेन भस्म गृहीत्वा जलमिश्रणानन्तरं दक्षिणहस्तेन मर्दयेत् ॐअग्निरितिभस्म वायुरितिभस्म जलमितिभस्म स्थलमितिभस्म व्योमेतिभस्म सर्वꣳहवा इदं भस्म मन एतानि चक्षूꣳषि भस्मानि ॥ इति मंत्रेण मर्दनानंतरं दक्षिणहस्तेनाच्छाद्य अभिमंत्रणम्—ॐत्र्यम्बक॰

१ भोजने हवने दाने उपहारे प्रतिग्रहे । बहिर्जानु न कार्याणि तद्वदाचमनं विदुः ॥ २ संहताङ्गुलिना तोयं गृहीत्वा पाणिना द्विजः । मुक्ताङ्गुष्ठकनिष्ठेन शेषेणाचमनं चरेत् ॥ ३ सव्याहृतिं सप्रणवां गायत्रीं शिरसा सह । त्रिः पठेदायतप्राणः प्राणायामः स उच्यते ॥ ४ करोति शिवमन्त्रेण यस्त्रिपुण्ड्रं द्विजोत्तम । त्र्यक्ष इव उद्भवः सोम्य शिवलोके महीयते ॥ ५ वामहस्ततले भस्म क्षिप्त्वाऽऽच्छाद्यान्यपाणिना । अग्निरित्यादिमन्त्रेण सूक्तेन भस्माभिमन्त्र्य [illegible] ॥ मध्याङ्गुलित्रयेणैव स्वदक्षिणकरस्य च । त्रिपुण्ड्रं धारयेद्विद्वान् सर्वकल्मषनाशनम् । स्नानं शौचं जपो होमस्तीर्थे देवादिपूजनम् ॥ तस्य व्यर्थमिदं सर्वं यस्त्रिपुण्ड्रं न धारयेत् ॥

मित्यस्य वसिष्ठ ऋषिः रुद्रो देवता अनुष्टुप्छन्दः प्रसद्येत्यस्य विरूप ऋषिः अग्निर्देवता अनुष्टुप्छन्दः भस्माभिमंत्रणे विनियोगः ॥

ॐत्र्यम्बकँय्यजामहेसुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम्॥ उर्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ॥ ६०/३ ॥ ॐप्रसद्य भस्मनायोनिमपश्चपृथिवीमग्ने॥सᳬसृज्ज्यमातृभिष्ट्वञ्ज्योतिष्मान्पुनरासदः॥ ३८/१२ ॥

इत्यभिमंत्र्य धारणम्—त्र्यायुषमित्यस्य नारायण ऋषिः रुद्रो देवता उष्णिक्छन्दः भस्मधारणे विनियोगः ॥ ॐत्र्यायुषञ्जमदग्नेः—ललाटे। कश्यपस्यत्र्यायुषम्—ग्रीवायाम् । यद्देवेषुत्र्यायुषम्—बाह्वोः । तन्नोऽअस्तुत्र्यायुषम्-हृदये ॥ शिखाबन्धनम्—मानस्तोक इति मन्त्रस्य कुत्स ऋषिः जगती छन्दः एको रुद्रो देवता शिखाबन्धने विनियोगः—

ॐमानस्तोकेतनयेमानऽआयुषिमानोगोषुमानोऽअश्वेषुरीरिषः ॥ मानोवीरान्रुद्रभामिनोवधीर्हविष्मन्तःसदमित्त्वाहवामहे ॥ १६/१६ ॥

चिद्रूपिणि महामाये दिव्यतेजःसमन्विते । तिष्ठ देवि शिखाबन्धे तेजोवृद्धिं कुरुष्व मे । अङ्गुष्ठमात्रां शिखां नैर्ऋत्यां बद्धा ॥ कण्ठे रुद्राक्ष-

---

१ स्नाने दाने जपे होमे सन्ध्यायां देवतार्चने । शिखाग्रन्थिं विना कर्म न कुर्याद्वै कदाचन ॥ २ रुद्राक्षा यस्य गात्रेषु ललाटे च त्रिपुण्ड्रकम् । स चाण्डालोऽपि सम्पूज्यः सर्ववर्णोत्तमो भवेत् ॥ अभक्तो वापि भक्तो वा नीचो नीचतरोपि वा । रुद्राक्षान्धारयेद्यस्तु मुच्यते सर्वपातकैः ॥

मालाधारणम्—त्र्यम्बकमित्यस्य वसिष्ठ ऋषिः रुद्रो देवता अनुष्टुप् छन्दः रुद्राक्षमालाधारणे विनियोगः—

ॐ त्र्यम्बकंय्यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम् । उर्व्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्म्मुक्षीयमामृतात् ॥ ॥

अनेन मन्त्रेण रुद्राक्षमालां धृत्वा पवित्रकरणम्–ॐ विष्णुर्विष्णु. । ॐ वाक्वाक्–जलार्द्रहस्तेन दक्षिणकराङ्गुल्यग्रैः ओष्ठौ स्पृशेत् । ॐ प्राणः प्राणः–अङ्गुष्ठतर्जनीभ्यां नासारन्ध्रे स्पृशेत् । ॐ चक्षुश्चक्षु -अङ्गुष्ठानामिकाभ्याम् अक्षिणी स्पृशेत् । ॐ श्रोत्रंश्रोत्रम्-अङ्गुष्ठानामिकाभ्यां कर्णौ स्पृशेत्-—ॐ नाभिः । अङ्गुष्ठकनिष्ठिकाभ्यां नाभिं स्पृशेत् । ॐ हृदयम् हस्ततलेन हृदयं स्पृशेत् । ॐ कण्ठः–कराग्रेण कण्ठं स्पृशेत् । ॐ शिरः–कराग्रेण शीर्षं स्पृशेत् । ॐ बाहुभ्यां यशोबलम्–कराग्रेण बाहुमूले स्पृशेत् । अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा । यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ॥ अनेन मन्त्रेण किञ्चिज्जलं शिरसि सिञ्चेत् ॥ सङ्कल्पः—विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य अद्य ब्रह्मणो द्वितीये परार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे भारतवर्षे जम्बूद्वीपे रामक्षेत्रे परशुरामाश्रमे दण्डकारण्यदेशे श्रीगोदावर्याः पश्चिमदिग्भागे श्रीमल्लवणाब्धेरुत्तरे तीरे अमुके श्रीशालिवाहनशके अमुकनामसंवत्सरे तथा अमुके श्रीविक्रमवर्षे अमुकनामसंवत्सरे अमुकायने अमुकर्तौ अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकनक्षत्रे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशिस्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु

१ अय सङ्कल्प देशविशेषेण ज्ञातः ॥

ग्रहेषु यथायथं राशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवंगुणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ ममोपात्तदुरितक्षयपूर्वकब्रह्मवर्चसकामार्थं श्रीपरमेश्वर-प्रीतये प्रातःसन्ध्योपासनमहं करिष्ये ॥ इति सङ्कल्प्य भूमिप्रार्थना-पृथिवीत्यस्य मेरुपृष्ठ ऋषिः कूर्मो देवता सुतलं छन्दः आसने विनियोगः-पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता । त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम् ॥ इतिमन्त्रेण दक्षिणहस्तस्य मध्यमानामिकाभ्याम् आसनोपरि किञ्चिज्जलं क्षिपेत् ॥ भूतशुद्धिः-अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमि संस्थिताः । ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥ अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतोदिशम् । सर्वेषामवरोधेन सन्ध्याकर्म समारभे ॥ इति द्वाभ्यां वामपादपार्ष्णिना त्रिवारं भूमिं ताडयित्वा भूतान्युत्सार्य भैरवनमस्कारः-तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय कल्पान्तदहनोपम । भैरवाय नमस्तुभ्यमनुज्ञां दातुमर्हसि ॥ अभिषेचनम्-ॐकारस्य ब्रह्मा ऋषिः परमात्मा देवता गायत्री छन्दः सर्वकर्मारम्भे विनियोगः । भूरादिसप्तव्याहृतीनां विश्वामित्रजमदग्निभरद्वाजगौतमात्रिवसिष्ठकश्यपा ऋषयः । अग्निवायुसूर्यबृहस्पतिवरुणेन्द्रविश्वेदेवा देवताः । गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहतीपङ्क्तित्रिष्टुब्जगत्यश्छन्दांसि । तत्सवितुरित्यस्य विश्वामित्र ऋषिः सविता देवता गायत्री छन्दः अभिषेके विनियोगः । ॐभूः पुनातु-शिरसि । ॐभुवः पुनातु-नेत्रयोः । ॐस्वः पुनातु-कण्ठे । ॐमहः पुनातु-हृदये । ॐजनः पुनातु-नाभ्याम् । ॐतपः पुनातु-पादयोः । ॐसत्यं पुनातु-पुनः शिरसि । ॐतत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गोदेवस्यधीमहि ॥ धियोयोनः प्रचोदयात् ॥ $\frac{३५}{३}$ ॥-सर्वाङ्गं पुनातु ॥ इति प्रतिमन्त्रं दक्षिणेन पाणिना कुशानादाय वामकरस्थिततोयैरभिषिञ्चेत् ॥ ततो व्याहृतिपूर्वकगायत्रीकरन्यासाः-ॐभूः-अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । ॐभुवः-तर्जनीभ्यां नमः । ॐस्वः-

मध्यमाभ्यां नमः। ॐतत्सवितुर्वरेण्यम्-अनामिकाभ्यां नमः।ॐभर्गो देवस्यधीमहि-कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐधियोयोनःप्रचोदयात्-करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ अथ व्याहृतिपूर्वकं गायत्रीषडङ्गन्यासाः- ॐभूः-हृदयाय नमः। ॐभुवः-शिरसे स्वाहा। ॐस्वः-शिखायै वषट् ॐतत्सवितुर्वरेण्यम्-कवचाय हुम्। ॐभर्गोदेवस्यधीमहि-नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐधियोयोनःप्रचोदयात्-अस्त्रायफट् ॥ अथप्रणवन्यासाः- ॐअकारम् नाभौ। ॐउकारम्-हृदये। ॐमकारम्-मूर्ध्नि। अथ व्याहृतिन्यासाः-ॐभूः-पादयोः। ॐभुवः-जान्वोः। ॐस्वः-ऊर्वोः ॐमहः जठरे। ॐजनः-कण्ठे। ॐतपः-मुखे। ॐसत्यम्-शिरसि। अथ गायत्र्यक्षरन्यासाः-ॐतकारम्-पादाङ्गुष्ठयोः। ॐसकारम्-गुल्फयोः। ॐविकारम्-जङ्घयोः। ॐतुकारम्-जान्वोः। ॐवकारम्-ऊर्वोः। ॐरेकारम्-गुदे। ॐणिकारम्-लिङ्गे। ॐयकारम्-कट्याम्। ॐभकारम्-नाभौ। ॐगोकारम्-उदरे। ॐदेकारम्-स्तनयोः। ॐवकारम्-हृदये। ॐस्यकारम्-कण्ठे। ॐधीकारम्-मुखे। ॐमकारम्-तालुदेशे। ॐहिकारम्-नासिकाग्रे। ॐधिकारम्-नेत्रयोः। ॐयोकारम्-भ्रुवोर्मध्ये। ॐद्वितीययोकारम्-ललाटे। ॐनकारम् पूर्वमुखे। ॐप्रकारम्-दक्षिणमुखे। ॐचोकारम्-पश्चिममुखे। ॐदकारम्-उत्तरमुखे। ॐयात्कारम्-मूर्ध्नि। ॐव्यञ्जनं तकारम् व्यापकं सर्वतो न्यसेत् ॥

अथ शिरोन्यासाः—ॐआपः-गुदे। ॐज्योतिः-चक्षुषोः। ॐरसः-वक्त्रे। ॐअमृतम्-जान्वोः। ॐब्रह्म-हृदये। ॐभूः-पादयोः। ॐभुवः-नाभौ। ॐस्वः-ललाटे। ॐकारम्-मूर्ध्नि। अथ गायत्र्यावाहनम्—गायत्री त्र्यक्षरां बालां साक्षसूत्रकमण्डलुम्। रक्तवर्णां रक्तवस्त्रां

च हंसवाहनसंस्थिताम् ॥ ऋग्वेदकृतोत्सङ्गां चतुर्वक्त्रां चतुर्भुजाम् । ब्रह्माणीं ब्रह्मदैवत्यां ब्रह्मलोकनिवासिनीम् ॥ आवाहयाम्यहं देवीमायान्तीं सूर्यमण्डलात् । आगच्छ वरदे देवि त्र्यक्षरे ब्रह्मवादिनि ॥ गायत्रि छन्दसां मातर्ब्रह्मयोनि नमोऽस्तु ते ॥ प्राणायामः—प्रणवस्य परब्रह्म ऋषिः परमात्मा देवता गायत्री छन्दः भूरादिसप्तव्याहृतीनां विश्वामित्रजमदग्निभरद्वाजगौतमात्रिवसिष्ठकश्यपा ऋषयः अग्निवायुसूर्यबृहस्पतिवरुणेन्द्रविश्वेदेवादेवता गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहतीपङ्क्तित्रिष्टुब्जगत्यश्छन्दांसि । तत्सवितुरित्यस्य विश्वामित्र ऋषिः सविता देवता गायत्री छन्दः आपोज्योतिरित्यस्य प्रजापतिर्ऋषिः ब्रह्माग्निवायुसूर्या देवता यजुश्छन्दः सर्वेषां प्राणायामे विनियोगः ॥ ॐभूः ॐभुवः ॐस्वः ॐमहः ॐजनः ॐतपः ॐसत्यम् ॐतत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गोदेवस्यधीमहि ॥ धियोयोनः प्रचोदयात् ॥[१]॥ ॐआपोज्योतीरसोमृतं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम् ॥ एवं पूरकः कुम्भकः रेचकः क्रमेण त्रिवारं पठेत् ॥ अम्बुप्राशनम्—सूर्यश्चमेत्यस्य नारायण ऋषिः सूर्यो देवता अनुष्टुप्छन्दः अम्बुप्राशने विनियोगः । ॐसूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युकृतेभ्यः पापेभ्यो रक्षन्तां यद्रात्र्या पापमकार्षं मनसा वाचा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्ना रात्रिस्तदवलुम्पतु यत्किञ्चिद्दुरितं मयि इदमहं माममृतयोनौ सूर्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा ॥ एतन्मन्त्रेण जलं प्राश्य तूष्णीं द्विराचामेत् ॥

---

१ प्राणायामैर्विना यद्यत्कृतं कर्म निरर्थकम् । अतो यत्नेन कर्तव्यः प्राणायामः शुभार्थिना ॥ श्रुतिस्मृत्यादिकर्मादौ सगर्भः प्राणसंयमः । अगर्भो ध्यानमात्रं तु स चामन्त्रः प्रकीर्तितः ॥ द्वौ द्वौ प्रातस्तु मध्याह्ने त्रिभिः सन्ध्यासुरार्चने । भोजनादौ भोजनान्ते प्राणायामास्तु षोडश ॥

मार्जनम्—आपोहिष्ठेतितिसृणां सिन्धुद्वीप ऋषिरापो देवता गायत्री छन्दः मार्जने विनियोगः-ॐआपोहिष्ठामयोभुवः—मस्तके। ॐतानऽऊर्ज्जेदधातन—चरणयोः। ॐमहेरणायचक्षसे-हृदये। ॐयोवः शिवतमोरसः-हृदये। ॐतस्यभाजयतेहनः—चरणयोः। ॐउशतीरिवमातरः—मस्तके। ॐतस्माऽअरङ्गमामवः मस्तके। ॐयस्यक्षयायजिन्वथ-हृदये। ॐआपोजनयथाचनः—चरणयोः। इति नवभिः पादैः सुवर्णादिपात्रस्थैर्वामहस्तस्थैर्वा जलैः कुशाग्रयेण मार्जयेत्। अपोऽञ्जलावादाय प्रक्षेपः—सुमित्रियादुर्मित्रिया इत्यनयोः प्रजापतिर्ऋषिः आपो देवता अनुष्टुप्छन्दः क्रमेण अभ्युग्रहणे प्रक्षेपे च विनियोगः-ॐसुमित्रियानऽआपऽओषधयःसन्तु-इत्यञ्जलिना जलमादाय-ॐदुर्म्मित्रियास्तस्मैसन्तुयोस्मान्द्वेष्टियञ्चवयन्द्विष्म्मः॥ ३६।२३॥ इत्यनेन वामभागे जन्तुहीनस्थले निक्षिपेत्॥ द्रुपदादिवेत्यस्य कोकिलराजपुत्र ऋषिः आपो देवता अनुष्टुप्छन्दः जलग्रहणे आच्छादने च विनियोगः॥ ऋतञ्चसत्यञ्चेत्यस्याघमर्षण ऋषिः भाववृत्तो देवता अनुष्टुप्छन्दः उदकावघ्राणपूर्वकप्रक्षेपणे विनियोगः॥

ॐद्रुपदादिवमुमुचानः स्विन्नःस्नातोमलादिव॥
पूतम्पवित्रेणेवाज्ज्यमापःशुन्धन्तुमैनसः॥ २०।२०॥

अनेन मन्त्रेण जलं वामहस्ते गृहीत्वा न्युब्जेन दक्षिणहस्तेनाच्छाद्य। अघमर्षणम्—

ॐऋतंचसत्यञ्चाभीद्धात्तपसोध्यजायत। ततोरात्र्य-

१ सेसयत्रयमाकाशे वक्तनीणि मस्तके। नकारैस्तु क्षिपेद् भूमावापो हिष्ठेति मार्जनम्॥ भूमिशब्देन चरणावाकाशं हृदयं स्मृतम्। शिरस्येव शिर शब्दो मार्जनस्त्वादृतः॥

जायततत॑ःसमुद्रोऽअर्ण्णवः। समुद्रादर्ण्णवादधिसंव॑त्सरोऽअजायत । अहोरात्राणिविदधद्विश्वस्यमिषतोवशी । सूर्याचन्द्रमसौधातायथापूर्वमकल्पयत् । दिवंञ्चपृथिवीञ्चान्तरिक्षमथोस्वः ॥ ८ ॥

इति मंत्रेण तदाच्छादितं जलमवघ्राणपूर्वकं वामभागे क्षिपेत् ॥

अर्घदानम्-प्रणवस्य परब्रह्म ऋषिः परमात्मा देवता दैवी गायत्री छन्दः भूर्भुवः स्वरितिमहाव्याहृतीनां परमेष्ठी प्रजापतिर्ऋषिः अग्निवायुसूर्या देवता गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दांसि तत्सवितुरित्यस्य विश्वामित्र ऋषिः सविता देवता गायत्री छन्दः अर्घदाने विनियोगः ॥

सूर्याभिमुखस्तिष्ठन्गन्धाक्षतपुष्पयुक्तार्घत्रयं दद्यात् ॥

ॐभूर्भुवःस्वःॐतत्सवितुर्वरेण्ण्यम्भर्गोदेवस्यधीमहि ॥ धियोयोनःप्रचोदयात् ॥ ३५ ॥

ब्रह्मस्वरूपिणे सूर्यनारायणाय नमः अयमर्घो दत्तो न मम ॥ दत्तार्घोदकेन दक्षिणनासाचक्षुःश्रोत्रस्पर्शनं कुर्यात् ॥ इत्यर्घत्रयं दत्वा दक्षिणहस्ते जलं गृहीत्वा—ॐअसावादित्यो ब्रह्म-अनेन मन्त्रेणात्मनः

---

१ ईषन्नम्रः प्रभाते तु मध्याह्ने ऋजुसंस्थितः। द्विजोऽर्घं प्रक्षिपेद्देव्याः सायं तूपविशन्भुवि ॥ कराभ्यां तोयमादाय गायत्र्या चाभिमन्त्रितम् । आदित्याभिमुखस्तिष्ठंस्त्रिरूर्ध्वं सन्ध्ययोः क्षिपेत् ॥ सकृदेव तु मध्याह्ने क्षेपणीयं द्विजातिभिः ॥

२ कालातिक्रमे सति—ॐआकृष्णेनरजसावर्त्तमानोनिवेशयन्नमृतंमर्त्यञ्च ॥ हिरण्ययेनसवितारथेनादेवोयातिभुवनानिपश्यन् ॥ ३३ ॥ ब्रह्मस्वरूपिणे सूर्यनारायणाय नमः प्रायश्चित्तार्थमयमर्घो दत्तो न मम । अनेन प्रकारेण चतुर्थार्घं दद्यात् ॥

समन्तात्प्रदक्षिणवदुदकं क्षिपेत् ॥ सूर्योपस्थानम्—उत्थाय स्वस्तिकाकारपाणिः सूर्योदयाभिमुखो वक्ष्यमाणैश्चतुर्भिर्मन्त्रैः सूर्यमुपतिष्ठेत्—ॐउद्वयमुदुत्यमितिद्वयोः प्रस्कण्व ऋषिः सूर्यो देवता अनुष्टुप्छन्दः चित्रन्देवानामित्यस्य कुत्साङ्गिरस ऋषिः सूर्यो देवता त्रिष्टुप्छन्दः तच्चक्षुरित्यस्य दध्यङ्ङाथर्वण ऋषिः सूर्यो देवता उष्णिक्छन्दः सूर्योपस्थाने विनियोगः—

ॐउद्वयन्तमसस्परिस्वः पश्श्यन्तऽउत्तरम् ॥ देवन्देवत्रासूर्य्यमगन्मज्ज्योतिरुत्तमम् ॥ २१/२० ॥ ॐउदुत्यञ्जातवेदसन्देवंवहन्तिकेतवः ॥ दृशेविश्श्वायसूर्य्यम् ॥ ३१/३३ ॥ ॐचित्रन्देवानामुदगादनीकञ्चक्षुर्म्मित्रस्यवरुणस्याग्नेः ॥ आप्प्राद्द्यावापृथिवीऽअन्तरिक्षꣳसूर्य्यऽआत्मजगतस्तस्थुषश्च ॥ ४६/१३ ॥ ॐतच्चक्षुर्द्देवहितम्पुरस्ताच्छुक्क्रमुच्चरत् ॥ पश्श्येमशरदःशतञ्जीवेमशरदःशतꣳशृणुयामशरदःशतम्प्रब्रवामशरदःशतमदीनाःस्यामशरदःशतम्भूयश्चशरदःशतात् ॥ २४/३६ ॥

गायत्र्यावाहनम्—तेजोसीत्यस्य परमेष्ठी प्रजापतिर्ऋषिः आज्यं देवता जगती छन्दः यजुर्गायत्र्यावाहने विनियोगः—

ॐतेजोसिशुक्क्रमस्यमृतमसिधामनामासिप्प्रियन्देवानामनाधृष्टन्देवयजनमसि ॥ ३१/१ ॥

---

१ हस्ताभ्यां स्वस्तिकं कृत्वा प्रातस्तिष्ठेद्दिवाकरम् । मध्याह्ने तु ऋजू बाहू सायं मुकुलितौ करौ ॥

गायत्र्युपस्थानम्—तुरीयपदस्य विमल ऋषिः परमात्मा देवता गायत्री छन्दः गायत्र्युपस्थाने विनियोगः-ॐगायत्र्यस्येकपदीद्विपदीत्रिपदीचतुष्पद्यपदसिनहिपद्यसेनमस्तेतुरीयायदर्शतायपदायपरोरजसेसावदोम् ॥ इति नमस्कृत्य हस्ते जलमादाय-तत्सवितुरित्यस्य विश्वामित्र ऋषिः सविता देवता गायत्री छन्दः वायव्यं बीजं चतुर्थं शक्तिः पञ्चविंशतिर्व्यञ्जनानि कीलकं चतुर्थं पदं प्रणवो मुखम् (अग्निर्मुखं) ब्रह्मा शिरः विष्णुर्हृदयं रुद्रः कवचं परमात्मा शरीरं पृथिवी योनिः प्राणापानव्यानोदानसमाना सप्राणा श्वेतवर्णा साङ्ख्यायनसगोत्रा चतुर्विंशत्यक्षरा पड्स्वरा सरस्वतीजिह्वा पिङ्गाक्षी त्रिपदा गायत्री अशेषपापक्षयार्थे जपे विनियोगः । गायत्रीध्यानम्—

मुक्ताविद्रुमहेमनीलधवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणैर्युक्तामिन्दुनिबद्धरत्नमुकुटां तत्त्वार्थवर्णात्मिकाम् । गायत्रीं वरदाभयाङ्कुशकशा शुभ्रं कपालं गुणं शङ्खं चक्रमथारविन्दयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे ।

ब्रह्मशापविमोचनम्—अस्य श्रीब्रह्मशापविमोचनमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः भुक्तिमुक्तिप्रदा ब्रह्मशापविमोचनी गायत्रीशक्तिर्देवता गायत्री-छन्दः ब्रह्मशापविमोचनार्थे जपे विनियोगः—

गायत्रीं ब्रह्मेत्युपासीत यद्रूपं ब्रह्मविदो विदुः । तां पश्यन्ति धीराः सुमनसा वाचामग्रतः ॥ ॐवेदान्तनाथाय विद्महे हिरण्यगर्भाय धीमहि । तन्नो ब्रह्म प्रचोदयात् ॥ ॐदेवि गायत्रि त्वं ब्रह्मशापाद्विमुक्ता भव ॥

अस्य श्रीवसिष्ठशापविमोचनमन्त्रस्य निग्रहानुग्रहकर्ता वसिष्ठ ऋषिः वसिष्ठानुगृहीता गायत्रीशक्तिर्देवता विश्वोद्भवा गायत्री छन्दः वसिष्ठशापविमोचनार्थे जपे विनियोगः—

चैव व्यापकाञ्जलिकं तथा। शकटं यमपाशं च ग्रथितं चोन्मुखोन्मुखम्। प्रलम्बं मुष्टिकं चैव मत्स्यः कूर्मो वराहकम्। सिंहाक्रान्तं महाक्रान्तं मुद्गरं पल्लवं तथा। इति मुद्रा[1] दर्शयित्वा वस्त्राच्छादितां[2] जपमालां गोमुखीं वा नाभिदेशे[3] धृत्वा गायत्रीजपः कार्यः। प्रणवस्य परब्रह्मऋषिः परमात्मा देवता गायत्री छन्दः व्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषिः अग्निवायुसूर्या देवता गायत्री छन्दः सर्वपापक्षयार्थे गायत्रीमन्त्रजपे विनियोगः—ॐभूर्भुवःस्वःॐतत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गोदेवस्यधीमहि।।धियोयोनः प्रचोदयात्।।[4]।। एवं प्रवालरुद्राक्षस्फटिकमौक्तिकादिनिर्मितया मालया करमालया[5] वा मंत्रार्थं ध्यायन्मौनी[6] सहस्रं शतम् अष्टोत्तरशतम् अष्टाविंश-

१ चतुर्विंशतिमुद्राश्च जपादौ सम्प्रदर्शयेत्। एता मुद्रा न जानाति गायत्री निष्फला भवेत्॥ २ वस्त्रेणाच्छाद्य तु करं दक्षिणं यः सदा जपेत्। तस्य स्यात्सफलं जाप्यं तद्धीनमफलं स्मृतम्॥ अत एव जपार्थं सा गोमुखी ध्रियते जनैः॥ यक्षरक्षःपिशाचाश्च सिद्धविद्याधरा गणाः। यस्मात्प्रभावं गृह्णन्ति तस्माद्गुह्यं तु कारयेत्॥ ३ प्रातर्नाभौ करं कृत्वा मध्याह्ने हृदि संस्थितम्। सायं जपेच्च नासाग्रे ह्येष जप्यविधिः स्मृतः॥ ४ ॐकारं पूर्वमुच्चार्य भूर्भुवःस्वस्तथैव च। गायत्रीं प्रणवश्चान्ते जप एवमुदाहृतः॥

५ अनामामध्यमारभ्य कनिष्ठादि तथैव च। तर्जनीमूलपर्यन्ते दशस्वेषु संजपेत्॥ मध्यमादिद्वयं पूर्वे जपकाले तु वर्जयेत्। तं वै मेरुं विजानीयात्कथितं ब्रह्मणा पुरा॥ मेरुहीना च या माला मेरुलङ्घा च या भवेत्। अगुद्धप्रतिकाशा च सा माला निष्फला भवेत्॥ अरिष्टपत्रं बीजं च शङ्खपद्मौ मणिस्तथा। कुशग्रन्थिश्च रुद्राक्ष उत्तमं चोत्तरोत्तरम्॥ प्रवालमुक्तास्फटिकैर्जपः कोटिफलप्रदः। तुलसीमणिभिर्येन गणितं चाक्षयं फलम्॥ चित्रिणी विमलस्त्वाभा ब्रह्मनाडीगतान्तरा। तया सङ्ग्रथिता माला सर्वकामफलप्रदा॥ ६ ध्यायेत्तु मनसा मन्त्रं जिह्वोष्ठौ न विचालयेत्। न कम्पयेच्छिरो ग्रीवां दन्तान्नैव प्रकाशयेत्। ७ उपांशु स्याच्छतगुणः साहस्रो मानसो जपः॥ ८ सायं प्रातश्च मध्याह्ने सावित्रीं वाग्यतो जपेत्। सहस्रपरमां देवीं शतमध्यां दशावराम्॥ अन्यच्च—अष्टोत्तरशतं नित्यमष्टाविंशतिरेव वा। विधिना दशकं वापि त्रिकालेषु जपेद्बुधः॥

तिवारं दशवारं वा गायत्रीं जपेत् ॥ ततः षडङ्गन्यासान्कुर्यात्—ॐभूः हृदयाय नमः। ॐभुवःशिरसे स्वाहा। ॐस्वःशिखायै वषट्। ॐतत्सवितुर्वरेण्यं कवचाय हुम्। ॐभर्गो देवस्य धीमहि नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐधियो यो नः प्रचोदयात् अस्त्राय फट्॥ ततो मुद्राप्रदर्शनम्—सुरभिर्ज्ञानवैराग्यं योनिः शङ्खोऽथ पङ्कजम्। लिङ्गं निर्वाणकं चैव जपान्तेऽष्टौ प्रदर्शयेत्॥ ततः सूर्यप्रदक्षिणा—विश्वतश्चक्षुरितिमंत्रस्य विश्वकर्मा भौवन ऋषिः विश्वकर्मा देवता त्रिष्टुप्छन्दः सूर्यप्रदक्षिणायां विनियोगः ॥ –

ॐव्विश्वतश्चक्षुरुतव्विश्वतोमुखोव्विश्वतोबाहुरुतव्विश्वतस्पात्। सम्बाहुभ्यान्धमतिसम्पतत्रैर्द्यावाभूमीजनयन्देवऽएकः ॥ १९/१७ ॥

सूर्यादिदेवतानां नमस्काराः-एकचक्र इत्यस्य नारायण ऋषिः सूर्यो देवता उष्णिक्छन्दः सूर्यनमस्कारे विनियोगः–एकचक्रो रथो यस्य दिव्यः कनकभूषितः। स मे भवतु सुप्रीतः पद्महस्तो दिवाकरः॥ ॐश्रीसूर्याय नमः। ॐगायत्र्यै नमः। ॐसावित्र्यै नमः। ॐसन्ध्यायै नमः। ॐसरस्वत्यै नमः। प्राच्याम्—ॐइन्द्राय नमः। आग्नेय्याम्—ॐअग्नये नमः। दक्षिणस्याम्—ॐयमाय नमः। नैर्ऋत्याम्—ॐनिर्ऋतये नमः। पश्चिमायाम्—ॐवरुणाय नमः। वायव्याम्—ॐवायवे नमः। उत्तरस्याम् ॐकुबेराय नमः। ऐशान्याम्—ॐईश्वराय नमः। ऊर्ध्वायां–ॐब्रह्मणे नमः। अधोदिशि–ॐअनन्ताय नमः॥ जपनिवेदनम्–देवागातुविद इत्यस्य मनसस्पतिर्ऋषिः वातो देवता विराट् छन्दः जपनिवेदने विनियोगः—ॐदेवागातुविदोगातुंव्वित्त्वागातुमित। मनसस्पतऽइमन्देवयज्ञꣳस्वाहाव्वातेधाः॥ ८/२१ ॥ जपार्पणम्–अनेन प्रातःसन्ध्याङ्गभूतेन अमुकसङ्ख्याकेन गायत्रीमन्त्रजपाख्येन

कर्मणा श्रीभगवान्ब्रह्मस्वरूपी सूर्यनारायणः प्रीयतां नमम ॥ प्रार्थना— यदक्षरपदभ्रष्टं मात्राहीनं तु यद्भवेत् । तत्सर्वं क्षम्यतां देवि काश्यपप्रियवादिनि ॥ सन्ध्याविसर्जनम् । उत्तरे शिखरे इत्यस्य कश्यप ऋषिः सन्ध्या देवता अनुष्टुप्छन्दः सन्ध्याविसर्जने विनियोगः—उत्तरे शिखरे देवि भूम्यां पर्वतमस्तके । ब्राह्मणेभ्यो विनिर्मुक्ता गच्छ देवि यथासुखम् ॥ गोत्रप्रवरोच्चारणपूर्वकमभिवादनम्—अमुकगोत्रोत्पन्नोऽमुकप्रवरान्वितः शुक्लयजुर्वेदाम्नायवाजिमाध्यन्दिनीयशाखाध्यायी अमुकशर्माऽहं भो आचार्य त्वामभिवादयामि । भो वैश्वानर त्वामभिवादयामि । भो सूर्याचन्द्रमसौ युवामभिवादयामि । भो याज्ञवल्क्य त्वामभिवादयामि । भो ईश्वर त्वामभिवादयामि ॥ ईश्वरस्तुतिः—आकाशात्पतितं तोयं यथा गच्छति सागरम् । सर्वदेवनमस्कारः केशवं प्रतिगच्छति ॥ यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु । न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥ अर्पणम्—अनेन प्रातःसन्ध्योपासनाख्येन कर्मणा भगवान्ब्रह्मस्वरूपी परमेश्वरः प्रीयतां न मम ॥ द्विराचमनम्—ॐकेशवाय नमः स्वाहा ॐनारायणाय नमः स्वाहा ॐमाधवाय नमः स्वाहा ॥ हस्तप्रक्षालनम् ॐगोविन्दाय नमः ॥ ॐविष्णवे नमः । ॐविष्णवे नमः । ॐविष्णवे नमः ॥ इति प्रातःसन्ध्याप्रयोगः ॥

---

१ स्वस्तिकाकारहस्ताभ्यां कर्णौ स्पृष्ट्वा स्वस्य नामगोत्रप्रवरोच्चारणपूर्वकम् अभिवादयेत् ॥ अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः । चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुः कीर्तिर्यशो बलम् ॥

२ होमे भोजनकाले च सन्ध्ययोरुभयोरपि । आचान्तः पुनराचामेदन्यत्रापि सकृत्सकृत् ॥ द्विराचम्य ततः शुद्धः स्मृत्वा विष्णुं सनातनम् ॥ व्यासः—शिरः प्रावृत्य कण्ठं वा मुक्तकच्छशिखोऽपि वा । अकृत्वा पादयोः शौचमाचान्तोऽप्यशुचिर्भवेत् ॥ अपः पाणिनखैः स्पृष्ट्वा आचामेयस्तु वै द्विजः । सुरापानेन तत्तुल्यमित्येवमृषिरब्रवीत् ॥

३ सन्ध्यादेवपूजातर्पणादौ धृतं कुशापवित्रं तत्तत्कर्मसम्बन्धिजलं च पवित्रस्थले विसर्जयेत् ॥

॥ अथ श्रीशिवपञ्चायतनपूजनविशेषः ॥

॥ ११ ॥ देवस्पर्शेऽनधिकारिणः ॥

नारदीये—स्त्रीणामनुपनीतानां शूद्राणां च नराधिप । स्पर्शने नाधिकारोऽस्ति विष्णोर्वा शङ्करस्य च ॥ शूद्रो वाऽनुपनीतो वा स्त्री वापि पतितोऽपि वा । केशवं वा शिवं वापि स्पृष्ट्वा नरकमश्नुते ॥ (अत एव देवालये शिवलिङ्गदेव्यादिमूर्तीनां पर्युषितनिर्माल्योत्सर्जनपूर्वकं प्रथमपूजनादौ नियुक्ताः ' शूद्राः ' (" गुरवा " " गोसाई ") इत्यभिधानाः सन्तीति सम्प्रदायः महत्तः) ॥

॥ १२ ॥ देवार्चनकालः ॥

मात्स्ये—प्रातर्मध्यन्दिने सायं देवपूजां समारभेत् । अशक्तौ विस्तरेणैव प्रातः सम्पूज्य केशवम् । मध्याह्ने चैव सायं च पुष्पाञ्जलिमपि क्षिपेत् ॥ नृसिंहपुराणे—जलदेवं नमस्कृत्य ततो गच्छेद्गृहं बुधः । पौरुषेण च सूक्तेन ततो विष्णुं समर्चयेत् ॥ मरीचिः—विधाय देवतापूजां प्रातर्होमादनन्तरम् । गुरूक्तेन तु मार्गेण मूलमन्त्रं जपेद्बुधः ॥

॥ १३ ॥ देवप्रतिमायां नित्यस्नानविचारः ॥

प्रयोगपारिजाते—प्रतिमापट्टयन्त्राणां नित्यस्नानं न कारयेत् । कारयेत्पर्वदिवसे यदा वा मलधारणम् ॥ अयं नियमस्तु षडङ्गुलोर्ध्वप्रतिमासु बोद्धव्यः । यदि षडङ्गुलन्यूना प्रतिमा चेत् तर्हि तां नित्यमेव स्नापयेत् ॥

॥ १४ ॥ मध्याह्ने भुक्तस्यापि रात्रौ पञ्चोपचारपूजाप्रकारः ॥

शारदातिलके—आसनस्नानवस्त्राणि भूषणं च विवर्जयेत् । रात्रौ देवार्चने तत्र पदार्थैः पञ्चभिस्तथा । स्नाने वस्त्रे तथा भक्ष्ये दद्यादाचमनीयकम् ॥

॥ १५ ॥ गृहे देवताप्रतिमाविचारः ॥

मात्स्ये—सौवर्णी राजती वापि ताम्री रत्नमयी तथा । शैली दारुमयी वापि लोहसङ्घमयी तथा । अङ्गुष्ठपर्वादारभ्य वितस्ति यावदेव तु । गृहेषु प्रतिमा कार्या नाधिका शस्यते बुधैः ॥ स्मृत्यन्तरे—एका मूर्तिर्न पूज्यैव गृहिणा स्वेष्टमिच्छता । अनेकमूर्तिसम्पन्नः सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥ गृहे लिङ्गद्वयं नार्च्यं गणेशत्रितयं तथा । शङ्खद्वयं तथा सूर्यौ नार्च्यौ शक्तित्रयं तथा ॥ द्वे चक्रे द्वारकायाश्च शालिग्रामशिलाद्वयम् । तेषां तु पूजनेनैव उद्वेगं प्राप्नुयाद्गृही ॥ रविर्विनायकश्चण्डी ईशो विष्णुस्तथैव च । अनुक्रमेण पूज्यन्ते व्युत्क्रमे तु महद्भयम् ॥ अथर्वणरहस्ये हारीतः—शालिग्रामशिला विष्णुर्बाणस्तु शशिशेखरः । चण्डिका काञ्चनी प्रोक्ता स्वर्णमाक्षी तु शौनक ॥ नार्मदेयो विघ्नहरो लोहितः प्रस्तरः शुभः । अर्ककान्तस्तु तरणिर्ग्राह्या ह्येवं समासतः ॥ पञ्चानामपि देवानां यथाभागं क्रमेण वा । स्थापनं कारयेद्भक्त्या मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥ चक्राङ्कमिथुनं पूज्यं शालिग्रामशिलाग्रतः ॥ स्कान्दे—भक्त्या वा यदि वाऽभक्त्या कलौ मुक्तिमवाप्नुयात् ॥

॥ १६ ॥ देवप्रतिमाप्रतिष्ठाविचारः ॥

स्कान्दे–शालिग्रामशिलायास्तु प्रतिष्ठा नैव विद्यते ॥ भविष्ये—बाणलिङ्गानि राजेन्द्र ख्यातानि भुवनत्रये । न प्रतिष्ठा न संस्कारस्तेषां चावाहनं तथा ॥ भरतमालायां मार्कण्डेयोक्तिः—कम्बुश्चक्रं शैलभवा नार्मदेयाग्निजनीपती । बाणो विष्णुशिला चैषां प्रतिष्ठां नैव कारयेत् ॥ नाममालायां वृद्धपराशरः—शैलीं दारुमयीं हैमीं धात्वाद्याकारसम्भवाम् । प्रतिष्ठां वै प्रकुर्वीत प्रासादे वा गृहे नृप ॥ कालिकासङ्ग्रहे लौगाक्षिः—गृहे चलार्चा विज्ञेया प्रासादे स्थिरसंज्ञिका । इत्येते कथिता

मार्गो मुनिभिः कर्मवादिभिः॥ कर्मयोगे भगवद्वाक्यम्-ये त्वेतदभ्यसूयन्तो नानुतिष्ठन्ति मे मतम्। सर्वज्ञानविमूढांस्तान्विद्धि नष्टानचेतसः॥

॥ १७ ॥ पञ्चायतनदेवताः ॥

वाचस्पतौ—आदित्यं गणनाथं च देवीं रुद्रं च केशवम्। पञ्चदैवत्यमित्युक्तं सर्वकर्मसु पूजयेत् ॥ तत्रादौ 'शालिग्रामः' स्कान्दे—शिलाऽप्यामलकीतुल्या पूज्या सूक्ष्मैव या भवेत्। यथा यथा शिला सूक्ष्मा तथा स्यात्तु महत्फलम् ॥ 'शिवबाणः' पुराणसङ्ग्रहे—पक्वजम्बूफलाकारं कुक्कुटाण्डसमाकृति। भुक्तिमुक्तिप्रदं चैव बाणलिङ्गमुदाहृतम् ॥ 'गणेशः' —शुण्डादण्डेन दन्ताभ्यां शोभनाभ्यामलङ्कृता। एकेन वाथ दन्तेन रक्तबिन्दुभिरन्विता॥ पार्श्वभागैकवदना वक्त्राभ्यां शोभिता च या। गणेशमूर्तिः सा ज्ञेया विघ्नौघविनाशिनी ॥ 'सूर्यः'—वाह्ये वाऽभ्यन्तरे वापि चक्रद्वादशसंयुता। शूर्पमूर्तिरिति ख्याता सर्वव्याधिविनाशिनी ॥ 'देवी'—गर्ते वा गर्तमध्ये वा योन्याकारेण चिन्तिता। योनेरुपरि मध्ये वा कुण्डलीभूतसर्पवत्॥ अर्धाधिका त्रिरेखाभिर्भूषिता या शिला शुभा। शक्तिकुण्डलिनी सा तु देवानामपि दुर्लभा ॥ शक्तिकुण्डलिनीं देवीं नित्यं यः पूजयेन्नरः। इन्द्रादिदुर्लभान्भोगान् भुक्त्वा निर्वाणमाप्नुयात् ॥

॥ १८ ॥ पञ्चायतनदेवतास्थापनप्रकारः ॥

शिवपञ्चायतनम्	विष्णुपञ्चायतनम्	सूर्यपञ्चायतनम्	देवीपञ्चायतनम्	गणेशपञ्चायतनम्
विष्णु सूर्य शिव देवी गणेश	शिव गणेश विष्णु देवी सूर्य	शिव गणेश सूर्य देवी विष्णु	विष्णु शिव देवी सूर्य गणेश	विष्णु शिव गणेश देवी सूर्य

१ शम्भौ मध्यगते हरीनहरभूदेव्यो, हरौ शङ्करेभास्यैनागसुता, रवौ हरगणेशाजाम्बिकाः स्थापिताः। देव्यां विष्णुहरैकदन्तरवयो, लम्बोदरेऽजेश्वरेनार्याः, शङ्करभागतोऽतिसुखदा व्यस्तास्तु ते हानिदाः ॥

॥ १९ ॥ अथ श्रीशिवपञ्चायतनपूजाप्रयोगः ॥

प्राङ्मुख उदङ्मुखो वा स्वासने उपविश्य पवित्रपाणिः शिवपञ्चायतनं पुरतः संस्थाप्य वामे कलशं पूजोपचारान्दक्षिणे निधाय आचम्य प्राणानायम्य ।

ॐस्वस्तिनऽइन्द्रोवृद्धश्रवाःस्वस्तिनःपूषाविश्ववेदाः ॥ स्वस्तिनस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिःस्वस्तिनोबृहस्पतिर्दधातु ॥२५।१९॥

सुशान्तिर्भवतु ॥ देवतानमस्कारः–श्रीमन्महागणाधिपतये नमः । इष्टदेवताभ्यो नमः । कुलदेवताभ्यो नमः । ग्रामदेवताभ्यो नमः । स्थानदेवताभ्यो नमः । वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः । श्रीलक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः । श्रीउमामहेश्वराभ्यां नमः । शचीपुरन्दराभ्यां नमः । मातापितृचरणकमलेभ्यो नमः । सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः । सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमो नमः । निर्विघ्नमस्तु । सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः । लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो गणाधिपः ॥ धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः । द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि ॥ विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा । सङ्ग्रामे सङ्कटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते ॥ शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम् । प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये ॥ अभीप्सितार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः । सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः ॥ सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके । शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषाममङ्गलम् । येषां हृदिस्थो भगवा-

न्मङ्गलायतनं हरिः ॥ तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तदेव । विद्याबलं दैवबलं तदेव लक्ष्मीपते तेऽङ्घ्रियुगं स्मरामि ॥ लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः । येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः ॥ यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः । तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ॥ सर्वेष्वारब्धकार्येषु त्रयस्त्रिभुवनेश्वराः । देवा दिशन्तु नः सिद्धिं ब्रह्मेशानजनार्दनाः ॥ विनायकं गुरुं भानुं ब्रह्मविष्णुमहेश्वरान् । सरस्वतीं प्रणौम्यादौ सर्वकार्यार्थसिद्धये ॥ सङ्कल्पः—विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य अद्य ब्रह्मणो द्वितीये परार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे भारतवर्षे जम्बूद्वीपे रामक्षेत्रे परशुरामाश्रमे दण्डकारण्यदेशे श्रीगोदावर्याः पश्चिमदिग्भागे श्रीमल्लवणाब्धेरुत्तरे तीरे अमुके श्रीशालिवाहनशके अस्मिन्वर्तमाने अमुकनामसंवत्सरे अमुकायने अमुकर्तौ अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकनक्षत्रे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशिस्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथं राशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवंगुणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थम् ऐश्वर्याभिवृद्ध्यर्थम् अप्राप्तलक्ष्मीप्राप्त्यर्थम् प्राप्तलक्ष्म्याश्चिरकालसंरक्षणार्थं सकलमनईप्सितकामनासंसिद्ध्यर्थं लोके सभायां राजद्वारे वा सर्वत्र यशोविजयलाभादिप्राप्त्यर्थम् इह जन्मनि जन्मान्तरे वा सकलदुरितोपशमनार्थं मम सभार्यस्य सपुत्रस्य सबान्धवस्य अखिलकुटुम्बसहितस्य सपशोः समस्तभयव्याधिजरापीडामृत्युपरिहारद्वारा आयुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं मम जन्मरा-

शेरखिलकुटुम्बस्य वा जन्मराशेः सकाशाद्ये केचिद्विरुद्धचतुर्थाष्टमद्वादशस्थानस्थितक्रूरग्रहास्तैः सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशद्वारा एकादशस्थानस्थितवच्छुभफलप्राप्त्यर्थं पुत्रपौत्रादिसन्ततेरविच्छिन्नवृद्ध्यर्थम् आदित्यादिनवग्रहानुकूलतासिद्ध्यर्थम् इन्द्रादिदशदिक्पालप्रसन्नतासिद्ध्यर्थम् आधिदैविकाऽऽधिभौतिकाऽऽध्यात्मिकत्रिविधतापोपशमनार्थं धर्मार्थकाममोक्षफलावाप्त्यर्थं च श्रीशिवपञ्चायतनदेवताप्रीत्यर्थं यथाज्ञानेन यथामिलितोपचारद्रव्यैः ध्यानावाहनादिषोडशोपचारैः अन्योपचारैश्च श्रीशिवपञ्चायतनदेवतानां पूजनमहं करिष्ये। तत्रादौ दिग्रक्षणं कलशार्चनं शङ्खघण्टार्चनं च करिष्ये॥ दिग्रक्षणम्। वामहस्ते गौरसर्षपान्गृहीत्वा—

ॐ रक्षोहणं वलगहनं वैष्णवीमिदमहन्तं वलगमुत्किरामि यम्मे निष्ट्यो यममात्यो निचखानेदमहन्तं वलगमुत्किरामि यम्मे समानो यमसमानो निचखानेदमहन्तं वलगमुत्किरामि यम्मे सबन्धुर्यमसबन्धुर्निचखानेदमहन्तं वलगमुत्किरामि यम्मे सजातो यमसजातो निचखानोत्कृत्याङ्किरामि ॥ ५।२३ ॥ रक्षोहणो वो वलगहनः प्रोक्षामि वैष्णवान्रक्षोहणो वो वलगहनोऽवनयामि वैष्णवान्रक्षोहणो वो वलगहनोऽवस्तृणामि वैष्णवान्रक्षोहणौ वां वल-

१ यो मोहादथवाऽऽलस्यादकृत्वा देवतार्चनम्। भुङ्क्ते स याति नरकं सूकरेष्वभिजायते॥ अतोऽहरहर्देवपूजा प्रतिपुरुषमावश्यकी। अकरणे प्रत्यवायदर्शनात्॥

गहनाऽउपंदधामिव्वैष्णणवीरक्षोहणौवांव्वलगहनौपव्यूँ-
हामिव्वैष्णणवीव्वैष्णणवमसिव्वैष्णणवास्त्थ ॥ २५/५ ॥ रक्षसां-
भागोसिनिरस्तꣳरक्षऽइदमहꣳरक्षोभितिष्ठामीदमहꣳर-
क्षोवबाधऽइदमहꣳरक्षोधमन्तमोनयामि ॥ घृतेनद्यावा-
पृथिवीप्प्रोर्णुवाथांव्वायोव्वेस्तोकानामग्निराज्ज्यंस्यव्वे-
तुस्वाहास्वाहाकृतेऽऊर्द्ध्वनभसम्मारुतङ्गच्छतम् ॥ १६/६ ॥
रक्षोहाव्विश्वचर्षणिरभियोनिमयोहते ॥ द्रोणेसधस्त्थ-
मासदत् ॥ २६/२६ ॥

अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः। ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥ अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम् । सर्वेषामवरोधेन पूजाकर्म समारभे । यदत्र संस्थितं भूतं स्थानमाश्रित्य सर्वतः । स्थानं त्यक्त्वा तु तत्सर्वं यत्रस्थं तत्र गच्छतु ॥ भूतप्रेतपिशाचाद्या अपक्रामन्तु राक्षसाः। स्थानादस्माद्व्रजन्त्वन्यत्स्वीकरोमि भुवं त्विमाम् ॥ भूतानि राक्षसा वापि येऽत्र तिष्ठन्ति केचन । ते सर्वेऽप्यपगच्छन्तु पूजाकर्म करोम्यहम् ॥ एतैर्मन्त्रैः सर्वदिक्षु विकिरेत् ॥ वामपादेन भूमिं त्रिवारं ताडयेत् ॥ उदकस्पर्शः ॥ ततः स्ववामभागे पूजार्थजलपूरितकलशार्चनम् ।

तत्र वरुणावाहनम्—तत्त्वायामीत्यस्य शुनःशेप ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः वरुणो देवता वरुणावाहने विनियोगः ॥

१ रौद्रं राक्षसमासुरमाभिचारिकं मन्त्रमुक्त्वा पित्र्यमात्मानं चालभ्योपस्पृशेदप ॥

ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः ॥ अहेडमानो वरुणेहबोध्युरुशꣳस मान आयुः प्रमोषीः ॥ $\frac{१८}{४९}$ ॥

मकरस्थं पाशहस्तमम्भसां पतिमीश्वरम् । आवाहये प्रतीचीशं वरुणं यादसां पतिम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अस्मिन्कलशे वरुणं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकम् आवाहयामि स्थापयामि ॥ प्रतिष्ठापनम्—

ॐ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनोत्वरिष्टं यज्ञꣳ समिमन्दधातु ॥ विश्वे देवास इह मादयन्तामोम्प्रतिष्ठ ॥ $\frac{१३}{२}$ ॥

ॐ वरुणाय नमः । वरुण सुप्रतिष्ठितो वरदो भव ॥ प्रतिष्ठाप्य ॥ ततः ॐ भूर्भुवः स्वः वरुणाय नमः चन्दनं समर्पयामि ॥ इत्यादिपञ्चोपचारैः सम्पूज्य तत्त्वायामीति पुष्पाञ्जलिं समर्प्य अनेन पूजनेन वरुणः प्रीयताम् ॥ ततः अनामिकया कलशं स्पृष्ट्वा अभिमन्त्रयेत्–कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः । मूले तत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः ॥ कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा । ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः ॥ अङ्गैश्च सहिताः सर्वे कलशाम्बुसमाश्रिताः । गायत्री चात्र सावित्री शान्तिः पुष्टिकरी तथा ॥ आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः । गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति ॥ नर्मदे सिन्धो कावेरि जलेऽस्मिन्संनिधिं कुरु । ब्रह्माण्डोदरतीर्थानि

१ स्पृशन्ननामिकाग्रेण क्वचिदालोकयन्नपि । अनुमन्त्रणं सर्वत्र सदैवमभिमन्त्रयेत् ॥

करैः स्पृष्टानि ते रवे ॥ तेन सत्येन मे देव तीर्थं देहि दिवाकर ॥ ततो पूजनम्– पूर्वे ऋग्वेदाय नमः ॥ दक्षिणे यजुर्वेदाय नमः ॥ पश्चिमे सामवेदाय नमः ॥ उत्तरे अथर्वणवेदाय नमः ॥ कलशमध्ये अपाम्पतये वरुणाय नमः ॥ इति वरुणं सम्पूज्य "गायत्र्यादिभ्यो नमः" इति कलशदेवताः पञ्चोपचारैरभ्यर्च्य कलशं प्रार्थयेत् ॥ देवदानवसंवादे मथ्यमाने महोदधौ । उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयम् ॥ त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः । त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः ॥ शिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः । आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवाः सपैतृकाः ॥ त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदाः । त्वत्प्रसादादिमां पूजां कर्तुमीहे जलोद्भव ॥ सान्निध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा ॥ अङ्कुशमुद्रया सूर्यमण्डलात् सर्वाणि तीर्थान्यावाह्य । वं इति धेनु मुद्रया अमृतीकृत्य हुं इति कवचेनावगुण्ठ्य मत्स्यमुद्रयाऽऽच्छाद्य वं इति मूलेनाष्टवारमभिमन्त्र्य तस्मादुदकादुदकं गृहीत्वा पूजाद्रव्याणि सम्प्रोक्षेत् । तां च भूमिं सम्प्रोक्षेत् । पुनः स्वल्पोदकमादाय स्वात्मानं स्वशिरश्च सम्प्रोक्षेत् ॥ तत्र मन्त्रः—अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा । यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ॥

ॐ आपोहिष्ठामयोभुवस्तानऽऊर्ज्जेदधातन ॥ महेरणायचक्षसे ॥ १ ॥ योवःशिवतमोरसस्तस्यभाजयतेहनः ॥ उशतीरिवमातरः ॥ २ ॥ तस्माऽअरङ्गमामवोयस्यक्षयायजिन्वथ ॥ आपोजनयथाचनः ॥ ३ ॥ [१२/११] ॥

१ गन्धपुष्पे धूपदीपौ नैवेद्यं पञ्च ते क्रमात् ॥

पश्चात्कलश(कुम्भ)मुद्रां प्रदर्शयेत् ॥

अथ दीपपूजनम्–घृतदीपं प्रज्वाल्य निर्वातस्थले निधाय ॥

ॐ अ॒ग्निर्ज्योति॒र्ज्योति॑र॒ग्निः स्वाहा॒ सूर्यो॒ ज्योति॒र्ज्योति॒ः सूर्य॒ः स्वाहा॑ ॥ अ॒ग्निर्वर्चो॒ ज्योति॒र्वर्च॒ः स्वाहा॒ सूर्यो॒ वर्चो॒ ज्योति॒र्वर्च॒ः स्वाहा॑ ॥ ज्योति॒ः सूर्य॒ः सूर्यो॒ ज्योति॒ः स्वाहा॑ ॥ ३ ॥

ॐ भूर्भुवःस्वः दीपस्थदेवतायै नमः आवाहयामि सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि नमस्करोमि ॥ प्रार्थयेत्– भो दीप देव-रूपस्त्वं कर्मसाक्षी ह्यविघ्नकृत् ॥ यावत्पूजासमाप्तिः स्यात्तावदत्र स्थिरो भव ॥ अनेन पूजनेन दीपदेवता प्रीयताम् ॥ शङ्खपूजनम्–शङ्खे जल-पूरणम् । शङ्खं चन्द्रार्कदैवत्यं वरुणं चाधिदैवतम् । पृष्ठे प्रजापतिं विद्यादग्रे गङ्गा सरस्वती ॥ त्रैलोक्ये यानि तीर्थानि वासुदेवस्य चाज्ञया । शङ्खे तिष्ठन्ति विप्रेन्द्र तस्माच्छङ्खं प्रपूजयेत् ॥

ॐ अ॒ग्निरृषि॒ः पव॑मान॒ः पाञ्च॑जन्यः पु॒रोहि॑तः ॥ तमी॑महे महाग॒यम् ॥ उ॒प॒या॒मगृ॑हीतोऽस्यग्नये॑ त्वा॒ वर्च॑स ए॒ष ते॒ योनि॑र॒ग्नये॑ त्वा॒ वर्च॑से ॥ २६ ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः शङ्खस्थदेवतायै नमः आवाहयामि सर्वोपचारार्थे गन्धपुष्पाणि समर्पयामि नमस्करोमि ॥ प्रार्थयेत्—त्वं पुरा सागरोत्पन्नो विष्णुना विधृतः करे । नमितः सर्वदेवैश्च पाञ्चजन्य नमोऽस्तु ते ॥

---

१ दक्षाङ्गुष्ठं पराङ्गुष्ठे (वामाङ्गुष्ठे) क्षिप्त्वा हस्तद्वयेन च । सावकाशां (मध्यशून्यां) मुष्टिकां च कुर्यात्सा कुम्भमुद्रिका ॥

पाञ्चजन्याय विद्महे पावमानाय धीमहि । तन्नः शङ्खः प्रचोदयात् ॥ शङ्खमुद्रां[1] प्रदर्शयेत् । घण्टापूजनम्—आगमार्थं तु देवानां गमनार्थं तु रक्षसाम् । घण्टानादं प्रकुर्वीत पश्चाद् घण्टां प्रपूजयेत् ॥

ॐ सुपर्णोऽसि गुरुत्माँस्त्रिवृत्ते शिरो गायत्रं चक्षुर्बृहद्रथन्तरे पक्षौ ॥ स्तोमऽआत्मा छन्दाᳬंस्यङ्गानि यजूᳬंषि नाम ॥ साम ते तनूर्वामदेव्यं यज्ञायज्ञियं पुच्छं धिष्ण्याः शफाः ॥ सुपर्णोऽसि गुरुत्मान्दिवं गच्छ स्वः पत ॥ ४/१२ ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः घण्टास्थाय गरुडाय नमः आवाहयामि सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि नमस्करोमि । गरुडमुद्रां[2] प्रदर्शयेत् ।

शिवध्यानम्—ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम् । पद्मासीनं समन्तात्स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं विश्वाद्यं विश्ववन्द्यं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम् ॥

ॐ नमस्ते रुद्र मन्यव ऽउतो त ऽइषवे नमः ॥ बाहुभ्यामुत ते नमः ॥ १/१६ ॥

---

१ वामाङ्गुष्ठं तु सङ्गृह्य दक्षिणेन तु मुष्टिना । कृत्वोत्तानं ततो मुष्टिमङ्गुष्ठं तु प्रसारयेत् । वामाङ्गुल्यस्तथा ऽऽश्लिष्टाः संयुक्ताः सुप्रसारिताः । दक्षिणाङ्गुष्ठसंस्पृष्टा ह्येषा शङ्खमुद्रिका ।
२ मिथस्तर्जनिके श्लिष्टे श्लिष्टावङ्गुष्ठकौ तथा । मध्यमानामिके तु द्वौ पक्षाविव विचालयेत् एषा गरुडमुद्रा स्याद्विष्णोः सन्तोषवर्धिनी ॥

विष्णुध्यानम्—शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम्। लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम्॥

ॐ व्विष्णोर्रराटमसि व्विष्णोः श्नप्त्रेस्थो व्विष्णोः स्यूरसि व्विष्णोर्ध्रुवोसि॥ वैष्णवमसि व्विष्णवे त्वा॥ ३१/५॥

सूर्यध्यानम्—ध्येयः सदा सवितृमण्डलमध्यवर्ती नारायणः सरसिजासनसन्निविष्टः। केयूरवान्मकरकुण्डलवान्किरीटी हारी हिरण्मयवपुर्धृतशङ्खचक्रः॥

ॐ सूर्य्यरश्मिर्हरिकेशः पुरस्तात्सविता ज्ज्योतिरुदयाँ२ऽअजस्रम्॥ तस्य पूषा प्रसवे याति व्विद्वान्त्सम्पश्यन्विश्वा भुवनानि गोपाः॥ १८/७॥

गणपतिध्यानम्—श्वेताङ्गं श्वेतवस्त्रं सितकुसुमगणैः पूजितं श्वेतगन्धैः क्षीराब्धौ रत्नदीपैः सुरनरतिलकं रत्नसिंहासनस्थम्। दोर्भिः पाशाङ्कुशाब्जाभयवरदधतं चन्द्रमौलिं त्रिनेत्रं ध्याये शान्त्यर्थमीशं गणपतिममलं श्रीसमेतं प्रसन्नम्॥

ॐ नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्च वो नमो नमो व्व्रातेभ्यो व्व्रातपतिभ्यश्च वो नमो नमो गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्च वो नमो नमो व्विरूपेभ्यो व्विश्वरूपेभ्यश्च वो नमः॥ २५/१६॥

देवीध्यानम् विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कन्धस्थितां भीषणां कन्याभिः करवालखेटविलसद्धस्ताभिरासेविताम् । हस्तैश्चक्रगदासिखेटविशिखांश्चापं गुणं तर्जनीं बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ॥

ॐ मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीय ॥ पशूनाᳪं रूपमन्नस्य रसो यशः श्रीः श्रयतां मयि स्वाहा ॥ ३९/४ ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः ध्यायामि ॥ आवाहनाभावे पुष्पाञ्जल्यर्पणम्–ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥ स भूमिᳪं सर्वतस्पृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥ १/३१ ॥ आगच्छ देवदेवेश तेजोराशे जगत्पते । क्रियमाणां मया पूजां गृहाण सुरसत्तम ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः आवाहनाभावे पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि ॥ आसनम्–ॐ पुरुष एवेदᳪं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् ॥ उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥ २/३१ ॥ रम्यं सुशोभनं दिव्यं सर्वसौख्यकरं शुभम् । आसनं च मया दत्तं

१ कुर्यादावाहनं मूर्तौ मृन्मय्यां सर्वदैव हि । प्रतिमायां जले वह्नौ नावाहनविसर्जने ॥ शालग्रामार्चने चैव नावाहनविसर्जने । आवाहनस्य वा दद्यात्पूर्वं पुष्पाञ्जलिं हरेः। अन्ते पुष्पाञ्जलिं दद्यात्पूजासम्पूर्तिहेतवे ॥ आवाहनादिषोडशोपचाराः यथा–आद्ययाऽऽवाहयेद्देवमृचा तु पुरुषोत्तमम् । द्वितीययाऽऽसनं दद्यात्पाद्यं चैव तृतीयया ॥ अर्घ्यश्चतुर्थ्या दातव्यः पञ्चम्याऽऽचमनं तथा षष्ठ्या स्नानं प्रकुर्वीत सप्तम्या वस्त्रधौतकम् ॥ यज्ञोपवीतं चाष्टम्या नवम्या गन्धमेव च । पुष्पं देयं दशम्या तु एकादश्या च धूपकम् ॥ द्वादश्या दीपकं दद्यात् त्रयोदश्या निवेदनम् । चतुर्दश्या नमस्कारं पञ्चदश्या प्रदक्षिणाः ॥ षोडश्योद्वासनं कुर्याच्छेषकर्माणि पूर्ववत् । ततः सर्वं जपेत्सूक्तं पौरुषं सूक्तमेव च ॥ अत्र यजुर्वेदिभिः—चतुर्दश्या तु ताम्बूलं तथा षोडश्या मन्त्रपुष्पयुतनमस्कारः एवं वचनं वदन्ति तत्र मूलं मृग्यम् ॥

गृहाण परमेश्वर ॥ ॐभूर्भुवःस्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः आसनं समर्पयामि ॥ पाद्यम्—ॐएतावानस्यमहिमातोज्ज्यायाँश्च पूरुषः ॥ पादोस्यविश्वाभूतानित्रिपादस्यामृतन्दिवि ॥ ३/३१ ॥ उष्णोदकं निर्मलं च सर्वसौगन्ध्यसंयुतम् ॥ पादप्रक्षालनार्थाय दत्तं ते प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐभूर्भुवःस्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः पाद्यं समर्पयामि ॥ अर्घ्यम्—ॐत्रिपादूर्द्ध्वऽउदैत्पुरुषःपादोस्येहाभवत्पुनः ॥ ततो विष्वङ्व्यक्रामत्साशनानशनेऽ अभि ॥ ४/३१ ॥ अर्घ्यं गृहाण देवेश गन्धपुष्पाक्षतैर्युतम् । ताम्रपात्रस्थितं चैव फलतोयसमन्वितम् ॥ ॐभूर्भुवःस्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः अर्घ्यं समर्पयामि ॥ आचमनम्—ॐततोविराडजायतविराजोऽअधि पूरुषः ॥ स जातोऽअत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ५/३१ ॥ सर्वतीर्थसमायुक्तं सुगन्धि निर्मलं जलम् । आचम्यतां मया दत्तं गृहीत्वा परमेश्वर ॥ ॐभूर्भुवःस्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः आचमनीयं समर्पयामि ॥ स्नानम्—ॐतस्माद्यज्ञात्सर्वहुतःसम्भृतम्पृषदाज्ज्यम् ॥ पशूँस्ताँश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये ६/३१ ॥ गङ्गासरस्वतीरेवापयोष्णीनर्मदाजलैः । स्नापितोऽसि मया देव ह्यतः शान्तिं कुरुष्व मे ॥ ॐभूर्भुवःस्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः स्नानं समर्पयामि ॥ एकतन्त्रेण पञ्चामृतस्नानम्—

ॐपञ्चनद्यः सरस्वतीमपियन्तिसस्रोतसः ॥ सरस्वतीतुपञ्चधासोदेशेभवत्सरित् ॥ ११/३४ ॥

१ इदं पञ्चामृतस्नानं तु क्षेपकं कृताकृतमस्ति ।

पयो दधि घृतं चैव मधु च शर्करायुतम् । पञ्चामृतं मयाऽऽनीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐभूर्भुवः स्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः पञ्चामृतस्नानं समर्पयामि ॥ अथवा पृथक् पृथक् मन्त्रेण पञ्चामृतस्नानम् । यथा—पयःस्नानम्—

ॐपयः॑ पृथि॒व्याम्पय॒ऽओष॑धीषु॒पयो॑दि॒व्य॒न्तरि॑क्षे॒ पयो॑धाः ॥ पय॑स्वतीः प्र॒दिशः॑ सन्तु॒मह्य॑म् ॥ ३६/१८ ॥

कामधेनुसमुत्पन्नं सर्वेषां जीवनं परम् । पावनं यज्ञहेतुश्च पयः स्नानार्थमर्पितम् ॥ ॐभूर्भुवः स्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः पयःस्नानं समर्पयामि ॥ पयःस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि ॥ शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं समर्पयामि ॥ दधिस्नानम्—

ॐद॒धि॒क्राव्ण्णो॑ऽअकारिषञ्जि॒ष्णोरश्व॑स्य वा॒जिनः॑ ॥ सु॒र॒भिनो॒मुखा॑कर॒त्प्रण॒ऽआयू॑ᳪंषि तारिषत् ॥ ३२/२३ ॥

पयसस्तु समुद्भूतं मधुराम्लं शशिप्रभम् । दध्यानीतं मया देव स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐभूर्भुवः स्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः दधिस्नानं समर्पयामि ॥ दधिस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि ॥ शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं समर्पयामि ॥ घृतस्नानम्—

ॐघृ॒तं घृ॑तपावानः पिबत॒ वसां॑ वसापावानः पिबता॒न्तरि॑क्षस्य ह॒विर॑सि॒ स्वाहा॑ ॥ दिशः॑ प्र॒दिश॑ऽ आ॒दिशो॑ वि॒दिश॑ऽ उ॒द्दिशो॑ दि॒ग्भ्यः स्वाहा॑ ॥ १९/६ ॥

नवनीतसमुत्पन्नं सर्वसन्तोषकारकम् । घृतं तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐभूर्भुवःस्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः घृतस्नानं समर्पयामि । घृतस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि । शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं सम० ॥ मधुस्नानम्—

ॐमधुव्वाताऽऋतायतेमधुंक्षरन्तिसिन्धवः॥माद्ध्वीर्न्नःसन्त्वोषधीः ॥ २०/१३ ॥ मधुनक्तमुतोषसोमधुमत्पार्थिवꣳरजः ॥ मधुद्यौरस्तु नःपिता ॥ २८/१३ ॥ मधुमान्नोव्वनस्पतिर्म्मधुमाँ२ऽअस्तुसूर्य्यः ॥ माद्ध्वीर्ग्गावोभवन्तुनः ॥ २९/१३ ॥

तरुपुष्पसमुद्भूतं सुस्वादु मधुरं मधु । तेजःपुष्टिकरं दिव्यं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐभूर्भुवःस्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः मधुस्नानं समर्पयामि । मधुस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि ॥ शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं समर्पयामि ॥ शर्करास्नानम्—

ॐअपाꣳरसमुद्वयसꣳसूर्य्येसन्तꣳसमाहितम् ॥ अपाꣳरसस्ययोरसस्तंवोगृह्णाम्युत्तममुपयामगृहीतोसीन्द्रायत्त्वाजुष्टंगृह्णाम्म्येषतेयोनिरिन्द्रायत्त्वाजुष्टतमम् ॥ ३/९ ॥

इक्षुसारसमुद्भूता शर्करा पुष्टिकारिका । मलापहारिका दिव्या स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐभूर्भुवःस्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो

नमः शर्करास्नानं समर्पयामि ॥ शर्करास्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि ॥ शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं समर्पयामि ॥ गन्धोदकस्नानम्-

ॐ गन्धर्वस्त्वा विश्वावसुः परिदधातु विश्वस्यारिष्ट्यै यजमानस्य परिधिरस्यग्निरिडऽईडितः ॥ $\frac{२}{३}$ ॥

मलयाचलसम्भूतं चन्दनागरुसम्भवम् । चन्दनं देवदेवेश स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः गन्धोदकस्नानं समर्पयामि ॥ गन्धोदकस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि ॥ शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं समर्पयामि ॥ उद्वर्तनस्नानम्—

ॐ अꣳशुना ते ऽ अꣳशुः पृच्यतां परुषा परुः ॥ गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसो ऽ अच्युतः ॥ $\frac{२०}{२७}$ ॥

नानासुगन्धिद्रव्यं च चन्दनं रजनीयुतम् । उद्वर्तनं मया दत्तं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः उद्वर्तनस्नानं समर्पयामि ॥ उद्वर्तनस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि ॥ शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं समर्पयामि ॥ पञ्चामृतादिस्नानाङ्गपूजा—ॐ भूर्भुवःस्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः वस्त्रोपवस्त्रार्थे अक्षतान्समर्पयामि ॥ यज्ञोपवीतार्थे अक्षतान्समर्पयामि ॥ गन्धं समर्पयामि ॥ नानापरिमलसौभाग्यद्रव्याणि समर्पयामि ॥ यथाऋतुकालोद्भवपुष्पाणि समर्पयामि ॥ धूपम् आघ्रापयामि ॥ दीपं दर्शयामि ॥ शर्करोपहारनैवेद्यम्—ॐ प्राणाय स्वाहा । ॐ अपानाय स्वाहा । ॐ व्यानाय स्वाहा । ॐ समानाय स्वाहा । ॐ उदानाय स्वाहा ॥ नैवेद्यं समर्पयामि ॥ नैवेद्यान्ते हस्तप्रक्षालनं मुखप्रक्षालनं च समर्पयामि ॥ करोद्वर्तनार्थे चन्दनं

समर्पयामि॥मुखवासार्थे पूगीफलं ताम्बूलं च समर्पयामि॥ हिरण्यमुद्रादक्षिणां समर्पयामि॥ कर्पूरारार्तिक्यं दर्शयामि॥प्रदक्षिणाः समर्पयामि॥ मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि॥प्रार्थनापूर्वकं नमस्करोमि॥ अनेन यथाशक्त्या ध्यानादिस्नानाङ्गपूर्वाराधनकृतेन श्रीशिवपञ्चायतनदेवताः प्रीयन्तां न मम॥ निर्माल्यम् उत्तरे विसृज्य गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्प्य शालग्रामोपरि तुलसीदलं तथा शिवोपरि बिल्वपत्रं समर्प्य धारापात्रं गन्धादिभिः सम्पूज्य पुरुषसूक्तेन गन्धोदकेन देवानां मूर्ध्नि अभिषेकस्नानं[1] कार्यम्। ॐसहस्रशीर्षेतिषोडशर्चस्य पुरुषसूक्तस्य नारायणपुरुष ऋषिः आद्यानां पञ्चदशानाम् अनुष्टुप् अन्त्यायास्त्रिष्टुप् जगद्बीजपुरुषो देवता श्रीशिवपञ्चायतनदेवताप्रीतये अभिषेके विनियोगः। हरिः ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्॥ स भूमिꣳ सर्वतस्पृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम्॥ १/३१॥ पुरुषऽएवेदꣳसर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्॥ उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति॥ २/३१॥ एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पूरुषः॥ पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि॥ ३/३१॥ त्रिपादूर्ध्वऽउदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः॥ ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशनेऽअभि॥ ४/३१॥ ततो विराडजायत विराजोऽअधि पूरुषः॥ स जातोऽअत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः॥ ५/३१॥ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतम्पृषदाज्यम्॥ पशूँस्ताँश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये॥ ६/३१॥ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऽ ऋचः

---

१ अत्र सम्भवे सान्द्ररुद्रेण रुद्रैकादशिन्या महिम्नःस्तोत्रेण वाऽभिषेकः कार्यः। २ स्नाने धूपे च दीपे च घण्टानादमाचरेत्॥ प्रतिमापट्टयन्त्राणां नित्यं स्नानं न कारयेत्। कारयेत्पर्वदिवसे यथा मलनिवारणम्[2]॥

सामानि जज्ञिरे ॥ छन्दाᳬसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥ ७/३१ ॥ तस्मादश्वाऽ अजायन्त ये के चोभयादतः ॥ गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाताऽ अजावयः ॥ ८/३१ ॥ तं यज्ञम्बर्हिषि प्रौक्षन्पुरुषञ्जातमग्रतः ॥ तेन देवाऽ अयजन्त साद्ध्याऽ ऋषयश्च ये ॥ ९/३१ ॥ यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् ॥ मुखङ्किमस्यासीत्किम्बाहू किमूरूपादाऽउच्येते ॥ १०/३१ ॥ ब्राह्मणोस्य मुखमासीद्बाहूराजन्यः कृतः ॥ ऊरूतदस्ययद्वैश्यः पद्भ्याᳬशूद्रोऽ अजायत ॥ ११/३१ ॥ चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्य्योऽ अजायत ॥ श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत ॥ १२/३१ ॥ नाब्भ्याऽआसीदन्तरिक्षᳬशीर्ष्णोद्यौः समवर्त्तत ॥ पद्भ्याम्भूमिर्द्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ२ऽअकल्पयन् ॥ १३/३१ ॥ यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत ॥ वसन्तोऽस्यासीदाज्ज्यङ्ग्रीष्मऽइद्ध्मः शरद्धविः ॥ १४/३१ ॥ सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः ॥ देवा यद्यज्ञन्तन्वानाऽ अबध्नन्पुरुषम्पशुम् ॥ १५/३१ ॥ यज्ञेनयज्ञमयजन्तदेवास्तानिधर्म्माणिप्रथमान्यासन् ॥ ते ह नाकम्महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साद्ध्याः सन्ति देवाः ॥ १६/३१ ॥ एवमभिषिच्य शङ्खपूरितोदकेन शालग्रामं स्नापयेत्— ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् ॥ समूढमस्य पाᳬसुरे स्वाहा ॥ १५/५ ॥ पश्चात्पञ्चायतनदेवानामुपरि शान्त्यभिषेकं कुर्यात्— ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षᳬशान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः ॥ वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व्वᳬशान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॥ १७/३६ ॥ यतोयतः समीहसेततोनोऽअभयङ्कुरु । शन्नः कुरु प्रजाब्भ्योभयन्नः पशुब्भ्यः ॥

ॐ शिवो भव प्रजाभ्यो मानुषीभ्यस्त्वमङ्गिरः ॥ मा द्यावापृथिवी अभिशोचीर्मान्तरिक्षम्मा वनस्पतीन् ॥ $\frac{२५}{११}$ ॥

त्रिदलं त्रिगुणाकारं त्रिनेत्रं च त्रयायुधम् ॥ त्रिजन्मपापसंहारमेकबिल्वं शिवार्पणम् । ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः बिल्वपत्राणि समर्पयामि । विष्णवे तुलसीदलार्पणम्—

ॐ विष्णोः कर्म्माणि पश्यत यतो व्रतानि पस्पशे ॥ इन्द्रस्य युज्यः सखा ॥ $\frac{३३}{१३}$ ॥

तुलसीं हेमरूपां च रत्नरूपां च मञ्जरीम् । भवमोक्षप्रदां तुभ्यमर्पयामि हरिप्रियाम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीमहाविष्णवे नमः तुलसीदलानि समर्पयामि । सूर्याय पुष्पार्पणम्—

ॐ सवितात्त्वा सवानां सुवतामग्निर्गृहपतीनां सोमो वनस्पतीनाम् ॥ बृहस्पतिर्व्वाच इन्द्रो ज्यैष्ठ्याय रुद्रः पशुभ्यो मित्रः सत्यो वरुणो धर्म्मपतीनाम् ॥ $\frac{३५}{९}$ ॥

भानो दिवाकरादित्य मार्तण्ड जगतां पते । अपांनिधे जगद्रक्ष भूतभावन भास्कर ॥ प्रणतार्तिहरादित्य विश्वार्चितामणे विभो । विष्णो हंसादिभूतेश पुष्पाणि त्वं गृहाण मे ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीसूर्याय नमः पुष्पाणि समर्पयामि ॥ गणेशाय दूर्वाङ्कुरार्पणम्—

---

१ ब्राह्मैर्वा पञ्चरौद्रैस्तु सावित्रैर्मित्रवारुणैः । तल्लिङ्गैरेव मन्त्रैस्तु ह्यर्चयेत्सुसमाहितः ॥

ॐकाण्डात्काण्डात्प्ररोहन्तीपरुषःपरुषस्परि ॥ एवानो दूर्वेप्रतनुसहस्रेणशतेनच ॥ २०/१३ ॥

विष्ण्वादिसर्वदेवानां दूर्वा वै प्रीतिदा सदा । वंशवृद्धिकरी नित्यं गणेशायार्पयाम्यहम् ॥ ॐभूर्भुवःस्वः श्रीगणेशाय नमः दूर्वाङ्कुरान्समर्पयामि ॥ देव्यै पुष्पार्पणम्—

ॐसमख्येदेव्याधियासन्दक्षिणयोरुचक्षसा ॥ मामऽआयुःप्रमोषीम्मोऽअहन्तववीरंविदेयतवदेविसन्दृशि ॥ २३/४

सेवन्तिकाबकुलचम्पकपाटलाब्जैः पुन्नागजातिकरवीररसालपुष्पैः । बिल्वप्रवालतुलसीदलमालतीभिस्त्वां पूजयामि जगदीश्वरि मे प्रसीद ॥ ॐभूर्भुवःस्वः श्रीदेव्यै नमः पुष्पाणि समर्पयामि ॥ सौभाग्यद्रव्याणि·

ॐअहिरिवभोगैःपर्य्येतिबाहुञ्ज्यायाहेतिम्परिबाधमानः ॥ हस्तघ्नोव्विश्वाव्वयुनानिव्विद्वान्पुमान्पुमांसम्परिपातुव्विश्वतः ॥ ५१/२९ ॥

अबीरं च गुलालं च हरिद्रादिसमन्वितम् । नानापरिमलद्रव्यं गृहाण परमेश्वर ॥ ॐभूर्भुवः स्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः सौभाग्यद्रव्याणि समर्पयामि ॥ धूपम्–ॐब्राह्मणोस्य मुखं० ॥ ११/३१ ॥ ॐधूरसि धूर्व्व धूर्व्वन्तं धूर्व्वतंय्योस्मान्धूर्व्वति तन्धूर्व्वयंवयन्धूर्व्वामः ॥ देवानामसि वह्नितमःसस्नितमम्पप्रितमञ्जुष्टतमन्देवहूतमम् ॥ ८/१ ॥ वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः । आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐभूर्भुवःस्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः धूप·

माघ्रापयामि ॥ दीपम्—ॐचन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्योऽअजायत ॥ श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत ॥ १२/३१ ॥ साज्यं च वर्तिसं-युक्तं वह्निना योजितं मया । दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्यतिमिरापहम् ॥ ॐभूर्भुवः स्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः दीपं दर्शयामि ॥ नैवेद्यम्—ॐनाभ्याऽआसी० ॥ १३/३१ ॥ ॐ अन्नपतेन्नस्यनो देह्यनमीवस्य शुष्मिण ÷ ॥ प्रप्रंदातारन्तारिषऊर्ज्जन्नोधेहिद्विपदेचतुष्पदे ॥ ८३/११ ॥ अन्नं चतुर्विधं स्वादु रसैः षड्भिः समन्वितम् ॥ भक्ष्यभोज्यसमायुक्तं नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् ॥ गायत्रीमन्त्रेण तुलसीदलेन सम्प्रोक्ष्य तत्तुलसीदलं नैवेद्योपरि निधाय अन्त्रेण संरक्ष्य धेनुमुद्रया अमृतीकृत्य ग्रासमुद्रया ॐप्राणाय स्वाहा । ॐअपानाय स्वाहा । ॐव्यानाय स्वाहा । ॐउदानाय स्वाहा । ॐसमानाय स्वाहा । ॐभूर्भुवःस्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः नैवेद्यं समर्पयामि ॥ पूर्वापोशानं समर्पयामि ॥ नैवेद्यमध्ये पानीयम्—एलोशीरलवङ्गादिकर्पूरपरिवासितम् । प्राशनार्थं कृतं तोयं गृहाण परमेश्वर ॥ ॐभूर्भुवःस्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः मध्ये पानीयं समर्पयामि । उत्तरापोशानं समर्पयामि । हस्तप्रक्षालनं समर्पयामि । मुखप्रक्षालनं समर्पयामि । आचमनीयं समर्पयामि । करोद्वर्तनार्थे गन्धं समर्पयामि । मुखवासार्थे ताम्बूलम्—

१ तुलसीगन्धपुष्पैश्च सम्पूज्यान्नं हरेः प्रियम् । सम्प्रोक्ष्यार्घ्यजलेनैव सरक्ष्यास्त्रेण सर्वदा । धेनुमुद्रां प्रदर्श्याथ ततो देवं निवेदयेत् ॥ २ परिवृत्तकरौ पश्चात्तर्जनीमध्यमे युते । कनिष्ठानामिकाङ्गुष्ठं परस्परयुतं कुरु । धेनुमुद्रेयमाख्याता अमृतीकरणं भवेत् ॥ ३ अङ्गुल्यः कुटिलीभूता विरलाग्राः परस्परम् । ग्रासमुद्रा समाख्याता सव्यपाणौ नियोजिता ॥ ४ वैश्वदेवं प्रारभ्य त्वा नित्ये चाभ्युदये तथा । स्वाभीष्टदेवतादिभ्यो नैवेद्यं च निवेदयेत् । अकृत्वा वैश्वदेवं तु नैवेद्यं यो निवेदयेत् । तदन्नं न [illegible] गृह्णन्ति देवा विष्ण्वादयो ध्रुवम् ॥

दिव?सदांॐसिवृहृतीबितिष्ठ्स्सऽआत्त्वेपंर्वंतंतेतर्म॑÷॥ $\frac{३३}{३२}$॥

कर्पूरगौरं करुणावतारं संसारसारं भुजगेन्द्रहारम् । सदा वसन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानीसहितं नमामि ॥ मङ्गलं भगवान् विष्णुर्मङ्गलं गरुडध्वजः ॥ मङ्गलं पुण्डरीकाक्षो मङ्गलायतनो हरिः ॥ सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ॥ शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ कदलीगर्भसम्भूतं कर्पूरं च प्रदीपितम् । आरार्तिक्यमहं कुर्वे पश्य मे वरदोत्तम ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः कर्पूरारार्तिक्यं दर्शयामि ॥ प्रदक्षिणा—ॐसप्तास्यासन्त्परिधयस्त्रिः सप्त सुमिधः॑÷ कृताः॥दे॒वा यद्य॒ज्ञन्तंन्वानाऽअब॑ध्नन्पुरुषम्पशुम् ॥ $\frac{१५}{३१}$॥ यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च । तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिणपदे पदे ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः प्रदक्षिणां करोमि ॥ मन्त्रपुष्पाञ्जलिः—अञ्जलौ पुष्पाण्यादाय तिष्ठन् ॥ हरिः ॐग॒णाना॑न्त्वा ग॒णप॑तिꣳ हवामहे प्रि॒याणा॑न्त्वा प्रि॒यप॑तिꣳ हवामहे नि॒धी॒नान्त्वा निधि॒पतिꣳ हवामहे वसो मम ॥ आहमंजानि गर्भ॒धमा त्वमजा॑सि गर्भ॒धम् ॥ $\frac{१९}{२३}$॥ श्रीश्च॑ ते लुक्ष्मीश्च॒ पत्न्या॑वहोरा॒त्रे पा॒र्श्वे नक्ष॑त्राणि रू॒पम॒श्विनौ॒ व्या॑त्तम् ॥ इ॒ष्णन्नि॑षाणा॒मुम्मं॑ऽइषाण० ॥ $\frac{२२}{३१}$ ॥ अम्बे॒ऽअम्बि॒केऽम्बा॑लिके॒ न मा॑ नयति॒ कश्च॒न ॥ ससंस्त्यश्व॒कः सुभ॑द्रिकाङ्का॒म्पीलवासिनी॑म् ॥ $\frac{१८}{२३}$॥ तन्तंऽए॒तमनु॒ जोषं॑म्भ॒राम्म्ये॒ष नेत्त्व॑दप॒चेत॒र्याताऽअग्ने॒ प्रि॒यम्पाथो॒ पी॑तम् ॥ $\frac{१०}{२}$ ॥ स॒ꣳस्रवभागा स्त्थे॒षा बृहन्त॑÷ प्रस्तरे॒ष्ठाः प॑रि॒धेया॑श्च दे॒वाः ॥ $\frac{१८}{२}$ ॥

मूर्द्धानन्दिवोऽअरतिम्पृथिव्याव्वैश्वानरमृतऽआजातमग्निम् ॥ कविᳬ सम्म्राजमतिथिञ्जनानामासन्नापात्रञ्जनयन्तदेवाः ॥ $\frac{३४}{७}$ ॥ प्रोह्यमाणᳬ सोमऽ आगतो वरुणऽआसन्द्यामासन्नोग्निराग्नीध्रऽइन्द्रो हविर्द्धानेथर्वोपावह्रियमाणᳬ ॥ $\frac{५६}{८}$ ॥ विश्श्वेदेवाऽअᳬशुषु न्युप्तो विष्णुराप्रीतपाऽआप्याय्यमानो यमः सूयमानो विष्णुः सम्भ्रियमाणो वायुः पूयमानᳬ शुक्रः पूतः शुक्रः क्षीरश्रीर्म्मन्थी सक्तुश्रीर्विश्वेदेवाः ॥ $\frac{५७}{८}$ ॥ प्रियतेवेधि सुनवऽआ सुशेवा स्वावेशा तन्वा संविशस्वा पितृनादुच्चर्भ्य सादयतामिह त्वा ॥ $\frac{३}{१३}$ ॥ पृथिव्याः पुरीषमस्यप्सो नाम तान्त्वा विश्श्वेऽअभिगृणन्तु देवाः ॥ $\frac{-}{१४}$ ॥ षोडशी स्तोमऽओजो द्रविणञ्चतुश्चत्त्वारिᳬश स्तोमो वर्चो द्रविणम् ॥ अग्नेः पुरीषमस्यप्सो नाम तान्त्वा विश्श्वेऽअभिगृणन्तु देवाः ॥ $\frac{३}{१५}$ ॥ समिद्धेऽअग्नावधि मामहानऽउक्थपत्रऽ ईड्यो गृभीतः ॥ तप्तङ्घर्म्मम्परिगृह्यायजन्तोर्ज्जा यद्यज्ञमयजन्त देवाः ॥ $\frac{५५}{१७}$ ॥ यस्येमाः प्रदिशो यस्य बाहू कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ $\frac{१२}{२५}$ ॥ यऽआत्मदा बलदा यस्य विश्श्वऽउपासते प्रशिषँयस्य देवाः ॥ $\frac{१३}{२५}$ ॥ अनागास्त्वन्नोऽअदितिᳬ कृणोतु क्षत्रन्नोऽअश्श्वो वनताᳬ हविष्मान् ॥ $\frac{४५}{२५}$ ॥ इमा नु कम्भुवना सीषधामेन्द्रश्च विश्श्वे च देवाः ॥ $\frac{४६}{२५}$ ॥ बृहस्पते सवितर्ब्बोधयैनᳬ सᳬशितञ्चित्सन्तराᳬ सᳬशिशाधि ॥ व्वर्द्धयैनम्महते सौभगाय विश्श्वऽ एनमनु मदन्तु देवाः ॥ $\frac{-}{२७}$ ॥ प्रजापतेस्तपसा वावृधानः सद्यो जातो दधिषे यज्ञमग्ने ॥ स्वाहाकृतेन हविषा पुरोगा याहि साद्ध्या हविरदन्तु देवाः ॥ $\frac{३३}{२७}$ ॥ सद्योजातो व्यमिमीत यज्ञमग्निर्देवानामभवत्पुरोगाः ॥ अस्य होतुः प्रदिश्यृतस्य व्वाचि स्वाहाकृतᳬ हविर-

दन्तु देवाः ॥ $\frac{३६}{२१}$ ॥ अस्मे रुद्रा मेहना पर्वतासो वृत्रहत्ये भरहूतौ सजोषाः । यः शंसते स्तुवते धायि पज्र इन्द्रज्येष्ठा अस्माँ२ अवन्तु देवाः ॥ $\frac{५०}{३३}$ ॥ नहि स्पशमविदन्नन्यमस्माद्वैश्वानरात्पुरएतारमग्नेः । एमेनमवृधन्नमृता अमर्त्यं वैश्वानरं क्षैत्रजित्याय देवाः ॥ $\frac{६०}{३३}$ ॥ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् । तेह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥ $\frac{१६}{३१}$ ॥ ॐ राजाधिराजाय प्रसह्यसाहिने । नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे । स मे कामान्कामकामाय मह्यम् । कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु । कुबेराय वैश्रवणाय । महाराजाय नमः ॥ ॐस्वस्ति । साम्राज्यं भौज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं माहाराज्यमाधिपत्यमयं समन्तपर्यायी स्यात्सार्वभौमः सार्वायुष आन्तादापरार्धात् । पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया एकराडिति तदप्येष श्लोकोभिगीतो मरुतः परिवेष्टारो मरुत्तस्यावसन्गृहे । आविक्षितस्य कामप्रेर्विश्वेदेवाः सभासद इति ॥ ॐविश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्पात् ॥ सम्बाहुभ्यां धमति सम्पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन्देव एकः॥ $\frac{१}{१७}$ ॥ ॐभूर्भुवः स्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि॥ प्रार्थनापूर्वकनमस्कारः—ॐयत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत ॥

---

१ अत्रावसरे केचन पार्षदपूजां कुर्वन्ति—बाणरावणचण्डीश नन्दिभृङ्गिरिटादयः । सदाशिवप्रसादं ते सर्वे गृह्णन्तु शाम्भवाः ॥ ॐभूर्भुव स्वः श्रीशिवपार्षदगणेभ्यो नमः गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि नमस्करोमि ॥ विष्वक्सेनोद्धवाक्रूरा सनकाद्याः शुकादयः । महाविष्णुप्रसादं ते सर्वे गृह्णन्तु वैष्णवाः ॥ ॐभूर्भुवःस्वः श्रीविष्णुपार्षदगणेभ्यो नमः गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि नमस्करोमि ॥ माठरः पिङ्गलो दण्डश्चण्डांशोः परिपार्श्वकाः । प्रभाकरप्रसादं ते सर्वे गृह्णन्तु पार्षदाः ॥ ॐभूर्भुवःस्वः श्रीसूर्यपार्षदगणेभ्यो नमः गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि नमस्करोमि ॥

ध्रुसन्तोऽस्यासीदाज्ज्यंङ्कीष्मऽइद्ध्म?शरद्धवि? ॥ ६४/२१ ॥ गिरीशं गणेशं गले नीलवर्णं गजेन्द्राधिरूढं गुणातीतरूपम् ॥ भवं भास्वरं भस्मना भूषिताङ्गं भवानीकलत्रं भजे पञ्चवक्त्रम् ॥ १ ॥ योगेन सिद्धविबुधैः परिभाव्यमानं लक्ष्म्यालयं तुलसिकाचितभक्तभृङ्गम् ॥ प्रोत्तुङ्गरक्तनखराङ्गुलिपत्रचित्रं गङ्गारसं हरिपदाम्बुजमाश्रयेऽहम् ॥ २ ॥ उदयगिरिमुपेतं भास्करं पद्महस्तं निखिलभुवननेत्रं रत्नरत्नोपमेयम् ॥ तिमिरकरिमृगेन्द्रं बोधकं पद्मिनीनां सुरवरमभिवन्दे सुन्दरं विश्ववन्द्यम् ॥ ३ ॥ निजैरोषधीस्तर्पयन्तं कराद्यैः सुरौघान्कलाभिः सुधास्राविणीभिः ॥ दिनेशांशुसन्तापहारं द्विजेशं शशाङ्कस्वरूपं गणेशं नमामः ॥ ४ ॥ स्वभक्तवत्सलेऽनघे सदापवर्गभोगदे दरिद्रदुःखहारिणि त्रिलोकशङ्करीश्वरि ॥ भवानि भीम अम्बिके प्रचण्डतेजउज्ज्वले भुजाकलापमण्डिते नमोऽस्तु ते महेश्वरि ॥५॥ ॐभूर्भुवःस्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः प्रार्थनापूर्वकनमस्कारं समर्पयामि ॥ पूजितदेवतानां यथाशक्ति जपं कृत्वा ॥ राजोपचाराः—छत्रं च चामरं चैव व्यजनं दर्पणं तथा । पादुकादि च सर्वाणि गृह्णन्तां परमेश्वर ॥ ॐभूर्भुवःस्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः राजोपचारान्समर्पयामि ॥ विशेषार्घः अर्घपात्रे जलं प्रपूर्य गन्धाक्षतपुष्पसहितं नारिकेलं पूगीफलं वा धृत्वा रक्ष रक्ष महादेव रक्ष त्रैलोक्यरक्षक । भक्तानामभयंकर्ता त्राता भव

गणाधिपो गालवश्चैव सुतलश्च सुधाकरः । गणेशस्य प्रसादं वै सर्वे गृह्णन्तु गाणपाः ॥ ॐभूर्भुवः स्वः श्रीगणेशपार्षदगणेभ्यो नमः गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि नमस्करोमि ॥ शक्तिरुच्छिष्टचाण्डाली गणेशः सविता शशी । महादेवीप्रसादं ते सर्वे गृह्णन्तु पार्षदाः । ॐभूर्भुवः स्वः श्रीदेवीपार्षदगणेभ्यो नमः गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि नमस्करोमि ॥

भवार्णवात् ॥ वरद त्वं वरं देहि वाञ्छितं वाञ्छितार्थद । अनेन सफलार्घेण फलदोऽस्तु सदा मम ॥ ॐभूर्भुवःस्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः विशेषार्घं समर्पयामि ॥ क्षमापनम्—आवाहनं न जानामि न जानामि तवार्चनम् ॥ पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥ १ ॥ अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम ॥ तस्मात्कारुण्यभावेन रक्षस्व परमेश्वर ॥२॥ भूमौ स्खलितपादानां भूमिरेवावलम्बनम् ॥ त्वयि जातापराधानां त्वमेव शरणं मम ॥३॥ मत्समो नास्ति पापिष्ठस्त्वत्समो नास्तिपापहा ॥ इति मत्वा दयासिन्धो यथेच्छसि तथा कुरु ॥४॥ गतं पापं गतं दुःखं गतं दारिद्र्यमेव च ॥ आगता सुखसंपत्तिः पुण्योऽहं तव दर्शनात् ॥ ५ ॥ मंत्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वर ॥ यत्पूजितं मया देव परिपूर्णं तदस्तु मे ॥ ६ ॥ यदक्षरपदभ्रष्टं मात्राहीनं च यद्भवेत् ॥ तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रसीद परमेश्वर ॥७॥ अपराधसहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया ॥ दासोऽयमिति मां मत्वा क्षमस्व परमेश्वर ॥ ८ ॥ अर्पणम्—अनेनावाहनासनपाद्यार्घाचमनीयस्नानवस्त्रोपवीतगन्धपुष्पधूपदीपनैवेद्यताम्बूलदक्षिणानमस्कारप्रदक्षिणामंत्रपुष्परूपैः षोडशोपचारैः अन्योपचारैश्च यथाज्ञानेन यथामिलितोपचारद्रव्यैः कृतपूजनेन श्रीशिवपञ्चायतनदेवताः प्रीयन्तां न मम ॥ ॐतत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥ यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु । न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥ ॐविष्णवे नमो विष्णवे नमो विष्णवे नमः ॥ जलपूरितशङ्खभ्रामणम्-शङ्खमध्ये स्थितं तोयं भ्रामितं केशवोपरि ॥ अङ्गलग्नं मनुष्याणां ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥ इत्युक्त्वा शङ्खं देवोपरि भ्रामयित्वा तस्योदकेन स्वशरीरं मार्जयेत् । तीर्थग्रहणम्—अ-

कालमृत्युहरणं ब्रह्महत्यादिनाशनम् ॥ सुरपादोदकं पुण्यं पिबाम्या- युर्विवर्धनम् ॥ इति मन्त्रेण देवतीर्थं पीत्वा देवनिर्माल्यं गृहीत्वा दक्षिणनासावघ्राणं कृत्वा शिरसि धारयेत् ॥

॥ इति शिवपञ्चायतनपूजाप्रयोगः ॥

॥ अथ रुद्राभिषेकप्रयोगः ॥

॥ २० ॥ अथ रुद्राभिषेकप्रकाराः ॥

तत्र प्राक् रुद्रस्य षडङ्गानि कथ्यन्ते । उक्तञ्च—शिवसंकल्पहृदयं सूक्तं स्यात्पौरुषं शिरः । प्राहुर्नारायणीयं च शिखा स्याच्चोत्तराभिधम् ॥ आशुः शिशानः कवचं नेत्रं विभ्राड् बृहत्स्मृतम् । शतरुद्रियमस्त्रं स्यात्षडङ्गक्रम ईरितः ॥ हृच्छिरस्तु शिखा वर्म नेत्रं चास्त्रं महामते ॥ प्राहुर्विधिज्ञा रुद्रस्य षडङ्गानि स्वशास्त्रतः ॥

॥ अथ प्रथमो रूपरुद्रस्तस्य प्रथम प्रकारः ॥

ॐयज्जाग्रत इति शिवसङ्कल्पसूक्तेन, ॐसहस्रशीर्षेति पौरुषसूक्तेन, ॐअद्भ्यः सम्भृत इति उत्तरनारायणसूक्तेन, ॐ आशुः शिशान इति द्वादशभिः सप्तदशभिर्वा मन्त्रैः अप्रतिरथसूक्तेन, ॐविभ्राड् इति मैत्रसूक्तेन, ॐभूः ॐभुवः ॐस्वः ॐनमस्ते इत्यादिना तमेषाञ्जम्भेदध्म ॐभूः ॐभुवः ॐस्वः ॐइत्यन्तेनाष्टमणवयुक्तेन रौद्राध्यायेन, ॐवयं इति अष्टमंत्रैः, नतंविदेति देवपदत्युक्तद्वाभ्यां मन्त्राभ्याम्, ॐउग्रश्चेति सप्तमरुन्मन्त्रैः, ॐवाजश्च म इति एकोनत्रिंशन्मन्त्रैश्चाभिषेकः

अन्ते च ॐऋचंव्वाचमिति शान्त्यध्यायेन शान्तिकरणं ॐशान्तिरिति त्रिरुच्चारणं वा ॥ अयमेव प्रकारश्चमकवर्जं सर्वैर्वाजसनेयिभिरादृतः ॥

॥ अथ प्रथमो रूपरुद्रस्तस्य द्वितीयप्रकारः ॥

षडङ्गपक्षे-ॐयज्जाग्रत इत्यादिभिर्नमस्तेरुद्रेतिरौद्राध्यायान्तैः षड्भिरङ्गमन्त्रैः पूर्वमभिषेकः । ततः ॐभूःॐभुवःॐस्वः ॐनमस्तेरुद्रेत्यादिना तमेषाञ्जम्भेदध्मः ॐभूः ॐभुवः ॐस्वः ॐइत्येतेनाष्टप्रणवयुक्तेन रौद्राध्यायेनाभिषिच्य ॐव्वयङ्सोमेत्यष्टकण्डिकाभिरभिषेकः ॐउग्रश्चेति सप्तभिश्च । महच्छिरोरुद्रजटाभ्यामभिषेकाभावपक्षे व्वाजश्चम इत्यष्टानुवाकैरभिषेकः । ॐव्वाजश्चम इत्यष्टानुवाकाभावपक्षे महच्छिरोरुद्रजटाभिरभिषेकः । ॐऋचंव्वाचमिति शान्त्यध्यायेन पक्षद्वयेऽपि अभिषेकेण शान्तिकरणम् ॐशान्तिरिति त्रिरुच्चारणं वा ॥ इति द्वितीयो रूपरुद्रप्रकारः ॥ बृहत्पाराशरस्मृतिमते तु पञ्चाङ्गमन्त्रपूर्वकरौद्राध्यायस्यैव जपाऽन्ते ऋचंव्वाचमित्यनेनाभिषेककरणमित्ययमेव रूपाख्यो रुद्रजपो न तु पुनरन्यस्य कस्यचिन्मन्त्रस्य जप इति विशेषः ॥

॥ अथ द्वितीयो रुद्राख्यः (एकादशिनी रुद्र इति पर्यायः) तस्य प्रकाराः ॥ तत्र प्रथमप्रकारो यथा—

ॐयज्जाग्रत इत्यादिभिर्व्विभ्राडित्यनुवाकान्तैः पञ्चभिरङ्गमन्त्रैः पूर्वमभिषेकः । ॐभूःॐभुवःॐस्वः ॐनमस्तेरुद्रेत्यारभ्य तमेषाञ्जम्भेदध्मः

---

१ नमस्तेरुद्रमन्यव इति षोडशर्चं शतरुद्रियमिति कमलाकरादयः ॥ तथा—षट्पृष्टिमीढुष्टमं च पुनः षोडशकमेव । एतते द्वे नमस्ते द्वे नतंविद्वयमेव च । मीढुष्टमेति चत्वारि एतच्च शतरुद्रियम् । नमस्तेरुद्रेति षट्पृष्ठिमन्त्रात्मकमेव शतरुद्रियमिति मुख्यपक्षः ॥

ॐभूः ॐभुवः ॐस्वः ॐइत्यन्तस्याष्टप्रणवयुक्तरौद्राध्यायस्य दशावृत्त्याऽभिषेकः। ततः ॐयज्जाग्रत इत्यादिभिर्विभ्राडित्यनुवाकान्तैः पूर्वोक्तैः पञ्चभिरङ्गमन्त्रैः समन्वितया केवलया वा एकावृत्त्याऽभिषेकः। ततः ॐवयꣳसोमेत्यष्टभिर्महच्छिरोनाम्नीभिश्चाभिषेकः। ॐनतं विदाथेति द्वाभ्यामभिषेकः। ॐउग्रश्चेति तिसृभिः सप्तभिर्वा रुद्रजटानाम्नीभिरभिषेकः। ॐऋचंवाचमित्यध्यायेन शान्तिकरणम् ॐशान्तिरिति त्रिरुच्चारणं वा॥

अथ द्वितीयप्रकारः—ॐयज्जाग्रत इत्यादिभिर्नमस्तेरुद्रेति रौद्राध्यायान्तैः षड्भिरङ्गमन्त्रैः पूर्वमभिषेकः। तत ॐभूःॐभुवः ॐस्वः ॐ नमस्तेरुद्रेत्यारभ्य तमेषाञ्जम्भेदध्मः ॐभूः ॐभुवः ॐस्वः ॐइत्यन्तस्याष्टप्रणवयुक्तस्य रौद्राध्यायस्यैकादशावृत्त्याऽभिषेकः। तदन्ते ॐ वयꣳसोमेत्यष्टभिः शान्त्यध्यायेन चाभिषेकः॥

अथ तृतीयप्रकारः[1]—ॐयज्जाग्रत इत्यादिभिर्विभ्राडित्यनुवाकान्तैः पञ्चभिरङ्गमन्त्रैः पूर्वमभिषेकः। तत ॐभूःॐभुवःॐस्वःॐनमस्ते रुद्रेत्यारभ्य तमेषाञ्जम्भेदध्मः ॐभूःॐभुवःॐस्वः ॐइत्यष्टप्रणवसहितं रुद्रं जपित्वा–ॐवाजश्चमे० प्राणश्चमे० ओजश्चमे० ज्यैष्ठ्यञ्चम० ॥१॥ पुनः अष्टप्रणवसहितं रुद्रं जपित्वा—ॐसत्यञ्चमे० ऋतञ्चमे० यन्ताचमे०

१ अयं प्रकारस्तु—आद्यमादौ जपेद्रुद्रं केवलानि नवान्तरे। सार्द्धं महच्छिरश्चान्ते नियमं मिति केचन॥ इति यक्षरारकस्मृतिमतानुसारी पञ्चाङ्गपक्षे ज्ञेयः॥ सर्वेष्वभिषेकेष्वपि सङ्कल्पमारभ्य षड्विधाङ्गन्यासपूर्वकमुपस्थानान्तं पूर्वप्रयोगानुसारेण श्रीमहारुद्रस्याभ्यर्चनं तथा ग्रहन्यासादिस्मरणं पूर्वप्रयोगाद्योजनीयम्॥ २ वेदैर्वेदाब्धिरामश्च रोमरौमद्रि वेदेकम्। द्वौ द्वौ पृथक् च मन्त्रेश्च नमकाधमकाः स्मृताः। ग्वाजश्च सत्यपूर्वाश्च चामिर्यश्च तथाभिकः। एकाचेव चतस्र श्च विश्वौ वा इति क्रमः।

शश्चमे० ॥ २ ॥ पुनः अष्टप्रणवसहितं रुद्रं जपित्वा-ॐऊर्क्चमे० रयिश्चमे० वित्तञ्चमे० व्रीहयश्चमे० ॥ ३ ॥ पुनः अष्टप्रणवसहितं रुद्रं जपित्वा-ॐअश्माचमे० अग्निश्चमे० वसुचमे० ॥ ४ ॥ पुनः अष्टप्रणवसहितं रुद्रं जपित्वा-ॐअग्निश्चम० मित्रश्चम० पृथिवीचम० ॥ ५ ॥ पुनः अष्टप्रणवसहितं रुद्रं जपित्वा-ॐअᳬशुश्चमे० आग्रयणश्चमे० स्रुचश्चमे० ॥ ६ ॥ पुनः अष्टप्रणवसहितं रुद्रं जपित्वा ॐअग्निश्चमे घर्म० व्रतञ्चम० ॥ ७ ॥ पुनः अष्टप्रणवसहितं रुद्रं जपित्वा ॐएकाचमे० ॥ ८ ॥ पुनः अष्टप्रणवसहितं रुद्रं जपित्वा-ॐचतस्रश्चमे० ॥ ९ ॥ पुनः अष्टप्रणवसहितं रुद्रं जपित्वा-ॐत्र्यविश्च मे० पष्टवाट्च मे० ॥ १० ॥ पुनः अष्टप्रणवसहितं रुद्रं जपित्वा-ॐवाजायस्वाहा० आयुर्यज्ञेन० ॥ ११ ॥ एवं एकादशधा विभक्तेन चमकानुवाकेन सहाष्टप्रणवयुक्तरौद्राध्यायस्यैकादशावृत्त्याऽभिषेकः ॥ ततः ॐऋचंवाचमितिशान्त्यध्यायेन शान्तिकरणम् ॥ इति तृतीयप्रकारः ॥

बृहत्पराशरस्मृतिमते तु अङ्गपञ्चकमन्त्रैरभिषेकपूर्वकं रौद्राध्यायस्य एकादशभिरावृत्तिभिरभिषेकोऽन्ते च शान्तिकरणमित्येतावानेव द्वितीयो रुद्र इति विशेषः ॥ यत्तु महार्णवानुसारिणां मतम्-शिवसङ्कल्पाद्यङ्गमन्त्रवर्जं प्रणवस्य महाव्याहृतीनां रौद्राध्यायस्य वाजश्चम इत्यष्टानुवाकानां शान्त्यध्यायस्य पूर्ववदार्षादिस्मरणं कृत्वा अष्टौ चमकानुवाकान् एकादशधा विभज्य एकैकेन चमकविभागेन सह अष्टप्रणवयुक्तरौद्राध्यायस्यैकादशावृत्त्याऽभिषेकः ॥ ततः ॐऋचंवाचमितिशान्त्यध्यायेनाभिषेकः ॥ व्याधिविमोचनार्थाभिषेके तु विशेषः ॥ अक्षीभ्यामित्यनुवाकेनापोहिष्ठेतितिसृभिश्चाभिषिक्तोदकेन मस्तकादिपादान्तानि सर्वाण्यङ्ग-

नि मार्जयेत्—अक्षीभ्यामिति षण्णां विवृहा ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः यक्ष्मा देवता आपोहिष्ठेतितिसृणां सिन्धुद्वीप ऋषिः गायत्री छन्दः आपो देवता सर्वरोगशान्त्यै अभिषेकोदकेन मार्जने विनियोगः। ॐ अक्षीभ्यां ते नासिकाभ्यां कर्णाभ्यां छुबुकादधि॥ यक्ष्मं शीर्षण्यं मस्तिष्काज्जिह्वाया विवृहामि ते॥ १॥ ग्रीवाभ्यस्त उष्णिहाभ्यः कीकसाभ्यो अनूक्यात्॥ यक्ष्मं दोषण्यमंसाभ्यां बाहुभ्यां विवृहामि ते॥ २॥ आन्त्रेभ्यस्ते गुदाभ्यो वनिष्ठोर्हृदयादधि॥ यक्ष्मं मतस्नाभ्यां यक्नः प्लाशिभ्यो विवृहामि ते॥ ३॥ ऊरुभ्यां ते अष्ठीवद्भ्यां पार्ष्णिभ्यां प्रपदाभ्याम्॥ यक्ष्मं श्रोणिभ्यां भासदाद्भंससो विवृहामि ते॥ ४॥ मेहनाद्वनंकरणा-ल्लोमभ्यस्ते नखेभ्यः॥ यक्ष्मं सर्वस्मादात्मनस्तमिदं विवृहामि ते॥५॥ अङ्गादङ्गाल्लोम्नो लोम्नो जातं पर्वणि पर्वणि॥ यक्ष्मं सर्वस्मादात्मनस्त-मिदं विवृहामि ते॥ ६॥ ॐ आपोहिष्ठामयोभुवस्ता०। ॐ योवःशिवतमो०। ॐ तस्माऽअरङ्गमा०। एतैर्मन्त्रैर्मस्तकादिपादान्तानि सर्वाङ्गानि मार्ज-येत्। इति द्वितीयो रुद्रः। अयमेव रुद्रो रुद्रैकादशिनी रुद्री रुद्रेति संज्ञात्रयं लभते। तैरेकादशरुद्रैर्लघुरुद्रस्तृतीयः। तैरेकादशलघुरुद्रैर्महा-रुद्रश्चतुर्थः। तैरेकादशमहारुद्रैरतिरुद्रः पञ्चमः॥ रुद्रीलघुरुद्रमहारुद्रेष्वेके एकादश ऋत्विजो वा वृणुयात्॥ अतिरुद्रे एकादश एकविंशत्युत्तरं शतं चेति ऋत्विक्सङ्ख्या॥

॥ अथ रुद्राभिषेकप्रयोगः॥

ततः शिवस्य मूर्ध्नि सौवर्णेन राजतेन ताम्रेण वा कलशेन मधुना गव्येन सर्पिषा पयसा वा तदभावे माहिषेण वा इक्षुरसेन नालिकेर-रसेनाम्ररसेन वा गन्धोदकेन वा केवलोदकेन वा अभिषेकः कर्तव्यः॥

णाच्छादयामि सोमस्त्वा राजामृतेनानुवस्ताम् । उरो-र्वरीयोवरुणस्ते कृणोतु जयन्तन्त्वानुदेवा मदन्तु ॥ $\frac{१७}{४९}$ ॥ ॐ कवचाय हुम् ॥ ॐविश्वतश्चक्षुरुतविश्वतोमुखो-विश्वतोबाहुरुतविश्वतस्पात् । सम्बाहुभ्यान्धमतिसं-म्पतत्रैर्द्यावाभूमीजनयन्देवऽएकः ॥ $\frac{१९}{१७}$ ॥ ॐनेत्रत्रयाय वौषट् ॥ ॐमानस्तोके० ॥ $\frac{१६}{१६}$ ॥ अस्त्राय फट् ॥

हरिः ॐगणानान्त्वागणपतिꣳहवामहेप्रियाणान्त्वा प्रियपतिꣳहवामहेनिधीनान्त्वानिधिपतिꣳहवामहेवसो मम ॥ आहमजानिगर्भधमात्त्वमजासिगर्भधम् ॥ १ $\frac{१९}{२३}$ ॥ गायत्रीत्रिष्टुब्जगत्यनुष्टुप्पङ्क्त्यासह ॥ बृहत्युष्णिहा ककुप्सूचीभिःशम्यन्तुत्त्वा ॥ २ $\frac{३३}{२३}$ ॥ द्विपदायाश्चचतु-ष्पदास्त्रिपदायाश्चषट्पदाः ॥ विच्छन्दायाश्चसच्छन्दाः सूचीभिःशम्यन्तुत्त्वा ॥ ३ $\frac{३४}{२३}$ ॥ सहस्तोमाःसहछन्द-

---

१ अत्र याश्चतुष्पदा इत्यत्र 'स्वरात्संयोगादिर्द्विरुच्यते सर्वत्र' ॥ इति चतुर्थाध्यायस्य शततमसूत्रेण सामान्यतः शकारस्य द्वित्वं प्राप्तं परं तस्यापवादरूपेण 'उष्मान्तस्थाभ्यश्च स्पर्शे' इति चतुर्थाध्यायस्य अधिकशततमसूत्रेण ऊष्मणः शकारात्परस्य चकारस्यैव द्वित्वं भवति ॥ २ तुर्हृनिषेध —शुक्लयजु प्रातिशाख्ये चतुर्थाध्याये सूत्रं २६–'यस्यातिहाय सहेति न' ॥ भाष्यम्–यस्य, अतिहाय, सह इत्येतैः पदैरुदित स्वरः छकारे प्रत्यये न चकारेण व्यवधीयते यथा– यस्य छाया ॥ $\frac{२३}{२६}$ ॥ अतिहाय हिंसागात्रोणि० ॥ $\frac{१}{२६}$ ॥ सहस्तोमाःसह छन्दसऽआवृतः० ॥ $\frac{१९}{३४}$ ॥

सऽआवृतं÷सुहर्मंमुाऽक्रुपंयद्धसुप्सदैद्यांः ॥ पूर्वैपु
मनुदृश्युधीरांऽअन्वालैभिरेरुत्थ्युोनरुश्मीन् ॥ ८/२७ ॥

ॐयज्जाग्रंतोदूरमुदैतिुदैवुन्तदुसुप्तस्युतथैवैतिं ॥
दूरङ्गमञ्ज्योतिपाञ्ज्योतिरेकुन्तन्मेमनं÷शिवसंङ्कल्पमस्तु
॥ १ १/३४ ॥ येनुकर्म्मांण्ण्युपसोंमनुीपिणोंयुज्ञेकृण्ण्वन्तिविद-
थैंपुधीरांः ॥ यदंपूर्व्वंयुक्षमुन्तःप्रुजानान्तन्मेमनं÷
शिवसंङ्कल्पमस्तु ॥ २ २/३४ ॥ यत्प्रज्ञानंमुतचेतोधृतिश्च-
यज्ज्योतिंरुन्तरुमृतंम्प्रुजासुं॥यस्मान्नऽऋतेकिञ्चनकर्म्मं-
क्रियतेतन्मेमनं÷शिवसंङ्कल्पमस्तु ॥ ३ ३/३४ ॥ येनेदम्भू-
तम्भुवंनम्भविष्ष्यत्परिगृहीतममृतैंनुसर्व्वम् ॥ येनंयुज्ञ-
स्तायतेंसुप्तहोंतुातन्मेमनं÷शिवसंङ्कल्पमस्तु ॥ ४ ४/३४ ॥
यस्मिन्नृचुःसामुयजूंषियस्मिन्प्रतिष्ठितारथनाभा-
विवाराः ॥ यस्मिँश्चित्तःसर्व्वमोतंम्प्रुजानान्तन्मेमनं÷
शिवसंङ्कल्पमस्तु ॥ ५ ५/३४ ॥ सुपारुथिरश्श्वांनिवुयन्मनुष्या-
न्नेनीयतेभीशुंभिर्व्वाजिनंऽइव ॥ हृत्प्रतिष्ठुंयदंजिरञ्जवि-
ष्ठुन्तन्मेमनं÷शिवसंङ्कल्पंमस्तु ॥ ६ ६/३४ ॥ इतिप्रथमोऽध्यायः ॥

१ इति शिवसङ्कल्पसूक्तस्य हृदयस्याङ्गस्य षण्मन्त्रैरभिषेक ॥ उक्त च शिवसङ्कल्पहृदय सूक्त स्यात्पौरुषं शिर ॥ आहुर्नारायणीय च शिखा स्यादुत्तराभिधम् ॥ आप्त शिशानकवच

ॐ सहस्रशीर्षापुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्॥ स भूमिꣳ-
सर्वतस्पृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥१॥ पुरुषऽएवेदꣳ-
सर्वँय्यद्भूतँय्यच्चभाव्यम् ॥ उतामृतत्त्वस्येशानोयदन्नेना-
तिरोहति ॥२॥ एतावानस्यमहिमातोज्ज्यायाँश्चपू-
रुषः ॥ पादोस्यव्विश्वाभूतानित्रिपादस्यामृतन्दिवि
॥ ३ ॥ त्रिपादूर्द्ध्वऽउदैत्पुरुषः पादोस्येहाभवत्पुनः ॥
ततोव्विष्वङ्व्यक्रामत्साशनानशनेऽअभि ॥ ४ ॥
ततोव्विराडजायतव्विराजोऽअधिपूरुषः॥सजातोऽअ-
त्यरिच्च्यतपश्चाद्भूमिमथोपुरः ॥५॥ तस्माद्यज्ञा-
त्सर्व्वहुतः सम्भृतम्पृषदाज्ज्यम् ॥ पशूँस्ताँश्चक्रेव्वाय-
व्यानारण्ण्याग्ग्राम्म्याश्चये ॥६॥ तस्माद्यज्ञात्सर्व्व-
हुतऽऋचः सामानिजज्ञिरे ॥ छन्दाꣳसिजज्ञिरेतस्माद्य-
जुस्तस्मादजायत ॥ ७ ॥ तस्मादश्वाऽअजायन्त-
येकेचोभयादतः ॥गावोहजज्ञिरेतस्मात्तस्माज्जाताऽ-
अजावयः ॥ ८ ॥ तँय्यज्ञम्बर्हिषिप्रौक्षन्पुरुषञ्जातम-
ग्रतः ॥ तेनदेवाऽअयजन्तसाद्ध्याऽऋषयश्चये॥९॥

नेत्रं विभ्राड् बृहत्सृतम् । शतकदियमस्त्रं स्यात्यड्ङ्कम ईरितः ॥ हच्छिरस्तु शिखा वर्म नेत्रं चास्त्रं महामते ॥ प्राक्तुर्निषिद्धा स्वस्य षडङ्गानि स्वराश्रतः ॥

यत्पुरुषंव्यदधुःकतिधाव्यकल्पयन् ॥ मुखङ्किमस्यासी-
त्किम्बाहूकिमूरूपादाऽउच्च्येते ॥१०$\frac{१०}{३१}$॥ ब्राह्मणोस्य-
मुखमासीद्बाहूराजन्यःकृतः ॥ ऊरूतदस्ययद्वै-
श्यः पद्भ्याᳪशूद्रोऽअजायत ॥ ११$\frac{११}{३१}$ ॥ चन्द्रमा-
मनसोजातश्चक्षोःसूर्य्योऽअजायत ॥ श्रोत्राद्वायुश्चप्रा-
णश्चमुखादग्निरजायत ॥१२$\frac{१२}{३१}$॥ नाभ्याऽआसीदन्त-
रिक्षᳪशीर्ष्णोद्यौःसमवर्त्तत ॥पद्भ्याम्भूमिर्दिशःश्रोत्रा-
त्तथालोकाँ२ऽअकल्पयन् ॥१३$\frac{१३}{३१}$॥ यत्पुरुषेणहविषादे-
वायज्ञमतन्वत ॥वसन्तोस्यासीदाज्यङ्ग्रीष्मऽइध्मःश-
रद्धविः ॥१४$\frac{१४}{३१}$॥ सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिःसप्तसमिधः
कृताः देवायद्यज्ञन्तन्वानाऽअबध्नन्पुरुषम्पशुम् ॥१५॥
यज्ञेनयज्ञमयजन्तदेवास्तानिधर्म्माणिप्रथमान्यासन् ।
तेहनाकम्महिमानःसचन्तयत्रपूर्वेसाध्याःसन्तिदेवाः
॥ १६$\frac{१६}{३१}$ ॥ ॐअद्भ्यःसम्भृतःपृथिव्यैरसाच्चविश्वकर्म-
र्मणःसमवर्त्तताग्रे ॥ तस्यत्वष्टाविदधद्रूपमेतितन्म-
र्त्यस्यदेवत्वमाजानमग्रे ॥ १$\frac{१७}{३१}$ ॥ वेदाहमेतम्पुरुषम्म-

१ इति पुरुषसूक्तस्य शिरोनामकाङ्गस्य एकत्रिंशाध्यायस्य षोडशमन्त्रैरभिषेकः (सूक्तस्याशीतिरूपं शिरः) ॥

हान्तमादित्यवर्णन्तमसः परस्तात् ॥ तमेवविदित्वाऽति-
मृत्युमेति नान्यः पन्थाविद्यतेऽयनाय ॥ २ १८/३१ ॥ प्रजापति-
श्चरति गर्भेऽअन्तरजायमानो बहुधाविजायते ॥ तस्य-
योनिम्परिपश्यन्ति धीरास्तस्मिन्ह तस्थुर्भुवनानि वि-
श्वा ॥ ३ १९/३१ ॥ योदेवेभ्यऽआतपति यो देवानाम्पुरोहि-
तः ॥ पूर्वो यो देवेभ्यो जातो नमो रुचाय ब्राह्मये ॥ ४ २०/३१ ॥
रुचम्ब्राह्मञ्जनयन्तो देवाऽअग्रे तदब्रुवन् ॥ यस्त्वैवम्ब्रा-
ह्मणो विद्यात्तस्य देवाऽअसन्वशे ॥ ५ २१/३१ ॥ श्रीश्च ते ल-
क्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ-
व्यात्तम् ॥ इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाण सर्वलोकम्मऽइषाण ॥
६ २२/३१ ॥ इति द्वितीयोऽध्यायः ॥

ॐ आशुः शिशानो वृषभो न भीमो घनाघनः क्षोभणश्च-
र्षणीनाम् ॥ सङ्क्रन्दनोऽनिमिषऽएकवीरः शतꣳसेनाऽअ-
जयत्साकमिन्द्रः ॥ १ ३३/१७ ॥ सङ्क्रन्दनेनानिमिषेण जि-
ष्णुना युत्कारेण दुश्च्यवनेन धृष्णुना ॥ तदिन्द्रेण जयत-

---

१ याज्ञवल्क्यशिक्षायाम्—वकारस्त्रिविधः प्रोक्तो गुरुर्लघुर्लघूतरः ॥ आदौ गुरुर्लघुर्मध्ये पदान्ते तु लघूतरः ॥ प्रतिशाख्ये—अन्त्यस्यान्तःस्थाना पदादिमध्यान्तस्थस्य त्रिविधं गुरुमध्यमलघु इति भिन्नधारणम् ॥ २ ॥ इत्युत्तरनारायणसूक्तस्य शिवाख्यस्य एकत्रिंशाध्यायस्य पञ्चभिर्ऋग्भिः ॥ (भिन्ना स्यादुत्तरभिधम्) ॥

तत्संहद्ध्वँरुयुधोंनरऽइषुंहस्तेनवृष्णा ॥२॥ सऽइषुं हस्तैःसनिषङ्गिभिर्व्वशीसꣳस्रष्टासयुधऽइन्द्रोगणेन ॥ सꣳसृष्टजित्सोमपाबाहुशर्द्ध्युग्रधन्वाप्रतिहिताभिरस्ता ३॥बृहस्पतेपरिदीयारथेनरक्षोहामित्राँ२ऽअपबाधमानः ।प्रभञ्जन्त्सेनाःप्रमृणोयुधाजयन्नस्माकमेद्ध्यविताराथा-नाम् ॥४॥ बलविज्ञायस्थविरःप्रवीरःसहस्वान्वाजीसहमानऽउग्रः॥ अभिवीरोऽअभिसत्त्वासहोजाजैत्र-मिन्द्ररथमातिष्ठगोवित् ॥ ५ ॥ गोत्रभिदङ्गोविदंव्व-ज्रबाहुञ्जयन्तमज्मप्रमृणन्तमोजसा ॥ इमꣳसजाताऽअनुवीरयद्ध्वमिन्द्रꣳसखायोऽअनुसꣳरभद्ध्वम् ॥६॥अ-भिगोत्राणिसहसागाहमानोदयोवीरःशतमन्युरिन्द्रः ॥ दुश्च्यवनःपृतनाषाडयुद्ध्योस्माकꣳसेनाऽअवतुप्रयुत्सु ॥ ७ ॥ इन्द्रऽआसान्नेताबृहस्पतिर्दक्षिणायज्ञःपुरऽएतुसोमः ॥ देवसेनानामभिभञ्जतीनाञ्जयन्तीनाम्मरुतोयन्त्वग्रम् ॥८॥ इन्द्रस्यवृष्णोवरुणस्यराज्ञऽआदित्यानाम्मरुताꣳशर्द्धऽउग्रम् ॥ महामनसाम्भुवनच्यवानाङ्घोषोदेवानाञ्जयतामुदस्थात् ॥ ९ ॥ उद्धर्ष-

यमघवन्नायुधान्युत्सत्त्वनाम्मामकानाम्मनाᳬसि ॥ उद्वृत्रहन्वाजिनांवाजिनान्युद्रथानाञ्जयताँव्यन्तुघोषा ॥ १० ॥ अस्माकमिन्द्रः समृतेषुध्वजेष्वस्माकंय्याऽइषवस्ताजयन्तु ॥ अस्माकंवीराऽउत्तरेभवन्त्वस्माँ२ऽउदेवाऽअवताहवेषु ॥ ११ ॥ अमीषाञ्चित्तम्प्रतिलोभयन्तीगृहाणाङ्गान्यप्वेपरेहि ॥ अभिप्रेहिनिर्दहहृत्सुशोकैरन्धेनामित्रास्तमसासचन्ताम् ॥ १२ ॥ इतितृतीयोऽध्यायः ॥

सप्तदशमन्त्रैरभिषेकपक्षे-अवसृष्टापरापतशरव्येब्रह्मसᳬशिते ॥ गच्छामित्रान्प्रपद्यस्वमामीषाङ्कञ्चनोच्छिषः ॥ १ ॥ प्रेताजयतानरऽइन्द्रोवः शर्म्मयच्छतु ॥ उग्रावः सन्तुबाहवोनाधृष्यायथासथ ॥ २ ॥ असौयासेनामरुतः परेषामभ्यैतिनऽओजसास्पर्द्धमाना ॥ तान्गूहततमसापव्रतेनयथामीऽअन्योऽअन्यन्नजानन् ॥ ३ ॥ यत्रबाणाः सम्पतन्तिकुमाराविशिखाऽइव ॥ तन्नऽइन्द्रोबृहस्पतिरदितिः शर्म्मयच्छतुविश्वाहाशर्म्मयच्छतु ॥ ४ ॥ मर्म्माणितेवर्म्मणाच्छादयामिसोमस्त्वाराजामृतेनानुवस्ताम् ॥ उरोर्वरीयोवरुणस्तेकृणोतुजयन्तन्त्वानुदेवामदन्तु ॥ ५ ॥

१ इत्यप्रतिरथसूक्तस्य कचवृत्ताङ्गस्य द्वादशमन्त्रैरभिषेकः ॥ सप्तदशचैनेति कर्क - तस्मात्सप्तदशपक्षे सप्तदशानामप्रतिरथऋषिरित्यादिविनियोगं कृत्वा सप्तदशर्चेनाप्रतिरथेनाभिषेकः कार्यः ॥

२ एतान्यमन्त्रान्योजयित्वा सप्तदशेनाभिषेकः कार्यः ॥

ॐ विभ्राड्बृहत्पिबतु सोम्यम्मध्वायुर्द्दधद्यज्ञपतावविह्रुतम्॥ वातजूतो योऽअभिरक्षति त्मना प्रजाः पुपोष पुरुधा विराजति ॥ १ ३०/३३ ॥ उदुत्त्यञ्जातवेदसन्देवंवहन्ति केतवः ॥ दृशेविश्वाय सूर्य्यम् ॥ २ ३१/३३ ॥ येना पावकचक्षसा भुरण्यन्तञ्जनाँ२ऽअनु ॥ त्वंवरुण पश्यसि ॥ ३ ३२/३३ ॥ दैव्यावध्वर्य्यूऽआगतँरथेन सूर्य्यत्वचा ॥ मद्ध्वा यज्ञँसमञ्जाथे ॥ तम्प्रत्नथायंवेनश्चित्रन्देवानाम् ॥ ४ ३३/३३ ॥ तम्प्रत्नथा पूर्वथा विश्वथेमथा ज्येष्ठतातिम्बर्हिषदँस्वर्विदम् ॥ प्रतीचीनंवृजनन्दोहसे धुनिमाशुञ्जयन्तमनु यासु वर्द्धसे ॥ ५ ३४/३३ ॥ अयंवेनश्चोदयत्पृश्निगर्भा ज्योतिर्जरायू रजसो विमाने ॥ इममपाँसङ्गमे सूर्य्यस्य शिशुन्न विप्रा मतिभी रिहन्ति ॥ ६ १६/७ ॥ चित्रन्देवानामुदगादनीकञ्चक्षुर्म्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः[1] ॥ आप्रा द्यावापृथिवीऽअन्तरिक्षँसूर्य्यऽआत्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥ ७ ४२/७ ॥ आ नऽइडाभिर्विदथे सुशस्ति विश्वानरः सविता देवऽएतु ॥ अपि यथा युवानो मत्सथा नो विश्वञ्जगदभिपित्वे मनी-

१ प्रतिज्ञासूत्रे–अयान्त्यस्यान्तःस्थानां पदादिमध्यान्त्यस्थस्य त्रिविधं गुरुमध्यमलघुवृत्तिभिरुच्चारणम् ॥

पा ॥ ८$\frac{३४}{३३}$ ॥ यदुद्यकच्चवृत्रहन्नुदगांऽअभिसूर्य्य ॥ सर्व्वं-
न्तदिन्द्रतेवशे ॥ ९$\frac{३५}{३३}$ ॥ तरणिर्व्विश्वदर्शतोज्ज्योति-
ष्कृदसिसूर्य्य ॥ विश्वमाभासिरोचनम् ॥ १०$\frac{३६}{३३}$ ॥
तत्सूर्य्यस्यदेवत्वन्तन्महित्वम्मद्ध्याकर्त्तोर्व्विततꣳसञ्ज-
भार ॥ यदेदयुक्तहरितः सधस्थादाद्रात्रीवासस्तनुते-
सिमस्मै ॥ ११$\frac{३७}{३३}$ ॥ तन्मित्रस्यवरुणस्याभिचक्षेसूर्य्यो-
रूपङ्कृणुतेद्द्योरुपस्थे ॥ अनन्तमन्यद्रुशदस्यपाजः कृ-
ष्णमन्यद्धरितꣳसम्भरन्ति ॥ १२$\frac{३८}{३३}$ ॥ वण्महाँ२ऽ-
असिसूर्य्यबडादित्यमहाँ२ऽअसि ॥ महस्तेसतोमहिमा-
पनस्यतेद्धादेवमहाँ२ऽअसि ॥ १३$\frac{३९}{३३}$ ॥ वट्सूर्य्यश्र-
वसामहाँ२ऽअसिसत्रादेवमहाँ२ऽअसि ॥ मह्ना देवा-
नामसुर्य्यः पुरोहितोविभुज्ज्योतिरदाभ्यम् ॥ १४$\frac{४०}{३३}$ ॥
श्रायन्तऽइवसूर्य्यंव्विश्वेदिन्द्रस्यभक्षत ॥ वसूनिजातेज-
नमानऽओजसाप्रतिभागन्नदीधिम ॥ १५$\frac{४१}{३३}$ ॥ अ-
द्यादेवाऽउदितासूर्य्यस्यनिरꣳहसःपिपृतानिरवद्यात् ॥
तन्नोमित्रोवरुणोमामहन्तामदितिःसिन्धुः पृथिवीऽउत-
द्यौः ॥ १६$\frac{४२}{३३}$ ॥ आकृष्णेनरजसावर्त्तमानोनिवेशय-

न्नमृतम्मर्त्यञ्च ॥ हिरण्ययेनसवितारथेनादेवोयातिभुवनानिपश्यन् ॥ १७ ४३/३३ ॥ इतिचतुर्थोऽध्यायः ॥

ॐभूःॐभुवःॐस्वःॐनमस्तेरुद्रमन्यवऽउतोतऽइषवेनमः ॥ बाहुभ्यामुततेनमः ॥ १/१६ ॥ यातेरुद्रशिवातनूरघोरापापकाशिनी ॥ तयानस्तन्वाशन्तमयागिरिशन्ताभिचाकशीहि ॥ २/१६ ॥ यामिषुङ्गिरिशन्तहस्तेबिभर्ष्यस्तवे ॥ शिवाङ्गिरित्रताङ्कुरुमाहिᳬसीःपुरुषञ्जगत् ॥ ३/१६ ॥ शिवेनवचसात्वागिरिशाच्छावदामसि ॥ यथानःसर्वमिज्जगदयक्ष्मᳬसुमनाऽअसत् ॥ ४/१६ ॥ अध्यवोचदधिवक्ताप्रथमोदैव्योभिषक् ॥ अहीँश्चसर्वाञ्जम्भयन्त्सर्वाश्चयातुधान्योधराचीःपरासुव ॥ ५/१६ ॥ असौयस्ताम्रोऽअरुणऽउतबभ्रुःसुमङ्गलः । येचैनᳬरुद्राऽअभितो-

१ इति मैत्रसूक्तस्य नेत्ररूपस्य पञ्चमाङ्गस्य षोडशमन्त्रैरभिषेकः ॥ नेत्रे त्रिरुवाङ् मुखस्सूतम् ॥ २ ॥ कैवल्योपनिषदि—यः शतरुद्रियमधीते सोऽग्निपूतो भवति ॥ वायुपूतो भवति स आत्मपूतो भवति स सुरापानात्पूतो भवति स ब्रह्महत्यायाः पूतो भवति स सुवर्णस्तेयात्पूतो भवति स कृत्याकृत्यात्पूतो भवति तस्मादविमुक्तमाश्रितो भवतीत्याश्रमी सकृद्वा जपेत् । अनेन ज्ञानमाप्नोति संसारार्णवनाशनम् । तस्मादेवं विदित्वैनं कैवल्यपदमश्नुते ॥ जाबालोपनिषदि-अथ हैनं ब्रह्मचारिण ऊचुः- किं जप्येनामृतत्वं ब्रूहीति । स होवाच याज्ञवल्क्यः शतरुद्रियेणेत्येतान्येव ह वा अमृतस्य नामानि एतैर्ह वा अमृतो भवतीति एवमेवैतद्याज्ञवल्क्यः ॥ नमस्ते रुद्रमन्यव इतिषोडशर्चं शतरुद्रियमिति कमलाकरादिभिरुक्तम् तथा केनचित्-पद्पङ्क्तिर्नीलसूक्तं च पुनःषो-

दिक्षुश्रिताः सहस्रशोवैषाꣳहेडऽईमहे ॥ ६/१६ ॥ असौयोव-
सर्प्पतिनीलग्ग्रीवोविलोहितः ॥ उतैनङ्गोपाऽअदृश्रन्नदृ-
श्रन्नुदहार्य्यः सदृष्टोमृडयातिनः ॥ ७/१६ ॥ नमोस्तुनील-
ग्ग्रीवायसहस्राक्षायमीढुषे ॥ अथोयेऽअस्यसत्वानोहन्ते-
भ्योकरन्नमः ॥ ८/१६ ॥ प्रमुञ्चधन्वनस्त्वमुभयोरार्त्न्योर्ज्ज्या-
म् ॥ याश्चतेहस्तऽइषवः परातःभगवोवप ॥ ९/१६ ॥ विज्ज्य-
न्धनुः कपर्दिनोविशल्ल्योवाणवाँ २ ऽउत ॥ अनेशन्न-
स्यषाऽइषवऽआभुरस्यनिषङ्गधिः ॥ १०/१६ ॥ यातेहेतिर्म्मी-
ढुष्टमहस्तेबभूवतेधनुः ॥ तयास्मान्विश्वतस्त्वमयक्ष्म-
यापरिभुज ॥ ११/१६ ॥ परितेधन्वनोहेतिरस्मान्वृणक्तुवि-
श्वतः ॥ अथोयऽइषुधिस्तवारेऽअस्मन्निधेहितम् ॥ १२/१६ ॥

रुद्रशब्दमर्देत् । एवनेद्रेनमस्तेद्वे नतं विद्वमभेव च ॥ मीढुष्ट मेतिचत्वारिंशेतश्च शतरुद्रियम् इति यदुक्तं तन्निर्मूलमेव ॥ उक्तञ्च शतसङ्ख्याता रुद्रा देवता अस्येति शतरुद्रियम् ॥ शतरुद्रास्यथ (तद्धितप्रकरणेवार्तिके ११६) इतिघप्रत्ययान्तोऽयं शतरुद्रियशब्दः ॥ स्मृतिसूत्रपुराणवचनेषु रुद्रजपेदितिरुद्रान् जपेदिति च श्रूयते तत्र उभयथाप्येकवचनान्तत्वेन बहुवचनान्तत्वेन वा श्रुतस्य रुद्रपदस्य रौद्राध्यायोऽभिधेयः ॥ स्मृतिपुराणामिह रौद्राध्यायवाचकत्वेन रुद्रप्रसिद्धेर्ग्रन्थकाराभिप्रायाच नमस्ते रुद्रेति षट्षष्टिमन्त्रात्मकमेव शतरुद्रियम् ॥ शतरुद्रियहोमे विनियुक्तमन्त्रसमुदायस्यैव स्मृतिसूत्रपुराणस्थरुद्रविधानेषु रुद्रशब्दप्रतिपादनेन तस्यैवात्ररुद्रपदवाच्यतया प्रसिद्धत्वेन च रुद्रत्वात् ॥ रुत् दुःखं द्रावयतीति रुद्रः ॥ अथवा रुत् ज्ञानं राति ददातीति रुद्रः ॥ यद्वा पापिनो नरान् दुःखभोगेन रोदयतीति रुद्रः ॥

अवतत्त्यधनुष्ट्वꣳसहस्राक्षशतेषुधे॥निशीर्य्यशल्ल्यानाम्मु-
खाशिवोनःसुमनाभव ॥ १३/१६ ॥ नमस्तऽआयुधायाना-
ततायधृष्णवे॥उभाब्भ्यामुततेनमोबाहुब्भ्यान्तवधन्न्व-
ने॥ १४/१६ ॥मानोमहान्तमुतमानोऽअर्ब्भकम्मानऽउक्षन्तमुत-
मानऽउक्षितम्॥मानोवधीःपितरम्मोतमातरम्मानःप्प्रि-
यास्तन्न्वोरुद्ररीरिषः॥ १५/१६ ॥ मानस्तोकेतनयेमानऽआ-
युषिमानो गोषुमानोऽअश्श्वेषुरीरिषः॥मानोव्वीरान्नुद्र-
भामिनोवधीर्हविष्म्मन्तःसदमित्त्वाहवामहे ॥ १६/१६ ॥ नमो-
हिरण्ण्यबाहवेसेनान्न्येदिशाञ्चपतयेनमोनमोवृक्षेब्भ्योह-
रिकेशेब्भ्यःपशूनाम्पतयेनमोनमःशष्प्पिञ्जरायत्त्विषीम-
तेपथीनाम्पतयेनमोनमोहरिकेशायोपवीतिनेपुष्ट्टानाम्प-
तयेनमो-नमोबब्भ्लुशायव्व्याधिनेन्नानाम्पतयेनमोनमोभ-
वस्यहेत्त्यैजगताम्पतयेनमोनमोरुद्रायाततायिनेक्षेत्राणा-
म्पतयेनमोनमःसूतायाहन्त्त्यैवनानाम्पतयेनमो—नमोरो-
हितायस्थपतयेवृक्षाणाम्पतयेनमोनमोभुवन्तयेवारिव-
स्कृतायौषधीनाम्पतयेनमोनमोमन्त्रिणेवाणिजायकक्षा-
णाम्पतयेनमोनमऽउच्चैर्घोषायाक्क्रन्दयतेपत्तीनाम्पतये-
नमो—नमःकृत्स्नायतयाधावतेसत्त्वनाम्पतयेनमोनमःस-

हेमानायनिव्याधिनऽआव्याधिनीनाम्पतयेनमोनमोनि-
षङ्गिणेककुभायस्तेनानाम्पतयेनमोनमोनिचेरवेपरिचरा-
यारण्यानाम्पतयेनमो-नमोवञ्चतेपरिवञ्चतेस्तायूनाम्पत-
येनमोनमोनिषङ्गिणऽइषुधिमतेतस्कराणाम्पतयेनमोन-
मःसृकायिभ्योजिघाꣳसद्भ्योमुष्णताम्पतयेनमोनमो-
सिमद्भ्योनक्तञ्चरद्भ्योविकृन्तानाम्पतयेनमः॥ १७/१६ १८/१६
१९/१६ २०/१६ २१/१६ ॥ नमऽउष्णीषिणेगिरिचरायकुलुञ्चानाम्पतये-
नमोनमऽइषुमद्भ्योधन्वायिभ्यश्चवोनमोनमऽआत-
न्वानेभ्यःप्रतिदधानेभ्यश्चवोनमोनमऽआयच्छद्-
भ्योस्यद्भ्यश्चवोनमो-नमोविसृजद्भ्योविध्यद्भ्यश्च-
वोनमोनमःस्वपद्भ्योजाग्रद्भ्यश्चवोनमोनमꣳशयाने-
भ्यऽआसीनेभ्यश्चवोनमोनमस्तिष्ठद्भ्योधावद्भ्य-
श्चवोनमो-नमःसभाभ्यःसभापतिभ्यश्चवोनमोनमो-
ऽश्वेभ्योऽश्वपतिभ्यश्चवोनमोनमऽआव्याधिनीभ्यो-
विविध्यन्तीभ्यश्चवोनमोनमऽउगणाभ्यस्तृꣳहती-
भ्यश्चवोनमो-नमोगणेभ्योगणपतिभ्यश्चवोनमोन-
मोव्रातेभ्योव्रातपतिभ्यश्चवोनमोनमोगृत्सेभ्योगृ-
त्सपतिभ्यश्चवोनमोनमोविरूपेभ्योविश्वरूपेभ्यश्च-

श्चोनमो-नमःसेनाभ्यः सेनानिभ्यश्चवोनमोनमोरथि-
भ्योऽअरथेभ्यश्चवोनमोनमः क्षत्तृभ्यः सङ्ग्रहीतृभ्य-
श्चवोनमोनमोमहद्भ्योऽअर्भकेभ्यश्चवोनमः। २२।२३।२४/१६-
२५।२६/१६। नमस्तक्षभ्योरथकारेभ्यश्चवोनमोनमः कुलाले-
भ्यः कर्मारेभ्यश्चवोनमोनमोनिषादेभ्यः पुञ्जिष्ठेभ्य-
श्चवोनमोनमः श्वनिभ्योमृगयुभ्यश्चवोनमो—नमः श्व-
भ्यः श्वपतिभ्यश्चवोनमोनमोभवायचरुद्रायचनमः श-
र्वायचपशुपतयेचनमोनीलग्रीवायचशितिकण्ठायच। २७/१६-
२८/१६ नमः कपर्दिनेचव्युप्तकेशायचनमः सहस्राक्षायचशत-
धन्वनेचनमोगिरिशयायचशिपिविष्टायचनमोमीढुष्टमा-
यचेषुमतेच ॥ २९/१६॥ नमोह्रस्वायचवामनायचनमोबृहतेच-
वर्षीयसेचनमोवृद्धायचसवृधेचनमोग्र्यायचप्रथमायच
॥ ३०/१६॥ नमऽआशवेचाजिरायचनमः शीघ्र्यायचशीभ्या-
यचनमऽऊर्म्यायचावस्वन्यायचनमोनादेयायचद्वीप्या-
यच ॥ ३१/१६॥ नमोज्येष्ठायचकनिष्ठायचनमः पूर्वजाय-
चापरजायचनमोमध्यमायचापगल्भायचनमोजघन्या-
यचबुध्न्यायच ॥ ३२/१६ ॥ नमः सोभ्यायचप्रतिसर्यायचन-
मोयाम्यायचक्षेम्यायचनमः श्लोक्यायचावसान्याय-

चनमऽउर्व्व्यायच सूर्म्यायचखल्याय च ॥ ३३ ॥ नमो वन्याय च कक्ष्याय च नमः श्रवाय च प्रतिश्रवाय च नमऽआशुषेणाय चाशुरथाय च नमः शूराय चावभेदिने च ॥ ३४ ॥ नमो बिल्मिने च कवचिने च नमो वर्म्मिणे च वरूथिने च नमः श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुभ्याय चाहनन्याय च ॥ ३५ ॥ नमो धृष्णवे च प्रमृशाय च नमो निषङ्गिणे चेषुधिमते च नमस्तीक्ष्णेषवे चायुधिने च नमः स्वायुधाय च सुधन्वने च ॥ ३६ ॥ नमः स्रुत्याय च पथ्याय च नमः काट्याय च नीप्याय च नमः कुल्याय च सरस्याय च नमो नादेयाय च वैशन्ताय च ॥ ३७ ॥ नमः कूप्याय चावट्याय च नमो वीध्र्याय चातप्याय च नमो मेघ्याय च विद्युत्याय च नमो वर्ष्याय चावर्ष्याय च ॥ ३८ ॥ नमो वात्याय च रेष्म्याय च नमो वास्तव्याय च वास्तुपाय च नमः सोमाय च रुद्राय च नमस्ताम्राय चारुणाय च ॥ ३९ ॥ नमः शङ्गवे च पशुपतये च नमऽउग्राय च भीमाय च नमो ग्रेवधाय च दूरेवधाय च नमो हन्त्रे च हनीयसे च नमो वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यो नमस्ताराय ॥ ४० ॥ नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च ॥ ४१ ॥ नमः पार्य्याय चावार्य्याय च नमः प्र-

तरंणायचोत्तरंणायचनमस्तीर्त्थ्यायचकूल्ल्यायचनमः॒शष्प्यायचफेन्न्यायच ॥४३॥नमः॑सिकत्यायचप्रवाह्यायचनमः॑किꣳशिलायंचक्षयणायंचनमः॑कपर्द्दिनेचपुलस्तयेचनमऽइरिण्ण्यायचप्रपत्थ्यायच ॥४३॥ नमोव्रज्ज्यायचगोष्ठ्यायचनमस्तल्प्यायचगेह्यायचनमोहृदय्यायचनिवेष्प्यायचनमःकाट्यायचगह्वरेष्ठायंच॥४४॥नमःशुष्क्क्यायचहरित्यायचनमःपाꣳसव्यायचरजस्यायचनमोलोप्प्यायचोलप्प्यायचनमऽऊर्व्यायचसूर्व्यायच ॥४५॥नमः॑पुर्णायंचपर्णशदायंचनमःऽउद्गुरमाणायचाभिघ्नतेचनमःऽआखिदतेचप्रखिदतेचनमःऽइषुकृद्भ्योधनुष्कृद्भ्यश्चवोनमोनमोवꣳकिरिकेभ्योदेवानाꣳहृदयेभ्योनमोविचिन्न्वत्केभ्योनमोविक्षिणत्केभ्योनमःऽआनिर्हतेभ्यः ॥४६॥ द्रापेऽअन्धसस्पतेदरिद्रनीललोहित ॥ आसाम्प्रजानामेषाम्पशूनाम्माभेर्म्मारोङ्मोचनःकिञ्चनाममत् ॥४७॥ इमारुद्रायंतवसेकपर्द्दिनेक्षयद्वीरायप्रभरामहेमतीः॥यथाशमसद्विपदेचतुष्पदेविश्वम्पुष्टङ्ग्रामेऽअस्मिन्ननातुरम् ॥४८॥ यातेरुद्रशिवातनूःशिवाविश्श्वाहाभेषजी ॥ शिवारुतस्यभेषजीतयानोमृ-

डज्जीवसे ॥ ११ ॥ परिनोरुद्रस्यहेतिर्वृणक्तुपरित्त्वेषस्यदु
र्म्मतिरंघायोः ॥ अवस्थिरामघवद्भ्यस्तनुष्वमीढ्व
स्तोकायतनयायमृड ॥ १२ ॥ मीढुष्टमशिवतमशिवोनः
सुमनाभव ॥ परमेव्वृक्षऽआयुधन्निधायकृत्तिंवसानऽआ
चरपिनाकम्बिभ्रदागहि ॥ १३ ॥ विकिरिद्रविलोहितन
मस्तेऽअस्तुभगवः ॥ यास्तेसहस्रंहेतयोन्यमस्मन्नि
वपन्तुताः ॥ १४ ॥ सहस्राणिसहस्रशोबाह्वोस्तवहेतयः॥
तासामीशानोभगवःपराचीनामुखाकृधि ॥ १५ ॥ अस
ङ्ख्यातासहस्राणियेरुद्राऽअधिभूम्याम् ॥ तेषांसहस्र
योजनेवधन्वानितन्मसि ॥ १६ ॥ अस्मिन्महत्यर्णवे
न्तरिक्षेभवाऽअधि ॥ तेषांसहस्रयोजनेवधन्वानितन्म
सि ॥ १७ ॥ नीलग्ग्रीवाःशितिकण्ठादिवंरुद्राउपश्रि
ताः ॥ तेषांसहस्रयोजनेवधन्वानितन्मसि ॥ १८ ॥
नीलग्ग्रीवाःशितिकण्ठाःशर्वाऽअधःक्षमाचराः॥तेषा
सहस्रयोजनेवधन्वानितन्मसि ॥ १९ ॥ येवृक्षेषुशष्पि
ञ्जरानीलग्ग्रीवाविलोहिताः ॥ तेषांसहस्रयोजनेवध
न्वानितन्मसि ॥ २० ॥ येभूतानामधिपतयोविशिखासः

कपर्दिनः ॥ तेषाᳬंसहस्रयोजनेवधन्न्वानितन्न्मसि ॥
५९/१६ ॥ येपथाम्पथिरक्षयऽऐलबृदाऽआयुर्युधः ॥ तेषाᳬं-
सहस्रयोजनेवधन्न्वानितन्न्मसि ॥६०/१६॥ येतीर्त्थानिप्रचर-
न्तिसृकाहस्तानिषङ्गिणः॥ तेषाᳬंसहस्रयोजनेवधन्न्वा-
नितन्न्मसि ॥ ६१/१६॥ येन्नेषुविविद्ध्यन्तिपात्रेषुपिबतोज-
नान् ॥ तेषाᳬंसहस्रयोजनेवधन्न्वानितन्न्मसि ॥ ६२/१६ ॥
यऽएतावन्तश्चभूयाᳬंसश्चदिशोरुद्राव्वितस्थिरे॥ ते-
षाᳬंसहस्रयोजनेवधन्न्वानितन्न्मसि ॥ ६३/१६ ॥ नमोस्तु-
रुद्रेभ्योयेदिवियेषांव्वर्षमिषवः॥ तेभ्योदशप्राचीर्दश-
दक्षिणादशप्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्द्ध्वाः ॥ तेभ्योन-
मोऽअस्तुतेनोवन्तुतेनोमृडयन्तुतेयन्द्विष्मोयश्चनोद्वे-
ष्टितमेषाञ्जम्भेदद्ध्मः ॥ ६४/१६ ॥ नमोस्तुरुद्रेभ्योयेन्तरि-
क्षेयेषांव्वातऽइषवः ॥ तेभ्योदशप्राचीर्दशदक्षिणादश-
प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्द्ध्वाः॥ तेभ्योनमोऽअस्तुतेनो-
वन्तुतेनोमृडयन्तुतेयन्द्विष्मोयश्चनोद्वेष्टितमेषाञ्जम्भेद-
द्ध्मः ॥६५/१६॥ नमोस्तुरुद्रेभ्योयेपृथिव्व्यांय्येषामन्नमिषवः
॥ तेभ्योदशप्राचीर्दशदक्षिणादशप्रतीचीर्दशोदीचीर्द-
शोर्द्ध्वाः ॥ तेभ्योनमोऽअस्तुतेनोवन्तुतेनोमृडय-

न्तुनेयन्द्विष्मोयञ्चनोद्वेष्टितमेषाञ्जम्भेदध्मः ॥ ६६/१६ ॥
ॐभूःॐभुवःॐस्वःॐ ॥ इतिपञ्चमोऽध्यायः ॥

ॐव्ययꣳसोमव्रतेतवमनस्तनूषुबिभ्रतः ॥ प्रजाव-
न्तꣳसचेमहि ॥१ ५६/३॥ एषतेरुद्रभागꣳसहस्वस्राम्बिकया-
तञ्जुषस्वस्वाहैषतेरुद्रभागऽआखुस्तेपशुः ॥२ ५७/३॥ अवरु-
द्रमदीमह्यवदेवन्त्र्यम्बकम् ॥ यथानोवस्यसस्करद्यथ-
थानःश्रेयसस्करद्यथानोव्यवसाययात् ॥ ३ ५८/३॥ भेषज-
मसिभेषजङ्गवेश्वायपुरुषायभेषजम् ॥ सुखम्मेषायमे-
ष्यै ॥ ४ ५९/३ ॥ त्र्यम्बकँय्यजामहेसुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम् ॥
उर्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ॥ त्र्यम्बकँ-
य्यजामहेसुगन्धिम्पतिवेदनम् ॥ उर्वारुकमिवबन्धनादि-
तोमुक्षीयमामुतः ॥ ५ ६०/३ ॥ एतत्तेरुद्रावसन्तेनपरोमूज-
वतोतीहि ॥ अवततधन्वापिनाकावसꣳकृत्तिवासाऽअहिꣳ
सन्नःशिवोतीहि ॥ ६ ६१/३ ॥ त्र्यायुषञ्जमदग्नेःकश्यपस्यत्र्या-
युषम् ॥ यद्देवेषुत्र्यायुषन्तन्नोऽअस्तुत्र्यायुषम् ॥ ७ ६२/३ ॥
शिवोनामासिस्वधितिस्तेपितानमस्तेऽअस्तुमामाहिꣳ-
सीः ॥ निवर्त्तयाम्यायुषेन्नाद्यायप्रजननायरायस्पो-

१ इत्यनेन ब्राह्मणयुक्तेन षट्षष्टिमन्त्रात्मकशतरुद्रियाख्येन रौद्राध्यायेन अभिषेकः ॥

पांयसुप्रजास्त्वायंसुवीर्य्यीयं ।।८ ६३/३।। ॐनतंविदाथयऽ-
इमाजजानान्यद्युष्माकमन्तंरम्बभूव । नीहारेणप्रा-
वृंताजल्प्यांचासुतृपंऽउक्क्थशासंश्चरन्ति।।९ ३३/७।।विश्व-
कंर्म्माह्यजंनिष्टदेवऽआदिद्गन्धर्वोऽअंभवद्द्वितीयं÷ ।।
तृतीयं÷पिताजंनितौषधीनामुपाङ्गर्भंव्यदधात्पुरुत्रा ।।
।।१० ३२/१७।। ॐउग्रश्चंभीमश्चध्वान्तश्चधुनिश्च ।। सास-
ह्वाँश्चाभियुग्वाचंविक्षिपःस्वाहा ।।११ ७/३९।। अग्निःहृद-
येनाशनिंःहृदयाग्रेणपशुपतिङ्कृत्स्नहृदयेनभवँय्यक्ना ।।
शर्वम्मतस्नाभ्यामीशानम्मन्युनामहादेवमन्तःपर्शव्येने-
नोग्रन्देवंवनिष्ठुनावसिष्ठहनुःशिङ्गीनिकोश्याभ्याम्
।।१२ ६/३९।।उग्रँल्लोहितेनमित्रँसौव्रत्येनरुद्रन्दौर्व्रत्येने-
न्द्रम्प्रक्क्रीडेनंमरुतोवलेंनसाद्ध्यान्प्रमुदा ।। भुवस्यक-
ण्ठ्यंरुद्रस्यान्तःपार्श्व्यम्महादेवस्ययकृच्छर्वस्यंवनि-
ष्ठुः पशुपतेःपुरीतत् ।। १३ ९/३९ ।। लोमभ्यःस्वाहालोम-
भ्यःस्वाहात्वचेस्वाहात्वचेस्वाहालोहितायस्वाहालो-
हितायस्वाहामेदोभ्यःस्वाहामेदोभ्यःस्वाहा ।। मांॅसे-

१ इति महच्छिरोरूपाभिरष्टाभिरभिषेकः ।। काण्वानां तु सप्तकण्डिकाभिरिति विशेषः।।
२ इति देवयज्ञयुक्तद्वाभ्यामभिषेकः।। कल्पद्रुमे—उग्रश्चेति तिसृभिः सप्तभिर्वाऽभिषेकः ।।

भ्यःस्वाहामुᳪस्येभ्यःस्वाहास्नावभ्यःस्वाहास्नावभ्यःस्वाहास्थभ्यःस्वाहास्थभ्यःस्वाहामुज्जभ्यःस्वाहामुज्जभ्यःस्वाहा ॥ रेतसेस्वाहापायवेस्वाहा ॥१४॥ आयासायस्वाहाप्रायासायस्वाहासँय्यासायस्वाहावियासायस्वाहोद्यासायस्वाहा ॥ शुचेस्वाहाशोचतेस्वाहाशोचमानायस्वाहाशोकायस्वाहा ॥१५॥ तपसेस्वाहातप्यतेस्वाहातप्यमानायस्वाहातप्तायस्वाहाघर्म्मायस्वाहा ॥ निष्कृत्यैस्वाहाप्रायश्चित्त्यैस्वाहाभेषजायस्वाहा ॥१६॥ यमायस्वाहान्तकायस्वाहामृत्यवेस्वाहा ॥ ब्रह्मणेस्वाहाब्रह्महत्यायैस्वाहाविश्वेभ्योदेवेभ्यःस्वाहाद्यावापृथिवीभ्याᳪस्वाहा ॥ १७॥

इति षष्ठोऽध्यायः ॥

मनश्चमेचक्षुश्चमेश्रोत्रञ्चमेदक्षश्चमेबलञ्चमेयज्ञेनकल्प-
न्ताम् ॥२/१८॥ ओजश्चमेसहश्चमऽआत्माचमेतनूश्चमे-
शर्म्मचमेवर्म्मचमेऽङ्गानिचमेऽस्थीनिचमेपरूꣳषिचमेशरी-
राणिचमऽआयुश्चमेजराचमेयज्ञेनकल्पन्ताम् ॥३/१८॥ ज्यै-
ष्ठ्यञ्चमऽआधिपत्यञ्चमेमन्युश्चमेभामश्चमेऽमश्चमेऽम्भश्च-
मेजेमाचमेमहिमाचमेवरिमाचमेप्रथिमाचमेवर्षिमाचमेद्रा-
घिमाचमेवृद्धञ्चमेवृद्धिश्चमेयज्ञेनकल्पन्ताम् ॥४/१८॥ स-
त्यञ्चमेश्रद्धाचमेजगच्चमेधनञ्चमेविश्वञ्चमेमहश्चमेक्री-
डाचमेमोदश्चमेजातञ्चमेजनिष्यमाणञ्चमेसूक्तञ्चमेसुकृ-
तञ्चमेयज्ञेनकल्पन्ताम् ॥५/१८॥ ऋतञ्चमेऽमृतञ्चमेऽयक्ष्मञ्चमे-
ऽनामयच्चमेजीवातुश्चमेदीर्घायुत्वञ्चमेऽनमित्रञ्चमेऽभयञ्चमे-
सुखञ्चमेशयनञ्चमेसूषाश्चमेसुदिनञ्चमेयज्ञेनकल्पन्ताम्
॥६/१८॥ यन्ताचमेधर्त्ताचमेक्षेमश्चमेधृतिश्चमेविश्वञ्चमेम-
हश्चमेसंविच्चमेज्ञात्रञ्चमेसूश्चमेप्रसूश्चमेसीरञ्चमेलयश्चमे-
यज्ञेनकल्पन्ताम् ॥७/१८॥ शञ्चमेमयश्चमेप्रियञ्चमेऽनुकाम-
श्चमेकामश्चमेसौमनसश्चमेभगश्चमेद्रविणञ्चमेभद्रञ्चमे-
श्रेयश्चमेवसीयश्चमेयशश्चमेयज्ञेनकल्पन्ताम् ॥८/१८॥ ऊर्क्-
चमेसूनृताचमेपयश्चमेरसश्चमेघृतञ्चमेमधुचमेसग्धिश्च-

मेसपीतिश्चमेकृपिश्चमेवृष्टिश्चमेजैत्रंश्चमऽऔद्भिद्यश्चमे-
यज्ञेनकल्पन्ताम्॥९/१८॥रयिश्चमेरायश्चमेपुष्टञ्चमेपुष्टिश्च-
मेविभुचमेप्रभुचमेपूर्णञ्चमेपूर्णतरञ्चमेकुयवञ्चमेक्षितञ्चमे-
न्नञ्चमेक्षुच्चमेयज्ञेनकल्पन्ताम्॥१०/१८॥वित्तञ्चमेव्वेद्यञ्चमेभूत-
ञ्चमेभविष्यच्चमेसुगञ्चमेसुपत्थ्यञ्चमऽऋद्धञ्चमऽऋद्धिश्च-
मेक्लृप्तञ्चमेक्लृप्तिश्चमेमतिश्चमेसुमतिश्चमेयज्ञेनकल्पन्ताम्
॥११/१८॥ व्व्रीहयश्चमेयवाश्चमेमाषाश्चमेतिलाश्चमेमुद्गा-
श्चमेखल्वाश्चमेप्रियङ्गवश्चमेणवश्चमेश्श्यामाकाश्चमेनी-
वाराश्चमेगोधूमाश्चमेमसूराश्चमेयज्ञेनकल्पन्ताम् ॥१२/१८॥
अश्माचमेमृत्तिकाचमेगिरयश्चमेपर्वताश्चमेसिकताश्च-
मेव्वनस्पतयश्चमेहिरण्यञ्चमेयश्चमेश्श्यामञ्चमेलोहञ्चमे-
सीसञ्चमेत्रपुचमेयज्ञेनकल्पन्ताम् ॥१३/१८॥ अग्निश्चमऽ
आपश्चमेव्वीरुधश्चमऽओषधयश्चमेकृष्टपच्च्याश्चमेकृष्टप-
च्च्याश्चमेग्ग्राम्याश्चमेपशवऽआरण्याश्चमेवित्तञ्चमेवि-
त्तिश्चमेभूतञ्चमेभूतिश्चमेयज्ञेनकल्पन्ताम् ॥१४/१८॥ वसु-
चमेव्वसतिश्चमेकर्मचमेशक्तिश्चमेर्थश्चमऽएमश्चमऽ-
इत्याचमेगतिश्चमेयज्ञेनकल्पन्ताम् ॥१५/१८॥ अग्निश्च-
मऽइन्द्रश्चमेसोमश्चमऽइन्द्रश्चमेसविताचमऽइन्द्रश्चमेस-

रस्वतीचमऽइन्द्रं श्चमेपूषाचंमुऽइन्द्रं श्चमेबृहस्पतिं श्चमुऽ–
इन्द्रं श्चमेयज्ञेनंकल्पन्ताम् ॥ $\frac{१६}{१८}$ ॥ मित्रश्चमऽइन्द्रं श्चमेव्व-
रुणश्चमुऽइन्द्रं श्चमेधाताचमुऽइन्द्रं श्चमेत्वष्टाचमुऽइन्द्रं-
श्चमेमरुतं श्चमुऽइन्द्रं श्चमेव्विश्वेचमेदेवाऽइन्द्रं श्चमेयज्ञेनं-
कल्पन्ताम् ॥$\frac{१७}{१८}$॥ पृथिवीचंमऽइन्द्रं श्चमेन्तरिक्षश्चमऽइ-
न्द्रं श्चमेद्यौ श्चमऽइन्द्रं श्चमेसमां श्चमुऽइन्द्रं श्चमेनक्षत्राणि-
चमुऽइन्द्रं श्चमेदिशं श्चमुऽइन्द्रं श्चमेयज्ञेनंकल्पन्ताम् ॥$\frac{१८}{१८}$॥
अꣳशुश्चमेरश्मिश्चमेदाभ्यश्चमेधिपतिश्चमऽउपाꣳशु-
श्चमेन्तर्य्यामश्चमऽऐन्द्रवायवश्चमेमैत्रावरुणश्चमऽआ-
श्विनश्चमेप्रतिप्रस्त्थानंश्चमेशुक्रश्चमेमन्थीचमेयज्ञेनं-
कल्पन्ताम् ॥$\frac{१९}{१८}$॥ आग्रयणश्चमेवैश्वदेवश्चमेध्रुवश्चं-
मेव्वैश्वानरश्चमऽऐन्द्राग्नश्चमेमहावैश्वदेवश्चमेमरुत्व-
तीयाश्चमेनिष्केवल्यश्चमेसावित्रश्चमेसारस्वतश्चमेपा-
त्नीवतश्चमेहारियोजनश्चमेयज्ञेनंकल्पन्ताम् ॥$\frac{२०}{१८}$॥ स्रुचं-
श्चमेचमसाश्चमेव्वायव्यानिचमेद्रोणकलशश्चमेग्रावाण-
श्चमेधिषवणेचमेपूतभृच्चमऽआधवनीयंश्चमेव्वेदिश्चमेब-
र्हिश्चमेवभृथश्चमेस्वगाकारश्चमेयज्ञेनंकल्पन्ताम् ॥ $\frac{२१}{१८}$॥
अग्निश्चमेघर्म्मश्चमेर्कश्चमेसूर्य्यश्चमेप्राणश्चमेश्वमेध–

श्चमेपृथिवीचमेदितिश्चमेदितिश्चमेद्यौश्चमेङ्गुलयः शक्वरयोदिशश्चमेयज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ २२ ॥ व्रतञ्चमऽऋतवश्चमेतपश्चमेसंवत्सरश्चमेहोरात्रेऽऊर्वष्ठीवेबृहद्रथन्तरेचमेयज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ २३ ॥ एकाचमेतिस्रश्चमेतिस्रश्चमेपञ्चचमेपञ्चचमेसप्तचमेसप्तचमेनवचमेनवचमऽएकादशचमऽएकादशचमेत्रयोदशचमेत्रयोदशचमेपञ्चदशचमेपञ्चदशचमेसप्तदशचमेसप्तदशचमेनवदशचमेनवदशचमऽएकविꣳशतिश्चमऽएकविꣳशतिश्चमेत्रयोविꣳशतिश्चमेत्रयोविꣳशतिश्चमेपञ्चविꣳशतिश्चमेपञ्चविꣳशतिश्चमेसप्तविꣳशतिश्चमेसप्तविꣳशतिश्चमेनवविꣳशतिश्चमेनवविꣳशतिश्चमऽएकत्रिꣳशच्चमऽएकत्रिꣳशच्चमेत्रयस्त्रिꣳशच्चमेयज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ २४ ॥ चतस्रश्चमेष्टौचमेष्टौचमेद्वादशचमेद्वादशचमेषोडशचमेषोडशचमेविꣳशतिश्चमेविꣳशतिश्चमेचतुर्विꣳशतिश्चमेचतुर्विꣳशतिश्चमेष्टाविꣳशतिश्चमेष्टाविꣳशतिश्चमेद्वात्रिꣳशच्चमेद्वात्रिꣳशच्चमेषट्त्रिꣳशच्चमेषट्त्रिꣳशच्चमेचत्वारिꣳशच्चमेचत्वारिꣳशच्चमेचतुश्चत्वारिꣳशच्चमेचतुश्चत्वारिꣳशच्चमेष्टाचत्वारिꣳशच्चमेयज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ २५ ॥ त्र्यविश्चमेत्र्यवीचमेदित्यवाट्-

चमेदित्यौहीचमेपष्ठवाविश्चमेपष्ठवाहीचमेत्रिवत्सश्चमेत्रिव-
त्साचमेतुर्य्यवाट्चमेतुर्य्यौहीचमेयज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ २६/१८ ॥
पुष्ठवाट्चमेपष्ठौहीचमऽउक्षाचमेवशाचमऽऋषभश्चमेवे-
हच्चमेनड्वाँश्चमेधेनुश्चमेयज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ २७/१८ ॥ वाजा-
युस्वाहाप्रसवायुस्वाहापिजायुस्वाहाक्रतवेस्वाहावसवे-
स्वाहाहर्पतयेस्वाहाह्नेमुग्धायुस्वाहामुग्धायवैनंशि-
नायुस्वाहाविनंशिनऽआन्त्यायनायुस्वाहान्त्यायभौव-
नायुस्वाहाभुवनस्यपतयेस्वाहाधिपतयेस्वाहाप्रजापतये-
स्वाहा ॥ इयन्तेराण्मित्रायंयन्तासियमनऽऊर्जेत्वावृ-
ष्ट्यैत्वाप्रजानान्त्वाधिपत्याय ॥ २८/१८ ॥ आयुर्य्यज्ञेनकल्प-
ताम्प्राणोयज्ञेनकल्पताञ्चक्षुर्य्यज्ञेनकल्पताᳪश्रोत्रंयज्ञे-
नकल्पतांवाग्ग्यज्ञेनकल्पताम्मनोयज्ञेनकल्पतामात्मा-
यज्ञेनकल्पताम्ब्रह्मायज्ञेनकल्पताञ्ज्योतिर्य्यज्ञेनकल्पता-
ᳪस्वर्य्यज्ञेनकल्पताम्पृष्ठँय्यज्ञेनकल्पताँय्यज्ञोयज्ञेनक-
ल्पताम् ॥ स्तोमश्चयजुश्चऽऋक्चसामचबृहच्चरथन्तरञ्च ॥
स्वर्द्देवाऽअगन्मामृताऽअभूमप्रजापतेःप्रजाऽअभूमवे-
ट्स्वाहा ॥ २९/१८ ॥ इति सप्तमोऽध्यायः ॥

१ इत्येकोनत्रिंशन्मन्त्रात्मकचमकाध्यायेन अभिषेकः ॥ वाजश्चमइत्यष्टानुवाकात्मकेन चमकेन चेति देवयाज्ञिकः ॥ महच्छिरसाऽभिषेकपक्षे न चमकानुवाकैरभिषेक । चमकानुवाकैरभिषेकपक्षे न महच्छिरसाऽभिषेक इत्यपरे ॥

ॐ ऋचंवाचम्प्रपद्येमनोयजुः प्रपद्येसामप्राणम्प्रपद्ये चक्षुः श्रोत्रम्प्रपद्ये ॥ व्वागोजः सहौजोमयिप्राणापानौ ॥१/३६॥ यन्मेच्छिद्रञ्चक्षुषोहृदयस्यमनसोवातितृण्णम्बृहस्पतिम्मेतद्दधातु ॥ शन्नोभवतुभुवनस्ययस्पतिः ॥२/३६॥ भूर्भुवः स्वः ॥ तत्सवितुर्व्वरेण्यम्भर्गोदेवस्य धीमहि ॥ धियोयोनः प्रचोदयात् ॥३/३६॥ कयानश्चित्र आभुवदूतीसदावृधः सखा ॥ कयाशचिष्ठयावृता ॥४/३६॥ कस्त्वासत्योमदानाम्मंहिष्ठोमत्सदन्धसः ॥ दृढाचिदारुजेवसु ॥५/३६॥ अभीषुणः सखीनामविताजरितॄणाम् ॥ शतम्भवास्यूतिभिः ॥६/३६॥ कयात्वन्न ऊत्याभिप्रमन्दसेवृषन् ॥ कयास्तोतृभ्य आभर ॥७/३६॥ इन्द्रोविश्वस्यराजति ॥ शन्नो अस्तुद्विपदेशञ्चतुष्पदे ॥८/३६॥ शन्नोमित्रः शंवरुणः शन्नोभवत्वर्य्यमा ॥ शन्न इन्द्रोबृहस्पतिः शन्नोविष्णुरुरुक्रमः ॥ ९/३६॥ शन्नोवातः पवताछंशन्नस्तपतुसूर्य्यः ॥ शन्नः कनिक्रदद्देवः पर्ज्जन्यो

---

१ अत्र पदादित्वेऽपि न द्वित्वम् ॥ अमोघनन्दिन्या शिक्षायाम् वो वा या ये मन्त्रपाठे स्यवो गुरव परे ॥ पदपाठे तु "व्वाम्" इत्याद्युदाहरणानि स्वयमूह्यानि ॥ याज्ञवल्क्यशिक्षायामपि स्वर्थवाचिनो वो वा वा वे यदि निपातजो । आदेशश्च विकल्पार्थो द्वेष स्पृष्टा इति स्मृताः ॥

२ अत्र अर्धमन्त्रः मध्यभावदर्शनात् ॥

अभिवर्षतु ॥१०/३६॥ अहानिशम्भवन्तुनःशꣳरात्रीःप्रति-
धीयताम् ॥ शन्नऽइन्द्राग्नीभवतामवोभिःशन्नऽइन्द्रावरु-
णारातहव्या ॥ शन्नऽइन्द्रापूषणावाजसातौशमिन्द्रासो-
मासुवितायशꣳय्योः ॥११/३६॥ शन्नोदेवीरभिष्टयऽआपोभ-
वन्तुपीतये ॥ शꣳय्योरभिस्रवन्तुनः ॥१२/३६॥ स्योनापृथि-
विनोभवानृक्षरानिवेशनी ॥ यच्छानःशर्मसप्रथाः
॥१३/३६॥ आपोहिष्ठामयोभुवस्तानऽऊर्जेदधातन ॥ महे-
रणायचक्षसे ॥१४/३६॥ योवःशिवतमोरसस्तस्यभाजयते-
हनः ॥ उशतीरिवमातरः ॥१५/३६॥ तस्माऽअरङ्गमाम-
वोयस्यक्षयायजिन्वथ ॥ आपोजनयथाचनः ॥१६/३६॥
द्यौःशान्तिरन्तरिक्षꣳशान्तिःपृथिवीशान्तिरापःशा-
न्तिरोषधयःशान्तिः ॥ वनस्पतयःशान्तिर्विश्वेदेवाः
शान्तिर्ब्रह्मशान्तिःसर्वꣳशान्तिःशान्तिरेवशान्तिः
सामाशान्तिरेधि ॥१७/३६॥ दृतेदृꣳहमामित्रस्यमाचक्षुषा-
सर्वाणिभूतानिसमीक्षन्ताम् ॥ मित्रस्याहञ्चक्षुषासर्वाणि
भूतानिसमीक्षे ॥ मित्रस्यचक्षुषासमीक्षामहे ॥१८/३६॥ दृते-
दृꣳहमा ॥ ज्योक्तेसन्दृशिजीव्यासञ्ज्योक्तेसन्दृशिजी-

ह्यासम् ॥१९/३६॥ नमस्तेहरसेशोचिषेनमस्तेऽअस्त्वर्चिषे ॥ अन्याँस्तेऽअस्मत्तपन्तुहेतयः पावकोऽअस्मभ्यंᳬशिवोभव ॥२०/३६॥ नमस्तेऽअस्तुविद्युतेनमस्तेस्तनयित्नवे ॥ नमस्तेभगवन्नस्तुयतःस्वः समीहसे ॥२१/३६॥ यतोयतः समीहसेततोनोऽअभयङ्कुरु ॥ शन्नः कुरुप्रजाभ्योऽभयन्नःपशुभ्यः ॥२२/३६॥ सुमित्रियानऽआपऽओषधयःसन्तुदुर्मित्रियास्तस्मैसन्तुयोस्मान्द्वेष्टियञ्चवयन्द्विष्मः ॥२३/३६॥ तच्चक्षुर्देवहितम्पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् ॥ पश्येमशरदः शतञ्जीवेमशरदः शतᳬशृणुयामशरदः शतम्प्रब्रवामशरदः शतमदीनाःस्यामशरदः शतम्भूयश्चशरदः शतात् ॥२४/३६॥ ॥ इति शान्त्यध्यायः ॥

अथस्वस्तिप्रार्थनादिमन्त्राः॥ ॐस्वस्तिनऽइन्द्रोवृद्धश्रवाःस्वस्तिनः पूषाविश्ववेदाः ॥ स्वस्तिनस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिःस्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु ॥१९/२५॥ ॐपयः पृथिव्याम्पयऽओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षेपयोधाः ॥ पयस्वतीः प्रदिशः सन्तुमह्यम् ॥ ३६/१८ ॥ ॐविष्णोरराटमसिविष्णोःश्नप्त्रेस्थो विष्णोःस्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोसि ॥ वैष्णवमसिविष्णवेत्वा ॥२१/५॥ अग्निर्देवतावातोदेवतासूर्योदेवता चन्द्रमादेवतावसवोदेवतारुद्रादेवतादित्यादेवतामरुतोदेवताविश्वेदेवादेवताबृहस्पतिर्देवतेन्द्रोदेवतावरुणोदेवता ॥२०/१४॥ सद्योजातम्प्रपद्यामिसद्योजातायवैनमो

नमः । भवेभवेनातिभवेभवस्वमां भवोद्भवाय नमः ॥ वामदेवाय नमोज्येष्ठायनमः श्रेष्ठाय नमोरुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमोबलविकरणायनमोबलायनमोबलप्रमथनाय नमःसर्वभूतदमनाय नमोमनोन्मनायनमः॥अघोरेभ्योथघोरेभ्योघोरघोरतरेभ्यः। सर्वेभ्यःसर्वशर्वेभ्यो नमस्तेऽअस्तुरुद्ररूपेभ्यः॥तत्पुरुषाय विद्महेमहादेवायधीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्॥ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानाम्। ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोधिपतिर्ब्रह्मा शिवोमेऽअस्तु सदाशिवोम्॥ॐशिवो नामासिस्वधितिस्ते पितानमस्तेऽअस्तुमामाहिᳬसीः॥ निवर्त्तयाम्यायुषेन्नाद्यायप्रजननायरायस्पोषायसुप्रजास्त्वायसुवीर्य्याय॥$\frac{६३}{३}$॥ ॐविश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव॥ यद्भद्रन्तन्नऽआसुव ॥$\frac{३}{३०}$॥ ॐद्यौःशान्तिरन्तरिक्षᳬशान्तिःपृथिवीशान्तिरापःशान्तिरोषधयःशान्तिः॥ वनस्पतयःशान्तिर्विश्वेदेवाःशान्तिर्ब्रह्मशान्तिःसर्वᳬशान्तिःशान्तिरेवशान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॥$\frac{३६}{१७}$॥ ॐसर्वेषां वाएषवेदानाᳬरसोयत्सामसर्वेषामेवैनमेतद्वेदानाᳬ रसेनाभिषिञ्चति ॥

ॐशान्तिः शान्तिः शान्तिः। सुशान्तिर्भवतु। सर्वारिष्टशान्तिर्भवतु ॥ अनेन पूजनपूर्वकरुद्राभिषेककर्मणा कृतेन श्रीभवानीशङ्करमहारुद्रः प्रीयतां न मम ॥ ॐसदाशिवार्पणमस्तु ॥

॥ इति रुद्राभिषेकप्रयोगः ॥

॥ २२ ॥ अथ मध्याह्नसन्ध्याप्रयोगः ॥

कर्ता मध्याह्नस्नानं यथावत्कृत्वा धौते वाससी परिधाय दर्भासने प्राङ्मुख उदङ्मुखो वा उपविश्य ततः क्रमेण पवित्रधारणम् आचमनं प्राणायामं गन्धमिश्रितभस्मधारणं शिखाबन्धनं रुद्राक्षमालाधारणं पवित्रकरणञ्च प्रातःसन्ध्यावत्कुर्यात् ॥ अथ सङ्कल्पः–विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य० शुभपुण्यतिथौ ममोपात्तदुरितक्षयपूर्वकब्रह्मवर्चसकामार्थं श्रीपरमेश्वरप्रीतये मध्याह्नसन्ध्योपासनमहं करिष्ये ॥ इति सङ्कल्प्य भूमिप्रार्थनां भूतशुद्धिम् अभिषेचनं व्याहृतिपूर्वकगायत्रीकरन्यासान् व्याहृतिपूर्वकगायत्रीषडङ्गन्यासान् प्रणवन्यासान् गायत्र्यक्षरन्यासान् शिरोन्यासांश्च क्रमेण प्रातःसन्ध्यावद्विधाय ततः सावित्र्या[3]वाहनम्–सावित्रीं युवतीं शुक्लां शुक्लवस्त्रां त्रिलोचनाम् । यजुर्वेदकृतोत्सङ्गां वृषारूढां त्रिशूलिनीम् ॥ रुद्राणीं रुद्रदैवत्यां रुद्रलोकनिवासिनीम् । अवाहयाम्यहं देवीमायान्तीं सूर्यमण्डलात् ॥ आगच्छ वरदे देवि त्र्यक्षरे रुद्रवादिनि । सावित्रि छन्दसां माता रुद्रयोने नमोऽस्तु ते ॥ ततः प्रातःसन्ध्यावत्प्राणायामं कृत्वा अम्बुप्राशनम्—आपः पुनन्त्विति मन्त्रस्य नारायण ऋषिः आपो देवता गायत्री छन्दः अम्बुप्राशने विनियोगः ॥ ॐ आपः पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातु माम् । पुनन्तु ब्रह्मणस्पतिर्ब्रह्मपू-

---

[1] आ दर्भदामकादागम्यं सन्ध्या माध्याह्निकीष्यते ॥ इति धर्मसिन्धुवचनाद् द्वादशघटीदिनोपरि मध्याह्नसन्ध्या विहिता ॥

[2] चतुर्थे च दिवाभागे स्नानार्थं मृदमाहरेत् । तिलपुष्पकुशादीनि आदायाहृत्य शिवे जले ॥

[3] गायत्री नाम पूर्वाह्णे सावित्री मध्यमे दिने । सरस्वती च सायाह्ने एवं सन्ध्या त्रिधा स्मृता । सावित्र्याः ध्यानावाहनम् ॥

तापुंनातुमाम् । यदुच्छिष्टमभोज्यंचयद्वादुश्चरितंमम । सर्वंपुनन्तुमामापोऽसतांचप्रतिग्रहःस्वाहा ॥ इति मन्त्रेण जलं प्राश्य तूष्णीं द्विराचामेत् ॥ ततो मार्जनम् । अपोऽञ्जलावादानं जलप्रक्षेपणम् । अपो वामहस्ते गृहीत्वा न्युब्जेन दक्षिणहस्तेनाच्छादनम् अघमर्षणं च प्रातःसन्ध्यावत्कृत्वा गायत्रीमन्त्रेण आकृष्णेनेति मन्त्रेण वा प्रातःसन्ध्योक्तविधिना सूर्याभिमुखस्तिष्ठन् "रुद्रस्वरूपिणे सूर्यनारायणाय नमः इदमर्घ्यं दत्तं न मम" इति वदन्गन्धाक्षतपुष्पयुक्तम् एकमर्घ्यं दद्यात् ॥ दत्ताघ्योंदकेन दक्षिणनासाचक्षुःश्रोत्रस्पर्शनं कुर्यात् ॥ ततो दक्षिणहस्ते जलं गृहीत्वा-"ॐअसावादित्यो ब्रह्म"-अनेन मन्त्रेण आत्मनः समन्तात्प्रदक्षिणवदुदकं क्षिपेत् ॥ ततः सूर्योपस्थानं गायत्र्यावाहनं गायत्र्युपस्थानं गायत्रीजपविनियोगं गायत्रीध्यानं ब्रह्मशापविमोचनं वसिष्ठशापविमोचनं विश्वामित्रशापविमोचनं गायत्र्यस्त्रोपाहरणं जपादौ मुद्राप्रदर्शनं च प्रातःसंध्यावत्कुर्यात् ॥ ततो वस्त्राच्छादितां जपमालां हृदयदेशे धृत्वा गायत्रीमन्त्रजपार्थे विनियोगं कृत्वा प्रातःसन्ध्योक्तविधिना गायत्रीजपः कार्यः ॥ ततः षडङ्गन्यासं मुद्राप्रदर्शनं सूर्यप्रदक्षिणां सूर्यादिदेवानां नमस्कारान् जपनिवेदनं च प्रातःसन्ध्यावत् कुर्यात् । जपार्पणम्-अनेन मध्याह्नसन्ध्याङ्गभूतेन अमुकसंख्याकेन[3] गायत्रीमन्त्रजपाख्येन कर्मणा श्रीभगवान्रुद्रस्वरूपी

---

१ मुक्तहस्तेन दातव्यं मुद्रा तत्र न कारयेत् । तर्जन्यङ्गुष्ठयोगे तु राक्षसी मुद्रिका स्मृता ॥ राक्षसी मुद्रिकार्घ्ये चेत्तत्तोयं रुधिरं भवेत् । जलेष्वर्घ्यं प्रदातव्यं जलाभावे शुचिस्थले । संप्रोक्ष्य वारिणा सम्यक्ततोऽर्घ्यं तु प्रदापयेत् ॥ २ वृथामन्त्रजपश्चैव स्नानं भोजनमेव च । तथा वै तीर्थयात्रा न मुद्राहीना वृथा भवेत् ॥ यज्ञश्च निष्फलस्तेषां होमो देवार्चनं तथा । तस्मान्मुद्रा सदा ज्ञेया विद्वद्भिर्यत्नमास्थितैः ॥ ३ कुलार्णवे-नाक्षतैर्हस्तपर्वैर्वा न धान्यैर्न च पुष्पकैः । चन्दनैर्मृत्तिकाभिश्च जपसंख्या न कारयेत् ॥ लाक्षा कुशं च सिन्दूरं गोमयं च करीषकम् । विलोड्य गुटिकाः कृत्वा जपसंख्यां तु कारयेत् ॥

सूर्यनारायणः प्रीयतां न मम ॥ ततः प्रार्थनां सन्ध्याविसर्जनं गोत्रप्रवरोच्चारणपूर्वकमभिवादनम् ईश्वरस्तुतिं च प्रातःसन्ध्यावत्कृत्वा अर्पणम्—अनेन मध्याह्नसन्ध्योपासनाख्येन कर्मणा भगवान्रुद्रस्वरूपी परमेश्वरः प्रीयतां न मम ॥ ततो द्विराचमनम्—ॐकेशवाय नमः स्वाहा। ॐनारायणाय नमः स्वाहा। ॐमाधवाय नमः स्वाहा ॥ हस्तप्रक्षालनम्‌ ॐगोविन्दाय नमः॥ ॐविष्णवे नमः। ॐविष्णवे नमः। ॐविष्णवे नमः॥

॥इति मध्याह्नसन्ध्याप्रयोगः॥

॥ २३ ॥ अथ सूर्योपस्थानप्रयोगः ॥

आचम्य प्राणानायम्य ॥ सङ्कल्पः—अद्य पूर्वोच्चारितवर्तमाने० एवं गुणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं श्रीसवितृसूर्यनारायणप्रीत्यर्थं सूर्योपस्थानमहं करिष्ये ॥ कुशपवित्रधारणम्—ॐपवित्रेस्थो० ॥ इति मन्त्रेण दक्षिणवामहस्तयोरनामिकयोः कुशपवित्रे धार्ये ॥ सूर्यपूजनम्—ॐउदुत्यञ्जातवेदसं० ॥ इति मन्त्रेण सूर्यं गन्धाक्षतपुष्पैः सम्पूज्य दक्षिणवामपाण्योर्द्वौ द्वौ साग्रदर्भौ गन्धाक्षतश्वेतपुष्पतुलसीदलसहितौ धृत्वा सूर्यमुदीक्षन् ॐउद्वयन्तमसु० ॥ ॐउदुत्यञ्जा० ॥ ॐचित्रन्देवाना० ॥ ॐतच्चक्षुर्दे० ॥ ॐतत्सवितु० ॥ ॐविभ्राड्० इत्यनुवाक् ॥ १७ ॥ ॐसहस्रशीर्षा० साद्ध्याऽसन्तिदेवाः ॥ १६ ॥ ॐयज्जाग्रतो० इत्यारभ्य सुषारथिरश्वां० इत्यन्तम् ॥ ६ ॥ एतदध्यायानन्तरं मण्डलब्राह्मणं जपेत् ॥

१ एते मन्त्रा द्वाध्याय्यां द्रष्टव्याः ॥

मण्डलब्राह्मणम्—ॐ यदेतन्मण्डलंतपति तन्महदुक्थन्ताऽऋचः
सऽऋचाँलोकोऽथयदेतदर्चिर्दीप्यतेतन्महाव्रतंतानिसामानिससाम्नाँल्लोकोऽथ-
यऽएषऽएतस्मिन्मण्डलेपुरुषःसोऽग्निस्तानियजूँषिसयजुषाँल्लोकः ॥१॥
सैषात्रय्येवविद्यातपतितद्धैतदप्यविद्वाँसऽआहुस्त्रयीवाऽएषाविद्यातप-
तीतिवाग्घैवतत्पश्यन्तीवदति ॥२॥ सऽएषऽएवमृत्युर्यऽएषऽएतस्मिन्म-
ण्डलेपुरुषोऽथैतदमृतं यदेतदर्चिर्दीप्यतेतस्मान्मृत्युर्नम्रियतेऽमृतेह्यन्तस्तस्मा-
दुनदृश्यतेऽमृतेह्यन्तः ॥३॥ 'तदेष श्लोको भवति'—अन्तरंमृत्योरमृत-
मित्यवरँह्येतन्मृत्योरमृतम्मृत्यावमृतमाहितमित्येतस्मिन्हिपुरुषऽएत-
न्मण्डलम्प्रतिष्ठितंतपतिमृत्युर्विवस्वन्तंवस्तऽइत्यसौवाऽआदित्योविव-
स्वानेषह्यहोरात्रेविवस्त्येतमेषवस्तेसर्वतोह्येनेनपरिवृतोमृत्योरात्माविवस्व-
तीत्येतस्मिन्हिमण्डलऽएतस्य पुरुषस्यात्मैतदेषश्लोकोभवति ॥ ४ ॥
तयोर्वाऽएतयोरुभयोरेतस्यचार्चिषऽएतस्यचपुरुषस्यैतन्मण्डलंप्रतिष्ठात-
स्मान्महदुक्थम्परस्मैनशँसेन्नेदेतांप्रतिष्ठांछिनदाऽइत्येताँहसप्रतिष्ठां-
छिन्तेयोमहदुक्थंपरस्मैशँसतितस्मादुक्थशासम्भूयिष्ठंपरिचक्षतेप्रतिष्ठा-
छिन्नोहिभवतीत्यधिदैवतम् ॥५॥ 'अथाधियज्ञम्'—यदेतन्मण्डलं तप-
त्ययँसरुक्मोऽथयदेतदर्चिर्दीप्यतऽइदंतत्पुष्करपर्णमापोह्येताऽआपः पु-
ष्करपर्णमथयऽएषऽएतस्मिन्मण्डलेपुरुषोऽयमेवसयोऽयँहिरण्मयः पुरुष-
स्तदेतदेवंत्रयँसंस्कृत्येहोपधत्तेतद्यज्ञस्यैवानुसँस्थामूर्ध्वमुत्क्रामतित-
देतमप्येतिसऽएषतपतितस्मादग्निर्म्रियेतपरिहन्तुमपुनर्ह्येष तदाभवती-
त्युऽएवाधियज्ञम् ॥६॥ 'अथाध्यात्मम्'—यदेतन्मण्डलंतपतियश्चैषरु-
क्मऽइदंतच्छुक्लमक्षन्नथयदेतदर्चिर्दीप्यतेयच्चैतत्पुष्करपर्णमिदंतत्कृष्णम-
क्षन्नथयऽएषऽएतस्मिन्मण्डलेपुरुषोयश्चैषहिरण्मयः पुरुषोऽयमेवसयोऽयंद-

क्षिणेऽक्षन्पुरुषः ॥ ७ ॥ स ऽएष ऽएव लोकम्पृणा तामेष सर्वोऽग्निरभिसम्पद्य·
तेतस्यैतन्मिथुनं योऽयं सव्येऽक्षन्पुरुषोऽर्द्धं हैतदात्मनो यन्मिथुनं यदा वै सह·
मिथुनेनाथ सर्वोऽथ कृत्स्नः कृत्स्नतायै तद्यच्चेद्वे भवतो द्वन्द्वं हि मिथुनं प्रजन·
नं तस्माद्द्वे लोकम्पृणे ऽउपधीयेते तस्माद्द्वाभ्यां द्वाभ्यां चितिं प्रणयन्ति ।८।
स ऽएष ऽएवेन्द्रः । योऽयं दक्षिणेऽक्षन्पुरुषोऽथेयमिन्द्राणी ताभ्यां देवा ऽएतां·
विधृतिमकुर्वन्नासिकान्तस्माज्जायाया ऽअन्ते नाश्नीयाद्वीर्यवान्हास्माज्जा·
यते वीर्यवन्तमु ह सा जनयति यस्या ऽअन्ते नाश्नाति ॥ ९ ॥ तदेतद्देवव्रतः
राजन्यबन्धवो मनुष्याणामनुतमां गोपायन्ति तस्मात्तेषु वीर्यवाञ्जायते म·
घवा श्रवसा ऽउ साक्षिमन्द्येनं जनयति ॥१०॥ तौ हृदयस्याकाशं प्रत्यव·
रुह्य मिथुनीभवतस्तौ यदा मिथुनस्यान्तं गच्छतोऽथ हैतत्पुरुषः स्वपिति तद्य·
थाहैवेदं मानुषस्य मिथुनस्यान्तं गत्वा संविद ऽइव भवत्येवं हैवैतत्संविद ऽ
इव भवति दैवं ह्येतन्मिथुनं परमो हि स ऽआनन्दः ॥११॥ तस्मादेवंवित्स्व·
प्यात् ॥ लोक्यं हैते ऽएतं देवते मिथुनेन प्रियेण धाम्ना समर्द्धयति तस्माद्·
स्वपन्तं धुरेव न बोधयेन्नेदेते देवते मिथुनीभवन्त्यौ हिनसानीति तस्माद्धैत·
त्सुषुपुषः श्लेष्मणमिव मुखं भवत्येते ऽएव तद्देवते रेतः सिञ्चतस्तस्माद्रेतस·
इदं सर्वं सम्भवति यदिदं किञ्च ॥ १२ ॥ स ऽएष ऽएव मृत्युः । स ऽएष ऽएतस्मि·
न्मण्डले पुरुषो यश्चायं दक्षिणेऽक्षन्पुरुषस्तस्य हैतस्य हृदये पादावतिहितौ तौ·
यदाच्छिद्योत्क्रामति स यदोत्क्रामत्यथ हैतत्पुरुषो म्रियते तस्मादु हैतस्यैनमा·
हुराच्छेद्यस्येति ॥ १३ ॥ एष ऽउ एव प्राण एष ह्येमाः सर्वाः प्रजाः प्रण·
यति तस्यैते प्राणाः स्वाः स यदा स्वपित्यथैनमेते प्राणाः स्वा ऽअपियन्ति त·
स्मात्स्वाप्यः स्वाप्यो ह वै तं स्वप्य ऽइत्याचक्षते परोक्षं परोक्षकामा हि·
देवाः ॥ १४ ॥ स ऽएवैष मनो न कश्यप न वेदन्न मनसा स स्तम्बयजिना।

चान्नस्य रसं विजानाति न प्राणेन गन्धं विजानाति न चक्षुषा पश्यति न श्रोत्रेण-
शृणोत्येतं ह्येते तदापीता भवन्ति स ऽएष ऽएकः सन्प्रजासु बहुधा व्यावि-
ष्टस्तस्मादेकाः सतीर्लोकम्पृणा सर्वमाग्निमनुविभवत्यथ यदेकऽएव तस्मादे-
का ॥१५॥ तदाहुः एको मृत्युर्बहव ऽइत्येकश्च बहवश्चेति ह ब्रूयाद्यदहासा-
वमुत्र तेनैकोऽथ यदिह प्रजासु बहुधा व्याविष्टस्तेनो बहवः ॥१६॥ तदाहुः ऽ
अन्तिके मृत्युर्दूराऽइत्यन्तिके च दूरे चेति ह ब्रूयाद्यदिहाध्यात्मन्तेना-
न्तिकेऽथ यदसावमुत्र तेनो दूरे ॥ १७ ॥ तदेष श्लोको भवति । अन्ये मात्य-
पश्रितो रुसानाꣳ संसरे मृत ऽइति यदेतन्मण्डलं तपति तदन्नमथ य ऽएष ऽएत
स्मिन्मण्डले पुरुषः सोत्ता स ऽएतस्मिन्नन्ने पश्रितो भातीत्यधिदेवतम् ॥१८॥
'अथाध्यात्मम्'—इदमेव शरीरमन्नमथ योऽयन्दक्षिणेऽक्षन्पुरुषः सोत्ता स ऽ
एतस्मिन्नन्ने पश्रितो भाति ॥१९॥ तमेतमग्निरित्यध्वर्यव ऽउपासते ॥ यजु-
रित्येष हीदꣳ सर्वं युनक्ति सामेति छन्दोगा ऽएतस्मिन्हीदꣳ सर्वꣳ समानमुक्थ-
मिति बह्वृचा ऽएष हीदꣳ सर्वमुत्थापयतीति यातुरिति यातुविद ऽएतेन हीदꣳ स-
र्वं यतं विषमिति सर्पाः सर्प ऽइति सर्पविद ऽऊर्गिति देवा रयिरिति मनुष्या-
मायेत्यसुराः स्वधेति पितरो देवजन ऽइति देवजनविदो रूपमिति गन्धर्वा ग-
न्ध ऽइत्यप्सरसस्तं यथा यथोपासते तदेव भवति तद्धैनान्भूत्वावति तस्मादेन-
मेवंवित्सर्वैरेतैरुपासीत सर्वꣳ हैतद्भवति सर्वꣳ हैनमेतद्भूत्वाऽवति ॥२०॥
स ऽएष त्रीष्टकोऽग्निर्ऋगेका यजुरेका सामैका तद्यामत्राङ्चं चोपदधाति रु-
क्म ऽएव तस्या ऽआयतनमथ यां यजुषा पुरुष ऽएव तस्या ऽआयतनमथ याꣳ
साम्ना पुष्करपर्णमेव तस्या ऽआयतनमेवं त्रीष्टकः ॥२१॥ वेदा ऽएते ऽउभ ऽ
एष च रुक्म ऽएतच्च पुष्करपर्णमेतं पुरुषमुपीत ऽउभे ह्यृक्सामे यजुरपीत ऽएव-
मन्येषोऽष्टकः ॥२२॥ स ऽएष ऽएव मृत्युः य ऽएष ऽएतस्मिन्मण्डले पुरुषो यश्चा-

यंदक्षिणेक्षन्पुरुषःसऽएषऽएवंविदऽआत्माभवति सयदेवंविदस्माँल्लोका-त्प्रैत्यथैतमेवात्मानमभिसम्भवतिसोमृतोभवतिमृत्युर्ह्यस्यात्माभवति ।२३ तेनवाऽइदमग्रेसदासीन्नैवसदासीत् ॥ एतैर्मन्त्रैरुपस्थाय पाण्योर्गृहीतकुशादीन्कुशपवित्रे च पूर्वस्यां दिशि त्यक्त्वा सूर्यं प्रदक्षिणीकृत्य नमस्कृत्य उपविश्य अर्पणम्—अनेन यथाशक्त्या कृतेन सूर्योपस्थानकर्मणा श्रीभगवान् सूर्यनारायणः प्रीयतां न मम । ॐतत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु॥

॥ इति सूर्योपस्थानप्रयोगः ॥

॥ २४ ॥ अथ ब्रह्मयज्ञप्रयोगः ॥

दर्भासनोपरि प्राङ्मुख उपविश्य आचम्य प्राणानायम्य कुशपवित्रधारणम्—ॐपवित्रेस्थो० ॥ अनेन मन्त्रेण दक्षिणवामहस्तयोरनामिकयोः कुशपवित्रे धृत्वा सङ्कल्पः—अद्यपूर्वोच्चारित० एवंगुणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं ॐतत्सत् श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं यथाशक्ति ब्रह्मयज्ञेनाहं यक्ष्ये ॥ अयातो ब्रह्मयज्ञं व्याख्यास्यामः ॥ पुनः सङ्कल्पः—इषेत्वादिषु मन्त्रेषु खंब्र-

१ कात्यायनपरिशिष्टसूत्रे-चित्रमित्यनुवाकपुरुषसूक्तशिवसङ्कल्पमण्डलब्राह्मणैरित्युपस्थाय प्रदक्षिणीकृत्य नमस्कृत्योपविशेद्दर्भेषु दर्भपाणिः स्वाध्यायं च यथाशक्त्यादावारभ्य वेदम् ॥ याज्ञवल्क्यः-प्रदक्षिणं समावृत्य आसने उपविश्य च । दर्भेषु दर्भपाणिः सन्प्राङ्मुखस्तु कृताञ्जलिः । स्वाध्यायं तु यथाशक्ति ब्रह्मयज्ञार्थमाचरेत् ॥ वेदच्छन्दोऽथर्ववेदेष्वपुराणार्थः-वेदाथर्वपुराणानि सेतिहासानि शक्तितः । जपयज्ञप्रसिद्ध्यर्थं विद्यां चाध्यात्मिकीं जपेत् ॥ एष श्रुतिमतः प्रोक्तो ब्रह्मयज्ञस्तु स स्मृतः । स चार्वाक्तर्पणात्कार्यः पश्चाद्वा प्रातराहुतेः ॥

क्षान्तेषु दशप्रणवसहितेषु याः क्रियास्तत्र विवस्वानृषिः प्रजापतिर्देवता सर्वाणि छन्दांꣳसि सर्वाणि सामानि प्रतिलिङ्गोक्ता देवता ब्रह्मयज्ञे विनियोगः ॥ न्यासाः—ॐगौतमभरद्वाजाभ्यां नमः नेत्रयोः ॥ ॐविश्वामित्रजमदग्निभ्यां नमः श्रोत्रयोः ॥ ॐवसिष्ठकश्यपाभ्यां नमः नासिकयोः ॥ ॐअत्रये नमः वाचि ॥ ॐगायत्र्यग्निभ्यां नमः शिरसि ॥ ॐउष्णिक्सवितृभ्यां नमः ग्रीवायाम् ॥ ॐबृहतीबृहस्पतिभ्यां नमः अनूके ॥ ॐबृहद्रथन्तरद्यावापृथिवीभ्यां नमः बाह्वोः ॥ ॐत्रिष्टु-विन्द्राभ्यां नमः नाभौ ॥ ॐजगत्यादित्याभ्यां नमः श्रोण्योः ॥ ॐअतिच्छन्दाप्रजापतिभ्यां नमः लिङ्गे ॥ ॐयज्ञायज्ञियवैश्वानराभ्यां नमः गुदे ॥ ॐअनुष्टुब्विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः ऊर्वोः । ॐपङ्क्तिमरु-द्भ्यो नमः जान्वोः । ॐद्विपदाविष्णुभ्यां नमः पादयोः ॥ ॐविच्छ-न्दावायुभ्यां नमः नासापुटस्थप्राणेषु ॥ ॐन्यूनाक्षराछन्दोभ्यो नमः सर्वाङ्गेषु ॥ ततो वामहस्ततले दर्भजलयवाक्षतचन्दनादीन्निक्षिप्त्वा तदुपरि दक्षिणहस्तमधोमुखं कृत्वा दक्षिणजानूपरि निधाय वक्ष्यमाण-

---

१ इषेत्वादिषु मंत्रेषु खंत्रक्षान्तेषु याः क्रियाः । दशप्रणवसंयुक्ता भूर्भुव स्वरितीरिताः ॥ तत्प्रकारो द्वेधा । आदौ प्रणवमुच्चार्य व्याहृतिः प्रणवान्विता ॥ मंत्रादौ प्रणवः कार्यो मंत्रान्ते प्रणवः पुनः ॥ ततो व्याहृतिसंयुक्तस्त्वन्ते च प्रणवं पठेत् ॥ द्वितीयः प्रकारः—आदौ प्रणवमुच्चार्य सप्तव्याहृतयस्ततः । मंत्रादौ प्रणवः कार्यो मंत्रान्ते प्रणवः पुनः ॥ २ अनूकः पृष्ठवंशः । ३ एवमेव सर्वाङ्गानि योजयित्वा वेदमयः सम्पद्यते शापानुग्रहसमर्थो भवति ब्राह्मं तेजश्च वर्धते न कुतश्चिद्भयं विन्दत ऋङ्मयो यजुर्मयः साममयस्तेजोमयो ब्रह्ममयोऽमृतमयः संभूय ब्रह्मैवाभ्येति तस्मादेतन्नाब्रह्मचारिणे नातपस्विने नासंवत्सरोषिताय नाप्रवक्त्रेऽनुब्रूयादनेनाधीतेन चान्द्रायणाब्दफलमवाप्नोत्यनेन च सम्यग्ज्ञातेन ब्राह्मणः सायुज्यं सलोकतामाप्नोत्याप्नोति ॥ सर्वानुक्रम० अ० ४।१२॥

मन्त्रान्पठेत्—ॐ भूर्भुवः स्वः—ॐ तत्सवितुः० ॥ ॐ इषे त्वोर्ज्जे त्वा वायव-
स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्म्मणऽ आप्याय-
ध्वमघ्न्याऽ इन्द्राय भागम्प्रजावतीरनमीवाऽअयक्ष्मा मा वस्तेनऽ
ईशत माघशꣳसो ध्रुवाऽअस्मिन्गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य
पशून्पाहि ॥ १ ॥ ॐ वसोः पवित्रम् ॥ २ ॥ ॐ हिरण्मयेन पात्रेण
सत्यस्यापिहितम्मुखम् ॥ योऽसावादित्ये पुरुषः सोऽसावहम् ॥ १७/४० ॥
ॐ खम्ब्रह्म ॥ १७/४० ॥ ॐ व्रतमुपैष्यन्नन्तरेणाहवनीयं च गार्हपत्यञ्चा-
प्राङ् तिष्ठन्नपऽउपस्पृशति तद्यदपऽउपस्पृशत्यमेध्यो वै पुरुषो यदनृतं वदति ते-
न पूतिरन्तरतो मेध्या वाऽआपो मेध्यो भूत्वा व्रतमुपायानीति पवित्रं वाऽआपः
पवित्रपूतो व्रतमुपायानीति तस्माद्वाऽअपऽउपस्पृशति ॥ १ ॥ सोऽग्निमेवा-
भीक्षमाणो व्रतमुपैति ॥ ॐ प्राश्नीपुत्रादासुरिवासिनः प्राश्नीपुत्रऽआसुराय-
णादासुरायणऽआसुरेरासुरिर्याज्ञवल्क्याद्याज्ञवल्क्यऽउद्दालकादुद्दालको-
ऽरुणादरुणऽउपवेशेरुपवेशिः कुश्रेः कुश्रिर्वाजश्रवसो वाजश्रवा जिह्वावतो
बाध्योगाज्जिह्वावान्बाध्योगोऽसिताद्वार्षगणादसितो वार्षगणो हरितात्कश्य-
पाद्धरितः कश्यपः शिल्पात्कश्यपाच्छिल्पः कश्यपः कश्यपान्नैध्रुवेः कश्य-
पो नैध्रुविर्वाचो वागम्भिण्याऽ अम्भिण्यादित्यादादित्यानीमानि शुक्लानि य-
जूꣳषि वाजसनेयेन याज्ञवल्क्येनाख्यायन्ते । ॐ अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य-
२३ १ २ ३ १ २३१
देवमृत्विजम् । होतारं रत्नधातमम् ॥ ॐ अग्नऽआयाहि वीतये गृणानो हव्य-

---

१ शतपथब्राह्मणे प्रथमकाण्डस्य प्रथमाध्यायस्य प्रथमब्राह्मणस्य प्रथमा कण्डिका ॥
२ शतपथ० काण्ड १ अ० १ ब्रा० कण्डिका २ आदिभाग ॥ ३ शतपथ० का० १४
अ० ७ ब्रा० ५ क० ११ ॥ ४ ऋग्वेदस्य दिमो मन्त्रः ॥ ५ सामवेदस्यादिमो मन्त्रः ॥

१ १ २ १ २ १ २

दातये ॥ निहोतासात्सिबर्हिषि ॥ ॐशंन्नोदेवीरभिष्टयऽआपोभवन्तु-पीतये ॥ शंयोरभिस्रवन्तुनः ॥ ॐअथानुवाकान्[2]व्याख्यास्यामि ॥ ॐमण्डलं[3]-दक्षिणमक्षिहृदयम् ॥ अथ शिक्षां[4] प्रवक्ष्यामि ॥ अथातोऽधिकारः फलयु-[5]क्तानि कर्माणि ॥ अथातो [6]गृह्यस्थालीपाकानां कर्म ॥ वृद्धिरादैच्[7] । समाम्नायः [8]समाम्नातः । मयरसतजभनलगसंमितम्[9] । पञ्चसंवत्सरमयं[10] युगाध्यक्षम् । गौः ग्मा[11] । अथातो धर्मजिज्ञासा[12] । अथातो ब्रह्म[13]जिज्ञासा । योगीश्वरं याज्ञवल्क्यम्[14] । नारायणं नमस्कृत्य[15] । इति विद्यातपोयोनिर-योनिर्विष्णुरीडितः । वाग्यज्ञेनार्चितो देवः प्रीयतां मे जनार्दनः ॥ एवं ब्रह्मयज्ञं विधाय पाण्योर्गृहीतकुशादीन् उत्तरस्यां दिशि त्यजेत् ॥ अर्पण-म्—अनेन ब्रह्मयज्ञाख्येन कर्मणा श्रीभगवान्परमेश्वरः प्रीयतां न मम ॥ ॐतत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥ यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु । न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥ ॐविष्णवे नमो विष्णवे नमो विष्णवे नमः ॥ इति ब्रह्मयज्ञप्रयोगः ॥

---

१ अथर्वणवेदस्यादिमो मंत्रः ॥ २ अनुवाकसूत्रस्य प्रथमश्लोकस्यादिभागः ॥ ३ सर्वानुक्रमसूत्रस्य प्रथमकण्डिकाया आदिभागः ॥ ४ शिक्षायाः प्रथमश्लोकस्यादिभागः ॥ ५ कात्यायनश्रौतसूत्रस्य प्रथमाध्यायस्य प्रथमकण्डिकायाः आदिमे द्वे सूत्रे ॥ ६ पारस्करगृह्यसूत्रस्य प्रथमकाण्डस्य प्रथमकण्डिकायाः प्रथमसूत्रम् ॥ ७ अष्टाध्याय्याः प्रथमं सूत्रम् ॥ ८ निरुक्तस्य आदिखण्डः ॥ ९ छन्दसः प्रथमश्लोकस्यादिभागः ॥ १० ज्योतिषस्य प्रथमश्लोकपूर्वार्धम् ॥ ११ निघण्टोरारम्भशब्दाः ॥ १२ पूर्वमीमांसायाः प्रथमाध्यायस्य प्रथमसूत्रम् ॥ १३ उत्तरमीमांसायाः प्रथमाध्यायस्य प्रथमपादस्य प्रथमसूत्रम् ॥ १४ याज्ञवल्क्यस्मृतेः प्रथमाध्यायस्य प्रथमश्लोकस्य आदिभागः ॥ १५ महाभारतस्य प्रथमश्लोकस्य [illegible] ॥

जागृतोऽस्वप्नजौसत्रसदौचदेवौ ॥ ५५/३४ ॥ ॐसनकस्तृप्यतु २ । ॐस-
नन्दनस्तृप्यतु २ । ॐसनातनस्तृप्यतु २ । ॐकापिलस्तृप्यतु २ । ॐआ-
सुरिस्तृप्यतु २ । ॐवोढुस्तृप्यतु २ । ॐपञ्चशिखस्तृप्यतु २ ॥ पितृतर्प
णम्-तानेव दर्भान्दक्षिणाग्रमूलान्द्विगुणीकृत्य तेषां मध्यं वामहस्त-
स्याङ्गुष्ठतर्जन्यन्तरे धृत्वा मूलाग्राणि दक्षिणहस्तस्याङ्गुष्ठतर्जनीमध्यम-
देशे कृत्वाऽपसव्येन दक्षिणामुखं कृष्णतिलमिश्रितजलेन पितृतीर्थे-
न त्रींस्त्रीनञ्जलीन्दद्यात् । ॐकव्यवाडनलस्तृप्यताम् ३ । ॐसोमस्तृ
प्यताम् ३ । ॐयमस्तृप्यताम् ३ । ॐअर्यमा तृप्यताम् ३ । ॐअग्नि-
ष्वात्ताः पितरस्तृप्यन्ताम् ३ । ॐसोमपाः पितरस्तृप्यन्ताम् ३ । ॐब-
र्हिषदः पितरस्तृप्यन्ताम् ३ । यमतर्पणम्—ॐयमाय नमः ३ । ॐधर्म-
राजाय नमः ३ । ॐमृत्यवे नमः ३ । ॐअन्तकाय नमः ३ । ॐवैव-
स्वताय नमः ३ । ॐकालाय नमः ३ । ॐसर्वभूतक्षयाय नमः ३ ।
ॐऔदुम्बराय नमः ३ । ॐदध्नाय नमः ३ । ॐनीलाय नमः ३ ।
ॐपरमेष्ठिने नमः ३ । ॐवृकोदराय नमः ३ । ॐचित्राय नमः ३ ।
ॐचित्रगुप्ताय नमः ३ । अथ मनुष्यपितृतर्पणम् ॥ आवाहनम्-उश-
न्तस्त्वेत्यस्य प्रजापत्यऋषिसरस्वत्य ऋषयः गायत्री छन्दः पितरो
देवता आवाहने विनियोगः ॥ ॐउशन्तस्त्वानिधीमह्युशन्तः॒समिधी-
महि ॥ उशन्नुशतऽआवहपितॄन्हविषेऽअत्तवे ॥ १९/७० ॥ तिलान्गृहीत्वा
अमुकगोत्रान्ममपितृपितामहप्रपितामहान्मातृपितामहीप्रपितामहीः अमुक-
गोत्रान्मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहान्मातामहीप्रमातामहीवृद्धप्रमाता-
महीः तथा च पत्न्याद्याप्तान्तान्समस्तपितॄन्तर्पणे आवाहयिष्ये ॥ अमुक-

१ श्रीवसिष्ठादयो र्मैतावत्पर्यन्तं तर्पणं कुर्यात् ॥

गोत्रः अस्मत्पिता अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यताम् । इदं जलं तस्मै स्वधा नमः । इदं जलं तस्मै स्वधा नमः । इदं जलं तस्मै स्वधा नमः । अमुकगोत्रः अस्मत्पितामहः अमुकशर्मा रुद्ररूपस्तृप्यताम् । इदं जलं० ३ । अमुकगोत्रः अस्मत्प्रपितामहः अमुकशर्मा आदित्यरूपस्तृप्यताम् । इदं जलं तस्मै० ३ ॥ अमुकगोत्रा अस्मन्माता अमुकदा वसुरूपा तृप्यताम् । इदं जलं तस्यै० ३ । अमुकगोत्रा अस्मत्पितामही अमुकदा रुद्ररूपा तृप्यताम् । इदं० ३ । अमुकगोत्रा अस्मत्प्रपितामही अमुकदा आदित्यरूपा तृप्यताम् । इदं० ३ ॥ अमुकगोत्रा अस्मत्सापत्नमाता अमुकदा वसुरूपा तृप्यताम् । इदं जलं तस्यै स्वधा नमः ॥ प्रसेचनम् ॥ उदीरतामिति क्रमेण नवर्चः उपांशु आम्नायस्वरेण पठन् अञ्जलिकृतं जलं पितृतीर्थेन प्रसिंचेत्-उदीरतामङ्गिरसआयन्तुनइति त्रयाणां शङ्खऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः पितरो देवता ऊर्जंवहन्तीत्यस्य प्रजापतिर्ऋषिः गायत्री छन्दः पितृभ्योवेत्वेहइतिद्वयोः प्रजापत्यभिसरस्वस्य ऋषयः त्रिष्टुप् छन्दः त्रयाणां पितरो देवताः मधुवाताइतित्र्यृचस्य गौतम ऋषिः गायत्री छन्दः विश्वेदेवा देवताः सर्वेषां प्रसेके विनियोगः—ॐउदीरतामवरऽउत्परासऽ उन्मध्यमाः पितरः सोम्यासः ॥ असुंयऽईयुरवृकाऽऋतज्ञास्तेनोवन्तुपितरोहवेषु ॥ १ ॥ अङ्गिरसोनः पितरोनवग्वाऽअथर्वाणो भृगवः सोम्यासः ॥ तेषांवयःसुमतौयज्ञियानामपिभद्रेसौमनसे

१ तातम्बात्रितयं सपत्नजननी मातामहादित्रयं सस्त्रि स्त्रीतनयादितातजननीस्वभ्रातरःसस्त्रियः ॥ तातम्बात्मभगिन्यपत्यधवयुक् जायापिता सद्गुरुः शिष्याप्ताः पितरो महालयविधौ तीर्थे तथा तर्पणे ॥ २ ॥ अत्र क्षत्रियाणां वर्मा वैश्यानां गुप्तेइत्यूहः कार्यः ॥ ३ मातृमुख्यास्तु यास्तिस्रस्तासां त्रींस्त्रीञ्जलाञ्जलीन् । दद्यान्मातृत्रयीभिन्नस्त्रीभ्य एकाञ्जलिं तथा ।

स्योम ॥ ५०/१९ ॥ आयन्तुनः पितरः सोम्म्यासोऽग्निष्वात्ताः पथिभिर्देवयानैः ॥ अस्मिन्यज्ञे स्वधया मदन्तोधिब्रुवन्तु तेवन्त्वस्मान् ॥ ५८/१९ ॥ ऊर्ज्जंवहन्तीरमृतङ्घृतम्पयः कीलालम्परिस्रुतम् ॥ स्वधास्त्थ तर्प्पयत मे पितॄन् ॥ ३४/२ ॥ पितृब्भ्यः स्वधायिब्भ्यः स्वधा नमः पितामहेब्भ्यः स्वधायिब्भ्यः स्वधा नमः प्रपितामहेब्भ्यः स्वधायिब्भ्यः स्वधा नमः ॥ अक्षन्पितरोमीमदन्तपितरोतीतृपन्तपितरः पितरःशुन्धद्ध्वम् ॥ ३६/१९ ॥ ये चेह पितरो येचनेहयाँश्चविद्मयाँ२ऽउचनप्रविद्म ॥ त्वं वेत्थयतितेजातवेदः स्वधाभिर्यज्ञः सुकृतञ्जुषस्व ॥ ६७/१९ ॥ मधुव्वाताऽऋतायतेमधुक्षरन्ति सिन्धवः ॥ माद्ध्वीर्नःसन्त्वोषधीः ॥ २७/१३ ॥ मधु नक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवंरजः ॥ मधु द्यौरस्तुनः पिता ॥ २८/१३ ॥ मधुमान्नो वनस्पतिर्म्मधुमाँ२ऽअस्तु सूर्य्यः ॥ माद्ध्वीर्गावो भवन्तुनः ॥ २९/१३ ॥ ॐतृप्यध्वं तृप्यध्वं तृप्यध्वम् ॥ इति प्रसेचनम् ॥ जपः—नमो व इति मंत्रस्य परमेष्ठी प्रजापतिर्ऋषिः यजुश्छन्दः पितरो देवता जपे विनियोगः ॥ नमोवःपितरोरसाय नमोवःपितरःशोषायनमोवःपितरोजीवायनमोवःपितरःस्वधायैनमो वःपितरो घोरायनमोवःपितरोमन्यवेनमोवःपितरःपितरोनमोवोगृहान्नःपितरोदत्तसतोवःपितरोदेष्मैतद्वःपितरोवासऽआधत्त ॥ ३२/२ ॥ अमुकगोत्रः अस्मन्मातामहः अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यतामिदं जलं तस्मै स्वधा नमः ३ । अमुकगोत्रः अस्मत्प्रमातामहः अमुकशर्मा रुद्ररूपस्तृप्यतामिदं जलं तस्मै० ३ । अमुकगोत्रः अस्मद्वृद्धप्रमातामहः अमुकशर्मा आदित्यरूपस्तृप्यतामिदं जलं तस्मै० ३ ॥ अमुकगोत्रा अस्मन्मातामही अमुकदा वसुरूपा तृप्यतामिदं जलं तस्यै स्वधा नमः३। अमुक-

गोत्रा अस्मत्प्रमातामही अमुकदा रुद्ररूपा तृप्यतामिदं जलं तस्यै स्वधा० ३। अमुकगोत्रा अस्मद्वृद्धप्रमातामही अमुकदा आदित्यरूपा तृप्यतामिदं जलं तस्यै स्वधा नमः ३॥ अमुकगोत्रा अस्मत्पत्नी अमुकदा वसुरूपा तृप्यतामिदं जलं तस्यै स्वधा० ३॥ अमुकगोत्रः अस्मत्सुतः अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यतामिदं जलं तस्मै स्वधा० ३। अमुकगोत्रा अस्मत्कन्या अमुकदा वसुरूपा तृप्यतामिदं जलं तस्यै स्वधा नमः ३। अमुकगोत्रः अस्मत्पितृव्यः अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यतामिदं जलं तस्मै स्वधा० ३। अमुकगोत्रः अस्मन्मातुलः अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यतामिदं जलं तस्मै स्वधा० ३। अमुकगोत्रः अस्मद्भ्राता अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यतामिदं जलं तस्मै स्वधा नमः ३। अमुकगोत्रा अस्मत्पितृभगिनी अमुकदा वसुरूपा तृप्यतामिदं जलं तस्यै स्वधा नमः ३। अमुकगोत्रा अस्मन्मातृभगिनी अमुकदा वसुरूपा तृप्यतामिदं जलं तस्यै स्वधा० ३। अमुकगोत्रा अस्मद्भगिनी अमुकदा वसुरूपा तृप्यतामिदं जलं तस्यै स्वधा० ३। अमुकगोत्रः अस्मच्छ्वशुरः अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यतामिदं जलं तस्मैस्वधा नमः ३। अमुकगोत्रः अस्मद्गुरुः अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यतामिदं जलं तस्मै स्वधा० ३। अमुकगोत्रः अस्मच्छिष्यः अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यतामिदं जलं तस्मै स्वधा नमः३। अमुकगोत्रः अस्मन्मित्रम् अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यतामिदं जलं तस्मै स्वधा०३। अमुकगोत्रः अस्मदाप्तः अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यतामिदं जलं तस्मै स्वधा०३। अञ्जलिदानम्—येऽबान्धवा बान्धवा

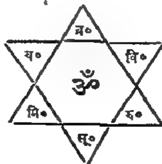
---

१ यदि तस्य भार्या सुतो वा मृतस्तर्हि सपत्नीकः ससुत इत्यूहः कार्यः। २ यदि तस्या भर्ता सुतो वा मृतस्तर्हि सभर्तृका ससुता इत्यूहः कार्यः॥

ये येऽन्यजन्मनि बान्धवाः । ते सर्वे तृप्तिमायान्तु मया दत्तेन वारिणा। आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तं देवर्षिपितृमानवाः । तृप्यन्तु पितरः सर्वे मातृमातामहादयः ॥ अतीतकुलकोटीनां सप्तद्वीपनिवासिनाम् । आब्रह्मभुवनाल्लोकादिदमस्तु तिलोदकम् ॥ इत्यञ्जलित्रयं दद्यात् । वस्त्रनिष्पीडनम्—ये के चास्मत्कुले जाता अपुत्रा गोत्रिणो मृताः । ते गृह्णन्तु मया दत्तं वस्त्रनिष्पीडनोदकम् ॥ इतिमन्त्रेण स्नानवस्त्रं चतुर्गुणं कृत्वा भूमौ वामभागे निष्पीडयेत् ॥ सव्येन द्विराचम्य पुनरपसव्यम् ॥ दर्भत्यागः—येषां पिता न च भ्राता न पुत्रो नान्यगोत्रिणः । ते सर्वे तृप्तिमायान्तु मयोत्सृष्टैः कुशैः सदा ॥ इति मन्त्रेण दर्भानुत्तरतः परित्यजेत् ॥ सव्येनाचम्य ॥ जले ब्रह्मादीनां पूजनम्—पात्रे शुद्धोदकं प्रपूर्य अनामिकया दर्भेण वा षड्दलं कृत्वा गन्धपुष्पैरर्चयेत् । ब्रह्मजज्ञानमित्यस्य प्रजापतिर्ऋषिः त्रिष्टुप छन्दः ब्रह्मा देवता ब्रह्मपूजने

१ वस्त्रनिष्पीडितं तोयं स्नातस्योच्छिष्टभागिन । भागधेयं श्रुतिः प्राह तस्मान्निष्पीडयेत् स्थले । यावद्देवानृषींश्चैव पितॄंश्चापि न तर्पयेत् । तावन्न पीडयेद्वस्त्रं येन स्नातो भवेन्नरः ॥ वस्त्रं चतुर्गुणीकृत्य पीडयेच्च जलाद्बहिः । वामप्रकोष्ठे निक्षिप्य द्विराचम्य शुचिर्भवेत् ॥ एकादश्यां पंचदश्यां संक्रमे श्राद्धवासरे । वस्त्रनिष्पीडनं तूष्णीं न मन्त्रेण कदाचन ॥

२ षड्दलाकृतिर्यथा—



विनियोगः ॥ ॐब्रह्मजज्ञानम्प्रथमम्पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचो वेनऽ
आवः ॥ सबुध्न्याऽउपमाऽअस्यविष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विवः
॥३/१३॥ ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणं पूजयामि ॥ इदंविष्णुरिति मेधातिथिर्ऋषिः
गायत्री छन्दः विष्णुर्देवता विष्णुपूजने विनियोगः ॥ ॐ इदं विष्णु-
र्विचक्रमेत्रेधानिदधेपदम् ॥ समूढमस्यपाँसुरे स्वाहा ॥१५/५॥ विष्णवे
नमः विष्णुं पूजयामि ॥ नमस्तइतिपरमेष्ठी ऋषिः गायत्री छन्दः रुद्रो
देवता रुद्रपूजने विनियोगः ॥ ॐनमस्तेरुद्रमन्यवऽउतोतऽइषवेनमः।
बाहुभ्यामुततेनमः ॥१/१६॥ रुद्राय नमः रुद्रं पूजयामि ॥ तत्सवितुरिति
विश्वामित्र ऋषिः गायत्री छन्दः सूर्यो देवता सूर्यपूजने विनियोगः ॥ॐ
तत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गोदेवस्य धीमहि ॥ धियो यो नः प्रचोदयात् ॥३५/३॥
सवित्रे नमः सवितारं पूजयामि ॥ मित्रस्येति विश्वामित्र ऋषिः गायत्री
छन्दः मित्रो देवता मित्रार्चने विनियोगः ॥ ॐमित्रस्य चर्षणीधृतोवो
देवस्य सानसि ॥ द्युम्नञ्चित्रश्रवस्तमम् ॥६२/११॥ मित्राय नमः मित्रं
पूजयामि । इमम्म इत्यस्य शुनःशेप ऋषिः गायत्री छन्दः वरुणो देवता
वरुणपूजने विनियोगः ॥ ॐइमम्मेवरुणश्रुधी हवमद्या च मृडय ॥
त्वामवस्युराचके ॥१/२१॥ वरुणाय नमः वरुणं पूजयामि ॥ सूर्योपस्थानम्-
अदृश्रमस्य केतव इति प्रस्कण्व ऋषिः गायत्री छन्दः सूर्यो देवता
हंसः शुचिषदिति वामदेव ऋषिः अतिजगती छन्दः सूर्यो देवता
सूर्योपस्थाने विनियोगः । उत्थाय ऊर्ध्वबाहुः सन्सूर्यमुपतिष्ठेत्-ॐअदृ-
श्रमस्य केतवोविरश्मयोजनाँ२ऽअनु ॥ भ्राजन्तोऽअग्नयो यथा ॥
उपयाम गृहीतोसिसूर्य्याय त्वाभ्राजायैषते योनिः सूर्य्यायत्वा

१ केचिदत्र अर्घ्यदानं कुर्वन्ति परं च प्राचीनग्रन्थेषु पूजनमेवास्ति ॥

भ्राजाय ॥ सूर्य्यैभ्राजिष्ठभ्राजिष्ठस्त्वन्देवेष्वसिभ्राजिष्ठोहम्मनुष्येषु भूयासम् ॥ ४/८ ॥ हꣳसः शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोणसत् ॥ नृषद्वरसदृतसद्व्योमसदब्जा गोजा ऽऋतजा ऽअद्रिजा ऽऋतम्बृहत् ॥ ४/१० ॥ सूर्यप्रदक्षिणा—स्वयम्भूरसीत्यस्य प्रजापतिर्ऋषिः यजुश्छन्दः सूर्यो देवता सूर्यप्रदक्षिणीकरणे विनियोगः ॥ ॐस्वयम्भूरसि श्रेष्ठो रश्मिर्वर्चोदा ऽअसि वर्चो मे देहि ॥ सूर्य्यस्यावृतमन्वावर्ते ॥ ३/५ ॥ इत्यनेन प्रदक्षिणामावृत्य दिशां देवतानां च नमस्काराः ॐप्राच्यै दिशे नमः । ॐइन्द्राय नमः॥ ॐआग्नेय्यै दिशे नमः । ॐअग्नये नमः ॥ ॐदक्षिणायै दिशे नमः । ॐयमाय नमः ॥ ॐनैर्ऋत्यै दिशे नमः । ॐनिर्ऋतयेनमः ॥ ॐप्रतीच्यै दिशे नमः । ॐवरुणाय नमः ॥ ॐवायव्यै दिशे नमः । ॐवायवे नमः ॥ ॐउदीच्यै दिशे नमः । ॐसोमाय नमः ॥ ॐऐशान्यै दिशे नमः । ॐईशानाय नमः ॥ ॐऊर्ध्वायै दिशे नमः ॥ ॐब्रह्मणे नमः ॥ ॐअवाच्यै दिशे नमः । ॐअनन्ताय नमः ॥ तत उपविश्य नमस्कारपूर्वकमञ्जलिदानम्—ॐब्रह्मणे नमः । ॐअग्नये नमः । ॐपृथिव्यै नमः। ॐओषधीभ्यो नमः। ॐवाचे नमः । ॐवाचस्पतये नमः । ॐविष्णवे नमः । ॐमहद्भ्यो नमः । ॐअद्भ्यो नमः ॥ ॐअपाम्पतये नमः । ॐवरुणाय नमः । इतिदेवतीर्थेनाञ्जलिदानपूर्वकं नमस्कारः ॥ मुखविमार्जनम्–संवर्चसेतिपरमेष्ठी ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः त्वष्टा देवता मुखविमार्जने विनियोगः ॥ ॐसंवर्चसा पयसा सन्तनूभिरगन्महि मनसा सꣳ शिवेन॥ त्वष्टा सुदत्रो विदधातु रायोऽनुमार्ष्टु तन्वो

---

१ केचित्तु केवलं नमस्कारानेव कुर्वन्ति परं च "योनिदाः ... " इत्यादि ... नमस्काराणां ... ॥

यद्विलिष्टम् ॥ $\frac{१४}{४}$ ॥ इति मन्त्रेण शुद्धोदकेन मुखं विमृजेत् ॥ विसर्जनम्-देवागातुविदइति मनस्पतिर्ऋषिः विराट् छन्दः वातो देवता कर्माङ्ग-देवताविसर्जने विनियोगः ॥ ॐदेवागातुविदोगातुं वित्त्वागातुमित ॥ मनसस्पतऽइमन्देवयज्ञꣳस्वाहा वातेधाः ॥ $\frac{११}{४}$ ॥ इति विसृज्य अर्पणम्-अनेन यथाशक्तिदेवऋषिमनुष्यपितृतर्पणाख्येन कर्मणा भगवान्मम समस्तपितृस्वरूपी जनार्दनवासुदेवः प्रीयतां न मम । ॐतत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु । श्रीगयागदाधरस्तृप्यतु । ॐविष्णवे नमः । ॐविष्णवे नमः । ॐविष्णवे नमः । इति तर्पणप्रयोगः ॥

॥ २६ ॥ अथ वैश्वदेवप्रयोगः ॥

आचम्य प्राणानायम्य । कुशपवित्रधारणम्-ॐपवित्रेस्थो० ॥ $\frac{११}{१}$ ॥ सङ्कल्पः-अद्य पूर्वोच्चरित० एवं गुणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ मम गृहे पञ्चसूनाजनितसकलदोषपरिहारपूर्वकं नित्यकर्मानुष्ठानसिद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं चतुर्भिरन्नैर्वैश्वदेवं करिष्ये । अन्वाधानम्-तत्र ब्रह्माणं प्रजापतिं गृह्याः कश्यपम् अनुमतिं विश्वान्देवान् अग्निं स्विष्टकृतं पर्जन्यम् अपः पृथिवीं धातारं विधातारं वायुं चतुर्वारं प्राचीं दिशं दक्षिणां दिशं प्रतीचीं दिशं उदीचीं दिशं ब्रह्माणम् अन्तरिक्षं सूर्यं विश्वान्देवान्विश्वानि भूतानि उषसं भूतानां च पतिं पितॄन्यक्ष्माणं सनकादिमनुष्यान्वैश्वदेवाख्ये कर्मण्यहं यक्ष्ये ॥ यथाविहिते ताम्रमये कुण्डे स्थंडिले वा पञ्चभूसंस्काराः-दर्भैः परिसमुह्य ३ । गोमयोदकेन उपलिप्य ३ । वज्रेणोल्लिख्य ३ । अनामिकाङ्गुष्ठेनो-

द्धृत्य ३। उदकेनाभ्युक्ष्य ३॥ अग्न्यानयनम्—ॐ अक्रन्दग्निरुपस्तापमग्ने-मकल्पयद्दहानि प्रथमो जातवेदाः ॥ अनु सूर्यस्य पुरुत्रा च रश्मीननु द्यावापृथिवीऽआ ततन्थ ॥ १२/१२॥ इत्यनेन पाकशालाया लौकिकमग्निमादाय ॥ स्थापनम्—ॐ पृष्टो दिवि पृष्टोऽअग्निः पृथिव्यां पृष्टो विश्वाऽ ओषधीराविवेश ॥ वैश्वानरः सहसा पृष्टोऽअग्निः स नो दिवा स रिषः स्पातु नक्तम् ॥ १८/७३॥ प्रज्वालनम्—ॐ तत्सवितुर्व० ॥ ३५/३ ॥ ॐ तां सवितुर्वरेण्यस्य चित्रामाहं वृणे सुमतिं विश्वजन्याम् ॥ यामस्य कण्वोऽअदुहत्प्रपीनां सहस्रधारां पयसा महीं गाम् ॥ १७/७४॥ ॐ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव ॥ यद्भद्रं तन्नऽआसुव ॥ ३०/३॥ एभिर्मन्त्रैः वेणुनालिकयाऽग्निं प्रज्वाल्य ॥ ध्यानम्—ॐ चत्वारि शृङ्गा त्रयोऽ अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासोऽ अस्य ॥ त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्यां२ऽ आविवेश ॥ १७/९१॥ आवाहनम्—ॐ एषो ह देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो ह जातः स उ गर्भेऽअन्तः ॥ स एव जातः स जनिष्यमाणः प्रत्यङ् जनास्तिष्ठति सर्वतोमुखः ॥ ३२/४ ॥ पावक-नामानमग्निम् आवाहयामि। पूजनम्—ॐ अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्याऽअयम् ॥ अपां रेतां सि जिन्वति ॥ ३/१२ ॥ पावकनामाग्नये नमः गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि। नमस्कारः—मुखं यः सर्वदेवानां हव्यभुक् कव्यभुक् तथा। पितॄणां च नमस्तस्मै विष्णवे पावकात्मने ॥ प्रार्थना-मंत्र अग्निदेव नमोस्तु ते ... ... उत्तानहस्ते ... भव ॥ इति सम्प्रार्थ्य ... पर्युक्षणम् ... ॥ ततः सिद्धपाकादंशमुद्धृत्य पूर्वे-नाभिघार्य ... दक्षिणजानुनिपातनं कृत्वा वामहस्तेन हृदयं स्पृशन् मध्य-

लयग्रस्थदेवतीर्थेन मज्वलितेऽग्नौ वदरीफलममाणा आहुतीर्जुहुयात्—ॐब्रह्मणे स्वाहा इदं ब्रह्मणे न मम। ॐप्रजापतये स्वाहा इदं मजापतये न मम। ॐगृह्याभ्यः स्वाहा इदं गृह्याभ्यो न मम। ॐकश्यपाय स्वाहा इदं कश्यपाय नमम। ॐअनुमतये स्वाहा इदम् अनुमतये न मम। ॐविश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा इदं विश्वेभ्यो देवेभ्यो न मम। ॐअग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते नमम। इति देवयज्ञः प्रथमः ॥१॥ मणिकसमीपे प्राक्संस्थं वलित्रयं दद्यात्—१ ॐपर्जन्याय नमः इदं पर्जन्याय न मम। २ ॐअद्भ्यो नमः इदम् अद्भ्यो न मम। ३ ॐ पृथिव्यै नमः इदं पृथिव्यै म मम। ततोऽग्नेः पश्चाज्जलेन वितस्तिमानं मंडलं कृत्वा तत्र गृहद्वारशाखे मकल्प्य वलिहरणं कुर्यात्। द्वारशाखयो-र्दक्षिणोत्तरयोर्वलिद्वयं १ ॐधात्रे नमः इदं धात्रे न मम। २ ॐविधात्रे नमः इदं विधात्रे न मम॥ (माचीमारभ्य प्रतिदिशं

---

१ वलिहरणमण्डलम्

पू०

२ वि० ७ प्रा० १ धा०
३ वा०

उ० १०उ०६वा० १७भू० १५वि० भू० १३सू० १२अ०१८पितृ०४या०८द० द०
१६उ० १४वि० दे० ११ब्र०

मणिक०
३ पृथि०
२अद्भ्यो०
१ पर्ज०

२० हन्तसे० ५ या०
१९ यक्ष्मै० ९ म०

प०

प्रदक्षिणं बलिचतुष्टयम्—) ३ ॐवायवे नमः इदं वायवे न मम। ४ ॐवायवे नमः इदं वायवे न मम। ५ ॐवायवे नमः इदं वायवे न मम। ६ ॐवायवे नमः इदं वायवे न मम॥ (ततः पूर्वतः क्रमात्) ७ ॐप्राच्यै दिशे नमः इदं प्राच्यै दिशे न मम। ८ ॐदक्षिणायै दिशे नमः इदं दक्षिणायै दिशे न मम। ९ ॐप्रतीच्यै दिशे नमः इदं प्रतीच्यै दिशे न मम। १० ॐउदीच्यै दिशे नमः इदम् उदीच्यै दिशे न मम॥ (तेषां मध्ये प्राक्संस्थम्) ११ ॐब्रह्मणे नमः इदं ब्रह्मणे न मम। १२ ॐअन्तरिक्षाय नमः इदमन्तरिक्षाय न मम। १३ ॐसूर्याय नमः इदं सूर्याय न मम॥ (तेषामुत्तरे) १४ ॐविश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः इदं विश्वेभ्यो देवेभ्यो न मम। १५ ॐविश्वेभ्यो भूतेभ्यो नमः इदं विश्वेभ्यो भूतेभ्यो न मम॥ (अनयोरुत्तरे—) १६ ॐउपसे नमः इदमुपसे न मम। १७ ॐभूतानां पतये नमः इदं भूतानां पतये न मम। इति भूतयज्ञो द्वितीयः ॥२॥ ततो देवानां नैवेद्यार्पणम्—देवसन्मुखपवित्रस्थले चतुरस्रमण्डलोपरि नैवेद्यपात्रं सोपस्करं निधाय "ॐनमो भगवते वासुदेवाय" इति मन्त्रेण पात्रसमन्ताज्जलधारया परिवारणं कुर्यात्॥ तदन्नं गायत्रीमन्त्रेण तुलसीदलेन सम्प्रोक्ष्य नैवेद्योपरि सतुलसीदलं निधाय धेनुमुद्रां प्रदर्श्य सव्यहस्तस्याङ्गुलीः समानाः कृत्वा नैवेद्यमर्पयेत्—ॐप्राणाय स्वाहा। ॐअपानाय स्वाहा। ॐव्यानाय स्वाहा। ॐसमानाय स्वाहा। ॐउदानाय स्वाहा। इति समर्प्य नैवेद्यमध्ये पानीयं समर्पयामि। उत्तरापोशानं समर्पयामि। हस्तप्रक्षालनं समर्पयामि। मुखप्रक्षालनं समर्पयामि। करोद्वर्तनार्थे चंदनं

१ इदं द्वैतकं मूलयोः प्रयोगे बोध्यम्। चंदन निर्यासात्तं देवतानेत्रं कुर्वन्ति तत्र मूलं गन्धम्।

समर्पयामि । मुखवासार्थे ताम्बूलं समर्पयामि । एवं देवतानैवेद्यं कृत्वा ॥ अथ पितृयज्ञस्तृतीयः । तत्र प्राचीनावीती भूत्वा दक्षिणाभिमुखः सव्यं जान्वाच्य ब्रह्मादिबलित्रयस्य दक्षिणप्रदेशे पितृतीर्थेन १८ ॐपितृभ्यः स्वधा नमः इदं पितृभ्यो न मम । इति पितृयज्ञस्तृतीयः ॥३॥ सव्यम्—ततस्तत्पात्रं प्रक्षाल्य तज्जलं ब्रह्मादिबलितो वायव्यां दिशि उत्सृजेत्—१९ ॐयक्ष्मैतत्ते निर्णेजनं नमः इदं यक्ष्मणे न मम । पूर्वमकृतश्चेदत्र ब्रह्मयज्ञः कार्यः । अथ मनुष्ययज्ञश्चतुर्थः ॥ अतिथिप्राप्तौ भोजनपर्याप्तमन्नं षोडशग्रासमितं वा अतिथेरभावे ग्रासचतुष्टयं ग्रासमितं वा निवीत्युदङ्मुखः प्राजापत्येन तीर्थेन २० ॐहन्त ते सनकादिमनुष्येभ्यो नमः इदं सनकादिमनुष्येभ्यो न मम । इति मनुष्ययज्ञश्चतुर्थः ।४। गोग्रासादिसमर्पणम्—सौरभेय्यः सर्वहिताः पवित्राः पुण्यराशयः । प्रतिगृह्णन्त्विमं ग्रासं गावस्त्रैलोक्यमातरः ॥ इदं गोभ्यो न मम ॥ ततो गृहाद्बहिर्भूमौ अप आसिच्य—ऐन्द्रवारुणवायव्याः सौम्या वै नैर्ऋतास्तथा । वायसाः प्रतिगृह्णन्तु भूमौ पिण्डं मयाऽर्पितम् ॥ इदं वायसेभ्यो न मम ॥ द्वौ श्वानौ श्यामशबलौ वैवस्वतकुलोद्भवौ । ताभ्यामन्नं प्रदास्यामि स्यातामेतावहिंसकौ । इति श्वभ्यां न मम ॥ पिपीलिकाः कीटपतङ्गकाद्या बुभुक्षिताः कर्मनियोगबद्धाः । तृप्त्यर्थमन्नं हि मया प्रदत्तं

१ पञ्चमो ब्रह्मयज्ञो नित्यतर्पणात्पूर्वं न कृतश्चेद्वैश्वदेवसङ्कल्पे पञ्चमहायज्ञैरहं यक्ष्ये इत्यूहं कृत्वाऽत्र कार्यः । हुन्तकारात्पूर्वं ब्रह्मयज्ञस्यावसरः । तत्र विकल्पः—प्रातर्होमानंतरं वा तर्पणात्पूर्वं वा वैश्वदेवावसाने वा ब्रह्मयज्ञ इति हरिहरः । कात्यायनः—यश्च श्रुतिजपः प्रोक्तो ब्रह्मयज्ञस्तु स स्मृतः ॥ स चार्वाक्तर्पणात्कार्यः पश्चाद्वा प्रातराहुतेः ॥ क्वचित्प्रयोगेऽत्र ब्रह्मयज्ञसिद्ध्यर्थं तिस्रो गायत्रीर्जपेदित्युक्तं तन्न सम्यग्भाति । तत्र प्रमाणम्—ब्रह्मयज्ञ एकस्मिन्नहनि सकृदेव कार्यः तदाह—न हन्तेति न होमं च स्वाध्यायं पितृतर्पणम् । नैकः श्राद्धद्वयं कुर्यात्समानेऽहनि क्वचित् ॥

तेषामिदं ते मुदिता भवन्तु ॥ इदमन्नं पिपीलिकादिभ्यो न मम । पादौ प्रक्षाल्याचम्य गृहमागत्य वैश्वदेविकं भस्म त्र्यायुषमित्यनेन मन्त्रेण यथास्थानं धारयेत् । श्रद्धां मेधां यशः प्रज्ञां विद्यां बुद्धिं श्रियं बलम् । आयुष्यं तेज आरोग्यं देहि मे हव्यवाहन ॥ इति नमस्कुर्यात् ॥ गन्धधारणम्—ॐ सुचक्षाऽअहमक्षीभ्यां भूयासꣳ सुवर्चा मुखेन । सुश्रुत्कर्णाभ्यां भूयासम् ॥ अग्निविसर्जनम्-ॐ यज्ञ यज्ञं गच्छ यज्ञपतिं गच्छ स्वां योनिं गच्छ स्वाहा ॥ एष ते यज्ञो यज्ञपते सहसूक्तवाकः सर्ववीरस्तं जुषस्व स्वाहा ॥[२२]॥ इति विसृज्य कुशपवित्रत्यागं कुर्यात् । अर्पणम्—अनेन वैश्वदेवाख्येन कर्मणा यज्ञस्वरूपी परमेश्वरः प्रीयतां न मम । प्रमादात्कुर्वतां कर्म० ॥ यस्य स्मृत्या० ॥ विष्णवे नमो विष्णवे नमो विष्णवे नमः ॥ प्राग्दत्तं बलिं गवादिभ्योऽर्पयेत् ॥ इति वैश्वदेवप्रयोगः ॥

॥ २७ ॥ अथ भोजनविधिः ।

पाणिपादौ प्रक्षाल्य भोजनशालायामागत्य गोमयोपलिप्ते शुचौ देशे विहितपीठासने प्राङ्मुखः प्रत्यङ्मुखो वा उपविश्य दक्षिणे धृतजलपात्रो हस्तपादास्येषु पञ्चस्वार्द्रोऽन्तर्जानुकरः स्वपुरतो वितस्तिमात्रं चतुष्कोणं मण्डलं जलेन कृत्वा तदुपरि सुवर्णादिविहितपात्रं रंभामध्वाम्रजम्बुपनस-

---

१ गोशकृन्मृण्मयं भिन्नं तथा पालाशपिप्पले । लोहबद्धं तथैवार्कं वर्जयेदासनं बुधः ॥
२ उपलिप्ते शुचौ देशे पादौ प्रक्षाल्य वाग्यतः । प्राङ्मुखोऽन्नं तु भुञ्जीत शुचिः पीठमधिष्ठितः ॥ पूर्ववास्तु गृहे नित्यं नाश्नीयादुत्तरामुखः । सोमवारे तथाभ्यङ्गं वर्जयेत्तु सदा बुधः ॥
३ सौवर्णे राजते चैव पद्मपत्रपलाशयोः । भाजने भोजने चैव त्रिरात्रं फलमश्नुते ॥ भूमौ पात्रं प्रतिष्ठाप्य यो भुङ्क्ते वाग्यतः शुचिः । भोजने भोजने चैव त्रिरात्रं फलमश्नुते ॥ मन्वन्तरेषु यो भुङ्क्ते मासमेकं निरन्तरम् । चान्द्रायणसहस्रं पुण्यं कृच्छ्रस्यापि चतुर्गुणम् ॥ वर्ज्यपात्राणि—मृण्मये पत्रपृष्ठे वा आयसे ताम्रभाजने । नाश्नीयादपि चक्रस्थे नरकं प्रतिपद्यते ॥ वटार्काश्वत्थपत्रेषु कुम्भीतिन्दुकजेषु च । श्रीकामो न तु भुञ्जीत कोविदारकरञ्जयोः ॥ आयसे तु पात्रेण यदन्नमुपदीयते तदन्नमपवित्रं स्यात्त्याज्यं वै सर्वकर्मणि ॥

पद्मोदुम्बरपालाशपत्राणां मध्ये अन्यतमपत्ररचितां पत्रावलिं वा निधाय तत्र यज्ञावशिष्टं घृताक्तमन्नं मध्ये भक्ष्यभोज्यं वामतः घृतपायसं दक्षिणे शाकादीन् पुरतः परिवेष्य प्राञ्जलिः अन्नं प्रणमेत्—"अस्माकं नित्यमस्त्वेतत्" इति भक्त्या वन्दयित्वा पङ्क्तिवारणम्—"ॐनमो भगवते वासुदेवाय" इति मन्त्रेण दक्षिणतः पात्रसमन्ताज्जलधारां कुर्यात्। अन्नस्तुतिः—ॐपितुन्नुस्तोषम्महोधर्म्माणन्तविषीम्। यस्यंत्रितोव्योजसावृत्रंविपर्वमर्दयंत् ॥ ७/३४ ॥ इत्यन्नं स्तुत्वा अभिमन्त्रणम्—ॐमानस्तोकेतनये॰ ॥ १६/१६ ॥ ॐनमोवःकिरिकेभ्योदेवानाᳫंहृदयेभ्योनमोविचिन्वत्केभ्यो नमोविक्षिणत्केभ्यो नमऽआनिर्हतेभ्यः ॥ ४६/१६ ॥ ॐनमःशम्भवायचमयोभवायचनमःशङ्करायचमयस्करायचनमःशिवायचशिवतरायच ॥ ४१/१६ ॥ एतैर्मन्त्रैरभिमंत्र्य प्रोक्षणम्—ॐसत्यं त्वर्तेन परिषिञ्चामि। इति दिवा। रात्रौ तु—ऋतं त्वा सत्येन परिषिञ्चामि। इति मन्त्रेणान्नं प्रोक्ष्य। अन्नाभिस्पर्शनम्—ॐतेजोसिशुक्रमस्यमृतमसिधामनामासिप्रियन्देवानामनाधृष्टन्देवयजनमसि ॥ ३१/१ ॥ इत्यनेनान्नमभिमृश्य आत्मन्यग्निध्यानम्—ॐअग्निरस्मिजन्मनाजातवेदा घृतम्मेचक्षुरमृतम्मऽआसन् ॥ अर्कस्त्रिधातूरजसोविमानोजस्रोघर्मोहविरस्मिनाम ॥ १६/१६ ॥ इत्यात्मानमग्निं ध्यात्वा दक्षिणतो भुवि उदकधारां प्राक्संस्थां कृत्वा तत्र भोजनपात्रात् घृताक्तमोदनं गृहीत्वा बलित्रयं दद्यात्—ॐभूपतये स्वाहा नमः। ॐभुवनपतये स्वाहा नमः। ॐभूतानां पतये स्वाहा नमः। इति बदरीफलप्रमाणं बलित्रयं प्राक्संस्थं दत्वा आपोशनम्—सव्यहस्ते जलं गृहीत्वा—अन्नं ब्रह्म रसो विष्णुर्भोक्ता देवो महेश्वरः। एवं ध्यात्वा द्विजो भुङ्क्ते सोऽन्नदोषैर्न लिप्यते ॥ अन्तश्चरति भूतेषु गुहायां विश्वतोमुखः। त्वं ब्रह्म त्वं यज्ञस्त्वं वषट्कारस्त्वमोंकारस्त्वं विष्णोः परमं पदम्। ॐअ-

मृतोपस्तरणमसि स्वाहा । इति मन्त्रेण विष्णुमभिध्यायन्निःशब्दं तज्जलं पिबेत् । प्राणाहुतयः—वामहस्तेन भोजनपात्रमालभ्य अन्नममृतं ध्यायन्मौनी हस्तचापल्यादिरहितो घृताक्तौदनस्य बदरीफलप्रमाणाः पञ्च प्राणाहुतीर्मुखे जुहुयात् — तर्जनीमध्यमाङ्गुष्ठैः—ॐ प्राणाय स्वाहा । मध्यमानामिकाङ्गुष्ठैः—ॐ अपानाय स्वाहा । कनिष्ठानामिकाङ्गुष्ठैः—ॐ व्यानाय स्वाहा । कनिष्ठातर्जन्यङ्गुष्ठैः—ॐ समानाय स्वाहा । साङ्गुष्ठाभिः सर्वाभिरङ्गुलीभिः—ॐ उदानाय स्वाहा ॥ ततो वामहस्तं प्रक्षाल्य तेन नेत्रयोरुदकस्पर्शनम् । शिखामुक्तिः—ब्रह्मपाशसहस्रेण रुद्रशूलशतेन च । विष्णुचक्रसहस्रेण शिखामुक्तिं करोम्यहम् ॥ इत्यनेन शिखां विमुच्य पाणिकम्पनं मुखशब्दं च अकुर्वन् प्राक् द्रवरूपं मध्ये कठिनमन्ते पुनर्द्रवरूपं मधुरं पूर्वं लवणाम्ले मध्ये कटुतिक्तादिकान् पश्चाद्यथासुखं भुञ्जीत ॥ पादुकास्थः वेष्टितशिरा अर्द्धरात्रे च भोजनं वर्जयेत् । लवणव्यञ्जनादीनि हस्तदत्तानि न भक्षयेत् । घृतं तैलं च नखनिःसृतं न भुञ्जीत । केशरोमनखैर्दूषितं त्यजेत् । अतिभोजनं शूद्रान्नभोजनं च न कर्तव्यम् । जलं वामहस्ते धृत्वा दक्षिणमणिबन्धे निधाय पिबेत् । भोजनं कुर्वन्नन्नं न स्पृशेत् । एवं घृतपायसवर्जितं सर्वं सशेषं भुक्त्वा चित्राहुतिः—सर्वस्माद्भुक्तशेषात्किञ्चित्किञ्चिद्धस्ते गृहीत्वा अवघ्राय-मद्भुक्तोच्छिष्टशेषं ये भुञ्जन्ति पितरोऽधमाः । तेषामन्नं मया दत्तमक्षय्यमुपतिष्ठतु ॥ इति मन्त्रेण पितृतीर्थेन दक्षिणतो दद्यात् । उत्तरापोशनम्—ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा । इत्यनेन हस्ते गृहीतानामपामर्द्धं पीत्वा—रौरवे पूयनिलये पद्मार्बुदनिवासिनाम् । अर्थिनां सर्वभूतानामक्षय्यमुपतिष्ठतु ॥ इत्यनेन मन्त्रेण पीतशेषम् उदकम् उच्छिष्टाच्चित्राहुतौ पितृतीर्थेन

१ स्नाने च भोजने चैव तथा मूत्रपुरीषयोः । मैथुने च शवस्कंधे शिखां पश्चाद् विसर्जयेत् ॥

निक्षिपेत् । ततस्तूष्णीं वामपाणिना शिखां बद्ध्वा बलिं चित्राहुतिं चादा-योत्थाय तदन्नं काकेभ्यो विसृज्य मृज्जलाभ्यां हस्तौ मुखं च सम्यक्क्षा-लयेत् । काष्ठेन शलाकया तर्जनीवर्ज्याङ्गुलिना वा दन्तान्संशोध्य षोडशगण्डूषान्कृत्वा स्मरेत्—अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषो ह्यङ्गुष्ठं च समाश्रितः । ईशः सर्वस्य जगतः प्रभुः प्रीणातु विश्वभुक् ॥ नाभेरालभनम्—ॐश्वात्राः पीता भवत यूयमापोऽअस्माकमन्तरुदरेसुशेवाः ॥ ताऽअस्मभ्यमयक्ष्माऽअनमीवाऽअनागसः स्वदन्तुदेवीरमृताऽऋतावृधः ॥ १२/४ ॥ तत उदरालम्भनम्—अगस्त्यं वैनतेयं च शनिं च वडवानलम् । अन्नस्य परिणामार्थं स्मरेद्भीमं च पञ्चमम् ॥ आतापी मारितो येन वातापी च निपातितः । समुद्रः शोषितो येन स मेऽगस्त्यः प्रसीदतु ॥ इत्युदरं परि-मृज्य स्मरणम्—शर्यातिं च सुकन्यां च च्यवनं शक्रमश्विनौ । भोजनान्ते स्मरेन्नित्यं तस्य चक्षुर्न हीयते ॥ इति स्मृत्वा निर्माल्यतुलसीपत्रं भक्षयित्वा ततस्ताम्बूलभक्षणं कृत्वा शतपदं व्रजेत् । वामपार्श्वे निद्रार-हितं शयनं कर्तव्यम् । तत इतिहासपुराणानि धर्मशास्त्राणि चाभ्यसेत् । पश्चाद्विहितव्यवहारादि कृत्यं कुर्यात् । दिवा स्वापं स्त्रियं च वर्जयेत् ॥

॥ इति भोजनविधिस्तदुत्तरकर्म च ॥

---

१ भोजनानन्तरं विष्णोरर्पितं तुलसीदलम् । भक्षयेद्देहशुद्ध्यर्थं चान्द्रायणशताधिकम् ॥ २ पर्णस्याग्रं च मूलं च शिरां चैव विशेषतः । चूर्णपर्णं वर्जयित्वा ताम्बूलं भक्षयेद्बुधः ॥ सुपक्वं च सुपत्रं च चूर्णेन च समन्वितम् । अदत्वा द्विजदेवेभ्यस्ताम्बूलं वर्जयेद्बुधः ॥ ताम्बूलं विधवास्त्रीणां यतीनां ब्रह्मचारिणाम् । तपस्विनां च विप्रेन्द्र सर्वपुण्यहरं स्मृतम् ॥ ताम्बूलाभ्यञ्जने चैव कांस्यपात्रे च भोजनम् । यतिश्च ब्रह्मचारी च विधवा च विवर्जयेत् ॥ ३ भोजनान्ते शतपदं गत्वा ताम्बूलभक्षणम् । शयनं वामकुक्षौ चेद्वैद्यस्य किं प्रयोजनम् ॥ ४ इतिहासपुराणानि धर्मशास्त्राणि चाभ्यसेत् । वृथा विवादवाक्यानि परीवादांश्च वर्जयेत् ॥ ५ दिवा स्वापं न कुर्वीत स्त्रियं चैव विवर्जयेत् । आयुर्हन्ति दिवा निद्रा दिवा स्त्री पुण्यनाशिनी ॥

॥ २८ ॥ अथ सायंसन्ध्याप्रयोगः ॥

स्नात्वा धौते वाससी परिधाय दर्भासने प्रत्यङ्मुख उपविश्य ततः क्रमेण पवित्रधारणम् आचमनं प्राणायामं निर्जलं भस्मधारणं शिखाबन्धनं रुद्राक्षमालाधारणं पवित्रकरणं च प्रातःसन्ध्यावत्कुर्यात् ॥ अथ सङ्कल्पः-विष्णुर्विष्णुर्विष्णुःश्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य० शुभपुण्यतिथौ ममोपात्तदुरितक्षयपूर्वकब्रह्मवर्चसकामार्थं श्रीविष्णुप्रीत्यर्थं च सायंसन्ध्योपासनमहं करिष्ये ॥ इति संकल्प्य भूमिप्रार्थना भूशुद्धिः अभिषेचनं व्याहृतिपूर्वकगायत्रीकरन्यासाः व्याहृतिपूर्वकगायत्रीपडङ्गन्यासाः प्रणवन्यासाः गायत्र्यक्षरन्यासाः शिरोन्यासाश्च क्रमेण प्रातःसन्ध्यावत्कार्याः। ततः आवाहनम्-वृद्धां सरस्वतीं कृष्णां पीतवस्त्रां चतुर्भुजाम् । शङ्खचक्रगदापद्महस्तां गरुडवाहिनीम् ॥ सामवेदकृतोत्सङ्गां वनमालाविभूषिताम् । वैष्णवीं विष्णुदैवत्यां विष्णुलोकनिवासिनीम् ॥ आवाहयाम्यहं देवीमायान्तीं विष्णुमण्डलात् । आगच्छ वरदे देवि त्र्यक्षरे विष्णुवादिनि । भारति छन्दसां मातर्विष्णुयोने नमोऽस्तु ते ॥ ततः प्रातःसंध्यावत्प्राणायामं कृत्वा अम्बुप्राशनम्-अग्निश्चमेति नारायण ऋषिः अग्निर्देवता अनुष्टुप्छन्दः अम्बुप्राशने विनियोगः-ॐ अग्निश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युकृ-

---

१ रवेरस्तमयात्पूर्वं घटिकैका यदा भवेत्। सायंसन्ध्यामुपासीत कुर्याद्धोमं च पूर्ववत् ॥ शौचं कृत्वा यथान्यायमर्धास्तमितभास्करे । सायंसन्ध्यामुपस्थाय आसीनस्तत्र वाग्यतः ॥ अर्धास्तमित आदित्ये पश्चिमायां च उत्तरे । भागस्तन्मुख आसीनः सावित्रीं वाग्यतो जपेत् ॥ यदि सन्ध्या दशगुणा ह्रदप्रस्रवणेषु च । सा च तीर्थे शतगुणा सहस्रा जाह्नवीतटे ॥ उत्तमा सूर्यसहिता मध्यमा लुप्तभास्करा । अधमा तारकोपेता सायंसन्ध्या त्रिधा मता ॥ सन्ध्याकाले व्यतीते तु जपं कृत्वा पुनर्मनः । ऋचं वाथ तृचं जप्त्वा ततः सन्ध्यामुपासते ॥ यदुपस्थकृतं पापं यच्च योनिकृतं भवेत्। सायंसन्ध्यामुपस्थाय तेन तस्मात्प्रमुच्यते ॥ २ अग्निश्चेत्यनुवाकेन सायंकाले क्षिपेदपः ॥

तेभ्यः पापेभ्यो रक्षन्तां यदह्ना पापमकार्षं मनसा वाचा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्ना अहस्तदवलुम्पतु यत्किञ्चिद्दुरितं मयि इदमहं मामममृतयोनौ सत्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा॥ एतन्मन्त्रेण जलं प्राश्य तूष्णीं द्विराचामेत्॥ ततो मार्जनम्—अपामञ्जलावादानं जलप्रक्षेपणम् अपो वामहस्ते गृहीत्वा न्युब्जेन दक्षिणहस्तेनाच्छादनम् अघमर्षणं च प्रातःसन्ध्यावत्कृत्वा गायत्रीमन्त्रेण प्रातःसन्ध्योक्तविधिना सूर्याभिमुखस्तिष्ठन् "विष्णुस्वरूपिणे सूर्यनारायणाय नमः इदमर्घ्यं दत्तं न मम" इति वदन्गन्धाक्षतपुष्पयुक्तानि त्रीण्यर्घ्याणि दद्यात्[1]। दत्ताघ्योंदकेन दक्षिणनासाचक्षुःश्रोत्रस्पर्शनं कुर्यात्। ततो दक्षिणहस्ते जलं गृहीत्वा—"ॐ असावादित्यो ब्रह्म" अनेन मन्त्रेण आत्मनः समन्तात्प्रदक्षिणवदुदकं क्षिपेत्। ततः सूर्योपस्थानं गायत्र्यावाहनं गायत्र्युपस्थानं गायत्रीजपविनियोगं गायत्रीध्यानं ब्रह्मशापविमोचनं वसिष्ठशापविमोचनं विश्वामित्रशापविमोचनं गायत्र्यस्त्रोपाहरणं जपादौ मुद्राप्रदर्शनं च प्रातःसन्ध्यावत्कुर्यात्। ततो गायत्रीमन्त्रजपार्थे विनियोगं कृत्वा वस्त्राच्छादितां जपमालां नासाग्रे धृत्वा प्रातःसन्ध्योक्तविधिना गायत्रीजपः कार्यः। ततः षडङ्गन्यासं मुद्राप्रदर्शनं सूर्यप्रदक्षिणां सूर्यादिदेवानां नमस्कारान् जपनिवेदनं च प्रातःसन्ध्यावत्कृत्वा जपार्पणम्—अनेन सायंसन्ध्याङ्गभूतेन बाहुल्यगोत्रधारिण्या गायत्र्या यथाशक्त्या कृतेन जपकर्मणा श्रीभगवान् विष्णुस्वरूपी सूर्यनारायणः प्रीयतां न मम। ततः प्रार्थनां सन्ध्याविसर्जनं गोत्रप्रवरोच्चारणपूर्वकमभिवादनम् ईश्वरस्तुतिं च प्रातःसन्ध्यावत्कृत्वा अर्पण-

---

१ गृह्यपरिशिष्टे अथाचम्य दर्भपाणि पूर्णमुदकाञ्जलिमुद्धृत्यादित्याभिमुखःस्थित्वा प्रणव्याहृतिपूर्वया सावित्र्या त्रिरर्घ्यं निवेद्य क्षिपेत्। कालातिक्रमे—कालातिक्रमणे चैव त्रिसध्यमपि सर्वदा। अर्घ्यमेकाधिकं दद्यात् भानोर्व्याहृतिपूर्वकम्॥

म्–अनेन सायंसन्ध्योपासनाख्येन कर्मणा भगवान्विष्णुस्वरूपी परमेश्वरः प्रीयतां न मम । ततो द्विराचमनम्—ॐकेशवाय नमः स्वाहा । ॐनारायणाय नमः स्वाहा । ॐमाधवाय नमः स्वाहा । हस्तप्रक्षालनम्–ॐगोविन्दाय नमः ॥ ॐविष्णवे नमः ॥ ॐविष्णवे नमः ॥ ॐविष्णवे नमः ॥ इति सायंसन्ध्याप्रयोगः[1] ॥

॥ २९ ॥ अथ शयनविधिः[2] ॥

सायंसन्ध्यादि निर्वर्त्य प्राङ्मुखमुदङ्मुखं[3] दीपं प्रज्वाल्य स्तुवीत यथा–दीपज्योतिः परब्रह्म दीपज्योतिर्जनार्दनः । दीपो हरतु मे पापं सन्ध्यादीप नमोऽस्तु ते ॥ शुभं करोतु कल्याणमारोग्यं सुखसम्पदम् । शत्रुबुद्धिविनाशं च दीपज्योतिर्नमोऽस्तु ते ॥ इति स्तुत्वा नत्वा तत्सन्निधावाप्तादिकानां कुशलाभिवादनं कुर्यात् । पश्चाद्गृहदेवादीनां पञ्चोपचारैः पूजां कृत्वा सायंभोजनं[4] कृत्वा स्तोत्रपाठादिना ग्रन्थाद्यवलोकनादिविद्याभ्यासेन वा प्रथमयाममतिक्रामेत् । शयनात्प्राक् हस्तौ पादौ प्रक्षाल्य जलपूर्णकुम्भं शिरःस्थाने निधाय रात्रिसूक्तं पठेत्–ॐआ रात्रि

---

१ सन्ध्यातिक्रमणे-सन्ध्याकाले त्वतिक्रान्ते स्नात्वा चैव यथाविधि । जपेदष्टशतं देवीं ततः सन्ध्यां समाचरेत् ॥ एकाहं चात्यतिक्रम्य सन्ध्यावन्दनकर्म च । अहोरात्रोषितो भूत्वा गायत्र्या अयुतं जपेत् ॥ द्विरात्रे द्विगुणं प्रोक्तं त्रिरात्रे त्रिगुणं भवेत् ॥ त्रिरात्रानन्तरं चेत्स्याच्छूद्र एव न संशयः ॥ २ चतुर्थप्रथमौ यामौ विद्याभ्यासैर्नयेन्निशि । प्रहरद्वयशायी तु ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥ उपास्य पश्चिमां सन्ध्यां हुत्वाऽग्नींस्तानुपास्य च । भृत्यैः परिवृतो भुक्त्वा नातितृप्तोऽथ संविशेत् । ३ आयुर्दः प्राङ्मुखो दीपो धनदः स्यादुदङ्मुखः । प्रत्यङ्मुखो दुःखदोऽसौ हानिदो दक्षिणामुखः ॥ ४ [illegible] भोजनकाले तु यदि दीपो विनश्यति । तदन्नं पाणिना स्पृष्ट्वा सावित्रीं मनसा स्मरेत् ॥ पुनर्दीपं ततो लब्ध्वा शेषं भुञ्जीत कामतः । अन्यदन्नं न भोक्तव्यं भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥

पार्थिवꣳ रजः पितुरप्रायि धामभिः ॥ दिवः सदांꣳसि बृहती वि-
तिष्ठस आ त्वेषं वर्तते तमः ॥ ३२/३४ ॥ उपस्ताश्चित्रमाभरास्मभ्यं वाजिनी-
वति ॥ येन तोकश्च तनयश्च धामहे ॥ ३३/३४ ॥ ॐ नमो नन्दीश्वराय । जले
रक्षतु वाराहः स्थले रक्षतु वामनः । अटव्यां नारसिंहश्च सर्वतः पातु
केशवः । जले रक्षतु नन्दीशः स्थले रक्षतु भैरवः । अटव्यां वीरभद्रश्च
सर्वतः पातु शङ्करः ॥ अर्जुनः फाल्गुनो जिष्णुः किरीटी श्वेतवाहनः ।
बीभत्सुर्विजयः कृष्णः सव्यसाची धनञ्जयः ॥ तिस्रो भार्याः कफछस्य
दाहिनी मोहिनी सती । तासां स्मरणमात्रेण चोरो गच्छति निष्फलः ।
अगस्तिर्माधवश्चैव मुचकुन्दो महाबलः । कपिलो मुनिरास्तीकः पञ्चैते
सुखशायिनः ॥ गारुडमन्त्रान्पठेत्-नर्मदायै नमः प्रातर्नर्मदायै नमो
निशि । नमोऽस्तु नर्मदे तुभ्यं त्राहि मां विषसर्पतः ॥ सर्पापसर्प भद्रं
ते दूरं गच्छ महाविष । जनमेजयस्य यज्ञान्ते आस्तीकवचनं स्मर ॥
आस्तीकवचनं श्रुत्वा यः सर्पो न निवर्तते । शतधा भिद्यते मूर्ध्नि
शिंशवृक्षफलं यथा ॥ यो जरत्कारुणा जातो जरत्कन्यां महायशाः । तस्य
सर्पोऽपि भद्रं ते दूरं गच्छ महाविष ॥ एतान् गारुडमन्त्रांस्तु निशायां
पठते यदि । मुच्यते सर्वबाधाभ्यो नात्र कार्या विचारणा ॥ इति पठित्वा
समाधिस्थमव्ययं विष्णुं नमस्कृत्य एककाष्ठभवायाम् अदग्धायां
नान्यवर्णोपसेवितायां शुचिरूपायां शुचिदेशस्थापितायां शुचिवस्त्रावृता-
याम् अभग्नायाम् आस्तृतायां जन्तुरहितायां शय्यायां प्राच्यां याम्यायां
वा शिरः कृत्वा शुचिर्नार्द्रकरचरणोऽनग्नोऽतैलाभ्यक्तशिरा भार्यया सह
पृथक् वा स्वपेत् । महादेवालये भस्मनि दिवा सन्ध्यायां शून्यालयश्म-

१ नमो नंदीश्वरायेति प्रोक्त्वा स्वपिति यो नरः । तस्य कूष्माण्डराजेभ्यो न भविष्यति वै भयम् ॥

शानचतुष्पथसर्पगृहकूलमहावृक्षच्छायालोष्टपाषाणवल्मीकभूतयक्षायतनेषु तथा देवविप्रगुरूणामुपरि उच्छिष्टो नग्न आर्द्रवासा न स्वपेत् निद्रासमये तांबूलं त्यजेत् । उपानहौ वेणुदण्डं ताम्बूलादीनि समीपे स्थापयेत् ॥ इति शयनविधिः ॥

॥ ३० ॥ अथ संक्षिप्तनूतनयज्ञोपवीतधारणप्रयोगः ॥

विच्छिन्नम् अधोयातं भुक्त्वा निर्मितं तथा चितिकाष्ठचितिधूमचण्डालरजस्वलाशवसूतिकास्पर्शे तथा कण्ठलम्बितत्वाद्यकृत्वा मलमूत्रोत्सर्गे तथा जननशावाशौचयोरन्ते तथा मासचतुष्टयान्ते च यज्ञोपवीतं त्यक्त्वा नूतनं धार्यम् । तत्र प्रयोगः– स्नात्वा शुद्धवस्त्रं परिधाय आसने उपविश्य भस्मधारणं शिखाबन्धनं च कृत्वा आचमनं प्राणायामं च कृत्वा संकल्पं कुर्यात् । अद्य पूर्वोच्चरित० अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ मम अमुकवासरे एवं ग्रहगणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ मम अमुकगोत्रोत्पन्नस्य अमुकशर्मणः (अमुकवर्मणः अमुकगुप्तस्य वा) श्रौतस्मार्तकर्मानुष्ठानसिद्ध्यर्थम् अमुककर्माङ्गत्वेन नूतनयज्ञोपवीतधारणमहं करिष्ये । अथ तत्र प्राक् यज्ञोपवीतप्रक्षालनम्- ॐआपोहिष्ठा० ॥ ॐयोवः-शिवतमो० ॥ ॐतस्माऽअरं॰ ॥ ततो यज्ञोपवीतं करसंपुटे कृत्वा दशवारं गायत्रीमन्त्रेण अभिमन्त्रयेत् । ॐभूर्भुवःस्वः-तत्सवितुर्वरेण्यंभर्गोदेवस्यधीमहि । धियोयोनः-प्रचोदयात् ॥$\frac{34}{3}$॥ ततस्तन्तुग्रन्थिषु देवतावाहनम् । ॐप्रथमतन्तौ ॐकाराय नमः

---

१ नूतनयज्ञोपवीतधारणस्य प्रमाणको विस्तृतप्रयोगस्तु श्रावणीप्रयोगे (पृ २८०) द्रष्टव्यः ॥ २ सूतके मृतके चैव गते मासचतुष्टये । नवयज्ञोपवीतानि धृत्वा जीर्णानि सन्त्यजेत् ॥ विना यज्ञोपवीतेन विण्मूत्रोत्सर्गकृद्यदि । उपवासत्रयं कृत्वा दानैर्होमैस्तु शुद्ध्यति ॥

ॐकारमावाहयामि ॥ १ ॥ द्वितीयतन्तौ अग्नये नमः अग्निम् आ० ॥२॥ तृतीयतन्तौ नागेभ्यो नमः नागान् आ० ॥ ३ ॥ चतुर्थतन्तौ सोमाय नमः सोमम् आवाहयामि ॥ ४ ॥ पञ्चमतन्तौ पितृभ्यो नमः पितॄन् आ० ॥ ५ ॥ षष्ठतन्तौ प्रजापतये नमः प्रजापतिम् आ० ॥ ६ ॥ सप्तमतन्तौ अनिलाय नमः अनिलम् आ० ॥ ७ ॥ अष्टमतन्तौ यमाय नमः यमम् आ० ॥८॥ नवमतन्तौ विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः विश्वान् देवान् आवाहयामि ॥९॥ यज्ञोपवीतग्रंथिमध्ये ब्रह्मविष्णुरुद्रेभ्यो नमः ब्रह्मविष्णुरुद्रान् आवाहयामि ॥ आवाहितदेवताः सुप्रतिष्ठिता वरदा भवत ॥ इति देवानावाहयित्वा प्रतिष्ठाप्य ततः पूजनं कुर्यात् ॥ प्रणवाद्यावाहितयज्ञोपवीतदेवताभ्यो नमः गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि । (वा मानसोपचारैः संपूजयेत् ।) अथ सूर्यप्रदर्शनम् । ॐतच्चक्षुर्दे०।यज्ञोपवीतधारणम्—यज्ञोपवीतमिति मन्त्रस्य परमेष्ठी ऋषिः लिङ्गोक्ता देवता त्रिष्टुप् छन्दः यज्ञोपवीतधारणे विनियोगः । ॐयज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात् । आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः । यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि ॥ दक्षिणहस्ते धृत्वा प्रतियज्ञोपवीतम् आचमनं कुर्यात् । अथ जीर्णयज्ञोपवीतत्यागः—एतावद्दिनपर्यंतं ब्रह्म त्वं धारितं मया । जीर्णत्वात्त्वत्परित्यागो गच्छ सूत्र यथासुखम् ॥ १ ॥ इति मन्त्रेण जीर्णयज्ञोपवीतं शिरोमार्गेण निःसार्य शुद्धभूमौ त्यजेत् । पश्चात् यथाशक्ति गायत्रीमन्त्रजपं कुर्यात् । अनेन नूतनयज्ञोपवीतधारणार्थकृतेन यथाशक्ति गायत्रीजपकर्मणा श्रीसविता देवता प्रीयतां न मम ॥ पुनः—अनेन नूतनयज्ञोपवीतधारणाख्येन कर्मणा मम श्रौतस्मार्तकर्मानुष्ठानसिद्धिद्वारा श्रीभगवान् परमेश्वरः प्रीयतां न मम ॥

॥ इति संक्षिप्तनूतनयज्ञोपवीतधारणविधिः ॥

॥ ३१ ॥ अथ प्रमादाद्यज्ञोपवीतनाशे विशेषप्रयोगः ॥

यज्ञोपवीतं प्रमादाद्धतं चेत्चूर्णीं लौकिकं धृत्वा सङ्कल्पः—अत्राद्य० अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे मम यज्ञोपवीतनाशजन्यदोषनिवारणार्थमप्रायश्चित्ताङ्गभूतम् आज्यहोममहं करिष्ये । इति सङ्कल्प्य कुण्डे स्थण्डिले वा अग्निं प्रतिष्ठाप्य मन्त्रचतुष्टयेन चतस्र आज्याहुतीर्जुहुयात्—ॐमनोज्योतिर्जुषतामाज्यं विच्छिन्नं यज्ञं सममन्दधातु । स्वाहा या इष्टा उपसो निम्रुचश्च ताः सन्दधामि हविषा घृतेन स्वाहा ॥ १ ॥ ॐअग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यतां स्वाहा ॥ २ ॥ ॐवायो व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यतां स्वाहा ॥ ३ ॥ ॐआदित्य व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यतां स्वाहा ॥ ४ ॥ इति हुत्वा पूर्वोक्तविधिना नूतनम् उपवीतं धारयेत् ॥

अथान्यप्रकारः—अद्यपूर्वोच्चारित० शुभपुण्यतिथौ मम यज्ञोपवीतनाशजन्यदोषनिरासार्थं प्रायश्चित्तं करिष्ये इति सङ्कल्प्य आचार्यवरणाग्निप्रतिष्ठाद्याज्यभागान्ते सवितारं गायत्र्या तिलैराज्येन चाष्टोत्तरशतं सहस्रं वा जुहुयात् । ततः पूर्वोक्तविधिना नूतनं धृत्वा अतिक्रान्तं सन्ध्याद्याचरेत् ॥ यज्ञोपवीतहीनः क्षणं तिष्ठेच्चेच्छतगायत्रीजपः । यज्ञोपवीतं विना भोजने विन्मूत्रकरणे वा गायत्र्यष्टसहस्रं जपः । यज्ञोपवीतं विना जलपाने एकेनोपवासेन पञ्चगव्यपानेन च शुद्ध्यति । वामस्कन्धात्कूर्परे मणिबन्धान्ते वा पतिते यथास्थानं धृत्वा त्रीन्षड् वा यथाक्रमं प्राणायामान्कृत्वा नवं धारयेत् । कोपादिना स्वयं यज्ञोपवीतत्यागे पूर्ववल्लौकिकं धृत्वा प्रायश्चित्तान्ते नवं धारयेत् । ब्रह्मचारिण

---

१ विना यज्ञोपवीतेन विण्मूत्रोत्सर्गकृद्यदि । उपवासद्वयं कृत्वा दानैर्होमैश्च शुद्ध्यति ॥

२ विना यज्ञोपवीतेन तोयं यः पिबते द्विजः । उपवासेन चैकेन पञ्चगव्येन शुद्ध्यति ॥

एकं यज्ञोपवीतं स्नातकस्य द्वे उत्तरीयाभावे तृतीयकम् आयुष्कामस्य त्र्यधिकानि बहूनि यज्ञोपवीतानि। कण्ठादुत्तार्य क्षालने पुनःसंस्कारः॥

॥ ३२ ॥ सूतके सन्ध्याविधिः ॥

तूष्णीं त्रिराचम्य प्राणानायम्य आपोहिष्ठेति मार्जनमन्त्रान्मनसोच्चार्य मार्जयेत्। गायत्रीमन्त्रं सम्यगुच्चार्य सूर्यायार्घ्यं दद्यात्। जलेन प्रदक्षिणं कृत्वा गायत्रीजपं मनसा दशवारं कृत्वा सूर्यं ध्यायेन्नमस्कुर्यात्॥ अशौचे होम (वैश्वदेव) दानप्रतिग्रहस्वाध्यायपरान्नभक्षणादि न कुर्यात्॥

॥ ३३ ॥ अथ सूत्रोक्तत्रिकालसन्ध्याप्रयोगः ॥

भस्मधारणम्-ॐत्र्यायुषं जमदग्नेः—ललाटे। कश्यपस्य त्र्यायुषम्-ग्रीवायाम्। यद्देवेषु त्र्यायुषम्-बाह्वोः। तन्नोऽअस्तुत्र्यायुषम्-हृदये। आचमनम्-ॐआमागन्यशसा सꣳसृज वर्चसा। तं मा कुरु प्रियं प्रजानामधिपतिं पशूनामरिष्टिं तनूनाम्॥ इत्यनेन मन्त्रेणाचम्य गायत्रीमन्त्रेण शिखां बद्ध्वा प्राणायामः-ॐभूः ॐभुवः ॐस्वः ॐमहः

---

१ उपवीतद्वयं धार्यमेकं नैव च धारयेत्। तृतीयं चोत्तरीयं स्याद्वस्त्राभावे विधीयते॥ २ कठाः काण्वाश्च चरका विप्रा वाजसनेयकाः। बह्वृचाः सामगाश्चैव ये चान्ये यजुःशाखिनः। कण्ठादुत्तार्यं सूत्रं तु पुनःसंस्कारमर्हति॥ ३ सन्ध्यामिष्टिं चरुं होमं यावज्जीवं समाचरेत्। न त्यजेत्सूतके वापि त्यजन्गच्छेदधो द्विजः॥ सूतके मृतके चैव सन्ध्याकर्म समाचरेत। मनसोच्चारयेन्मन्त्रान्प्राणायाममृते द्विजः॥ श्रुतिः—अहरहःसन्ध्यामुपासीत। ४ सूतके मृतके कुर्यात्प्राणायामममन्त्रकम्। तथा मार्जनमन्त्रांश्च मनसोच्चार्य मार्जयेत्॥ ५ गायत्रीं सम्यगुच्चार्य सूर्यायार्घ्यं निवेदयेत्। उपस्थानं नैव कार्यं मार्जनं तु कृताकृतम्॥ ६ धर्मसिंधौ—केचिन्मनसा दशगायत्रीजपः कार्यः इत्याहुः॥ ७ पैठीनसिः—सूतके सावित्र्या जलं प्रक्षिप्य सूर्यं ध्यायन्नमस्कुर्यात्॥ ८ का० परिशिष्टसूत्रे—उत्तरीयं धौते वाससी परिधार्य मृदोदकैः प्रक्षाल्याचम्य त्रिरायम्यासून्पुष्पाण्यम्बुमिश्राण्यूर्ध्वं क्षिप्त्वोर्ध्वबाहुः सूर्यमुदीक्षन्नुद्वयमुदुत्यं चित्रं तच्चक्षुरिति गायत्र्या च यथाशक्ति॥ आचम्य प्राणान्संमृशति आचामेति आमागन्यशसेति॥ न्यासाः—वाङ्म आस्ये नसोः प्राणोऽक्ष्णोः कर्णयोः श्रोत्रं बाह्वोर्बलमूर्वोरोजोऽरिष्टानि मेऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु॥

ॐजनः ॐतपः ॐसत्यम् ॐतत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि ॥ धियो योनः प्रचोदयात् ॥ ॐआपोज्योतीरसोमृतं ब्रह्मभूर्भुवःस्वरोम् । एवं पूरकः कुम्भकः रेचकः क्रमेण त्रिवारं पठेत् । न्यासाः—वाङ्मऽआस्येस्तु—मुखं कराग्रेण स्पृशेत् । नसोर्मे प्राणोस्तु—तर्जन्यङ्गुष्ठाभ्यां नासारन्ध्रद्वयं स्पृशेत् । अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु—अनामिकाङ्गुष्ठाभ्यां चक्षुर्द्वयं स्पृशेत् । कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु—मध्यमाङ्गुष्ठाभ्यां कर्णौ स्पृशेत् । बाह्वोर्मे बलमस्तु—कराग्रेण बाहू स्पृशेत् । ऊर्वोर्मेऽओजोस्तु—युगपद्धस्तेनोरू स्पृशेत् । अरिष्टानि मेङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु—शिरःप्रभृतिपादान्तानि सर्वाङ्गाण्युभाभ्यां हस्ताभ्यामालभेत ॥ सङ्कल्पः—ॐतत्सत्परमेश्वरप्रीत्यर्थं प्रातःसन्ध्योपासनमहं करिष्ये । अर्घ्यदानम्—ॐभूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गो देवस्य धीमहि ॥ धियो यो नः प्रचोदयात् ॥ अनेन मन्त्रेणार्घ्यत्रयं दद्यात् ॥ सूर्योपस्थानम्—ॐउद्वयन्तमसस्परिस्वः पश्यन्तऽउत्तरम् ॥ देवन्देवत्रा सूर्य्यमगन्मज्योतिरुत्तमम् ॥ ॐउदुत्यञ्जातवेदसन्देवं वहन्ति केतवः ॥ दृशे विश्वाय सूर्य्यम् ॥ ॐचित्रन्देवानामुदगादनीकञ्चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः ॥ आप्राद्यावापृथिवीऽअन्तरिक्षः सूर्य्यऽआत्माजगतस्तस्थुषश्च ॥ ॐतच्चक्षुर्देवहितम्पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् ॥ पश्येम शरदः शतञ्जीवेम शरदः शतः शृणुयाम शरदः शतम्प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतम्भूयश्च शरदः शतात् ॥ इत्युपस्थाय गायत्रीमन्त्रजपः कार्यः ॥ अर्पणम्—अनेनाष्टोत्तरशतसङ्ख्याकेन गायत्रीजपाख्येन कर्मणा श्रीसविता देवता प्रीयतां न मम ॥

॥ इति सूत्रोक्तत्रिकालसन्ध्याप्रयोगः ॥

॥ अथ नैमित्तिककर्मात्मको द्वितीयविभागः ॥

तत्र भस्मोद्धूलनरुद्राक्षमालाधारणभूशुद्ध्यादिमहान्याससमन्वितपञ्चवक्त्रपूजनपूर्वकरुद्राभिषेकप्रयोगः ॥

श्रीगणेशाय नमः। सम्भृतसम्भारः परिहिताहतसोत्तरीयशुक्लवासाः दक्षिणपार्श्वे बद्धशिखाभिन्नकेशः सव्ये पाणौ कृतकुशोपग्रहो दक्षिणे पाणौ धृतपवित्रो यजमानः श्रीपर्ण्यादिमयस्तद्दारुनिर्मिते कुशोत्तरकम्बलाद्यास्तृते स्वासने प्राङ्मुख उदङ्मुखो वा उपविश्य स्वदक्षिणतः पत्नीं चोपवेश्य स्ववामभागे अग्रोदककलशस्य स्वदक्षिणभागे घण्टादिपूजोपकरणानां पुरतो गन्धादिपात्राणां च स्थापनं कुर्यात्। फरादिसालनार्थपात्रं स्वपृष्ठतः स्थापयेत्॥ घृतदीपस्याभावे तिलतैलदीपस्थापनम्॥ आचम्य प्राणानायम्य। ॐद्यौः शान्तिः० यतोयतः० सुशान्तिर्भवतु। ॐश्रीगुरुभ्यो नमः। ॐसिद्धिबुद्धिसहितश्रीमन्महागणाधिपतये नमः। ॐलक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः। ॐउमामहेश्वराभ्यां नमः। ॐशचीपुरन्दराभ्यां नमः। सुमुखश्चैकदन्तश्च०। धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो०। विद्यारम्भे०। शुक्लाम्बरधरं०। अभीप्सितार्थ०। सर्वमङ्गल०। सर्वदा सर्वकार्येषु०। तदेव लग्नं०। लाभस्तेषां०। यत्र योगेश्वरः कृष्णो०। सर्वेष्वारब्धकार्येषु०। विनायकं गुरुं०। सङ्कल्पः-विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः इत्यारभ्य शुभपुण्यतिथौ मम सभार्यस्य सापत्यस्य सबान्धवस्य श्रीमहारुद्रप्रसादद्वारेण दीर्घायुःसुपुत्रसन्ततिप्राप्तिद्वारा एतज्जन्मकृतजन्मान्तरार्जितसकलकल्मषनिवृत्त्यर्थं कर्मणा ह्यक्रियमाणभूतानेकमहाग्रहभूतादिबाधानिरसनार्थं सच्चिदानन्दानन्ताद्द्याखण्डाचलाजाक्रियकूटस्थाच्युतब्रह्मात्मज्ञानरहितस्य स्वप्रिया स्वविषयावस्तुरूपाविद्याविलसितसंसारचक्रभुक्तनानादेहस्थं

इदानीं केनचित्पुण्यपुञ्जातिशयेन प्राप्तनरकुलायस्य तत्र स्रक्चन्दनवनितादिप्राप्तनानेन्द्रियकलाजलसत्त्वजादेहात्माभिमानस्य मरीचितोयसन्निभनानाविषयसुखासक्ततया जातकामाद्यरिषड्वर्गकृतमूर्छाकुलस्य श्रुत्या प्ररोचनार्थं प्रद्योतितस्वर्गादिफलानुसन्धानाभिनिविष्टतया कृतनानाकर्मजातस्य स्वर्गादिप्राप्तावपि नश्वरत्वात्केनचिदपि प्रकारेण सुखमलभमानस्य अधुना केनचित्प्रारब्धसंस्कारेण प्राप्तप्रसादादाचारश्रोत्रियशमदमादिसंपन्नब्रह्मात्मज्ञाननिष्ठसाधुसङ्गतस्य तन्मुखपङ्कजनिःसृतभगवद्गुणकथामकरन्दश्रवणपुटकृतपानजातसन्तोषस्य निर्विकल्पनिर्विकारनिरामयनिरालम्बनिर्वाणरूपस्यात्मसुखानुभवलालसतयैहिकामुष्मिकनानाविधजातवैराग्यभाग्योदयस्य "चित्तशुद्धिद्वारा ज्ञानप्राप्तावात्मसाक्षात्कारताभवती" तिन्यायात् चित्तशोधकधर्मसाधन आत्मज्ञानप्रकाशात्स्वरूपसंसिद्ध्यै अखण्डाव्यभिचारिण्या भक्त्या नित्यानन्दनिर्मलकीर्तिनामरूपगुणातिरिक्तभक्तजनसंसृतिनिरस्तिगृहीतसदाशिवस्वरूपश्रीमत्कर्पूरगौरवृषभवाहनगौरीदेहार्द्धधारिसच्चिदानन्दमूर्तिमेरणया श्रीसाम्बसदाशिवप्रीत्यर्थं तथा च श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलावाप्त्यर्थं देशकालाद्यनुसारतो यथाशक्ति भस्मोद्धूलनरुद्राक्षमालाधारणभूशुद्धिभूतशुद्धिप्राणप्रतिष्ठान्तर्मातृकाबहिर्मातृकापूर्वकमहान्याससमन्वितपञ्चवक्त्रपूजनपूर्वकम् अमुकरुद्रेण रुद्राभिषेकं (ऋत्विग्द्वारा वा) करिष्ये ॥ तदङ्गत्वेन ब्राह्मणवरणं पूजनं च करिष्ये ॥ कलशाराधनपूर्वकम् ऋत्विजो वृत्वा ऋत्विग्भिः साकं भस्मोद्धूलनादि कुर्यात् ॥

॥ ३४ ॥ अथ भस्मोद्धूलनप्रयोगः ॥

सद्योजातमित्यस्य सद्योजात ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः ब्रह्मा देवता

वामदेवायेत्यस्य वामदेव ऋषिः जगती छन्दः विष्णुर्देवता अघोरेत्यस्य अघोर ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः रुद्रो देवता तत्पुरुषायेत्यस्य तत्पुरुष ऋषिः गायत्री छन्दः रुद्रो देवता ईशान इत्यस्य ईशान ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः रुद्रो देवता सर्वेषां भस्मपरिग्रहणे विनियोगः-ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नमः । भवे भवे नातिभवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः ॥ वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमो बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः ॥ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः ॥ सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्तेअस्तु रुद्ररूपेभ्यः ॥ तत्पुरुषाय विद्महे । महादेवाय धीमहि । तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ॥ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मेऽअस्तु सदाशिवोम् ॥ इतिपञ्चभिर्मन्त्रैर्नैर्यसम्भवस्यावसथ्यसम्भवस्य वा भस्मनः सव्यहस्ते परिग्रहणं दक्षिणहस्तेनाच्छादनम् ॥ अग्निरित्यादिभस्माभिमन्त्रणमन्त्राणां पिप्पलाद ऋषिः गायत्री छन्दः कालाग्निरुद्रो देवता भस्माभिमन्त्रणे विनियोगः । ॐअग्निरितिभस्म वायुरितिभस्म जलमितिभस्म स्थलमितिभस्म व्योमेति भस्म सर्वꣳहवा इदं भस्म मन एतानि चक्षूंषि भस्मानि तस्माद्व्रतमेतत्पाशुपतं यद् भस्मनाङ्गानि संस्पृशेत्तस्माद्व्रतमेतत्पाशुपतं पशुपाशविमोक्षायेति मन्त्रेण त्रिःकृत्वा भस्मनोऽभिमन्त्रणम् ॥ आपोज्योतिरित्यस्य प्रजापतिर्ऋषिः यजुर्ब्रह्माग्निवायुसूर्याश्च देवताः भस्मन्यपामासेचने विनियोगः-"ॐआपोज्योती रसोमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम्"इतिमन्त्रेण जलाधिपं विष्णुमभिध्यायन्भस्मन्यपामासेचनम् । ॐनमः शिवायेति षडक्षरेण संमर्दनम् । सर्वाङ्गे भस्मोद्धूलनम्-ईशान इत्यस्य ईशान

ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः रुद्रो देवता शिरसि भस्मोद्धूलने विनियोगः। ॐईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मेऽअस्तु सदाशिवोम्–इतिमन्त्रेण शिरसि। तत्पुरुषायेत्यस्य तत्पुरुष ऋषिः गायत्री छन्दः रुद्रो देवता मुखे भस्मोद्धूलने विनियोगः–ॐतत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्–मुखे। अघोरेभ्य इत्यस्य अघोर ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः रुद्रो देवता हृदये भस्मोद्धूलने विनियोगः। ॐअघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः। सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्तेऽअस्तुरुद्ररूपेभ्यः–हृदये। वामदेवायेत्यस्य वामदेव ऋषिः जगती छन्दः विष्णुर्देवता गुह्ये भस्मोद्धूलने विनियोगः-ॐवामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमो बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः–गुह्ये। सद्योजातमितिसद्योजात ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः ब्रह्मा देवता पादयोर्भस्मोद्धूलने विनियोगः-ॐसद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नमः। भवे भवेनातिभवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः–पादयोः। प्रणवेन (ॐ) मस्तकादिपादतलपर्यन्तं सर्वाङ्गे। ततस्त्रिपुण्ड्रधारणम्–मानस्तोक इत्यस्य कुत्स ऋषिः जगती छन्दः एको रुद्रो देवता भस्मोद्धरणे विनियोगः। ॐमानस्तो० ॥ $\frac{१६}{१६}$ ॥ इत्यनेन भस्मोद्धरणम्। त्र्यम्बकमित्यस्य वसिष्ठ ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः त्र्यम्बको रुद्रो देवता त्र्यायुषमित्यस्य नारायण ऋषिः उष्णिक्छन्दः आशीर्देवता भस्मना त्रिपुण्ड्रधारणे विनियोगः। ध्यानम्–यास्य प्रथमा रेखा सा गार्हपत्यश्चाकारो रजो भूर्लोकश्चात्मा क्रियाशक्तिर्ऋग्वेदः प्रातःसवनं महादेवो देवता। यास्य द्वितीया रेखा सा दक्षिणाग्निरुकारः सत्त्वमन्तरिक्षमन्तरात्मा चेच्छाश-

क्तिर्यजुर्वेदो माध्यन्दिनं सवनं महेश्वरो देवता। यास्य तृतीया रेखा सा आहवनीयो मकारस्तमो द्यौः परमात्मा ज्ञानशक्तिः सामवेदस्तृतीयसवनं शिवो देवता। इति ध्यायन्-ॐत्र्यम्बकं यजामहे०। ॐत्र्यायुषं जमदग्नेरितिद्वाभ्यामृग्भ्यां मध्यमाङ्गुलिभिस्तिसृभिः शिरसि त्रिपुण्ड्रधारणम् ॥ एवमेताभ्यामृग्भ्यां नेत्रयुग्मप्रमाणं भ्रुवोरन्तरं यावत्त्रिपुण्ड्रं ललाटे। एताभ्यामेव ऋग्भ्यां तथैव वक्षसि। एवमेव दक्षिणोत्तरयोः स्कन्धयोश्च। एवं पञ्चसु[1] स्थानेषु भस्मना त्रिपुण्ड्रधारणम् ॥

॥ २५ ॥ अथ रुद्राक्षमालाधारणप्रयोगः ॥

स्वपुरतः पात्रे रुद्राक्षान्निधाय जलेन सम्प्रोक्ष्य गन्धपुष्पैरभ्यर्च्य ध्यानम्-विविक्तदेशे च सुखासनस्थः शुचिः समग्रीवशिरःशरीरः। अत्याश्रमस्थः सकलेन्द्रियाणि निरुध्य भक्त्या स्वगुरुं प्रणम्य ॥ हृत्पुण्डरीकं विरजं विशुद्धं विचिन्त्य मध्ये विशदं विशोकम्। तथादिमध्यान्तविहीनमेकं विभुं चिदानन्दमरूपमद्भुतम् ॥ उमासहायं परमेश्वरं प्रभुं त्रिलोचनं नीलकण्ठं प्रशान्तम् ॥ इति उमासहायं शिवं ध्यात्वा-ॐत्र्यम्बकं यजामहे इत्यनेन शैवपडक्षरेण वा मन्त्रेण प्रतिष्ठितरुद्राक्ष[3]धारणम् ॥ प्रतिष्ठामन्त्रयोरन्यतरेण मन्त्रेण वा कण्ठे मस्तके कर्णयोः करयोर्बाह्वोर्नयनयोः शिखायां वक्षसि च धारयेत् ॥ ॥

---

१ यद्वा ललाटे बाह्वोर्हृदये नाभौ चेत्येवं पञ्चसु स्थानेषु त्रिपुण्ड्रधारणम्। इदं भस्मधारणं त्रिपुण्ड्रधारणं च चतुराश्रमिणां साधारणं नित्यं च। भस्मोद्धूलनेऽशक्तश्चेच्छिरोललाटवक्षःस्कन्धेषु त्रिपुण्ड्रधारणमेव कुर्यादिति रुद्रकल्पद्रुमे ॥ २ इति जाबालोपनिषदि ॥ ३ रुद्राक्षधारणनिर्णयः—रुद्राक्षान् कण्ठदेशे दशनैर्परिमितान्मस्तके विंशती द्वे षट् षट् कर्णप्रदेशे करयुगलकृते द्वादशे द्वादशैव। बाह्वोरिन्दोः कलाभिर्नयनयुगकृते त्वेकमेकं शिखायां वक्षस्यष्टाधिकं यः कलयति शतकं स स्वयं नीलकण्ठः ॥ बाह्वोरिन्दोः कलाभिः पृथगथ च शिखासूत्रयोरेकमेकम्–इत्यपि पाठः ॥

॥ ३६ ॥ अथ भूशुद्धिप्रयोगः ॥

हस्ते जलमादाय–ॐनमो भगवते रुद्रायेति दशाक्षरमन्त्रस्य प्रजापति-ऋषिः रुद्रो देवता विराट् छन्दः आचमने प्राणायामे च विनियोगः। ॐनमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐनमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐनमो भगवते रुद्राय स्वाहा। हस्तप्रक्षालनम्–ॐनमो भगवते रुद्राय। प्राणायामः-ॐनमो भगवते रुद्राय। ॐनमो भगवते रुद्राय। ॐनमो भगवते रुद्राय॥ हस्ते जलमादाय–रुद्राभिषेकं कर्तुं योग्यतासिद्धये ऋत्विग्भिः सहाहं भूशुद्धिभूतशुद्धिप्राणप्रतिष्ठान्तर्मातृकाबहिर्मातृकान्यासान्महान्यासांश्च करिष्ये। नमस्कारः-दक्षिणे-ॐसरस्वत्यै नमः। ॐब्रह्म-निधये नमः॥ वामभागे-ॐलक्ष्म्यै नमः॥ ॐपद्मनिधये नमः॥ आसनम्-पृथ्वित्वयेतिमेरुपृष्ठ ऋषिः कूर्मो देवता सुतलं छन्दः आसने विनियोगः। ॐपृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता। त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम्॥ प्रार्थना–ॐविश्वशक्त्यै नमः। ॐमहाशक्त्यै नमः। ॐकूर्मासनाय नमः। ॐयोगासनाय नमः। ॐअनन्तासनाय नमः। ॐविमलासनाय नमः। मध्ये–ॐपरमसुखासनाय नमः। ॐभूर्भुवःस्व आत्मासनाय नमः–इतिमन्त्रेण पुष्पादिना आत्मनः आसनदानम्॥ शिखाबन्धनम्–चिद्रूपिणि महामाये दिव्यतेजः-समन्विते। तिष्ठ देवि शिखाबन्धे तेजोवृद्धिं कुरुष्व मे॥ अङ्गुष्ठमात्रां

१ परशुरामकारिकायाम्–भूरसीति च भूशुद्धिः कार्या कार्यस्य सिद्धये। २ रामतापिन्याम् देवो भूत्वा यजेद्देवं नादेवो देवमर्चयेत्। देवार्चायोग्यताप्राप्त्यै भूतशुद्धिं समाचरेत्। भूतशुद्धिं विधायैव प्राणस्थापनमाचरेत्। एवं प्राणान्प्रतिष्ठाप्य मातृकान्यासमाचरेत्॥ रुद्रकल्पद्रुमस्याभिषेकपरिच्छेदे–भूतशुद्ध्यादिकं कार्यमिति परशुरामादयः नैवेति देवयाज्ञिकनारायणभट्टादयः। हेमाद्रौ महार्णवे चाप्येवम्। भूतशुद्ध्याद्यकरणे न रुद्रवैगुण्यं करणे तु फलभूयस्त्वमिति केचित्॥

शिखां नैर्ऋत्यां बद्धा दिग्बन्धः—अपसर्पन्तु०। अपक्रामन्तु०। तीक्ष्णदंष्ट्र०। तालत्रयकरणम्-ॐसर्वभूतनिवारकाय शार्ङ्गाय सशराय सुदर्शनाय अस्त्रराजाय हुंफट् स्वाहा ॥ तालत्रयं कृत्वा स्वस्य परितः सर्वदिक्षु अस्त्रमुद्रां प्रदर्शयेत्। स्वदक्षिणभागे-ॐगुरुभ्यो नमः। ॐपरमगुरुभ्यो नमः। ॐपरमेष्ठिगुरुभ्यो नमः। ॐपूर्वसिद्धेभ्यो नमः। ॐआचार्येभ्यो नमः॥ स्ववामभागे—ॐगणेशाय नमः। ॐदुर्गायै नमः। ॐक्षेत्रपालाय नमः। ॐयोगिनीभ्यो नमः। ॐक्षेत्रेशाय नमः॥ भूमिताडनम्—अपसर्पन्तु०। अपक्रामन्तु०। स्ववामपार्ष्णिना त्रिवारं भूमिं ताडयेत्। भूरसीत्यस्य प्रजापतिर्ऋषिः मातृका देवताः प्रस्तारपङ्क्तिश्छन्दः भूशुद्धौ विनियोगः-भूमौ हस्तं कृत्वा—ॐभूरसि भूमिरस्यदितिरसि विश्वधाया विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री ॥ पृथिवीं यच्छ पृथिवीन्दृ ꣳ ह पृथिवीम्माहि ꣳ सीः ॥ $\frac{१८}{१३}$॥ भैरवनमस्कारः—योभूतानामित्यस्य कौण्डिन्य ऋषिः नारायणो देवता अनुष्टुप्छन्दः भैरवनमस्कारे विनियोगः—ॐयोभूतानामधिपतिर्यस्मिँल्लोकाऽअधिश्रिताः ॥ यऽईशे महतो महाँस्तेन गृह्णामि त्वामहम्मयि गृह्णामि त्वामहम् ॥ $\frac{३२}{१०}$॥ भैरवाय नमः ॥ इति भूशुद्धिः ॥

॥ ३७ ॥ अथ भूतशुद्धिप्रयोगः ॥

कुम्भकप्राणायामेन मूलाधारात्कुण्डलीं परदेवतां बिसतन्तुनिभां समुत्थाप्य ब्रह्मरन्ध्रगतां स्मृत्वा हृदयस्थं जीवं प्रदीपकलिकाकारं गृहीत्वा सुषुम्णामार्गेण ब्रह्मरन्ध्रं गत्वा ॐहंसः सोऽहमिति मन्त्रेण जीवं

१ मूलाधारात्समुत्थाप्य कुण्डलीं परदेवताम्। सुषुम्णामार्गमाश्रित्य ब्रह्मरन्ध्रगतां स्मरेत्। जीवं ब्रह्मणि संयोज्य हंसमन्त्रेण साधकः ॥

ब्रह्माणि संयोजयेत् । मातृकोपसंहारः[1]—ॐक्षकारं हकारे उपसंहरामि । ॐहकारं सकारे उप० । ॐसकारं षकारे उप० । ॐषकारं शकारे उप० । ॐशकारं वकारे उप० । ॐवकारं लकारे उप० । ॐलकारं रकारे उप० । ॐरकारं यकारे उप० । ॐयकारं मकारे उप० । ॐमकारं भकारे उप० । ॐभकारं बकारे उप० । ॐबकारं फकारे उप० । ॐफकारं पकारे उप० । ॐपकारं नकारे उप० । ॐनकारं धकारे उप० । ॐधकारं दकारे उप० । ॐदकारं थकारे उप० । ॐथकारं तकारे उप० । ॐतकारं णकारे उप० । ॐणकारं ढकारे उप० । ॐढकारं डकारे उप० । ॐडकारं ठकारे उप० । ॐठकारं टकारे उप० । ॐटकारं ञकारे उप० । ॐञकारं झकारे उप० । ॐझकारं जकारे उप० । ॐजकारं छकारे उप० । ॐछकारं चकारे उप० । ॐचकारं ङकारे उप० । ॐङकारं घकारे उप० । ॐघकारं गकारे उप० । ॐगकारं खकारे उप० । ॐखकारं ककारे उप० । ॐककारं अःकारे उ० । ॐअःकारम् अंकारेउ० । ॐअंकारम् औकारेउ० । ॐऔकारम् ओकारेउ० ॐओकारम् ऐकारेउ० । ॐऐकारम् एकारे उ० । ॐएकारं ॡकारे उ० । ॐॡकारं ऌकारे उ० । ॐऌकारम् ॠकारेउ० । ॐॠकारम् ऋकारे उ० । ॐऋकारम् ऊकारे उ० । ॐऊकारम् उकारे उ० । ॐउकारम् ईकारे उ० । ॐईकारम् इकारे उ० । ॐइकारम् आकारे उ० । ॐआकारम् अकारे उ० । ॐअकारं सहस्रदलाम्बुजाकारे ब्रह्मरन्ध्रे परमात्मनि लयं गत इति भावयेत् ॥ शरीरस्यात्मा ऋषिः प्रकृतिश्छन्दः परमात्मा देवता शरीरभूतशुद्ध्यर्थे[2] जपे विनियोगः । ॐपृथ्वीबीजमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः गायत्री

१ मातृकोपसंहार आह्निकसूत्रावल्याम् अस्ति केष्वपि प्राचीनग्रन्थेषु न दृश्यते तत्र मूल मृग्यम् ॥ २ शरीराकारभूतानां भूतानां यद्विशोधनम् । अव्ययब्रह्मसम्पर्कात् भूतशुद्धिरियं मता ॥ भूतशुद्धिं विना कर्म क्रियते मन्त्रपादिकम् । तत्सर्वं निष्फलं यस्मात्तस्मात्ता पूर्वमाचरेत् ॥

छन्दः पृथ्वी देवता पृथ्वीभूतशुद्ध्यर्थे जपे विनियोगः–पादादिजानुपर्यन्तं पृथिवीस्थानं चतुरस्रं पीतवर्णं सबिन्दुकं लँबीजसहितं ध्यायेत् ॥ ॐ वरुणबीजमन्त्रस्य हिरण्यगर्भ ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः वरुणो देवता वारुणिभूतशुद्ध्यर्थं जपे विनियोगः–जान्वादिनाभिपर्यन्तं वरुणमण्डलं धनुपाकारं शुभ्रवर्णं सबिन्दुकं वँबीजसहितं ध्यायेत् ॥ ॐ वह्निबीजमन्त्रस्य कश्यप ऋषिः जगती छन्दः जातवेदाऽग्निर्देवता आग्नेयभूतशुद्ध्यर्थे जपे विनियोगः–नाभ्यां आरम्य हृदयपर्यन्तं त्रिकोणम् अग्निमण्डलं रक्तवर्णं सबिन्दुकं रँबीजसहितं ध्यायेत् ॥ ॐ वायुबीजमन्त्रस्य किष्किन्ध ऋषिः बृहती छन्दः वायुर्देवता वायव्याख्यभूतशुद्ध्यर्थे जपे विनियोगः—हृदयादारभ्य भ्रूमध्यपर्यन्तं वायुमण्डलं वर्तुलं धूम्रवर्णं सबिन्दुकं यँबीजसहितं ध्यायेत् ॥ ॐ आकाशबीजमन्त्रस्य रुद्र ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः परमात्मा देवता आकाशाख्यभूतशुद्ध्यर्थे जपे विनियोगः–भ्रूमध्यादारभ्य ललाटान्तपर्यन्तम् आकाशमण्डलं नीरूपम् अवर्णं सबिन्दुकं हँबीजसहितं ध्यायेत् ॥ ततो वायुं सम्यङ् निरुध्य पृथिवीम् अप्सु लयं नयेत्[६]—ॐ लँ ह्रौं ह्रुं फट् भुवं जले प्रविलापयामि। ततो जलम् अग्नौ

---

१ परशुराममहाकल्पसद्धतौ पादादिजानुपर्यन्तं भूतत्वं तत्र मण्डलम् । पार्थिवं चतुरस्रं तल्लँबीजं वज्रलाञ्छितम् । पीतवर्णं च तद् ध्यात्वा बीजोच्छ्रितेन वा पुनः । भावितेन च तेनैव पृथिवीं प्राग्विशोधयेत् ॥ २ जान्वादिनाभिपर्यन्तम् आपस्तत्त्वं द्वितीयकम् । वारुणं मण्डलं तत्र धनुर्वद्बिन्दुलाञ्छितम् ॥ वं बीजं शुक्लवर्णं तद्ध्यात्वाऽपस्तेन शोधयेत् ॥ ३ नाभिहृदयपर्यन्तं तेजस्तत्त्वं तृतीयकम् । मण्डलं वह्निसंज्ञं तत्त्रिकोणं पद्मलाञ्छितम् ॥ रंबीजं रक्तवर्णं तद्ध्यात्वा तेजस्तु शोधयेत् ॥ ४ हृदयाद्भ्रुवोरन्तं वायुतत्त्वं चतुर्थकम् । वायव्यं मण्डलं तत्र वर्तुलं स्वस्तिकान्वितम् धूम्रवर्णं च यं बीजं ध्यात्वा वायुं विशोधयेत् ॥ ५ भ्रूमध्याद्ब्रह्मरन्ध्रान्तं व्योमतत्त्वं च पञ्चमम् ॥ हंबीजं निर्मलं ध्यात्वा तेनैव व्योम शोधयेत् ॥ ६ एवंभूतानि सञ्चिन्त्य प्रत्येकं प्रविलापयेत् । भुवं जले जलं वह्नौ वह्निं वायौ नभस्यमुम् ॥ विलाप्य खमहंकारे महत्तत्त्वेऽप्यहंकृतम् । महान्तं प्रकृतौ मायामात्मनि प्रविलापयेत् ॥

संहरेत्-ॐ वँ ह्रीँ ह्रः फट् जलं शुचौ प्रविलापयामि । ततः अग्निं वायौ संहरेत्-ॐरँ ह्नँ ह्रः फट् अग्निं वायौ प्रविलापयामि । वायुम् आकाशे लयं नयेत् ॐयँ ह्नैः ह्नुः ह्रः फट् वायुम् आकाशे प्रविलापयामि । आकाशम् अहंकारे संहरेत्–ॐ हँ ह्नौं ह्रः फट् आकाशम् अहंकारे प्रविलापयामि ॥ ॐअहंकारं प्रकृतौ प्रविलापयामि । ॐप्रकृतिं परमात्मनि प्रविलापयामि । ततः शिरसि कर्णिकाकेसरैर्युते अष्टदले पद्मे चन्द्रसन्निभं चित्प्रकाशितं शिवं स्मृत्वा शुद्धचिन्मयो भूत्वा वामकुक्षिस्थितं कृष्णम् अङ्गुष्ठपरिमाणकं विप्रहत्याशिरोयुक्तं कनकस्तेयबाहुकं मदिरापानहृदयं गुरुतल्पकटीयुतं तत्संयोगिपदद्वन्द्वम् उपपातकरोमकं खड्गचर्मधरं दुष्टम् अधोवक्त्रं दुःसहम् पापपुरुषं चिन्तयेत् । यँइतिवायुबीजं नाभौ एकादशवारं स्मृत्वा एनं पापपूरुषं शोषयेत्-ॐयमितिवायुबीजमन्त्रस्य किष्किन्ध ऋषिः बृहती छन्दः वायुर्देवता पापपूरुषशोषणे विनियोगः–नाभिकुहरादुत्थितेन महावायुना ॐ यँ यँ यँ यँ यँ यँ यँ यँ यँ यँ यँ (जप्त्वा) ॐपापपूरुषं शोषयामि ॥ ॐरँमितिअग्निबीजमन्त्रस्य कश्यप ऋषिः जगती छन्दः जातवेदोऽग्निर्देवता पापपूरुषदहने विनियोगः–मूलाधारादुत्थितेन अग्निकलापेन नवरन्ध्रप्रविष्टेन ॐ रँ रँ रँ रँ रँ रँ रँ रँ रँ रँ रँ (जप्त्वा) ॐपापपूरुषं सन्दहामि ॥ एवं दग्ध्वा तद्दक्षिणया नासिकया विरेच्य ॐवँमितिवरुणबीजमन्त्रस्य हिर-

---

१ नाभौ स्मृत्वा मरुद्बीजं यमित्यक्षरसंयुतम् । कृष्णं षट्कोणमध्यस्थं शोषयेत्तत्र वायुना ॥ २ रमित्यक्षरसंयुक्तं त्रिकोणं वह्निमण्डलम् । दशवारं जपित्वा तु निर्दहेत्पापपूरुषम् ॥ अत्र यद्यपि यमिति बीजं षोडशवारं रमिति चतुःषष्टिवारं वमिति द्वात्रिंशद्वारं जप्त्वा शोषणादि विधिर्दर्शितस्तथाप्यत्र प्रयोगे काशिदीक्षितकृतपद्धत्यनुसारेण सर्वाण्यपि बीजान्येकादशवारं जप्त्वा शोषणादिविधिरुक्तः ॥ ३ ततो हृत्पद्ममध्यस्थाच्चन्द्रबिम्बात्परिस्रुतात् । वमित्यक्षरसंयुक्तामिनामृतदृष्टिभिः । सुधाबीजेन देहोत्थं भस्म सम्प्लावयेत्सुधीः ॥

ण्यगर्भ ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः वरुणो देवता जीवसन्दोहाप्लावने विनियोगः-मूलाधारात्सुषुम्णामार्गेण कुण्डलिनीं सच्चिदानन्दमयीं द्वादशान्तं नीत्वा तत्संसर्गाद्द्रुतचन्द्रमण्डलाद्विगलितसुधाधारापूरेण ॐ वँ वँ वँ वँ वँ वँ वँ वँ वँ वँ वँ (इत्यमृतबीजं जप्त्वा) ॐजीवसन्दोहम् आप्लावयामि ॥ ॐलंमिति पृथिवीबीजमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः गायत्री छन्दः पृथिवी देवता भस्मपिण्डीकरणे विनियोगः-ॐ लँ लँ लँ लँ लँ लँ लँ लँ लँ लँ लँ (जप्त्वा) ॐअमृतपिण्डाच्छरीरमुत्पादयामि ॥ ॐहंमितिआकाशबीजमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः गायत्री छन्दः परमात्मा देवता अवकाशीकरणे विनियोगः-ॐ हँ हँ हँ हँ हँ हँ हँ हँ हँ हँ हँ (जप्त्वा) ॐसावकाशं करोमि ॥ ततः सृष्टिमार्गेण ब्रह्मणः सकाशादाकाशादीनि भूतानि उत्पादयेत् । ब्रह्मणः प्रकृतिः प्रकृतेर्महत् महतोऽहङ्कारः अहङ्कारादाकाशः आकाशाद्वायुः वायोरग्निः अग्नेरापः अद्भ्यः पृथिवी पृथिव्या ओषधयः ओषधीभ्योऽन्नम् अन्नाद्रेतः रेतसः पुरुषः स वा एष पुरुषोऽन्नरसमयः ॐहंसः सोहम् । ब्रह्मण्येकभूतं जीवं स्वहृदयाम्बुजे संस्थाप्य कुण्डलीं मूलाधारगतां संस्मरेत् ॥ इति भूतशुद्धिः ॥

॥ ३८ ॥ अथ प्राणप्रतिष्ठाप्रयोगः ॥

अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्माविष्णुमहेश्वरा ऋषयः ऋग्यजुःसामानि छन्दांसि जगत्स्रष्टिः प्राणशक्तिर्देवता आँ बीजं ह्रीं शक्तिः क्रों कीलकं स्वशरीरे प्राणप्रतिष्ठापने विनियोगः-ॐब्रह्मविष्णुमहेश्वर

१ भूबीजेन घनीकृत्य भस्म तत्कनकाण्डवत् ॥ २ हंबीजं निर्मलं जप्त्वा सावकाशं कारयेत् । ३ कुण्डलीं जीवमादाय परसङ्गात्सुधामयीम् । संस्थाप्य हृदयाम्भोजे मूलाधारगतां स्मरेत् ॥

ऋषिभ्यो नमः शिरसि । ऋग्यजुःसामच्छन्दोभ्यो नमः मुखे । जगत्स्रष्ट्र्यै प्राणशक्त्यै नमः हृदये । आँबीजाय नमः लिङ्गे । ह्रींशक्तये नमः पादयोः । क्रों कीलकाय नमः सर्वाङ्गेषु । अथकरन्यासाः—ॐ आँ ह्रीं क्रों अँ कँ खँ गँ घँ ङँ पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशात्मने आँ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ आँ ह्रीं क्रों इँ चँ छँ जँ झँ ञँ शब्दस्पर्शरूपरसगन्धात्मने ईँ तर्जनीभ्यां नमः। ॐ आँ ह्रीं क्रों उँ टँ ठँ डँ ढँ णँ श्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वाघ्राणात्मने ऊँ मध्यमाभ्यां नमः। ॐ आँ ह्रीं क्रों एँ तँ थँ दँ धँ नँ वाक्पाणिपादपायूपस्थात्मने ऐं अनामिकाभ्यां नमः। ॐ आँ ह्रीं क्रों ओँ पँ फँ बँ भँ मँ वक्तव्यादानगमनविसर्गानन्दात्मने औँ कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ आँ ह्रीं क्रों अँ यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ ळँ क्षँ मनोबुद्ध्यहङ्कारचित्तविज्ञानात्मने अः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। अथ हृदयादिन्यासाः—ॐ आँ ह्रीं क्रों अँ कँ खँ गँ घँ ङँ पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशात्मने आँ हृदयाय नमः। ॐ आँ ह्रीं क्रों इँ चँ छँ जँ झँ ञँ शब्दस्पर्शरूपरसगन्धात्मने ईँ शिरसे स्वाहा। ॐ आँ ह्रीं क्रों उँ टँ ठँ डँ ढँ णँ श्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वाघ्राणात्मने ऊँ शिखायै वषट्। ॐ आँ ह्रीं क्रों एँ तँ थँ दँ धँ नँ वाक्पाणिपादपायूपस्थात्मने ऐं कवचाय हुम्। ॐ आँ ह्रीं क्रों ओँ पँ फँ बँ भँ मँ वक्तव्यादानगमनविसर्गानन्दात्मने औँ नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ आँ ह्रीं क्रों अँ यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ ळँ क्षँ मनोबुद्ध्यहङ्कारचित्तविज्ञानात्मने अः अस्त्राय फट्। आँ इति पाशबीजं नाभेरारभ्य पादान्तं न्यसामि। ह्रीं इति शक्तिबीजं हृदया-

दारभ्य नाभ्यन्तं न्यसामि । क्रों इति अङ्कुशबीजं मस्तकादारभ्य हृद-यान्तं न्यसामि । ॐ यँ त्वगात्मने हृदयाय नमः । ॐ रँ असृगात्मने दोर्मूलाभ्यां नमः । ॐ लँ मांसात्मने ग्रीवायै नमः । ॐ वँ मेद आत्मने कुक्षिभ्यां नमः। ॐ शँ अस्थ्यात्मने दक्षिणकराय नमः। ॐ षँ मज्जा-त्मने वामकराय नमः । ॐ सँ शुक्रात्मने दक्षिणपादाय नमः । ॐ हँ प्रा-णात्मने वामपादाय नमः। ॐ ळँ सत्त्वात्मने जठराय नमः । ॐ क्षँ बी-जात्मने आस्याय नमः । ध्यानम्-रक्ताम्भोधिस्थपोतोल्लसदरुणसरो-जाधिरूढा कराब्जैः पाशं कोदण्डमिक्षूद्भवमथ गुणमप्यङ्कुशं पञ्चबाणान् । बिभ्राणा सृक्कपालं त्रिनयनलसिता पीनवक्षोरुहाढ्या देवी बालार्कवर्णा भवतु सुखकरी प्राणशक्तिः परा नः ॥ हृदये हस्तं निधाय-ॐ आँ ह्रीं क्रों यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ ळँ क्षँ हंसः सोहं मम प्राणा इह प्राणाः। ॐ आँ ह्रीं क्रों यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ ळँ क्षँ हंसः सोहं मम जीव इह स्थितः। ॐ आँ ह्रीं क्रों यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ ळँ क्षँ हंसः सोहं मम सर्वेन्द्रियाणि इहायान्तु। ॐ आँ ह्रीं क्रों यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ ळँ क्षँ हंसः सोहं मम वाङ्मनस्त्वक्चक्षुः-श्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राणाःइहैवागत्य स्वस्तये सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा। षोडश-वारं ॐ इति प्रणवं जपन् षोडशसंस्कारान्भावयेत्-ॐ गर्भाधानं सम्पाद-यामि । ॐ पुंसवनं सम्पादयामि । ॐ सीमन्तोन्नयनं सं० । ॐ जात-कर्म सं० । ॐ नामकरणं सम्पादयामि । ॐ निष्क्रमणं सं० । ॐ अन्न-प्राशनं सं० । ॐ चूडाकरणं सं० । ॐ उपनयनं सं० । ॐ वेदव्रतचतु-ष्टयं सं० । ॐ गोदानं सम्पादयामि । ॐ व्रतविसर्गं सं० । ॐ विवाहं सम्पादयामि ॥ १६ ॥ इति प्राणप्रतिष्ठाप्रयोगः ॥

॥ २९ ॥ अथ अन्तर्मातृकान्यासप्रयोगः ॥

अस्य श्रीअन्तर्मातृकान्यासस्य ब्रह्मा ऋषिः दैवी गायत्रीच्छन्दः अन्तर्मातृका सरस्वती देवता हलो बीजानि स्वराः शक्तयः बिन्दवः कीलकम् अनुष्ठीयमानश्रीपूजनपूर्वकरुद्राभिषेकाङ्गत्वेन न्यासे विनियोगः ॥ ऋष्यादिन्यासाः—ॐ ब्रह्मणे नमः शिरसि । ॐ गायत्रीच्छन्दसे नमो मुखे । ॐअन्तर्मातृकासरस्वतीदेवतायै नमो हृदि । ॐहल्बीजेभ्यो नमः गुह्ये । ॐस्वरशक्तिभ्यो नमः पादयोः । ॐबिन्दुकीलकाय नमः सर्वाङ्गे ॥ प्राणायामैत्रयं कृत्वा करन्यासाः— ॐ अँ कँ खँ गँ घँ ङँ आँ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । ॐ इँ चँ छँ जँ झँ ञँ ईँ तर्जनीभ्यां नमः । ॐ उँ टँ ठँ डँ ढँ णँ ऊँ मध्यमाभ्यां नमः । ॐ एँ तँ थँ दँ धँ नँ ऐँ अनामिकाभ्यां नमः । ॐ ओँ पँ फँ बँ भँ मँ औँ कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ अँ यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ ळँ क्षँ अः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ हृदयादिषडङ्गन्यासाः—ॐ अँ कँ खँ गँ घँ ङँ आँ हृदयाय नमः । ॐ इँ चँ छँ जँ झँ ञँ ईँ शिरसे स्वाहा । ॐ उँ टँ ठँ डँ ढँ णँ ऊँ शिखायै वषट् । ॐ एँ तँ थँ दँ धँ नँ ऐँ कवचाय हुम् । ॐ ओँ पँ फँ बँ भँ मँ औँ नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ अँ यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ ळँ क्षँ अः अस्त्राय फट् । ध्यानम्—पञ्चाशल्लिपिभिर्विभक्तमुखदोर्हृत्पद्मवक्षःस्थलां भास्वन्मौलिनिबद्धचन्द्रशकलामापीनतुङ्गस्तनीम् । मुद्रामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं विद्यां च हस्ताम्बुजैर्बिभ्राणां विशदप्रभां

१ सोऽहमिति ॥ २ उच्चार्यैवमृषिच्छन्दोदेवताबीजशक्तय । शिरोवदनहृद्गुह्यपादेषु क्रमतो न्यसेत् ॥ ३ इडया पूरयेत्प्राणान्स्वरैर्वर्णैश्च कुम्भयेत् । रेचयेत्पिङ्गलया पुन ॥ तथैव पूरण वायो कुम्भक रेचन पुन । इडया स्यात्ततो द्वाभ्यां पूरणादित्रय पुन ॥ प्राणायामत्रयं कृत्वा न्यासान्समारभेत् ॥

त्रिनयनां वाग्देवतामाश्रये ॥ कण्ठस्थषोडशदलपद्मे अकारादिषोडश-स्वरान्न्यसेत् ॐ अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं एं ऐं ओं औं अं अः। हृदयस्थे द्वादशदलपद्मे कादिठान्तान्न्यसेत्—ॐ कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं। नाभौ दशदलपद्मे डादिफान्तान्न्यसेत्-ॐ डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं। तदधः लिङ्गे षड्दले बादिलान्तान्न्यसेत्-ॐ बं भं मं यं रं लं। आधारे गुदे चतुर्दले वादिसान्तान्न्यसेत्—ॐ वं शं षं सं। ललाटे द्विदले ॐ हं क्षं इति द्वौ वर्णौ विन्यसेत्। ध्यानम्—आधारे लिङ्गनाभौ प्रकटितहृदये तालुमूले ललाटे द्वे पत्रे षोडशारे द्विदशदशदले द्वादशार्द्धे चतुष्के। वासान्ते बालमध्ये डफ-कठसहिते कण्ठदेशे स्वराणां हंक्षं तत्त्वार्थयुक्तं सकलदलगतं वर्णरूपं नमामि ॥ बन्धूकाभां त्रिनेत्रां पृथुजघनलसत्कुक्षिमुद्रक्तवस्त्रां पीनो-त्तुङ्गप्रवृद्धस्तनजघनभरां यौवनारम्भरूढाम्। सर्वालङ्कारयुक्तां सरसि-जवदनामिन्दुसङ्क्रान्तमौलिं शम्वां पाशाङ्कुशेष्टाभयवरदकरामम्बिकां तां नमामि ॥ वर्णाङ्गवर्णमालाङ्गीं भारतीं भाललोचनाम्। रत्नसिंहा-सनां देवीं वन्देऽहं सिद्धमातृकाम् ॥ इति अन्तर्मातृकान्यासप्रयोगः ॥

॥४०॥ अथ बहिर्मातृकान्यासप्रयोगः ॥

अस्य श्रीबहिर्मातृकान्यासस्य ब्रह्मा ऋषिः देवी गायत्रीच्छन्दः बहिर्मातृका सरस्वती देवता हलो बीजानि स्वराः शक्तयः बिन्दवः कीलकम् अनुष्ठीयमानश्रीपूजनपूर्वकरुद्राभिषेकाङ्गत्वेन न्यासे विनि-योगः। ऋष्यादिन्यासाः-ॐब्रह्मणे नमः शिरसि।ॐगायत्रीच्छन्दसे नमः मुखे। ॐबहिर्मातृकासरस्वतीदेवतायै नमो हृदि। ॐहल्बीजेभ्यो नमः

गुह्ये । ॐ स्वरशक्तिभ्यो नमः पादयोः । ॐ अं नमः मौलौ । ॐ आं नमः मुखे । ॐ इं नमः दक्षिणनेत्रे । ॐ ईं नमः वामनेत्रे । ॐ उं नमः दक्षिणकर्णे । ॐ ऊं नमः वामकर्णे । ॐ ऋं नमः दक्षिणनासापुटे । ॐ ॠं नमः वामनासापुटे । ॐ लृं नमः दक्षिणकपोले । ॐ ॡं नमः वामकपोले । ॐ एं नमः ऊर्ध्वदन्तपङ्क्तौ । ॐ ऐं नमः अधोदन्तपङ्क्तौ । ॐ ओं नमः ऊर्ध्वोष्ठे । ॐ औं नमः अधरोष्ठे । ॐ अं नमः जिह्वामूले । ॐ अः नमः ग्रीवायाम् ॥ ॐ कं नमः दक्षिणबाहुमूले । ॐ खं नमः दक्षिणकूर्परे । ॐ गं नमः दक्षिणमणिबन्धे । ॐ घं नमः दक्षिणकराङ्गुलिमूले । ङं नमः दक्षिणकराङ्गुल्यग्रे । ॐ चं नमः वामबाहुमूले । ॐ छं नमः वामकूर्परे । ॐ जं नमः वाममणिबन्धे । ॐ झं नमः वामाङ्गुलिमूले । ॐ ञं नमः वामकराङ्गुल्यग्रे । ॐ टं नमः दक्षिणपादमूले । ॐ ठं नमः दक्षिणजानुनि । ॐ डं नमः दक्षिणगुल्फे । ॐ ढं नमः दक्षिणपादाङ्गुलिमूले । ॐ णं नमः दक्षिणपादाङ्गुल्यग्रे । ॐ तं नमः वामपादमूले । ॐ थं नमः वामजानुनि । ॐ दं नमः वामगुल्फे । ॐ धं नमः वामपादाङ्गुलिमूले । ॐ नं नमः वामपादाङ्गुल्यग्रे । ॐ पं नमः दक्षिणकुक्षौ । ॐ फं नमः वामकुक्षौ । ॐ बं नमः पृष्ठे । ॐ भं नमः नाभौ । ॐ मं नमः उदरे । ॐ यं त्वगात्मने नमः हृदि ।

---

१ आद्यो मौलिरथास्यो मुखमिह नेत्रे च कर्णयुक् नासावशपुटे क्रमात् तदनुजौ वर्णौ कपोलद्वये । दन्तावोष्ठमधस्तयोश्च युगल सन्ध्यक्षराणि क्रमाज्जिह्वामूलमुदग्रबिन्दुरपरो ग्रीवा विसर्गीश्वरः ॥ २ कादिर्दक्षिणतो भुजस्तदपरो वर्गश्च वामो भुजश्यदिस्तादिरनुक्रमेण चरणौ कुक्षिद्वये वै परौ । मध्ये पृष्ठमतोऽथ नाभिहृदरं यादित्रय धातवो याद्या सप्त समीरणाथ गमया हृत्पान्तास्तु न्यसेत् ॥ त्वगसृङ्मांसमेदोऽस्थिमज्जाशुक्राणि धातवः । प्राणाद्यास्त्वात्मपरमात्मबोधिना स्मरव्याप्तवी ॥ ३ ॥ यादयो हृदयेऽसेऽप ककुद्यंसे हृदादि च । करपादयुगे न्यसेद्दानमथोऽन्यथा । लिपिवर्णोदितान्ये तु देहिनो वर्तमानत ॥

ॐ रँ असृगात्मने नमः दक्षिणांसे। ॐ लँ मांसात्मने नमः ककुदि।ॐ वँ मेदआत्मने नमः वामांसे। ॐ शँ अस्थ्यात्मने नमः हृदादिदक्षिणहस्तान्तम्। ॐ षँ मज्जात्मने नमः हृदादिवामहस्तान्तम्। ॐ सँ शुक्रात्मने नमः हृदादिदक्षिणपादान्तम्। ॐ हँ प्राणात्मने नमः हृदादिवामपादान्तम्। ॐ ळँ शक्त्यात्मने नमः उदरे। ॐ क्षँ परमात्मने नमः मुखे॥ ध्यानम्–पञ्चाशद्वर्णभेदैर्विहितवदनदोःपादहृत्कुक्षिवक्षोदेशां भास्वत्कपर्दाकलितशशिकलामिन्दुकुन्दावदाताम्। अक्षस्रक्कुम्भचिन्तालिखितवरकरां त्रीक्षणां पद्मसंस्थामच्छाकल्पामतुच्छस्तनजघनभरां भारतीं तां नमामि॥ इतिवहिर्मातृकान्यासप्रयोगः॥

॥ ४१ ॥ अथ महान्यासप्रयोगः।

छन्दःपुरुषन्यासः–ॐतिर्यग्बिलाय चमसायोर्ध्वबुध्नाय छन्दःपुरुषाय नमः शिरसि। ॐगौतमभरद्वाजाभ्यां नमः नेत्रयोः। ॐविश्वामित्रजमदग्निभ्यां नमः श्रोत्रयोः। ॐवसिष्ठकश्यपाभ्यां नमः नासापुटयोः। ॐ अत्रये नमः वाचि। ॐगायत्र्यै छन्दसे नमः अग्नये नमः शिरसि। ॐ उष्णिहे छन्दसे नमः सवित्रे नमः ग्रीवायाम्। ॐबृहत्यै छन्दसे नमः बृहस्पतये नमः अनूके[१]। ॐबृहद्रथन्तराभ्यां नमः द्यावापृथिवीभ्यां नमः बाह्वोः। ॐत्रिष्टुभे छन्दसे नमः इन्द्राय नमः मध्ये[२]। ॐजगत्यै छन्दसे नमः आदित्याय नमः श्रोण्योः। ॐअतिच्छन्दसे नमः प्रजापतये नमः लिङ्गे। ॐ यज्ञायज्ञियाय छन्दसे नमः वैश्वानराय नमः पायौ। ॐअनुष्टुभे छन्दसे नमः विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः ऊर्वोः। ॐ पङ्क्त्यै छन्दसे नमः मरुद्भ्यो नमः अष्ठीवतोः[३]। ॐद्विपदायै

---

१ एते न्यासा अनादेशे सर्वेऽप्यङ्गुष्ठानामिकाभ्यां कार्याः आदेशे तु यथादेशम्॥ २ अनूकं पृष्ठवंशम्॥ ३ मध्यमुदरम्॥ ४ अष्ठीवान् जानु॥

छन्दसे नमः विष्णवे नमः पादयोः । ॐ विच्छन्दसे नमः वायवे नमः प्राणेषु । ॐ न्यूनाक्षराय छन्दसे नमः अद्भ्यो नमः हस्तद्वयविपर्यासेन मस्तकादिपादान्तं सर्वाङ्गेषु । इति सर्वानुक्रमसूत्रविहितश्छन्दःपुरुषन्यासः ॥ अथ बृहत्पराशरस्मृतिविहितः पञ्चाङ्गरुद्राणां न्यासः प्रथमः-मनोजूतिरित्यस्य आङ्गिरसो बृहस्पतिर्ऋषिः यजुश्छन्दः विश्वेदेवा देवता हृदये न्यासे विनियोगः । हृदयं स्पृष्ट्वा-ॐमनोजूति० ॥ १३/२ ॥ हृदयाय नमः ॥ अबोध्यग्निरित्यस्य बुधगविष्ठिरावृषी त्रिष्टुप्छन्दः अग्निर्देवता शिरसि न्यासे विनियोगः । शिरः स्पृष्ट्वा-ॐअबोध्यग्निः समिधा जनानां प्रति धेनुमिवायतीमुषासम् । यह्वाऽइव प्रवयामुज्जिहानाः प्रभानवः सिस्रते नाकमच्छ ॥ ३४/१५ ॥ शिरसे स्वाहा ॥ मूर्द्धानमित्यस्य भरद्वाज ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः वैश्वानरोऽग्निर्देवता शिखायां न्यासे विनियोगः ॥ शिखां स्पृष्ट्वा-ॐमूर्द्धानन्दिवो० ॥ २४/७ ॥ शिखायै वषट् ॥ मर्म्माणित इत्यस्य विवस्वानृषिः त्रिष्टुप्छन्दः लिङ्गोक्ता देवताः कवचन्यासे विनियोगः-ॐमर्म्माणितेवर्म्मणा० ॥ ४९/१७ ॥ कवचाय हुम् । मानस्तोक इत्यस्य कुत्स ऋषिः जगती छन्दः एको रुद्रो देवता अस्त्रन्यासे विनियोगः । ॐमानस्तोके० ॥ १६/१६ ॥ अस्त्राय फट् ॥ इति पञ्चाङ्गन्यासः प्रथमः ॥

अथ द्वितीयो न्यासः-यातेरुद्रेत्यस्य परमेष्ठी ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः एको रुद्रो देवता शिखायां न्यासे विनियोगः-ॐयातेरुद्रशिवा० ॥ २/१६ ॥

---

१ प्राणवायोः सञ्चारस्थानं नासिका प्राणशब्देनोच्यते ॥ २ वक्ष्यमाणेषु सर्वेष्वङ्गन्यासेषु तत्तदङ्गं स्पृष्ट्वा सर्वे न्यासमन्त्राः सस्वरा एव न्यस्तव्याः ॥ ३ जूतिर्ज्जुषतामित्यस्य स्थाने ज्योतिर्ज्जुषतामित्येवं काण्वपाठः। एवं न्यासपूजादौ प्रतीकेन विनियुक्तमन्त्राः स्वशाखासमधीतपाठाः पठनीया न पुनर्माध्यन्दिनशाखासमधीतपाठाः इति तेषां विशेषः ।

शिखायाम् ॥ अस्मिन्महत्यर्णव इत्यस्य परमेष्ठी ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः बहवो रुद्रा देवताः शिरसि न्यासे विनियोगः—ॐअस्मिन्महत्यर्णवे॰ ॥५५/१६॥ शिरसि ॥ असङ्ख्याता इत्यस्य परमेष्ठी ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः बहवो रुद्रा देवता ललाटे न्यासे विनियोगः—ॐअसंख्याता॰ ॥५४/१६॥ ललाटे ॥ त्र्यम्बकमितिद्वयोराद्यस्य वसिष्ठ ऋषिः द्वितीयस्य प्रजापतिर्ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः त्र्यम्बको रुद्रो देवता नेत्रयोर्न्यासे विनियोगः—ॐत्र्यम्बकं॰ ॥ त्र्यम्बकंयजामहेसुगन्धिम्पति॰ ॥६०/३॥ नेत्रयोः ॥ मानस्तोक इत्यस्य कुत्स ऋषिः जगती छन्दः एको रुद्रो देवता नासिकायां न्यासे विनियोगः—ॐ मानस्तोके॰ ॥१६/१६॥ नासिकायाम् ॥ अवतत्येत्यस्य परमेष्ठी ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः एको रुद्रो देवता मुखे न्यासे विनियोगः—ॐअवतत्यधनुष्ट्वꣳ॰॥१३/१६॥ मुखे । नीलग्रीवा इति द्वयोः परमेष्ठी ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः बहवो रुद्रा देवताः कण्ठे न्यासे विनियोगः ॐ नीलग्रीवाः शितिकण्ठादिवꣳ॰ ॥ ५६/१६ ॥ ॐनीलग्रीवाः शितिकण्ठाः शर्वाऽ॰ ॥ ५७/१६ ॥ कण्ठे ॥ नमस्तऽआयुधायेत्यस्य परमेष्ठी ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः एको रुद्रो देवता प्रकोष्ठयोर्न्यासे विनियोगः—ॐनमस्तऽआयुधायाना॰ ॥ १४/१६ ॥ प्रकोष्ठयोः ॥ ये तीर्थानीत्यस्य परमेष्ठी ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः बहवो रुद्रा देवताः हस्तयोर्न्यासे विनियोगः—ॐयेतीर्थानि॰ ॥६१/१६॥ हस्तयोः ॥ नमो वः किरिकेभ्य इत्यस्य परमेष्ठी ऋषिः सामोष्णिक् यजुरुष्णिक् यजुरुष्णिक् यजुरुष्णिक् दैवी जगती वा छन्दांसि किरिकादयो मन्त्रवर्णागता अन्यतरतो नमस्कारा बहवो रुद्रा देवताः हृदये न्यासे

---

१ मणिबन्धादुपरि कूर्परादधोभागः प्रकोष्ठः ॥

विनियोगः–ॐनमोवः॑किरिकेभ्यो० ॥ ४६/१६ ॥ हृदये ॥ नमो हिरण्यबाहव इत्यस्य परमेष्ठी ऋषिः अत्रैकादशाक्षराणां यजुस्त्रिष्टुप् अष्टाक्षराणां यजुरनुष्टुप् दशाक्षरस्य यजुः पङ्क्तिरिति छन्दांसि हिरण्यबाह्वादयो मन्त्रवर्णावगता उभयतो नमस्कारा बहवो रुद्रा देवता नाभौ न्यासे विनियोगः–ॐनमो॒हिर॑ण्यबाहवे० ॥ १७/१६ ॥ नाभौ ॥ इमारुद्रायेत्यस्य कुत्सऋषिः जगती छन्दः एको रुद्रो देवता गुह्ये न्यासे विनियोगः–ॐइ॒मारु॒द्राय॑त॒वसे॑० ॥ ४८/१६ ॥ गुह्ये ॥ मानोमहान्तमित्यस्य कुत्स ऋषिः जगती छन्दः एको रुद्रो देवता ऊर्वोर्न्यासे विनियोगः–ॐमानो॑म॒हान्त॑मु॒तमानो॑ऽ० ॥ १५/१६ ॥ ऊर्वोः । एषत इत्यस्य प्रजापतिर्ऋषिः सामपङ्क्तिर्यजुर्जगतीछन्दांसि रुद्रो देवता जान्वोर्न्यासे विनियोगः–ॐए॒षते॑रुद्रभा॒ग?० ॥ ५७/३ ॥ जान्वोः ॥ अवरुद्रमित्यस्य प्रजापतिर्ऋषिः पङ्क्तिश्छन्दः रुद्रो देवता जङ्घयोर्न्यासे विनियोगः–ॐअव॑रु॒द्रम॑दीम॒ह्य०। ॥ ५८/३ ॥ जङ्घयोः ॥ अद्ध्यवोचदित्यस्य परमेष्ठी ऋषिः पङ्क्तिश्छन्दः एको रुद्रो देवता कवचन्यासे विनियोगः–ॐअद्ध्य॑वोचद्० ॥ ५/१६ ॥ कवचाय हुम् । नमोबिल्मिनइत्यस्य परमेष्ठी ऋषिः षडक्षराणां यजुर्गायत्री पञ्चाक्षरयोर्दैवीपङ्क्तिः सप्ताक्षरस्य यजुरुष्णिक् छन्दांसि बिल्मिनादयो मन्त्रवर्णावगता अन्यतरतो नमस्कारा बहवो रुद्रा देवता उपकवचन्यासे विनियोगः–ॐनमो॑बि॒ल्मिने॑० ॥ ३५/१६ ॥ उपकवचम् ॥ नमोस्तुनीलग्रीवायेत्यस्य परमेष्ठी ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः एको रुद्रो देवता तृतीयनेत्रन्यासे विनियोगः–ॐनमो॑स्तु॒नील॑ग्रीवाय० ॥ ८/१६ ॥ मुष्टितो विमुक्तया मध्यमया तृतीयनेत्रे ॥ प्रमुञ्चेत्यस्य परमेष्ठी ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः एको

१ जानुगुल्फयोरन्तरालं जङ्घा ॥ २ कवचादिशीर्षमुपकवचमिति महार्णवकारानुसारिणः। शिखास्थानं पदनिबन्धः। कवचोपरि कवचमुपकवचमित्यपरे ॥

रुद्रो देवता अस्त्रन्यासे विनियोगः—ॐ प्रमुञ्चधन्वं० ॥ ६/१६ ॥ अस्त्राय फट् ॥ यऽएतावन्तश्चेत्यस्य परमेष्ठी ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः बहवो रुद्रा देवताः दिग्बन्धने विनियोगः- ॐ यऽएतावन्तश्च ॥ ६३/१६ ॥ दिक्षु विदिक्षु च परस्परं तर्जन्यङ्गुष्ठाग्रस्फोटनेन दिग्बन्धः ॥ इति शिखाद्यस्त्रान्तो दिग्बन्धसहित एकोनविंशत्यङ्गन्यासो द्वितीयः ॥

अथ तृतीयो न्यासः—ॐनमो भगवते रुद्रायेति दशाक्षरमन्त्रस्य प्रजापतिर्ऋषिः विराट् छन्दः श्रीरुद्रो देवता न्यासे विनियोगः-ॐनमः मूर्द्धनि । ॐनंनमः नासिकायाम् । ॐमोंनमः ललाटे । ॐभंनमः मुखे । ॐगंनमः कण्ठे । ॐवंनमः हृदये । ॐतेंनमः दक्षिणहस्ते । ॐरुंनमः वामहस्ते । ॐद्रांनमः नाभौ । ॐयं नमः पादयोः ॥ इति दशाक्षरमन्त्रन्यासस्तृतीयः ॥

अथ चतुर्थो न्यासः—त्रातारमित्यस्य गर्ग ऋषिः त्रिष्टुप् छन्दः इन्द्रो देवता प्राच्यां सम्पुटीकरणे विनियोगः-ॐत्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रꣳहवेहवेसुहवꣳशूरमिन्द्रम् ॥ ह्वयामिशक्रम्पुरुहूतमिन्द्रꣳस्वस्तिनो मघवा धात्विन्द्रः ॥ २०/५० ॥ प्राच्याम् ॥ १ ॥ त्वन्नोऽअग्नइत्यस्य हिरण्यस्तूप आङ्गिरस ऋषिः जगती छन्दः अग्निर्देवता आग्नेय्यां सम्पुटीकरणेविनियोगः-ॐत्वन्नोऽअग्नेतवदेवपायुभिर्म्मघोनोरक्षतन्वश्चवन्द्य। त्रातातोकस्यतनयेगवामस्यनिमेषꣳ रक्षमाणस्तवव्व्रते ॥ १३/३४ ॥ आग्नेय्याम् ॥ २ ॥ सुगन्नुपन्थामित्यस्य प्रजापतिर्ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः वैवस्वतो देवता दक्षिणस्यां दिशि सम्पुटीकरणे विनियोगः—ॐ सुगन्नुपन्थाम्प्रदि-

---

१ ॥ च मुद्रिताञ्जलिना प्राच्यादिदिक्षु वक्ष्यमाणमन्त्रैः कार्यः ॥ २ यदि सम्पुटीकरणे नमस्कारार्थैकतन्त्रेण कर्तव्यार्थेतदा सम्पुटीकरणे नमस्कारे च विनियोगः इति वक्तव्यम्। एवं प्राच्यां सम्पुटीकरणम् इन्द्राय नमः आग्नेय्यां सम्पुटीकरणम् अग्नये नमः इत्यादिकं वक्तव्यम्॥

शन्नऽएहिज्ज्येतिस्मद्देह्यजरन्नऽआयुः ॥ अपैतुमृत्युरमृतम्मऽआगाद्वैवस्वतोनोऽअभयंकृणोतु ॥ दक्षिणस्याम् ॥३॥ असुन्वन्तमित्यस्य प्रजापतिर्ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः निर्ऋतिर्देवता नैर्ऋत्यां सम्पुटीकरणे विनियोगः-ॐ असुन्वन्तमयजमानमिच्छस्तेनस्येत्यामन्विहितस्करस्य ॥ अन्यमस्मदिच्छसा तऽइत्यानमो देवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु ॥ ॥ नैर्ऋत्याम् ॥ ४ ॥ तत्त्वायामीत्यस्य शुनःशेप ऋषिः त्रिष्टुप् छन्दः वरुणो देवता प्रतीच्यां सम्पुटीकरणे विनियोगः-ॐतत्त्वायामिब्रह्मणा० ॥ ॥ प्रतीच्याम् ॥५॥ आनोनियुद्भिरित्यस्य वासिष्ठ ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः वायुर्देवता वायव्यां सम्पुटीकरणे विनियोगः-ॐआनोनियुद्भिः शतिनीभिरध्वरᳪ सहस्रिणीभिरुपयाहि यज्ञम् ॥ वायोऽअस्मिन्त्सवनेमादयस्वयूयम्पात स्वस्तिभिः सदानः ॥ ॥ वायव्याम् ॥६॥ मपᳪसोमेत्यस्य बन्धुर्ऋषिः गायत्री छन्दः सोमो देवता उदीच्यां सम्पुटीकरणे विनियोगः-ॐ व्रुपᳪसोमव्रते० ॥ ॥ उत्तरस्याम् ॥७॥ तमीशानमित्यस्य गौतम ऋषिः जगती छन्दः ईशानो देवता ऐशान्यां सम्पुटीकरणे विनियोगः-ॐतमीशानञ्जगतस्तस्थुषस्पतिन्धियञ्जिन्वमवसेहूमहेवयम् ॥ पूषानोयथावेदसामसद्वृधेरक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥ ॥ ऐशान्याम् ॥८॥ अस्मे रुद्रा इत्यस्य प्रगाथ ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः ब्रह्मा देवता ऊर्ध्वायां सम्पुटीकरणे विनियोगः-ॐअस्मे रुद्रामेहनापर्वतासोवृत्रहत्त्ये भरहूतौसजोषाः ॥ यᳪशᳪसते स्तुवते धायि पज्रऽइन्द्रज्ज्येष्ठाऽअस्माँ२ऽअवन्तु देवाः ॥ ॥ ऊर्ध्वायाम् ॥९॥ स्योनापृथिवीत्यस्य मेधातिथिर्ऋषिः गायत्रीच्छन्दः अनन्तो देवता अधोदिशि सम्पुटीकरणे विनियोगः-ॐस्योनापृथिविनो० ॥ ॥ अधोदिशि ॥१०॥ त्रातारमित्यस्य गर्ग ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः इन्द्रो देवता प्राच्यां नमस्कारे विनियोगः-

ॐत्रातारमिन्द्रं०॥इन्द्राय नमः॥१॥त्वन्नोऽअग्नइत्यस्य हिरण्यस्तूप आङ्गिरस ऋषिः जगती छन्दः अग्निर्देवता आग्नेय्यां नमस्कारे विनियोगः-ॐत्वन्नोऽअग्ने०॥ अग्नये नमः॥२॥ सुगन्नुपन्थामित्यस्य प्रजापतिर्ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः वैवस्वतो देवता दक्षिणस्यां दिशि नमस्कारे विनियोगः-ॐसुगन्नुपन्थां०॥यमाय नमः॥३॥असुन्वन्तमित्यस्य प्रजापतिर्ऋषिःत्रिष्टुप्छन्दः निर्ऋतिर्देवता नैर्ऋत्यां नमस्कारे विनियोगः-ॐअसुन्वन्त०॥ निर्ऋतये नमः॥४॥ तत्त्वायामीत्यस्य शुनःशेप ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः वरुणो देवता प्रतीच्यां नमस्कारे विनियोगः-ॐतत्त्वायामि०॥वरुणाय नमः॥५॥ आनोनियुद्भिरित्यस्य वसिष्ठ ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः वायुर्देवता वायव्यां नमस्कारे विनियोगः-ॐआनोनियुद्भिः०॥वायवे नमः॥६॥ वयꣳसोमेत्यस्य बन्धुर्ऋषिः गायत्री छन्दः सोमो देवता उदीच्यां नमस्कारे विनियोगः-ॐवयꣳसोम०॥कुबेराय नमः॥७॥ तमीशानमित्यस्य गोतम ऋषिः जगती छन्दः ईशानो देवता ऐशान्यां नमस्कारे विनियोगः-ॐतमीशानं० ॥ ईशानाय नमः॥८॥ अस्मेरुद्रा इत्यस्य मगाथ ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः ब्रह्मा देवता ऊर्ध्वायां नमस्कारे विनियोगः-ॐअस्मेरुद्रा०॥ब्रह्मणे नमः॥९॥ स्योनापृथिवीत्यस्य मेधातिथिर्ऋषिः गायत्री छन्दः अनन्तो देवता अधोदिशि नमस्कारे विनियोगः-ॐस्योनापृथिवि०॥ अनन्ताय नमः॥ इति सम्पुटनमस्काराख्यो न्यासश्चतुर्थः॥

अथ पञ्चमो न्यासः-यज्जाग्रतइतिपडर्चशिवसङ्कल्पसूक्तस्य शिवसङ्कल्प ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः मनो देवता हृदये न्यासे विनियोगः॥ मुष्टिविनिर्गताङ्गुष्ठौ संयुक्तौ कृत्वा हृदये संस्थाप्य ॐयज्जाग्रतो०।येनकर्मा०।

---

१ काण्वशाखायां सैकस्या एव ऋचः शिवसङ्कल्पाख्यायाः समाम्नातत्वात् यज्जाग्रत इत्येकया ऋचा हृदयन्यास इति काण्वानां विशेषः॥

यत्पुरुषेणा०। येनेदम्भू०। यस्मिन्नृच॑०। सुषारथि०। हृदयाय नमः॥सहस्रशीर्षेतिषोडशर्चस्य पुरुषसूक्तस्य नारायणपुरुष ऋषिः आद्यानां पञ्चदशानामनुष्टुप्छन्दः यज्ञेनयज्ञमित्यस्यास्त्रिष्टुप् छन्दः जगद्बीजं पुरुषो देवता शिरसि न्यासे विनियोगः। मुष्टिविनिर्गताङ्गुष्ठौ संयुक्तौ निस्तर्जनीकौ ललाटे कृत्वा ॐसहस्रशीर्षा०। पुरुषऽएवे०। एतावा-नस्य०। त्रिपादूर्द्ध्व०। ततोविरा०। तस्माद्यज्ञा०। तस्माद्यज्ञा०। तस्मादश्वा०। तंयज्ञं०। यत्पुरुषं०। ब्राह्मणोस्य०। चन्द्रमा०। नाभ्या०। यत्पुरुषेण०। सप्तास्या०। यज्ञेनयज्ञ०। शिरसे स्वाहा॥ अद्भ्यःसम्भृत इति षड्चस्य उत्तरनारायणस्य नारायणपुरुष ऋषिः आद्यानां तिसृणां त्रिष्टुप् छन्दः चतुर्थपञ्चमयोरनुष्टुप्छन्दः अन्त्याया-स्त्रिष्टुप्छन्दः आदित्यो देवता शिखायां न्यासे विनियोगः॥ मुष्टिपुटौ करौ कृत्वाऽङ्गुष्ठावधः प्रसक्ताग्रौ कनिष्ठे चोर्ध्वतः प्रसक्ताग्रे कृत्वा शिखां स्पृष्ट्वा ॐअद्भ्यः०। वेदाहमे०। प्रजापति०। योदेवेभ्य०। रुचम्ब्रा०। श्रीश्चते०। शिखायै वषट्॥ आशुःशिशान इति द्वादशर्चस्याप्रतिरथस्य अप्रतिरथ ऋषिः त्रिष्टुप् छन्दः इन्द्रो देवता कवचन्यासे विनियोगः। ॐआशु०। संक्रन्दने०। सइषु०। बृहस्पते०। बलविज्ञा०। गोत्रभिदं०। अभिगोत्राणि०। इन्द्रऽआसा०। इन्द्रस्य०। उद्धर्षय०। अस्माकं०। अमी-षाञ्चित्तं०। कवचाय हुम्। इत्युच्चार्य अङ्गुष्ठौ प्रसक्ताग्रौ तर्जन्यौ च त्रिकोणवत्कृत्वा मूर्द्धि पश्चान्मुखं कृत्वा उभयपार्श्वतः करौ हृदन्तं नय-न्कवचं न्यसेत्॥ विभ्राडित्यस्य विभ्राट् सौर्य ऋषिः जगती छन्दः सूर्यो देवता उदुत्यमितितिसृणां प्रस्कण्व ऋषिः गायत्री छन्दः सूर्यो देवता तम्प्रत्नथेत्यस्य ब्रह्मस्वयंभूर्ऋषिः जगतीछन्दः विश्वेदेवा देवता

अयंवेनइत्यस्य ब्रह्मस्वयंभूर्ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः सोमो देवता चित्रमित्यस्य ब्रह्मस्वयंभूर्ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः सूर्यो देवता आन इत्यस्य अगस्त्य ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः सूर्यो देवता यदद्येत्यस्य श्रुतकक्षसुतकक्षावृषी गायत्री छन्दः सूर्यो देवता तरणिरित्यस्य प्रस्कण्व ऋषिः गायत्री छन्दः सूर्यो देवता तत्सूर्यस्येतिद्वयोः कुत्स ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः सूर्यो देवता वण्महानितिद्वयोर्जमदग्निर्ऋषिः आद्यस्य बृहती छन्दः द्वितीयस्य सतो बृहती छन्दः सूर्यो देवता श्रायन्तऽइवेत्यस्य नृमेध ऋषिः बृहती छन्दः सूर्यो देवता अद्यादेवा इत्यस्य कुत्स ऋषिः त्रिष्टुप् छन्दः सूर्यो देवता आकृष्णेनेत्यस्य हिरण्यस्तूप आङ्गिरस ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः सूर्यो देवता नेत्रत्रयन्यासे विनियोगः—ॐ विभ्राड्० । उदुत्यं० । येनापावक० । दैव्यावध्वर्यू० । तम्प्रत्नथा० । अयंवेन० । चित्रन्देवा० । आनऽइडा० । यदद्य० तरणि० । तत्सूर्यस्य० । तन्मित्रस्य० । वण्महाँ० । बट्सूर्य० । श्रायन्त० । अद्यादेवा० । आकृष्णेन० । नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ नमस्तेरुद्रेतिशतरुद्रियाख्यस्य रौद्राध्यायस्य परमेष्ठी ऋषिः देवा ऋषयः प्रजापतिर्वा ऋषिः नमस्तेरुद्रेत्यस्य गायत्री छन्दः यातेरुद्रेत्यादीनां तिसृणामनुष्टुप् छन्दः अध्यवोचदधिवक्तादितिसृणां पङ्क्तिश्छन्दः नमोऽस्तुनीलग्रीवायेत्यादिसप्तानामनुष्टुप्छन्दः मानोमहान्तमितिद्वयोः कुत्सोऽपि ऋषिः जगती छन्दः सर्वासामेको रुद्रो देवता नमोहिरण्यबाहव इत्यादिद्रापेत्यन्तःमात्त्रनेषु चतुरक्षराणां यजुषां दैवी बृहती छन्दः पञ्चाक्षराणां

---

१ विभ्राडित्यादिकं भुवनानि पश्यन् इत्यन्तं प्रतीकचोदिताभिस्तिसृभिः सह सप्तदशर्चमनुवाकं जप्त्वा नेत्रत्रये न्यसेत् ॥ २ नमो हिरण्यबाहव इत्यादीनां यजुषामनियताक्षरत्वाच्छन्दो नास्तीत्येकेषां मते । पिङ्गलमते ■ एकाक्षरप्रभृत्येकैकाक्षरवृद्ध्या नियताक्षराणां षडधिकशताक्षरपर्यन्तानां यजुषां छन्दोविशेषनियमोऽस्त्येव ॥

दैवी पङ्क्तिः षडक्षराणां दैवी त्रिष्टुप् यजुर्गायत्री वा सप्ताक्षराणां दैवी जगती यजुरुष्णिग्वा अष्टाक्षराणां यजुरनुष्टुप् प्राजापत्या गायत्री वा नवाक्षराणां यजुर्बृहती आसुरी जगती वा दशाक्षराणां यजुःपङ्क्तिः एकादशाक्षराणां यजुस्त्रिष्टुप् आसुरी पङ्क्तिर्वा द्वादशाक्षराणां यजुर्जगती आसुरी बृहती वा प्राजापत्योष्णिग्वा सामगायत्री वा चतुर्दशाक्षरस्य सामोष्णिक् नमोहिरण्यबाहव इत्यादीनां श्वपतिभ्यश्चवो नम इत्यन्तानां यजुषां हिरण्यबाहुः सेनानीर्दिशाम्पतिरित्यादिर्मन्त्रवर्णावगतनामका उभयतो नमस्कारा बहवो रुद्रा देवताःनमो भवायचरुद्रायचेत्यादीनां भक्लिदतेचेत्यन्तानां यजुषां भवादयो मन्त्रलिङ्गावगता अन्यतरतो नमस्कारा बहवो रुद्रा देवताः नम इषुकृद्भ्यो धनुष्कृद्भ्यश्चवो नम इत्यस्य यजुष उभयतो नमस्कारा बहवो रुद्रा देवताः नमोहिरण्यबाहवइत्यादयो नमोस्तिष्ठद्भ्योधावद्भ्यश्चवोनम इत्यन्ता द्वन्द्विनःनमःसभाभ्य इत्यादयो नम आनिर्हतेभ्य इत्यन्ता जातसंख्याः नमोवः किरिकेभ्य इत्यादीनामग्निवायुसूर्यहृदयभूतव्याहृतीनाम् अन्यतरतो नमस्काराः बहवो रुद्रा देवताः द्रापेइत्यस्या उपरिष्टाद्बृहती छन्दः इमारुद्रायेत्यस्याःकुत्सोपि ऋषिः जगती छन्दः शतइत्यस्या अनुष्टुप्छन्दः परिनइतिद्वयोस्त्रिष्टुप्छन्दः विकिरिद्रसहस्राणीतिद्वयोः अनुष्टुप्छन्दः सप्तानामेको रुद्रो देवता असङ्ख्यातेत्यादीनां दशानामनुष्टुप्छन्द बहवो रुद्रा देवताः नमोस्तुरुद्रेभ्य इत्यादीनां त्रयाणां यजुषां धृतिश्छन्दः बहवो रुद्रा देवताः सकलाध्यायस्य शतशीर्षो रुद्रो वा देवता अङ्गन्यासे विनियोगः—ॐनमस्तेरुद्रमन्यव इत्यारभ्य तमेषाञ्जम्भेदध्मः इत्यन्तं

१ नमो व किरिकेभ्य इति चतुर्दशाक्षरं सामोष्णिगेकमेव ॥ २ तत्र देवतामन्त्रवर्णादेव चतुर्थ्यन्ता प्रसिद्धा. ॥

[1]चतुष्षष्टिकण्डिकात्मकशतरुद्रियाख्यरौद्राध्यायं जप्त्वा अस्त्राय फट् इत्युच्चार्य परस्परतालं कुर्वन् अस्त्रं न्यसेत् ॥ इति पञ्चमो न्यासः ॥

अथ षष्ठो न्यासः—प्रजनने ब्रह्मा तिष्ठतु। पादयोर्विष्णुस्तिष्ठतु। हस्तयोर्हरस्तिष्ठतु। बाह्वोरिन्द्रस्तिष्ठतु। जठरेऽग्निस्तिष्ठतु। हृदये शिवस्तिष्ठतु। कण्ठे वसवस्तिष्ठन्तु। वक्त्रे सरस्वती तिष्ठतु। नासिकयोर्वायुस्तिष्ठतु। नयनयोः सूर्याचन्द्रमसौ तिष्ठताम्। कर्णयोरश्विनौ तिष्ठताम्। ललाटे रुद्रास्तिष्ठन्तु मूर्ध्नि आदित्यास्तिष्ठन्तु। शिरसि महापुरुषस्तिष्ठतु। शिखायां चामुण्डा तिष्ठतु। पृष्ठे पिनाकी तिष्ठतु। पुरतः शूली तिष्ठतु। पार्श्वयोः शिवाशङ्करौ तिष्ठेताम्। सर्वतो वायुस्तिष्ठतु। बहिःसर्वतोऽग्निर्ज्वालामालापरिवृतस्तिष्ठतु। सर्वेष्वङ्गेषु सर्वा देवतास्तिष्ठन्तु सर्वाङ्गं मां रक्षन्तु ॥ इति षष्ठोन्यासः॥

अथ लघुन्यासः—अग्निर्मे वाचि श्रित इत्यादिभिर्मन्त्रैर्यथालिङ्गमङ्गानि संस्पृशेत्-ॐअग्नि मे वाचि श्रितः वाक् हृदये हृदयं मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि-वाचं स्पृशेत्। ॐवायु र्मे प्राणे श्रितःप्राणो हृदये हृदयं मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि-हृदयं स्पृशेत्। ॐसूर्यो मे चक्षुषि श्रितः चक्षुर्हृदये हृदयं मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि-चक्षुषी स्पृशेत्। ॐचन्द्रमा मे मनसि श्रितः मनो हृदये हृदयं मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि-वर्क्षः स्पृशेत्। ॐदिशो मे श्रोत्रे श्रिताः श्रोत्रं हृदये हृदयं मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि-श्रोत्रे स्पृशेत्। ॐआपो मे रेतसि श्रिताः रेतो हृदये हृदयं मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि-लिङ्गे स्पृशेत्। ॐपृथिवी मे शरीरं श्रिता शरीरं हृदये हृदयं मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि-शरीरं स्पृशेत्। ॐओषधिवनस्पतयो मे लोमसु

---

१ चतुः षष्टिकण्डिकात्मको रौद्राध्यायं इति काण्वानां विशेषः ॥ २ स च अभिषेक एव भवति ॥ ३ अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च चन्द्रमा दिश एव च। आपः पृथिव्योषधय इन्द्रः पर्जन्य एव च। ईशान आत्मा च पुनर्लघुन्यासे त्रयोदश ॥ ४ मनसः स्थानत्वात् ॥

श्रिताः लोमानि हृदये हृदयं मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि रोमकूपान्स्पृशेत् ।ॐइन्द्रो मे बले श्रितः बलं हृदये हृदयं मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि सर्वाङ्गं स्पृशेत्।ॐपर्जन्यो मे मूर्द्धि श्रितः मूर्द्धा हृदये हृदयं मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि—मस्तकं स्पृशेत् । ॐईशानो मे मन्यौ श्रितःमन्युर्हृदये हृदयं मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि-हृदयं स्पृशेत् । ॐआत्मा म आत्मनि श्रितः आत्मा हृदये हृदयं मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि—वक्षः स्पृशेत् । ॐपुनर्म आत्मा पुनरायुरागात्पुनः प्राणः पुनराकूतमागात् । वैश्वानरो रश्मिभिर्वावृधानः अन्तस्तिष्ठत्वमृतस्य गोपाः । सर्वशरीरं स्पृशेत् ॥ एषत इत्यस्य प्रजापतिर्ऋषिः सामपङ्क्तिर्यजुर्जगतीछन्दसी रुद्रो देवता योनिमुद्राप्रदर्शने विनियोगः—ॐ एष तेरुद्रभाग१सहस्वस्राम्बिकयातञ्जुषस्वस्वाहैषते रुद्र भागऽआखुस्ते पशु१ ॥५७/३॥ अनेन मन्त्रेण योनिमुद्रां प्रदर्शयेत् ॥ इति महान्यास (लघुन्यास) प्रयोगः॥

॥ ४२ ॥ अथ रुद्रपूजनप्रयोगः ॥

आत्मनः श्रीरुद्रस्वरूपेण ध्यानम्- पञ्चास्यं सौम्यमात्मानं सर्वाभरणभूषितम् । मृगलाञ्छनमूर्द्धानं शुद्धस्फटिकसन्निभम् ॥ फणासहस्रविस्फूर्जद्भुजगेन्द्रोपवीतिनम् । सप्तार्चिर्विज्वलज्ज्वालजटाजूटकिरीटिनम् ॥ सहस्रकरविभ्राजत्खट्वाङ्गादिविभूषितम् ॥ ब्रह्माण्डखण्ड-

---

१ क्रोधादिस्थानत्वात् २ चित्तस्थानत्वात् ३ रुद्रकल्पद्रुमे-एवं न्यासविधिं कृत्वा ततो मुद्रां प्रदर्शयेत् । शिवमुद्रेति शिवस्योक्ता सैव शान्तिप्रदायिनी ॥ एष ते रुद्रभाग इति मुद्राप्रदर्शनम् । श्रीकामः शीर्ष्णि कुर्वीत तेजस्कामस्तु नेत्रयोः ॥ मुखे स्तनायकामस्तु ग्रीवायां रोगनाशने । हृदये सर्वकामस्तु नाभौ ज्ञानी प्रदर्शयेत् ॥ प्रजाकामस्तु गुह्ये वै पशुकामस्तु जङ्घयोः । जानुभ्यां ग्रामकामस्तु राष्ट्रकामस्तु पादयोः ॥ वशीकरणकामस्तु वामहस्ते प्रदर्शयेत् । पापक्षयेऽभिचारे च व्याधेरपगमे तथा ॥ बहिः शरीरतः कुर्वीत शिवस्याज्ञेति न स्मरन् । एवं प्रदर्शयित्वा तु ततो ध्यानं समारभेत् ॥

वरकाशत्कपालवरधारिणम् । देदीप्यमानं चन्द्रार्कज्वलदग्नित्रिनेत्रिणम् ॥ त्रैलोक्यद्योतिकृद्भास्वत्स्कन्धे कपालमालिनम् । दीप्तनक्षत्रमालावदक्षमालाधरं विभुम् ॥ निःशेषवारिसम्पूर्णकमण्डलुकरं त्वजम् । जगद्धाधिर्यकृन्नादप्रमुचं डमरुधारिणम् ॥ केयूरबद्धनागेन्द्रमूर्द्धमणिविराजितम् । मेखलाकिङ्किणीमालामुक्तारावविराजितम् ॥ घर्घराव्यक्तनिर्गच्छद्गम्भीरारावनूपुरम् । व्याघ्रचर्मपरीधानं गजचर्मवसानकम् ॥ सहेमपट्टनीलाभव्याघ्रचर्मोत्तरीयकम् । विद्युल्लताप्रभागङ्गाभातमूर्द्धं सुरार्चितम् ॥ समस्तभुवनाधारधरणोक्षासनस्थितम् । त्रैलोक्यवनितामूर्द्धनतदेहार्धपार्वतीम् ॥ लक्षसूर्यप्रभाभास्वत्त्रैलोक्यकृतपाण्डुरम् । अमृतप्लुतहृष्टाङ्गं दिव्यभोगसमाकुलम् ॥ दिग्देवतासमायुक्तं सुरासुरनमस्कृतम् । नित्यं शाश्वतमव्यक्तं व्यापिनं नन्दिनं ध्रुवम् ॥ इत्थं श्रीरुद्रस्वरूपमात्मानं ध्यात्वा[1] आत्मनि पुष्पाक्षतप्रक्षेपेण श्रीरुद्रस्यावाहनम्—ॐआराधितो मनुष्यैस्त्वं सिद्धैर्देवासुरादिभिः । आराधयामि भक्त्या त्वां गृहाण परमेश्वर ॥ श्रीरुद्र इहागच्छ इह तिष्ठ इत्यात्मनि पुष्पाक्षतप्रक्षेपणं कुर्यात् ॥ त्र्यम्बकमित्यस्य वसिष्ठ ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः त्र्यम्बको रुद्रो देवता स्वात्मनि श्रीरुद्रपूजने विनियोगः ॐत्र्यम्बकँयजामहे ॥ $\frac{६०}{३}$ ॥ स्वशरीरेऽवस्थितश्रीरुद्रस्वरूपिणे जीवात्मने नमः गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि ॥ नैवेद्यं[2] परिकल्पयामि ॥ स्वदक्षिणभागे साधारस्य ताम्रपात्रस्य स्थापनम् ॥ नमःशम्भवायेत्यस्य परमेष्ठी ऋषिः अत्र सप्ताक्षराणां यजुरुष्णिक् छन्दः षडक्षराणां यजुर्गायत्री छन्दः शम्भवादयो मन्त्रवर्णावगता अन्यतरतो नमस्कारा बहवो

१ द्विजो ध्यात्वैवमात्मानं सम्यग्रुद्रस्वरूपिणम् । सम्यग्ध्वस्तान्तरायः सन् ततो यजनमारभेत् ॥ २ अत्र नैवेद्यमपि मानसं परिकल्पयेदिति महार्णवः ॥

रुद्रा देवता अर्घपूरणे विनियोगः—ॐ नमः शम्भवाय च० ॥ ३६ ॥
अनेन मन्त्रेण तीर्थोदकेनार्घं पूरयित्वा तस्मिन्गन्धाक्षतपुष्पाणि प्रक्षिपेत् ।
नमः शम्भवायेत्यस्य परमेष्ठी ऋषिः अत्र सप्ताक्षराणां यजुरुष्णिक्
छन्दः षडक्षराणां यजुर्गायत्री छन्दः शम्भवादयो मन्त्रवर्णोक्ता
अन्यतरतो नमस्कारा बहवो रुद्रा देवता अर्घाभिमन्त्रणे विनियोगः—
ॐ नमः शम्भवाय च०। इति मन्त्रमष्टवारं जपित्वा अर्घाभिमन्त्रणं कुर्यात् ।
नमः शम्भवायेत्यस्य परमेष्ठी ऋषिः अत्र सप्ताक्षराणां यजुरुष्णिक्
छन्दः षडक्षराणां यजुर्गायत्री छन्दः शम्भवादयो मन्त्रवर्णोक्ता
अन्यतरतो नमस्कारा बहवो रुद्रा देवताः सम्भारप्रोक्षणे विनियोगः—
ॐ नमः शम्भवाय च० । इति मन्त्रेण पात्रान्तरगृहीतेन तदर्घोदकेन पूजा-
सम्भारान्सम्प्रोक्षयेत् । [आसनाद्युपचारसमर्पणादि वक्ष्यमाणं सर्वं
देवकार्यमनेनैवार्घोदकेन कर्तव्यम्] अथाक्षतैः पुष्पैर्वा पीठपूजा ।
पीठस्याधोभागे—ॐ आधारशक्तये नमः । ॐ कूर्माय नमः । ॐ अनन्ताय
नमः । ॐ वराहाय नमः । ॐ पृथिव्यै नमः । ॐ विचित्रदिव्यमण्डपाय
नमः । मण्डपपरितः—ॐ कल्पवृक्षेभ्यो नमः । ॐ सुवर्णवेदिकायै
नमः । ॐ रत्नसिंहासनाय नमः । एभिर्मन्त्रैरूर्ध्वमुपरि पूजा ॥ सिंहासन-
पादेषु आग्नेय्याम्-ॐ धर्माय नमः । नैर्ऋत्याम्-ॐ ज्ञानाय नमः ।
वायव्याम्-ॐ वैराग्याय नमः । ऐशान्याम्-ॐ ऐश्वर्याय नमः ॥ गात्रेषु
पूर्वस्याम्—ॐ अधर्माय नमः । दक्षिणस्याम्—ॐ अज्ञानाय नमः ।
पश्चिमायाम्—ॐ अवैराग्याय नमः । उत्तरस्याम् ॐ अनैश्वर्याय
नमः ॥ सिंहासनोपरि—ॐ मायाकारायानन्ताय नमः । ॐ पद्माय
नमः । ॐ आनन्दकन्दाय नमः । ॐ संविन्नालाय नमः । ॐ प्रकृतिमय-
पत्रेभ्यो नमः । ॐ विकारमयकेसरेभ्यो नमः । ॐ पञ्चाशद्वर्णाढ्यकर्णि-

कायै नमः ॥ पद्मस्य दलकेसरकर्णिकास्वर्चनम् । पद्मदलेषु—ॐ अँ सत्त्वाय नमः। केसरेषु—ॐ उँ रजसे नमः ॥ कर्णिकायाम्—ॐ मँ तमसे नमः॥ एवं प्रतित्रिकं सर्वत्र यथा—पद्मदलेषु—ॐ अँ द्वादशकलात्मनेऽर्कमण्डलाय नमः । केसरेषु—ॐ उँ षोडशकलात्मने सोममण्डलाय नमः ॥ कर्णिकायाम्—ॐ मँ दशकलात्मनेऽग्निमण्डलाय नमः ॥ पद्मदलेषु—ॐ अँ ब्रह्मणे नमः ॥ केसरेषु—ॐ उँ विष्णवे नमः ॥ कर्णिकायाम्—ॐ मँ महेश्वराय नमः ॥ पद्मदलेषु—ॐ अँ आत्मने नमः ॥ केसरेषु—ॐ उँ अन्तरात्मने नमः ॥ कर्णिकायाम्—ॐ मँ परमात्मने नमः ॥ पद्मेषु सर्वत्र—ॐ आँ ज्ञानात्मने नमः॥ स्वाग्रतः पद्मपूर्वादिपत्रेषु—ॐवामायै नमः । ॐज्येष्ठायै नमः। ॐरौद्र्यै नमः। ॐकाल्यै नमः। ॐकलविकरण्यै नमः। ॐबलविकरण्यै नमः । ॐबलप्रमथिन्यै नमः । ॐ सर्वभूतदमन्यै नमः । इत्यष्टौ शक्तीः सम्पूज्य । कर्णिकायाम्—ॐमनोन्मन्यै नमः ॥ॐनमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्तायानन्ताय योगपीठात्मने नमः। इति कर्णिकायां पुष्पाञ्जलिना पीठं सम्पूज्य सत्यज्ञानानन्तानन्दरूपं परं धामैव सकलं पीठमिति चिन्तयेत् ॥ इति पीठपूजा ॥ पीठोपरि स्थापितपात्रे शिवलिङ्गं धातुमयीं शैवीं प्रतिमां वा प्रतिष्ठाप्य आवाहनम्—अञ्जलौ पुष्पाण्यादाय सूर्यमण्डले स्वहृत्कमले वा श्रीरुद्रं ध्यात्वा—ॐआत्वावहन्तु हरयः सचेतसः श्वेतैरश्वैः सहकेतुमद्भिः । वाताजवैर्बलवद्भिर्मनोजवैरायाहि शीघ्रं मम हव्याय शर्वोम्॥ ॐत्र्यम्बकं यजामहे०। सद्योजातं प्रपद्यामि। भगवन्तं सहस्राक्षं विरूपाक्षं महादेवं साम्बशिवम् आवाहयामि। इति सूर्य-

१ एवं त्र्यम्बकं यजामहे इति मन्त्रेण सह समुचितैः सद्योजातं प्रपद्यामीति मन्त्रैः सर्वेऽप्युपचाराः कार्या इति रुद्रकल्पद्रुमे ॥

दक्षिणवक्त्रपूजने विनियोगः । ॐया ते रुद्र शिवा तनूरघोरापापकाशिनी ॥ तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि ॥ $\frac{२}{१६}$ ॥ अघोराय दक्षिणवक्त्राय नमः गन्धादिनीलाब्जकरवीरपुष्पाणि समर्पयामि ॥ गन्धादिदूर्वाङ्कुरार्कपुष्पैश्च पूर्ववक्त्रपूजनम्—यत्पुरुषमित्यस्य नारायण ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः जगद्बीजं पुरुषो देवता प्राग्वक्त्रपूजने विनियोगः-ॐयत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् ॥ मुखङ्किमस्यासीत्किम्बाहू किमूरू पादाऽ उच्च्येते ॥ $\frac{३१}{११}$ ॥ तत्पुरुषाय पूर्ववक्त्राय नमः गन्धादिदूर्वाङ्कुरार्कपुष्पाणि समर्पयामि ॥ गन्धादिबिल्वकनकपुष्पैश्च ऊर्ध्ववक्त्रपूजनम्—तमीशानमित्यस्य गौतम ऋषिः जगती छन्दः ईशानो देवता ऊर्ध्ववक्त्रपूजने विनियोगः—ॐतमीशानञ्जगतस्तस्थुषस्पतिन्धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम् ॥ पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥ $\frac{२५}{१८}$ ॥ ईशानायोर्ध्ववक्त्राय नमः गन्धादिबिल्वकनकपुष्पाणि समर्पयामि ॥ इति रुद्रकल्पद्रुमान्तर्गताभिषेकपरिच्छेदोक्तिकतरप्रकारेण पञ्चवक्त्रपूजनम् ॥

॥ अथ प्रकारान्तरेण पञ्चवक्त्रपूजा ॥

अथ पश्चिमवक्त्रपूजा—(प्रतिवक्त्रपूजने नमस्कारादि कर्तव्यम्) सद्योजातमित्यस्य सद्योजात ऋषिः त्रिष्टुप् छन्दः सद्योजातो देवता श्वेतवर्णं हंसवाहनं पश्चिमवक्त्रं पृथिवीतत्त्वं पश्चिमवक्त्रनमस्कारे विनियोगः—ॐसद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नमः। भवे भवे नातिभवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः ॥ सद्योजाताय श्वेतवर्णाय हंसवाहनाय पश्चिमवक्त्राय पृथिवीतत्त्वाय सृष्टिरूपात्मने ब्रह्मणे नमः हाँ इति प्रणम्य

धेनुर्वाणमुद्राप्रदर्शनम् ॥ सद्योजातमित्यस्य सद्योजात ऋषिः त्रिष्टुप् छन्दः सद्योजातो देवता श्वेतवर्णं हंसवाहनं पश्चिमवक्त्रं पृथिवीतत्त्वं पश्चिमवक्त्रपूजने विनियोगः-ॐसद्योजातं० ॥ सद्योजाताय श्वेतवर्णाय हंसवाहनाय पश्चिमवक्त्राय नमः इत्यनेन गन्धमनःशिलाचन्दनश्वेताक्षतश्वेतपुष्पगुग्गुलधूपघृतदीपपायसनैवेद्यादिभिः पूजनम् । ततः कलापूजनम्-ॐऋद्धये नमः। ॐसिद्धये नमः। ॐधृत्यै नमः। ॐलक्ष्म्यै नमः। ॐमेधायै नमः। ॐकान्त्यै नमः। ॐस्वधायै नमः। ॐप्रभायै नमः। इत्यष्टौ कलाः सम्पूज्य ध्यानम्-प्रालेयामलबिन्दुकुंदधवलं गोक्षीरफेनप्रभं भस्माभ्यङ्गमनङ्गदेहदमनज्वालावलीलोचनम्। ब्रह्मेन्द्रादिमरुद्गणैः स्तुतिपरैरभ्यर्चितं योगिभिर्वन्देऽहं सकलं कलङ्करहितं स्थाणोर्मुखं पश्चिमम् ॥ शुभ्रं त्रिलोचनं नाम्ना सद्योजातं शिवप्रदम्। शुद्धस्फटिकसङ्काशं वन्देऽहं पश्चिमं मुखम् ॥ इति पश्चिमवक्त्रपूजा ॥

अथोत्तरवक्त्रपूजा-वामदेवायेत्यस्य वामदेव ऋषिः जगती छन्दः विष्णुर्देवता कृष्णवर्णं गरुडवाहनम् उत्तरवक्त्रम् आपस्तत्त्वम् उत्तरवक्त्रनमस्कारे विनियोगः-ॐवामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमः॥ वामदेवाय कृष्णवर्णाय गरुडवाहनायोत्तरवक्त्रायापस्तत्त्वायामृतरूपात्मने विष्णवे नमः ह्रीं इति प्रणम्य पद्ममुद्राप्रदर्शनम् ॥ वामदेवायेत्यस्य वामदेवऋषिः

---

१ वामस्य मध्यमाग्रं तु तर्जन्यग्रे नियोजयेत्। अनामिकां कनिष्ठां च तस्याङ्गुष्ठेन पीडयेत्। दर्शयेद्दक्षिणस्कन्धे धनुर्मुद्रेयमीरिता ॥ दक्षमुष्टिस्थतर्जन्या दीर्घया बाणमुद्रिका ॥ २ श्वेताक्षतैः श्वेतपुष्पैः पूजयेद्धंसवाहनम्। सिद्ध्यन्ति सर्वकार्याणि पूजनेन न संशयः ॥ ३ ऋद्धिः सिद्धिर्धृतिर्लक्ष्मीर्मेधा कान्तिः स्वधा प्रभा। सद्योजातकला ह्येता ह्यष्टौ च परिकीर्तिताः ॥ ४ करौ तु संहतौ कृत्वा संमुखावुन्नताङ्गुली। तलान्तर्मिलिताङ्गुष्ठौ कुर्यादेषाऽब्जमुद्रिका ॥

जगतीछन्दःविष्णुर्देवता कृष्णवर्णं गरुडवाहनम् उत्तरवक्त्रम् आपस्तत्त्वम् उत्तरवक्त्रपूजने विनियोगः-ॐवामदेवाय० ॥ वामदेवाय कृष्णवर्णाय गरुडवाहनायोत्तरवक्त्राय नमः इत्यनेन हरिचन्दनतुलसीशतपत्रपुष्प-पत्रैः[1]सौगन्धकधूपघृतपक्वगोधूमान्ननैवेद्यादिभिः पूजनम् । ततः कला-पूजनम्-ॐरजसे नमः । ॐरक्षायै नमः । ॐरत्यै नमः । ॐपाल्यायै नमः । ॐकामायै नमः। ॐसञ्जीविन्यै नमः । ॐप्रियायै नमः । ॐबुद्ध्यै नमः । ॐक्रियायै नमः । ॐधात्र्यै नमः । ॐभ्रामर्यै नमः । ॐमोहिन्यै नमः । ॐज्वरायै नमः । इति त्रयोदशकलाः सम्पूज्य ध्यानम्-गौरं कुङ्कुमपिङ्गलं सुतिलकं व्यापाण्डुगण्डस्थलं भ्रूविक्षेपकटाक्षवीक्षणलस-त्संसक्तकर्णोत्पलम् । स्निग्धं बिम्बफलाधरं प्रहसितं नीलालकालङ्कृतं वन्दे पूर्णशशाङ्कमण्डलनिभं वक्त्रं हरस्योत्तरम् ॥ वामदेवं सुवर्णाभं दिव्यास्त्रगणसेवितम् । अजन्मानमुमाकान्तं वन्देऽहं ह्युत्तरं मुखम् ॥ इत्युत्तरवक्त्रपूजा ॥

अथ दक्षिणवक्त्रपूजा-अघोरेभ्य इत्यस्य अघोर ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः रुद्रो देवता नीलवर्णं कूर्मवाहनं दक्षिणवक्त्रं तेजस्तत्त्वं दक्षिणवक्त्रनमस्कारे विनियोगः।ॐअघोरेभ्योथघोरेभ्योघोरघोरतरेभ्यः। सर्वेभ्यःसर्वशर्वेभ्यो नमस्तेऽअस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥ अघोराय नीलवर्णाय कूर्मवाहनाय दक्षिण-वक्त्राय तेजस्तत्त्वाय विश्वरूपात्मने कालाग्निरुद्राय नमः हूँ इति प्रणम्य

१ तुलसीशतपत्रैश्च पूजयेद्गरुडासनम् । सर्वदोषविनाशेन प्राप्नोति श्रियसम्पदम् ॥ २ कङ्कोल-पूगकर्पूरजातीफललवङ्गकैः । सुगन्धपञ्चकं प्रोक्तमायुर्वेदप्रकाशकैः ॥ ३ रजो रक्षा रतिः पाल्या कामा सञ्जीविनी प्रिया । बुद्धिः क्रिया च धात्री च भ्रामरी मोहिनी ज्वरा । वामदेव-कला ह्येतास्त्रयोदश वरानने ॥

ज्ञानमुद्राप्रदर्शनम्[1]। अघोरेभ्य इत्यस्य अघोर ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः रुद्रो देवता नीलवर्णं कूर्मवाहनं दक्षिणवक्त्रं तेजस्तत्त्वं दक्षिणवक्त्रपूजने विनियोगः-ॐअघोरेभ्यो०॥ अघोराय नीलवर्णाय कूर्मवाहनाय दक्षिणवक्त्राय नमः इत्यनेन कृष्णागरुचन्दननीलोत्पलकरवीरपुष्पसितागरुधूपपायान्ननैवेद्यादिभिः पूजनम्[2]। ततः कलापूजनम्—ॐतमसे नमः। ॐ मोहायै नमः।ॐक्षयायै नमः। ॐ निद्रायै नमः।ॐव्याधये नमः।ॐमृत्यवे नमः। ॐक्षुधायै नमः।ॐतृषायै नमः। इत्यष्टौ कलाः सम्पूज्य[3] ध्यानम्—कालाभ्रभ्रमराञ्जनाचलनिभं व्यावृत्तपिङ्गेक्षणं खण्डेन्दुद्वयमिश्रितांशुदशानमोद्भिन्नदंष्ट्राङ्कुरम्। सर्पप्रोतकपालशक्तिसकलं व्याकीर्णसच्छेखरं वन्दे दक्षिणमीश्वरस्य कुटिलभ्रूभङ्गरौद्रं मुखम्॥ नीलाभ्रवर्णमोंकारमघोरं घोरदंष्ट्रकम्। दंष्ट्राकरालमत्युग्रं वन्देऽहं दक्षिणं मुखम्। इति दक्षिणवक्त्रपूजा॥

अथ पूर्ववक्त्रपूजा—तत्पुरुषायेत्यस्य तत्पुरुष ऋषिः गायत्री छन्दः रुद्रो देवता पीतवर्णम् अश्ववाहनं पूर्ववक्त्रं वायुतत्त्वं पूर्ववक्त्रनमस्कारे विनियोगः। ॐतत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्। तत्पुरुषाय पीतवर्णायाश्ववाहनाय पूर्ववक्त्राय वायुतत्त्वाय चैतन्यात्मने आदित्याय नमः हुँ इति प्रणम्य कवचमुद्राप्रदर्शनम्[4]। तत्पुरुषायेत्यस्य तत्पुरुष ऋषिः गायत्री छन्दः रुद्रो देवता पीतवर्णम् अश्ववाहनं पूर्ववक्त्रं वायुतत्त्वं पूर्ववक्त्रपूजने विनियोगः।ॐतत्पुरुषाय०॥ तत्पुरुषाय पीतवर्णायाश्ववाहनाय पूर्ववक्त्राय नमः इत्यनेन हरिताल-

---

१ तर्जन्यङ्गुष्ठकौ सक्तावग्रतो हृदि विन्यसेत्। ज्ञानमुद्रा भवेदेषा कथिता तत्त्वदर्शिभिः॥

२ नीलोत्पलैः करवीरैः पूजयेत्कूर्मसंस्थितम्। सर्वबाधाविनाशाय ज्ञानमोक्षप्रसाधकम्॥

३ तमो मोहा क्षया निद्रा व्याधिर्मृत्युः क्षुधा तृषा। अघोरस्य कला ह्येता ह्यष्टौ च परिकीर्तिताः॥

४ कवचमुद्रालक्षणम्—करद्वन्द्वाङ्गुल्यो वर्मणि स्युः॥

चन्दनदूर्वाङ्कुरार्कपुष्पान्यतरपुष्पकृष्णागरुधूपमोदकनैवेद्यादिभिः पूजनम् । ततः कलापूजनम्[2]–ॐनिवृत्त्यै नमः । ॐप्रतिष्ठायै नमः । ॐविद्यायै नमः । ॐशान्त्यै नमः । इति चतस्रः कलाः सम्पूज्य ध्यानम्–संवर्ताग्नितडित्प्रतप्तकनकप्रस्पर्द्धितेजोरुणं गम्भीरस्मृतिनिःसृतोग्रदशनप्रोद्भासिताम्राधरम् । बालेन्दुद्युतिलोलपिङ्गलजटाभारप्रबद्धोरगं वन्दे सिद्धसुरासुरेन्द्रनमितं पूर्वं मुखं शूलिनः ॥ बालार्कवर्णमारक्तं सुरूपं च तडित्प्रभम् । दिव्यं पिङ्गजटाधारं वन्देऽहं पूर्वदिङ्मुखम् ॥ इति पूर्ववक्त्रपूजा ॥

अथोर्ध्ववक्त्रपूजा–ईशान इत्यस्य ईशान ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः रुद्रो देवता गोक्षीरवर्णं वृषभवाहनम् ऊर्ध्ववक्त्रम् आकाशतत्त्वम् ऊर्ध्ववक्त्रनमस्कारे विनियोगः । ॐईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मेऽअस्तु सदाशिवोम् ॥ ईशानाय गोक्षीरवर्णाय वृषभवाहनायोर्ध्ववक्त्रायाकाशतत्त्वायाव्यक्ताय सर्वव्यापकात्मने नमः ह्रौं इति प्रणम्य महामुद्रां[3] (व्यापकमुद्रा) प्रदर्शनम् । ईशान इत्यस्य ईशान ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः रुद्रो देवता गोक्षीरवर्णं वृषभवाहनम् ऊर्ध्ववक्त्रम् आकाशतत्त्वम् ऊर्ध्ववक्त्रपूजने विनियोगः । ॐईशानः सर्व० ॥ ईशानाय गोक्षीरवर्णाय वृषभवाहनायोर्ध्ववक्त्राय

---

१ दूर्वाङ्कुरैरर्कपुष्पैः पूजयेद्वृषवाहनम् । आयुष्यं वर्धते तत्र विशिष्टफलदायकम् ॥ २ निवृत्तिश्च प्रतिष्ठा च विद्या शान्तिस्तथैव च ॥ तत्पुरुषकला ह्येताश्चतस्रश्च न संशयः ॥

३ उत्तानौ तादृशावेव व्यापकाञ्जलिकौ करौ । तादृशौ संयुतावेव नतानौ करौ व्यापकाञ्जलिकं नाम मुद्रा ॥

नमः। इत्यनेन भस्मचन्दनबिल्वपत्रकनकपुष्पऋतुभवान्यपुष्पहरिचन्दनधूपशर्करादध्योदननैवेद्यादिभिः पूजनम्। ततः कलापूजनम्—ॐशशिन्यै नमः। ॐअङ्गदायै नमः। ॐइष्टायै नमः। ॐमरीच्यै नमः ॐज्वालिन्यै नमः। इति पञ्चकलाः सम्पूज्य ध्यानम्—व्यक्ताव्यक्त गुणोत्तरं सुवदनं षट्त्रिंशतत्त्वाधिकं तस्मादुत्तरतत्त्वमक्षयमिति ध्येय सदा योगिभिः। वन्दे तामसवर्जितेन मनसा सूक्ष्मातिसूक्ष्मं परं शान्तं पञ्चममीश्वरस्य वदनं खव्यापि तेजोमयम्॥ईशानं सूक्ष्ममव्यक्तं तेजःपुञ्जपरायणम्। अमृतस्राावि चिद्रूपं वन्देऽहं पञ्चमं मुखम्॥इत्यूर्ध्ववक्त्रपूजा॥

इति पञ्चवक्त्रपूजां कृत्वा देववामभागे शक्तिपूजनम्-ॐउमायै नमः। ॐशङ्करप्रियायै नमः। ॐपार्वत्यै नमः। ॐगौर्यै नमः। ॐकाल्यै नमः। ॐकालिन्द्यै नमः। ॐकोटर्यै नमः। ॐविश्वधारिण्यै नमः। ॐह्रां नमः। ॐ ह्रीं नमः। ॐगङ्गादेव्यै नमः। ततः-ॐगणपतये नमः। ॐकार्तिकाय नमः। ॐपुष्पदन्ताय नमः। ॐकपर्दिने नमः। ॐभैरवाय नमः। ॐशूलपाणये नमः। ॐईश्वराय नमः। ॐदण्डपाणये नमः। ॐनन्दिने नमः। ॐमहाकालाय नमः। इति सम्पूज्य ततः एकादशरुद्रार्चनम्—ॐअघोराय नमः। ॐपशुपतये नमः। ॐशर्वाय नमः।

---

१ अत्र केचित् भस्मचन्दनस्थाने यक्षकर्दमचन्दनेन पूजनं कार्यमिति पठन्ति। यक्षकर्दमचन्दनम्-कस्तूरिकाया द्वौ भागौ द्वौ भागौ कुङ्कुमस्य च। चन्दनस्य त्रयो भागा शशिनस्त्वेक एव हि॥ परं त्वस्माभिस्त्वत्र रुद्रकल्पद्रुमसंमतेन भस्मचदनमेव सगृहीतम्॥ २ हसहंसेति यो ब्रूयाद्धमो नाम सदाशिवः। बिल्वैः कनकपुष्पैश्च अन्यैर्ऋतुभवैस्तथा। सौम्यमोक्षप्रदातारं पूजयेद् वृषवाहनम्॥ ३ शशिनी अङ्गदा इष्टा मरीचिर्ज्वालिनी तथा। ईशानस्य कला पञ्च निरञ्जनपदानुगाः। ४ अस्याश्च पञ्चवक्त्रपूजाया देवप्रतिष्ठायां विहितत्वेन रुद्रजपरुद्रहोमरुद्राभिषेकार्चनेष्वविहितत्वेन च प्रमाणाभावादाचार एव तस्यां प्रमाणम्॥

ॐविरूपाक्षाय नमः। ॐविश्वरूपिणे नमः। ॐत्र्यम्बकाय नमः। ॐकपर्दिने नमः। ॐभैरवाय नमः। ॐशूलपाणये नमः। ॐईशानाय नमः। ॐमहेश्वराय नमः॥ इति॥

ततो रुद्राभिषेकं कृत्वा शुद्धोदकस्नानवस्त्रोपवीतगन्धाक्षतपुष्पाणि समर्प्य (समयश्चेत् शिवसहस्रनामभिः (१०००) अष्टोत्तरशतनामभिर्वा (१०८) बिल्वार्पणं कुर्यात्) तदनंतरं सौभाग्यद्रव्यधूपदीपनैवेद्यताम्बूलदक्षिणार्तिक्यप्रदक्षिणामंत्रपुष्पाञ्जलिविशेषार्घ्याद्युपचारान् समर्प्य॥ ॐनमः शिवायेति शिवपञ्चाक्षरमन्त्रस्य यथाशक्ति जपं कृत्वा समर्प्य॥ राजोपचारान्-छत्रं च चामरं चैव व्यजनं दर्पणं तथा। पादुकानि च सर्वाणि गृह्यताम् परमेश्वर॥ (अभावे कल्पयामि) इत्यर्पयित्वा साष्टाङ्गं प्रणमेत्॥

अथ शिवमानसपूजा—रत्नैः कल्पितमासनं हिमजलैः स्नानं च दिव्याम्बरं नानारत्नविभूषितं मृगमदामोदान्वितं चन्दनम्। जातीचम्पकबिल्वपत्रसहितं पुष्पं च धूपं तथा दीपं देव दयानिधे पशुपते हृत्कल्पितं गृह्यताम्॥ १॥ सौवर्णे मणिरत्नखण्डरचिते पात्रे घृतं पायसं भक्ष्यं पञ्चविधं पयोदधियुतं रम्भाफलं पानसम्। शाकानामयुतं जलं रुचिकरं कर्पूरखण्डोज्ज्वलं ताम्बूलं मनसा मया विरचितं भक्त्या प्रभो स्वीकुरु॥ २॥ छत्रं चामरयोर्युगं व्यजनकं चादर्शकं निर्मलं वीणाभेरिमृदङ्गकाहलकलागीतं च नृत्यं तथा। साष्टाङ्गप्रणतिः स्तुतिर्बहुविधा चैतत्समस्तं मया सङ्कल्पेन समर्पितं तव विभो पूजां गृहाण

---

१ सम्पूर्णरुद्राभिषेकप्रयोगस्तु ६१ पृष्ठे द्रष्टव्य॥ २ षामन्त्रकप्रयोगस्तु शिवपञ्चायतनपूजाप्रयोगे (४५ पृष्ठे) द्रष्टव्य॥ ३ उरसा शिरसा दृष्ट्या मनसा वचसा तथा। पद्भ्यां कराभ्यां जानुभ्यां प्रणामोऽष्टाङ्ग उच्यते॥

प्रभो ॥ ३ ॥ आत्मा त्वं गिरिजा मतिः सहचराः प्राणाः शरीरं गृहं पूजा ते विषयोपभोगरचना निद्रा समाधिस्थितिः । सञ्चारः पदयोः प्रदक्षिणविधिः स्तोत्राणि सर्वा गिरो यद्यत्कर्म करोमि तत्तदखिलं शम्भो तवाराधनम् ॥ ४ ॥ करचरणकृतं वाक्कायजं कर्मजं वा श्रवणनयनजं वा मानसं वाऽपराधम् । विहितमविहितं वा सर्वमेतत्क्षमस्व जय जय करुणाब्धे श्रीमहादेव शम्भो ॥ ५ ॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं शिवमानसपूजास्तोत्रम् ॥

ध्यानम्—त्रिलोचनं चतुर्बाहुं सर्वाभरणभूषितम् । नागयज्ञोपवीतं च व्याघ्रचर्मोत्तरीयकम् ॥ वृषस्कन्धसमारूढमुमादेहार्धधारिणम् । अमृतेनाप्लुतं शान्तं चन्द्रार्धकृतशेखरम् ॥ शुद्धस्फटिकसङ्काशं जटामुकुटमण्डितम् । वरदाभयहस्तं च सर्वकामफलप्रदम् ॥ एवं ध्यायेद् द्विजः सम्यगनङ्गाङ्गहरं हरम् ॥ स्तुतिः—अनादिनिधनो रुद्रो गीयते श्रुतिभिः सदा । राजसेन स्वयं ब्रह्मा सात्त्विकेन स्वयं हरिः ॥ तामसेन स्वयं रुद्रस्त्रितयं त्वयि संस्थितम् । नमामि त्वां विरूपाक्ष नीलग्रीव नमोऽस्तु ते ॥ त्रिनेत्राय नमस्तुभ्यमुमादेहार्धधारिणे । त्रिशूलधारिणे तुभ्यं भूतानां पतये नमः ॥ पिनाकिने नमस्तुभ्यं नमो मीढुष्टमाय च । नमामि त्वां महाभूतपतये त्वां नमाम्यहम् ॥ स्वयं भिक्षान्नभोक्ता च भक्तानां राज्यदः स्वयम् । सूर्यरूपं समासाद्य देहिनां देहदायकः ॥ यतीनां मुक्तिदस्त्वं च मुक्त्यर्थिनां च मुक्तिदः । यदृच्छया सर्वमिदं ततं मध्ये च पालितम् ॥ अन्ते च विलयं नीतं शक्तिः कस्य भवाद्दते ॥ मन्त्रहीना क्रियाहीना भक्तिहीना महेश्वर । पूजा सम्पूर्णतां यातु त्वत्प्रसादात्त्रिलोचन ॥ अनुस्वारेण हीनस्य जपस्यात्रोहितस्य

च। दोषाः प्रयान्तु नाशं च त्वत्प्रसादान्महेश्वर ॥ महारुद्राभिषेकोऽयं न्यूनो वाऽप्यधिकोऽपि वा। सम्पूर्णस्त्वत्प्रसादाच्च भूयाद्भूतिविभूषण ॥ इति स्तुत्वा ॥ प्राङ्मुखा ऋत्विजः उदङ्मुखयजमानहस्ते श्रेयःसम्पादनं कुर्युः—

श्रेयोदानविधिः—ॐशिवा आपः सन्त्वितिमन्त्रेण यजमानहस्ते जलप्रक्षेपः। ॐसौमनस्यमस्त्विति पुष्पाणां प्रक्षेपः। ॐअक्षतञ्चारिष्टञ्चास्त्वित्यक्षतानां प्रक्षेपः। ॐदीर्घमायुः श्रेयः शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिश्चास्त्विति पुनर्जलप्रक्षेपः। तत आचार्यः साक्षतपूगीफलं गृहीत्वा "भवन्नियोगेन मया अमुकसंख्याकैरभिर्ब्राह्मणैः सह अभिषेकात्मकामुकरुद्रकृतेन यज्जातं श्रेयस्तत्तुभ्यमहं सम्प्रददे। तेन त्वं श्रेयस्वी भव" इति पूगीफलं यजमानहस्ते दद्यात्॥ यजमानो "भवामि" इति ब्रूयात्। तत अद्येत्यादि० देशकालौ सङ्कीर्त्य कृतस्याभिषेकात्मकामुकरुद्रकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यै आचार्यादीनामर्चनं करिष्ये इति संकल्प्य ॥ आचार्यायेदं पाद्यम् इदं बार्हस्पत्यं वासोयुगलमित्यादि गन्धपुष्पधूपदीपताम्बूलानि दत्त्वा पूर्वोक्तविशेषणवति काले कृतस्याभिषेकात्मकामुकरुद्रकर्मणः प्रतिष्ठासिद्ध्यर्थममुकसगोत्राय यजुर्वेदान्तर्गतवाजसनेयिमाध्यन्दिनशाखाध्यायिने अमुकशर्मणे आचार्याय यथाशक्त्यलङ्कृतामिमां सवत्सां गां रुद्रदैवत्यां इदं च हिरण्यमग्निदैवतं तुभ्यमहं सम्प्रददे। इति विप्रहस्ते सकुशाक्षतजलप्रक्षेपपूर्वकं दक्षिणां दत्त्वा "न मम" इति ब्रूयात्। विप्रस्तु ॐद्यौस्त्वाददातुपृथिवीत्वाप्रतिगृह्णात्वितिमन्त्रान्ते रुद्राय गां "ॐप्रतिगृह्णामि" इत्युक्त्वा ॐकोदात्कस्मांऽअदात्कामोदात्कामायादात् ॥ कामो दाता-

१ इदं च निर्मूल्यत्वयजमानप्रतारणमात्रमेव ॥ पुत्रकृत्यैतरणादानजन्यश्रेयोदानवन्मा- धनानादिजन्यपुण्यदानवच्चेदमपि श्रेयोदानमविरुद्धमित्यपि केचित् ॥

कामं—प्रतिग्रहीता कामैतत्ते ॥ ऱ्हुं ॥ इति कामस्तुतिं पठित्वा "ॐस्व-स्ती"ति वदेत् । प्रत्यक्षाया गोरभावे तु तन्निष्क्रयत्वेन सौवर्णिक-निष्कदानम् ॥ निष्कस्तु चतुःसौवर्णिकः तदसम्भवे तदर्धस्य तस्याप्य-सम्भवे तदर्धस्य एतावद्धिरण्यासम्भवे सौवर्णिकनिष्कपरिमितरजत-दानं तदसम्भवे तदर्धस्य तस्याप्यसम्भवे तदर्धस्य ॥ एवमृत्विग्भ्योऽपि सङ्कल्पपूर्वकं वरणक्रमेण तान्सम्पूज्य दक्षिणादानम् । यथाशक्त्या-चार्यादिभ्योऽलङ्कारमुद्रिकोदपात्रोपानद्वय जनछत्रचामराद्युपकरणदा-नम् ॥ अथ कृतस्याभिषेकामुकरुद्रकर्मणः समृद्ध्ये यथाकालं यथोप-पन्नेनान्नेन नानागोत्रान्नानाशर्मणोऽमुकसङ्ख्याकान्ब्राह्मणान्भोजयिष्ये। इति सङ्कल्पपूर्वकं ब्राह्मणभोजनम् ॥ अञ्जलिं बद्ध्वा "मयाचरिताभिषेका-त्मकामुकरुद्रविधौ यन्न्यूनातिरिक्तं तद्भवतां ब्राह्मणानां वचनात्सर्वं परि-पूर्णमच्छिद्रं चास्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु" इति यजमानेन प्रार्थिते "सम्पूर्ण-मच्छिद्रं चास्तु" इति विप्रा प्रतिवचनं वदेयुः। ततो मयाचरितेनाभिषेका-त्मकेनामुकरुद्रेण श्रीभगवान्परमात्मा साम्बसदाशिवःप्रीयताम्।ॐतत्स-द्ब्रह्मार्पणमस्त्विति भूमौ कुशजलप्रक्षेपपूर्वकं कर्म ब्रह्मार्पणं विधाय विप्रेभ्यो मन्त्राशिषां ग्रहणं तेषां सानुनयं विसर्जनं च । दीनानाथा-दीनां चान्नादिना सन्तोषणम् । ततः स्वयं सुहृन्मित्रादियुतः सोत्साहः सन्तुष्टो हविष्यं भुञ्जीत ॥

इतिश्रीमद्द्विवेद्युद्धवमनुश्रीमदनन्तदेवविरचितश्रीरुद्रकल्पद्रुमस्याभि-षेकपरिच्छेदानुसारी अभिषेकात्मकरुद्रप्रयोगः ॥

॥ ४४ ॥ अथ कुंडपूजनप्रयोगः ॥

होमात्मके प्रयोगे कुण्डपूजनम्—सपत्नीको यजमानः आचार्यो

क्षौणी ब्रह्माण्डं विश्वमंडलम्॥ व्यापिनं भीमरूपं च सुरूपं विश्वरूपिणम् ॥ १ ॥ पितामहसुतं मुख्यं वन्दे वास्तोष्पतिं प्रभुम्। वास्तुपुरुष देवेश सर्वविघ्नहरो भव। शान्तिं कुरु सुखं देहि सर्वान्कामान्प्रयच्छ मे ॥ ("कुंडमध्ये" गंधादिना त्रिकोणषट्कोणं तदुपरि अष्टदलपद्मं कृत्वा तस्मिन् ब्रह्मणे नमः। विष्णवे०। रुद्राय०। ऋग्वेदाय०। यजुर्वेदाय०। सामवेदाय०। अथर्ववेदाय०। कूर्माय०। अनंताय०। हिरण्यगर्भाय०। श्रीकंठाय०। धनदाय०। शिवाय०। धर्माय०। सूर्याय०। इति ब्रह्मादिदेवान् गंधादिभिः पूजयेत्॥) ततः पञ्चभूसंस्कारपूर्वकम् अग्निं प्रतिष्ठापयेत्॥

॥ ४५ ॥ अथ होमात्मकलघुरुद्रप्रयोगः ॥

पूर्वं दशहस्तपरिमितं मण्डपं विधाय तन्मध्ये द्विहस्तमात्रं चतुरस्रं कुण्डं स्थण्डिलं वा विधाय कुण्डादीशान्यां वेदीद्वयकरणम्॥ तत्र दक्षिणतो ग्रहवेदी। वेदी च द्व्यङ्गुलत्र्यङ्गुलोच्छ्रायद्व्यङ्गुलवप्रद्वययुता हस्तोच्चा हस्तविस्तृता च कार्या॥

तत्रादौ पञ्चदशकृच्छ्रात्मकं प्रायश्चित्तं कृत्वा सङ्कल्पं कुर्यात्॥ तद्यथा-कर्ता आचम्य प्राणानायम्य॥ देशकालौ संकीर्त्य अमुकगोत्रोत्पन्नोऽमुकशर्माऽहं मम कायिकाद्यखिलपापक्षयपूर्वकधर्मार्थकाममोक्षचतुर्विधपुरुषार्थसिद्धिद्वारा श्रीसाम्बसदाशिवप्रीत्यर्थम् एकषष्ट्युत्तरशतधामन्त्रविभागपक्षेण सनवग्रहमखं होमात्मकलघुरुद्राख्यं कर्म करिष्ये। पुनर्जलमादाय-तदङ्गत्वेन दिग्रक्षणं कलशाराधनं दीपपूजनं गणपतिपूजनं स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं वसोर्धाराम् आयुष्यमन्त्रजपं नान्दी-

१ नविग्रहः प्रयोग ऋग्वेदसमार्त हवनात्मकमहारुद्रप्रयोगो द्रष्टव्यः ॥

श्राद्धम् आचार्यादिवरणं पञ्चगव्यं भूम्यादिपूजनम् अग्निप्रतिष्ठापनं देवतास्थापनं पूजनं च करिष्ये ॥ इति संकल्प्य। गणपतिपूजनादिनान्दीश्राद्धान्तं कृत्वा आचार्यादिवरणं कुर्यात्। वृताचार्यः सर्षपान्विकीर्य पञ्चगव्येन भूमिं संप्रोक्ष्य ततोऽग्निस्थापनं कृत्वा ग्रहाणां स्थापनं पूजनं च कुर्यात्। अनन्तरं लिङ्गतोभद्रमण्डले देवतापूजनम्। तन्मध्ये कलशोपरि सौवर्णीं रुद्रप्रतिमां निधाय। "नमः शम्भवाय च०।" इति मन्त्रेणावाह्य (देववामभागे पार्वतीं देवस्याग्रे वृषं चावाह्य) पूजयेत्। ततो ब्रह्मोपवेशनाद्याज्यभागान्तं कर्म कृत्वा द्रव्यत्यागं कुर्यात्। ततः वराहुतिं हुत्वा ग्रहहोमं विधाय ऋत्विजः रुद्रहोमं कुर्युः। यथा आच०। प्राणा०। देशकालौ० अमुकशर्मणो यजमानस्याज्ञया यजमानसङ्कल्पितलघुरुद्रहोमे एकषष्ट्युत्तरशतधामन्त्रविभागपक्षेण यथांशेन विहितं हवनं करिष्ये। इति सङ्कल्पपूर्वकम् ऋत्विजः होमं कुर्युः। तत्रादौ षडंगन्यासान्कृत्वा होममारभेरन्।

एकलघुरुद्रहोमे एकादशविप्राः ऋष्यादिस्मरणपूर्वकं सावधाना घृताक्ततिलान् मृगीमुद्रया महारुद्रं ध्यायन्तः मन्त्रपठनपूर्वकं जुहुयुः॥

ॐयज्जाग्रतो० ॥ येन कर्माण्य० ॥ यत्प्रज्ञान० ॥ येनेदम्भूतं०॥ यस्मिन्नृच८ं०॥ सुषारथिरश्वानिव० शिवसङ्कल्पमस्तु स्वाहा ॥ १ ॥ इति शिवसङ्कल्पसूक्तस्य हृदयरूपाङ्गस्य चतुस्त्रिंशाध्यायस्य षण्मन्त्रैरेकाहुतिः ॥

ॐसहस्रशीर्षा० ॥ पुरुषऽए० ॥ एतावानस्य० ॥ त्रिपा दूर्ध्व० ॥ ततो विरा०॥ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत८ं सम्भृतं० ॥ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऽ ऋच८ं०॥ तस्मादश्वा०॥ तंय्यज्ञं० ॥ यत्पुरुषं० ॥ ब्राह्मणोऽस्य०॥

चन्द्रमा मनसो० ॥ नाभ्याऽ आसी०॥ यत्पुरुषेण० ॥ सप्तास्या०। यज्ञेन० सन्ति देवाः स्वाहा ॥ २ ॥ इति शिरोरूपस्य पौरुषस्य एकत्रिंशाध्यायस्य षोडशमन्त्रैरेकाहुतिः ॥

ॐअद्भ्यः सम्भृत८ं०॥ वेदाहमे०॥ प्रजापतिश्चरति०॥ योदेवेभ्य०॥ रुचम्ब्राह्मं०॥ श्रीश्च ते० लोकम्मऽइषाण स्वाहा ॥ ३ ॥ इति उत्तराभिधशिखारूपस्य नारायणीयस्य एकत्रिंशाध्यायस्य षण्मन्त्रैरेकाहुतिः॥

ॐआशुः शिशानो०॥ सङ्क्रन्दने०॥ सऽइषुहस्तै८ं०॥ बृहस्पते० ॥ बलविज्ञा०॥ गोत्रभिदङ्गोविदं०॥ अभिगोत्राणि०॥ इन्द्रऽआसान्नेता०॥ इन्द्रस्य वृष्णो०॥ उद्धर्षय०॥ अस्माकमिन्द्र८ं०॥ अमीषाञ्चित्तं० सचन्ताम् स्वाहा ॥ ४ ॥ इत्यप्रतिरथसूक्तस्य कवचरूपाङ्गस्य सप्तदशाध्यायस्य द्वादशमन्त्रैरेकाहुतिः ॥

ॐविभ्राड्बृहत्० ॥ उदुत्यञ्जातवे० ॥ येनापावक० । दैव्यावध्वर्यू० । तम्प्रत्नथा पूर्वथा० ॥ अयं वेनश्चो० ॥ चित्रन्देवाना० ॥ आ नऽइडा० ॥ यदद्य कच्च० ॥ तरणिर्विश्व० ॥ तत्सूर्यस्य दे०॥ तन्मित्रस्य० ॥ बण्महाँ०। बट्सूर्यश्रव०॥ श्रायन्तऽइव०॥ अद्या देवाऽ०॥ आकृष्णेन० भुवनानि पश्यन् स्वाहा ॥५॥ इति मैत्रसूक्तस्य नेत्ररूपस्य पञ्चमाङ्गस्य सप्तदशमन्त्रैरेकाहुतिः ॥

एवं पञ्चाङ्गाहुतीर्हुत्वा यदि षडङ्गपक्ष आश्रयितव्यश्चेदस्त्ररूपस्य रुद्राध्यायस्य षडङ्गमन्त्रैर्होमः कार्यः यथा—

ॐनमस्ते०॥ यातेरुद्रशिवा० ॥ यामिषुङ्गिरिशन्त० ॥ शिवेनवचसा०॥ अध्यवोचदधि०॥ असौ यस्ताम्रो०॥ असौ यो० ॥ नमोस्तुनी०॥ प्रमुञ्च धन्व०॥ विज्यन्धनुः०॥ यातेहेतिर्मी० ॥ परितेधन्वनो० ॥

अवतत्य० ॥ नमस्तऽआ० ॥ मानो महान्त०॥ मानस्तोके० ॥ नमो हिरण्यबा०॥ नमोबभ्लुशाय०॥ नमोरोहिताय०॥ नमःकृत्स्नाय० ॥ नमोवञ्चते० ॥ नमऽउष्णीषिणे०॥ नमो विसृजद्भ्यो०॥ नमः सभाभ्यः०॥ नमोगणेभ्यो०॥ नमᳩसेनाभ्यᳩ०॥ नमस्तक्षभ्यो०॥नमᳩश्वभ्यᳩ०॥ नमःकपर्दिने०॥ नमोह्रस्वाय० ॥ नमऽआशवे० ॥ नमो ज्येष्ठाय०॥ नमᳩसोभ्याय०॥ नमो व्वय्याय०॥ नमोबिल्मिने०॥ नमोधृष्णवे० ॥ नमᳩस्रुत्याय०॥ नमᳩकूप्याय० ॥ नमोव्वार्याय०॥ नमःशङ्गवे०॥ नमःशम्भवाय०॥ नमᳩपार्य्याय०॥ नमःसिकत्याय० ॥ नमोव्रज्याय० ॥ नमᳩशुष्क्याय०॥ नमःपर्णाय०॥ द्रापेऽअन्ध०॥ इमारुद्राय० ॥ यातेरुद्रशिवातनू ?०॥ परिनोरुद्रस्य० ॥ मीढुष्टम० ॥ विकिरिद्र०॥ सहस्राणि०॥ असङ्ख्याता०॥ अस्मिन्महत्य०॥ नीलग्रीवाᳩ शितिकण्ठादिवᳩ०॥ नीलग्रीवाᳩशितिकण्ठाᳩशर्वाऽ०॥ ये व्वृक्षेषु०॥ येभूताना०॥ येपथाम्पथि०॥येतीर्थानि०॥ येन्नेषु०॥ यऽएतावन्तश्च०॥ नमोस्तुरुद्रेभ्योयेदिवि० ॥ नमोस्तु रुद्रेभ्योयेन्तरिक्षे० ॥नमोस्तुरुद्रेभ्योयेपृथिव्यां० ॥ यश्च नो द्वेष्टि तमेषाञ्जम्भेदद्ध्मᳩ स्वाहा ॥ ६ ॥ इति षडङ्गपक्षे षडङ्गमन्त्रैः एकाहुतिः ॥ ६ ॥

॥ अथ प्रधानहोमप्रयोगः ॥

एकषष्ट्युत्तरशतधामन्त्रविभागात्मकरुद्रहोमस्वाहाकाराः ।

ॐनमस्तेरुद्रमन्यवऽउतोतऽइषवेनमः॥ बाहुभ्यामुततेनमःस्वाहा१॥

ॐया ते रुद्र शिवा तनूरघोरापापकाशिनी ॥

तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि स्वाहा ॥ २ ॥

ॐयामिषुङ्गिरिशन्त हस्ते बिभर्ष्यस्तवे ॥

शिवाङ्गिरित्रताङ्कुरु मा हिᳬसीᳬपुरुषञ्जगत् स्वाहा ॥ ३ ॥
ॐशिवेन व्वचसा त्वा गिरिशाच्छा व्वदामसि ॥
यथा नᳬ सर्व्वमिज्जगदयक्ष्मᳬसुमनाऽअसत् स्वाहा ॥ ४ ॥
ॐअद्ध्यवोचदधिवक्ता प्रथमो दैव्व्यो भिषक् ॥
अहींश्च सर्व्वाञ्जम्भयन्त्सर्व्वाश्च यातुधान्योधराचीᳬपरासुव स्वाहा ॥५॥
ॐअसौ यस्ताम्म्रोऽ अरुणऽ उत बब्भ्रुः सुमङ्गलः ॥
ये चैनᳬरुद्राऽअभितोदिक्षुश्रिताः सहस्रशोवैषाᳬहेडऽईमहे स्वाहा ॥६॥
ॐअसौ योवसर्प्पति नीलग्ग्रीवो व्विलोहितᳬ ॥
उतैनङ्गोपाऽअदृश्श्रन्नदृश्श्रन्नुदहार्य्यः सदृष्टोमृडयातिनᳬ स्वाहा ॥ ७ ॥
ॐनमोस्तु नीलग्ग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे ॥
अथोयेऽ अस्य सत्त्वानोहन्तेब्भ्योकरन्नमः स्वाहा ॥ ८ ॥
ॐप्रमुञ्च धन्न्वनस्त्वमुभयोरात्त्न्योंर्ज्याम् ॥
याश्च ते हस्तऽ इषवᳬ परा ता भगवो व्वप स्वाहा ॥ ९ ॥
ॐव्विज्ज्यन्धनुः कपर्द्दिनो व्विशल्ल्यो वाणवाँ२ऽउत ॥
अनेशन्नस्य याऽ इषवऽ आभुरस्य निषङ्गधिः स्वाहा ॥ १० ॥
ॐया ते हेतिर्म्मीढुष्टम हस्ते बभूव ते धनुः ॥
तयास्मान्विश्श्वतस्त्वमयक्ष्मया परिभुज स्वाहा ॥ ११ ॥
ॐपरि ते धन्न्वनो हेतिरस्म्मान्वृणक्तु व्विश्श्वतः ॥
अथो यऽ इषुधिस्तवारेऽ अस्म्मन्निधेहि तम् स्वाहा ॥ १२ ॥
ॐअवतत्त्य धनुष्ट्ᳬ सहस्राक्ष शतेषुधे ॥
निशीर्य्य शल्ल्यानाम्मुखा शिवो नः सुमना भव स्वाहा ॥ १३ ॥
ॐनमस्तऽ आयुधायानातताय धृष्ण्णवे ॥
उभाब्भ्यामुत ते नमो बाहुब्भ्यान्तव धन्न्वने स्वाहा ॥ १४ ॥

ॐमानोमहान्तमुतमानोऽअर्ब्भकम्मानऽउक्षन्तमुतमानऽउक्षितम् ॥ मा-
नोव्वधीꣳपितरम्मोतमातरम्मानꣳप्रियास्तन्न्वोरुद्ररीरिषꣳस्वाहा ॥ १५॥
ॐमानस्तोकेतनयेमानऽआयुषिमानोगोषुमानोऽअश्श्वेषुरीरिषꣳ ॥
मानोव्वीरान्नुद्रभामिनोव्वधीर्हविष्म्मन्तꣳसदमित्त्वाहवामहेस्वाहा ॥१६॥
ॐनमो हिरण्यबाहवे सेनान्ये दिशाञ्च पतये नमः स्वाहा ॥ १७ ॥
ॐनमो वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यꣳ पशूनाम्पतये नमः स्वाहा ॥ १८ ॥
ॐनमꣳशष्पिञ्जराय त्त्विषीमते पथीनाम्पतये नमः स्वाहा ॥ १९ ॥
ॐनमो हरिकेशायोपवीतिने पुष्टानाम्पतये नमः, स्वाहा ॥ २० ॥
ॐनमो बब्भ्लुशाय व्याधिनेन्नानाम्पतये नमः स्वाहा ॥ २१ ॥
ॐनमो भवस्य हेत्यै जगताम्पतये नमः स्वाहा ॥ २२ ॥
ॐनमो रुद्द्रायाततायिने क्षेत्त्राणाम्पतये नमः स्वाहा ॥ २३ ॥
ॐनमꣳसूतायाहन्त्यै व्वनानाम्पतये नमः स्वाहा ॥ २४ ॥
ॐनमो रोहिताय स्थपतये व्वृक्षाणाम्पतये नमः स्वाहा ॥ २५ ॥
ॐनमो भुवन्तये व्वारिवस्कृतायौषधीनाम्पतये नमः स्वाहा ॥ २६ ॥
ॐनमो मन्त्रिणे व्वाणिजाय कक्षाणाम्पतये नमः स्वाहा ॥ २७ ॥
ॐनमऽ उच्चैर्घोषायाक्क्रन्दयते पत्तीनाम्पतये नमः स्वाहा ॥ २८ ॥
ॐनमꣳकृत्स्नायतया धावते सत्त्वनाम्पतये नमः स्वाहा ॥ २९ ॥
ॐनमꣳसहमानायनिव्याधिनऽआव्याधिनीनाम्पतयेनमः स्वाहा॥३०॥
ॐनमो निषङ्गिणे ककुभाय स्तेनानाम्पतये नमः स्वाहा ॥ ३१ ॥
ॐनमो निचेरवे परिचरायारण्यानाम्पतये नमः स्वाहा ॥ ३२ ॥
ॐनमो व्वञ्चते परिवञ्चते स्तायूनाम्पतये नमः स्वाहा ॥ ३३ ॥
ॐनमो निषङ्गिणऽ इषुधिमते तस्कराणाम्पतये नमः स्वाहा ॥ ३४ ॥
ॐनमꣳसृकायिभ्यो जिघाꣳसद्भ्योमुष्णताम्पतयेनमः स्वाहा॥३५॥

ॐनमोसिमद्भ्योनक्तञ्चरद्भ्योविकृन्तानाम्पतये नमः स्वाहा॥३६॥
ॐनमऽउष्णीषिणे गिरिचराय कुलुञ्चानाम्पतये नमः स्वाहा ॥३७॥
ॐनमऽइषुमद्भ्यो धन्वायिभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ३८ ॥
ॐनमऽ आतन्वानेभ्यः प्रतिदधानेभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥३९॥
ॐनमऽआयच्छद्भ्योस्यद्भ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ४० ॥
ॐनमो विसृजद्भ्यो विद्ध्यद्भ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ४१ ॥
ॐनमः स्वपद्भ्यो जाग्रद्भ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ४२ ॥
ॐनमꣳ शयानेभ्यऽआसीनेभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ४३ ॥
ॐनमस्तिष्ठद्भ्यो धावद्भ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ४४ ॥
ॐनमः सभाभ्यः सभापतिभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ४५ ॥
ॐनमोऽश्वेभ्योऽश्वपतिभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ४६ ॥
ॐनमऽ आव्याधिनीभ्यो विविद्ध्यन्तीभ्यश्च वो नमः स्वाहा॥ ४७॥
ॐनमऽउगणाभ्यस्तृꣳहतीभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ४८ ॥
ॐनमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ४९ ॥
ॐनमो व्व्रातेभ्यो व्व्रातपतिभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ५० ॥
ॐनमो गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ५१ ॥
ॐनमो विरूपेभ्यो विश्वरूपेभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ५२ ॥
ॐनमꣳ सेनाभ्यꣳ सेनानिभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ५३ ॥
ॐनमो रथिभ्योऽ अरथेभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ५४ ॥
ॐनमः क्षत्तृभ्यः सङ्ग्रहीतृभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ५५ ॥
ॐनमो महद्भ्योऽअर्भकेभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ५६ ॥
ॐनमस्तक्षभ्यो रथकारेभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ५७ ॥

ॐनमᳫकुलालेभ्यᳫ कर्म्मारेभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ५८ ॥
ॐनमो निषादेभ्यः पुञ्जिष्ठेभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ५९ ॥
ॐनमः श्वनिभ्यो मृगयुभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ६० ॥
ॐनमᳫश्वभ्यᳫ श्वपतिभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ६१ ॥
ॐनमो भवाय च रुद्राय च स्वाहा ॥ ६२ ॥
ॐनमः शर्व्वाय च पशुपतये च स्वाहा ॥ ६३ ॥
ॐनमो नीलग्रीवाय च शितिकण्ठाय च स्वाहा ॥ ६४ ॥
ॐनमः कपर्दिने च व्युप्तकेशाय च स्वाहा ॥ ६५ ॥
ॐनमः सहस्राक्षाय च शतधन्वने च स्वाहा ॥ ६६ ॥
ॐनमो गिरिशयाय च शिपिविष्टाय च स्वाहा ॥ ६७ ॥
ॐनमो मीढुष्टमाय चेषुमते च स्वाहा ॥ ६८ ॥
ॐनमो ह्रस्वाय च वामनाय च स्वाहा ॥ ६९ ॥
ॐनमो बृहते च वर्षीयसे च स्वाहा ॥ ७० ॥
ॐनमो वृद्धाय च सवृधे च स्वाहा ॥ ७१ ॥
ॐनमोऽग्र्याय च प्रथमाय च स्वाहा ॥ ७२ ॥
ॐनमऽआशवे चाजिराय च स्वाहा ॥ ७३ ॥
ॐनमᳫ शीघ्र्याय च शीभ्याय च स्वाहा ॥ ७४ ॥
ॐनमऽ ऊर्म्म्याय चावस्वन्याय च स्वाहा ॥ ७५ ॥
ॐनमो नादेयाय च द्वीप्याय च स्वाहा ॥ ७६ ॥
ॐनमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च स्वाहा ॥ ७७ ॥
ॐनमः पूर्वजाय चापरजाय च स्वाहा ॥ ७८ ॥
ॐनमो मद्ध्यमाय चापगल्भाय च स्वाहा ॥ ७९ ॥
ॐनमो जघन्याय च बुध्न्याय च स्वाहा ॥ ८० ॥

ॐनमः सोभ्याय च प्रतिसर्याय च स्वाहा ॥ ८१ ॥
ॐनमो याम्याय च क्षेम्याय च स्वाहा ॥ ८२ ॥
ॐनमः श्लोक्याय चावसान्याय च स्वाहा ॥ ८३ ॥
ॐनमऽ उर्वर्याय च खल्याय च स्वाहा ॥ ८४ ॥
ॐनमो वन्याय च कक्ष्याय च स्वाहा ॥ ८५ ॥
ॐनमः श्रवाय च प्रतिश्रवाय च स्वाहा ॥ ८६ ॥
ॐनमऽ आशुषेणाय चाशुरथाय च स्वाहा ॥ ८७ ॥
ॐनमः शूराय चावभेदिने च स्वाहा ॥ ८८ ॥
ॐनमो बिल्मिने च कवचिने च स्वाहा ॥ ८९ ॥
ॐनमो वर्मिणे च वरूथिने च स्वाहा ॥ ९० ॥
ॐनमः श्रुताय च श्रुतसेनाय च स्वाहा ॥ ९१ ॥
ॐनमो दुन्दुभ्याय चाहनन्याय च स्वाहा ॥ ९२ ॥
ॐनमो धृष्णवे च प्रमृशाय च स्वाहा ॥ ९३ ॥
ॐनमो निषङ्गिणे चेषुधिमते च स्वाहा ॥ ९४ ॥
ॐनमस्तीक्ष्णेषवे चायुधिने च स्वाहा ॥ ९५ ॥
ॐनमः स्वायुधाय च सुधन्वने च स्वाहा ॥ ९६ ॥
ॐनमः स्रुत्याय च पथ्याय च स्वाहा ॥ ९७ ॥
ॐनमः काट्याय च नीप्याय च स्वाहा ॥ ९८ ॥
ॐनमः कुल्याय च सरस्याय च स्वाहा ॥ ९९ ॥
ॐनमो नादेयाय च वैशन्ताय च स्वाहा ॥ १०० ॥
ॐनमः कूप्याय चावट्याय च स्वाहा ॥ १०१ ॥
ॐनमो वीध्र्याय चातप्याय च स्वाहा ॥ १०२ ॥
ॐनमो मेघ्याय च विद्युत्याय च स्वाहा ॥ १०३ ॥

ॐनमो व्वर्ष्यायि चावर्ष्याय च स्वाहा ॥ १०४ ॥
ॐनमो व्वाय्याय च रेष्म्याय च स्वाहा ॥ १०५ ॥
ॐनमो व्वास्तव्याय च व्वास्तुपाय च स्वाहा ॥ १०६ ॥
ॐनमꣳ सोमाय च रुद्राय च स्वाहा ॥ १०७ ॥
ॐनमस्ताम्राय चारुणाय च स्वाहा ॥ १०८ ॥
ॐ नम + शङ्गवे च पशुपतये च स्वाहा ॥ १०९ ॥
ॐ नमऽ उग्राय च भीमाय च स्वाहा ॥ ११० ॥
ॐ नमोऽग्रेवधाय च दूरेवधाय च स्वाहा ॥ १११ ॥
ॐ नमो हन्त्रे च हनीयसे च स्वाहा ॥ ११२ ॥
ॐ नमो व्वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यꣳ स्वाहा ॥ ११३ ॥
ॐ नमस्ताराय स्वाहा ॥ ११४ ॥
ॐ नम÷शम्भवाय च मयोभवाय च स्वाहा ॥ ११५ ॥
ॐ नम÷शङ्कराय च मयस्कराय च स्वाहा ॥ ११६ ॥
ॐ नम÷शिवाय च शिवतराय च स्वाहा ॥ ११७ ॥
ॐ नमꣳपार्य्याय चावार्य्याय च स्वाहा ॥ ११८ ॥
ॐ नम÷प्प्रतरणाय चोत्तरणाय च स्वाहा ॥ ११९ ॥
ॐनमस्तीर्त्थ्याय च कूल्याय च स्वाहा ॥ १२० ॥
ॐ नमꣳशष्प्याय च फेन्याय च स्वाहा ॥ १२१ ॥
ॐ नम÷सिकत्याय च प्रवाह्याय च स्वाहा ॥ १२२ ॥
ॐ नम÷किꣳशिलाय च क्षयणाय च स्वाहा ॥ १२३ ॥
ॐ नम÷कपर्दिने च पुलस्तये च स्वाहा ॥ १२४ ॥
ॐ नमऽइरिण्याय च प्रपथ्याय च स्वाहा ॥ १२५ ॥
ॐ नमो व्व्रज्याय च गोष्ठ्याय च स्वाहा ॥ १२६ ॥

ॐनमस्तल्प्याय च गेह्याय च स्वाहा ॥ १२७ ॥
ॐनमो हृदय्याय च निवेष्प्याय च स्वाहा ॥ १२८ ॥
ॐनमꣳ काट्याय च गह्वरेष्ठाय स्वाहा ॥ १२९ ॥
ॐनमꣳ शुष्क्याय च हरित्याय च स्वाहा ॥ १३० ॥
ॐनमः पाꣳसव्याय च रजस्याय च स्वाहा ॥ १३१ ॥
ॐनमो लोप्याय चोलप्याय च स्वाहा ॥ १३२ ॥
ॐनमऽ ऊर्व्याय च सूर्व्याय च स्वाहा ॥ १३३ ॥
ॐनमः पर्णाय च पर्णशदाय च स्वाहा ॥ १३४ ॥
ॐनमऽउद्गुरमाणाय चाभिघ्नते च स्वाहा ॥ १३५ ॥
ॐनमऽ आखिदते च प्रखिदते च स्वाहा ॥ १३६ ॥
ॐनमऽइषुकृद्भ्यो धनुष्कृद्भ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ १३७ ॥
ॐनमो वꣳ किरिकेभ्यो देवानाꣳहृदयेभ्यः स्वाहा ॥ १३८ ॥
ॐ नमो विचिन्वत्केभ्यो देवानाꣳ हृदयेभ्यः स्वाहा ॥ १३९ ॥
ॐ नमो विक्षिणत्केभ्यो देवानाꣳ हृदयेभ्यः स्वाहा ॥ १४० ॥
ॐनमऽ आनिर्हतेभ्यो देवानाꣳ हृदयेभ्यः स्वाहा ॥ १४१ ॥
ॐद्रापेऽ अन्धसस्पते दरिद्र नीललोहित ॥ आसाम्प्रजानामेषाम्पशूनाम्मा भेर्म्मा रोङ्मो च नꣳ किञ्चनाममत् स्वाहा ॥ १४२ ॥
ॐइमा रुद्राय तवसे कपर्दिने क्षयद्वीराय प्रभरामहेमतीः ॥ यथाशमसद्द्विपदेचतुष्पदेविश्वम्पुष्टङ्ग्रामेऽअस्मिन्ननातुरम् स्वाहा ॥ १४३ ॥
ॐया ते रुद्र शिवा तनूः शिवा विश्वाहा भेषजी ॥
शिवा रुतस्य भेषजी तया नो मृड जीवसे स्वाहा ॥ १४४ ॥

---

१ अत्र [illegible] हृदयेभ्य इति [illegible] ॥ [illegible] हृदयेभ्य इति ॥

ॐ परि नो रुद्रस्य हेतिर्व्वृणक्तु परि त्वेषस्य दुर्म्मतिरघायोः ॥ अवस्थिरा मघवद्भ्यस्तनुष्व मीढ्वस्तोकाय तनयाय मृड स्वाहा ॥१४५॥

ॐ मीढुष्टम शिवतम शिवो न ÷ सुमना भव ॥ परमे वृक्षऽआयुधन्निधाय कृत्तिं वसानऽ आचर पिनाकम्बिभ्रदागहि स्वाहा ॥ १४६ ॥

ॐ विकिरिद्र विलोहित नमस्तेऽ अस्तु भगवः ॥ यास्ते सहस्रᳬहेतयोन्यमस्मन्निवपन्तु ताः स्वाहा ॥ १४७ ॥

ॐ सहस्राणि सहस्रशो बाह्वोस्तव हेतयः ॥ तासामीशानो भगवः पराचीना मुखा कृधि स्वाहा ॥ १४८ ॥

ॐ असङ्ख्याता सहस्राणि ये रुद्राऽ अधि भूम्याम् ॥ तेषाᳬ सहस्रयोजनेव धन्वानि तन्मसि स्वाहा ॥ १४९ ॥

ॐ अस्मिन्महत्यर्ण्णवेन्तरिक्षे भवाऽ अधि ॥ तेषाᳬसहस्रयोजनेव धन्वानि तन्मसि स्वाहा ॥ १५० ॥

ॐ नीलग्रीवाः शितिकण्ठा दिवᳬ रुद्राऽ उपश्रिताः ॥ तेषाᳬसहस्रयोजनेव धन्वानि तन्मसि स्वाहा ॥ १५१ ॥

ॐ नीलग्रीवाः शितिकण्ठाः शर्वाऽअधः क्षमाचराः ॥ तेषाᳬ सहस्रयोजनेव धन्वानि तन्मसि स्वाहा ॥ १५२ ॥

ॐ ये वृक्षेषु शष्पिञ्जरा नीलग्रीवा विलोहिताः ॥ तेषाᳬसहस्रयोजनेव धन्वानि तन्मसि स्वाहा ॥ १५३ ॥

ॐ ये भूतानामधिपतयो विशिखासः कपर्द्दिनः ॥ तेषाᳬ सहस्रयोजनेव धन्वानि तन्मसि स्वाहा ॥ १५४ ॥

ॐ ये पथाम्पथिरक्षयऽ ऐलबृदाऽ आयुर्य्युधः ॥ तेषाᳬसहस्रयोजनेव धन्वानि तन्मसि स्वाहा ॥ १५५ ॥

ॐये तीर्थानि प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषङ्गिणः ॥
तेषाᳬसहस्रयोजनेव धन्वानि तन्मसि स्वाहा ॥ १५६ ॥
ॐयेन्नेषु विविद्ध्यन्ति पात्रेषु पिबतो जनान् ॥
तेषाᳬ सहस्रयोजनेव धन्वानि तन्मसि स्वाहा ॥ १५७ ॥
ॐयऽ एतावन्तश्च भूयाᳬसश्च दिशो रुद्रा वितस्थिरे ॥
तेषाᳬसहस्रयोजनेव धन्वानि तन्मसि स्वाहा ॥ १५८ ॥
ॐनमोस्तु रुद्रेभ्यो ये दिवि येषां वर्षमिषवः ॥ तेभ्यो दश
प्राचीर्दश दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्द्ध्वाः ॥
तेभ्यो नमोऽ अस्तु ते नोवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यन्द्विष्मो
यश्च नो द्वेष्टि तमेषाञ्जम्भे दद्ध्मः स्वाहा ॥ १५९ ॥
ॐनमोस्तु रुद्रेभ्यो येन्तरिक्षे येषां वातऽइषवः ॥ तेभ्यो दश
प्राचीर्दश दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्द्ध्वाः ॥
तेभ्यो नमोऽ अस्तु ते नोवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यन्द्विष्मो
यश्च नो द्वेष्टि तमेषाञ्जम्भे दद्ध्मः स्वाहा ॥ १६० ॥
ॐनमोस्तु रुद्रेभ्यो ये पृथिव्यांम्येषामन्नमिषवः ॥ तेभ्यो दश
प्राचीर्दश दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्द्ध्वाः ॥
तेभ्यो नमोऽ अस्तु ते नोवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यन्द्विष्मो
यश्च नो द्वेष्टि तमेषाञ्जम्भे दद्ध्मः स्वाहा ॥ १६१ ॥

॥ एकषष्ट्युत्तरशतधामन्त्रविभागात्मकरुद्रहोमस्वाहाकाराः सम्पूर्णाः ॥

एवम् एकषष्ट्युत्तरशतधामन्त्रविभागात्मकरौद्राध्यायेनैकादशवारं जुहुयात् ॥

ॐवषट्सोम०॥ एषतेरुद्र०॥ अवरुद्रम०॥ भेषजमसि०॥ त्र्यम्ब-कंयजा०॥ एतत्तेरुद्रा०॥ त्र्यायुषञ्जम०॥ शिवोनामासि० सुवी-

र्घ्याय स्वाहा ॥ इति अष्टकण्डिकात्मकेन महच्छिरसा प्रतिलघुरुद्रान्ते एकामाहुतिं जुहुयात् ॥

ॐऋचंवाचम्प्रपद्ये० स्वाहा ॥ १ ॥ ॐयन्मेछिद्रं० स्वाहा ॥ २ ॥ ॐभूर्भुवःस्वः ॥ तत्सवितु० स्वाहा ॥ ३ ॥ ॐकयानश्चित्रऽआ० स्वाहा ॥४॥ ॐकस्त्वासत्यो० स्वाहा ॥ ५ ॥ ॐअभीषुणः० स्वाहा ॥ ६ ॥ ॐकयात्वन्न० स्वाहा ॥७॥ ॐइन्द्रोविश्वस्य० स्वाहा ॥८॥ ॐशन्नोमित्रः० स्वाहा ॥ ९ ॥ ॐशन्नोव्वातः० स्वाहा ॥ १० ॥ ॐअहानिशं० स्वाहा ॥ ११ ॥ ॐशन्नोदेवी० स्वाहा ॥ १२ ॥ ॐस्योनापृथिवि० स्वाहा ॥ १३ ॥ ॐआपोहिष्ठा० स्वाहा ॥१४॥ ॐयोवः शिवतमो० स्वाहा ॥ १५ ॥ ॐतस्माऽअरङ्ग० स्वाहा ॥ १६ ॥ ॐद्यौःशान्ति० स्वाहा ॥१७॥ ॐदृतेदृꣳहमामित्रस्यमा० स्वाहा ॥१८॥ ॐदृतेदृꣳहमा ॥ ज्योक्ते० स्वाहा ॥१९॥ ॐनमस्तेहरसे० स्वाहा॥२०॥ ॐनमस्तेऽअस्तु० स्वाहा ॥ २१ ॥ ॐयतोयतः० स्वाहा ॥२२॥ ॐसुमित्रियान० स्वाहा ॥२३॥ ॐतच्चक्षुर्देवहितं स्वाहा० ॥२४॥ एवम् ऋचंव्वाचमित्यादिभिः शान्त्यध्यायमन्त्रैः चतुर्विंशतिभिराहुतिभिर्जुहुयात् ॥

एवं क्रमेण लघुरुद्रहोमं विधाय सर्वे ऋत्विजः षडङ्गन्यासं कुर्युः॥ तत आचार्यो लिङ्गतोभद्रदेवतानाममन्त्रैर्जुहुयात् ॥ तत आचारात् फलहोमं गुग्गुलहोमं सर्षपहोमं लक्ष्मीहवनं च विधाय आवाहितदेवतानामुत्तरपूजनं कुर्यात् ॥ अनन्तरं स्विष्टकृदादिप्रणीताविमोकान्तं च कुर्यात् ॥ ततो यजमानः आचार्यादिभ्यो दक्षिणां दद्यात् ॥ ततोऽभिषेकः ॥ भूयसीसङ्कल्पः ॥ कृतकर्मण ईश्वरार्पणम् ॥ देवताविसर्जनम् ॥ अग्निविसर्जनम् ॥ ततो ब्राह्मणभोजनम् ॥

॥ इति लघुरुद्रहोमप्रयोगः समाप्तः ॥

॥ अथ देवीयागात्मकस्तृतीयो विभागः ॥

॥ ४६ ॥ अथ नवचंडीशतचंडीसहस्रचंडीप्रयोगः ॥

श्रीगणेशाय नमः । पूर्वं कुण्डमण्डपं विधाय यथाविधि प्रायश्चित्तं कृत्वा शुभेऽह्नि सपत्नीकः कर्ता तिलतैलेन कृताभ्यंगो भूषितसंपूर्णकलशहस्तो भद्रंकर्णेभिरिति मण्डपं प्रदक्षिणीकृत्य पश्चिमद्वारेण प्रविश्योपविश्य देशकालौ स्मृत्वा ममेहजन्मनि दुर्गाप्रीतिद्वारा सर्वोपच्छान्तिपूर्वकं दीर्घायुर्विपुलधनधान्यपुत्रपौत्राद्यनवच्छिन्नसंततिवृद्धिस्थिरलक्ष्मीकीर्तिलाभशत्रुपराजयसदभीष्टसिद्ध्यर्थं भूतप्रेतपिशाचादिभयनिवृत्त्यर्थं राजभयदस्युभयादिनिवृत्तये च ममाशेषपापक्षयार्थं श्रीविद्यानादिविद्यानां परिशीलनजनितपरमज्ञानावाप्तये परमपदप्राप्तये महिषशुम्भनिशुम्भधूम्रलोचनदैत्यदानवगणगन्धर्वयक्षराक्षसवेतालादिजनितसर्वोपद्रवनाशिन्या आनन्दमाङ्गल्यातुलबुद्धिपराक्रमदायिन्या द्विपदचतुष्पदक्षेमकर्या दृग्वक्रमिश्रह्रोचनाद्यनन्तरूपाया। गणपतिक्षेत्रपालवास्तुयोगिनीवटुकनवग्रहादिपरिवारयुतायाः श्रीभवानीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यादित्रिगुणात्मिकायाः श्रीगौरीवागीश्वर्यादिरूपायाः पराम्बाभगवतीजगदम्बायाः प्रीतिकामः सग्रहमखां नवचण्डीं शतचण्डीं सहस्रचण्डीं वा ब्राह्मणद्वारा करिष्ये ॥ तदङ्गतया गणपतिपूजनं पुण्याहवाचनं मातृकापूजनं वसोर्धारामायुष्यमन्त्रजपं नांदीश्राद्धमाचार्यादिवरणं च करिष्ये ॥ इति संकल्प्य तानि कृत्वा आचार्यादीन्वृत्वा तान्यथाविभवं वस्त्रादिना संपूज्य प्रार्थयेत् ॥ ते च शतचंड्यां दश सहस्रचंड्यां शतम् ॥ (केचिदत्र ग्रहजपार्थमेकमृत्विजं वरयन्ति ॥) अथाचार्य आचम्य देश-

१ गर्गसंहिताः प्रयोगः कर्तव्यश्चेदस्माकं ह्यगारमहाशतचण्डीप्रयोगो द्रष्टव्यः ॥

काली संकीर्त्य यजमानेन वृतोऽहमाचार्यकर्म करिष्ये इति संकल्प्य "यदत्र०" इति गौरसर्षपान्विकीर्य पंचगव्येन कुशोदकेन वा मण्डपं प्रोक्षेत्॥आपोहिष्ठा०।अपवित्रः०।पृथ्वित्वया०।इति। तत उपविश्य अनंतासनाय नमः॥ विमलासनाय नमः॥ पद्मासनाय०॥ अपक्रामन्तु०। इति भूमौ वामपादघातत्रयं कृत्वा ततो वेद्यां सर्वतोभद्रमष्टदलं वा विलिख्य तत्र ब्रह्मादिमंडलदेवताः संस्थाप्य तन्मध्ये महीद्यौरित्यादिमंत्रैः कलशं संस्थाप्य तस्मिन्गंधपुष्पफलसर्वौषधीदूर्वापंचपल्लवसप्तमृत्तिकापूगीफलपञ्चरत्नदक्षिणाश्च तत्तन्मंत्रेण निक्षिप्य वस्त्रद्वयेनावेष्ट्य तदुपरिपूर्णपात्रं निधाय कलशे वरुणमावाह्य पूजयेत्॥ ततः कलशे देवताः स्मरेत्॥ कलशस्य मुखे विष्णुः० प्रसन्नो भव सर्वदा॥ इतिकलशं प्रार्थयेत्॥ ततः कलशोपरिस्थपूर्णपात्रे वस्त्रे यंत्रं लिखेत्॥ तद्यथा॥ मध्ये बिन्दुं त्रिकोणं तद्बहिः षट्कोणं तद्बाह्ये वृत्तं तद्बाह्येऽष्टौ दलानि तदुपरि वृत्तं तदुपरि चतुर्विंशतिपत्राणि तद्बाह्ये चतुर्द्वारं चतुरस्रत्रयमिति॥ एवं यंत्रं विलिख्य तत्राष्टादशभुजाम् अष्टभुजां वा सिंहारूढां सौवर्णी देवीमूर्तिमग्न्युत्तारणप्राणप्रतिष्ठापूर्वकं प्रतिष्ठाप्य पूजयेत्॥

अथ देवीपूजाप्रयोगः॥ मूलेनाचम्य प्राणानायम्य॥ शिखाबन्धनम्॥ अद्ये० अमुक नाम्नो मम चतुर्विधपुरुषार्थसिद्ध्यर्थं श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीत्रिगुणात्मिकाम्बिकादेवताप्रीत्यर्थं पात्रासादनपूर्वकं श्रीत्रिगुणात्मिकाया जगदम्बिकाया यथामिलितोपचारद्रव्येण पूजनमहं करिष्ये॥ तदङ्गतया पूजनाधिकारार्थं भूशुद्ध्यादिन्यासानेकादशन्यासांश्च करिष्ये॥ पूर्ववत् भूशुद्धिभूतशुद्ध्यादिन्यासान्कुर्यात्॥

---

१ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे॥ २ भूशुद्ध्यादिन्यासाः (१३४–१३५) पत्रे द्रष्टव्याः।

॥ अथैकादशन्यासप्रयोगः ॥

ॐ अस्य श्री नवार्णमन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुरुद्रा ऋषयः गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दांसि श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यो देवताः नन्दाशाकम्भरीभीमाः शक्तयः रक्तदन्तिकादुर्गाभ्रामर्यो बीजानि अग्निवायुसूर्यास्तत्त्वानि सर्वाभीष्टसिद्ध्यर्थं श्रीमहालक्ष्मीपूजाङ्गत्वेन न्यासे विनियोगः ॥ ऋषिन्यासः—ॐ ब्रह्मविष्णुरुद्रऋषिभ्यो नमः शिरसि ॥ गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दोभ्यो नमः मुखे ॥ श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीदेवताभ्यो नमः हृदि ॥ नंदाशाकम्भरीभीमाशक्तिभ्यो नमो दक्षिणस्तने ॥ रक्तदन्तिकादुर्गाभ्रामरीबीजेभ्यो नमो वामस्तने ॥ अग्निवायुसूर्येभ्यस्तत्त्वेभ्यो नमः नाभौ ॥ इति ऋष्यादिन्यासः ॥ मूलेन करौ संशोधयेत् ॥

॥ अथैकादशन्यासाः दुर्गोपासनाकल्पस्थाः ॥ प्रथमो मातृकान्यासो देवसारूप्यदः स्मृतः ॥ स च अङ्गुष्ठानामिकामेळनरूपया तत्त्वमुद्रया सर्वत्र न्यस्य कर्तव्यः ॥ सर्वत्रादौ प्रणवोच्चारः । अं नमो मूर्ध्नि । आं नमो ललाटे । इं नमो दक्षिणनेत्रे । ईं नमो वामनेत्रे । उं नमो दक्षिणकपोले । ऊँ नमो वामकपोले । ऋं नमो दक्षिणकर्णे । ॠं नमो वामकर्णे । ऌं नमो दक्षनासापुटे । ॡं नमो वामनासापुटे । एं नमः ऊर्ध्वोष्ठे । ऐं नमः अधरोष्ठे । ओं नमः ऊर्ध्वदन्तपङ्क्तौ । औं नमः अधोदन्तपङ्क्तौ । अं नमः जिह्वायाम् । अः नमस्तालुनि । कं नमो दक्षिणबाहुमूले । खं नमो दक्षिणकूर्परे । गं नमो दक्षिणमणिबन्धे । घं नमो दक्षिणाङ्गुलिमूले । ङं नमो दक्षिणाङ्गुल्यग्रे । चं नमो वामबाहुमूले । छं नमो वामकूर्परे । जं नमो वाममणिबन्धे । झं नमो

वामाङ्गुलिमूले । ञं नमो वामाङ्गुल्यग्रे । टं नमो दक्षिणपादमूले । ठं नमो दक्षिणजानुनि । डं नमो दक्षिणपादगुल्फे । ढं नमो दक्षिणपादाङ्गुलिमूले । णं नमो दक्षिणपादाङ्गुल्यग्रे । तं नमो वामपादमूले । थं नमो वामजानुनि । दं नमो वामपादगुल्फे । धं नमो वामपादाङ्गुलिमूले । नं नमो वामपादाङ्गुल्यग्रे । पं नमो दक्षिणपार्श्वे । फं नमो वामपार्श्वे । बं नमो पृष्ठे । भं नमो नाभौ । मं नमः उदरे । यं नमस्त्वचि । रं नमः असृजि । लं नमः मांसे । वं नमः स्नायुषु । शं नमः अस्थिनि । षं नमः मज्जायाम् । सं नमः मेदसि । हं नमः शुक्रे । क्षं नमः सर्वत्र । इति मातृकान्यासः प्रथमः येन मांत्रिकः साङ्गवेदसमो भाति ॥ १ ॥ (२) द्वितीयः सारस्वतो न्यासः ॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं अनामिकाभ्यां नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं मध्यमाभ्यां नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं तर्जनीभ्यां नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं करतलाभ्यां नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं करपृष्ठाभ्यां नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं स्फाराभ्यां नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं मणिबन्धाभ्यां नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं हृदयाय नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं शिरसे नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं शिखायै नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं कवचाय नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नेत्रद्वयाय नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं अस्त्राय नमः। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं पूर्वायै नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं अग्नये नमः। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं दक्षिणायै नमः। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं निर्ऋतये नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं पश्चिमायै नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं वायवे नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं उत्तरायै नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं ईशानाय नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं ऊर्ध्वायै नमः। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं अधस्तान्नमः। इति द्वितीयः सारस्वतो न्यासः येन दुरितं जाड्यं वाक्पापसञ्चयश्च

परहंसोऽक्षिमण्डलं मे पातु । महिषारूढः प्रेतः पदद्वयं मे पातु । हंसौं महेशश्चण्डिकायुक्तः सर्वाङ्गं मे पातु । इति षष्ठः सद्गतिप्रापको न्यासः येन वैकुण्ठसुखं सर्वकष्टोपशान्तिश्च भवति ॥६॥ (७) सप्तमो रोगनाशको न्यासः ॥ ऐं नमो ब्रह्मरन्ध्रे । ह्रीं नमो दक्षिणनेत्रे । क्लीं नमः वामनेत्रे । चां नमो दक्षिणकर्णे । मुं नमो वामकर्णे । डां नमो दक्षिणनासापुटे । यैं नमो वामनासापुटे । विं नमो मुखे । च्चें नमो पायौ ॥ इति सप्तमो मूलाक्षरो रोगनाशको न्यासः येन सर्वरोगक्षयो भवति ॥७॥(८) अष्टमः सर्वदुःखहरो न्यासः॥ च्चें नमः पायौ । विं नमो मुखे । यैं नमो वामनासापुटे। डां नमो दक्षिणनासापुटे । मुं नमो वामकर्णे। चां नमो दक्षिणकर्णे। क्लीं नमो वामनेत्रे। ह्रीं नमो दक्षिणनेत्रे। ऐं नमो ब्रह्मरन्ध्रे ॥ इति अष्टमः विलोमाक्षरः सर्वदुःखहरो न्यासः येन सर्वदुःखं विनश्यति ॥ ८ ॥ (९) नवमो देवतामाप्तिकृन्न्यासः ॥ मूलमुच्चार्य । मस्तकाच्चरणांतं चरणान्मस्तकान्तम् अष्टवारं व्यापकं कुर्यात् । तद् यथा-प्रथमं पुरतो मूलेन मस्तकाच्चरणावधि ॥ ततश्चरणान्मस्तकावधि मूलोच्चारेण व्यापकम् । एवं दक्षिणतः पश्चाद्वामभागे चेति प्रतिदिग्भागेऽनुलोमविलोमतया द्विर्द्विरिति ॥ इति नवमो मूलव्यापको देवतामाप्तिकृन्न्यासः येन साधको देववद्भवेत् ॥९॥ (१०) दशमः त्रैलोक्यवशकृन्न्यासः ॥ मूलमुच्चार्य हृदयाय नमः। शिरसे स्वाहा । शिखायै वषट्। कवचाय हुम्। नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ अस्त्राय फट् । इति एवं मूलमुच्चार्य षडंगेषु न्यसेत् ॥ इति दशमस्त्रैलोक्यवशकृन्न्यासः येन साधको यद्वदति तदेव भवति यद्दृष्ट्या पश्यति तत्तथैव भवति ॥१०॥ (११) एकादशः सर्वरक्षाकरो न्यासो दशन्याससमफलदायकः ॥ खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा।

शङ्खिनी चापिनी बाणभुशुण्डीपरिघायुधा ॥ १ ॥ सौम्या सौम्यतराशेष-
सौम्येभ्यस्त्वतिसुन्दरी ॥ परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी ॥२॥ यच्च
किञ्चित्क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके ॥ तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा
त्वं किं स्तूयसे मया ॥ ३ ॥ यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पात्यत्ति यो
जगत् ॥ सोपि निद्रावशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः ॥ ४ ॥ विष्णुः
शरीरग्रहणमहमीशान एव च ॥ कारितास्ते यतो तस्त्वां कः स्तोतुं
शक्तिमान्भवेत् ॥ ५ ॥ आद्यं वाग्बीजं ऐं श्यामवर्णं ध्यात्वा सर्वाङ्गे
विन्यसेत् ॥ शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके ॥ घण्टास्व-
नेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च ॥ १ ॥ प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च
चण्डिके रक्ष दक्षिणे ॥ भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरी ॥२॥
सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते ॥ यानि चात्यर्थ-
घोराणि तैरक्षास्माँस्तथा भुवम् ॥ ३ ॥ खड्गशूलगदादीनि यानि
चास्त्राणि तेऽम्बिके ॥ करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान्रक्ष सर्वतः ॥ ४ ॥
द्वितीयं मायाबीजं ह्रीं बालार्कवर्णं ध्यात्वा सर्वाङ्गे विन्यसेत् ॥ सर्व-
स्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते ॥ भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि
नमोऽस्तु ते ॥१॥ एतत्ते वदनं सौम्यं लोचनत्रयभूषितम् ॥ पातु नः सर्व-
भूतेभ्यः कात्यायनि नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥ ज्वालाकरालमत्युग्रमशेषासुर-
सूदनम् ॥ त्रिशूलं पातु नो भीतेर्भद्रकालि नमोऽस्तु ते ॥३॥ हिनस्ति
दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत् ॥ सा घण्टा पातु नो देवि पापे-
भ्योऽनः सुतानिव ॥ ४ ॥ असुरासृग्वसापङ्कचर्चितस्ते करोज्ज्वलः ॥
शुभाय खड्गो भवतु चण्डिके त्वां नता वयम् ॥ ५ ॥ तृतीयं काम-
बीजं क्लीं स्फटिकाभासं ध्यात्वा सर्वाङ्गे विन्यसेत् ॥ इति सर्वानिष्टहरः
सर्वाभीष्टदः सर्वरक्षाकरश्चैकादशो न्यासः ॥ ११ ॥

॥ इत्येकादशन्यासप्रयोगः ॥

एवमेकादशन्यासान् कृत्वा गणपतिं स्मृत्वा। देव्या दक्षिणे घृतदीपं तन्मध्ये बिन्दुत्रिकोणषट्कोणं देव्या वामे तैलदीपं तन्मध्ये बिन्दुत्रिकोणषट्कोणात्मकं यन्त्रं विलिख्य संपूज्य दीपं प्रज्वाल्य सम्पूज्य प्रार्थयेत् ॥ भो दीप देवीरूपस्त्वं कर्मसाक्षी ह्यविघ्नकृत् ॥ यावत्कर्मसमाप्तिः स्यात्तावत्त्वं सुस्थिरो भव ॥ १ ॥ इति दीपं संस्थाप्य शरीरशुद्ध्यर्थं मूलमन्त्रेण षडङ्गन्यासं कृत्वा कलशे वरुणं संपूज्य शङ्खं घण्टां च सम्पूज्य कलशजलेन सर्वत्र प्रोक्षयेत् ॥ अपवित्रः० ॥

॥ ४७ ॥ अथ पात्रासादनप्रयोगः ॥

"अथ पात्रस्थापनम्"—तत्रादौ(१) कलशः॥ स्ववामे बिंदुत्रिकोणषट्कोणवृत्तचतुरस्रात्मकं यंत्रं विलिख्य अक्षतैः पूजयेत् ॥ मध्ये मूलं । त्रिकोणे त्रिपदैः-ऐं ह्रीं क्लीं । चामुंडायै । विच्चे नमः ॥ एवं द्विरावृत्त्या षट्कोणे ॥ मातृकया वृत्तम्-अं आं इत्यादि क्षान्तम् ॥ चतुरस्रे षडंगानि—आग्नेये ऐं हृदयाय० । ऐशाने ह्रीं शिरसे० । नैर्ऋत्ये क्लीं शिखायै० । वायव्ये चामुंडायै कवचाय० । मध्ये विच्चे नेत्रत्रयाय० । चतुर्दिक्षु मूलम् अस्त्राय० ॥ इति यंत्रं संपूज्य हुं इति आधारं प्रक्षाल्य ॥ मूलेन संस्थाप्य ॥ ॐ मंवह्निमंडलाय दशकलात्मने श्रीत्रिगुणात्मिकादुर्गादेवताकलशपात्राधाराय नमः इति आधारं संपूज्य दशकलाः पूजयेत्॥ ॐ यं धूम्रार्चिषे नमः॥ रं ऊष्मायै०। लं ज्वलिन्यै०। वं ज्वालिन्यै०। शं विस्फुलिंगिन्यै०। षं सुश्रियै०। सं सुरूपायै०। हं कपिलायै०। ळं हव्यवाहायै०। क्षं कव्यवाहायै०॥ १०॥ इति संपूज्य हुं इति पात्रं प्रक्षाल्य मूलेन संस्थाप्य सूर्यमंडलाय द्वादशकलात्मने श्रीत्रिगुणात्मिका-दुर्गादेवता-कलशपात्राय नमः इति संपूज्य ॥ द्वादशकलाः पूजयेत् ॥ ॐ कं भं तपिन्यै० । खं

१ कलशमुद्रां प्रदर्शयेत् ॥ २ शङ्खमुद्रां प्रदर्शयेत् ॥ ३ घण्टामुद्रां प्रदर्शयेत् ॥

वं तापिन्यै० । गं फं धूम्रायै० । घं पं मरिच्यै० । ङं नं ज्वालिन्यै० । चं धं रुच्यै० । छं दं सुषुम्णायै० । जं थं भोगदायै० । झं तं विश्वायै० । ञं णं बोधिन्यै० । टं ढं धारिण्यै० । ठं डं क्षमायै० ॥१२॥ इति संपूज्य ॥ तत्र विलोममातृकया शुद्धजलमापूरयेत् । यथा ॥ ॐ क्षं ळं हं सं षं शं वं लं रं यं मं भं बं फं पं नं धं दं थं तं णं ढं डं ठं टं ञं झं जं छं चं ङं घं गं खं कं अः अं औं ओं ऐं एं लॄं लृं ॠं ऋं ऊं उं ईं इं आं अं ॥ गालिनीमुद्रया निरीक्ष्य ॥ षोडशकलात्मने चंद्रमंडलाय श्री त्रिगुणात्मिका दुर्गादेवता-कलशामृताय नमः इति संपूज्य तत्र षोडशकलाः पूजयेत् ॥ अं अमृतायै० । आं मानदायै० । इं पूषायै० । ईं पुष्ट्यै० । उं तुष्ट्यै० । ऊं रत्यै० । ऋं धृत्यै० । ॠं शशिन्यै० । लृं चंद्रिकायै० । लॄं कान्त्यै० । एं ज्योत्स्नायै० । ऐं श्रियै० । ओं प्रीत्यै० । औं अंगदायै० । अं पूर्णायै० । अः पूर्णामृतायै० ॥१६॥ इति संपूज्य ॥ फडिति संरक्ष्य मूलेन देवीमावाह्य आवाहनादिदशमुद्राः प्रदर्शयेत् ॥ यथा ॥ मूलेन-आवाहिता भव ॥ स्थापिता भव ॥ सन्निहिता भव ॥ सन्निरुद्धा भव ॥ संमुखीकृता भव ॥ षडंगेन सकलीकृता भव । मूलं हृदयायेत्यादि अवगुंठिता भव ॥ अमृतीकृता भव ॥ परमीकृता भव ॥ योनिमुद्रां प्रदर्श्य ॥१०॥ मूलेन संपूज्य ॥ मत्स्यमुद्रयाऽऽच्छाद्य । मूलेनाष्टवारमभिमंत्र्य ॥ धेनुं योनिं च प्रदर्शयेत् ॥ इति कलशः ॥

मध्ये मूलम् । त्रिकोणे त्रिपदैः । मातृकया वृत्तम् । चतुरस्रे षडंगानि । फडिति आधारं प्रक्षाल्य । मूलेन संस्थाप्य । मं वह्निमंडलाय दशकलात्मने श्रीत्रिगुणात्मिकादुर्गादेवतासामान्यार्घपात्राधाराय नमः इति आधारं संपूज्य । फड् इति पात्रं प्रक्षाल्य । मूलेन संस्थाप्य । सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मने श्रीत्रिगुणा० सामान्यार्घपात्राय नमः इति पात्रं संपूज्य । मूलेन शुद्धजलमापूर्य गालिनीमुद्रया निरीक्ष्य चंद्रमंडलाय षोडशकलात्मने श्रीदुर्गादेवतासामान्यार्घपात्रामृताय नमः इति सम्पूज्य ॥ मत्स्यमुद्रयाऽऽच्छाद्य मूलेनाष्टधाऽभिमंत्र्य धेनुमुद्रां योनिमुद्रां च प्रदर्शयेत् ॥ इति सामान्यार्घः ॥

"अथ (३) विशेषार्घः"—सामान्यार्घाद्दक्षिणे आत्मश्रीचक्रयोर्मध्ये बिंदुत्रिकोणषट्कोणवृत्तचतुरस्रात्मकं यंत्रं चंदनादिना विलिख्य अक्षतैः पूजयेत् ॥ मध्ये मूलम् ॥ त्रिकोणे त्रिपदैः—ऐं ह्रीं क्लीं । चामुंडायै । विच्चे नमः॥ एवं द्विरावृत्त्या षट्कोणे ॥ मातृकया वृत्तम्-अं आं इत्यादि क्षान्तम् ॥ चतुरस्रे षडंगानि । इति यंत्रं संपूज्य । हुं इत्याधारं प्रक्षाल्य । मूलेन संस्थाप्य । मं वह्निमंडलाय दशकलात्मने श्रीदुर्गादेवताविशेषार्घपात्राधाराय नम इति आधारं संपूज्य । तत्र पूर्वोक्ताः दशकलाः पूजयेत् ॥ ततः हं इति पात्रं प्रक्षाल्य मूलेन संस्थाप्य ॥ सूर्यमंडलाय द्वादशकलात्मने श्रीदुर्गादेवताविशेषार्घपात्राय नम इति पात्रं संपूज्य तत्र पूर्वोक्ता द्वादशकलाः पूजयेत् । ततः तत्र क्षं ळं इत्यादि विलोममातृकया शुद्धजलमापूर्य गालिनीमुद्रया निरीक्ष्य षोडशकलात्मने चंद्रमंडलाय श्रीत्रिगु० दुर्गादेवताविशेषार्घपात्रामृताय नम इति संपूज्य तत्र पूर्वोक्ताः षोडशकलाः संपूज्य फडिति संरक्ष्य मूलेन देवीमावाह्य आवाहनादिदशमुद्राः प्रदर्श्य मूलेन संपूज्य मत्स्यमुद्रयाऽऽच्छाद्य

मूलेन षोडशवारमभिमंत्र्य धेनुमुद्रां योनिमुद्रां च प्रदर्शयेत् ॥ इति विशेषार्घः ॥ अथ तद्दक्षिणे पाद्यादिपञ्चपात्राणि स्थापयेत्

(४)पाद्यपात्रम् (५) अर्घपात्रम् (६) आचमनीयपात्रं (७) मधुपर्कपात्रं (प्रोक्षणार्थं)(८) प्रोक्षणीपात्रं च सामान्यार्घवत् संस्थाप्य पाद्यपात्रे श्यामाक (सामे) दुर्वाविष्णुक्रान्तादीनि प्रक्षिप्य अर्घ्यपात्रे सर्षपतिलदूर्वाकुशप्रक्षेपः । आचमनीयपात्रे जातीफलैलालवंगकंकोल (चिनकबाला) प्रक्षेपः । मधुपर्कपात्रे दधिमधुघृतानि प्रक्षिप्य विशेषार्घबिन्दुं सर्वपात्रेषु प्रक्षिप्य मूलेन प्रोक्षणीपात्राज्जलं गृहीत्वा तज्जलेन पूजासामग्रीं मूलेन सम्प्रोक्ष्य आत्मानं प्रोक्षयेत् ॥ इत्थं पात्रासादनं कृत्वा अन्तर्यजनं यथाधिकारं कृत्वा स्वहृदयस्थां महालक्ष्मीं ध्यात्वा मानसोपचारैः संपूज्य स्वात्मना सहैक्यं भावयेत् ॥ तत आत्मपूजां कुर्यात् ॥ यथा–मं मंडूकाय० आधारे। कालाग्निरुद्राय० स्वाधिष्ठाने । कच्छपाय० नाभौ । आधारशक्तिकूर्मानन्तपृथिवीसागररत्नद्वीपप्रासादहेमपीठेभ्यो० हृदि । धर्माय० दक्षांसे । ज्ञानाय० वामांसे । वैराग्याय० वामोरौ । ऐश्वर्याय० दक्षोरौ । अधर्माय० मुखे । अज्ञानाय० वामपार्श्वे । अवैराग्याय० नाभौ । अनैश्वर्याय० दक्षिणपार्श्वे । अनन्ताय० हृदि । तत्त्वपद्माय० । आनन्दमयकन्दाय० । संविन्नालाय० । विकारमयकेसरेभ्यो० । प्रकृतिमयपत्रेभ्यो० । पंचाशद्वर्णबीजाढ्यकर्णिकायै० । सूर्यमंडलाय० । चंद्रमंडलाय० । अग्निमंडलाय० । इत्यन्तं हृदि न्यसेत् ॥ पीताद्याः पीठशक्तयः॥ पीतायै० । श्वेतायै० । अरुणायै० । कृष्णायै० । धूम्रायै० । तीव्रायै० । स्फुलिंगिन्यै० । रुचिरायै० । ज्वालिन्यै० ॥ रं पद्मासनाय० । इति स्वदेहे पीठशक्तिं विन्यसेत् ॥ इति ॥

तत आत्मानं गन्धपुष्पैरभ्यर्च्य ॥ मूलेन त्रिः स्वशिरसि पुष्पांजलिं

दत्त्वा मानसोपचारैः संपूज्य देवरूपः सन् मूलं जप्त्वा देव्यै जपं निवेद्य पुष्पमाघ्राय "कुंभोदराय नमः" इति वामे क्षिप्त्वा हस्तं प्रक्षाल्य पीठपूजां कुर्यात् ॥

अथ पीठपूजा ॥ हस्ते अक्षतान् गृहीत्वा—ॐ पूर्वपीठाय नमः । ॐ, पं पूर्णपीठाय नमः । कं कामपीठाय० । प्राच्यां दिशि—उ० उं उड्यान-पीठाय० । आग्नेय्यां-मां मातृपीठाय० । दक्षिणे-जं जालंधरपीठाय० । नैर्ऋत्ये-कं कोल्हापुरोपपीठाय० । पश्चिमे पूं पूर्णगिरिपीठाय० । वायव्यां-सौं सौहारोपपीठाय० । उत्तरे-कं कोल्हागिरिपीठाय० । ऐशान्यां-कं कामरूपीठाय० ॥ १ ॥ इति पीठं सम्पूज्य ॥ नमस्कारः —दक्षिणे-गुरवे० । परमगुरवे० । परमेष्ठिगुरवे० । गुरुपंक्तये० । मातापितृभ्यां० । उपमन्युनारदसनकव्यासादिभ्यो० ॥ ६ ॥ वामे गं गणपतये० । दुं दुर्गायै० । सं सरस्वत्यै० । क्षं क्षेत्रपालाय० ॥४॥ इति नत्वा ॥ पीठदेवताः स्थापयेत्—पीठमध्ये-मं मण्डूकाय० । आं आधारशक्त्यै० । मूं मूलप्रकृत्यै० । कं कालाग्निरुद्राय० । तदुपरि आं आदिकूर्माय० । अं अनन्ताय० । आं आदिवराहाय० । पं पृथिव्यै० । तदुपरि—अं अमृतार्णवाय० । रं रत्नद्वीपाय० । हं हेम-गिरये० । नं नन्दनोद्यानाय० । कं कल्पवृक्षाय० । मं मणिभूत-लाय० । दं दिव्यमण्डपाय० । सं स्वर्णवेदिकायै० । रं रत्नसिंहास-नाय० । धं धर्माय० । ज्ञां ज्ञानाय० । वैं वैराग्याय० । ऐं ऐश्वर्याय० । इति सम्पूज्य ॥ पूर्वे—अं अनैश्वर्याय० । पुनर्मध्ये-सं सत्त्वाय० । मं प्रबोधात्मने० । रं रजसे० । मं प्रकृत्यात्मने० । तं तमसे० । मं मोहा-त्मने० । सों सोममण्डलाय० । सूं सूर्यमण्डलाय० । वं वह्निमण्डलाय० । मां मायातत्त्वाय० । विं विद्यातत्त्वाय० । शं शिवतत्त्वाय० । ब्रं ब्रह्मणे० ।

मं महेश्वराय० । आं आत्मने० । अं अन्तरात्मने० । पं परमात्मने० । जं जीवात्मने० । ज्ञं ज्ञानात्मने० । कं कन्दाय० । नं नीलाय० । पं पद्माय० । मं महापद्माय० । रं रत्नेभ्यो० । कें केसरेभ्यो० । कं० कर्णिकायै० ॥५१॥

अथ नवशक्तीः स्थापयेत् ॥ तद्यथा—पूर्वाद्यष्टसु दिक्षु ॥ नन्दायै० । भगवत्यै० । रक्तदन्तिकायै० । शाकम्भर्यै० । दुर्गायै० । भीमायै० । कालिकायै० । भ्रामर्यै० । मध्ये शिवदूत्यै० ॥ ९ ॥ इति संस्थाप्य यथाशक्त्या शक्तिसहितपीठदेवताः पूजयेत् ॥ इति ॥

अथ यंत्रदेवतास्थापनम् ॥ हस्ते अक्षतान् गृहीत्वा ॥ विंदुमध्ये ऐंह्रींक्लीं चामुंडायै विच्चे श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीस्वरूपिणीश्रीत्रिगुणात्मिकादुर्गादेवतायै नमः श्रीमन्महाकाली० दुर्गादेवतामावा० ॥ विंदोः परितो गुरुचतुष्टयमावाहयेत् ॥ गुरवे० । परात्परगुरवे० । परमेष्ठिगुरवे० । गुरुपंक्तये० ॥ षडंगम् ॥ ऐं हृदयाय० । ह्रीं शिरसे० । क्लीं शिखायै० । चामुंडायै कवचाय० । विच्चे नेत्रत्रयाय० । मूलेन अस्त्राय० ॥ अथ त्रिकोणे स्वाग्रादिमादक्षिण्येन क्रमेण । स्वरया सह विधात्रे० । श्रिया सह विष्णवे० । उमया सह शिवाय० । दक्षिणे हुं सिंहाय० । वामे हुं महिषाय० । षट्कोणे (अग्नीशासुरवायव्ये मध्ये दिक्षु च) ऐं नन्दजायै० । ह्रीं रक्तदन्तिकायै० । क्लीं शाकंभर्यै० । दुं दुर्गायै० । हूं भीमायै० । ह्रीं भ्रामर्यै० ॥ ६ ॥ ततो अष्टपत्रे स्वाग्रादिमादक्षिण्यक्रमेण । ऐं ब्राह्म्यै० । ह्रीं माहेश्वर्यै० । क्लीं कौमार्यै० । ह्रीं वैष्णव्यै० । हूं वाराह्यै० । क्ष्रौं नारसिंह्यै० । लं ऐन्द्र्यै० । स्फ्रें चामुण्डायै० ॥ ८ ॥ ततश्चतुर्विंशतिदले ॥ विं विष्णुमायायै० । चें चेतनायै० । बुं बुद्ध्यै० । निं निन्द्रायै० । क्षुं क्षुधायै० । छां छायायै० । शं शक्त्यै० । तृं तृष्णायै० । क्षां क्षान्त्यै० । जां जात्यै० । लं लज्जायै० ।

शां शान्त्यै० । श्रं श्रद्धायै० । कां कान्त्यै० । लं लक्ष्म्यै० । धृं धृत्यै० । वृं वृत्यै० । श्रुं श्रुत्यै० । स्मृं स्मृत्यै० । दं दयायै० । तुं तुष्ट्यै० । पुं पुष्ट्यै० । मां मातृभ्यो० । भ्रां भ्रान्त्यै० ॥ २४ ॥ भूपुरे कोणचतुष्टये आग्नेयादिकोणे॥ गं गणपतये० । क्षं क्षेत्रपालाय० । वं बटुकाय० । यां योगिन्यै० ॥ पूर्वादिदिक्षु–इन्द्राय० । अग्नये० । यमाय० । निर्ऋतये० । वरुणाय० । वायवे० । सोमाय० । ईशानाय० । ब्रह्मणे० । अनन्ताय० ॥ तद्बहिः– वज्राय० । शक्तये० । दंडाय० । खड्गाय० । पाशाय० । अंकुशाय० । गदायै० । त्रिशूलायै० । पद्माय० । चक्राय० ॥ तद्बहिः ॥ वज्रहस्तायै गजारूढायै कादंबरीदेव्यै० । शक्तिहस्तायै अजवाहनायै उल्कादेव्यै० । दंडहस्तायै महिषारूढायै करालीदेव्यै० । खड्गहस्तायै शववाहनायै रक्ताक्षीदेव्यै० ॥ पाशहस्तायै मकरवाहनायै श्वेताक्षीदेव्यै० । अंकुशहस्तायै मृगवाहनायै हरिताक्षीदेव्यै० । गदाहस्तायै सिंहारूढायै यक्षिणीदेव्यै० । शूलहस्तायै वृषभवाहनायै कालीदेव्यै० । पद्महस्तायै हंसवाहनायै सुरज्येष्ठादेव्यै० । चक्रहस्तायै सर्पवाहनायै सर्पराज्ञीदेव्यै नमः ॥ इत्यावाह्य "यंत्रस्थदेवताभ्यो नमः" इति मूलमंत्रेण यथाशक्त्या पूजनं कुर्यात् ॥ इति यन्त्रदेवतापूजनम् ॥

ततो हृदिस्थां ज्योतिर्मयीं सपरिवारां महालक्ष्मीं ध्यायेत् ॥ अथवा देवीध्यानम्–विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कंधस्थितां भीषणां कन्याभिः करवालखेटविलसद्धस्ताभिरासेविताम् ॥ हस्तैश्चक्रदरालिखेटविशिखांश्चापं गुणं तर्जनीं बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ॥ १ ॥ इति ध्यात्वा ॥ हस्ते पुष्पाण्यादाय-आगच्छ वरदे देवि दैत्यदर्पनिषूदिनि ॥ पूजां गृहाण सुमुखि नमस्ते शङ्करप्रिये ॥ १ ॥ सर्वतीर्थमयं वारि सर्वदेवसमन्वितम् ॥ इमं घटं समागच्छ तिष्ठ देवगणैः सह

॥ २ ॥ दुर्गे देवि समागच्छ सान्निध्यमिह कल्पय ॥ बलिपूजां गृहाण त्वमष्टाभिः शक्तिभिः सह ॥ ३ ॥ कल्याणजननीं सत्यां कामदां करुणाकराम् ॥ अनन्तशक्तिसंपन्नां दुर्गामावाहयाम्यहम् ॥ ४ ॥ साङ्गां सपरिवारां सावरणां सायुधां दुर्गामावाहयामि ॥ महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीस्वरूपिणीदुर्गे देवते आवाहिता भव ॥ स्थापिता भव ॥ सन्निहिता भव ॥ सन्निरुद्धा भव ॥ संमुखीकृता भव ॥ पङ्केन सकलीकृता भव ॥ अवगुण्ठिता भव ॥ परमीकृता भव ॥ अमृतीकृता भव ॥ प्रार्थिता भव ॥ नमस्कृता भव ॥ ११ ॥ ॐ मनोजूति० ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीस्वरूपिणि (दुर्गे देवते) सुप्रतिष्ठिता वरदा भव ॥ ततः श्रीसूक्तेन देवीन्यासं कृत्वा यथाशक्ति श्रीसूक्तेन वा जयन्ती मङ्गला० मूलेन वा षोडशोपचारैः पूजयेत् ॥ यथावकाशं वा देवीराजोपचारपूजनं कुर्यात् ॥

॥ ४८ ॥ अथ देवीराजोपचारपूजाप्रयोगः ॥

अथदेवीराजोपचारपूजाप्रयोगः ॥ तत्रादौ स्ववामे स्नानशालां विभाव्य देवीं संस्थाप्य ध्यायेत् । ध्यानम्—खड्गं चक्र० ॥ १ ॥ अक्षस्रक्० ॥ २ ॥ घंटाशूल० ॥ ३ ॥ मूलम् ॥ आवाहनम्—उषसि मागधमंगलगायनैर्झटिति जागृहि जागृहि जागृहि । अतिकृपार्द्रकटाक्षनिरीक्षणैर्जगदिदं जगदंब सुखीकुरु ॥ ४ ॥ कनकमयवितर्दिशोभमानं दिशि दिशि पूर्णसुवर्णकुंभयुक्तम् ॥ मणिमयशुभमंडपं त्वमेहि मयि कृपयेति समर्चनं गृहीतुम् ॥ ५ ॥ मूलम्—श्री महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वती स्वरूपिणीदुर्गायै नमः आवाहनम् समर्पयामि ॥ (एवं सर्वत्र उक्त्वा उपचारान् कुर्यात) आसनम्—कनकमयवितर्दिस्थापिते तूलिकाढ्ये

विविधकुसुमकीर्णे कोटिबालार्कवर्णे ॥ भगवति रमणीये रत्नसिंहासनेऽस्मिन्नुपविश पदयुग्मं हैमपीठे निधेहि ॥ ६ ॥ पाद्यम्—दूर्वया सरसिजान्वितविष्णुक्रान्तया च सहितं कुसुमाढ्यम् ॥ पद्मयुग्मसदृशे पदयुग्मे पाद्यमेतदुररीकुरु मातः । (पाद्यपात्रात्) पादयोः पाद्यं स० ॥७॥ अर्घ्यम्—गंधपुष्पयवसर्षपदूर्वासंयुतं कुशतिलाक्षतमिश्रम् ॥ हेमपात्रनिहितं सह रत्नैरर्घ्यमेतदुररीकुरु मातः ॥ (अर्घ्यपात्रात्) हस्तयोरर्घ्यं स० ॥८॥ आचमनीयम्—जलजद्युतिना करेण जातीफलकंकोललवंगगंधयुक्तैः ॥ अमृतैरमृतैरिवासितैर्भगवत्याचमनं विधीयताम् ॥ (आचमनीयपात्रात्) आचमनीयं स० ॥ ९ ॥ मधुपर्कः—मधुनिहितं कनकस्य संपुटे विहितं रत्नपिधानकेन यत् ॥ तदिदं भगवति करेऽर्पितं मधुपर्कं जननि प्रगृह्यताम् ॥ (मधुपर्कपात्रात्) मधुपर्कं स० ॥ १० ॥ आचमनीयम्—पाद्यं ते परिकल्पितं च पदयोरर्घ्यं तथा हस्तयोः सौधीभिर्मधुपर्कमंब मधुरं धाराभिरास्वादय ॥ तोयेनाचमनं विधेहि शुचिना गांगेन मत्कल्पितं साष्टांगं प्रणिपातमंब कमले दृष्ट्या कृतार्थां कुरु ॥ (आचमनीयपात्रात्) आचमनीयं स० ॥ ११ ॥ पयःस्नानम्—स्वर्धेनुजातं बलवीर्यवर्धनं दिव्यामृतात्यन्तरसमर्दं सितम् ॥ श्रीचंडिके दुग्धसमुद्रसंभवे गृहाण दुग्धं मनसा मयाऽर्पितम् ॥ १२ ॥ दधिस्नानम्—क्षीरोद्भवं स्वादु सुधामयं च श्रीचंद्रकान्तिसदृशं सुशोभनम् ॥ श्रीचंडिके शुंभनिशुंभनाशिनि स्नानार्थमंगीकुरु तेऽर्पितं दधि ॥१३॥ घृतस्नानम्—श्रीक्षीरजोद्भूतमिदं मनोज्ञं मदीसवह्निद्युतिपावितं च । श्रीचंडिके दैत्यविनाशदक्षे हैयंगवीनं परिगृह्यतां च ॥ १४ ॥ मधुस्नानम्—माधुर्यमित्थं मधुमाक्षिकागणैर्वृक्षालिरस्ये मधुजातने स्थितम् ॥ श्रीचंडिके पंकजमाण्डपे स्नानार्थमंगीकुरु

तेऽर्पितं मधु ॥ १५ ॥ शर्करास्नानम्–पूर्णेक्षुकांभोधिसमुद्भवामिमां माणिक्यमुक्ताफलदाममंजुलाम् । श्रीचंडिके चंडविनाशकारिणि स्नानार्थमंगीकुरु शर्करां शुभाम् ॥१६॥ सुगं०–एतच्चंपकतैलमंब विविधैः पुष्पैर्मुहुर्वासितं न्यस्तं रत्नमये सुवर्णचषके भृगैर्भ्रमद्भिर्वृतम् ॥ सानन्दं व्रजसुंदरीभिरभितो हस्तैर्धृतं चिन्मये केशेषु भ्रमरप्रभेषु सकलेष्वंगेषु चालिप्यताम् ॥ १७ ॥ उद्वर्तनस्नानम्–मातः कुंकुमपंकनिर्मितमिदं देहे नवोद्वर्तनं भवत्याऽहं कलयामि हेमरजसा संमिश्रितं केसरैः ॥ केशानामलकैर्विशोध्य विशदान्कस्तुरिकाद्यर्चितैः स्नानं ते नवरत्नकुंभविधिना संवासितोष्णोदकैः ॥ १८ ॥ स्नानम्–एलाशीरसुवासितैः सुकुसुमैर्गंगादितीर्थोदकैर्माणिक्यादिकमौक्तिकामृतयुतैः स्वच्छैःसुवर्णोदकैः ॥ मंत्रान्वैदिकतान्त्रिकान्परिपठन्सानंदमत्यादरात् स्नानं ते परिकल्पयामि जननि स्नेहात्त्वमंगीकुरु ॥ १९ ॥ श्रीमन्महालक्ष्म्याद्यावाहितदेवताभ्यो नमः इति मूलमंत्रेण पंचोपचारैः संपूज्य । उत्तरे निर्माल्यं विसृज्य पुनः संपूज्य अभिषेकं कुर्यात् ॥ अभिषेकार्थं पात्रे जलगंधपुष्पदुग्धादीनि क्षिपेत् ॥ देवीसूक्तं श्रीसूक्तं अग्नादय इत्यादिस्तोत्रैश्चाभिषेकः कार्यः ॥

शुद्धो०स्ना०–उद्गंधैरगरुद्रवैः सुरभिणा कस्तूरिकावारिणा स्फूर्जत्सौरभयक्षकर्दमजलैः काश्मीरनीरैरपि ॥ पुष्पांभोभिरशेषतीर्थसलिलैः कर्पूरवासोभरैः स्नानं ते परिकल्पयामि कमले भक्त्या तदंगीकुरु ॥२०॥ वस्त्रम्–बालार्कद्युतिदाडिमीयकुसुमप्रस्पर्धिसर्वोत्तमं मातस्त्वं परिधेहि दिव्यवसनं भक्त्या मया कल्पितम् ॥ मुक्ताभिर्ग्रथितं च कंचुकमिदं स्वीकृत्य पीतप्रभं तप्तस्वर्णसमानवर्णमतुलं प्रावारमंगीकुरु ॥ २१ ॥ आच०–भूपालादिकपालकिरीटरत्नमरीचिनीराजितपादपीठे ॥ देवैः समाराधितपादपद्मे श्रीचंडिके स्वाचमनं गृहाण ॥ २२ ॥ पादुके–

नवरत्नयुते मयाऽर्पिते कमनीये तपनीयपादुके ॥ सविलासमिदं पदद्वयं कृपया देवि तयोर्निधीयताम् ॥ २३ ॥ केशपाशसंस्करणम्–बहुभिरगरुधूपैः सादरं धूपयित्वा भगवति तव केशान् कंकतैर्मार्जयित्वा ॥ सुरभिभिरविन्दैश्चंपकैश्चार्चयित्वा झटिति कनकसूत्रैर्जूटयन्वेष्टयामि ॥२४॥ सौवीरांजनं–(सुरभो) सौवीरांजनमिदमंब चक्षुषोस्ते विन्यस्तं कनकशलाकया मया यत् ॥ तन्नूनं मलिनमपि त्वदक्षिसंगात् ब्रह्मेन्द्राद्यभिलषणीयतामियाय ॥ २५ ॥ अलं०–मंजीरान्पदयोर्निधाय रुचिरान्विन्यस्य कांचीं कटौ मुक्ताहारमुरोजयोरनुपमां नक्षत्रमालां गले ॥ केयूराणि भुजेषु रत्नवलयश्रेणीः करेषु क्रमात् तार्टके भव कर्णयोर्विनिदधे शीर्षे च चूडामणिम् ॥ २६ ॥ धम्मिल्ले तव देवि हैमकुसुमान्याधाय भालस्थले मुक्ताराजिविराजि हेमतिलकं नासापुटे मौक्तिकम् ॥ मातर्मौक्तिकजालिकां च कुचयोः सर्वांगुलीषूर्मिकाः कट्यां कांचनकिंकिणीर्विनिदधे रत्नावतंसौ श्रुतौ ॥ २७ ॥ गंधः–सर्वांगं परिमार्जयामि शुचिना वस्त्रेण संमोञ्छनं कुर्वे केशकलापमायततरं धूपोत्तमैर्धूपितम् ॥ काश्मीरैरगरुद्रवैर्मलयजैः संघर्ष्य संपादितं भक्तत्राणपरे श्रीकृष्णगृहिणि श्रीचंदनं गृह्यताम् ॥२८॥ कुंकुमम्–मातर्भालतले तवातिविमले काश्मीरकस्तूरिकाकर्पूरागरुभिः करोमि तिलकं देहेऽगरागं ततः ॥ वक्षोजादिषु यक्षकर्दमरसं सिक्त्वा च पुष्पाद्रतिं पादौ कुंकुमलेपनादिभिरहः संपूजयामि क्रमात् ॥ २९ ॥ कज्जलम्–चांपेयकर्पूरकचन्दनादिकैर्नानाविधैर्गंधचयैः सुवासितम् ॥ नेत्रांजनार्थाय हरिन्मणिप्रभं श्रीचंडिके स्वीकुरु कज्जलं शुभम्॥३०॥अक्षताः–रत्नाक्षतैस्त्वां परिपूजयामि मुक्ताफलैर्वा रुचिरैरविद्धैः॥ अखंडितैर्देवि यवादिभिर्वा काश्मीरपंकांकिततंडुलैर्वा ॥ ३१ ॥ अत्तरं–जननि चंपकतैलमिदं पुरो

मृगमदोऽयमयं पटवासकः ॥ सुरभिगंधमिदं च चतुःसमं संपदि सर्वमिदं परिगृह्यताम् ॥ ३२ ॥ सिंदूरं–सीमन्ते ते भगवति मया सादरं न्यस्तमेतत् सिंदूरं ते हृदयकमले हर्षवर्षं तनोतु ॥ बालादित्यद्युतिरिव सदा लोहिता यस्य कान्तिरन्तर्ध्वान्तं हरतु सततं चेतसा चिन्तयामि ॥३३॥ पुष्पाणि–मंदारकुंदकरवीरलवंगपुष्पैस्त्वां देवि संततमहं परिपूजयामि । जातीजपावकुलचंपककेतकादिनानाविधानि कुसुमानि च तेऽर्पयामि ॥ ३४ ॥ पुष्पमाला–पुष्पौघैर्द्योतयन्तैः सततपरिचलत्कान्तिकल्लोलजालैः कुर्वाणा मज्जदन्तःकरणविमलतां शोभितेव त्रिवेणी ॥ मुक्ताभिः पद्मरागैर्मरकतमणिभिर्निर्मिता दीप्यमानैर्नित्यं हारत्रयी त्वं भगवति कमले गृह्यतां कंठमध्ये ॥ पुष्पमालां स० ॥ ३५ ॥

अथांगपूजा ॥ हस्ते गंधपात्रं गृहीत्वा दक्षिणेनार्चयेत् ॥ ह्रीं दुर्गायै नमः पादौ पूजयामि ॥ ह्रीं मंगलायै० गुल्फौ पूज० ॥ ह्रीं भगवत्यै० जंघे पूज०॥ ह्रीं कौमार्यै० जानुनी पूज०॥ ह्रीं वागीश्वर्यै०ऊरू०पूज०॥ ह्रीं वरदायै० कटी० पूज० ॥ ह्रीं पद्माकरवासिन्यै० स्तनौ पूज० ॥ ह्रीं महिषमर्दिन्यै०कंठं पूज० ॥ ह्रीं उमासुतायै० स्कंधौ पूज० ॥ ह्रीं इन्द्राण्यै० भुजौ पूज० ॥ ह्रीं गौर्यै० हस्तौ पूज०॥ ह्रीं मोहवत्यै० मुखं पूज० ॥ ह्रीं शिवायै० कर्णौ पूज० ॥ ह्रीं अन्नपूर्णायै० नेत्रे पूज० ॥ ह्रीं कमलायै० ललाटं पूज० ॥ ह्रीं महालक्ष्म्यै० सर्वांगं पूजयामि ॥ देव्या दक्षिणे सिंहं पूजयामि ॥ वामे महिषं पूजयामि ॥

॥ अथावरणपूजा ॥

प्रथमावरणपूजा–वामेन तत्त्वमुद्रया तर्पणम् । दक्षिणेन ज्ञानमुद्रया पूजनम् । प्रार्थना—संविन्मयपरे देवि परामृतचरुप्रिये ॥ अनुज्ञां देवि मे मातः परिवारार्चनाय ते ॥ १ ॥ (यथा दक्षिणेनाक्षतपुष्पादिना

पूजयामीति संपूज्य। वामकरधृतार्द्रखण्डेन विशेषार्घजलैस्तर्पयाम्येवं सर्वत्र।)ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे साङ्गायै सपरिवारायै सावर्णायै सायुधायै सशक्तिकायै श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यै नमः श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि ॥ १ ॥ ॐ ऐं ह्रीं० विच्चे साङ्गा० सप० साव० सायु० सश० यै महाकाल्यै नमः महाकालीश्रीपा० ॥ २ ॥ ॐ ऐं ह्रीं० विच्चे साङ्गा० सप० साव० सायु० सश० यै महालक्ष्म्यै० महालक्ष्मीश्रीपा० ॥ ३ ॥ ॐ ऐं ह्रीं० विच्चे साङ्गा० सप० साव० सायु० सश० यै महासरस्वत्यै० महासरस्वतीश्रीपा० ॥ ४ ॥ बिन्दोः परितो गुरुचतुष्टयं पूजयेत्—ॐ गुरवे नमः गुरुशक्तिश्रीपा० ॥५॥ ॐ परमगुरवे० परमगुरुशक्तिश्रीपा०॥६॥ ॐ परात्परगुरवे० परात्परगुरुशक्तिश्रीपा० ॥ ७ ॥ ॐ परमेष्ठिगुरवे० परमेष्ठिगुरुशक्तिश्रीपा० ॥ ८ ॥ अथ षडङ्गं पूजयेत्—ॐ ऐं हृदयाय० हृदयशक्तिश्रीपा० ॥९॥ ॐ ह्रीं शिरसे नमः शिरःशक्तिश्रीपा० ॥१०॥ ॐ क्लीं शिखायै० शिखाशक्तिश्रीपा० ॥११॥ ॐ चामुण्डायै कवचाय० कवचशक्तिश्रीपा० ॥ १२ ॥ ॐ विच्चे नेत्रत्रयाय० नेत्रत्रयशक्तिश्रीपा० ॥१३॥ मूलेन अस्त्राय० अस्त्रशक्तिश्रीपा० ॥१४॥ प्रथमावरणदेवताभ्यो० सर्वोपचारार्थे गन्धं पुष्पं स० ॥ सामान्यार्घजलमादाय—एताः प्रथमावरणदेवताः साङ्गाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः पूजितास्तर्पिताः सन्तु ॥ पुष्पांजलिमादाय—अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले ॥ भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम् ॥ १ ॥ पुष्पांजलिं दत्वा योनिमुद्रया प्रणमेत् ॥ इति प्रथमावरणम् ॥

अथ द्वितीयावरणम्—त्रिकोणे स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन पूजयेत्—ॐ सावित्र्या सह विधात्रे० विधातृशक्तिश्रीपा० ॥१५॥ ॐ श्रिया सह

विष्णवे० विष्णुशक्तिश्रीपा० ॥ १६ ॥ ॐ उमया सह शिवाय० शिवशक्तिश्रीपा० ॥ १७ ॥ ॐ क्षुं नमः सिंहाय० सिंहशक्तिश्रीपा० ॥ १८ ॥ ॐ हुं नमः महिषाय० महिषशक्तिश्रीपा० ॥ १९ ॥ द्वितीयावरणदेवताभ्यो० गंधं पु० स० ॥ सामा० जलमादाय–द्वितीयावरणदेवताः सा०सप०सायु०सश०पू०त०सन्तु। पुष्पा० आदाय–अभीष्ट०॥ शर०। भक्त्या० द्वितीया० ॥ पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा योनिमु० प्रणमेत् ॥ इति द्वितीयावरणम् ॥

अथ तृतीयावरणम्—षट्कोणे अग्नीशासुरवायव्ये मध्ये दिक्षु च पूजयेत्—ॐ ऐं नन्दजायै० नन्दजाशक्तिश्रीपा० ॥ २० ॥ ॐ ह्रीं रक्तदन्तिकायै० रक्तदन्तिकाशक्तिश्रीपा० ॥२१॥ ॐ क्लीं शाकम्भर्यै० शाकम्भरीशक्तिश्रीपा० ॥ २२ ॥ ॐ दुं दुर्गायै० दुर्गाशक्तिश्रीपा० ॥ २३ ॥ ॐ हुं भीमायै० भीमाशक्तिश्रीपा० ॥ २४ ॥ ॐ ह्रीं भ्रामर्यै० भ्रामरीशक्तिश्रीपा० ॥ २५ ॥ तृतीयावरणदेवताभ्यो० गंधं पु० स०॥ सामा० दाय–एतास्तृतीयावरणदेवताः सा० सप० सायु० सश०पू०त० सन्तु ॥ पुष्पाञ्जलिमादाय—अभीष्ट०॥ भक्त्या० तृतीयावरणार्चनम् ॥ ३ ॥ पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा योनिमुद्रया प्रणमेत् ॥ इति तृतीयावरणम् ॥

अथ चतुर्थावरणम्—ततोऽष्टपत्रे स्वाग्रादिमादक्षिण्येन पूजयेत्–ॐ ऐं ब्राह्म्यै० ब्राह्मीशक्तिश्रीपा० ॥ २६ ॥ ॐ ह्रीं माहेश्वर्यै० माहेश्वरीशक्तिश्रीपा० ॥२७॥ ॐ क्लीं कौमार्यै० कौमारीशक्तिश्रीपा०॥२८॥ ॐ ह्रीं वैष्णव्यै० वैष्णवीशक्तिश्रीपा० ॥ २९ ॥ ॐ लं वाराह्यै० वाराहीशक्तिश्रीपा०॥३०॥ ॐ क्ष्म्यौं नारसिंह्यै०नारसिंहीशक्तिश्रीपा० ॥ ३१ ॥ ॐ लं ऐन्द्र्यै० ऐन्द्रीशक्तिश्रीपा० ॥ ३२ ॥ ॐ स्फ्रें चामुण्डायै० चामुण्डाशक्तिश्रीपा० ॥ ३३ ॥ ॐ ह्रीं लक्ष्म्यै० लक्ष्मीशक्ति-

श्रीपा० ॥३४॥ चतुर्थावरणदेवताभ्यो० गंधं पु० स०॥ सामा० मादाय–एताः चतुर्थावरणदेवताः सा०सप० सायु० सश०पू०त० सन्तु ॥ पुष्पाञ्जलिमादाय—अभीष्ट० । भक्त्या० चतुर्थावरणार्चनम् ॥ ४ ॥ पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा योनिमुद्रया प्रणमेत् ॥ इति चतुर्थावरणम् ॥

अथ पञ्चमावरणम्—ततश्चतुर्विंशतिदले स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन । ॐ विं विष्णुमायायै० विष्णुमायाशक्तिश्रीपा०॥३५॥ ॐ चें चेतनायै० चेतनाशक्तिश्रीपा० ॥३६॥ ॐ बुं बुद्ध्यै० बुद्धिशक्तिश्रीपा० ॥३७॥ ॐ निं निद्रायै० निद्राशक्तिश्रीपा० ॥ ३८ ॥ ॐ क्षुं क्षुधायै० क्षुधाशक्तिश्रीपा० ॥ ३९ ॥ ॐ छां छायायै० छायाशक्तिश्रीपा० ॥४०॥ ॐ शं शक्त्यै० शक्तिश्रीपा० ॥४१॥ ॐ तृं तृष्णायै० तृष्णाशक्तिश्रीपा० ॥४२॥ ॐ क्षां क्षान्त्यै० क्षान्तिशक्तिश्रीपा० ॥ ४३ ॥ ॐ जां जात्यै० जातिशक्तिश्रीपा० ॥४४॥ ॐ लं लज्जायै०। लज्जाशक्तिश्रीपा० ॥४५॥ ॐ शां शान्त्यै० शान्तिशक्तिश्रीपा० ॥४६॥ ॐ श्रं श्रद्धायै० श्रद्धाशक्तिश्रीपा० ॥४७॥ ॐ कां कान्त्यै० कान्तिशक्तिश्रीपा०॥४८॥ ॐ लं लक्ष्म्यै० लक्ष्मीशक्तिश्रीपा० ॥ ४९ ॥ ॐ धृं धृत्यै० धृतिशक्तिश्रीपा० ॥५०॥ ॐ वृं वृत्त्यै० वृत्तिशक्तिश्रीपा० ॥५१॥ ॐ श्रुं श्रुत्यै० श्रुतिशक्तिश्रीपा० ॥५२॥ ॐ स्मृं स्मृत्यै० स्मृतिशक्तिश्रीपा० ॥५३॥ ॐ दं दयायै०दयाशक्तिश्रीपा०॥५४॥ ॐ तुं तुष्ट्यै०तुष्टिशक्तिश्रीपा० ॥ ५५ ॥ ॐ पुं पुष्ट्यै० पुष्टिशक्तिश्रीपा० ॥ ५६ ॥ ॐ मां मातृभ्यो० मातृशक्तिश्रीपा० ॥ ५७ ॥ ॐ भ्रां भ्रान्त्यै० भ्रान्तिशक्तिश्रीपा० ॥ ५८ ॥ पञ्चमावरणदेवताभ्यो० गंधं पु० सम० ॥ सामा० मादाय-एताः पञ्चमावरणदेवताः साङ्गाः सप० सायु०सश० पू० त० सन्तु ॥ पुष्पाञ्जलिमादाय—अभीष्ट० । भक्त्या० पञ्चमावरणार्च-

नम् ॥५॥ पुष्पाञ्जलिं दत्वा योनिमुद्रया प्रणमेत् ॥ इति पञ्चमावरणम् ॥

अथ षष्ठावरणम्—भूपुरे कोणचतुष्टये आग्नेयादिकोणमारभ्य ॥ ॐ गं गणपतये० गणपतिशक्तिश्रीपा० ॥५९॥ ॐ क्षं क्षेत्रपालाय० क्षेत्रपालशक्तिश्रीपा० ॥ ६० ॥ ॐ वं वटुकाय० वटुकशक्तिश्रीपा० ॥ ६१ ॥ ॐ यां योगिन्यै० योगिनीशक्तिश्रीपा० ॥ ६२ ॥ षष्ठावरणदेवताभ्यो० गंधं पु० सम० ॥ सामा० मादाय—एताः षष्ठावरणदेवताः सा० स० सायु० सश० पू० त० सन्तु ॥ पुष्पाञ्जलिमादाय अभीष्ट०। भक्त्या० षष्ठावरणार्चनम् ॥ ६॥ पुष्पाञ्जलिं दत्वा योनिमुद्रया प्रणमेत् ॥ इति षष्ठावरणम् ॥

अथ सप्तमावरणम्—पूर्वादिदशदिक्षु ॥ ॐ लं इन्द्राय० इन्द्रशक्तिश्रीपा० ॥ ६३ ॥ ॐ रं अग्नये० अग्निशक्तिश्रीपा० ॥ ६४ ॥ ॐ यं यमाय०यमशक्तिश्रीपा० ॥ ६५ ॥ ॐ क्षं निर्ऋतये० निर्ऋतिशक्तिश्रीपा० ॥ ६६ ॥ ॐ वं वरुणाय० वरुणशक्तिश्रीपा० ॥६७॥ ॐ यं वायवे० वायुशक्तिश्रीपा० ॥ ६८ ॥ ॐ सं सोमाय० सोमशक्तिश्रीपा० ॥६९॥ ॐ हं ईशानाय० ईशानशक्तिश्रीपा० ॥ ७० ॥ ॐ धं ब्रह्मणे० ब्रह्मशक्तिश्रीपा० ॥ ७१ ॥ ॐ ह्रीं अनन्ताय० अनन्तशक्तिश्रीपा० ॥७२॥ सप्तमावरणदेवताभ्यो० गंधं पु० स० ॥ सामा० मादाय—एताः सप्तमावरणदेवताः सा०सप०सायु०सश० पू०त०सन्तु ॥ पुष्पाञ्जलिमादाय—अभीष्ट० । भक्त्या० सप्तमावरणार्चनम् ॥ ७ ॥ पुष्पाञ्जलिं दत्वा योनिमुद्रया प्रणमेत् ॥ इति सप्तमावरणम् ॥

अथाष्टमावरणम्—तद्बहिः । ॐ वं वज्राय० वज्रशक्तिश्रीपा०।७३। ॐ शं शक्तये० शक्तिश्रीपादु० ॥ ७४ ॥ ॐ दं दण्डाय० दण्डशक्तिश्रीपा० ॥ ७५ ॥ ॐ खं खड्गाय० खड्गशक्तिश्रीपा० ॥ ७६ ॥ ॐ पां

पाशाय० पाशशक्तिश्रीपा० ॥ ७७ ॥ ॐ अं अङ्कुशाय० अङ्कुशशक्तिश्रीपा० ॥ ७८ ॥ ॐ गं गदायै० गदाशक्तिश्रीपा० ॥ ७९ ॥ ॐ त्रि त्रिशूलाय० त्रिशूलशक्तिश्रीपा० ॥ ८० ॥ ॐ पं पद्माय० पद्मशक्तिश्रीपा० ॥ ८१ ॥ ॐ चं चक्राय० चक्रशक्तिश्रीपा० ॥८२॥ अष्टमावरणदेवताभ्यो० गंधं पु०स०॥ सामा० मादाय-एता अष्टमावरणदेवताः सा० सप० सायु० सश० पू० त० सन्तु । पुष्पाञ्जलिमादाय-अभीष्ट०। भक्त्या० अष्टमावरणार्चनम् ॥८॥ पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा योनिमुद्रया प्रणमेत् ॥ इति अष्टमावरणार्चनम् ॥

अथ नवमावरणार्चनम्—कलशात्पूर्वादिदिक्षु । ॐ वज्रहस्तायै गजारूढायै कादम्बरीदेव्यै० कादम्बरीदेवीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि ॥ ८३ ॥ शक्तिहस्तायै अजवाहनायै उल्कादेव्यै० उल्कादेवीशक्तिश्रीपा० ॥८४॥ दण्डहस्तायै महिषारूढायै करालीदेव्यै० करालीदेवीशक्तिश्रीपा० ॥ ८५ ॥ खड्गहस्तायै शववाहनायै रक्ताक्षीदेव्यै० रक्ताक्षीदेवीशक्तिश्रीपा० ॥ ८६ ॥ पाशहस्तायै मकरवाहनायै श्वेताक्षीदेव्यै० श्वेताक्षीदेवीशक्तिश्रीपा० ॥८७॥ अङ्कुशहस्तायै मृगवाहनायै हरिताक्षीदेव्यै० हरिताक्षीदेवीशक्तिश्रीपा० ॥ ८८ ॥ गदाहस्तायै सिंहारूढायै यक्षिणीदेव्यै० यक्षिणीदेवीशक्तिश्रीपा० ॥ ८९ ॥ शूलहस्तायै वृषभवाहनायै कालीदेव्यै० कालीदेवीशक्तिश्रीपा० ॥९०॥ पद्महस्तायै हंसवाहनायै सुरज्येष्ठादेव्यै० सुरज्येष्ठादेवीशक्तिश्रीपा० ॥९१॥ चक्रहस्तायै सर्पवाहनायै सर्पराज्ञीदेव्यै० सर्पराज्ञीदेवीशक्तिश्रीपा० ॥९२॥ नवमावरणदेवताभ्यो० गंधं पुष्पं सम० ॥ सामान्या० मादाय-एता नवमावरणदेवताः साङ्गा० सप० सायु० सश० पू० त० सन्तु ॥ पुष्पाञ्जलिमादाय-अभीष्ट०। भक्त्या० नवमावरणार्चनम् ॥९॥

पुष्पाञ्जलिं दत्वा योनिमुद्रया प्रणमेत् ॥ इति नवमावरणम् ॥ इत्यावरणपूजा ॥

ततो यथाशक्त्यष्टोत्तरशतनामभिस्तुलसीदुर्वापुष्पाक्षतादिभिरर्चयेत्॥

अथाष्टोत्तरशतनामानि ॥ ॐ माहेश्वर्यै नमः । महादेव्यै० । जयंत्यै० । सर्वमंगलायै० । लज्जायै० । भगवत्यै० । वंद्यायै० । भवान्यै० । पापनाशिन्यै०। चंडिकायै०।१०। कालरात्र्यै०। भद्रकाल्यै०। अपराजितायै० । महाविद्यायै० । महामेधायै० । महामायायै० । महाबलायै० । कात्यायन्यै०। जयायै०। दुर्गायै० ।२०। मंदारवनवासिन्यै०। आर्यायै०। गिरिसुतायै० । धात्र्यै० । महिषासुरघातिन्यै० । सिद्धिदायै० । बुद्धिदायै० । नित्यायै० । वरदायै० ॥ वरवर्णिन्यै० ।३०। अंबिकायै० । सुखदायै० । सौम्यायै० । जगन्मात्रे० । शिवप्रियायै० । भक्तसंतापसंहर्त्र्यै० । सर्वकामप्रपूरिण्यै० । जगत्कर्त्र्यै० । जगद्धात्र्यै० । जगत्पालनतत्परायै० ।४०। अव्यक्तायै०। व्यक्तरूपायै०। भीमायै० । त्रिपुरसुंदर्यै० । अपर्णायै० । ललितायै० । वैद्यायै० । पूर्णचंद्रनिभाननायै०। चामुंडायै०। चतुरायै० ।५०। चंद्रायै० । गुणत्रयविभाविन्यै० । हेरंबजनन्यै० । काल्यै० । त्रिगुणायै० । यशोधारिण्यै० । उमायै० । कलशहस्तायै० । दैत्यदर्पनिषूदिन्यै० । बुद्ध्यै० ।६०। कान्त्यै० । क्षमायै० । शान्त्यै० । पुष्ट्यै० । तुष्ट्यै० । धृत्यै० । मत्यै० । वरायुधधरायै० । (धीरायै०) गौर्यै० । शाकंभर्यै० ।७०। शिवायै० । अष्टसिद्धिप्रदायै० । वामायै० । शिववामांगवासिन्यै० । धर्मदायै० । धनदायै० । श्रीदायै० । कामदायै० । मोक्षदायै० । अपरायै० ।८०। चित्स्वरूपायै० । चिदानंदायै० । जयश्रियै० । जयदायिन्यै० । सर्वमंगलमांगल्यायै० । जगत्त्रयहितैषिण्यै० । शर्वाण्यै० । पार्वत्यै० । धन्यायै० । स्कंदमात्रे० ।९०। अखिलेश्वर्यै० । प्रपन्नार्ति-

हरायै० । देव्यै० । सुभगायै० । कामरूपिण्यै० । निराकारायै० । साकारायै० । महाकाल्यै० । सुरेश्वर्यै० । शर्वायै० ।१००। श्रद्धायै० । ध्रुवायै० कृत्यायै० । मृडान्यै० । भक्तवत्सलायै० । सर्वशक्तिसमायुक्तायै० । शरण्यायै० । सर्वकामदायै० ॥१०८॥ इत्यष्टोत्तरशतनामानि ॥

एवं तुलस्यादिभिः संपूज्य श्वेतचूर्णादिकं समर्पयेत् । यथा —

श्वेतचूर्णम्—मंदारमल्लीकरवीरसंभवं कर्पूरपाटीरसुवासितं सितम् ॥ श्रीश्वेतचूर्णं विधिना समर्पितं प्रीत्या त्वमंगीकुरु विष्णुवल्लभे ॥ ३६ ॥ रक्तचू०—प्रत्यूषकालार्कमयूखसन्निभं जातिफलैलागरुणा सुवासितम् ॥ श्रीरक्तचूर्णं मनसा मयाऽर्पितं प्रीत्या त्वमंगीकुरु विष्णुवल्लभे ॥३७॥ सिंदूरम्-मध्याह्नचंडार्कमरीचिसन्निभं विघ्नेश्वरश्रीहनुमद्धनुप्रियम् ॥ सिंदूरचूर्णं मनसा मयार्पितं प्रीत्या त्वमंगीकुरु विष्णुवल्लभे॥३८॥ हरिद्रा-हरिद्रमोत्थामतिपीतवर्णां सुवासितां चंदनपारिजातैः ॥ अनन्यभावेन समर्पितां ते मातर्हरिद्रामुररीकुरुष्व ॥ ३९ ॥ धूपः–लाक्षासंमिलितैः सिताभ्रसहितैः श्रीवाससंमिश्रितैः कर्पूराकलितैः सितामधुयुतैर्गोसर्पिषाऽऽलोडितैः॥ श्रीखंडागरुगुग्गुलप्रभृतिभिर्नानाविधैर्वस्तुभिर्धूपं ते परिकल्पयामि जननि त्वं धूपमंगीकुरु ॥ ४० ॥ दीपं--रत्नालंकृतहेमपात्र-

---

१ फडिति धूपपात्रं संप्रोक्ष्य मूलेन नमः इति संपूज्य पुरतो निधाय (रं) इति वह्निबीजेन अग्निं संस्थाप्य तदुपरि मूलेन दशांगं धूपं दत्वा "ह्रीं जय ध्वनिमंत्रमातः स्वाहा " इति घंटां संपूज्य वामहस्तेन घंटां वादयन् दक्षिणहस्तेन शंखस्थजलं गृहीत्वा धूपमंत्रपाठपठनपुरःसरं शंखस्थजलं भूमौ क्षिप्त्वा देवीवामभागे धूपपात्रं निधाय तर्जनीमूलयोरंगुष्ठयोगात्मिकां धूपमुद्रां प्रदर्शयेदिति ॥ २ दीपपात्रं गोघृतेनापूर्य मंत्राक्षरतंतुभिर्वर्तीं निःक्षिप्य मूलेन प्रज्वाल्य घंटां वादयन् नेत्रादिपादपर्यन्तं दीपं प्रदर्शयेत् ॥ मंत्रपाठपठनपुरःसरं देवीदक्षिणभागे दीपं निधाय शंखजलमुत्सृज्य मध्यमे अंगुष्ठमूललग्ने दीपमुद्रां तां प्रदर्शयेदिति ॥

निहितैर्गोसर्पिषा दीपितैर्दीपैर्दीर्घतरान्धकारभिदुरैर्बालार्ककोटिप्रभैः ॥ आताम्रज्वलदुज्ज्वलद्गगनवद्रत्नप्रदीपैः सदा मातस्त्वामहमादरादनुदिनं नीराजयाम्युच्चकैः ॥ ४१ ॥

अथ नैवेद्यनिवेदनविधिः ॥ तत्रादौ देव्या अग्रे दक्षिणतो वा जलेन चतुरस्रं मंडलं कृत्वा । स्वर्णादिनिर्मितं भोजनपात्रं संस्थाप्य । तन्मध्ये षड्रसोपेतं विविधप्रकारकं वा नैवेद्यं निधाय "ह्रीं नमः" इत्यर्घजलेन संप्रोक्ष्य मूलेन संवीक्ष्य अधोमुखदक्षिणहस्तोपरि तादृशं वामहस्तं निधाय। नैवेद्यमाच्छाद्य (यं) इति वायुबीजं षोडशधा संजप्य वायुना तद्भूतदोषान् संशोध्य ततो दक्षिणकरतले तत्पृष्ठलग्नवामकरतलं कृत्वा नैवेद्यं प्रदर्श्य (रं) इति वह्निबीजं षोडशवारं संजप्य तदुत्पन्नाग्निना तद्दोषं दग्ध्वा ततो वामकरतले (वं) इति अमृतबीजं विचिन्त्य तत्पृष्ठ-लग्नं दक्षिणकरतलं कृत्वा नैवेद्यं प्रदर्श्य (वं) इति सुधाबीजं षोडशवारं संजप्य तदुत्थामृतधारया प्लावितं विभाव्य मूलेन संप्रोक्ष्य धेनुमुद्रां प्रदर्श्य मूलेनाष्टवारमभिमंत्र्य गंधपुष्पाभ्यां संपूज्य देव्या हृद्गतं तेजः स्मृत्वा । वामांगुष्ठेन नैवेद्यपात्रं स्पृष्ट्वा दक्षिणकरेण जलं गृहीत्वा । चतुर्विधान्नं सघृतं सुवर्णपात्रे मया देवि समर्पितं तत् ॥ संवीज्यमानाऽमरवृन्दकैस्त्वं जुषस्व मातर्दययाऽवलोकय ॥ ४२ ॥ श्रीमन्महाकाली-महालक्ष्मीमहासरस्वतीभ्यो नमः नैवेद्यं सम० । इति भूतले देवीदक्षिणे जलं क्षिप्त्वा वामहस्तेन अनामामूलयोरंगुष्ठयोगेन नैवेद्यमुद्रां प्रदर्श्य सपुष्पकराभ्यां पात्रमुद्धरन्। "भगवति! निवेदितानि हवींषि जुषाण"। इति पठन् ग्रासमुद्रां प्रदर्शयेत् ॥ वामहस्तेन पद्माभां प्राणाद्यां दक्षिणेन तु ॥ यथा ॥ (कनिष्ठिकानामिकांगुष्ठैः) ह्रीं प्राणाय नमः ॥ (तर्जनीमध्यमांगुष्ठैः) ह्रीं अपानाय नमः ॥ (तर्जन्यनामामध्य-

मांगुष्ठैः) ह्रीं व्यानाय नमः ॥ (अनामामध्यमांगुष्ठैः) ह्रीं उदानाय नमः ॥ (सर्वांगुलिभिः) ह्रीं समानाय नमः ॥ एवं प्राणादिमुद्राः समर्प्य देवीं भुंजानां ध्यात्वा जलं दद्यात् ॥ नमस्ते देवदेवेशि सर्वतृप्तिकरं परम् ॥ अखंडानंदसंपूर्णे गृहाण जलमुत्तमम् ॥ ४३ ॥ श्रीमन्महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीभ्यो नमः जलं सम० ॥ इति स्वर्णादिपात्रस्थं कर्पूरादिसुवासितं जलं निवेद्य जनन्या तज्जलं प्राशितमिति भावयन् अन्तःपटं धृत्वा पठेत् ॥ "ब्रह्मेशाद्यैः सरसमभितः सूपविष्टैः समन्तात् सिंजद्वालव्यजननिकरैर्वीज्यमाना सखीभिः । नर्मक्रीडाप्रहसनपरान् पंक्तिभोक्तॄन् हसन्ती भुंक्ते पात्रे कनकघटिते षड्रसान् देवदेवी ॥ ४४ ॥ शालीभक्तं सुपक्वं शिशिरकरसितं पायसापूपसूपं लेह्यं पेयं च चोष्यं सितममृतफलं घारिकाद्यं सुखाद्यम् ॥ आज्यं प्राज्यं सुभोज्यं नयनरुचिकरं राजिकैलामरीचः स्वादीयः शाकराजी परिकरममृताहारजोषं जुषस्व" ॥ ४५ ॥ इति अंतःपटं दत्वा आचमनीयपात्रादाचमनं दद्यात् ॥ ततो मूलमंत्रं सप्तवारं पठेत् ॥ जवनिकामपाकृत्य ॥ श्रीमन्महाकाली० मध्ये पानीयं सम० ॥ ततो भुंजानां देवीं ध्यात्वा यथाशक्ति मूलमंत्रं प्रजप्य देवीदक्षिणहस्ते जपं समर्पयेत् ॥ ततो नैवेद्यनिवेदनार्थमन्ये मंत्रा वक्तव्याः ॥

(नैवेद्यम्)--मातस्त्वां दधिदुग्धपायसमहाशाल्यन्नसंतालिकासूपापूपसिताघृतैः सवटकैः सक्षौद्ररंभाफलैः ॥ एलाजीरकहिंगुनागरनिशाकौस्तुंबरैः संस्कृतैः शाकैः शाकयुतैः सुधाधिकरसैः संतर्पयाम्यर्पितैः ॥४६॥ सापूपसूपदधिदुग्धसिताघृतानि सुस्वादुभक्ष्यपरमान्नपुरःसराणि ॥ शाकोल्लसन्मरिचजीरकबाह्लिकानि भक्ष्याणि भक्ष जगदंब मयाऽर्पितानि ॥ ४७ ॥ आच०--गंगोत्तरीवेगमप्रद्धवेन मशीतलेनातिमनोहरेण ॥ त्वं

पद्मपत्राक्षि मयाऽर्पितेन शंखोदकेनाचमनं कुरुष्व ॥ आचमनं स०॥४८॥ पूर्वा०–क्षीरमेतदिदमुत्तमोत्तमं प्राज्यमाज्यमिदमुज्वलं मधु ॥ मातरेतदमृतोपमं त्वया संभ्रमेण परिपीयतां मुहुः ॥ पूर्वा० स० ॥ ४९ ॥ जलम्-अतिशीतमुशीरवासितं तपनीयोपवने निवेदितम् ॥ पटपूतमिदं जितामृतं शुचि गंगामृतमंब पीयताम् ॥ जलं स० ॥५०॥ उत्तरा०–नीहारहारं घनसारसारं मकल्पितानेकसुगंधिभारम् ॥ शीतांबु जंबूनदपात्रवर्ति पीत्वा हि दुर्गेश्वरि पीयतां तत् ॥ उत्तरा० स ॥५१॥ करो०–उष्णोदकैः पाणियुगं मुखं च प्रक्षाल्य मातः कलधौतपात्रे ॥ कर्पूरमिश्रेण सकुंकुमेन हस्तौ समुद्वर्तय चन्दनेन ॥ करो० गन्धं स० ॥५२॥ तांबूलम्–कर्पूरेण युतैर्लवंगसहितैः कंकोलचूर्णान्वितैः सुस्वादक्रमुकैः सगौरखदिरैः सुस्निग्धजातिफलैः॥ मातः केतकपत्रकेन्दुरुचिभिस्तांबूलवल्लीदलैः सानंदं मुखमंडनीयमतुलं तांबूलमंगीकुरु ॥ ५३ ॥ एलालवंगादिसमन्वितानि कंकोलकर्पूरसुमिश्रितानि ॥ तांबूलवल्लीदलसंयुतानि पूगानि ते देवि समर्पयामि ॥ ५४॥ दक्षिणा-अथ बहुमणिमिश्रैर्मौक्तिकैस्त्वां विकीर्य त्रिभुवनकमनीये पूजयित्वा च वस्त्रैः ॥ मिलितविविधमुक्तैर्दिव्यलावण्ययुक्तां जननि कनकवृष्टिं दक्षिणां तेऽर्पयामि॥५५॥ प्रदक्षिणा-पदे पदे या परिपूजकेभ्यः सद्योऽश्वमेधादिफलं ददाति ॥ तां सर्वपापक्षयहेतुभूतां प्रदक्षिणां ते परितः करोमि ॥५६॥ विशेषार्घः–कर्लिंगकोशातकसंयुतानि जंबीरनारिंगसमन्वितानि ॥ सुनारिकेलानि सदाडिमानि फलानि ते देवि समर्पयामि ॥५७॥ छत्रम्–मातः कांचनदंडमंडितमिदं पूर्णेन्दुबिंबप्रभं नानारत्नविशोभिहेमतिलकं लोकत्रयाह्लादकम् ॥ भास्वन्मौक्तिकजालिकापरिवृतं प्रीत्याऽऽत्महस्ते धृतं छत्रं ते परिकल्पयामि जननि त्वष्ट्रा स्वयंनिर्मितम् ॥५८॥ चामरम्–शरदिन्दुमरीचिगौरवर्णै मणिमुक्ताविं-

लसत्सुवर्णदंडैः ॥ जगदंब विचित्रचामरैस्त्वामहमानन्दभरेण वीजयामि ॥५९॥ व्यजनम्—शतपत्रयुतैः स्वभावशीतैरतिसौरभ्ययुतैः परागपीतैः॥ भ्रमरीमुखरीकृतैरनन्तैर्व्यजनैस्त्वां जगदंब वीजयामि ॥ ६० ॥ आदर्शः—मार्तंडमंडलनिभो जगदंब योऽयं भक्त्या मया मणिमयो मुकुरोऽर्पितस्ते ॥ पूर्णेन्दुबिंबरुचिरं वदनं स्वकीयमस्मिन्विलोकय विलोलविलोचने त्वम् ॥ ६१ ॥ तुरंगः—प्रियगतिरतितुंगो रत्नपल्याणयुक्तः कनकमयविभूषः स्निग्धगंभीरघोषः ॥ भगवति कलितोऽयं वाहनार्थे मया ते तुरगशतसमेतो वायुवेगस्तुरंगः ॥ ६२ ॥ मातंगः—मधुकरव्रतकुंभो न्यस्तसिंदुररेणुः कनककलितघंटाकिंकिणीशोभिकंठः ॥ श्रवणयुगलचंचच्चामरो मेघतुल्यो जननि तव मुदे स्तान्मत्तमातंग एषः ॥ ६३ ॥ रथः-द्रुततरतुरगैर्विराजमानं मणिमयचक्रचतुष्टयेन युक्तम्॥ कनकमयमहावितानयुक्तं भगवति ते हि रथं समर्पयामि ॥६४॥ सैन्यम् हयगजरथपत्तिशोभमानं दिशि दिशि दुंदुभिमेघनादयुक्तम् ॥ अपिबहुचतुरंगसैन्यमेतद्भगवति भक्तिभरेण तेऽर्पयामि ॥६५॥ प्राकारः—परिधीकृतसप्तसागरं बहुसंपत्सहितं मयाऽम्बिके ॥ विपुलं धरणीतलाभिधं प्रबलं दुर्गमिमं तेऽर्पितम् ॥६६॥ नृत्यम्—भ्रमविलुलितकुन्तलोकतालिविगलितमाल्यविकीर्णरंगभूमिः । इयमिति रुचिरानना नटन्ती तव हृदये मुदमातनोतु मातः ॥ डमरुडिंडिमझर्झरझल्लरीमृदुरवार्द्रघटाद्रघटादयः ॥ झटितिझंकृतिभिर्जगदंबिके मृदुरवा हृदयं सुखयन्तु ते ॥६७॥ ताम्रपात्रे दधिलवणसर्षपदूर्वाक्षतान् निक्षिप्य देव्या दृष्टिमुत्तारयेत् ॥ दृष्ट्या मदृष्ट्या खलु दृष्टदोषान् संहर्तुमारात्प्रथितप्रकाशा॥ जनो भवेदिन्द्रपदाय योग्यस्तस्यै तवेदं लवणाक्षिदोषहम् ॥ ६८ ॥

" अथ देवीपूजांगहोमविधिः ॥ जलमादाय अद्येत्यादि० तिथौ

श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीत्रिगुणात्मिकादुर्गाप्रीतये पू...होमं करिष्ये ॥ तत्रादौ देवीदक्षिणे हस्तमात्रस्थंडिले कुंडे वा संस्कारचतुष्टयं कुर्यात् ॥ मूलेनेक्षणम् । फडिति प्रोक्षणम् । फडिति चतुर्भिर्दर्भैस्ताडनम् । हुं इति मुष्टिना अप आसिञ्चेत् । वह्निमानीय पूर्ववत् संस्कृत्य संस्थाप्य परिषिच्य मूलेन देवीं समावाह्य पंचविंशतिमाहुतीर्मूलेन हुत्वा परिवारदेवतानामेकैकाहुतिं हुत्वा संहारमुद्रया विसृजेत् ॥ एतदशक्तौ पंचाशद्वारं मूलं जपेत् ॥ इति ॥

"अथ बलिपंचकविधिः"—पीठस्यईशानवायुनिर्ऋतिवह्निकोणेषु त्रिकोणवृत्तात्मकं मंडलचतुष्टयं निर्माय ॥'बलिमंडलाय नमः' इति प्रत्येकं मंडलं संपूज्य ॥ ईशाने वां वटुकाय नमः । वायवे यां योगिनीभ्यो० । नैर्ऋत्ये क्षां क्षेत्रपालाय० । आग्नेये गं गणपतये० । इति देवताचतुष्टयं गंधादिभिरभ्यर्च्य संकल्पपूर्वकं बलिदानं दद्यात् ॥ ४ ॥ ततः स्ववामे त्रिकोणवृत्तचतुरस्रं मंडलं कृत्वा 'ऐं ह्रीं श्रीं व्यापकमंडलाय नमः' इति संपूज्य अर्धाम्रपूर्णसलिलं साधारं बलिं निधाय "ह्रीं सर्वविघ्नकृद्भ्यः सर्वभूतेभ्यो हुं स्वाहा" इति कलार्णमनुना सामान्योदकेन

---

१ बलिपंचकउभयविचारः—इदं बलिपंचकमावश्यकमेव ॥ अदत्वा बटुकादीना यः पूजयति चंडिकाम् । सा पूजा विफला तस्य देवीशापः प्रजायते ॥ १ ॥ इति तंत्रे दोषश्रवणात् ॥ अदत्वेति उक्तत्रयस्यानन्तरं करिष्यमाणचंडिकासपर्यातः प्राग्बलिदानबोधकत्वेन अर्घ्यस्थापनानन्तरं बटुकादिबलिदानपंचकं विधाय देवीपूजनादिकं कुर्वन्ति तान्त्रिकाः ॥ देवीपूजनं बटुकादिबलिनिरपेक्षं केवलं न कर्तव्यम् इत्यर्थमात्रस्य प्रतीयमानत्वात् क्रमविवक्षायां कदा कार्यमित्याकांक्षायां नैवेद्यावसरे एतत् काल इति केचित् पद्धतिकारा ऊचुः ॥ सपर्याधिकारिताप्रीतकं प्राक् पूजनागं चान्यदित्येवमुभयमपि विरुध्यादित्यपि केचनेति ॥ तत्र यथासंप्रदायं व्यवस्था कर्तव्या ॥ इति ॥

सर्वभूतेभ्यः प्रार्थनापूर्वकं बलिं दत्वा तत्त्वमुद्रां प्रदर्श्य योनिमुद्रया प्रणमेत् ॥ इति बलिदानविधिः ॥

"अथ प्रधानदेवीबलिदानम्"-तत्रादौ देव्यै उत्तराचमनीयं दत्वा गंडूपान् कारयित्वा तांबूलं समर्प्य बलिं दद्यात् । माषभक्तं पायसं वा साधारणान्नम् उत्तरदिशि कृतत्रिकोणमंडले संस्थाप्य । वाग्भवमाया-रमाभिर्बलिं संपूज्य स्वाहान्तं मूलमुच्चार्य "सांगायै सपरिवारायै महा-लक्ष्म्यै एष पायसबलिर्नमम ।" इति विशेषार्घोदकं दत्वा योनिमुद्रया प्रणमेत् ॥ काम्यबलिदानं तु पश्चात् वक्ष्यते ॥ इति ॥

अथ देवीनीराजनम् ॥ जय देवि जय देवि जयमातस्त्रिपुरे भवयानुग्रहकारिणि दासानुग्रहकारिणि ईश्वरि सुरवरदे ॥ ध्रुव० ॥ दुर्गे दुर्गतिनाशिनि भवसागरतारे मृगेन्द्रवाहनगिरिजे दानवसंहारे ॥ अष्टादशभुजमूर्ते कंठरुंडमाले सप्तशृंगनिवासिनि रुद्रात्मकशक्ते ॥ जय देवि० ॥१॥ बालार्कारुणशोभितबंधककुसुमाभे । कुंकुमशोभितदेहे दाडिमकुसुमाभे ॥ पादाहतमहिषासुरदेवासुरसर्गे । नानादानवमर्दिनि अलिकुलरिपुवर्गे ॥ जय देवि० ॥ २ ॥ जय त्रिपुरासुरमर्दिनि मर्दय मम दोषान् ॥ तारय तारय मातर्भवजलकूपस्थान् ॥ कामक्रोधादी-न्मारय देहस्थान् करुणादृष्ट्या माता रक्षय निजभक्तान् ॥ जय देवि० ॥३॥ मूले चाधिष्ठाने मणिपूरे चक्रे हृदयेऽनाहतचक्रे षोडशदलपद्मे ॥ आज्ञाचक्रे चालय चालय कृतवलये ब्रह्मस्थाने विहरसि मातः शिवस-हिते ॥ जय देवि० ॥४॥ विधिहरिशंकरवंद्ये पंडितजनवंद्ये सनकादिक-मुनिवंद्ये यक्षासुरवंद्ये ॥ नारदतुंबुरुकिन्नरगीते सुरवंद्ये अघनाशिनि भवशोषिणि मातः सुखसहिते ॥ जय देवि० ॥५॥ इति ॥ कर्पूरगौरं करुणा० ॥८६॥ मूलम्-ॐ भू० श्रीमहाका० म० ल० महास० भ्यो नमः निराजनं

स० ॥ जलेन प्रदक्षिणां कुर्यात् ॥ पुष्पैर्देवताभिवन्दनम् आत्माभिवन्दनम् । हस्तं प्रक्षाल्य मन्त्रपुष्पाञ्जलिः—ॐगणानान्त्वा०॥यज्ञेनयज्ञमयजन्त०॥ ॐ राजाधिराजा० ॥ ॐमूलम् । श्रीमहाका० म० ल० म० स० भ्यो नमः मन्त्रपुष्पाञ्जलिं स० ॥ प्रदक्षिणा—ॐविश्वतश्चक्षु० ॥ यानि कानि च पा०। श्रीमहाका० म०ल० म० स० भ्यो नमः प्रदक्षिणां स० ॥ विशेषार्घः—फलिङ्गकोशातकसंयुतानि जंबीरनारिङ्गसमन्वितानि ॥ सुनारिकेलानि सदाडिमानि फलानि ते देवि समर्पयामि॥७०॥ श्रीमहाका० म० ल० म० स० भ्यो नमः विशेषार्घं स० ॥ जपः—ॐऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ॥ इति मन्त्रेण यथाशक्ति जपं कुर्यात् ॥ प्रार्थनापूर्वकनमस्कारः—एषा भक्त्या तव विरचिता या मया देवि पूजा स्वीकृत्यैनां सपदि सकलान्मेऽपराधान्क्षमस्व । नूनं यत्तत्तव करुणया पूर्णतामेतु सद्यः सानन्दं मे हृदयकमले तेऽस्तु नित्यं निवासः॥७१॥ ॐ भू० श्रीमहाका० म० ल० म० स० भ्यो नमः प्रार्थनापूर्वकनमस्कारान्स० ॥ क्षमापनम्—अपराधसहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया ॥ दासोऽयमिति मां मत्वा क्षमस्व परमेश्वरि ॥ १ ॥ आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम् ॥ पूजां चैव न जानामि क्षम्यतां परमेश्वरि ॥२॥ मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरि ॥ यत्पूजितं मया देवि परिपूर्णं तदस्तु मे ॥ ३ ॥ अपराधशतं कृत्वा जगदम्बेति चोच्चरेत् ॥ यां गतिं समवाप्नोति न तां ब्रह्मादयः सुराः ॥ ४ ॥ सापराधोऽस्मि शरणं प्राप्तस्त्वां जगदम्बिके ॥ इदानीमनुकम्प्योऽहं यथेच्छसि तथा कुरु ॥ ५ ॥ अज्ञानाद्विस्मृतेर्भ्रान्त्या यन्न्यूनमधिकं कृतम् ॥ तत्सर्वं क्षम्यतां देवि प्रसीद परमेश्वरि ॥ ६ ॥ गतं पापं गतं दुःखं गतं दारिद्र्यमेव च ॥ आगता सुखसंपत्तिः पुण्याच्च तव दर्शनात् ॥ ७ ॥ मंत्र-

हीनं० ॥८॥ त्वं हि दात्री च भोक्त्री च देवीरूपमिदं जगत् ॥ देवीं जपति सर्वत्र या देवी सोऽहमेव हि ॥ ९ ॥ क्षमस्व देवदेवेशि क्षम्यतां परमेश्वरि । तव पादांबुजे नित्यं निश्चला भक्तिरस्तु मे ॥ १० ॥ इति सम्प्रार्थ्य । अर्पणम्-अनेनावाहनासनपाद्यार्घ्याचमनीयस्नानवस्त्रोपवीतगन्धाक्षतपुष्पधूपदीपनैवेद्यताम्बूलदक्षिणाप्रदक्षिणामन्त्रपुष्परूपैः राजोपचारैरन्योपचारैश्च यथाज्ञानेन यथामिलितोपचारद्रव्यैः कृतेन पात्रासादनपूजनपूर्वकविशेषकर्मणा श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीदेवताः प्रीयतां नमम ॥ ॐ तत्सद्० मस्तु ॥ यस्य स्मृत्या० मच्युतम् ॥

ततः कुमारीपूजा ॥ देशकालौ संकीर्त्य शतचंडीकर्मांगत्वेन कुमारीपूजां करिष्ये ॥ इति संकल्प्य मूलेन षडंगं कृत्वा मूलमंत्रमुच्चार्य । मंत्राक्षरमयीं देवीं मातॄणां रूपधारिणीम् ॥ नवदुर्गात्मिकां साक्षात्कन्यामावाहयाम्यहम् ॥ इति कुमारीमावाह्य यथासंभवं पूजयेत् ॥ कुमार्यश्च प्रत्यहं शतं नव एका वा यथाशक्ति वा पूज्याः ॥ प्रत्यहमेकवृद्ध्या वा पूजयेत् ॥ ततो ब्राह्मणसुवासिनीपूजा ॥ एवं देवीकुमार्यादिपूजां प्रत्यहं कृत्वा योगिनीक्षेत्रपालस्थापनपूजनं कुर्यात् ॥ ततः सर्वे विप्राः कृतांगन्यासाः कवचार्गलाकीलकानि सकृज्जप्त्वा अष्टोत्तरशतं नवार्णमंत्रं जप्त्वा रात्रिसूक्तं सप्तशतीं जप्त्वाऽते देवीसूक्तमष्टोत्तरशतं नवार्णं च जप्त्वा रहस्यानि जपेत् ॥ एकस्मिन्दिनेऽनेकावृत्तौ तु कवचादीनां प्रत्यावृत्ति नावृत्तिः ॥ एवमृत्विजः प्रथमदिने एकं द्वितीये द्वे तृतीये त्रीणि चतुर्थे चत्वारि रूपाणीत्येवं जपं कुर्युः ॥ ऋत्विजां यजमानस्य च प्रत्यहं क्षीरमात्राशनम् अशक्तौ हविष्याशनं वा । प्रत्यहं सहस्रं शतं दश वा ब्राह्मणान् भोजयेत् । पंचमेऽह्नि होमः ॥ नवरात्रे तु नवम्यामेव होमः । केचित्तु अष्टम्यामारभ्य नवम्यां होमं समापयन्ति ॥

अथ होमः ॥ हस्ते जलमादाय देशकालौ संकीर्त्य मया ब्राह्मणद्वारा कृतस्य शतचंडीजपकर्मणः संपूर्णतासिद्ध्यर्थं जपद-शांशेन तिलादिमिश्रपायसद्रव्येण होममहं करिष्ये इति संकल्पयेत् ॥ अत्र केचित्पुण्याहवाचनमपि कुर्वन्ति । तथा पूर्वोक्तकलशस्थापनं देव-तास्थापनं पूजनं चात्रैव कुर्वन्ति ॥ ततः सनवग्रहमखशतचंडीजपदशां-शहोमं कर्तुं स्थंडिलादि करिष्ये इति संकल्प्य स्थंडिलं कुण्डं वा विधाय तत्र पञ्चभूसंस्कारादिकं कृत्वा तत्र (शतमंगलनामानम्) अग्निं प्रतिष्ठाप्य समिध्य ध्यायेत् ॥ ततः प्रागकृतं चेदिदानीमीशान्यां दिशि नवग्रह-स्थापनं पूजनं च कृत्वा तत्पूर्वतः कलशं स्थापयेत् । ततोऽग्निसमीपमा-गत्यान्वाधानं कुर्यात् ॥ यथा समिद्द्वयमादाय क्रियमाणे शतचंडीजपां-गहोमे देवतापरिग्रहार्थमन्वाधानं करिष्ये ॥ अस्मिन्नन्वाहितेऽग्नाविरत्या-दिचक्षुषी आज्येनेत्यन्तमुक्त्वा । आदित्यादिनवग्रहान् प्रतिद्रव्यमष्टाविं-शतिभिरष्टाभिर्वा संख्याकाभिः समिच्चरुतिलाज्याहुतिभिः अधिदेवताः प्रत्यधिदेवताश्च तैरेव द्रव्यैः चतुःसंख्याकाभिराहुतिभिः विनायकाद्या सप्तदेवता इंद्रादिदश लोकपालांश्च तैरेव द्रव्यैः द्वाभ्यां द्वाभ्यामाहुति-भ्यां यक्ष्ये ॥ श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीः मूलमंत्रेण शतवारं सप्तशतीमंत्रैः जपदशांशसंख्यया पायसतिलाज्यपलाशपुष्पसर्षपपूगी-फललाजादूर्वाङ्कुरयवबिल्वफलरक्तचंदनगुग्गुलद्रव्यैर्यथालाभद्रव्यैर्वा तिलमिश्रपायसेन वा पुनर्मूलमंत्रेण शतवारं तैरेव द्रव्यैः आधारशक्त्या-दिपीठदेवताः महाकाल्याद्यावरणदेवताश्च एकैकयाऽऽहुत्या पायसा-ज्येन यक्ष्ये ॥ शेषेण स्विष्टकृतमित्यादि । तत आज्यभागांतं कृत्वा । यजमानः इदं हवनीयद्रव्यं या या० मया परित्यक्तं नमम । यथादैवतमस्तु इति त्यजेत् । ततो नवग्रहादिभ्यः समिच्चरुतिलाज्यैर्जुहुयात् ॥ [उक्तद्र-

व्याणि मूलमंत्रेण शतवारं हुत्वा सप्तशतीमंत्रैर्जपदशांशेन हुत्वा पुनर्मूल-मंत्रेण शतवारं जुहुयात् ॥ मूलमंत्रो नवार्णमंत्रः॥ नवार्णमंत्रस्य केवला-ज्येनैव वा होमः॥ अत्राध्यायसमाप्तौ पत्रपुष्पफलैर्होमः ॥ एवं प्रधानहोमं कृत्वा पीठदेवताभ्यो नाममंत्रैराज्यं पायसं च जुहुयात् ॥ } यथा-जलमादाय । अद्येत्यादि० तिथौ मया ब्राह्मणद्वारा कृतस्य शतचंडीजपस्य संपूर्णतासिद्धयर्थं जपदशांशेन तिलादिमिश्रपायस-द्रव्येण होममहं करिष्ये ॥ तत्रादौ पुस्तकं संपूज्य । कवचार्गलाकीलकं पठित्वा रात्रिसूक्तं नवार्णन्यासं कृत्वा अष्टोत्तरशतं नवार्णमंत्रेण तिला-ज्यपायसद्रव्येण जुहुयात् ॥ ततः प्रथमचरित्रस्येत्याद्युक्तन्यासान् कृत्वा नमश्चंडिकायै ॥ मार्कंडेय उवाच ॥ सावर्णिः सूर्यतनयो० इत्यारभ्य प्रतिमंत्रेण सप्तशत (७००) संख्याहोमं कुर्यात् ॥ मध्ये अध्यायसमाप्तौ उवाचस्थले च पत्रपुष्पफलैर्नवार्णयुक्तेन "नमो देव्यै महा-देव्यै०" इति मंत्रेण महाहुतिं जुहुयात् ॥ "शूलेन पाहि०" इत्यादि श्लोक-चतुष्टयं "महालक्ष्म्यै स्वाहा" इति मंत्रेण देयम् ॥ पाठसमाप्तौ खड्गिनी-त्यादिन्यासान् कुर्यात् ॥ ततो नवार्णमंत्रेणाष्टोत्तरशताहुतीर्जुहुयात् ॥ तदनन्तरं देवीसूक्तं रहस्यत्रयं च पठेत् ॥ ततो नवार्णजपदशांशं जुहुयात् ॥ इति प्रधानहोमः ॥

ततः पीठदेवता-आवरणदेवताहोमः ॥ एवं होमं कृत्वा स्विष्ट-कृदादिप्रणीताविमोकान्तं कृत्वा कर्मशेषं समाप्य मूलमंत्रेण होम-दशांशेन दुग्धेन जलेन वा तर्पणं कृत्वा तेनैव मंत्रेण तद्दशांशेन मार्ज-येत् ॥ ततो यजमान आचार्यादीन्वस्त्राद्यैः संपूज्य तेभ्यो गोमिथुनानि हिरण्यं च दद्यात् ॥ तत आचार्यादिभ्योऽन्येभ्यो वा कपिलागोनील-मणिश्वेताश्वछत्रचामरभूमिशय्यासप्तधान्यानि यथासंभवं वा दद्यात् ॥ तत आचार्यादयः कलशोदकेन सपत्नीकं सकुटुंबं यजमानं समुद्रज्येष्ठा

इत्यादिभिः सुरास्त्वेत्यादिभिर्ग्रहमंत्रैश्चाभिषिंचेयुः ॥ ततो यजमानो ग्रहाणामुत्तरपूजां कृत्वाऽऽचार्येण विसर्जने कृते ग्रहपीठदानं कृत्वा देवीं पंचोपचारैः संपूज्य महाबलिं दद्यात् ॥ (तत्र क्षत्रियादिना श्वमेषछाग-महिषाणामन्यतरो देयः विप्रेण तु कूष्मांडबिल्वेक्षवश्च देयाः ॥)

स चेत्थं–देवीं द्रोणपुष्पबिल्वाम्रदलजातीचंपकैः संपूज्य कर्ता उदङ्मुखः देवीमुखो वा बलिं गंधादिनाऽभ्यर्च्य "पशुस्त्वं बलिरूपेण मम भाग्यादुपस्थितः । प्रणमामि ततः सर्वरूपिणं बलिरूपिणम् ॥ चंडिकाप्रीतिदानेन दातुरापद्विनाशनम् ॥ चामुंडाबलिरूपाय बले तुभ्यं नमोऽस्तु ते ॥ यज्ञार्थे बलयः सृष्टाः स्वयमेव स्वयंभुवा ॥ अतस्त्वां घातयाम्यद्य यस्माद्यज्ञे वधोऽवधः ॥" इति बलिमभिमन्त्र्य ऐं ह्रीं श्रीं इति मंत्रेण पुष्पं क्षिप्त्वा ॥ रसना त्वं चंडिकायाः सुरलोकप्रसाधकः॥ "ह्रां ह्रीं खड्ग आं हुं फट्" इति खड्गमन्यद्वा शस्त्रं संपूज्य "ॐ कालिकालि वज्रेश्वरि लोहदंडायै नमः" ॥ इति बलिं छेदयित्वा "ॐ ह्रीं ऐं ह्रीं कौशिकी रुधिरेणाप्यायताम्" इति देव्यै निवेद्य ततो माषपिष्टमयं शत्रुं कृत्वा खड्गेन छेदयित्वा स्कंदाय विशिखाय च दत्वा बलिशेषं रक्षोभ्यो हरेत् ॥ मंत्रस्तु ॐ ह्रीं स्फुरस्फुर कुंभ २ सुनु २ गुलु २ धुनु २ मारय २ विद्रावय २ विदारय २ कंपय २ कंपातय २ पूरय २ ॐ ह्रीं ॐ हुं फट् २ कुं मर्दय २ हुं ॥ ततः शेषं बहिर्दद्यात् । तत्र मंत्राः । बलिं गृह्णन्त्विमं देवा० इत्यादयः पूर्वोक्ता एव ॥ ततः स्नात्वा निलयं व्रजेत् । कृतस्य कर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थं कुमारीब्राह्मणसुवासिनीः पूजापूर्वकम् संभोज्य संकल्प्य वा न्यूनातिरिक्तदोषपरिहारार्थं ब्राह्मणेभ्यो भूयसीं दक्षिणां दद्यात् ॥ ततो देवीं प्रार्थयेत् ॥ तत्र मंत्राः ॥ खड्गिनी शूलिनी घोरा० १ । शूलेन पाहि नो देवि० ४ ।

नमो देव्यै महादेव्यै० ६। रूपं देहि जयं देहि भाग्यं भगवति देहि मे ॥ पुत्रान्देहि धनं देहि सर्वान्कामांश्च देहि मे ॥ महिषघ्नि महामाये चामुंडे मुंडमालिनि ॥ आयुरारोग्यमैश्वर्यं देहि देवि नमोऽस्तु ते ॥ त्वं हि दाता च भोक्ता च देवीरूपमिदं जगत् ॥ देवीं जपति सर्वत्र या देवी सोऽहमेव हि ॥ १ ॥ क्षमस्व देवदेवेशि क्षम्यतां परमेश्वरि ॥ तव पादांबुजे नित्यं निश्चला भक्तिरस्तु मे ॥ २ ॥ इति संप्रार्थ्य। जलमादाय। यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या०। अनेन षाश्रासादनपूर्वकपूजनेन महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यः प्रीयन्ताम् ॥ ततः शंखजलमुद्धृत्य देव्या उपरि भ्रामयित्वा ॥ शंखमध्ये स्थितं तोयं भ्रामितं ललितोपरि ॥ अंगलग्नं मनुष्याणां ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥१॥ न रोगा न च कूष्मांडाः पिशाचोरगराक्षसाः ॥ दृष्ट्वा शंखोदकं मूर्ध्नि व्याधयो विलयं गताः ॥ २ ॥ इति मंत्रेण देव्या दक्षिणकरे किंचिज्जलं दत्त्वा प्राग्वदर्घ्यं देव्याः शिरसि दत्त्वा शंखं यथास्थाने निवेशयेत् ॥ ततो गतसारनैवेद्यं देव्याश्चोच्छिष्टं किंचिदुद्धृत्य "विष्वक्सेनाय नमः" इति मूलमंत्रेण विष्वक्सेनं संपूज्य उच्छिष्टधारिणे ऐशान्यां दिशि दद्यात् ॥ तच्छेषनैवेद्यं शिरसि धृत्वा नैवेद्यादिकं देवीभक्तेषु विभज्य स्वयं भुंजीयात् ॥ अथ चरणोदकग्रहणम् ॥ अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम् ॥ देव्याः पादोदकं पीत्वा शिरसा धारयाम्यहम् ॥ इति पात्रान्तरेणैव न तु हस्तेन त्रिवारं पिबेत् ॥

ततः किंचित् सामान्यार्घोदकमादाय। साधु वा साधु वा कर्म यद्यदाचरितं मया ॥ तत्सर्वं कृपया देवि गृहाणाराधनं मम ॥ १ ॥ इति मंत्रेण देवीवामहस्ते जलं समर्पयेत् ॥ ततः विशेषार्घोदकमादाय ॥ इतः पूर्वं प्राणबुद्धिदेहधर्माधिकारतो जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तितुर्यावस्थासु

मनसा वाचा कर्मणा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्ना यत्स्मृतं यदुक्तं यत्कृतं तत्सर्वं देव्यै समर्पणमस्तु ॥ मां मदीयं च सकलं देव्यै समर्पये ॥ ह्रीं तत्सद् इति तज्जलं देव्या उपरि समर्पयेत् ॥ विशेषार्घं मूलमंत्रेण समर्प्य । तेनैव देवीं नीराज्य स्वस्थाने स्थापयित्वा ततः कलशं विसृजेत् ॥ हस्ते अक्षतान् गृहीत्वा ॥ उत्तिष्ठ देवि चंडेशि शुभां पूजां प्रगृह्य च ॥ कुरुष्व मम कल्याणमष्टाभिः शक्तिभिः सह ॥ १ ॥ गच्छ गच्छ परं स्थानं स्वस्थानं गच्छ चंडिके ॥ दुर्गे देवि जगन्मातः स्वस्थानं गच्छ पूजिता ॥ २ ॥ इमां पूजा मया देवि यथाशक्त्योपपादिताम् ॥ रक्षार्थं त्वं समादाय व्रजस्व स्थानमुत्तमम् ॥ ३ ॥ इत्यक्षतान्निक्षिप्य ॥ संहारमुद्रया पुष्पं शिरसि धृत्वा ॥ गच्छ गच्छ परं स्थानं स्वस्थानं परमेश्वरि ॥ यत्र ब्रह्मादयो देवा न विदुः परमं पदम् ॥ १ ॥ इति संहारमुद्रया हृदयकमले हस्तं दत्त्वा देवीं स्वहृदये संस्थाप्य मानसोपचारैः संपूज्य स्वात्मानं देवीस्वरूपं भावयन् ॥ मूलं जप्त्वा " गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम् ॥ सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ॥ " इति देव्यै जपं निवेद्य ॥ संपूज्य त्रिमूर्तिं धृत्वा यान्तु देव० इति देवान् गच्छगच्छेत्याग्निं च विसृज्य मूलमंत्रेण पुष्पेण देवीमुद्वास्य तेनैव पट्टं कुर्यात् ॥

उत्तिष्ठ ब्रह्मण०। उत्तिष्ठ देवि चंडेशि शुभां पूजां प्रगृह्य च ॥ कुरुष्व मम कल्याणमष्टाभिः शक्तिभिः सह ॥ इति मंत्रैर्देवीं विसृज्याचार्याय दत्त्वा मंत्रं पठेत् ॥ त्रैलोक्यमातर्देवि त्वं सर्वभूतदयान्विते ॥ दानेनानेन संतुष्टा सुप्रीता वरदा भव ॥ ततो यस्य स्मृत्या० प्रमादात्कुर्वतां कर्म० । इत्यादि जपित्वा कर्मेश्वरार्पणं कृत्वा सुहृद्युतो भुक्त्वा यथासुखं विहरेत् ॥ इदमेव पूजाहोमबल्यादिविधानं नवरात्रेऽपि ज्ञेयम् ॥ तत्र विशेषस्तु दशम्यां

प्रातर्देवीविसर्जनम् ॥ अन्यच्च देवीमहानिबंधेभ्योऽवगन्तव्यम् ॥

॥ इति देवीराजोपचारपूजाप्रयोगः ॥

॥ इति संक्षिप्तो नवचंडीशतचंडीसहस्रचंडीप्रयोगः ॥

॥ ४९ ॥ अथ नवरात्रे घटस्थापनादिप्रयोगः ॥

प्रतिपदि प्रातः कृताभ्यंगस्नानः कुंकुमचंदनादिना कृतपुंड्रो धृतपवित्रः सपत्नीको दशघटिकामध्येऽभिजिन्मुहूर्ते वा कलशस्थापनार्थं शुद्धमृदा वेदिकां कृत्वा पञ्चपल्लवदूर्वाफलताम्बूलकुंकुमपुष्पधूपादिसंभारान् संपादयेत् ॥ ततो देशकालौ संकीर्त्य ममेह जन्मनि दुर्गाप्रीतिद्वारासर्वापच्छान्तिपूर्वकदीर्घायुर्विपुलधनपुत्रपौत्राद्यविच्छिन्नसन्ततिवृद्धिस्थिरलक्ष्मीकीर्तिलाभशत्रुपराजयप्रमुखचतुर्विधपुरुषार्थसिद्ध्यर्थम् अद्य शारदीयनवरात्रे प्रतिपदि विहितं कलशस्थापनं दुर्गापूजां (चंडीसप्तशतीपाठं) कुमारीपूजाद्युत्सवाख्यं कर्म करिष्ये ॥ तत्र निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणपतिपूजनं पुण्याहवाचनं चंडीसप्तशतीजपाद्यर्थं ब्राह्मणवरणं च करिष्ये इति संकल्प्य ॐ सुमुखश्चेत्यादि पठित्वा गणपतिपूजनं विधाय पुण्याहवाचनं कुर्यात् ॥ ततो गंधपुष्पवस्त्रांगुलीयकमादाय देशकालौ संकीर्त्य–ॐ अद्य० शरत्कालिकदुर्गापूजनपूर्वकमार्कंडेयपुराणीयचंडीसप्तशतीपाठकरणार्थममुकशर्माणं ब्राह्मणं त्वामहं वृणे ॥ ॐ वृतोऽस्मीति प्रतिवचनम् ॥ इति ब्राह्मणं वृत्वा गंधादिभिः पूजयेत् ॥ ततो विप्रः ॐ भूरसि भूमिरस्य० इति भूमिं स्पृष्ट्वा ॥१॥ तस्यां भुव्यंकुरारोपणार्थं शुद्धमृदं प्रक्षिप्य । तत्र ॐ धान्यमसि धिनुहि० इति यवान्निक्षिप्य ॥ २ ॥ ॐ आजिंघ्र कलशं० इति कुंभं संस्थाप्य ॥३॥ ॐ वरुणस्योत्तं० इति जलं प्रपूर्य ॥४॥ गंधद्वारां० इति गंधम् ॥५॥ ॐ याऽओषधीः० इति सर्वौषधीः ॥६॥ ॐ काण्डात्काण्डात्० इति दूर्वाः ॥७॥ ॐ अश्वत्थेवो० इति

पंचपल्लवान् ॥८॥ ॐ स्योनापृथिवि० इति सप्तमृदः ॥९॥ ॐ याः फलि-नीर्या० इति पूगीफलम् ॥१०॥ ॐ परिवाजपतिः० इति पंचरत्नानि ॥११॥ ॐ हिरण्यगर्भः० इति हिरण्यं च क्षिप्त्वा ॥१२॥ ॐ वसोः पवित्रमसि० इति रक्तवस्त्रेणावेष्ट्य ॥१३॥ ॐ पूर्णादर्वि० इति तण्डुलपूर्णपात्रं निधाय ॥१४॥ तत्र ॐ तत्त्वायामि० इति वरुणमावाह्य संपूज्य ॥१५॥ कलशस्य मुखे विष्णु-रित्यभिमंत्र्य देवदानवसंवादे० इत्यादि प्रार्थयेत् ॥ ततः कलशोपरि स्वर्ण-मयीं दुर्गाप्रतिमाम् अग्न्युत्तारणपूर्वकं पंचामृतेन स्नापयित्वा संस्थापयेत् ॥

अथ पूजा ॥ देशकालौ संकीर्त्य अमुकगोत्रोऽमुकशर्माऽहं मम (यजमानस्य वा) अतुलविभूतिकामः संवत्सरसुखप्राप्तिकामः श्रीदुर्गापूजनं करिष्ये इति संकल्प्य ॥ ॐ जयन्ती मङ्गला काली भद्र-काली कपालिनी । दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते ॥१॥ आगच्छ वरदे देवि दैत्यदर्पनिषूदनि ॥ पूजां गृहाण सुमुखि नमस्ते शंकरप्रिये ॥२॥ इत्यावाह्य दुर्गाम् आसनादिषोडशोपचारैः संपूजयेत् ॥ ततः प्रार्थना ॥ मंत्रहीनं क्रियाहीनं० । महिषघ्नि महामाये चामुंडे मुंडमालिनि ॥ यशो देहि धनं देहि सर्वान्कामांश्च देहि मे ॥ इत्यादि प्रार्थ्य चंडीपाठं कुर्यात् ॥ तत्रादौ देशकालौ संकीर्त्य मम (यजमानस्य वा) अतुलविभूतिकामः श्रीदुर्गाप्रीत्यर्थं कवचार्गलाकीलकनवार्णमंत्रा-ष्टोत्तरशतजपरात्रिसूक्तपूर्वकंदेवीसूक्तनवार्णमंत्राष्टोत्तरशतजपरहस्यत्रय-पठनान्तं मार्कंडेयपुराणान्तर्गतं "ॐ सावर्णिः सूर्यतनय इत्यादिकं साव-र्णिर्भविता मनुरित्यंतं" देवीमाहात्म्यपाठं करिष्ये इति संकल्प्य आसना-दि विधाय आधारे अन्यहस्तलिखितं पुस्तकं स्थापयित्वा नारायणं

१ केचिदादौ रात्रिसूक्तपठनानन्तरं नवार्णमंत्रजपं कुर्वन्ति तथा चान्ते नवार्णमन्त्रजपानन्तरं देवीसूक्तं पठन्ति । तत्र परम्परानुकूलं कर्तव्यम् ॥

नमस्कृत्य प्रणवमुच्चार्य ग्रंथार्थं बुध्यमानः स्पष्टाक्षरं नातिशीघ्रं नातिमंदं रसभावस्वरयुतं पाठं पठेत् ॥ अध्यायं समाप्य विरमेन्न तु मध्ये ॥

अथ कुमारिकापूजनम् ॥ हस्ते जलमादाय—अद्यपूर्वो० तिथौ शारदीयनवरात्रोत्सवाख्यस्य कर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं कुमारीपूजनं करिष्ये ॥ अशक्तो यथाशक्ति एकामपि कुमारिकां सुगन्धतैलेनाभ्यंगं कारयित्वा पीठे उपवेश्य पूजयेत् ॥ पूजनमंत्रः—मंत्राक्षरमयीं लक्ष्मीं मातॄणां रूपधारिणीम् ॥ नवदुर्गात्मिकां साक्षात्कन्यामावाहयाम्यहम् ॥ १ ॥ इति मंत्रेण पञ्चोपचारैः सम्पूजयेत् । इति कुमारिकापूजनम् ॥ (वटुकपूजनम् " वंवटुकाय नमः " इति मूलमंत्रेण पञ्चोपचारैः वटुकं संपूजयेत् ॥)

अथ नियमग्रहणम्—हस्ते जलमादाय—अद्यप्रभृति देवेशि करिष्ये व्रतमुत्तमम् ॥ नवरात्रं करिष्यामि दुःखदारिद्र्यनाशनम् ॥ करिष्ये शास्त्रविधिना निर्विघ्नेन समाप्यताम् ॥१॥ प्रतिपद्दिनमारभ्य व्रतस्थो (स्था)ऽहं महेश्वरि ॥ नवदुर्गात्मिके मातर्निर्विघ्नं कुरु मे सदा ॥ २ ॥ नवरात्रं यथाशक्ति सर्वभोगविवर्जितः (ता)॥ उपोषणं करिष्यामि त्वमेव शरणं मम ॥ ३ ॥ इदं व्रतं मया देवि गृहीतं तव सन्निधौ ॥ निर्विघ्नतां समायातु त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ॥४॥ ब्रह्मप्रिये महाभागे सत्यव्रतपरायणे ॥ व्रतमेतत्करिष्यामि सौभाग्यमतुलं कुरु ॥५॥ अद्य स्थित्वा निराहारो (रा)जितक्रोधो (धा) जितेन्द्रियः (या) ॥ नवमे (दशमे)ऽहनि भोक्ष्यामि शरणं परमेश्वरि ॥६॥ इति नियमग्रहणं कृत्वा यथाविधि फलाहारादिकं कुर्यात् ॥

ततो नवम्यां नियमत्यागप्रकारः ॥ तत्रादौ अष्टम्यां वा नवम्यां दिवा रात्रौ वा स्वकुलाचारेण पूर्वोक्तप्रकारेण होमादिकं कुर्यात् ॥ ततो नवम्यां वा दशम्याम् उत्तरपूजनं कृत्वा ब्राह्मणसुवासिनीकुमारिकाबटु-

कभोजनसंकल्पं नियममुक्तिं च देवताग्रे कुर्यात् ॥ हस्ते जलमादाय-अद्यपूर्वो० तिथौ अनेन करिष्यमाणब्राह्मणसुवासिनीकुमारिकाबटुकभोजनेन अष्टशक्तिसहितश्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यात्मिका नवदुर्गा प्रीयतां नमम ॥ अथ नियममुक्तिमन्त्राः—उपोषणं ब्रह्मचर्यं भूशय्या च तथैव च । पूजनं दीपदानं च चण्डीपाठस्तथैव च ॥ १ ॥ होमं चैव यथाशक्ति चैतत्सर्वं मया कृतम् । तत्तु सम्पूर्णतां यातु तव तुष्ट्यै महेश्वरि ॥ २ ॥ चण्डीसंतोषणार्थाय ये मया नियमाः कृताः । अद्याहं देवि मोक्ष्यामि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ॥३॥ अनेनोपोषणादिकेनाष्टशक्तिसहितश्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यात्मिका नवदुर्गा प्रीयतां नमम ॥ ततो यथाशक्ति सं१न्यासिब्राह्मणसुवासिनीकुमारिकाबटुकान् भोजयित्वा सुहृद्युक्तः (क्ता) स्वयं भुंजीत ॥

अथ विसर्जनविधिः ॥ तत्रादौ निर्वाणमुद्रया कलशोपरितः पुष्पं गृहीत्वा तथैव मुद्रया तत्रैव स्थापयेत् ॥ पुष्पाञ्जलिमादाय पठेत् ॥ उत्तिष्ठ देवि चण्डेशि शुभां पूजां प्रगृह्य च । कुरुष्व मम कल्याणमष्टाभिः शक्तिभिः सह ॥ १ ॥ इति कलशमुत्थाप्य भूमौ जलं प्रवाहयन् पठेत् ॥ दुर्गे देवि जगन्मातः स्वस्थानं गच्छ पूजिता ॥ व्रज स्रोतोजलं वृद्ध्यै स्थीयतां हृदये मम ॥२॥ इमां पूजां मया देवि यथाशक्त्युपपादिताम् । रक्षार्थं त्वं समादाय व्रज स्वस्थानमुत्तमम् ॥ ३ ॥ इति विसर्जनं कृत्वा ॥ अद्यपूर्वोच्चारि० चण्डीप्रसादात् ब्राह्मणवचनाच्च यथाशक्तिमिलितोपचारैर्देशकालाद्यनुसारतश्चण्डीपूजनविधौ यन्न्यूनं यदति-

१ नवरात्रकाले संन्यासिनो मुख्यतया ॥ तदुक्तं शाक्तिसंगमतन्त्रे ॥

रिक्तं तत्सर्वं परिपूर्णमस्तु ॥ अस्तु परिपूर्णम् ॥ ततो नारिकेलं वधार्यं तदुदकेन यवाङ्कुरान् सम्प्रोक्ष्य सर्वेभ्यो नैवेद्यं दद्यात् ॥

॥ इति नवरात्रे घटस्थापनादिपूजाप्रयोगः ॥

॥ इति देवीयागात्मकस्तृतीयो विभागः ॥

॥ अथ चतुर्थो विभागः ॥

॥ यज्ञोपयुक्तविविधदेवता–गृहवास्तु–पूजनात्मकः ॥

॥ ५० ॥ अथ विष्णोस्त्रिंशोपचारपूजा ॥

ध्यानम्–सुरकदंबकैः मश्रयेण वै नियतसेवितं गोकुलोत्सवम् ॥ किरिटकुंडलं पीतजाम्बरं खलनिपूदनं चिन्तये विभुम् ॥ १ ॥ आवा०–खगपवाहनं क्षीरजाप्रियं भवभयाप[१] भुक्तिमुक्तिदम् ॥ सुरपतिं जगन्नाथमीश्वरं कमलभासमावाहयाम्यहम् ॥ २ ॥ आस०–विधिमुखामरैर्नम्रमूर्तिभिः प्रणतसंश्रितं दुर्धरादिमत् ॥ वरमणिप्रभाभासुरं नवं जनप गृह्यतां स्वर्णमासनम् ॥ ३ ॥ पाद्यम्–कुसुमवासितं गंधविस्तृतं मुनिनिषेवितं सादरेण वै ॥ ध्रुवपराशराभिप्रद प्रभो जनप गृह्यतां पाद्यमुत्तमम् ॥ ४ ॥ अर्घ्यम्–कनकसंपुटे स्थापितं वरं जलसुवर्णमुक्ताफलैर्युतम् ॥ करसरोरुहाभ्यां धृतं मया जनप गृह्यतामर्घ्यमुत्तमम् ॥५॥ आच०–तव रमायुजः सेवनाज्जना नृपतिसन्निभाः संभवन्ति हि ॥ सुरतरंगिणीशुद्धवारिभिर्जनप गृह्यतामाचमं शुभम् ॥ ६ ॥ पय०–सुरगवुद्भवं वीर्यवर्धकं निखिलदेहिनां जीवनप्रदम् ॥ शशधरप्रभं फेनसंयुतं जनप गृह्यतामर्पितं पयः ॥७॥ दधि०–शुचिपयःसमुद्भूतमुत्मदं व्रजनिवासिभिः स्वादितं शुभम् ॥ रजतस-

---

१ विष्णुयागे सविस्तरः प्रयोग- कर्तव्यश्चेदस्माकं हवनात्मको विष्णुयागप्रयोगो द्रष्टव्यः ।

न्निभं शीततामयं जनप गृह्यतामर्पितं दधि ॥८॥ घृतम्०—हुतवहाभिरं क्षीरजोद्भवं सकलदेहिनां सत्त्ववर्धकम् ॥ कुमुदसदृशं विष्णुदैवतं जनप गृह्यतामर्पितं घृतम्॥९॥ मधु०—मधुलतोद्भवं स्वादु मंजुलं मधुपमक्षिकाद्यैर्विनिर्मितम् ॥ मधुरतामयं गंधसंमदं मधुह तेऽर्पितं गृह्यतां मधु ॥१०॥शर्क०—मदनकार्मुकाद्याविनिर्मिता मधुरतान्विता सर्वपापहा ॥ सरसतां गता तारकोपमा जनप गृह्यतां शुद्धशर्करा ॥११॥ अभ्यं०—कदंबकेतकीपुष्पसंभवं मृगमदान्वितं यंत्रनिर्मितम् ॥ अनुपकारिणा भक्तितो मया जनप गृह्यतां तैलमर्पितम् ॥ १२ ॥ स्नानम्—हरिपदांबुजानर्मदामहीसरयुचंद्रभागाभ्य आहृतम् ॥ जलजवासितं स्नानहेतवे जनप गृह्यतामर्पितं जलम् ॥१३॥ वस्त्रम्—विविधतंतुभिर्गुंफितं नवं सुतपनीयभं सोत्तरीयकम् ॥ मधुरिपो जगन्नाथ माधव जनप गृह्यतां वस्त्रमर्पितम् ॥ १४ ॥ यज्ञो०-त्रिगुणितं सितैरर्कतंतुभिः कृतमिदं मया शुद्धचेतसा ॥ निगमसंमतं बंधमोचकं जनप गृह्यतामुपवीतकम् ॥१५॥ गंधः—मलयसंभवं पीतवर्णकं मृगमदादिभिर्वासितं वरम् ॥ मुदितषट्पदं कुंकुमान्वितं जनप गृह्यतां गंधमर्पितम् ॥ १६ ॥ अक्ष०—कमलसंभवा मौक्तिकोपमास्त्रिपथगोदकैः क्षालिताः शिवाः ॥ अगरुकुंकुमैर्मिश्रिता वरा जनप गृह्यतामर्पिताक्षताः ॥१७॥ पुष्पाणि—तरुणमल्लिकाकुंदमालतीवकुलपंकजानां समुच्चयैः ॥ सततमुत्रितं भक्तितो मया जनप गृह्यतां हारमर्पितम् ॥ १८ ॥ श्वेत०—कदंबकेतकीवृक्षसंभवं विविधसौख्यदं कांतिवर्धनम् ॥ सितकरोपमं स्नेहसत्कृतं जनप गृह्यतां श्वेतचूर्णकम् ॥१९॥ रक्त०—अमरजादिभिर्देवदंदकैः शिरसि वै धृतं मध्यमेन वा ॥ तपनसदृशं दृष्टिमुत्कलं जनप गृह्यतां रक्तचूर्णकम् ॥ २० ॥ सिंदू०—गणपतिप्रियं बालसूर्यभं पवनसूनुना स्वीकृतं सदा ॥ सुरभिवासितं

सूक्ष्मचूर्णकं जनप गृह्यतां नागसंभवम् ॥ २१ ॥ धूपः—अगरुगुग्गुला-ज्यादिमिश्रितं तपनयोगजोद्भूतसौरभम् ॥ अमरवृंदकैः स्नेहसत्कृतं जनप गृह्यतां धूपमुत्तमम् ॥ २२ ॥ दीपः—अनलतैलिनीगोघृतान्वितं तिमिरनाशकं दीप्ततंतुभिः ॥ कनकभाजने स्थापितं मया जनप गृह्यतां दीपमुत्तमम् ॥ २३ ॥ नैवे०—पनसदाडिमाम्रादिसत्फलं सुघृतमोदकापूपपायसम् ॥ रजतभाजने स्थापितं मया जनप गृह्यतां खाद्यमुत्तमम् ॥२४॥ आच०—जलधिगोद्भवं शीततमयं सकलप्राणिनां प्राणदायकम् ॥ विधिसमर्पितं शुद्धचेतसा जनप गृह्यतामाचमं शुभम् ॥ २५ ॥ ताम्बू०—खपुरसंभवं पूगचूर्णयुग् मृगमदेलुकावासितं वरम् ॥ फणिलतादलैः कॢप्तवीडकं जनप गृह्यतामास्यभूषणम् ॥२६॥ दक्षि०-निखिलयाचिनां श्रेष्ठभोगदा निगमसंमता कर्मपूर्णदा ॥ सकलभूजनैर्वांछिता सदा जनप गृह्यतां हेमदक्षिणा ॥ २७ ॥ नीरा०—हुतवहप्रियैर्मिश्रितं वरं जलधिजैर्युतं सर्वपापहम् ॥ मुखविलोकनार्थाय संस्कृतं जनप गृह्यतामार्तिकं शुभम् ॥२८॥ प्रद०—वरद सञ्चितं पूर्वजन्मभिर्दहति किल्बिषं त्वत्प्रदक्षिणा ॥ नरहरिं मुदा शुद्धचेतसा सततमीश्वरं त्वां नमाम्यहम् ॥२९॥ नम०—जय जय प्रभो सात्वतांपते शरणवत्सलाभिष्टसाधक ॥ यदुपते जगन्नाथ सर्वदा शरणमागतं पाहि पाहि माम् ॥ ३० ॥ इति विष्णोस्त्रिंशोपचारपूजा ॥

॥ ५१ ॥ अथ वर्धिनीकलशस्थापनम् ॥

अद्ये० अमुककर्माङ्गत्वेन वर्धिनीकलशदेवतास्थापनपूजनं करिष्ये ॥ अक्षतान् गृहीत्वा—वर्धिन्यै नमः वर्धिनीम् आ०स्था० ॥ब्रह्मणे० रुद्राय० विष्णवे० मातृभ्यो० सागरेभ्यो० मह्यै० नदीभ्यो० तीर्थेभ्यो० गायत्र्यै० ऋग्वेदाय० यजुर्वेदाय० सामवेदाय० अथर्ववेदाय० अग्नये० आदि-

स्येभ्यो० एकादशरुद्रेभ्यो० मरुद्भ्यो० गंधर्वेभ्यो० ऋषये० वरुणाय० वायवे० धनदाय० यमाय० धर्माय० शिवाय० यज्ञाय० विश्वेभ्यो देवेभ्यो० स्कन्दाय० गणेशाय० यक्षाय० अरुन्धत्यै० इत्यावाह्य प्रतिष्ठाप्य ॥ " वर्धिनीकलशदेवताभ्यो नमः " इति संपूजयेत् ॥

॥ इति वर्धिनीकलशस्थापनम् ॥

॥ ५२ ॥ अथ चतुःषष्टिपद्वास्तुमण्डलदेवतास्थापनम् ॥

सपत्नीको यजमानः मण्डपस्य नैर्ऋत्यकोणे कृतवास्तुपीठसमीपे पश्चिमाभिमुख उपविश्य आचम्य प्राणानायम्य सङ्कल्पं कुर्यात्—अद्य पूर्वोच्चरितशुभपुण्यतिथौ प्रारब्धस्य अमुकयागाख्यस्य कर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं चतुःषष्टिपदे वास्तुपीठे शिख्यादिवास्तुमण्डलदेवतावाहनप्रतिष्ठापूजनं करिष्ये॥ वास्तुपीठस्याग्नेयादिकोणेषु चतुरः शङ्कून् रोपयेत् विशन्तु भूतले नागा लोकपालाश्च सर्वतः । मण्डपेऽत्रावतिष्ठन्तु ह्यायुर्बलकराः सदा ॥ एवं चतुर्षु कोणेषु शङ्कुरोपणं कृत्वा द्विगुणीकृतसूत्रेण सर्वेषां वेष्टनं कुर्यात् ॥ आग्नेय्यादिरोपणक्रमेण शङ्कूनां पार्श्वे माषभक्तदध्योदनबलिदानम् अग्निकोणशङ्कुसमीपे बलिं संस्थाप्य—ॐ अग्निभ्योऽ

हयशीर्षपञ्चरात्रे—एकाशीतिपदं वास्तु गृहकर्मणि शस्यते । चतुःषष्टिपदं वास्तु प्रासादे देवभूभुजाम् ॥ सोमशम्भावपि—कुर्यात्कोष्ठचतुःषष्टि प्रासादे वास्तुकर्मणि । गृहेऽपि वर्तयद्वास्तु किं त्वेकाशीतिकोष्ठके ॥ महाकपिलपञ्चरात्रे—प्रासादार्थे चतुःषष्टिरेकाशीतिर्गृहे तथा ॥ राजवेश्म ग्रामे मूर्तिमन्दिरं च नगरं पूज्यश्चतुःषष्टिभिरेकाशीतिपदैः समस्तभवने जीर्णे नवाभ्युदये ॥ प्रासादे शतानि शेषु सकले पूज्यस्तथा मण्डपे कूपे पञ्चचन्द्रभागसहिते वाप्यां तडागे वने ॥ कपिलपञ्चरात्रे महाग्रहमखहोमेषु वास्तुपीठं त्ववश्यकम् । देव्यर्चने हस्तमात्रं पीठं योगिनीसम्भवम् ॥ गौतमीये—यत्र कुण्डं तत्र वास्तुपीठं कुर्यात्प्रयत्नतः । स्थण्डिले चाल्पहोमे तु वास्तुपीठं कृताकृतम् ॥

प्यथ सर्पेभ्यो ये चान्ये तान्समाश्रिताः। वलिं तेभ्यःप्रयच्छामि पुण्यमोद-नमुत्तमम् ॥ नैर्ऋत्यकोणशङ्कुसमीपे बलिं संस्थाप्य–ॐनैर्ऋत्याधिपति-श्चैव नैर्ऋत्यां ये च राक्षसाः। बलिं तेभ्यः प्रयच्छामि पुण्यमोदनमुत्त-मम् ॥ वायव्यकोणशङ्कुसमीपे बलिं संस्थाप्य–ॐनमो वै वायुरक्षोभ्यो ये चान्ये तान्समाश्रिताः। बलिं तेभ्यः प्रयच्छामि पुण्यमोदनमुत्तमम् ॥ ऐशानकोणशङ्कुसमीपे बलिं संस्थाप्य–ॐरुद्रेभ्यश्चैव सर्पेभ्यो ये चान्ये तान्समाश्रिताः। बलिं तेभ्यः प्रयच्छामि गृह्णन्तु सततोत्सुकाः ॥ शङ्कु-देवताभ्यो नमः बलिं समर्पयामि। "शङ्कुदेवताभ्यो नमः" इति नाम-मन्त्रेण पञ्चोपचारैः पूजयेत् ॥ अथ रेखाकरणं पूजनञ्च—वास्तुपीठे वस्त्रंप्रसार्य कनकशलाकया रत्नेन रजतफलपुष्पाणामन्यतमेन वा पश्चि-मारम्भाः प्रागन्ता उदक्संस्थाः समा द्व्यङ्गुलान्तरा नवरेखाः कुर्यात् ॥ यथा-ॐ लक्ष्म्यै नमः। यशोवत्यै० कान्तायै० सुप्रियायै० विमलायै० शिवायै० सुभगायै० सुमत्यै० इडायै०॥ ततः दक्षिणारम्भा उदगन्ताः प्राक्संस्था नवरेखाः कुर्यात्। यथा–धन्यायै० प्राणायै० विशालायै० स्थिरायै० भद्रायै० जयायै० निशायै० विरजायै० विभवायै नमः ॥ ॐमनोजूति० रेखादेवताःसुप्रतिष्ठिता वरदा भवत इति प्रतिष्ठाप्य "ॐरे-खादेवताभ्यो नमः" इति नाममन्त्रेण पञ्चोपचारैः पूजयेत् ॥

॥ ततो वास्तुमण्डलदेवतास्थापनप्रतिष्ठापूजनं कुर्यात् ॥

तत्र मध्यगं पदचतुष्टयमेकीकृत्य तत्कोणचतुष्टयाद्बहिः कोणचतुष्टये रेखाभिः पदान्युत्कृत्य शिख्यादिपञ्चचत्वारिंशद्देवताः स्थापयेत् ॥

अथ नाममन्त्रेणावाहनम्–॥१॥ ऐशानकोणदक्षिणार्धपदे–ॐशिखिने नमः शिखिनम् आवाहयामि स्थापयामि ॥ २ ॥ तद्दक्षिणे सार्धपदे–पर्जन्याय० ॥३॥ तद्दक्षिणपदद्वये–जयन्ताय०॥४॥ तद्दक्षिणपदद्वये–

कुलिशायुधाय० ॥५॥ तद्दक्षिणपदद्वये—सूर्याय० ॥६॥ तद्दक्षिणपदद्वये-सत्याय० ॥ ७ ॥ तद्दक्षिणे सार्धपदे—भृशाय० ॥ ८ ॥ तद्दक्षिणाग्नेयपदार्धे—आकाशाय० ॥ ९ ॥ तत्पश्चिमार्द्धे—वायवे० ॥ १० ॥ तत्पश्चिमे सार्द्धपदे—पूष्णे० ॥ ११ ॥ तत्पश्चिमपदद्वये दक्षिणपार्श्वे-वितथाय० ॥ १२ ॥ तत्पश्चिमपदद्वये दक्षिणपार्श्वे-गृहक्षताय० ॥ १३ ॥ तत्पश्चिमपदद्वये दक्षिणोरुभागे-यमाय० ॥ १४ ॥ तत्पश्चिमे पदद्वये-गन्धर्वाय० ॥ १५ ॥ तत्पश्चिमे सार्द्धपदे—भृङ्गराजाय० ॥ १६ ॥ पश्चिमे नैर्ऋत्यपदार्द्धे—मृगाय० ॥ १७ ॥ तदुत्तरार्द्धपदे—पितृभ्यो० ॥ १८ ॥ तदुत्तरे सार्द्धपदे—दौवारिकाय० ॥ १९ ॥ तदुत्तरपदद्वये-सुग्रीवाय० ॥ २० ॥ तदुत्तरपदद्वये-पुष्पदन्ताय० ॥ २१ ॥ तदुत्तरपदद्वये—वरुणाय० ॥ २२ ॥ तदुत्तरपदद्वये-असुराय० ॥ २३ ॥ तदुत्तरे सार्द्धपदे—शोषाय० ॥ २४ ॥ तदुत्तरे वायव्यपदार्द्धे-पापाय० ॥ २५ ॥ तत्प्राक्पदार्द्धे—रोगाय० ॥ २६ ॥ तत्प्राक्सार्द्धपदे—अहये० ॥ २७ ॥ तत्प्राक्पदद्वये-मुख्याय० ॥ २८ ॥ तत्प्राक्पदद्वये—भल्लाटाय० ॥ २९ ॥ तत्प्राक्पदद्वये—सोमाय० ॥ ३० ॥ तत्प्राक्पदद्वये—सर्पाय० ॥३१॥तत्प्राक्सार्द्धपदे—अदित्यै०॥३२॥ तत्प्रागर्द्धपदे—दित्यै०॥३३॥ मध्यपदेषु ईशानपदोत्तरार्द्धे—आपाय०॥३४॥ आग्नेयपदोत्तरार्धे—सावित्राय० ॥३५॥ नैर्ऋत्यपदोत्तरार्धे-जयाय० ॥३६॥ वायव्यपदोत्तरार्धे-रुद्राय० ॥३७॥ मध्ये प्राक्पदद्वये—अर्यम्णे०॥३८॥ आग्नेयपदपूर्वार्द्धे-सवित्रे० ॥३९॥ तत्पश्चिमपदद्वये-विवस्वते० ॥४०॥ नैर्ऋत्यपदपूर्वार्द्धे-विबुधाधिपाय० ॥४१॥ तदुत्तरपदद्वये-मित्राय०॥४२॥तदुत्तरे वायव्यपदपश्चिमार्द्धे—राजयक्ष्मणे०॥४३॥तत्प्राक्पदद्वये—पृथ्वीधराय० ॥४४॥ ईशानपददक्षिणार्द्धे—आपवत्साय०।४५।ततो मध्यपदचतुष्टये—ब्रह्मणे०

-॥ ४६ ॥ ततो मण्डलाद्बहिः ईशान्यां-चरक्यै० ॥ ४७ ॥ आग्नेय्यां विदार्यै० ॥४८॥ नैर्ऋत्यां-पूतनायै०॥४९॥ वायव्यां-पापराक्षस्यै०॥ ॥ ५० ॥ ततो मण्डलाद्बहिः पूर्वे-स्कन्दाय० ॥५१॥ दक्षिणे-अर्यम्णे० ॥५२॥ पश्चिमे-जृम्भकाय०॥५३॥ उत्तरे-पिलिपिच्छाय०॥ ततः॥५४॥ पूर्वे-इन्द्राय०॥५५॥ आग्नेय्याम्-अग्नये०॥५६॥ दक्षिणस्यां-यमाय० ॥ ५७ ॥ नैर्ऋत्यां-निर्ऋतये० ॥ ५८ ॥ पश्चिमे-वरुणाय० ॥ ५९ ॥ वायव्यां-वायवे० ॥ ६० ॥ उत्तरे-कुबेराय० ॥ ६१ ॥ ईशान्याम्-ईश्वराय०॥६२॥पूर्वेशानयोर्मध्ये-ब्रह्मणे०॥६३॥ निर्ऋतिपश्चिमयोर्मध्ये अनन्ताय नमः अनन्तम् आवाहयामि स्थापयामि ॥ एवं प्रतिष्ठाप्य 'शिख्यादिवास्तुमण्डलदेवताभ्यो नमः" इति मंत्रेण पूजनं कुर्यात् ॥

॥ इति चतुःषष्टिपदवास्तुमण्डलदेवतास्थापनम् ॥

॥५३॥ अथरुद्रकल्पद्रुमानुसारिमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वती-पूर्वकं स्कन्दकाशीखण्डोक्तचतुःषष्टियोगिनीस्थापनम् ॥

पीठे रक्तवस्त्रमाच्छाद्य तदुपरि पूर्वभागे श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीकलशत्रयस्थापनार्थं त्रीणि त्र्यस्राणि द्रव्यष्टगंधेन सुवर्णशलाकया रञ्जितास्तैर्वा विलिखेत्तेषामधोभागे अष्टौ त्र्यस्राणि इति एका पङ्क्तिः एवमष्टौ त्र्यस्रपङ्क्तीः कृत्वा तेषु त्र्यस्रेषु वक्ष्यमाणदेवता आवाह्यपूजयेत् ॥ हस्ते जलमादाय-अद्यपूर्वोच्चरितशुभपुण्यतिथौ०मारीप्सितामुककर्माङ्गत्वेन श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीपूर्वकगजाननादिमृगलोचनान्तचतुःषष्टियोगिनीदेवतावाहनप्रतिष्ठापूजनं करिष्ये ॥

प्रथमकलशपूर्णपात्रोपरि ॥ १ ॥ ॐ भूर्भुवस्वः महाकाल्यै नमः महाकालीमावाहयामि स्थापयामि ॥ महाकालि इहागच्छ इह तिष्ठ

(एवं सर्वत्र) ॥ तदुत्तरतः द्वितीयकलशपूर्णपात्रोपरि ॥२॥ ॐ भू० महालक्ष्म्यै० ॥ तदुत्तरतस्तृतीयकलशपूर्णपात्रोपरि ॥३॥ ॐ भू० महासरस्वत्यै० ॥ (प्रथमपङ्क्तौ अष्टत्र्यस्रेषु–) ॥ १ ॥ गजाननायै०॥ २ ॥ सिंहमुख्यै० ॥ ३ ॥ गृध्रास्यायै० ॥ ४ ॥ काकतुण्डिकायै० ॥ ५ ॥ उष्ट्रग्रीवायै० ॥ ६ ॥ हयग्रीवायै० ॥ ७ ॥ वाराह्यै० ॥ ८ ॥ शरभाननायै० ॥ (द्वितीयपङ्क्तौ अष्टत्र्यस्रेषु–)॥ ९ ॥ उलूकिकायै०॥१०॥ शिवारावायै० ॥ ११ ॥ मयूर्यै० ॥ १२ ॥ विकटाननायै० ॥ १३ ॥ अष्टवक्रायै० ॥ १४ ॥ कोटराक्ष्यै० ॥ १५ ॥ कुब्जायै० ॥ १६ ॥ विकटलोचनायै० ॥ (तृतीयपङ्क्तौ अष्टत्र्यस्रेषु–) ॥१७॥ शुष्कोदर्यै० ॥ १८ ॥ ललज्जिह्वायै० ॥ १९ ॥ श्वदंष्ट्रायै० ॥ २० ॥ वानराननायै० ॥ २१ ॥ ऋक्षाक्ष्यै० ॥ २२ ॥ केकराक्ष्यै० ॥ २३ ॥ बृहत्तुण्डायै० ॥२४॥ सुराप्रियायै० ॥ (चतुर्थपङ्क्तौ अष्टत्र्यस्रेषु–)॥२५॥ कपालहस्तायै० ॥ २६ ॥ रक्ताक्ष्यै० ॥ २७ ॥ शुक्यै० ॥ २८ ॥ श्येन्यै० ॥ २९ ॥ कपोतिकायै० ॥ ३० ॥ पाशहस्तायै० ॥३१॥ दण्डहस्तायै० ॥ ३२ ॥ प्रचण्डायै० ॥ (पञ्चमपङ्क्तौ अष्टत्र्यस्रेषु–) ॥ ३३ ॥ चण्डविक्रमायै० ॥ ३४ ॥ शिशुघ्न्यै० ॥ ३५ ॥ पापहन्त्र्यै० ॥ ३६ ॥ काल्यै० ॥ ३७ ॥ रुधिरपायिन्यै० ॥ ३८ ॥ वसाधयायै० ॥३९॥ गर्भभक्षायै०॥४०॥ शवहस्तायै०॥ (षष्ठपङ्क्तौ अष्टत्र्यस्रेषु–) ॥४१॥ आन्त्रमालिन्यै० ॥ ४२ ॥ स्थूलकेश्यै० ॥ ४३ ॥ बृहत्कुक्ष्यै० ॥४४॥ सर्पास्यायै० ॥४५॥ प्रेतवाहनायै० ॥४६॥ दन्दशूककरायै० ॥ ४७ ॥ क्रौञ्च्यै० ॥४८॥ मृगशीर्षायै०॥ (सप्तमपङ्क्तौ अष्टत्र्यस्रेषु–) ॥४९॥ वृषाननायै० ॥ ५० ॥ व्यात्तास्यायै० ॥ ५१ ॥ धूमनिःश्वासायै० ॥ ५२ ॥ व्योमैकचरणोर्ध्वदृशे० ॥ ५३ ॥ तापिन्यै० ॥ ५४ ॥

शोपणीदृष्ट्यै० ॥५५॥ कोटर्यै० ॥५६॥ स्थूलनासिकायै०॥ (अष्टमपङ्क्तौ अष्टत्पसेषु-) ॥ ५७॥ विद्युत्प्रभायै० ॥ ५८॥ बलाकास्यायै० ॥ ५९ ॥ मार्जार्यै० ॥ ६० ॥ कटपूतनायै० ॥ ६१ ॥ अट्टाट्टहासायै० ॥ ६२ ॥ कामाक्ष्यै० ॥ ६३ ॥ मृगाक्ष्यै० ॥ ६४ ॥ मृगलोचनायै०॥ इति प्रतिष्ठाप्य "श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीसहितगजाननादिचतुःषष्टियोगिनीभ्यो नमः" इति गन्धादिना संपूजयेत् ॥

॥ इति चतुःषष्टियोगिनीस्थापनम् ॥

॥ ५४ ॥ अथ एकपञ्चाशत्क्षेत्रपालस्थापनम् ॥

वायव्यकोणे हस्तमात्रविस्तृते द्वादशाङ्गुलोच्छ्राये क्षेत्रपालपीठे श्वेतवस्त्रं प्रसार्य तत्र चतुरस्रं विलिख्य तिर्यङ्प्राच्यां च सूत्रद्वन्द्वं समान्तरालं दद्यात् । एवं समा नवकोष्ठा भवन्ति । मध्यकोष्ठे अष्टदलं पद्मं कुर्यात् ॥ पूर्वदिकोष्ठे आग्नेयदिकोष्ठे दक्षिणदिकोष्ठे नैर्ऋत्यदिकोष्ठे पश्चिमदिकोष्ठे वायव्यदिकोष्ठे उत्तरादिकोष्ठे ईशानदिकोष्ठे च षड्दलानि कुर्यात् ॥ एवं क्षेत्रपालपीठं निर्माय ॥ हस्ते जलमादाय-अद्यपूर्वोच्चरितशुभपुण्यतिथौ० ॥ मारीप्सितामुककर्माङ्गत्वेन एकपञ्चाशत्क्षेत्रपालदेवतावाहनप्रतिष्ठापूजनं करिष्ये ॥

मध्ये स्थापितकलशोपरि पूर्णपात्रे ॥१॥ ॐ भूर्भुवः स्वः क्षेत्रपालाय नमः क्षेत्रपालमावाहयामि स्थापयामि ॥ भो क्षेत्रपाल इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ (एवं सर्वत्र) ॥ पूर्वदिकोष्ठे षड्दले-॥२॥ अजराय० ॥३॥ व्यापकाय०॥४॥ इन्द्रचौराय० ॥५॥ इन्द्रमूर्तये० ॥६॥ उक्षाय० ॥७॥ कूष्माण्डाय०॥ आग्नेयदिकोष्ठे षड्दले-॥८॥वरुणाय० ॥९॥ वटुकाय० ॥१०॥ विमुक्ताय० ॥११॥ लिप्तकायाय०॥१२॥ लीलाकाय०॥१३॥

एकदंष्ट्राय०॥ दक्षिणदिक्कोष्ठे पद्मदले-॥१४॥ ऐरावताय०॥१५॥ ओष-धिघ्नाय०॥१६॥ वन्यनाय० ॥१७॥ दिव्यकाय०॥१८॥ कम्बलाय० ॥१९॥ भीषणाय०॥ नैर्ऋत्यदिक्कोष्ठे पद्मदले-॥२०॥ गवयाय०॥२१॥ घण्टाय०॥२२॥ व्यालाय ॥२३॥ अणवे०॥२४॥ चन्द्रवारुणाय० ॥२५॥ पटाटोपाय०॥ पश्चिमदिक्कोष्ठे पद्मदले-॥२६॥ जटालाय०॥२७॥ क्रतवे०॥२८॥ घण्टेश्वराय०॥२९॥ विटङ्काय० ॥३०॥ मणिमानाय० ॥३१॥ गणबन्धवे०॥ वायव्यदिक्कोष्ठे पद्मदले-॥३२॥ डामराय०॥३३॥ ढुण्ढिकर्णाय०॥३४॥ स्थविराय०॥३५॥ दन्तुराय०॥३६॥ धनदाय० ॥३७॥ नागकर्णाय०॥उत्तरदिक्कोष्ठे पद्मदले-॥३८॥महाबलाय०॥३९॥ फेत्काराय० ॥४०॥ चीकराय० ॥४१॥ सिंहाय० ॥४२॥ मृगाय० ॥ उत्तरदिक्कोष्ठपद्मदलस्यान्तिमदलार्धे-॥४३॥यक्षाय०॥उत्तरादिक्कोष्ठपद्म-दलस्यान्तिमदलार्धे यक्षादुत्तरतः-॥४४॥ मेघवाहनाय०॥ ईशानदिक्कोष्ठे पद्मदले-॥४५॥ तीक्ष्णोष्ठाय०॥४६॥ अनलाय०॥४७॥ शुक्लतुण्डाय० ॥४८॥ सुधालापाय० ॥४९॥ बर्बरकाय०॥ ईशानदिक्कोष्ठपद्मदलस्या-न्तिमदलार्धे-॥५०॥ पवनाय०॥ ईशानदिक्कोष्ठपद्मदलस्यान्तिमदलार्धे पवनादुत्तरतः-॥५१॥ पावनाय०॥ ततः "क्षेत्रपालदेवताभ्यो नमः" इति संपूजयेत् ॥

॥ इति एकपञ्चाशत्क्षेत्रपालस्थापनम् ॥

॥ ५५ ॥ अथ सर्वतोभद्रमंडलदेवतास्थापनम् ॥

आचम्य प्राणानायम्य हस्ते जलमादाय अद्येत्यादिपूर्वोच्चरितशुभ-पुण्यतिथौ० श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं अमुककर्माङ्गत्वेन सर्वतोभद्रमण्डलदेवतावाहन-प्रतिष्ठापूजनं करिष्ये ॥ ॐ ब्रह्म जज्ञानं०॥(एह्येहि सर्वाधिपते सुरेन्द्र मन्त्री-

ययज्ञे पितृदेवताभिः । सर्वस्य धाताऽस्यमितप्रभात्र विश्व त्वमन्तः सततं शिवाय) मध्ये कर्णिकायाम्–ॐभूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्माण-मावाहयामि स्थापयामि भो ब्रह्मन् इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ १ ॥ ॐवयꣳ सोम०॥ (एह्येहि यज्ञेश्वर यज्ञरक्षां विधत्स्व नक्षत्रगणेन सार्धम् । सर्वौप-धीपितृगणेन सार्धं गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥) उत्तरे परिधिसमीपे वाप्याम्–ॐभू०सोमाय०सोमम् आ०स्था०॥२॥ॐतमीशानं०॥(एह्येहि विश्वेश्वर विश्वनाथ कपालखट्वांगधरेण सार्द्धम्।लोकेश यज्ञेश्वर यज्ञसि-द्ध्यै गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥) ऐशान्यां खण्डेन्दौ–ॐ भू० ईशानाय० ईशानम् आ० स्था० ॥ ३ ॥ ॐत्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रꣳ हवेहवेसुहवꣳ शूरमिन्द्रम् ॥ ह्वयामिशक्रम्पुरुहूतमिन्द्रꣳस्वस्तिनोमघवा-धात्विन्द्रः ॥(एह्येहि सर्वामरसिद्धसाध्यैरभिष्टुतो वज्रधरामरेश । संवी-ज्यमानोऽप्सरसां गणेन रक्षाध्वरन्नो भगवन्नमस्ते ॥) पूर्वे परिधिसमीपे वाप्याम्–ॐभू० इन्द्राय० इन्द्रम् आ० स्था० ॥४॥ ॐत्वन्नोऽअग्ने-तवदेवपायुभिर्म्मघोनोरक्षतन्वश्च वन्द्य ॥ त्रातातोकस्यतनयेगवामस्यनि-मेषꣳरक्षमाणस्तवव्रते॥(एह्येहि सर्वामरहव्यवाह मुनिप्रवर्यैरभितोऽ भिजुष्टः । तेजोवता लोकगणेन सार्द्धं ममाध्वरं रक्ष नमोऽस्तु तेऽग्ने)॥ आग्नेय्यां खण्डेन्दौ–ॐभू० आग्नेये०अग्निम् आ०स्था०॥५॥ ॐयमा-यत्वाङ्गिरस्वतेपितृमतेस्वाहा॥ स्वाहाघर्म्मायस्वाहाघर्म्मःपित्रे ॥ ॥ (एह्येहि वैवस्वतधर्मराज सर्वामरैरार्चितधर्ममूर्ते।शुभाशुभानंद शुचामधीश शिवाय नः पाहि मखं नमस्ते) दक्षिणे प०स० वाप्याम्–ॐभू०यमाय० यमम् आ०स्था०॥६॥ ॐअसुन्वन्तमयजमानमिच्छस्तेनस्येत्यामन्विं-हितस्करस्य।अन्यमस्मदिच्छसातऽइत्यानमोदेविनिर्ऋतेतुभ्यमस्तु (एह्येहि रक्षोगणनायक त्वं विशालवैतालपिशाचसंघैः। ममाध्वरं पाहि

पिशाचनाथ लोकेश्वर त्वं प्रणमामि नित्यम्)॥ नैर्ऋत्यां खण्डेन्दौ-ॐ भू० निर्ऋतये० निर्ऋतिम् आ० स्था० ॥७॥ ॐ तत्त्वायामिब्रह्मणा० ॥ (एह्येहि यज्ञे मम रक्षणाय यादोगणैः सार्धमपामधीश ॥ झषाधिरूढ त्वमिह प्रभो मणिरत्नप्रभाभास्वर पाशपाणे)पश्चिमे प०स०वाप्याम् ॐ भू० वरुणाय० वरुणम् आ० स्था०॥८॥ ॐ आनोनियुद्भिः शतिनीभिरध्वरꣳसहस्रिणीभिरुपयाहि यज्ञम् ॥ वायोऽअस्मिन्त्सवनेमादयस्वयूयम्पातस्वस्तिभिः सदानः॥ ५६॥ (एह्येहि वायो मम रक्षणाय मृगाधिरूढः सह सिद्धसंघैः प्राणाधिपो हव्यभुजः सहाय गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥) वायव्यां खण्डेन्दौ-ॐ भू० वायवे० वायुम् आ० स्था०॥ ९ ॥ ॐ सुगावोदेवाः सदनाऽअकर्म्मयऽआजग्मेदꣳसवनञ्जुषाणाः॥ भरमाणावहमानाहवीꣳष्यस्मेधत्तवसवोवसूनिस्वाहा॥ ५७॥(एह्येहि वसवीश महानिधीश रत्नाकरः सर्वसहस्रतेजाः । घनस्वरूपो मम याहि यज्ञं गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते॥) वायुसोममध्ये भद्रे-ॐ भू० अष्टवसुभ्यो० अष्टवसून् आ० स्था०॥१०॥ ॐरुद्राः सꣳसृज्यपृथिवीम्बृहज्ज्योतिः समीधिरे ॥ तेषाम्भानुरजस्रऽइच्छुक्रोदेवेषुरोचते॥ ५८॥(एह्येहि यज्ञेश्वर नस्त्रिशूलकपालखट्वांगधरेण सार्द्धम् । लोकेश विश्वेश्वर यज्ञसिद्ध्यै गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते॥) सोमेशानयोर्मध्ये भद्रे-ॐ भू० एकादशरुद्रेभ्यो० एकादशरुद्रान् आ० स्था०॥११॥ ॐ यज्ञोदेवानाम्प्रत्येतिसुम्नमादित्यासोभवतामृडयन्तः॥ आवोर्वाची सुमतिर्ववृत्यादꣳहोश्चिद्या वरिवोवित्तरासदादित्येभ्यस्त्वा ॥ ५९॥ (एह्येहि पद्मासन पद्मपाणे सुरक्तसिंदूरसमानवर्ण । सहस्रभास्करभूर्य शीघ्रं गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते॥) ईशानपूर्वयोर्मध्ये भद्रे-ॐ भू० द्वादशादित्येभ्यो० द्वादशादित्यान् आ० स्था०॥१२॥ ॐ यावाङ्कशामधुमत्यश्विनासूनृतावती ॥ तयायज्ञम्मिमिक्षतम् ॥ उपयामगृ-

हीतोस्यश्विभ्यान्त्वैषतेयोनिर्माद्ध्वीभ्यान्त्वा॥ ३५/८ ॥ (द्विभुजौ देवभिषजौ समायातं सुमङ्गलौ ॥ लोककल्याणकर्तारौ पातं यज्ञं ममाश्विनौ ॥) इन्द्राग्न्योर्मध्ये भद्रे–ॐ भू० अश्विभ्यां० अश्विनौ आ० स्था० ॥१३॥ ॐ ओमासश्चर्षणीधृतोविश्वेदेवासऽआगत ॥ दाश्वाᳬसोदाशुषः सुतम् ॥ उपयामगृहीतोसिविश्वेभ्यस्त्वादेवेभ्यऽएषतेयोनिर्विश्वेभ्यस्त्वादेवेभ्यः॥ ३३/४७ ॥ (विश्वेदेवानाह्वयामि देवेभ्यो वरदायकान् ॥ आयान्तु मम यज्ञेऽस्मिन् विश्वेदेवास्त्रयोदश ॥) अग्नियमयोर्मध्ये भद्रे–ॐ भू० विश्वेभ्यो देवेभ्यो० विश्वान्देवान् आ० स्था०॥१४॥ ॐ अभित्यन्देवᳬसवितारमोण्योः कविक्क्रतुमर्च्चामिसत्यसवᳬरत्नधामभिप्रियम्मतिङ्कविम् ॥ ऊर्द्ध्वायस्यामतिर्भाऽअदिद्युतत्सवीमनिहिरण्यपाणिरमिमीतसुक्रतुः कृपास्वः ॥ प्रजाभ्यस्त्वाप्रजास्त्वानुप्राणन्तुप्रजास्त्वमनुप्राणिहि॥ ४/२५ ॥(एह्येहि यक्षोगणनायक त्वं विशालवेतालपिशाचसंघैः । ममाध्वरं पाहि शिवाधिनाथ लोकेश्वरस्त्वं भगवन्नमस्ते) यमनिर्ऋतिमध्ये भद्रे–ॐभू०सप्तयक्षेभ्यो० सप्तयक्षान् आ० स्था० ॥१५॥ ॐ भूतायत्वानारातयेस्वरभिविख्येषन्दृᳬहन्तान्दुर्य्याः पृथिव्यामुर्व्वन्तरिक्षमन्वेमिपृथिव्यास्त्वानाभौसादयाम्यदित्याऽउपस्थेग्नेहव्यᳬरक्ष ॥ १/११ ॥ (एतेत सर्पाः शिवकण्ठभूषा लोकोपकाराय भुवं वहन्तः । जिह्वाद्वयोपेतमुखा मदीयां गृह्णीत पूजां सुखदा नमो वः ॥) निर्ऋतिवरुणयोर्मध्ये भद्रे–ॐ भू० भूतनागेभ्यो०भूतनागान् आ० स्था० ॥१६॥ ॐ ऋताषाडृतधामाग्निर्गन्धर्वस्तस्यौषधयोप्सरसोमुदोनाम॥सनऽइदम्ब्रह्मक्षत्रम्पातुतस्मैस्वाहावाट्ताभ्यःस्वाहा॥ १८/३८ ॥(आवाहयेऽहं सुरदेवसेव्याःस्वरूपतेजोमुखपद्मभासः।सर्वामरेशैः परिपूर्णकामाः पूजां गृहीतुं मम यज्ञभूमौ ॥) वरुणवाय्वोर्मध्ये भद्रे–ॐभू०

गन्धर्वाप्सरोभ्यो०गन्धर्वाप्सरसः आ०स्था०॥१७॥ॐयदक्रन्दः प्रथमं जायमानऽउद्यन्त्समुद्रादुतवापुरीषात्॥श्येनस्यपक्षाहरिणस्यबाहूऽउपस्तुत्त्यम्महिजातन्तेऽअर्वन्॥(एह्येहि देवेश्वर शंभुसूनो शिखीन्द्रगामिन्सुरसिद्धसंघैः। संस्तूयमानात्मशुभाय नित्यं गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते॥ ब्रह्मसोमयोर्मध्ये वाप्याम्-ॐभू०स्कन्दाय०स्कन्दम् आ०स्था०॥१८॥ ॐ आशुः शिशानो०॥ (एह्येहि देवेन्द्रपिनाकपाणेः खण्डेन्दुमौलेः प्रिय शुभ्रवर्ण। गौरीशयानेश्वर यज्ञसिद्ध्यै गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते॥) तत्रैव स्कन्दादुत्तरे-ॐ भू० नन्दिने० नन्दिनम् आ० स्था० ॥१९॥ ॐ उग्रश्च्लोहितेन०॥ (आयातमायातमुमाप्रियस्य प्रियौ मुनींद्रादिकसिद्धसेव्यौ। गृहीतमेतां मम शूलकालौ पूजां सुखौघं कुरुतं नमो वाम्॥) तत्रैव नन्द्युत्तरे-ॐ भू० शूलमहाकालाभ्यां० शूलमहाकालौ आ० स्था० ॥ २० ॥ ॐ अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्म्माता स पिता स पुत्रः ॥ विश्वेदेवाऽअदितिः पञ्चजनाऽअदितिर्ज्जातमदितिर्ज्जनित्त्वम् ॥॥ (एह्येहि देवालय विश्वमूर्ते चतुर्मुख श्रीधर शंभुमान्य॥ सुपुस्तकाक्षस्रुवपात्रपाणे गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥) ब्रह्मेशानयोर्मध्ये वल्ल्याम्-ॐ० भू० दक्षादिसप्तगणेभ्यो० दक्षादिसप्तगणान् आ० स्था० ॥ २१ ॥ ॐ अम्बेऽअम्बिकेम्बालिके० ॥ (एह्येहि दुर्गे दुरितौघनाशिनि प्रचंडदैत्यौघविनाशकारिणि । उमे महेशार्द्धशरीरधारिणि स्थिरा भव त्वं मम यज्ञकर्मणि ॥) ब्रह्मेन्द्रयोर्मध्ये वाप्याम्-ॐ भू० दुर्गायै० दुर्गाम् आ० स्था० ॥ २२ ॥ ॐ इदंविष्णुर्विचक्रमे०॥ (एह्येहि नीलाम्बुदमेचक त्वं श्रीवत्सवक्षः कमलाधिनाथ । सर्वामरैः पूजितपादपद्म गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते॥) तत्रैव दुर्गापूर्वे-ॐ भू०विष्णवे० विष्णुम् आ० स्था० ॥२३॥ ॐपितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधानमः

पितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधानमः प्रपितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः ॥ अक्षन्नपितरोऽमीमदन्तपितरोऽतीतृपन्तपितरः पितरः शुन्धध्वम्॥३६॥ (सुखाय पितॄन् कुलवृद्धिकर्तॄन् रक्तोत्पलाभानिह रक्तनेत्रान् । सुरक्तमाल्याम्बरभूषितांश्च नमामि पीठे कुलवृद्धिहेतोः ॥) ब्रह्माग्न्योर्मध्ये वल्ल्याम्–ॐ भू० स्वधायै० स्वधाम्० आ० स्था०॥२४॥ ॐ परम्मृत्यो अनुपरेहिपन्थाँय्यस्तेऽअन्यऽइतरोदेवयानात् ॥ चक्षुष्मतेशृण्वतेतेब्रवीमिमानः प्रजाᳪंरीरिषोमोतवीरान्॥३७॥(आवाहयाम्यहं रोगमनेकविधलक्षणम्। नानालंकारसंयुक्तं रक्तश्मश्रुविलोचनम्॥) ब्रह्मयमयोर्मध्ये वाप्याम्–ॐ भू० मृत्युरोगाभ्यां० मृत्युरोगौ आ० स्था० ॥ २५ ॥ ॐ गणानांत्वा० ॥ (एह्येहि विघ्नाधिपते सुरेन्द्र ब्रह्मादिदेवैरभिवंद्यपाद । गजास्य विद्यालय विश्वमूर्ते गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥) ब्रह्मनिर्ऋत्योर्मध्ये वल्ल्याम्–ॐ भू०गणपतये० गणपतिम् आ० स्था० ॥ २६ ॥ ॐ शन्नोदेवीरभिष्टयऽआपो० ॥ (एह्येहि लोकेश्वर पाशपाणे यादोगणैर्वंदितपादपद्म । पीठेऽत्र देवेश गृहाण पूजां पाहि त्वमस्मान् भगवन्नमस्ते ॥) ब्रह्मवरुणयोर्मध्ये वाप्याम्-ॐ भू० अद्भ्यो० अपः आ० स्था० ॥ २७ ॥ ॐ मरुतोयस्यहिक्षयेपाथादिवोविमहसः॥ ससुगोपातमोजनः॥३८॥ (एह्येहि यज्ञेश समीरण त्वं मृगाधिरूढ सहसिद्धसंघैः । प्राणस्वरूपिन् सुखतासहाय गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥) ब्रह्मवाय्वोर्मध्ये वल्ल्याम्–ॐ भू० मरुद्भ्यो० मरुतः आ० स्था० ॥ २८ ॥ ॐ स्योनापृथिवि० ॥ (एह्येहि पातालचराचरेन्द्रनागांगनाकिन्नरगीयमाने। यक्षैर्नगेंद्रामरलोकसंघैः पृथ्वि भरक्षाध्वरमस्मदीयम् ॥) ब्रह्मणः पादमूले कर्णिकायाम्–पृथिव्यै० पृथिवीम् आ० स्था० ॥ २९ ॥ ॐ पञ्चनद्यः सरस्वती० ॥ (एह्येहि गंगे दुरितौघनाशिनि

झषाधिरूढे शुदकुंभहस्ते । श्रीविष्णुपादाम्बुजसंभवे त्वं गृहाण पूजां शुभदे नमस्ते ॥ तत्रैव पृथिव्या उत्तरतः—ॐ भू० गङ्गादिनदीभ्यो० गङ्गादिनदीः आ० स्था० ॥२०॥ ॐ इमम्मेवरुण० ॥ (एह्येहि यादोगणवारिधीनां गणेन पर्जन्यसहाप्सरोभिः। विद्याधरेंद्रामरगीयमान पाहि त्वमस्मान्भगवन्नमस्ते ॥) तत्रैव गङ्गाद्युत्तरे–ॐ भू० सप्तसागरेभ्यो० सप्तसागरान आ० स्था० ॥ २१ ॥ (एह्येहि कार्तस्वररूप सर्वभूभृत्पते चंद्ररवी दधान । सर्वौषधिस्थान महेन्द्रमित्र लोकत्रयावास नमोऽस्तु तुभ्यम् ॥ ग्रहाणः मस्तके कर्णिकोपरि—ॐ भू० मेरवे० मेरुम् आ० स्था० ॥ २२ ॥ मण्डलबाह्ये श्वेतपरिधौ उत्तरादिक्रमेण गदाद्यष्टायुधदेवतावाहनम् ॥ उत्तरे सोमसमीपे—ॐ भूर्भुवः स्वः गदायै नम गदामावाहयामि स्थापयामि । भो गदे इहागच्छ इह तिष्ठ ॥२३॥ ऐशान्याम् ईशानसमीपे–ॐ भू० त्रिशूलाय नमः त्रिशूलम् आ० स्था० ॥ २४ ॥ पूर्वे इन्द्रसमीपे– भू० वज्राय नमः वज्रम् आ० स्था० ॥ २५ ॥ आग्नेय्याम् अग्निसमीपे–ॐ भू० शक्तये नमः शक्तिम् आ० स्था० ॥ २६ ॥ दक्षिणे यमसमीपे–ॐ भू० दण्डाय नमः दण्डम् आ० स्था० ॥ २७ ॥ नैर्ऋत्यां निर्ऋतिसमीपे–ॐ भू० खड्गाय नमः खड्गम् आ० स्था० ॥ २८ ॥ पश्चिमे वरुणसमीपे–ॐ भू० पाशाय नमः पाशम् आ० स्था० ॥ २९ ॥ वायव्यां वायुसमीपे–ॐ भू० अङ्कुशाय नमः अङ्कुशम् आ० स्था० ॥ ३० ॥ मण्डलबाह्ये रक्तपरिधौ उत्तरादिक्रमेण गौतमाद्यष्टर्ष्यावाहनम् ॥ उत्तरे–ॐ भू० गौतमाय नमः गौतमम् आ० स्था० ॥ ३१ ॥ ऐशान्याम्–ॐ भू० भरद्वाजाय नमः भरद्वाजम् आ० स्था० ॥ ३२ ॥ पूर्वे–ॐ भू० विश्वामित्राय नमः विश्वामित्रम् आ० स्था ॥ ३३ ॥ आग्नेय्याम्–ॐ भू० कश्यपाय नमः

कश्यपम् आ० स्था० ॥ ४४ ॥ दक्षिणे—ॐ भू० जमदग्नये नमः जगदग्निम् आ० स्था० ॥ ४५ ॥ नैर्ऋत्याम्—ॐ भू० वसिष्ठाय नमः वसिष्ठम् आ० स्था० ॥ ४६ ॥ पश्चिमे—ॐ भू० अत्रये नमः अत्रिम् आ० स्था० ॥४७॥ वायव्याम्—ॐ भू० अरुन्धत्यै नमः अरुन्धतीम् आ० स्था० ॥४८॥ मण्डलबाह्ये कृष्णपरिधौ पूर्वादिक्रमेण ऐन्द्याद्यष्टदेवतावाहनम् ॥ पूर्वे—ॐ भू० ऐन्द्र्यै नमः ऐन्द्रीम् आ० स्था० ॥४९॥ आग्नेय्याम्—ॐ भू० कौमार्यै नमः कौमारीम् आ० स्था० ॥ ५० ॥ दक्षिणे—ॐ भू० ब्राह्म्यै नमः ब्राह्मीम् आ० स्था० ॥५१॥ नैर्ऋत्याम्-ॐ भू० वाराह्यै नमः वाराहीम् आ० स्था० ॥ ५२ ॥ पश्चिमे—ॐ भू० चामुण्डायै नमः चामुण्डाम् आ० स्था० ॥ ५३ ॥ वायव्याम्—ॐ भू० वैष्णव्यै नमः वैष्णवीम् आ० स्था० ॥ ५४ ॥ उत्तरे-ॐ भू० माहेश्वर्यै नमः माहेश्वरीम् आ० स्था० ॥ ५५ ॥ ऐशान्याम्-ॐ भू० वैनायक्यै नमः वैनायकीमा० स्था० ॥५६॥ एवं सर्वतोभद्रमण्डलदेवता आवाह्य पूजनं बलिदानं च विधाय प्रधानहोमान्ते (अन्तिमदिने) तत्तन्मंत्रैर्वा नाममंत्रैः प्रत्येकं दशदशघृताक्ततिलाहुतिभिः एकैकयाऽऽज्याहुत्या वा होमः कार्यः ॥

॥ इति सर्वतोभद्रमंडलदेवतास्थापनम् ॥

॥ ५६ ॥ त्रिचत्वारिंशद् (४३) रेखात्मकमाग्निपुराणोक्तहरिहरमण्डलस्थद्वादशलिङ्गतोभद्रमण्डलदेवतास्थापनम् ॥

हस्ते जलमादाय अद्येत्यादिपूर्वोच्चरितशुभपुण्यतिथौ० प्रारीप्सित-(हवनात्मक) महारुद्राख्ये[1] कर्मणि हरिहरात्मकद्वादशलिङ्गतोभद्र-

[1] रुद्राख्ये लघुरुद्राख्ये अतिरुद्राख्ये इत्यादिकं यथानुकूल्येन वक्तव्यम् ॥

मण्डलदेवतावाहनस्थापनपूजनानि करिष्ये ॥ (आदौ पूर्वोक्तक्रमेण सर्वतोभद्रमण्डलदेवता आवाह्य) हस्ते अक्षतान् गृहीत्वा-ईशान्यादिक्रमेण प्रथम-द्वितीय-तृतीयपूर्वलिङ्गे-१ ॐ भूर्भुवः स्वः शिवाय नमः शिवमावाहयामि स्थापयामि॥ भो शिव इहागच्छ इह तिष्ठ ॥(एवं सर्वत्र)॥ २ ॐ भू० तत्पुरुषाय नमः आ० स्था० ॥ ३ ॐ भू० पशुपतये नमः आ० स्था० ॥ प्रथम-द्वितीय-तृतीयदक्षिणलिङ्गे- ॥ ४ ॐ भू० उग्राय नमः आ० स्था० ॥ ५ ॐ भू० अघोराय नमः आ० स्था० ॥ ६ ॐ भू० रुद्राय नमः आ० स्था० ॥ प्रथम–द्वितीय तृतीय-पश्चिमलिङ्गे– ॥ ७ ॐ भू० भवाय नमः आ० स्था ॥ ८ ॐ भू० सद्योजाताय नमः आ० स्था० ॥ ९ ॐ भू० सर्वजाताय नमः आ० स्था० ॥ प्रथम–द्वितीय-तृतीयोत्तरलिङ्गे–॥ १० ॐ भू० महालिङ्गाय नमः आ० स्था० ॥ ११ ॐ भू० वामदेवाय नमः आ० स्था० १२ ॐ भू० भीमाय नमः आ० स्था० ॥ पूर्वेशान्यादिक्रमेण षोडशवापीषु प्रत्येकं देवतास्थापनम्–॥ १३ असिताङ्गभैरवाय० ॥ १४ रुरुभैरवाय० ॥ १५ चण्डभैरवाय०॥ १६ क्रोधभैरवाय० १७ उन्मत्तभैरवाय० ॥ १८ कपालिभैरवाय० ॥ १९ भीषणभैरवाय० ॥ २० संहारभैरवाय० ॥ २१ भवाय० ॥ २२ शर्वाय० ॥ २३ ईशानाय० ॥ २४ पशुपतये०॥ २५ ॥ रुद्राय ॥ २६ उग्राय० ॥ २७ भीमाय० ॥ २८ महते० ॥ २९ ईशानेन्द्रयोर्मध्ये भद्रे शूलिने० ३० इन्द्राग्न्योर्मध्ये भद्रे–चन्द्रमौलिने०॥ ३१ अग्नियमयोर्मध्ये भद्रे–चन्द्रमसे० ॥३२ यमनिर्ऋत्योर्मध्ये भद्रे–वृषभध्वजाय० ॥ ३३ निर्ऋतिवरुणयोर्मध्ये भद्रे–त्रिलोचनाय० ॥ ३४ वरुणवाय्वोर्मध्ये भद्रे–शक्तिधराय०॥ ३५ वायुसोमयोर्मध्ये भद्रे–महेश्वराय०॥ ३६ सोमेशानयोर्मध्ये भद्रे–शूल-

धारिणे० ॥ अथेशानीमारभ्येशानीपर्यंतं प्रतिकोणं द्वे द्वे इत्यष्टवल्लीषु क्रमेणाष्टौ देवताः स्थापयेत्–॥३७ अनन्ताय०। ३८ तक्षकाय० ॥ ३९ कुलिशाय० ॥ ४० कर्कोटकाय० ॥ ४१ शङ्खपालाय० ॥ ४२ कम्बलाय०॥ ४३ अश्वतराय०॥ ४४ पृथिव्यै०॥ आग्नेयकोणे सप्तशृंङ्खलादेवताः स्थापयेत्–॥ ४५ भूम्यै० ॥ ४६ हैहयाय० ॥ ४७ माल्यवते० ॥ ४८ पारिजाताय० ॥ ४९ दिक्पतये० ॥ ५० महादेवाय० ॥ ५१ ॥ विष्णवे० ॥ नैर्ऋत्यकोणे सप्तशृङ्खलादेवताः स्थापयेत्–॥५२ माल्यवते० ॥ ५३ महारुद्राय० ॥ ५४ कालाग्निरुद्राय०–॥५५ द्वादशादित्येभ्यो० ॥ ५६ महेश्वराय० ॥ ५७ मृत्युरोगाभ्यां० ॥५८ वैनायक्यै० ॥ वायव्यकोणे सप्तशृङ्खलादेवताः स्थापयेत्–५९ शाकुन्तलेयाय० ॥ ६० भरताय ॥ ६१ नलाय० ॥ ६२ रामाय० ॥ ६३ सार्वभौमाय० ॥ ६४ नैषधाय० ॥ ६५ विन्ध्याचलाय० ॥ ईशानकोणे सप्तशृङ्खलादेवताः स्थापयत्-६६ हेमकूटाय०॥६७ गन्धमादनाय०॥६८ कुलाचलाय० ॥ ६९ हिमाचलाय० ॥ ७० पृथिव्यै० ७१ अनन्ताय०॥७२ कमलासनाय०॥ चतुर्दिक्षु खण्डेन्दुषु देवताः स्थापयेत्-७३ ऐशाने-अश्विनीकुमाराभ्यां०॥७४ आग्नेये-विश्वेभ्यो देवेभ्यो०॥७५ नैर्ऋत्ये-पितृभ्यो०॥७६ वायव्ये-नागेभ्यो०॥ तद्बहिः सत्त्वरजस्तमःपरिधिषु देवतास्थापनं पूर्वादिक्रमेण॥७७सत्त्वपरिधौ पूर्वे–इन्द्राय०॥७८ आग्नेये–अग्नये० ॥ ७९ दक्षिणे–यमाय० ॥ ८० नैर्ऋत्ये–निर्ऋतये० ॥८१ पश्चिमे–वरुणाय० ॥ ८२ वायव्ये–वायवे० ॥ ८३ उत्तरे–कुबेराय० ॥ ८४ ऐशाने-ईशानाय० ॥ तद्बहिः रजःपरिधौ आयुधावाहनम् ॥८५ पूर्वे–वज्राय० ॥८६ आग्नेये–शक्तये० ॥ ८७ दक्षिणे-दण्डाय० ॥ ८८ नैर्ऋत्ये–खड्गाय० ॥ ८९ पश्चिमे–पाशाय० ॥ ९०

वायव्ये० अङ्कुशाय० ॥ ९१ उत्तरे-गदायै० ॥ ९२ ऐशाने-त्रिशू-लाय० ॥ तद्बहिः तमःपरिधौ ऋषीन् स्थापयेत् ॥ ९३ पूर्वे-कश्य-पाय० ॥ ९४ आग्नेये-अत्रये० ॥ ९५ दक्षिणे-भरद्वाजाय० ॥ ९६ नैर्ऋत्ये-विश्वामित्राय० ॥ ९७ पश्चिमे-गोतमाय० ॥ ९८ वायव्ये-जमदग्नये० ॥ ९९ उत्तरे-वसिष्ठाय० ॥ १०० ऐशाने-ॐ भूर्भुवः स्वः भृगवे नमः भृगुमावाहयामि स्थापयामि ॥ भो भृगो इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ प्रतिष्ठापनम् ॐ मनोजूति०॥ पट्पञ्चाशदुत्तरशतसंख्यका हरिहरमण्डल-देवताः सुप्रतिष्ठाः वरदाः भवत॥ "ब्रह्माद्यावाहितहरिहरमण्डलदेवताभ्यो नमः" इति मन्त्रेण षोडशोपचारैः(वा अन्योपचारैः) सम्पूज्य तेभ्यो पायसबलिं दद्यात् ॥ पूजनान्ते समर्पणम्-अनया पूजया हरिहरमण्डल-देवताः प्रीयन्ताम् ॥

॥ इति त्रिचत्वारिंशद्रेखात्मकहरिहरमण्डलस्थद्वादशलिंगतोभद्रमण्डल-देवतास्थापनम् ॥

॥ ५७ ॥ अथ (३४) चतुस्त्रिंशद्रेखात्मकं द्वादशलिंगतोभद्र-मण्डलदेवतास्थापनम् ॥

मण्डले कर्णिकान्तराले मध्ये ईशानतः ईशानकोणे खण्डेन्दौ ॥ १ ईशान्याम्-ॐ गुरवे नमः। २ आग्नेय्याम्-गणपतये०। ३ नैर्ऋत्याम्-दुर्गायै०। ४ वायव्याम्-क्षेत्रपालाय०। ५ मध्ये सदाशिवाय०। ततोऽष्टदले पूर्वस्याम्-। ६ पूर्वे-कालाग्निरुद्राय०। ७ तत्रैव-कूर्माय०। ८ तत्रैव-मंडूकाय०। ९ आग्नेय्याम्-वराहाय०। १० तत्रैव-अनंताय०। ११ दक्षि-णस्याम्-पृथिव्यै०। १२ तत्रैव स्कंदाय०। १३ तत्रैव-सुधासिंधवे०। १४ नैर्ऋत्याम्-नल्याय०। १५ तत्रैव-पद्माय०। १६ पश्चिमायाम्-पत्रेभ्यो०

१७तत्रैव-केसरेभ्यो०।१८तत्रैव-कर्णिकायै०।१९ वायव्याम्-सिंहासनाय०। २० तत्रैव-पद्मासनाय०। २१ उत्तरस्याम्-धर्माय०। २२ तत्रैव ज्ञानाय०। २३ तत्रैव-वैराग्याय०। २४ ईशान्याम्-ऐश्वर्याय०। २५। तत्रैव-चिदाकाशाय०। २६ पद्ममध्ये-योगपीठाय० ॥ ततः कर्णिकोपरि पूर्वतश्चतुर्दिक्षु-पृथिव्यै०कपालाय० सप्तसरिद्भ्यो० सप्तसागरेभ्यो० (३०)। कर्णिकासमीपे चत्वारि श्वेतभद्राणि सन्ति तेषु पूर्वादिचतुर्दिक्षु-तत्पुरुषाय० अघोराय० सद्योजाताय० वामदेवाय०(३४)। तत्समीपेकृष्णान्यष्टभद्राणि सन्ति तेषु ईशान्याद्यष्टदिक्षु-भगवत्यै०उमायै०शंकरप्रियायै०पार्वत्यै०गौर्यै०काल्यै०कौर्म्यै०विश्वंभर्यै० (४२) ॥ ततःकृष्णभद्राण्यधःअष्टौ रक्तभद्राणि सन्ति तेषु ईशान्याद्यष्टदिक्षु-नंदिने० महाकालाय०महावृषभाय० भृंगकिरीटिने०स्कंदाय०उमापतये० चंडेश्वराय० योगसूत्राय(५०)। चतुर्लिंगोपरि श्वेतभद्राणि सन्ति तेषु पूर्वादिचतुर्दिक्षु-धात्रे०मित्राय०यमाय०रुद्राय० (५४)॥ तत्समीपे लिंगोपरि अष्टौ पीतभद्राणि सन्ति तेषु ईशान्याद्यष्टदिक्षु वरुणाय०सूर्याय०भगाय० विवस्वते० पुरुषोत्तमाय० सवित्रे०त्वष्ट्रे० विष्णवे० (६२) ॥ ततो द्वादशलिंगतोदेवतानां स्थापनम्-पूर्वे-शिवाय० तद्दक्षिणे-एकनेत्राय० तद्दक्षिणे-एकरुद्राय०॥ दक्षिणस्याम्-त्रिमूर्तये० तत्पश्चिमे-श्रीकंठाय० तत्पश्चिमे-वामदेवाय०॥ पश्चिमायाम्-ज्येष्ठाय० तदुत्तरे-श्रेष्ठाय०तदुत्तरे रुद्राय० ॥ उत्तरे-कालाय० तत्पूर्वे-कलविकरणाय० तत्पूर्वे-बलविकरणाय० (७४) ॥ ततः श्वेतषोडशवापीषु प्रत्येकं देवतास्थापनम्-अणिमायै० महिमायै०लघिमायै० गरिमायै० प्राप्त्यै० प्राकाम्यै० ईशितायै० वशितायै० ब्राह्म्यै० माहेश्वर्यै० कौमार्यै० वैष्णव्यै० वाराह्यै० ऐंद्राण्यै० चामुण्डायै० चण्डिकायै० (९०) ॥ ततो वापीसमीपे अष्टरक्तभद्राणि

सन्ति तेषु ईशान्याद्यष्टदिक्षु—असितांगभैरवाय० रुरुभैरवाय० चंड-भैरवाय० क्रोधभैरवाय० उन्मत्तभैरवाय० कालभैरवाय० भीषण-भैरवाय० संहारभैरवाय० (९८) ॥ ईशानाद्यष्टदिक्षु वल्लीदेवता-स्थापनम्—घृताच्यै० मेनकायै० रम्भायै० उर्वश्यै० तिलोत्तमायै० सुकेशायै० मंजुघोषायै० अप्सरोभ्यो० (१०६) ततो मण्डलमध्ये परिधिसमीपे शृङ्खलादेवताः स्थापयेत्—आग्नेय्याम्—भवाय० शिवाय० रुद्राय० पशुपतये० उग्राय० भीमाय० महादेवाय० ईशानाय० अनन्ताय० वासुकये० (११६)॥ नैर्ऋत्याम्—तक्षकाय० कुलीरकाय० कर्कोटकाय० शंखपालाय० कंबलाय० अश्वतराय० वैन्याय० अंगाय० हैहयाय० अर्जुनाय०(१२६)॥ वायव्याम्—शाकुन्तलेयाय० भरताय० नलाय० रामाय० सार्वभौमाय० निषधाय० विंध्याचलाय० माल्यवते० पारियात्राय० सह्याय०(१३६)॥ ऐशान्याम्—हेमकूटाय० गंधमादनाय० कुलाचलाय० हिमवते० रैवताय० देवगिरये० मलयाचलाय० कनकाचलाय० पृथिव्यै० अनंताय०(१४६) ॥ आग्नेयादिचतुर्दिक्षु खण्डेन्दुपु-अग्निकुमाराभ्यां० विश्वेभ्यो देवेभ्यो० पितृभ्यो० नागेभ्यो० (१५०)॥ ततो मण्डलाद्बहिः सत्त्वपरिधौ पूर्वादिक्रमेण-इंद्राय० अग्नये० यमाय० निर्ऋतये० वरुणाय० वायवे० कुबेराय० ईशानाय० ऊर्ध्वायाम्-ब्रह्मणे० अधः-अनन्ताय० (१६०)॥ ततो रक्तपरिधौ पूर्वादिक्रमेण-वज्राय० शक्तये० दण्डाय० खड्गाय० पाशाय० अंकुशाय० गदायै० त्रिशूलाय० ऊर्ध्वायां पद्माय० अधः-चक्राय०(१७०) ॥ ततः कृष्णपरिधौ पूर्वादिक्रमेण-कश्यपाय० अत्रये० भरद्वाजाय० विश्वामित्राय० गौतमाय० जमदग्नये० वसिष्ठाय० अरुंधत्यै०। पूर्वे-ऋग्वेदाय० । दक्षिणे-यजुर्वेदाय०। पश्चिमे-सामवेदाय० ।उत्तरे-अथर्ववेदाय नमः ॥(१८२) ॥ इति(३४) चतुस्त्रिंशद्रेखात्मकरुद्रदशलिंगतोभद्रमण्डलदेवतास्थापनम् ॥

॥ ५८ ॥ अथ गृहवास्तुपूजाप्रयोगः ॥

कर्त्ता पूर्वदिने देहशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तं कुर्यात् ॥ आचम्य प्राणानायम्य शान्तिसूक्तं पठेत् ॥ ततः सुमुखश्चेत्यादि पठित्वा संकल्पः- अद्येο मम सर्वापच्छान्तिपूर्वकं दीर्घायुर्विपुलधनधान्यपुत्रपौत्राद्यनवच्छिन्नसन्ततिवृद्धिस्थिरलक्ष्मीकीर्तिलाभशत्रुपराजयसदभीष्टसिद्ध्यर्थंसुवर्णरजतताम्रत्रपुसीसकर्कास्यलोहपाषाणाद्यष्टशल्यमेदिनीदोषाद्यद्ययान्यथाभवनदोषपरिहारार्थं नानाविधजीवहिंसादिजन्यसकलदोषपरिहारपूर्वकसर्वारिष्टोपशान्त्यर्थम् अस्मिन्गृहे चिरकालनिवासार्थं श्रीपरमेश्वरप्रीतये सग्रहमखां शालाकर्मपूर्विकां वास्तुशान्तिं करिष्ये॥ तदंगतया दिग्रक्षणं कलशाराधनं गणपतिपूजनं पुण्याहवाचनं मातृकापूजनं वसोर्द्धारायुष्यमंत्रजपं नान्दीश्राद्धं ब्रह्माचार्यऋत्विग्वरणं च करिष्ये ॥ इति संकल्प्य तानि ग्रहशान्तिवत् कुर्यात् ॥ अथ शालाकर्मप्रयोगः॥ शालाभ्यन्तरे प्रादेशमात्रं स्थण्डिलं कृत्वा तदुपरि अग्निस्थापनं कुर्यात् । आज्यसंस्कारान्कृत्वा आग्नेयादिक्रमेणावटमभिजुहुयात् ॥ ॐ अच्युताय भौमाय स्वाहा इदमच्युताय भौमाय नमम ॥ एवं चतुर्षु अवटेषु होमः॥ ततः स्तंभोच्छ्रयणम् ॥ ॐ इमामुच्छ्रयामि भुवनस्यनाभिंवसोर्द्धाराम्प्रतरणीवसूनाम् ॥ इहैवध्रुवांनिमिनोमिशालांक्षेमेतिष्ठतुघृतमुक्षमाणा ॥ अश्वावतीगोमतीसूनृतावत्युच्छ्रयस्वमहतेसौभगाय ॥ आत्वाशिशुराक्रन्दत्वागावोधेनवोवाश्यमानाः॥ आत्वाकुमारस्तरुणआवत्सो जगदैःसह ॥ आत्वापरिस्रुतःकुम्भआदध्नःकलशैरुप ॥ क्षेमस्यपत्नीबृहतीसुवासारयिंनोधेहिसुभगेसुवीर्यम्। अश्वावद्गोमदूर्जस्वत्पर्णंवनस्पतेरिव॥ अभिनःपूर्यतारयिरिदमनुश्रेयोवसानः ॥ ४ ॥ एवं प्रतिस्तंभे मंत्रपाठः । स्तंभमूले जलं निक्षिप्य । "स्तंभाय नमः" इति नाममंत्रेण पञ्चोपचारैः पूजां कुर्यात् ॥

ततो गृहमध्ये हस्तमात्रं कुण्डं स्थण्डिलं वा कृत्वा कुण्डात् नैर्ऋत्य-भागे वास्तुदेवतास्थापनार्थं पीठं कृत्वा दिग्रक्षणं तथा पञ्चगव्यकरणं भूमिकूर्मानन्तपूजनम् च कृत्वा कुण्डे स्थंडिले वा पञ्चभूसंस्कारपूर्वकं शतमंगलनामानम् अग्निं स्थापयेत् ॥ ततो वास्तुदेवताः स्थापयेत् ॥

अथ वास्तुदेवतास्थापनम् ॥ तत्रादौ वास्तुपीठे श्वेतवस्त्रं प्रसार्य तदुपरि तंदुलैरेकाशीतिपदं वास्तुमण्डलं कृत्वा जलमादाय ॥ अद्ये-त्यादि० प्रारब्धस्य कर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थं वास्तुमंडले देवतास्थापनं पूजनं चाहं करिष्ये ॥ तत्रादौ वास्तुपीठस्य आग्नेयादिकोणेषु चतुरः शंकून् रोपयेत् ॥ विशन्तु भूतले नागा लोकपालाश्च सर्वतः ॥ अस्मिन् गृहेऽवतिष्ठन्तामायुर्बलकराः सदा ॥१॥ इति मंत्रेण रोपयेत् ॥ अनेनैव मंत्रेण द्विगुणीकृतसूत्रेण सर्वतो वेष्टनं कुर्यात् ॥ आग्नेयादिको-णेषु क्रमेण शंकुपार्श्वे मापभक्तदध्योदनबलिं दद्यात् ॥ तत्र मंत्राः ॥ अग्निभ्योऽप्यथ सर्पेभ्यो ये चान्ये तान् समाश्रिताः । बलिं तेभ्यः प्रयच्छामि पुण्यमोदनमुत्तमम्॥१॥अग्नये० इमं बलिं समर्पयामि ॥ १ ॥ नैर्ऋत्याधिपतिश्चैव नैर्ऋत्यां ये च राक्षसाः ॥ बलिं० ॥२॥ निर्ऋतये० बलिं सम०॥२॥ नमो वै वायुरक्षोभ्यो ये चान्ये तान् समाश्रिताः॥ बलिं० ॥३॥ वायवे० बलिं सम०॥३॥ रुद्रेभ्यश्चैव सर्पेभ्यो ये चान्ये तान् समा-श्रिताः ॥ बलिं०॥४॥ ईशानाय० बलिं सम०॥४॥ ततो वेद्युपरि प्रसा-रितवस्त्रे कुंकुमादिना सुवर्णरजतादिशलाकया नाममंत्रैः पश्चादारभ्य प्रागन्ता च उदक्संस्थाः समा अंगुलद्वयान्तरा गृहवास्तुत्वादेकाशीति-पदमण्डले दश रेखाः कुर्यात् ॥ तत्र च रेखादेवताः स्थापयेत् ॥ यथा शान्त्यै०।यशोवत्यै०।कान्त्यै०। विशालायै०। प्राणवाहिन्यै०। सत्यै०। सुमत्यै० । नन्दायै० ।सुभद्रायै०। सुरथायै०॥१०॥तथैव दक्षिणारंभा

उदगन्ताः प्राक्संस्थाः दश रेखाः कुर्यात् ॥ तत्र च रेखादेवताः स्था० ॥ हिरण्यायै० सुव्रतायै०। लक्ष्म्यै०। विभूत्यै० । विमलायै० । प्रियायै०। जयायै० । ज्वालायै०। विशोकायै० इडायै० ॥१०॥ इत्यावाह्य मनोजू० इति प्रतिष्ठाप्य "रेखादेवताभ्यो नमः"॥ इति मंत्रेण यथाशक्त्या पूजयेत्॥

॥ अथ एकाशीतिपदवास्तुमण्डलदेवतास्थापनम् ॥

१ ऐशानकोणपदे–ॐ शिखिने नमः शिखिनम् आ०स्थापयामि॥ (एवं सर्वत्र) २ तद्दक्षिणैकपदे–पर्जन्याय० । ३ तद्दक्षिणपदद्वये–जयन्ताय० । ४ तद्दक्षिणपदद्वये–कुलिशायुधाय०। ५ तद्दक्षिणपदद्वये–सूर्याय०। ६ तद्दक्षिणपदद्वये–सत्याय०। ७ तद्दक्षिणपदद्वये–भृशाय०। ८ तद्दक्षिणैकपदे–आकाशाय० । ९ तद्दक्षिणाग्नेयकोणपदे–वायवे० । १० तत्पश्चिमैकपदे०पूष्णे० । ११ तत्पश्चिमपदद्वये–वितथाय० । १२ तत्पश्चिमपदद्वये–गृहक्षताय०। १३ तत्पश्चिमपदद्वये–यमाय०। १४ तत्पश्चिमपदद्वये–गन्धर्वाय०। १५ तत्पश्चिमपदद्वये–भृङ्गराजाय०। १६ पश्चिमोपरिस्थितैकपदे–मृगाय०। १७ तत्पश्चिमे नैर्ऋत्यकोणपदे–पितृभ्यो०। १८ तदुत्तरैकपदे–दौवारिकाय०। १९ तदुत्तरपदद्वये–सुग्रीवाय०।२० तदुत्तरपदद्वये–पुष्पदन्ताय०।२१ तदुत्तरपदद्वये–वरुणाय०। २२ तदुत्तरपदद्वये–असुराय०। २३ तदुत्तरपदद्वये–शोषाय०। २४ तदुत्तरोपरिस्थितैकपदे–पापाय०।२५तदुत्तरवायव्यकोणपदे–रोगाय०। २६ तत्प्रागेकपदे–अहये०।२७ तत्प्राक्पदद्वये–मुख्याय०।२८ तत्प्राक्पदद्वये–भल्लाटाय०। २९ तत्प्राक्पदद्वये–सोमाय०। ३० तत्प्राक्पदद्वये–सर्पाय०। ३१ तत्प्राक्पदद्वये–अदित्यै०। ३२ तत्प्रागुपरिस्थितैकपदे–दित्यै०। ३३ तद्दक्षिणे शिखिपदाधः–आपाय०। ३४ आग्नेयवायुपदाधः–सावित्राय० । ३५ नैर्ऋत्यपितृपदाधः–जयाय० । ३६

वायव्यरोगपदाधः-रुद्राय०। ३७ मध्येनवपदात्पूर्वे पदत्रये-अर्यम्णे०। ३८ तद्दक्षिणाग्नेयकोणैकपदे-सवित्रे०।३९तत्पश्चिमपदत्रये-विवस्वते०। ४०तत्पश्चिमनैर्ऋत्यकोणैकपदे-विबुधाय०।४१तदुत्तरपदत्रये०मित्राय० ४२तदुत्तरवायव्यकोणैकपदे-राजयक्ष्मणे० । ४३ ततःप्राक्पदत्रये-पृथ्वीधराय०।४४तत्प्राक्ईशानकोणैकपदे-आपवत्साय०। ४५ मध्ये नवपदेषु-ब्रह्मणे०।मण्डलाद्बहिः श्वेतपरिधौ-४६ ईशान्याम्-चरक्यै०। ४७आग्नेय्याम्-विदार्यै०। ४८नैर्ऋत्याम्-पूतनायै०। ४९ वायव्याम्-पापराक्षस्यै०।५० मण्डलाद्बहिः पूर्वे-स्कन्दाय०।५१ दक्षिणे-अर्यम्णे०। ५२ पश्चिमे-जृम्भकाय०।५३ उत्तरे-पिलिपिच्छाय०। मण्डलाद्बहिः-द्वितीयरक्तपरिधौ ॥ ५४ पूर्वे-इन्द्राय०। ५५ आग्नेय्याम्-अग्नये०। ५६ दक्षिणस्याम्-यमाय०। ५७ नैर्ऋत्याम्-निर्ऋतये०। ५८ पश्चिमे-वरुणाय०।५९ वायव्याम्-वायवे०।६० उत्तरे-कुबेराय०।६१ ईशान्याम्-ईश्वराय०।६२ पूर्वेशानयोर्मध्ये-ब्रह्मणे०।६३ निर्ऋतिपश्चिमयोर्मध्ये-अनन्ताय०।६४ पूर्वे इन्द्रादुत्तरतः-उग्रसेनाय० । ६५ दक्षिणे यमादुत्तरतः-डामराय०।६६- पश्चिमे वरुणादुत्तरतः-महाकालाय०।६७ उत्तरे सोमादुत्तरतः-पिलिपिच्छाय०।६८ तृतीयकृष्णपरिधौ देवतास्थापनम्-पूर्वे-हेतुकाय०।६९ आग्नेय्याम्-त्रिपुरान्तकाय०।७० दक्षिणे-अग्निवेतालाय० । ७१ नैर्ऋत्याम्-असिवेतालाय० । ७२ पश्चिमे-कालाय० । ७३ वायव्याम्-करालाय० । ७४ उत्तरे-एकपादाय०। ७५ ईशान्याम्-भीमरूपाय० । ७६ पूर्वेशानयोर्मध्ये-खेचराय०। ७७ निर्ऋतिपश्चिमयोर्मध्ये-तलवासिने०॥ इत्यावाह्य मनोजू०इति प्रतिष्ठाप्य "वास्तुमंडलदेवताभ्यो नमः" इति पूजयेत् ॥

ततो मध्ये ताम्रकलशं संस्थाप्य तत्र वास्तुध्रुवमूर्त्योः अग्न्युत्तारणपूर्वकं प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा मूर्त्यौ कलशोपरि संस्थाप्य "वास्तुध्रुवमूर्तिभ्यां नमः" इति मूलमंत्रेण षोडशोपचारैः संपूज्य प्रार्थयेत् ॥ वास्तुदेव नमस्तेऽस्तु भूशय्याभिरत प्रभो॥ मद्गृहे धनधान्यादि समृद्धिं कुरु सर्वदा ॥ १ ॥ ततो नाममंत्रेण पायसबलिं दद्यात् ॥ इति ॥ ततः पूर्वोक्तक्रमेण ग्रहवेद्यां ग्रहस्थापनं पूजनं च ॥ ततः कुशकण्डिकां कुर्यात्॥ ब्रह्मोपवेशनादि चरुस्थाल्यधिश्रयणान्तं कृत्वा ॥ ततः सपत्निको यजमानो वर्धनीकलशं गृहीत्वा गृहाद्बहिर्निष्क्रम्य द्वारदेवतानां पूजनं कुर्यात्॥ यथा–अक्षतान् गृहीत्वा॥ पूर्वद्वारे–ग्रामणीपीठे पक्षीन्द्राय नमः। दक्षिणे–चण्डाय नमः। वामे–प्रचण्डाय नमः। ऊर्ध्वं–द्वारश्रियै नमः। देहल्यां द्वारपीठस्य मध्ये-वास्तुपुरुषाय नमः। दक्षिणशाखायां-गंगायै०। वामशाखायां–यमुनायै०। दक्षिणे–शंखनिधये०। वामे–पद्मनिधये०। द्वारस्य ऊर्ध्वम् आग्नेय्यां–गणपतये०। अधः-नैर्ऋत्यां–दुर्गायै०। अधः वायव्यां-सरस्वत्यै०। ऊर्ध्वम् ईशान्यां क्षेत्रपालाय०। "द्वारश्रियाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः" इति गंधादिभिः संपूज्य तोरणपूजां कुर्यात् ॥ ततो यजमान आचार्यं पृच्छेत्। ब्रह्मन् प्रविशामि। आचार्येण 'प्रविशस्व' इत्युक्ते ॐ "ऋचं प्रपद्ये शिवं प्रपद्ये" इत्युक्त्वा शान्तिसूक्तं पठित्वा दक्षिणपादपुरःसरं स्वदक्षिणस्कन्धेन द्वारवामशाखां च देहलिं स्पृशन् गृहान्तः प्रविश्य वर्द्धनीकलशमैशान्यां स्थापयेत्॥ ततःपूजां कृत्वा कुशकण्डिकां समाप्य होमं कुर्यात्॥ इहरतिरितिपञ्चाज्याहुतीनाम् उदपात्रे त्यागः। तेनोदकेन मंदिरं प्रोक्षयेत् ॥ यथा–ॐ इहरतिरिहरमध्वमिहधृतिरिहस्वधृतिः स्वाहा॥ इदमग्नये नमम॥१॥ ॐ उपसृजं धरुणं मात्रे धरुणो मातरन्धयन्। रायस्पोषमस्मासुदीधरत्स्वाहा॥ इदम०॥२॥ (अपराश्वतस्रः)॥ ॐ वास्तोष्पते०॥ इदं वास्तोष्पतये नमम॥३॥ ॐ वास्तोष्पतेप्रतरणोनऽएधिग-

यस्फानोगोभिरश्वेभिरिन्दो॥ अजरासस्तेसख्येस्यामपितेवपुत्रान्प्रतिनो-
जुषस्वशन्नो भवद्विपदेशंचतुष्पदे स्वाहा ॥ इदं वास्तो०॥४॥ॐवास्तोष्पते
शग्मयासꣳसदातेसक्षीमहिरण्वयागातुमत्या ॥ पाहिक्षेमऽउतयोगेवरन्नोयू-
यपातस्वस्तिभिःसदानःस्वाहा ॥ इदं वा०॥५॥ॐ अमीवहा वास्तोष्पते-
विश्वारूपाण्याविशन् ॥ सखासुशेव एधिनः स्वाहा ॥ इदं वास्तो० ॥६॥
(पुराणोक्तवास्तुमन्त्रः ॥ नमस्ते वास्तुपुरुष भूशय्याभिरत प्रभो । मद्गृहं
धनधान्यादिसमृद्धिं कुरु सर्वदा ॥ इदं वा०) ततो मनसि ॐप्रजापतये
स्वाहेत्यादि आघारावाज्यभागौ हुत्वा प्रोक्षणीपात्रे त्यागः ॥ ततश्चरुम-
भिघार्य स्थालीपाकेन षडाहुतयः ॥ अग्निमिन्द्रं बृहस्पतिं विश्वांश्च देवा-
नुपह्वये ॥ सरस्वतीं च वाजीं च वास्तु मे दत्त वाजिनः स्वाहा
(उदपात्रे संस्रवप्रक्षेपः) इदम् अग्नये इन्द्राय बृहस्पतये विश्वेभ्यो देवेभ्यः
सरस्वत्यै वाज्यै च नमम॥१॥ॐसर्पदेवजनान्सर्वान्हिमवन्तꣳसुदर्शनम्॥
वसूंश्चरुद्रानादित्यानीशानंजगदैःसह॥एतान्सर्वान्प्रपद्येऽहं वास्तुमेदत्तवा-
जिनः स्वाहा । इदं सर्पदेवजनेभ्यः सर्वेभ्यो हिमवते सुदर्शनाय वसुभ्यो
रुद्रेभ्य आदित्येभ्य ईशानाय जगदेभ्यश्च नमम।२।ॐपूर्वाह्णमपराह्णंचोभौ
मध्यंदिनासह। प्रदोषमर्धरात्रंचव्युष्टांदेवींमहापथाम् । एतान्सर्वान्प्रपद्येऽहं
वास्तुमेदत्तवाजिनः स्वाहा । इदं पूर्वाह्णायापराह्णाय मध्यंदिनाय प्र-
दोषायार्धरात्राय व्युष्टायै देव्यै महापथायै नमम॥३॥ॐ कर्तारं च विक-
र्तारंविश्वकर्माणमोषधींश्चवनस्पतीन् । एतान्स० । इदं कर्त्रे, विकर्त्रे
विश्वकर्मण ओषधीभ्यो वनस्पतिभ्यश्च०॥४॥ॐधातारं च विधातारं नि-
धीनांचपतिꣳसह। एतान्स०। इदं धात्रे विधात्रे निधीनां पतये च०॥५॥
ॐ स्योनꣳशिवमिदंवास्तुदत्तं ब्रह्मप्रजापतिसर्वाश्चदेवताः स्वाहा ।
(उदपात्रे संस्रवप्रक्षेपः । गृहप्रोक्षणकाले अनेन जलेन प्रोक्षणम्) । इदं
ब्रह्मणे प्रजापतये सर्वाभ्यो देवताभ्यश्च०॥६॥ततो द्रव्यत्यागं ग्रहहोमं च

कुर्यात् ॥ ततो वास्तुपीठस्थदेवतानां होमं कुर्यात् ॥ पञ्चबिल्वफलानां होमः ॥ ततोऽष्टोत्तरशतसंख्यया वास्तुमंत्रेण मधुघृतदधिभिरभ्यक्ताभिः औदुम्बरादियथालाभसमिद्भिश्चरुकृष्णतिलाज्यद्रव्येण च होमं कुर्यात् ॥ ततो ध्रुवासि० इत्यनेन मन्त्रेण ध्रुवस्य चरुणा कृष्णतिलैराज्येन च प्रतिद्रव्यम् अष्टोत्तरशतं जुहुयात्॥ततः अघोरमन्त्रेणाज्येन अष्टोत्तरशतं जुहुयात्॥ शिख्यादिवास्तुपीठदेवतानां प्रतिद्रव्यम् एकैकयाऽऽहुत्या होमः ॥ ततः स्विष्टकृतादिप्रणीताविमोकान्तं कुर्यात् ॥ ततः पूर्वादिदिक्षु संधावभिमर्शनं कुर्यात् ॥ गृहाद् बहिर्निष्क्रम्य दिशमुपतिष्ठते प्रागादिक्रमेण ॥ (मंत्रपाठः वास्तुशान्त्यादिपुस्तके द्रष्टव्यः ॥) ततः पूर्वादिक्रमेण ध्वजापताकां रोपयेत् ॥ त्रिरावृत्तेन सूत्रेण रक्षोघ्नमंत्रेण गृहं वेष्टयेत् ॥ दुग्धजलेन गृहस्य परितः पवमानरक्षोघ्नसूक्तं पठन् अविच्छिन्नधारां पातयेत् ॥ प्रागकृते गृहप्रवेशं कुर्यात् । तथा आग्नेयकोणे जानुपरिमितगर्तं खनयित्वा मृत्पेटिकायां शैवालादिकं क्षिप्त्वा तत्र वास्तुमूर्तिं संस्थाप्य गंधादिभिश्च संपूज्य ततः पेटिकां गर्ते शनैर्निक्षिपेत् । तस्मिन् गर्ते शनैर्जलं मृदं च निक्षिपेत् ॥ ततो गोमयेनोपलिप्य गंधादिभिः संपूज्य पञ्चगव्येन गृहं प्रोक्षयेत् ॥ श्रेयः संपाद्य दानं च अभिषेकं विसर्जनं च कृत्वा ब्राह्मणभोजनं कारयेत् ॥ इति संक्षेपतो वास्तुशान्तिप्रयोगः ॥

॥ इति चतुर्थो विभागः ॥

॥ अथ पञ्चमो विभागः ॥

॥ श्रावणीकर्मसहितविविधमन्त्रप्रयोगात्मकः ॥

॥ ५९ ॥ अथ हेमाद्रिप्रोक्तस्नानसङ्कल्पः ॥

श्रावण्यादिनैमित्तिकस्नाने प्रायश्चित्ते तीर्थस्नानादिषु च हेमाद्रिप्रोक्तं महास्नानसङ्कल्पं कुर्यात् ॥

स्वस्तिश्रीसमस्तजगदुत्पत्तिस्थितिलयकारणस्य रक्षाशिक्षाविचक्षणस्य प्रणतपारिजातस्य अशेषपराक्रमस्य श्रीमदनन्तवीर्यस्यादिनारायणस्य अचिन्त्यापरिमितशक्त्या ध्रियमाणस्य महाजलौघमध्ये परिभ्रममाणानामनेककोटिब्रह्माण्डानामेकतमेऽव्यक्तमहदहंकारपृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशाद्यावरणैरावृते अस्मिन्महति ब्रह्माण्डखण्डे आधारशक्तिश्रीवदादिवाराहदंष्ट्राग्रविराजिते कूर्मानन्तवासुकितक्षककुलिककर्कोटकपद्ममहापद्मशंखाद्यष्टमहानागैर्ध्रियमाणे ऐरावतपुंडरीकवामनकुमुदांजनपुष्पदन्तसार्वभौमसुप्रतीकाष्टदिग्गजोपरिप्रतिष्ठितानामतलवितलसुतलतलातलरसातलमहातलपातालसप्तलोकानामुपरिभागे भूर्लोकभुवर्लोकस्वर्लोकमहर्लोकजनोलोकतपोलोकसत्यलोकाख्यसप्तलोकानामधोभागे चक्रवालशैलमहावलयनागमध्यवर्तिनो महाकालमहाफणिराजशेषस्य सहस्रफणामणिमण्डलमण्डिते दिग्दन्तिशुण्डादण्डोद्दंडिते अमरावत्यशोकवतीभोगवतीसिद्धवतीगान्धर्ववतीकाञ्च्यवन्त्यलकावतीयशोवतीतिपुण्यपुरीप्रतिष्ठिते लोकालोकाचलवलयिते लवणेक्षुसुरासर्पिर्दधिक्षीरोदकार्णवपरिवृते जंबूप्लक्षकुशक्रौञ्चशाकशाल्मलिपुष्कराख्यसप्तद्वीपयुते इन्द्रकांस्यताम्रगभस्तिनागसौम्यगन्धर्वचारणभारतेतिनवखण्डमण्डिते सुवर्णगिरिकर्णिकोपेतमहासरोरुहाकारपञ्चाशत्कोटियोजनविस्तीर्णभूमंडले अयोध्यामथुरामायाकाशीकाञ्च्यवंतिकाद्वारावतीतिसप्तपुरीप्रतिष्ठिते सुमेरुनिषधत्रिकूटरजतकूटाग्रकूटचित्रकूटहिमवद्विन्ध्याचलानां हरिवर्षकिंपुरुषभारतवर्षयोश्च दक्षिणे नवसहस्रयोजनविस्तीर्णे मलयाचलसह्याचलविंध्याचलानामुत्तरे स्वर्णप्रस्थचण्डप्रस्थचांद्रसूक्तावन्तकरमणकमहारमणकपांचजन्यसिंहलळंकेतिनवखण्डमण्डिते गङ्गाभागीरथीगोदावरीक्षिप्रायमुनासरस्वतीनर्मदातापीचंद्रभागाकावेरीपयोष्णीकृष्णावेण्याभीमरथीतुंगभद्रा-

ताम्रपर्णीविशालाक्षीचर्मण्वतीवेत्रवतीकौशिकीगंडकीविश्वामित्रीसरयूक-
रतोयाब्रह्मानंदामहीत्यनेकपुण्यनदीविराजिते भरतखंडे भारतवर्षे जंबू-
द्वीपे रामक्षेत्रे कूर्मभूमौ साम्यवति कुरुक्षेत्रादिसमभूमौ मध्यरेखायाः
पूर्वदिग्भागे श्रीशैलात्पश्चिमदिग्भागे श्रीकृष्णावेण्याकावेरीमध्यदेशे तुङ्ग-
भद्राया उत्तरे तीरे श्रीगोदावर्या दक्षिणे तीरे आर्यावर्तान्तर्गतब्रह्मावर्तै-
कदेशे हेमकूटमातङ्गमाल्यवत्किष्किंधासहितपंचक्रोशमध्ये चंपकारण्य-
नैमिषारण्यबदरिकारण्यकामिकारण्यदंडकारण्यार्बुदारण्यधर्मारण्यपद्मा-
रण्यजंबुकारण्यसमस्तपुण्यारण्यानां मध्यदेशे भास्करक्षेत्रे सकलजगत्स्र-
ष्टुः परार्धद्वयजीविनो ब्रह्मणो द्वितीये परार्धे एकपञ्चाशत्तमे वर्षे प्रथममासे
प्रथमपक्षे प्रथमदिवसे अह्नो द्वितीये यामे तृतीये मुहूर्ते रथन्तरादिद्वात्रिंश-
त्कल्पानां मध्ये अष्टमे श्वेतवाराहकल्पे स्वायंभुवादिमन्वंतराणां मध्ये सप्तमे
वैवस्वतमन्वंतरे कृतत्रेताद्वापरकलिसंज्ञकानां चतुर्णां युगानां मध्ये वर्तमाने
अष्टाविंशतितमे कलियुगे प्रथमचरणे भारतवर्षे भारतखण्डे जम्बूद्वीपे राम-
क्षेत्रे परशुरामाश्रमे दण्डकारण्यदेशे श्रीगोदावर्याः पश्चिमदिग्भागे श्रीमल्ल-
वणाब्धेरुत्तरे तीरे श्रीशालिवाहनशाके बौद्धावतारे प्रभवादिषष्टिसंवत्स-
राणां मध्येऽस्मिन्वर्तमाने अमुकनाम्नि संवत्सरे अमुकायने अमुकर्तौ
अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकनक्षत्रे अमुकराशि-
स्थिते चंद्रे अमुकराशिस्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु
ग्रहेषु यथायथं राशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं गुणविशेषेण विशिष्टायां
शुभपुण्यतिथौ मम इह जन्मनि जन्मान्तरे वा बाल्ययौवनवार्द्धक्याव-
स्थासु जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यवस्थासु च वाक्पाणिपादपायूपस्थघ्राणरसनाच-
क्षुःस्पर्शनश्रोत्रमनोभिश्चरितानां ज्ञाताज्ञातकामाकामप्रमहापातकोपपातका-
दिसंचितानां पापानां ब्रह्महननसुरापानस्वर्णस्तेयगुरुदारगमनतत्संस-

गरूपमहापातकानां तद्व्यतिरिक्तानां बुद्धिपूर्वकाणामबुद्धिपूर्वकाणां च मनोवाक्कायकृतानामुपपातकानां स्पृष्टास्पृष्टसङ्करीकरणमलिनीकरणापात्रीकरणजातिभ्रंशकरणविहिताकरणकर्मलोपजनितानां रसविक्रयकन्याविक्रयहयविक्रयगोविक्रयसुतविक्रयधान्यविक्रयखरोष्ट्रविक्रयदासीविक्रयपशुविक्रयपण्यविक्रयजलचरादिजंतुविक्रयस्थलचरादिविक्रयखेचरादिविक्रयसंभूतानां ब्राह्मणपितृमातृगुरुभ्रात्रादितर्जनताडनादिदोषकथनदेवद्विजगोसंबन्धिभूम्यपहारान्यायार्जितद्विजवित्तापहारगुरुवधाक्षेपसुहृद्वधस्त्रीवधतडागाद्यारामच्छेदनदहनकर्षविषप्रयोगाभिचारसहसंग्रामोन्मादनासच्छास्त्राध्ययनचिकित्साप्रायश्चित्तशकुननीतिज्योतिःशास्त्रप्रयोगछन्दोनिन्दाकरणऋणानपाकरणकूटस्थत्वकरणन्यायाकरणधरणीवित्तहरणादिधर्मकार्यविघ्नाचरणात्मोत्कर्षपरनिन्दानृतभाषणपंक्तिभेदवृथापाकपरिसृतानां ब्रह्महत्यासमानानां पुष्पिणीमुखास्वादनक्षालनोदकपाननखमुखस्वादनमुखनिःसृतनीरपानापेयपानकापिलापयःपानपञ्चयज्ञोपासनपरित्यागातिनिषिद्धभक्षणकूटसाक्ष्यादीनां सुरापानसमानानां दंभास्त्रधारणाङ्गवैकृत्यशूद्रसेवानभिकत्वब्रह्मद्रोहपक्षाश्रितपुरोहितत्वदेवलकत्वाध्वसंरक्षणाश्वरत्नमनुष्यस्त्रीभूधेनुविक्षेपहरणकृषिकर्महयादिशिक्षाभारवाहित्वशिल्पविद्याभ्यासादीनां स्वर्णस्ते-

---

१ ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमः । महान्ति पातकान्याहुः समर्गश्च पि तैः सह ॥

२ गुरूणामभ्यधिक्षेपो वेदनिंदा सुहृद्वधः । ब्रह्महत्यासमं ज्ञेयमधीतस्य विनाशनम् ॥ अनृतं च समुत्कर्षे राजगामि च पैशुनम् । गुरोश्चालीकनिर्बन्धः समानि ब्रह्महत्यया ॥

३ ब्रह्मोज्झता वेदनिन्दा कौटसाक्ष्यं सुहृद्वधः । गर्हितान्नाद्ययोर्जग्धिः सुरापानसमानि षट् ॥ निषिद्धभक्षणं जैह्म्यमुत्कर्षे च वचोऽनृतम् । रजस्वलामुखास्वादः सुरापानसमानि षट् ॥

यसमानानां पितृष्वसृमातृष्वसृभ्रातृपत्नीमातुलानीभगिन्याचार्यतनयामातृसपत्नीसखिभार्याप्रव्रजिताशरणागताधात्रीसाध्वीवर्णोत्तमात्यजाद्यगम्यागमनानां गुरुदारगमनसमानानां गजाश्वोष्ट्रखरखड्गमहिषशरभसारमेयशार्दूलसिंहभल्लूकसूकरवृकशुकहरिणवानरचतुष्पयजंबुकाविमेषमृगादिप्राणिवधानां संकरीकरणसमानानां मयूरचापभारद्वाजशुकचक्रवाकमीनादिक्रौञ्चवकशशहंसगृहगोधिकावधानामश्वैर्यादिमलिनीकरणानाम्॥निन्दितेभ्योधनादानशूद्रसेवानृतभाषणादिजिह्ममैथुनादिकोपार्यंतविषयासक्तकृतघृतादीनामपात्रीकरणानाम् अयोनिपशुयोनिरेतोत्सर्जनयतिगोब्राह्मणवृत्तिच्छेदनपुंमैथुनशास्त्रनिंदागोसंचिततृणसंचयाग्निमदानानां जातिभ्रंशकरणानाम् मुखनासारंध्रकरणाहासनप्रदानविनिमयवृद्ध्युपजीवनविषमवाक्शादण्डपाशसंग्रहणक्रीडानाव्यतस्कालदन्तधावनाभ्यंगमैथुनक्षौरानिस्वापादीनां वेश्यागमनशूद्रीदासीगमनविधवागमनकन्यागमनपितृव्यपत्नीगमनरजस्वलागमनस्वगोत्रागमनतिर्यग्योनिगमनप्रतिलोमजागमनसाधारणस्त्रीगमनानृतुभार्याभिगमनसुतवधूगमनानाम् ॥ एकादश्यन्नशूद्रान्नगणिकान्नगणान्नभिन्नकांस्यभोजनादितालवृक्षफलभक्षणपलाण्डुभक्षणताम्बूलादिचर्वणानाम् ॥ अहःखट्वारोहणचित्रवस्त्रालङ्कारस्वप्नेन्द्रियनिपातितानाम् ॥

---

१ निक्षेपस्यापहरणं नराश्वरजतस्य च। भूमिवज्रमणीनां च रुक्मस्तेयसमं स्मृतम्॥ अश्वरत्नमनुष्यस्त्रीभूधेनुहरणं तथा। निक्षेपस्य च सर्वं हि सुवर्णस्तेयसंमितम्॥ २ याज्ञवल्क्यः—सखिभार्याकुमारीषु स्वयोनिष्वन्त्यजासु च। स्वगोत्रासु सुतस्त्रीषु गुरुतल्पसमं स्मृतम्। पितुः स्वसारं मातुश्च मातुलानीं स्नुषामपि। मातुः सपत्नीं भगिनीमाचार्यतनयां तथा। आचार्यपत्नीं स्वसुतां गच्छंस्तु गुरुतल्पगः॥ ३ मनुः—खराश्वोष्ट्रमृगेभानामजाविकवधस्तथा। संकरीकरणं ज्ञेयं मीनाहिमहिषस्य च॥ ४ कृमिकीटवयोहत्या मद्यानुगतभोजनम्। फलैधःकुसुमस्तेयमधैर्यं च मलावहम्॥ ५ मनुः—निन्दितेभ्यो धनादानं वाणिज्यं शूद्रसेवनम्। अपात्रीकरणं ज्ञेयमसत्यस्य च भाषणम्॥ ६ ब्राह्मणस्य रुजः कृत्वा घ्रातिरघ्रेयमद्ययोः। जैह्म्यं च मैथुनं पुंसि जातिभ्रंशकरं स्मृतम्॥

संधानादिनाष्टमीचतुर्दशीदिवाभोजनभानुवारे पर्वरात्रिभोजनादिगृहिण्यागर्भिण्यागमनमनोरथक्षारत्रात्यान्नपतितप्रेरितान्नतुरुष्कान्नोच्छिष्टान्नकारागृहनिवासभोजनतुरुष्कमध्येनिवासतुरुष्कस्पृष्टद्रव्योपभोगतुरुष्कस्पर्शतुरुष्कदेशनिवासादीनाम् ॥ कुग्रामवासबाह्यनिष्ठुरदुर्गहट्टभाण्डदुर्भोजनापक्वपाकयत्नकटकान्ननखनिकृन्तननदीलंघनसमुद्रस्नानब्राह्मणवृत्तिच्छेदनाभक्ष्यभक्षणानिमित्तभार्याविसर्जनब्राह्मणद्वेषद्विजभेदमित्रभेदस्त्रीपुरुषभेदस्थूलसूक्ष्मजीवहिंसनक्रूरकर्मानृतलुब्धकपिशुनचौरपाखंडनारीलंपटचाण्डालशवास्थिस्पर्शशृंजनभक्षणलशुनभक्षणमसूरान्नभक्षणमार्जारोच्छिष्टभोजनपतितपङ्क्तिभोजनपतितसंभाषणादीनाम् ॥ बालस्तेयऋणापाकरणानाहिताग्नितापक्रयपरिवेदभृतकाध्ययनादानभृतकाध्यापनपरदारपरवित्तवार्धुष्यस्त्रीशूद्रसनविट्क्षत्रघ्ननिंदार्थोपजीवननास्तिक्यव्रतलोपकुप्यपशुस्वाध्यायत्यागस्तेयायाज्ययाजनपितृमातृसुतत्यागतडागारामविक्रयकन्यासंदूषणपरिवेदकयाजनतत्कन्याप्रदानकौटिल्यव्रतलोपनस्वार्थक्रियारंभपरस्त्रीनिषेवणस्वाध्यायाग्निसुतत्यागबान्धवत्यागेन्धनार्थद्रुमच्छेदनस्त्रीहिंसौषधिजीवनहिंस्रयंत्रविधानव्यसनात्मविक्रयशूद्रप्रेष्यहीनयोनिनिषेवणानाम् ॥ भ्रमवासपरान्नपुष्टत्वासच्छास्त्राधिगमनाकराधिकारित्वभार्याविक्रयाश्चोपपातकानाम् ॥ तथैकादशाहादिश्राद्धान्नभोजनदग्धदत्तान्नदग्धघृतादिभोजनापोशनरहितभोजनयज्ञोपवीतरहितान्नभोजनपरान्नभोजनगोमूत्रादिभक्षणमूत्रोच्छिष्टभक्षणनिषिद्धदेवरहितादिदूषितान्नभोजनगृहादिस्थलेच्छान्नभोजनपुंसवनसीमन्तोन्नयनादिभोजनजातकर्मादिभोजननीलवस्त्रपरिधानभोजनोच्छिष्टभोजनकृत्रिमपंक्तिभोजनपाण्डालकूपपानोदकपानचाण्डालस्पृष्टजलक्षीरादिपानद्विजद्रव्यापहरणथाद्यदिनगमनदिवामैथुनोन्मादकद्रव्यभक्षणसूर्योदयास्तशयनपतितादि-

दुष्टप्रतिग्रहप्रायश्चित्तद्रव्यप्रतिग्रहस्वनिषिद्धवृत्तिधनार्जनमिथ्याब्राह्मण-क्रोधोत्पादनबलात्कारितम्लेच्छादिसंसर्गम्लेच्छभाषणपरस्परानुरक्तद्वेषोत्पादनेन्द्रधनुःप्रदर्शनश्राद्धनिमंत्रितब्राह्मणानाह्वानदेवागारकृतेष्टशिलादिहरणव्रतभङ्गखरोष्ट्रादियानाशिवनिर्माल्यस्पर्शशिवद्रव्योपजीवन-विष्णुद्रव्योपजीवनोपाधिकत्रैवर्णिकदेवार्चनद्रव्याभिचारणकूटमंत्रकूटहोमकरणपूज्यापूजनापूज्यपूजनपरद्रव्यहरणशरणागतपरित्राणाकरणकृतोपकारविस्मरणविविधकपटविद्योपजीवनपरविवाहान्तरायकरणदेवर्षिद्विजनिन्दाकरणपरमसन्मानदूरीकरणगुणयुक्तस्यापमानकरणाकाल-भोजनादेशभोजनसार्वकालिकपरद्वेष्याभिनिवेशपरमार्थाचिन्तनयजन-याजनहोमदानान्तरायकरणादिसर्वपापानां विनाशार्थं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं देवब्राह्मणसवितृसूर्यनारायणसन्निधौ अमुकतीर्थे स्नानमहं करिष्ये ॥

॥ इति हेमाद्रिप्रोक्तस्नानसङ्कल्पः ॥

॥ ६० ॥ अथ दशविधस्नानानि ॥

तीर्थस्नाने तथा प्रायश्चित्तादिषु केचन दशविधस्नानानि कुर्वन्ति यथा-१ भस्मस्नानम्-ॐनमस्तेरुद्रमन्यवऽउतोतऽइषवेनमः ॥ बाहुभ्यामुततेनमः॥ १/१६ ॥ यथाऽग्निर्दहते भस्म तृणकाष्ठादिसञ्चयम् । तथा मे दह्यतां पापं कुरु भस्म शुचे शुचिम् ॥१॥-२ अथ मृत्तिकास्नानम्-ॐइदंविष्णुर्व्विचक्रमेत्रेधानिदधेपदम् ॥ समूढमस्यपाᳪसुरेस्वाहा-॥ १५/५ ॥ अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे । शिरसा धारयिष्यामि रक्षस्व मां पदे पदे ॥ उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना । मृत्तिके हर मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतम् ॥ मृत्तिके ब्रह्मपूताऽसि काश्यपेनाभिवन्दिता । मृत्तिके देहि मे पुष्टिं त्वयि सर्वं प्रतिष्ठितम्

॥ २ ॥ ३ अथ गोमयस्नानम्—ॐमानस्तोकेतनयेमानऽआयुषिमानो॰
गोषुमानोऽअश्वेषुरीरिषः ॥ मानोवीरान्रुद्रभामिनोवधीर्हविष्मन्तःस॰
दमित्त्वाहवामहे ॥ १६/१६ ॥ गोमये वसते लक्ष्मीः पवित्रा सर्वमङ्गला ।
स्नानार्थं संस्कृता देवी पापं मे हर गोमय ॥ अग्रमग्रं चरन्तीनामोष॰
धीनां वने वने । तासामृषभपत्नीनां पवित्रं कायशोधनम् ॥ यन्मे
रोगं च शोकं च तन्मे दहतु गोमय ॥३॥४ अथ पञ्चगव्यस्नानम्-ॐस॰
हस्रशीर्षापुरुषःसहस्राक्षःसहस्रपात् ॥ सभूमिंसर्वतस्पृत्त्वात्यतिष्ठद्द॰
शाङ्गुलम् ॥ ३/३१ ॥ गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधिसर्पिःसमन्वितम् । सर्वपा॰
पविशुद्ध्यर्थं पञ्चगव्यं पुनातु माम् ॥४॥५ अथ गोरजःस्नानम्-ॐआ॰
यङ्गौःपृश्निरक्रमीदसदन्मातरम्पुरः ॥ पितरञ्चप्रयन्त्स्वः ॥ ६/३ ॥
गवां खुरेण निर्धूतं यद्रेणु गगने गतम् । शिरसा तेन संलेपे महापा॰
तकनाशनम् ॥ ५ ॥ ६ अथ धान्यस्नानम्—ॐधान्यमसिधिनुहिदेवा॰
न्प्राणायत्वोदानायत्वाव्यानायत्वा ॥ दीर्घामनुप्रसितिमायुषेधान्देवोवः
सविताहिरण्यपाणिःप्रतिगृभ्णात्वच्छिद्रेणपाणिनाचक्षुषेत्वामहीना॰
म्पयोसि ॥ २०/१ ॥ धान्यौषधी मनुष्याणां जीवनं परमं स्मृतम् ।
तेन स्नानेन देवेश मम पापं व्यपोहतु॥६॥७ अथ फलस्नानम्-ॐयाः
फलिनीर्याऽअफलाऽअपुष्पायाश्चपुष्पिणीः ॥ बृहस्पतिप्रसूता॰
स्तानोमुञ्चन्त्वःहसः ॥ ८९/१२ ॥ वनस्पतिरसो दिव्यः फलपुष्पस्रुतः
सदा । तेन स्नानेन मे देव फलं लब्धमनंतकम् ॥७॥८ अथ सर्वौष॰
धीस्नानम्-ॐओषधयःसमवदन्तसोमेनसहराज्ञा ॥ यस्मैकृणोतिब्रा॰
ह्मणस्तःराजन्पारयामसि ॥ ९६/१२ ॥ औषध्यः सर्ववृक्षाणां तृणगुल्मल॰
तास्तु याः । दूर्वासर्षपसंयुक्ताः सर्वौषध्यः पुनन्तु माम् ॥८॥९ अथ
कुशोदकस्नानम्--ॐदेवस्यत्वासवितुःप्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्याम्पूष्णो॰

हस्ताभ्याम् ॥ $\frac{१०}{१}$ ॥ कुशमूले स्थितो ब्रह्मा कुशमध्ये जनार्दनः कुशाग्रे शङ्करो देवस्तेन नश्यतु पातकम् ॥९॥१० अथ हिरण्यस्नानम्—ॐ आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च ॥ हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् ॥ $\frac{३३}{४३}$ ॥ हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः । अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

॥ इति दशविधस्नानानि ॥

॥ ६१ ॥ अथ श्रावणीप्रयोगः ॥

श्रावणस्य पूर्णिमादिकाले प्रातः स्नानसन्ध्यादि नित्यकर्म विधाय गुरुः शिष्यगणैः सह ग्रामाद्बहिः प्राच्यामुदीच्यां वा नद्यादि रम्यं

---

१ पारस्करगृह्यसूत्रे—पौषस्य रोहिण्यां मध्यमायां वाष्टकायामध्यायानुत्सृजेयुरुदकान्तं गत्वाऽद्भिर्देवाँश्छन्दांसि वेदानृषीन्पुराणाचार्यान् गन्धर्वानितराचार्यान् संवत्सरं च सावयवं पितॄनाचार्यान् स्वांश्च तर्पयेयुः सावित्रीं चतुरनुद्रुत्य विरतास्म इति प्रब्रूयुः क्षपणं प्रवचनं च पूर्ववत्। तत्रैव-अर्धपञ्चमान्मासानधीयीरन्नुत्सृजेयुरर्धसप्तमासान्वाऽथ मासं च जपस्त्वभाक्ववीयुश्च यो नो धर्मं परापतत्। परिसङ्ख्यानि धर्मिणो विसृज्यानि विसृजामह इति त्रिरात्रं सहोपविश्य प्रतिष्ठेरन्। 'तथा च' अथातोऽध्यायोपाकर्मौषधीनां प्रादुर्भावे श्रवणेन श्रावण्यां पौर्णमास्याँ श्रावणस्य पञ्चम्याँ हस्तेन वाऽऽज्यभागाविष्ट्वाऽऽज्याहुतीर्जुहोति इति ॥ याज्ञवल्क्यः—अधीतवेदोपाकर्म श्रावण्यां श्रवणे च । हस्तेनौषध्यभावे वा पञ्चम्यां श्रावणस्य तु ॥ पौषमासस्य रोहिण्यामष्टकायामथापि वा । जलान्ते छन्दसां कुर्यादुत्सर्गविधिं बहिः ॥ त्र्यहं प्रेतेष्वनध्याय शिष्यर्त्विग्गुरुबन्धुषु । उपाकर्मणि चोत्सर्गे स्वशाखाश्रोत्रिये मृते ॥ रेणुकादीक्षित —पौषमासस्य रोहिण्यां कृष्णाष्टम्यामथापि वा । उदकान्तं समासाद्य वेदस्योत्सर्जनं बहिः ॥ मनु —पुष्ये तु छन्दसां कुर्याद्बहिरुत्सर्जनं द्विज । माघशुक्लस्य वा प्राप्ते पूर्वाह्णे प्रथमेऽहनि ॥ कात्यायन —उत्सर्गश्च तदा तिष्ये कुर्याद्प्रोष्ठपदेऽथवा ॥ खादिरगृह्ये —पुष्ये तूत्सर्जनं कुर्यादुपाकर्म दिनेऽथवा ॥ स्मृतिमहार्णवे सङ्क्रान्तिर्ग्रहणं वापि पौर्णमास्यां यदा भवेत्। उपाकृतिस्तु पञ्चम्यां कार्या वाजसनेयिभिः ॥ वाचस्पति—नित्ये नैमित्तिके जप्ये होमे यज्ञक्रियासु च । उपाकर्मणि चोत्सर्गे ग्रहदोषो न विद्यते ॥ 'वर्ज्यं काल'—रेणुकदीक्षितकारिकायाम्—सङ्क्रान्तौ ग्रहणे चैव सूतके मृतकेऽपि वा । गणस्नानं न कुर्वीत नारदस्य वचो यथा । (गणस्नानशब्देनोत्सर्गादि कर्म ।) २ गर्गः—उपाकर्मणि चोत्सर्गे प्रेतस्नाने तथैव च । चन्द्रसूर्यग्रहे नैव रजोदोषो न विद्यते ॥

जलाशयं गत्वा तत्तीरे शुभ्रां यथादेशसम्भवां वा मृदमार्द्रां गोमयं भस्म कुशान् तिलाक्षतान् सुरभीणि पुष्पाणि दूर्वाङ्कुरापामार्गयज्ञोपवीतादिसर्वां श्रावणीसामग्रीं सम्पाद्य ऋषिस्थापनार्थं पीठं श्वेतवस्त्रादिकं च पूजनार्थं गन्धपुष्पादिपूजासम्भारं च सम्पाद्य मृल्लेपनपूर्वकं प्रक्षालितहस्तपादः प्राङ्मुख उदङ्मुखो वा सपवित्रकरो गुरुः कृतपञ्चगव्यादियुक्तैः शिष्यैः सहाचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य सर्वैः सह सङ्कल्पं कुर्यात्॥ यथा—सङ्कल्पः—अधीतानामध्येष्यमाणानां चाध्यायानां स्थापनविच्छेदकोशघोषणदन्ताविद्युतिदुर्बुद्धुतोच्चारितवर्णानां पूर्वसवर्णानां गलोपलम्बितविहृतोच्चारितवर्णानां पूर्वसवर्णानां श्लिष्टास्पष्टवर्णविघट्टनादिभिः पठितानां श्रुतीनां यथातयामत्वं तत्परिहारार्थम् अष्टम्यादनध्यायाध्ययने रथ्यासञ्चरतः शूद्रस्य शृण्वतोऽध्ययने म्लेच्छान्त्यजादेः शृण्वतोऽध्ययने अशुचिदेशेऽध्ययने आत्मनोऽशुचित्वेऽध्ययने अक्षरस्वरानुस्वारपदच्छेदकण्डिकाव्यञ्जनह्रस्वदीर्घप्लुतकण्ठतालुमूर्द्धन्योष्ठयदन्त्यनासिकानुनासिकोरफजिह्वामूलीयोपध्मानीयोदात्तानुदात्तस्वरितादीनां व्यत्ययेनोच्चारे माधुर्याक्षरव्यक्तिहीनत्वाद्यनेकमत्ययवायपरिहारपूर्वकं सर्वस्य वेदस्य सवीर्यत्वसम्पादनद्वारा यथावत्फलप्राप्त्यर्थं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं सशिष्योऽहं शुक्लयजुर्वेदोत्सर्गोपाकरणं करिष्ये (अत्रावसरे हेमाद्रिप्रोक्तस्नानसंकल्पः कर्तव्यश्चेत् (२५९) पत्रे द्रष्टव्यः) इति सङ्कल्प्य गुरुः शिष्यैः सह 'उभाकवी'त्युच्चैः पठेत्॥तद्यथा"—ॐ उभा कवी युवा यो न धर्मः परापतत् । परिसख्यानि धर्मिणो विसख्यानि विसृजामहे ॥ "इति मन्त्रं पठित्वा यथाक्रमेण सर्वे गुरोरभिवादनं कुर्युः। (पुनश्च देशकालौ स्मृत्वा सङ्कल्पयेद्यथा) 'सङ्कल्पः'—अध्यायोत्सर्गकर्मनिमित्तं गणस्नानमहं करिष्ये ॥ पुनश्च ब्रह्मादिस्तम्बपर्यन्तेषु याः क्रियास्तत्र

विवस्वान् ऋषिः सर्वाणि यजूंषि सर्वाणि छन्दांसि प्रजापतिलिङ्गोक्ता देवताः स्नानादिसर्वकर्मसु विनियोगः। इत्युक्त्वा 'स्नानानुज्ञां' प्रार्थयेत्। यथा—नमोऽस्तु देवदेवाय शितिकण्ठाय वेधसे। रुद्राय चापहस्ताय दण्डिने चक्रिणे नमः॥ सरस्वती च गायत्री वेदमाता गरीयसी। सन्निधात्री भव त्वं च सर्वपापप्रणाशिनी॥ यद्वा सागरनिर्घोष दण्डहस्तासुरान्तक॥ जगत्स्रष्टर्जगन्मित्र नमामि त्वां सुरान्तक॥ तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय कल्पान्तदहनोपम। भैरवाय नमस्तुभ्यमनुज्ञां दातुमर्हसि॥ नमामि गङ्गे तव पादपङ्कजं सुरासुरैर्वन्दितदिव्यरूपम्। भुक्तिं च मुक्तिं च ददासि नित्यं भावानुसारेण सदा नराणाम्॥ उत्तिष्ठन्तु महाभूता ये भूता भूमिवासिनः॥ भूतानामवरोधेन स्नानकर्म समारभे॥ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता तीर्थरूपकाः॥ ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया॥ पुष्कराद्यानि तीर्थानि गङ्गाद्याः सरितस्तथा॥ आगच्छन्तु पवित्राणि स्नानकाले सदा मम॥ त्वं राजा सर्वतीर्थानां

---

१ नद्यादौ नित्यस्नानम्—स्नानकर्ता घटिकाद्वयावशिष्टायां रात्र्यां मृदम् आर्द्रं गोमयं कुशान्तिलान्सुरभीणि पुष्पाणि भस्म चादाय नद्यादितीर्थनिकटे गत्वा आनीतसम्भारान् पृथक्संस्थाप्य हस्तौ पादौ च प्रक्षाल्य कुशपवित्रं धारयेत्॥ ॐ पवित्रेस्थो० अनेन मन्त्रेण कुशपवित्रं धृत्वा पश्चात् बद्धत्रिकच्छशिखः यज्ञोपवीती जानूर्ध्वजले तिष्ठन् अन्यथा तूपविश्याचमनं कुर्यात्॥ तत्प्रकारः—बाहू जान्वन्तरे कृत्वा मुक्ताङ्गुष्ठकनिष्ठिकेन दक्षिणहस्तेन फेनबुद्बुदवर्जं स्वच्छं माषमज्जनपरिमितं जलमादायाङ्गुष्ठमूलस्थब्राह्मेण तीर्थेन शब्दमकुर्वन् त्रिः पिबेत्। पश्चात् प्रवाहाभिमुखो वा सूर्याभिमुखः सङ्कल्पं कुर्यात्—अद्यपूर्वोच्चारित एवंगुणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं मम इह जन्मनि जन्मान्तरे वा कायिकवाचिकमानसिकसांसर्गिकज्ञाताज्ञातस्पर्शास्पर्शभुक्ताभुक्तपीतापीतादिसकलपातकनिरासपूर्वं स्मासनभोजनशयनगमनादिस्वनृतभाषणादिदोषनिरासद्वाराश्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थमभुक्तार्थे प्रातःस्नानमहं करिष्ये॥ इति सङ्कल्प्य उत्तरोक्तक्रमेण स्नानानुज्ञामारभ्य स्नानाङ्गतर्पणपर्यन्तं नद्यादौ नित्यस्नानं कुर्यात्॥

२ (इमं मन्त्रं समुच्चार्य तीर्थस्नानं समाचरेत्। अन्यथा तत्फलस्यार्धं तीर्थेशो हरति ध्रुवम्)

त्वमेव जगतः पिता । याचितं देहि मे तीर्थं तीर्थराज नमोऽस्तु ते ॥ अपामधिपतिस्त्वं च तीर्थेषु वसतिस्तव । वरुणाय नमस्तुभ्यं स्नानानुज्ञां प्रयच्छ मे ॥ अधिष्ठात्र्यश्च तीर्थानां तीर्थेषु विचरन्ति याः। देवतास्ताः प्रयच्छन्तु स्नानाज्ञां मम सर्वदा ॥ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति । कावेरि नर्मदे सिन्धो जलेऽस्मिन्सन्निधिं कुरु ॥ इति संप्रार्थ्य अधोलिखितमंत्रेण न्युब्जाञ्जलिहस्तेन तीर्थाभिमंत्रणं कुर्यात् । ॐ उ॒रुᳫ हि राजा॒ वरु॑ण॒श्च॒कार॒ सूर्या॑य॒ पन्था॒मन्वे॑त॒वा उ॑ ॥ अ॒पदे॒ पादा॒ प्रति॑धातवेऽकरु॒ताप॑व॒क्ता हृ॑दया॒विध॑श्चित् ॥ नमो॒ वरु॑णाया॒भिष्ठि॑तो॒ वरु॑णस्य॒ पाश॑ः ॥ २३/८ ॥ इत्यभिमन्त्र्य पश्चाज्जलावर्तनम्—ॐ येते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः। तेभिर्नो अद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः । (पारस्करगृह्यसू०) ॥ इतिमन्त्रेण जलं दक्षिणहस्ताङ्गुलिभिर्दक्षिणावर्तं त्रिवारं भ्रामयेत् ॥ पूर्णाञ्जलिनाऽपां ग्रहणम्॥ ॐ सु॒मि॒त्रि॒या न॒ऽआप॒ऽओष॑धयᳫ सन्तु ॥ २२/६ ॥ इतिमन्त्रेणजलाञ्जलिं गृहीत्वा ॐ दु॒र्मि॒त्रि॒यास्तस्मै॑ सन्तु॒ यो॒ऽस्मान्द्वेष्टि॒ यं च॑ व॒यं द्वि॒ष्मः ॥ २२/६ ॥ इति मन्त्रेणाञ्जलिस्थमुदकं स्वशत्रून्मनसा विचिन्त्य तन्नाशार्थं स्ववामभागे तीर्थतटे क्षिपेत् ॥ द्वेष्ट्रभावे कामादीन्स्मृत्वाऽञ्जलिं प्रक्षिपेत् ॥ मृत्तिकामादाय तस्यास्त्रिभागान्कृत्वा प्रथमभागं वामहस्तेन गृहीत्वा तेन नाभेरधः कटिप्रदेशमनुलेपयेत्। हस्तं प्रक्षाल्य पुनस्तेनैवहस्तेन द्वितीयभागेन बस्तिम् ऊरू जङ्घे चरणौ करौ च प्रत्येकं तूष्णीं त्रिस्त्रिरनुलिप्य पुनर्हस्तं प्रक्षाल्याचम्य तीर्थोदकं नमस्कुर्यात्।।ततस्तृतीयभागमादाय-इदं विष्णुर्वि०।१५/५। इतिमंत्रेण तृतीयभागेन दक्षिणहस्तेन ललाटादिनाभिपर्यन्तानिगात्राण्युपलिप्य हस्तं प्रक्षाल्याचम्य तीर्थोदकं नमस्कुर्यात् ॥ अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे । उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना॥मृत्तिके हर मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतम् ॥ मृत्तिके ब्रह्मपूतासि काश्यपेनाभिवन्दिता।

त्वया हतेन पापेन गच्छामि परमां गतिम्॥इति संप्रार्थ्य नाभिमात्रं तीर्थजलं प्रविश्य सूर्याभिमुखः स्थित्वा स्नायात्-ॐआपोऽअस्मान्मातरः शुन्धयन्तु घृतेननोघृतप्प्वःपुनन्तु ॥ विश्श्वᳯहिरिप्प्रम्प्रवहन्तिदेवी?॥ ३/२॥ इतिमन्त्रेण निमज्य पुनः-ॐउदिदाब्भ्यᳯशुचिरापूतऽएमि ॥ ३/२ ॥ इतिमंत्रेण द्वितीयवारं निमज्य पुनस्तूष्णीं निमज्योन्मज्याचामेत्। ततो गोमयमादाय तस्य त्रिभागान्कृत्वा प्रथमभागं वामहस्तेन गृहीत्वा तेन नाभेरधः कटिप्रदेशमनुलेपयेत्।हस्तं प्रक्षाल्य पुनस्तेनैव हस्तेन द्वितीयभागेन बस्ति ऊरू जङ्घे चरणौ करौ च प्रत्येकं तूष्णीं त्रिस्त्रिरनुलिप्य पुनर्हस्तं प्रक्षाल्याचम्य तीर्थोदकं नमस्कुर्यात् ॥ पुनस्तृतीयभागमादाय ॥ अग्रमग्रं चरन्तीनामोषधीनां वनेवने । तासां वृषभपत्नीनां पवित्रं कायशोधनम्॥ तन्मे रोगांश्च शोकांश्च पापं मे हर गोमय ॥ इति मंत्रेण गोमयमभिमंत्र्य॥ ॐमानस्तोकेतनये० ॥ इतिमंत्रेण तृतीयभागेन दक्षिणहस्तेन ललाटादिनाभिपर्यन्तानि गात्राण्युपलिप्य क्षालयेत् ॥ ततो हस्ते भस्मादाय ॥ ॐअग्निरिति भस्म वायुरिति भस्म जलमिति भस्म स्थलमिति भस्म व्योमेति भस्म सर्वᳬहवा इदं भस्म मन एतानि चक्षूᳬषि भस्मानि ॥ इतिमंत्रेण भस्माभिमंत्र्य ॥ॐप्रसद्यभस्मनायोनिमपश्चपृथिवीमग्ने ॥ सᳯसृज्ज्यमातृभिष्ट्वञ्ज्योतिष्प्मान्पुनरासदᳯ ॥ ३८/११॥ इतिमंत्रेण ललाटाद्यङ्गेषु भस्मलेपनं कुर्यात् ॥ ततो वक्ष्यमाणैरष्टभिर्मंत्रैः प्रतिमंत्रं कुम्भमुद्रया दक्षिणचुलुकेन वा शिरोऽभिषिञ्चेत् ॥ ॐइमम्मेवरुणश्श्रुधीहवमद्द्याचमृडय ॥ त्वामवस्युराचके ॥ १/२१॥ तत्त्वायामि० ॥ २/२१ ॥ त्वन्नोऽअग्नेवरुणस्यव्विद्वान्देवस्यहेडोऽअवयासिसी-

---

१ इदं भस्मानुलेपनं क्षेपकं कात्यायनपरिशिष्टसूत्रे नोक्तम्॥ २ दक्षाङ्गुष्ठं पराङ्गुष्ठे क्षिप्त्वा हस्तद्वयेन तु । सावकाशामेकमुष्टिं कुर्यात्सा कुम्भमुद्रिका ॥

ष्ट्वाꣳ॥यजिष्ठोवह्नितमꣳशोशुचानोविश्वाद्वेषाꣳसिप्रमुमुग्ध्यस्म-
त् ॥ ३/२१ ॥ सत्वन्नोऽअग्नेवमोभवोतीनेदिष्ठोऽअस्याऽउषसोव्युष्टौ ॥
अवयक्ष्व नोव्वरुणꣳरराणोवीहिमृडीकꣳसुहवोनऽएधि ॥ ४/२१ ॥ मापोमौ-
षधीर्हिꣳसीर्द्धाम्नोधाम्नोराजँस्ततोव्वरुणनोमुञ्च ॥ यदाहुरघ्न्याऽइ-
तिव्वरुणेतिशपामहेततो व्वरुणनोमुञ्च ॥ २२/६ ॥ उदुत्तमं व्वरुणपाशमस्म-
दवाधमंव्विमध्यमꣳश्रथाय ॥ अथाव्वयमादित्यव्व्रतेतवानागसोऽअ-
दितयेस्याम ॥ १२/१२ ॥ मुञ्चन्तुमाशपथ्यादथोव्वरुण्यादुत ॥ अथोयमस्य-
पड्वीशात्सर्वस्माद्देवकिल्विषात् ॥ ९०/१२ ॥ अवभृथनिचुम्पुणनिचेरुरसि-
निचुम्पुणः ॥ अवदेवैर्देवकृतमेनोयासिषमवमर्त्यैर्मर्त्यकृतम्पुरुराव्णो-
देवरिषस्पाहि ॥ ४८/३ ॥ एतैर्मन्त्रैरभिषेचनं कृत्वा पश्चान्निमज्योन्मज्याऽऽ-
चामेत् ॥ ततो वक्ष्यमाणमंत्रैः प्रतिमंत्रं कुशत्रयेण सजलेन नाभिदक्षि-
णपार्श्वमारभ्य पाणिं शिर उपरि नीत्वा नाभिवामपार्श्वपर्यन्तं प्रदक्षि-
णमात्मानं पावयेत् ॥ आपोहिष्ठा० ॥ ५०/११ ॥ योवःशिवतमो० ॥ ५१/११ ॥
तस्माऽअरङ्ग० ॥ ५२/११ ॥ इदमापꣳप्रवहतावद्यञ्चमलञ्चयत् ॥ यच्चा-
भिदुद्रोहानृतंयच्चशेपेऽअभीरुणम् ॥ आपोमातस्मादेनसꣳपवमानश्च-
मुञ्चतु ॥ १७/६ ॥ हविष्मतीरिमाऽआपोहविष्माँ२ऽआविवासति ॥
हविष्मान्देवोऽअध्वरोहविष्माँ२ऽअस्तुसूर्यः ॥ २३/६ ॥ देवीरापोऽअ-
पान्नपाद्योवऽऊर्मिर्हविष्यऽइन्द्रियावान्मदिन्तमꣳ । तन्देवेभ्योदेव-
त्रादत्तशुक्रपेभ्योयेषाम्भागस्थस्वाहा ॥ २७/६ ॥ कार्षिरसिसमुद्रस्य-
त्वाक्षित्याऽउन्नयामि ॥ समापोऽअद्भिरग्मतसमोषधीभिरोषधीꣳ
॥ २८/६ ॥ अपोदेवामधुमतीरगृभ्णन्नूर्जस्वतीराजस्वश्चितानाꣳ । याभि-
र्म्मित्रावरुणावभ्यषिञ्चन्याभिरिन्द्रमनयन्नत्यरातीꣳ ॥ ३०/१० ॥ द्रुपदा-
दिवमुमुचानःस्विन्नःस्नातोमलादिव ॥ पूतम्पवित्रेणेवाज्यमापः शु-

न्धन्तुयैनस८ ॥ २०/२० ॥ शन्नोदेवी० ॥ १२/३६ ॥ अपाᳫँरसमुद्वयसᳫँसूर्य्ये सन्तᳫँसमाहितम् ॥ अपाᳫँरसस्ययोरसस्तंवोगृह्णाम्म्युत्तमर्मुपयामगृहीतोसीन्द्रायत्वाजुष्टंगृह्णाम्म्येपतेयोनिरिन्द्रायत्वाजुष्टतमम् ॥ ३/९ ॥ अपोदेवीरुपसृजमधुमतीरयक्ष्मायप्रजाभ्यः ॥ तासामास्थानादुज्जिहतामोपधयᳫँसुपिप्पला? ॥ ३८/११ ॥ पुनन्तुमापितरᳫँसोम्म्यासः पुनन्तुमापितामहा?पुनन्तुप्रपितामहा८ ॥ पवित्त्रेणशतायुषा ॥ पुनन्तुमापितामहा?पुनन्तुप्रपितामहा८ ॥ पवित्त्रेणशतायुषाविश्श्वमायुर्व्यश्नवै ॥ ३७/१९ ॥ अग्नऽआयूᳫँषिपवसऽआसुवोर्ज्जमिषञ्चन८ ॥ आरेबाधस्वदुच्छुनाम् ॥ ३८/१९ ॥ पुनन्तुमादेवजना?पुनन्तुमनसाधियः ॥ पुनन्तुविश्श्वाभूतानिजातवेद८पुनीहिमा ॥ ३९/१९ ॥ पवित्त्रेणपुनीहिमाशुक्क्रेणदेवदीद्यत् ॥ अग्नेक्क्रत्वाक्क्रतूँर ऽरनु ॥ ४०/१९ ॥ यत्तेपवित्त्रमर्च्चिष्यग्नेविततमन्तरा ॥ ब्रह्मतेनपुनातुमा ॥ ४१/१९ ॥ पवमान८सोऽअद्यनः पवित्त्रेणविचर्षणि८ ॥ य?पोतासपुनातुमा ॥ ४२/१९ ॥ उभाभ्यान्देवसवित८पवित्त्रेणसवेनच ॥ मांपुनीहिविश्श्वतः ॥ ४३/१९ ॥ वैश्श्वदेवीपुनतीदेव्व्यागाद्यस्यामिमाबह्व्यस्तन्वोव्वीतपृष्ठा८ ॥ तयामदन्त८सधमादेषुवयᳫँस्यामपतयोरयीणाम् ॥ ४४/१९ ॥ एभिर्मंत्रैः सजलेन कुशत्रयेण नाभिदक्षिणपार्श्वमारभ्य शिरोवधि नीत्वा नाभिवामपार्श्वपर्यन्तं प्रदक्षिणमात्मानं पावयेत् ॥ पश्चादुदकं स्पृशेत् ॥ ततो मार्जनं तस्य मंत्राः—ॐचित्पतिर्म्मा पुनात्वच्छिद्रेण पवित्त्रेणसूर्य्यस्यरश्मिभिः ॥ तस्यतेपवित्त्रपतेपवित्त्रपूतस्ययत्त्कामᳫँपुनेतच्छकेयम् ॥ ४/४ ॥ इतिमंत्रेण नाभेरूर्ध्वं मार्जयित्वा ॥ ततो नाभेर्मध्ये मार्जनम्-व्वाक्पतिर्म्मापुनात्वच्छिद्रेणपवित्त्रेणसूर्य्यस्यरश्मिभिः ॥ तस्यतेपवित्त्रपतेपवित्त्रपूतस्ययत्त्कामᳫँपुनेतच्छकेयम् ॥ ४/४ ॥ इति मंत्रेण नाभेर्मध्यं मार्जयित्वा ततो नाभेरधः मार्जनम्-देवोमासविता पुनात्व-

च्छिद्रेणपवित्रेणसूर्य्यस्यरश्मिभिः॥ तस्यंतेपवित्रपतेपवित्रपूतस्ययत्कामःपुनेतच्छकेयम् ॥ ४/४ ॥ इतिमंत्रेण नाभेरधो मार्जयित्वा ततः सर्वाङ्गे मार्जनम्-ॐचित्पतिर्म्मापुनातुवाक्पतिर्म्मापुनातुदेवोमासविता पुनात्वच्छिद्रेणपवित्रेणसूर्य्यस्यरश्मिभिः॥ तस्यंतेपवित्रपतेपवित्रपूतस्ययत्कामःपुनेतच्छकेयम् ॥ ४/४ ॥ इतिसंपूर्णमन्त्रेण सर्वाङ्गं मार्जयित्वा ततोऽधोलिखितमंत्रैः कुशैः पुनर्मार्जयेत् ॥ यथा-ॐद्रुपदादिव० ॐपुनातु ॥ ॐतत्सवितु० ॐभूः पुनातु ॥ ॐत्र्यम्बकं० ॐभुवःपुनातु ॥ ॐसस्यम्बो० ॐस्वः पुनातु ॥ ॐमापोमौष० ॐमहःपुनातु ॥ ॐदुर्मित्रियं० ॐजनः पुनातु ॥ मुञ्चन्तुमा० ॐतपःपुनातु ॥ ॐअवभृथनि० ॐसत्यं पुनातु ॥ ॐतत्सवितुर्व० सर्वं पुनातु ॥ इति कुशैर्मार्जयित्वा ॥ अपामार्गेण मार्जनम् ॥ ॐअपाघमपकिल्बिषमपकृत्यामपोरपः ॥ अपामार्गत्वमस्मदपदुःष्वप्न्यꣳसुव ॥ ३/१२ ॥ इति मंत्रेणापामार्गपत्रैर्भिर्मार्जयेत् ॥ ततो दूर्वाङ्कुरेण मार्जनम्-ॐकाण्डात्काण्डात्प्ररोहन्तीपरुषःपरुषस्परि ॥ एवानोदूर्वेप्रतनुसहस्रेणशतेनच ॥ २/१३ ॥ इति मन्त्रेण दूर्वाभिस्त्रिभिर्मार्जयेत् ॥ ततः अन्तर्जले मग्नोऽनुच्छ्रसन्नघमर्षणं कुर्यात् ॥

ॐद्रुपदादिवमुमुचानः स्विन्नः स्नातोमलादिव ॥ पूतम्पवित्रेणेवाज्य-मापः शुन्धन्तु मैनसः ॥ २०।२० ॥ इति मन्त्रं त्रिः पठेत् ॥ पश्चात्स्नानाङ्गत-र्पणम् ॥ प्रथमं देवतर्पणम्—पूर्वाभिमुखः सन् कुशत्रयं गृहीत्वा तदग्रैः सव्येन देवतीर्थेन ॐकारपूर्वकं देवेभ्य एकैकमञ्जलिं दद्यात् । ॐब्रह्मा-दयो देवास्तृप्यन्ताम् । ॐभूर्देवास्तृप्यन्ताम् ॥ ॐभुवर्देवास्तृप्यन्ताम् । ॐस्वर्देवास्तृप्यन्ताम् । ॐभूर्भुवःस्वर्देवास्तृप्यन्ताम् ॥ द्वितीयम् ऋषितर्प-णम्—उदगग्रान् दर्भान् धृत्वा तदग्रैर्निवीती प्रजापतितीर्थेन ॐकार-पूर्वकम् ऋषिभ्यो द्वौद्वावञ्जली दद्यात् । ॐसनकादिद्वैपायनादयः ऋष-यस्तृप्यन्ताम् । ॐभूर्ऋषयस्तृप्यन्ताम् । ॐभुवर्ऋषयस्तृप्यन्ताम् । ॐस्वर्ऋषयस्तृप्यन्ताम्॥ ॐभूर्भुवःस्वर्ऋषयस्तृप्यन्ताम्॥ तृतीयं पितृत-र्पणम्-मूलाग्रान् दक्षिणाग्रमूलान् दर्भान् धृत्वा अपसव्येन पितृतीर्थेन ॐकारपूर्वकं पितृभ्यस्त्रींस्त्रीन् तिलमिश्राञ्जलीन् दद्यात् । ॐ कव्यवाड-नलादयः पितरस्तृप्यन्ताम् । ॐभूःपितरस्तृप्यन्ताम् । ॐभुवःपितर-स्तृप्यन्ताम् । ॐस्वःपितरस्तृप्यन्ताम् । ॐभूर्भुवःस्वःपितरस्तृप्यन्ताम् । तत आचम्य सव्येन तिलमिश्राञ्जलिं गृहीत्वा यक्ष्मतर्पणं कुर्यात् ॥ तद्यथा—यन्मया दूषितं तोयं शारीरमलसंभवात् । तस्य पापस्य शुद्ध्यर्थं यक्ष्मैतत्ते तिलोदकम् ॥ इति मन्त्रेण तीर्थतटे तिलमिश्रजला-ञ्जलिं निःक्षिपेत् ॥ पश्चात् शिखोदकत्यागः—लतागुल्मेषु वृक्षेषु पितरो ये व्यवस्थिताः । ते सर्वे तृप्तिमायान्तु मयोत्सृष्टैः शिखोदकैः ॥ इति मंत्रेण स्वदक्षिणभागे शिखाग्रं निष्पीडयेत्॥ततो जलाद्बहिर्निष्क्रम्य अहते श्वेतधौतवाससी परिधाय भस्मादि धारयेत् ॥ ततो दर्भासनादौ प्राङ्मुख उदङ्मुखो वा उपविश्य भस्मगोपीचन्दनादि धृत्वा पवित्रपाणिराचम्य मध्याह्नसन्ध्यां कुर्यात् ॥ ततः सूर्योपस्थानं मण्डलब्राह्मणं च सम्पाद्य

(तच्च ९४-९५ पृष्ठे द्रष्टव्यम्)॥ ततो ब्रह्मयज्ञं देवर्षिमनुष्यपितृतर्पणं च कुर्यात् ॥(तच्च ९८-१०२) पृष्ठे द्रष्टव्यम्)॥ततः सप्तर्षिपूजनं कुर्यात् ॥

॥ ६२ ॥ अरुन्धतीयाज्ञवल्क्यसहितसप्तर्षिपूजनप्रयोगः ॥

तत्रादौ अरुन्धतीयाज्ञवल्क्यसहिता गौतमभरद्वाजविश्वामित्रजमदग्निवसिष्ठकश्यपात्रयः एते सप्तर्षयः अपामार्गमिश्रितैस्त्रिभिस्त्रिभिः कुशैः पृथक् पृथक् गायत्रीं पठित्वा ब्रह्मग्रन्थियुताः कार्याः ॥ ते च पीठे नवं सदशं धौतं वस्त्रं प्रसार्य तस्मिन्प्रागग्रा उदगग्रा वा स्थापनीयाः। तत्रादौ ऋचं वाचमिति शान्त्यध्यायं (८८ पृष्ठे द्रष्टव्यः) पठित्वा ॥ आचम्य प्राणानायम्य ॥ हस्ते जलमादाय- अद्यपूर्वो० तिथौ श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थम् अध्यायोत्सर्गोपाकर्माङ्गं विष्णुपूजनपूर्वकम् अरुन्धतीयाज्ञवल्क्यसहितानां सप्तर्षीणामावाहनप्रतिष्ठापूजनमहं करिष्ये । तदङ्गत्वेन दिग्रक्षणकलशार्चनं शङ्खघण्टादीपपूजनं गणपतिपूजनं च करिष्ये । इति संकल्प्य दिग्रक्षणादि गणपतिपूजनान्तं कर्म कृत्वा विष्णुं च षोडशोपचारैः संपूज्य ततः सप्तर्षीनावाह्य षोडशोपचारैः सम्पूजयेत् । यथा-ॐ भूर्भुवः स्वः गौतमाय नमः गौतमम् आवाहयामि स्थापयामि । भो गौतम इहागच्छ इह तिष्ठ पूजां गृहाण मम संमुखः सुप्रसन्नो वरदो भव ॥ १ ॥ ॐ भू० भरद्वाजाय नमः भरद्वाजम् आ० स्था० । भो भ० इ० इ० पू० मम सं० सु० व० ॥ २ ॥ ॐ भू० विश्वामित्राय नमः विश्वामित्रम् आ० स्था० । भो वि० इ० इ० पू० मम सं. सु० व० ॥ ३ ॥ ॐ भू० जमदग्नये नमः जमदग्निम् आ० स्था० । भो ज० इ० इ० पू० मम सं० सु० व० ॥ ४ ॥ ॐ भू० वसिष्ठाय नमः वसिष्ठम् आ० स्था० । भो व० इ० इ० पू० मम सं० सु० व० ॥५॥ ॐ भू० कश्यपाय नमः कश्यपम् आ० स्था० ।

भो क० इ० इ० पू० मम सं० सु० व० ॥ ६ ॥ ॐ भू० अत्रये नमः अत्रिम् आ० स्था० ॥ भो अ० इ० इ० पू० मम सं० सु० व० ॥ ७ ॥ ॐ भू० अरुन्धत्यै नमः अरुन्धतीम् आ० स्था० । भो अ० इ० इ० पू० मम संमुखी सुप्रसन्ना वरदा भव ॥ ८ ॥ ॐ भू० याज्ञवल्क्याय नमः याज्ञवल्क्यम् आ० स्था० ॥ भो याज्ञ० इ० इ० पू० मम सं० सु० व० ॥ प्रतिष्ठामन्त्रः—ॐ मनोजूति० । ॐ एषवैप्रतिष्ठानाम यज्ञोयत्रैतेनयज्ञेनयजन्तेसर्व्वमेवप्रतिष्ठितम्भवति ॥ ॐ इमामेवगौतमभरद्वाजावयमेवगौतमोऽयंभरद्वाजऽइमावेवविश्वामित्रजमदग्नीऽअयमेवविश्वामित्रोऽयंजमदग्निरिमावेववसिष्ठकश्यपावयमेववसिष्ठोऽयंकश्यपोवागेवात्रिर्व्वाचाह्यन्नमद्यतेऽत्तिर्हवैनामैतद्यदत्रिरितिसर्व्वस्यात्ताभवतिसर्व्वमस्यान्नंभवतियऽएवंवेद ॥ अरुंधतीयाज्ञवल्क्यसहिताः सप्त ऋषयः सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तु ॥ हस्ते जलमादाय—सहस्रशीर्षेति षोडशर्चस्य पुरुषसूक्तस्य नारायणः पुरुष ऋषिः जगद्बीजपुरुषो देवता आद्यानां पञ्चदशानामनुष्टुप् अन्त्यायास्त्रिष्टुप् न्यासपूजनाभिषेकेषु विनियोगः ॥ देहन्यासाः—ॐसहस्रशीर्षा० वामकरे ॥ १ ॥ पुरुषऽए० दक्षिणकरे ॥ २ ॥ एतावानस्य० वामपादे ॥ ३ ॥ ॐत्रिपादूर्ध्व० दक्षिणपादे ॥ ४ ॥ ततोविराड० वामजानौ ॥ ५ ॥ तस्माद्यज्ञात्सर्व्वहुतदंसम्भृतं० दक्षिणजानौ ॥ ६ ॥ तस्माद्यज्ञात्सर्व्वहुतऽऋचः० वामकट्याम् ॥ ७ ॥ तस्मादश्वा० दक्षिणकट्याम् ॥ ८ ॥ तंयज्ञं० नाभौ ॥ ९ ॥ यत्पुरुषं० हृदये ॥१०॥ ब्राह्मणोस्य० वामकुक्षौ ॥ ११ ॥ चन्द्रमामनसो० दक्षिणकुक्षौ ॥ १२ ॥ नाभ्याऽआसी० कण्ठे ॥ १३ ॥ यत्पुरुषेण० मुखे ॥ १४ ॥ सप्तास्यासन्० नेत्रयोः ॥१५॥ यज्ञेनयज्ञम० मूर्ध्नि ॥१६॥ इति देहन्यासाः ॥ पश्चात् देवन्यासांश्च कृत्वा विष्णोः षोडशोपचारैः पूजनं कुर्यात् ॥

ततः सप्तर्षिपूजनमारभेत ॥ सप्तर्षिध्यानम्—ॐ सप्तऽऋषयः प्रतिहिताः शरीरे सप्त रक्षन्ति सदमप्रमादम् ॥ सप्तापः स्वपतो लोकमीयुस्तत्र जागृतोऽअस्वप्नजौ सत्रसदौ च देवौ ॥ $\frac{५५}{३४}$ ॥ ॐ सहस्रशीर्षा० ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अरुंधतीयाज्ञवल्क्यसहितसप्तर्षिभ्यो नमः ध्यानपूर्वकमावाहनं समर्पयामि ॥ आसनम्—ॐ पुरुषऽएवे० ॥ ॐ भू० अरुन्धतीयाज्ञ० स० सप्त० नमः आसनम् समर्पयामि ॥ पाद्यम्—ॐ एतावानस्य०॥ ॐ भू० अरुंधतीयाज्ञ० सहितसप्त० नमः पाद्यं समर्पयामि ॥ अर्घ्यम्—ॐ त्रिपादूर्ध्व०॥ ॐ भू० अरुंधतीयाज्ञ० स० सप्त० नमः अर्घ्यं समर्पयामि॥ आचमनम्-ॐ ततो विराड०॥ ॐ भू० अरुंधतीयाज्ञ० स० सप्त० नमः आचमनीयं समर्पयामि ॥ स्नानम्—ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्व०॥ ॐ भू० अरुंधतीयाज्ञ० स० सप्त० नमः० स्नानं समर्पयामि॥ पञ्चामृतस्नानम्-ॐ पञ्चनद्यः सर०॥ ॐ भू० अरुंधतीयाज्ञ० स० सप्त० नमः पञ्चामृतस्नानं स० ॥ गन्धोदकस्नानम्—ॐ त्वाङ्गन्धर्वा०॥ ॐ भू० अरुंधतीयाज्ञ० स० सप्त० नमः गन्धोदकस्नानं स० ॥ उद्वर्तनस्नानम्—ॐ अꣳशुनाते० ॥ ॐ भू० अरुंधतीयाज्ञ० स० सप्त० नम० उद्वर्तनस्नानं सम० ॥ ततो गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि ॥ उत्तरे निर्माल्यं विसृज्य॥ पुनः गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्प्य पुरुषसूक्तेनाभिषेकं कुर्यात् ॥ ॐ भू० अरुं० याज्ञ० स० सप्त० नमः महाभिषेकस्नानं समर्पयामि ॥ वस्त्रम्—ॐ तस्माद्यज्ञा० ॥ ॐ भू अरुं० याज्ञ० स० सप्त० नमः वस्त्रं स० ॥ यज्ञोपवीतम्—ॐ तस्मादश्वा० ॥ ॐ भू० अरुं० याज्ञ० स० सप्त० नमः यज्ञोपवीतं स० ॥ गन्धः०—ॐ तंयज्ञं० ॥ ॐ भू० अरुं० याज्ञ० स० सप्त० नमः गन्धं स० ॥ अक्षताः—ॐ अक्षन्नमी० ॥ ॐ भू० अरुं० याज्ञ० स० सप्त० नमः अक्षतान् स० ॥ पुष्पाणि—ॐ

सत्पुरुषं० ॥ ॐ भू० अरुं० याज्ञ० स० सप्त० नमः ऋतुकालोद्भव-पुष्पाणि स० ॥ तुलसीदलम्—ॐ विष्णोर्कर्माणि०॥ ॐ भू० अरुं० याज्ञ० स० सप्त० नमः तुलसीदलं स० ॥ सौभाग्यद्रव्यम्—ॐ अहिरिवभोगैः०॥ ॐ भू० अरुं० याज्ञ०स०सप्त०नमः सौभाग्यद्रव्याणि स०॥धूपः-ॐ ब्राह्मणो०॥ ॐ भू० अरुं०याज्ञ०स०सप्त०नमः धूपमाघ्रापयामि॥दीपः—ॐ चन्द्रमा०॥ॐभू०अरुं०याज्ञ०स०सप्त०नमः दीपं दर्शयामि॥ नैवेद्यम् —ॐ नाभ्याऽआ० ॥ अरुंधतीयाज्ञ० स० सप्त० नमः नैवेद्यं स० ॥ नैवेद्ये तुलसीदलं निधाय गायत्रीमन्त्रेण सम्प्रोक्ष्य। धेनुमुद्रयाऽमृतीकृत्य॥ॐप्राणाय स्वाहा। ॐअपानाय०। ॐव्यानाय०। ॐ समानाय०। ॐ उदानाय० ॥५॥ नैवेद्यमध्ये पानीयं स० । उत्तरापोशानं हस्तप्रक्षालनं मुखप्रक्षालनं करोद्वर्तनार्थे गन्धं च स० ॥ फलानि—ॐ याःफलि० ॥ ॐ भू० अरुंधतीयाज्ञवल्क्यसहितसप्तर्षिभ्यो नमः फलानि स० ॥ ताम्बूलम्-ॐ सत्पुरुषे० ॥ ॐ भू० अरुं० याज्ञ० स० सप्त० नमः मुखवासार्थे पूगीफलताम्बूलं स० ॥ दक्षिणा—हिरण्यगर्भ०ः ॥ ॐ अरुं० याज्ञ० सहि० सप्त० नमः हिरण्यदक्षिणां सम० ॥ कर्पूरारार्तिक्यम् —ॐ इदꣳहु० ॥ ॐ भू० अरुं० याज्ञ० स० सप्त० नमः कर्पूरारार्तिक्यं दर्शयामि ॥ प्रदक्षिणा—ॐ सप्तास्या० ॥ ॐ भू० अरुं० याज्ञ० स० सप्त० नमः प्रदक्षिणां स०॥ मन्त्रपुष्पयुक्तनमस्कारः—ॐयज्ञेनयज्ञ० ॥ ॐ भू० अरुं० याज्ञ०स०सप्त० नमः मन्त्रपुष्पयुक्तनमस्कारं स० ॥ प्रार्थना—मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं मुनीश्वराः। यत्पूजितं मया सर्वं परिपूर्णं तदस्तु मे ॥ ॐ भू० अरुं० याज्ञ० स० सप्त० नमः प्रार्थनापूर्वकनमस्कारान्स० ॥ अर्पणम्—अनेन मया वेदोक्तसमंत्राङ्गत्वेन कृतेन ध्यानावाहनादिषोडशोपचारादिपूजनेन अरुन्धतीयाज्ञवल्क्यसहितगौतमादिसप्तर्षयः प्रीयन्तां नमम ॥

॥ इति सप्तर्षिपूजनम् ॥

॥६३॥ स्वपितृभ्यो यज्ञोपवीतदानम् ॥ प्राचीनावीती (अप० कृत्वा) दक्षिणाभिमुखाः सर्वे कुशोदकं गृहीत्वा पुरतो यज्ञोपवीतानि निधाय प्रथमम् अमुकगोत्रेभ्यः अस्मत्पितृपितामहप्रपितामहेभ्यः । द्वितीयम् अमुकगोत्रेभ्यः अस्मन्मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहेभ्यः । तृतीयं कव्यवाडनलादिदिव्यपितृभ्यः इमानि यज्ञोपवीतानि स्वधा सम्पद्यन्ताम् ॥ इति ऋज्वुपरि समर्पयेत् । (जीवत्पितृकैरपि सव्येन पितुः पित्रादिभ्यो मातामहादिभ्यश्च यज्ञोपवीतानि देयानि) ततः सव्यं कृत्वा सर्वान्ब्राह्मणान् गन्धादिना सम्पूज्य तेभ्यो यज्ञोपवीतानि दत्वा पश्चात् सर्वैः स्वयमपि धार्याणि ॥

॥६४॥ अथ यज्ञोपवीतधारणप्रयोगः ॥ आचम्य प्राणानायम्य ॥ हस्ते जलमादाय–अद्यपूर्वो० तिथौ मम श्रौतस्मार्तकर्मानुष्ठानसिद्ध्यर्थम् अध्यायोत्सर्गकर्माङ्गत्वेन यज्ञोपवीतधारणमहं करिष्ये ॥ सूत्रत्रिगुणीकरणम्—इदं विष्णुरिति मेधातिथिर्ऋषिः विष्णुर्देवता गायत्रीछन्दः

---

१ अथ यज्ञोपवीतनिर्माणप्रकार ॥ कार्पासयज्ञोपवीतम्–ब्राह्मणेन ब्राह्मणस्त्रीभिर्विधवादिभिश्च निर्मितं सूत्रं ग्राह्यम् । संहतचतुरङ्गुलिमूलेषु षण्णवत्या सूत्रमावेष्ट्य तत्त्रिगुणीकृत्योर्ध्ववृतं वलितं कृत्वा पुनरधोवृतरीत्या त्रिगुणीकृते वृत्तसूत्रं नवतन्तु सम्पद्यते तत्त्रिरावेष्ट्य दृढग्रन्थिं कुर्यात् ॥ अन्यत्र वामावर्तं त्रिगुणं कृत्वा प्रदक्षिणावर्तं नवगुणं विधाय तदेवं त्रिसरं कृत्वा ग्रन्थिमेकं विदध्यात् ॥ १ ॥ त्रिवृदूर्ध्ववृतं कार्यं तन्तुत्रयमधोवृतम् । त्रिवृतं चोपवीतं स्यात्तस्यैको ग्रन्थिरुच्यते ॥ स्तनादूर्ध्वमधोनाभेर्न धार्यं तत्कथंचन ॥ पृष्ठवंशे च नाभ्यां च धृतं यद्विन्दते कटिम् । तद्धार्यमुपवीतं स्यान्नातिलम्बं न चोच्छ्रितम् ॥ वामस्कधे धृतं नाभिहृत्पृष्ठवंशयोर्धृतम्॥ (कटिपर्यन्तमाप्नोति तावत्परिमाणकं कर्तव्यमित्यर्थः) ॥ २ ॥ कृते पद्ममयं सूत्रं त्रेतायां कनकोद्भवम् । द्वापरे राजतं प्रोक्तं कलौ कार्पाससंभवम् ॥ ३ ॥ शुचौ देशे शुचिः सूत्रं संहतांगुलिमूलके । आवेष्ट्य षण्णवत्या तत्त्रिगुणीकृत्य यत्नतः ॥ अब्लिङ्गकैस्त्रिभिः सम्यक् प्रक्षाल्योर्ध्ववृतं च तत् । अप्रदक्षिणमावृत्तं सावित्र्या त्रिगुणीकृतम् ॥ अधःप्रदक्षिणावृतं समं स्यान्नवसूत्रकम् । त्रिरावेष्ट्य दृढं बद्ध्वा हरिब्रह्मेश्वरान्नमन् ॥

सूत्रत्रिगुणीकरणे विनियोगः ॥ ॐइदंविष्णु० ॥ प्रक्षालनम्—आपोहिष्ठेति तिसृणां सिन्धुद्वीपऋषिः आपो देवता गायत्रीछन्दः यज्ञोपवीतप्रक्षालने विनियोगः । ॐ आपोहि० ॥३॥ इति त्रिभिर्मन्त्रैर्यज्ञोपवीतानि प्रक्षाल्यानन्तरं दशगायत्रीमन्त्रैरभिमन्त्र्य तन्तुदेवता आवाहयेत्—यथा—प्रणवस्य ब्रह्मा ऋषिः परमात्मा देवता गायत्री छन्दः प्रथमतन्तौ ॐकारावाहने विनियोगः । ॐप्रथमतन्तौ ॐकाराय नमः ॐकारमावाहयामि ॥१॥ अग्निन्दूतमिति मेधातिथिर्ऋषिः अग्निर्देवता गायत्रीछन्दः द्वितीयतन्तौ अग्न्यावाहने वि०।ॐअग्निन्दूतं०।द्वितीयतन्तौ अग्नये नमःअग्निमावाहयामि ॥ २ ॥ नमोऽस्तुसर्पेभ्य इत्यस्य प्रजापतिर्ऋषिः सर्पा देवताः अनुष्टुप् छन्दः तृतीयतन्तौ सर्पावाहने वि०। ॐ नमोस्तुसर्प्पेब्भ्योयेकेचंपृथिवीमनु ॥ येऽअन्तरिक्षेयेदिविनेब्भ्यं÷सर्प्पेब्भ्योनमं÷॥$\frac{१३}{६}$॥ तृतीयतन्तौ सर्पेभ्यो नमः सर्पानावाहयामि ॥ ३ ॥ वयङ्सोमेत्यस्य बन्धुर्ऋषिः सोमो देवता गायत्रीछन्दः चतुर्थतन्तौ सोमावाहने वि० । ॐव्वयङ्सोम०॥चतुर्थतन्तौ सोमाय नमः सोमम् आवा० ॥ ४ ॥ उदीरतामित्यस्य शङ्खऋषिः पितरो देवता त्रिष्टुप्छन्दः पञ्चमतन्तौ पित्रावाहने वि०। ॐ उदीरतामवंरऽउत्परासऽउन्मध्यमा÷पितरं÷सोम्म्यासं÷ । असुंम्यऽईयुरवृकाऽऋतज्ञास्तेनोंवन्तु पितरोहवेषु ॥ $\frac{१९}{४९}$ ॥ पञ्चमतन्तौ पितृभ्यो नमः पितॄन आवा० ॥५॥ प्रजापतेइत्यस्य हिरण्यगर्भ ऋषिः प्रजापतिर्देवता त्रिष्टुप् छन्दः षष्ठतन्तौ प्रजापत्यावाहने वि० । ॐप्रजापतेनत्वदेतान्यन्न्यो विश्वांरूपाणिपरितावंभूव ॥ यत्कांमास्तेजुहुमस्तन्नोऽअस्तुवयंॐस्यांमपतयोरयीणाम् ॥$\frac{२३}{६५}$॥ षष्ठतन्तौ प्रजापतये नमः प्रजापतिम् आवा० ॥६॥ आनोनियुद्भिरित्यस्य वसिष्ठ ऋषिः अनिलो देवता त्रिष्टुप् छन्दः सप्तमतन्तौ अनिलावाहने वि० । ॐ आनोनियुद्भिं÷

गुतिर्नीभिरद्धुरः संहुस्त्रिणीभिरुपयाहिवृज्ञम् ॥ वायोऽअस्मिन्त्सवनेमाद-यस्ववयूयम्पातस्वस्तिभिःसदानः ॥ ३८/२७ ॥ सप्तमतन्तौ अनिलाय नमः अनिलम् आवा०॥७॥ सुगावइत्यस्यात्रिर्ऋषिः गृहपतयो देवता आर्षी त्रिष्टुप् छन्दः अष्टमतन्तौ यमावाहने वि०। ॐ सुगावोदेवाःसदनाऽअक्र-र्म्मयऽआजग्मेदᳬसवनञ्जुषाणाः ॥ भरमाणाव्वहमानाहवीᳬष्य-स्मेधत्तवसवोव्वसूनिस्वाहा॥ ८/१८ ॥ अष्टमतन्तौ यमाय नमः यमम् आवा० ॥८॥ विश्वेदेवासऽआगत इत्यस्य मधुच्छन्दा ऋषिः विश्वेदेवा देवताः त्रिष्टुप् छन्दः नवमतन्तौ विश्वेषां देवानामावाहने विनि० । ॐ विश्वेदे-वासऽआगतशृणुताम्ऽ इम ᳬहवम् । एदम्बर्हिर्निषीदत ॥ ३३/५३ ॥ नव-मतन्तौ विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः विश्वान्देवान् आवा० ॥ ९ ॥ यज्ञो-पवीतग्रन्थिदेवतावाहनम्-ब्रह्मयज्ञानमित्यस्य प्रजापतिर्ऋषिः ब्रह्मा दे-वता गायत्री छन्दः ग्रन्थिमध्ये ब्रह्मावाहने वि० । ॐ ब्रह्मय-ज्ञानं० ॥ ग्रन्थिमध्ये ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणम् आवा० ॥ १ ॥ इदं विष्णुरित्यस्य मेधातिथिर्ऋषिः विष्णुर्देवता गायत्री छन्दः ग्रन्थिम-ध्ये विष्ण्वावाहने वि० । ॐ इदं विष्णु० ॥ ग्रन्थिमध्ये विष्णवे नमः विष्णुम् आवा० ॥ २ ॥ त्र्यम्बकमित्यस्य वसिष्ठ ऋषिः रुद्रो देवता विराड्ब्राह्मी त्रिष्टुप् छन्दः ग्रंथिमध्ये रुद्रावाहने वि०—ॐ त्र्यम्बकं० ॥ ग्रन्थिमध्ये रुद्राय नमः रुद्रम् आवा० ॥ प्रणवाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः यथास्थानमहं न्यसामि ॥ मानसोपचारैः सम्पूज्य ॥ ध्यानम्— प्रजापतेर्यत्सहजं पवित्रं कार्पासमूत्रोद्भवब्रह्मसूत्रम् ॥ ब्रह्मत्वसिद्ध्यै च यशः प्रकाशं जपस्य सिद्धिं कुरु ब्रह्मसूत्रम् ॥ पुनरपुरामाः० ॥ यज्ञोप-वीतधारणम्—यज्ञोपवीतमितिमन्त्रस्य परमेष्ठी ऋषिः लिङ्गोक्ता देवताः त्रिष्टुप् छन्दः यज्ञोपवीतधारणे विनियोगः ॥ ॐ यज्ञोपवीतम्परमम्पवित्र-

म्प्रजापतेर्यत्सहजम्पुरस्तात् ॥ आयुष्यमग्र्यम्प्रतिमुञ्च शुभ्रंयज्ञोपवीतम्ब-लमस्तुतेजः॥ यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि ॥ अनेन मन्त्रेण यथाचारम् एकद्वित्रिचतुःपञ्च वा पृथक्पृथग्यज्ञोपवीतधारणमाद्य-न्तयोराचमनं च कुर्यात् ॥ धारणान्ते जीर्णसूत्रत्यागः–एतावद्दिनपर्यन्तं ब्रह्म त्वं धारितं मया ॥ जीर्णत्वात्त्वत्परित्यागो गच्छ सूत्र यथासुखम् ॥ अनेन मन्त्रेण जीर्णयज्ञोपवीतं शिरोमार्गेण निःसार्य शुद्धभूमौ त्यक्त्वा यथाशक्ति गायत्रीमन्त्रजपं च कृत्वा ॥ अर्पणम्–अनेन नूतनयज्ञोपवीत-धारणार्थकृतेन यथाशक्ति गायत्रीजपकर्मणा श्रीसविता देवता प्रीयतां नमम ॥ पुनर्जलमादाय–अनेन नूतनयज्ञोपवीतधारणाख्येन कर्मणा श्रीभगवान् परमेश्वरः प्रीयतां नमम ॥ इति यज्ञोपवीतधारणप्रयोगः ॥

॥६५॥ अथोत्सर्गतर्पणम्—आचम्य प्राणानायम्य ॥ सङ्कल्पः–अद्यपूर्वो०देशकालौ संकीर्त्य छन्दसां क्वचिदनध्यायादिकाले पठनादन-धिकारिभिः श्रावणाच्च प्राप्तमालिन्यस्य निरासार्थमुत्सर्गाख्यतर्पणमहं करिष्ये॥ दक्षिणं जान्वाच्येशानाभिमुखः सव्येन प्रागग्रैर्दर्भैर्देवतीर्थेन देवानामञ्जलित्रयं दद्यात्॥देवतर्पणम् ॐविश्वेदेवास॰॥विश्वेदेवाःशृ॰ ॥इति मन्त्राभ्यां देवानावाह्य॥ॐदेवास्तृप्यन्ताम् ।ॐछन्दांसितृप्यन्ताम्। ॐवेदास्तृप्यन्ताम् ॥ ॐऋषयस्तृप्यन्ताम् ॥ ॐपुराणाचार्यास्तृप्यन्ताम् । ॐगन्धर्वास्तृप्यन्ताम् ॥ ॐइतराचार्यास्तृप्यन्ताम् ॥ ॐ संवत्सरः सावयवस्तृप्यताम्॥[केचित्संवत्सरावयवान्पृथक्त्वेन तर्पयन्ति तद्यथा) ॐ अहोरात्रास्तृप्यन्ताम् ॥ ॐअर्धमासास्तृप्यन्ताम् ॐ मासास्तृप्य-न्ताम् ॥ ॐ ऋतवस्तृप्यन्ताम् ॥] ॐ पितरस्तृप्यन्ताम् ॥ ॐ आचार्या-स्तृप्यन्ताम् ॥ ततः सव्यं जान्वाच्य दक्षिणाभिमुखोऽपसव्येन तिल-मिश्रितं जलमञ्जलौ गृहीत्वा अमुकगोत्राः अस्मत्पितरः अमुकशर्माणो

वसुरूपास्तृप्यध्वं स्वधा नमः॥ अमुकगोत्राः अस्मत्पितामहाः अमुकशर्माणो रुद्ररूपास्तृप्यध्वं स्वधा नमः॥ अमुकगोत्राः अस्मत्प्रपितामहाः अमुकशर्माणः आदित्यरूपास्तृप्यध्वम् स्वधा नमः॥ [अन्ये तु आभिरद्भिः अहरहः क्रियमाणेन उदीरतामित्यादिनोक्ततर्पणविधिना सर्वान् पितॄन् तर्पयन्ति। जीवत्पितृकैः पुत्रैः शिष्यैश्चाचार्यपितृतर्पणं कार्यम् । तद्यथा—अमुकगोत्राः अस्मदाचार्यस्य पितरः अमुकशर्माणस्तृप्यध्वं स्वधा ॥ एवमाचार्यस्य पितामहप्रपितामहानामपि ज्ञेयम् ॥] ततः आचम्य वंशान् ब्रूयात् ॥

॥६६॥ वंशानां श्रवणम्-ॐ अथ वꣳशꣳ समानमासाञ्जीवीपुत्रात्सा-
ञ्जीवीपुत्रो माण्डूकायनेर्माण्डूकायनिर्माण्डव्यान्माण्डव्यꣳ कौत्सात्कौत्सो-
माहित्थेर्माहित्थिर्वामकक्षायणाद्वामकक्षायणो वात्स्याद्वात्स्यꣳ शाण्डिल्या-
च्छाण्डिल्यꣳ कुश्रेꣳ कुश्रिर्यज्ञवचसो राजस्तम्बायनाद्यज्ञवचा राजस्तम्बाय-
नस्तुरात्कावषेयात्तुरꣳ कावषेयꣳ प्रजापतेꣳ प्रजापतिर्ब्रह्मणो ब्रह्म स्वयम्भु ब्र-
ह्मणे नमꣳ॥१॥ वंशोक्ताः ऋषयस्तृप्यन्ताम्। एवमृप्सुपरि उदकं क्षिपेत्॥ अ-
थ वꣳशꣳ तदिदं वयꣳ शौर्पणाय्याच्छौर्पणाय्यो गौतमाद्गौतमो वात्स्या-
द्वात्स्यो वात्स्याच्च पाराशर्याच्च पाराशर्यꣳ साङ्कृत्याच्च भारद्वाजाच्च भा-
रद्वाज ऽऔदवाहेश्च शाण्डिल्याच्च शाण्डिल्यो वैजवापाच्च गौतमाच्च गौतमो वैज-
वापायनाच्च वैष्टपुरेयाच्च वैष्टपुरेयꣳ शाण्डिल्याच्च रौहिणायनाच्च रौहिणायनꣳ
शौनकाच्चात्रेयाच्च रैभ्याच्च रैभ्यꣳ पौतिमाष्यायणाच्च कौण्डिन्यायनाच्च कौ-
ण्डिन्यायनꣳ कौण्डिन्यात्कौण्डिन्यꣳ कौण्डिन्यात्कौण्डिन्यꣳ कौण्डिन्याच्चा-
ग्निवेश्याच्च॥२॥ आग्निवेश्यꣳ सैतवात्सैतवꣳ पाराशर्यात्पाराशर्यो जातूकर्ण्या-
ज्जातूकर्ण्यो भारद्वाजाद्भारद्वाजो भारद्वाजाच्चासुरायणाच्च गौतमाच्च गौ-
तमो भारद्वाजाद्भारद्वाजो वैजवापायनाद्वैजवापायनꣳ कौशिकायनेꣳ कौशि-
कायनिर्घृतकौशिकाद्घृतकौशिकꣳ पाराशर्यायणात्पाराशर्यायणꣳ पारा-

शांख्यात्पाराशर्य्योजातूकर्ण्याज्जातूकर्ण्यो भारद्वाजाद्भारद्वाजो भारद्वाजाचासुरायणाचयास्काचासुरायणस्त्रैवणेस्त्रैवणिरौपजन्धनेरौपजन्धनिरासुरेरासुरिर्भारद्वाजाद्भारद्वाजऽआत्रेयात् ॥३॥ आत्रेयो माण्टेर्माण्टिर्गौतमाद्गौतमो गौतमाद्गौतमो वात्स्याद्वात्स्यः शाण्डिल्याच्छाण्डिल्यः कैशोर्य्यात्काप्यात्कैशोर्य्यः काप्यः कुमारहारितात्कुमारहारितो गालवाद्गालवो विदर्भीकौण्डिन्याद्विदर्भीकौण्डिन्यो वत्सनपातो बाभ्रवाद्वत्सनपाद्बाभ्रवः पथः सौभरात्पन्थाः सौभरो यास्यादाङ्गिरसादयास्यऽआङ्गिरसऽआभूतेस्त्वाष्ट्राद्गभूतिस्त्वाष्ट्रो विश्वरूपात्त्वाष्ट्राद्विश्वरूपस्त्वाष्ट्रोऽश्विभ्यामश्विनौ दधीचाथर्वणाद्दध्यङ्ङाथर्वणोऽथर्वणो दैवादथर्वा दैवो मृत्योः प्राध्वंसनान्मृत्युः प्राध्वंसनात्प्राध्वंसनऽएकर्षेरेकर्षिर्विप्रजितेर्विप्रजितिर्व्यष्टेर्व्यष्टिः सनारोः सनारुः सनातनात्सनातनः सनगात्सनगः परमेष्ठिनः परमेष्ठी ब्रह्मणो ब्रह्मस्वयम्भुब्रह्मणे नमः ॥ ४ ॥ वंशोक्ताः ऋषयस्तृप्यन्ताम् ॥ अथ वंशस्तदिदं वयं शौर्पणाय्याच्छौर्पणाय्यो गौतमाद्गौतमो वात्स्याद्वात्स्यो वात्स्याच पाराशर्य्याच पाराशर्य्यः साङ्कृत्याच भारद्वाजाच भारद्वाजऽऔदवाहेश्च शाण्डिल्याच शाण्डिल्यो वैजवापाच गौतमाच गौतमो वैजवापायनाद्वैष्टपुरेयाच वैष्टपुरेयः शाण्डिल्याच रौहिणायनाच रौहिणायनः शौनकाच जैवन्तायनाच रैभ्याच रैभ्यः पौतिमाष्यायणाच कौण्डिन्यायनाच कौण्डिन्यायनः कौण्डिन्याभ्यां कौण्डिन्याऽऔर्णवाभेभ्यऽऔर्णवाभाः कौण्डिन्यात्कौण्डिन्यः कौण्डिन्यात्कौण्डिन्यः कौण्डिन्याचाग्निवेश्याच ॥५॥ आग्निवेश्यः सैतवात्सैतवः पाराशर्य्यात्पाराशर्य्यो जातूकर्ण्याज्जातूकर्ण्यो भारद्वाजाद्भारद्वाजो भारद्वाजाचासुरायणाच गौतमाच गौतमो भारद्वाजाद्भारद्वाजो वलाकाकौशिकाद्वलाकाकौशिकः काषायणात्काषायणः सौकरायणात्सौकरायणस्त्रैवणेस्त्रैवणिरौपजन्धनेरौपजन्धनिः सायका-

यनात्सायकायनः कौशिकायनेः कौशिकायनिर्घृतकौशिकाद्घृतकौशिकः
पाराशर्यायणात्पाराशर्यायणः पाराशर्यात्पाराशर्यो जातूकर्ण्याज्जा-
तूकर्ण्यो भारद्वाजाद्भारद्वाजो भारद्वाजाच्चासुरायणाच्च यास्काच्चासुरायण-
स्त्रैवणेस्त्रैवणिरौपजन्धनेरौपजन्धनिरासुरेरासुरिर्भारद्वाजाद्भारद्वाजऽ-
आत्रेयात् ॥ ६ ॥ आत्रेयादात्रेयो माण्टेर्माण्टिर्गौतमाद्गौतमो गौतमाद्गौतमो
वात्स्याद्वात्स्यः शाण्डिल्याच्छाण्डिल्यः कैशोर्यात्काप्यात्कैशोर्यः का-
प्यः कुमारहारितात्कुमारहारितो गालवाद्गालवो विदर्भीकौण्डिन्याद्विदर्भी-
कौण्डिन्यो वत्सनपातो बाभ्रवाद्वत्सनपाद्बाभ्रवः पथः सौभरात्पन्थाः सौ-
भरोऽयास्यादाङ्गिरसादयास्यऽआङ्गिरसऽआभूतेस्त्वाष्ट्रादाभूतिस्त्वाष्ट्रो
विश्वरूपात्त्वाष्ट्राद्विश्वरूपस्त्वाष्ट्रोऽश्विभ्यामश्विनौ दधीचऽआथर्वणाद्दध्य-
ङ्ङाथर्वणोऽथर्वणो दैवादथर्वा दैवो मृत्योः प्राध्वंसनान्मृत्युः प्राध्वंसनात्प्राध्वं-
सनऽएकर्षेरेकर्षिर्विप्रजितेर्विप्रजितिर्व्यष्टेर्व्यष्टिः सनारोः सनारुः सनात-
नात्सनातनः सनगात्सनगः परमेष्ठिनः परमेष्ठी ब्रह्मणो ब्रह्म स्वयम्भु ब्रह्म-
णे नमः ॥ ७ ॥ वंशोक्ता ऋषयस्तृप्यन्ताम् ॥ अथ वंशस्तदिदं वयं
भारद्वाजीपुत्राद्भारद्वाजीपुत्रो वात्सीमाण्डवीपुत्राद्वात्सीमाण्डवीपुत्रः
पाराशरीपुत्रात्पाराशरीपुत्रो गार्गीपुत्राद्गार्गीपुत्रः पाराशरीकौण्डिनी-
पुत्रात्पाराशरीकौण्डिनीपुत्रो गार्गीपुत्राद्गार्गीपुत्रो गार्गीपुत्राद्गार्गीपुत्रो बा-
डेयीपुत्राद्बाडेयीपुत्रो मौषिकीपुत्रान्मौषिकीपुत्रो हारिकर्णीपुत्राद्धारिक-
र्णीपुत्रो भारद्वाजीपुत्राद्भारद्वाजीपुत्रः पैङ्गीपुत्रात्पैङ्गीपुत्रः शौनकीपुत्रा-
च्छौनकीपुत्रः ॥ ८ ॥ काश्यपीबालाक्यामाठरीपुत्रात्काश्यपीबालाक्यामा-
ठरीपुत्रः कौत्सीपुत्रात्कौत्सीपुत्रो बौधीपुत्राद्बौधीपुत्रः शालङ्कायनीपुत्रा-
च्छालङ्कायनीपुत्रो वार्षगणीपुत्राद्वार्षगणीपुत्रो गौतमीपुत्राद्गौतमीपुत्रऽआ-

त्रेयीपुत्रादात्रेयीपुत्रो गौतमीपुत्राद्गौतमीपुत्रो वात्सीपुत्राद्वात्सीपुत्रो भारद्वाजीपुत्राद्भारद्वाजीपुत्रः पाराशरीपुत्रात्पाराशरीपुत्रो वार्कारुणीपुत्राद्वार्कारुणीपुत्र आर्तभागीपुत्रादार्तभागीपुत्रः शौङ्गीपुत्राच्छौङ्गीपुत्रः साङ्कृतीपुत्रात्साङ्कृतीपुत्रः ॥९॥ आलम्बीपुत्रादालम्बीपुत्र आलम्बायनीपुत्रादालम्बायनीपुत्रो जायन्तीपुत्राज्जायन्तीपुत्रो माण्डूकायनीपुत्रान्माण्डूकायनीपुत्रो माण्डूकीपुत्रान्माण्डूकीपुत्रः शाण्डिलीपुत्राच्छाण्डिलीपुत्रो राथीतरीपुत्राद्राथीतरीपुत्रः क्रौञ्चिकीपुत्राभ्यां क्रौञ्चिकीपुत्रौ वैदभृतीपुत्राद्वैदभृतीपुत्रो भालुकीपुत्राद्भालुकीपुत्रः प्राचीनयोगीपुत्रात्प्राचीनयोगीपुत्रः साञ्जीवीपुत्रात्साञ्जीवीपुत्रः कार्शकेयीपुत्रात्कार्शकेयीपुत्रः॥१०॥प्राश्नीपुत्रादासुरिवासिनः प्राश्नीपुत्र आसुरायणादासुरायण आसुरेरासुरिर्याज्ञवल्क्याद्याज्ञवल्क्य उद्दालकादुद्दालकोऽरुणादरुण उपवेशेरुपवेशिः कुश्रेः कुश्रिर्वाजश्रवसो वाजश्रवा जिह्वावतो बाध्योगाज्जिह्वावान्बाध्योगोऽसिताद्वार्षगणादसितो वार्षगणो हरितात्कश्यपाद्धरितः कश्यपः शिल्पात्कश्यपाच्छिल्पः कश्यपः कश्यपान्नैध्रुवेः कश्यपो नैध्रुविर्वाचो वागम्भिण्या अम्भिण्यादित्यादादित्यानीमानि शुक्लानि यजूंषि वाजसनेयेन याज्ञवल्क्येनाख्यायन्ते ॥ ११ ॥ वंशोक्ताः ऋषयस्तृप्यन्ताम् ॥ ॐ तत्सवितुरिति चतुर्वारं गायत्रीं पठेत् ॥ इति अतिवंशोक्तानामृषीणां तर्पणम् ॥ ॐ विरताः स्म इति सर्वे सकृदुच्चैर्ब्रूयुः ॥ शु० य० सं० अध्यायाः—हरिः ॐ इषेत्त्वा ॥ कृष्णोसि ॥ समिधाग्निम् ॥ एदम् ॥ अग्नेस्तनूः । देवस्यत्वा । वाचस्पतये ॥ उपयामगृहीतोसि ॥ देवसवितः ॥ अपो देवाः ॥ युञ्जानः प्रथमम् ॥ इमामगृभ्णन् ॥ मयिगृह्णामि ॥ ध्रुवक्षितिर्ध्रुवयोनिः ॥ अग्नेजातान् ॥ नमस्ते ॥ अश्मन्नूर्जम् ॥ वाजश्च ॥ स्वादीन्त्वा ॥ क्षत्रस्ययोनिः ॥ इममे ॥ तेजोसि ॥ हिर-

ण्यगर्भ१२सम्० ॥ अश्वस्तूपर१ ॥ शार्दन्दुभि२ ॥ अग्निश्च ॥ समास्त्वा ॥ होतायक्षत् ॥ समिद्धोऽअञ्जन ॥ देवंसवितु१६ ॥ महसंशी-र्षापुरुष१६॥तद्देव॥अस्याजरासः॥यज्जाग्रत६ । अपेत१ ॥ ऋचंवाचम् । देवस्यंत्वा । देवस्यत्वा । स्वाहाप्राणेभ्यः । ईशावास्यम् ॥४०॥ ॐ हिरण्मयेनपात्रेणसत्यस्यापिहितम्मुखम् ॥ योसावादित्येपुरुषःसोसा-वहम् ॥ ॐ३ मू खम्ब्रह्म । अध्यायोक्ता ऋषयस्तृप्यन्ताम् ॥

॥६७॥श०ब्रा०कण्डिकाः-व्रतमुपैष्यन् ॥ सर्वंकपालान्येवान्यतरऽ उपदधाति । सर्वेस्तुवर्हसम्मार्ष्टि॥हिङ्कृत्याहवाह॥सर्वमवराध्याश्रावयति॥ ऋतवोहवैदेवेषुयज्ञेभागमीषिरे ॥ सर्वपर्णशाखयावत्सानपाकरोति ॥ मन-वेहवैप्रात६ ॥ सयत्राह ॥ ससयत्राऽऽहतश्चेतश्चसम्भरति ॥ उद्धृत्याह-वनीयम्पूर्णाहुतिंजुहोति ॥ सूर्योहवाऽअग्निहोत्रम् ॥ अथहुतेग्निहोत्रमुप-तिष्ठते॥ प्रजापतिर्हवाऽइदमग्रऽएकऽएवास ॥ पितामहाहविपाहवैदेवाञ्छ्र-ष्टंजग्मु८ ॥ देवयजनंयोपयन्ते ॥ दक्षिणेनाहवनीयंप्राचीनग्रीवेकृष्णा-जिनेऽउपस्तृणाति ॥ सयद्दान्यनुनि६क्रामति ॥ शिरोवैयज्ञस्यातिथ्यं-बाहूप्रायणीयोदयनीयौ ॥ तद्यऽएषपूर्वार्धेयोऽन्तर्पिशुस्थूणराजोभवति ॥ उदुरमेवास्यसद८ ॥ अग्निमंदस्ते ॥ तद्यत्रैतत्प्रणोहोताहोतृषदनऽउप-विशति ॥ प्रजापतिर्वैप्रजा८सृजमानोरिरिचानऽइवामन्यत ॥ प्राणोह-वाऽअस्योपां६शुर्द ॥ चक्षुषीहवाऽअस्यशुक्रामन्थिनौ ॥ भक्षयित्वासमु-पहूताऽदस्मऽउत्थायत्योत्तिष्ठति ॥ मनोहवाऽअस्यसविता ॥ आदित्येनच-रुणोदयनीयेनप्रचरति ॥ प्रजापतिर्वाऽएषयद६शुर्द ॥ देवाश्चवाऽअसु-राश्च ॥ अथमुत्रश्चाज्यविलापनींचादाय ॥ अरण्योरग्नीसमारोह्य ॥ केश-वस्यपुरुषस्य॥आग्नेयोष्टाकपाल६पुरोडाशोभवति ॥ असद्वाऽइदमग्रऽ-आसीत् ॥ प्रजापतिरग्निरूपाण्यभ्यध्यायत्॥ एतद्वैदेवाऽअब्रुवन् ॥ अथै-

नमतꣳखनत्येव ॥ पर्णकशायनिष्पक्वाऽएताआपोभवन्ति ॥ भूयाꣳसि-
द्वीꣳपिभवन्ति ॥ रुक्मम्प्रतिमुच्यबिभर्ति ॥ व्वनीवाह्येताग्निंब्विभ्रदि-
त्याहुꣳ ॥ गार्हपत्यंचेष्यन्पलाशशाखयाव्युदूहति ॥ अथातोनैर्ऋताहर-
न्ति ॥ चितोगार्हपत्योभवति ॥ आत्मन्नग्निंगृह्णीते चेष्यन् ॥ कूर्म्ममुपद-
धाति ॥ प्राणभृतउपदधाति ॥ द्वितीयांचितिमुपदधाति ॥ तृतीयांचि-
तिमुपदधाति ॥ चतुर्थींचितिमुपदधाति ॥ पञ्चमींचितिमुपदधाति ॥
नाकसदऽउपदधाति ॥ऋतव्याऽउपदधाति ॥ अथातꣳशतरुद्रियंजुहोति ॥
उपवसथीयेहन् प्रातरुदितऽआदित्ये ॥ अथातोवैश्वानरंजुहोति ॥ अथा-
तोराष्ट्रभृतोजुहोति॥ अथातꣳपयोव्रततायै॥ अग्निरेषपुरस्ताच्चीयते॥प्रजा-
पतिꣳस्वर्गंल्लोकमजिगाꣳसत् ॥ प्राणोगायत्री ॥ प्रजापतिंविस्रस्तम् ॥
तस्यवाऽएतस्याग्नेः ॥ अथहैतेरुणे ॥ संवत्सरोवैयज्ञꣳप्रजापतिः ॥ त्रिर्ह-
वैपुरुषोजायते ॥ व्वाग्घवाऽएतस्याग्निहोत्रस्याग्निहोत्री ॥ उद्दालकोह्या-
रुणिः ॥ उर्वशीहाप्सराः ॥ भृगुर्हवैव्वारुणिः ॥ पशुबन्धेनयजते ॥ तद्य-
थाहवै ॥ अयंवैयज्ञोयोयंपवते ॥ समुद्रंवाऽएतेप्रचरन्ति ॥ यद्वालोके ॥
दीर्घसत्रꣳहवाऽएतऽउपयन्ति ॥ तदाहुर्यदेषदीर्घसत्री ॥ सोमोवैराजा-
यज्ञꣳप्रजापतिः ॥ विश्वरूपंवैत्वाष्ट्रमिन्द्रोहन ॥ इन्द्रस्यवैयत्र ॥ एत-
स्माद्वैयज्ञात्पुरुषोजायते ॥ ब्रह्मौदनंपचति ॥ प्रजापतिर्देवेभ्योयज्ञान्व्या-
दिशत् ॥ प्रजापतेरुक्षस्त्वयत् ॥ प्रजापतिरकामयत ॥ अथप्रातर्गोतमस्य ॥
पुरुषोहनारायणोकामयत ॥ ब्रह्मवैस्वयम्भुतपोतप्यत ॥ अथास्मैश्मशा-
नकुर्वन्तियोꣳशान्तिः ॥ देवाहवैसत्रंनिषेदुः ॥ अथातोरौहिणौजुहोति ॥
सत्रैवृतीयेहन् ॥ द्वयाहप्राजापत्याः ॥ दसवालाकिर्हानूचानोगार्ग्यऽआस ॥
जनकोहवैदेहः ॥ जनकꣳहवैदेहंयाज्ञवल्क्योजगाम ॥ पूर्णमदꣳपूर्णमिदम् ॥
श्वेतकेतुर्हवाऽआरुणेयꣳ ॥ माध्वींपुत्रादासुरिवासिनः ॥१०१॥ चतुर्द-

शकाण्डेष्वध्यायोक्ता ऋषयस्तृप्यन्ताम् ॥ अथ० य० सं० शतस्था-
नानि—ॐ इषेत्त्वा ॥ परिते ॥ अग्नेनय ॥ उपयामगृहीतोसिसुशर्म्मासि ।
(प्रथमा) सोमस्यत्विषिः ॥ परस्याऽअधि ॥ अन्यावं ॥ राज्ञसि ॥
नमोहिरण्यबाहवे ॥ इन्द्रेमम् । इवौर्ते । अन्नात्परिस्रुतः ॥ अश्विनातेः
जसा ॥ पृथिव्यैस्वाहा ॥ प्रजापतयेच ॥ तेऽअस्य ॥ तनूनपात्पथः ॥
अयमिह ॥ अर्तुनदे ॥ इयत्यग्रे ॥ २० ॥ शेषं पश्चसप्ततिः ॥ हिरण्मयेनपात्रेण० ।
ॐ खम्ब्रह्म । शतोक्ता ऋषयस्तृप्यन्ताम् । ॐ अग्निमीळेपुरोहितंयज्ञस्यदे-
वमृत्विजम् ॥ होतारंरत्नधातमम् ॥ १ ॥ इषेत्त्वोर्जेत्वा० ॥ २ ॥ अग्नऽ-
आयाहिवीतयेगृणानोहव्यदातये ॥ निहोतासत्सिबर्हिषि ॥ ३ ॥ शन्नो-
देवी० ॥ ४ ॥ इत्यध्ययनं समाप्तम् । ततः ॐ तदेतदचाभ्युक्तं न मृपा-
श्रातं यदवंति देवाऽइतिनहैवंविदुषः किञ्चनमृषा श्रान्तं भवति तथो-
हास्यैतत्सर्वेदेवाऽअवन्ति ॥ १ ॥ इति नमस्कारः ॥

॥ ६८ ॥ अथ ऋषिश्राद्धम् ॥

कर्ता कृतप्राणायामो देशकालौ संकीर्त्य ॐ उत्सर्गाङ्गभूतमृषिश्राद्धमहं करिष्ये । इति संकल्प्य–ॐ इदं विष्णु० इति मंत्रेण दिग्बंधः ॥ ऋषि-श्राद्धस्योपहाराः शुचयो भवन्तु । इत्युपहारप्रोक्षणम् । यथोपचारैः गौत-मादीन् पूजयेत् ॥ गौतमादयः सप्त ऋषयो दत्तं गंधाद्यर्चनं यथाविभागं वः स्वाहा ॥ इति गंधादिदानम् ॥ ऋषिश्राद्धसाङ्गतासिद्ध्यर्थं सप्तसं-ख्याकान्ब्राह्मणान्यथासम्पन्नान्नेन तर्पयिष्ये तेन श्रीगौतमादयः ऋषयः प्रीयन्ताम् ॥ ऋषिश्राद्धसाङ्गतासिद्ध्यर्थं हिरण्यनिष्क्रयीभूतां दक्षिणाम् आचार्याय संप्रददे ॥ आचार्यः कोदादिति पठेत् ॥ ॐ कोदा-त्कस्माऽअदात्कामोदात्कामायादात् ॥ कामोदाताकामः प्रतिगृहीताका-मैतत्ते ॥ ४८ ॥ उपविष्टेषु आचार्यादिब्राह्मणेषूदकादिदानम् ॥ तद्यथा ॥ ॐ

शिवा आपः सन्तु ॥ ॐ सौमनस्यमस्तु ॥ ॐ अक्षतं चारिष्टं चास्तु ॥ ॐ अघोरा ऋषयः सन्तु ॥ सर्वत्र सन्त्विति विप्राः प्रतिवचनं दद्युः ॥ उत्सर्गकर्मणो न्यूनातिरिक्तदोषपरिहारार्थं नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो भूयसीं दक्षिणां विभज्य संप्रददे ॥ अद्य छन्दसामुत्सर्गाङ्गभूतमृषिश्राद्धं परिपूर्णमस्तु ॥ अस्तु परिपूर्णमिति द्विजाः ॥ ततः सह नोस्तु सह नोवतु सह नऽइदं वीर्यवदस्तु ब्रह्म ॥ इन्द्रस्तद्वेद येन यथा न विद्विषामहऽइति ॥ उभाकवीयुवायोनोधर्मः परापतत् ॥ परिसख्यस्यधर्मिणोविसख्यानिविसृजामहे ॥ इति च सर्वे जपेयुः ॥ विरताः स्म इति ब्रूयुः ॥ ततो नमस्कारः॥ तदेतदृचाभ्युक्तंनमपाश्रान्तंयदवन्तिदेवाऽइतिनहैवैवंविदुषर्ठं किञ्चनमपाश्रान्तं भवातितयोहास्यै तत्सर्वेदेवाऽअवन्ति ॥ इति नमस्कारः ॥ ततो विसर्जनम् ॥ ॐ उत्तिष्ठब्रह्मणस्पतेदेवयन्तस्त्वेमहे ॥ उपप्रयन्तुमरुतंःसुदानवऽइन्द्रप्राशूर्भवासचा॥ ३ ॥ ततःसप्तर्षीन् जलाशये प्लावयेत्॥ समुद्रङ्गच्छस्वाहान्तरिक्षङ्गच्छस्वाहादेवर्ठं सवितारङ्गच्छस्वाहा मित्रावरुणौगच्छस्वाहाहोरात्रेगच्छस्वाहाछन्दार्ठंसि गच्छस्वाहाद्यावापृथिवीगच्छस्वाहायज्ञङ्गच्छस्वाहा सोमङ्गच्छस्वाहादिव्यन्नभोगच्छस्वाहाग्निंवैश्वानरङ्गच्छस्वाहा मनोमे हार्दियच्छदिवन्तेधूमो गच्छतुस्वर्ज्योतिःपृथिवीम्भस्मनापृणस्वाहा ॥ २१ ॥ (स्वस्वप्रवरान्विसर्जयेत् ॥) अनेनाध्यायोत्सर्गाङ्गत्वेन कृतेन ऋषिपूजनतर्पणादिकर्मणा श्रीभगवान्वेदपुरुषः प्रीयतां न मम ॥ एवम् उत्सर्गं विधाय त्रिरात्रं गुरुगृहे सर्वे शिष्या निवसेयुः ॥ उत्सर्गोत्तरं त्रिरात्रमध्ययनं न कुर्युः ॥

॥ इति ऋषिश्राद्धं समाप्तम् ॥

॥६९॥अथातोऽध्यायोपाकर्महवनप्रयोगः-आचार्यःआचम्य प्राणानायम्य आवसथ्याग्नेःपश्चात्शिष्यैश्चसहप्राङ्मुखउपविश्यआवसथ्ये खर्परमधिश्रित्य तत्र यवान्प्रक्षिप्य खर्परस्याधः अग्निं प्रज्वाल्य यवानां भर्जनं ते यवा धानाः ॥ आवसथ्याग्न्यभावे पृष्ठोदिविविधानासिद्धाग्नेः पश्चादित्यादि । तदभावे ग्राम्याग्निस्थापनम् । तद्यथा अद्य तिथौ अध्यायोपाकर्मणि पञ्चभूसंस्कारपूर्वकंसविताना माग्निस्थापनमहंकरिष्ये। पंचभूसंस्कारपूर्वकमग्निं प्रतिष्ठाप्य तदुपरि पूर्ववत् धानामर्जनं कृत्वा भर्जनानन्तरं पृथक्करणं होमार्थं भक्षार्थश्च ॥ एवं गुरुः प्राणायामत्रयं कृत्वा संकल्प कुर्यात् ॥ देशकालौ संकीर्त्य अमुकगोत्रः अमुकशर्मा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थम् अध्यायोपाकर्माहं करिष्ये ॥ वैकल्पिकपदार्थावधारणं कुर्यात् ॥ तत्र पौर्णमास्यामुपाकर्म ॥ ब्रह्मासनादारभ्य पर्युक्षणान्तकुशकंडिका विधाय ॥ उपकल्पनीयानि–विशेषः–प्रतिशिष्यं नव नवसमिध आर्द्राः सपत्रा औदुम्बरस्य ॥ दधि भक्षणार्थम् ॥ लौकिकधानाः ॥ बाहुमात्रं हस्तमात्रं वा औदुम्बरकाष्ठस्य स्रुवः । तिलस्थापनस्थाने सर्पफणाकारमाकर्षफलम् ॥ तिलाश्च ॥ ब्रह्मणाऽन्वारब्धः (तूष्णीम्) ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये न मम ॥ ॐ इन्द्राय स्वाहा इदमिन्द्राय० ॥ ॐ अग्नये० इदमग्नये० ॥ ॐ सोमाय० इदं सोमाय० ॥ अनन्वारब्धः ॥ ऋक्-ॐ पृथिव्यै स्वाहा इदं पृथिव्यै न मम॥ ॐ अग्नये० इदमग्नये० ॥ ॐ ब्रह्मणे० इदं ब्रह्मणे०॥ ॐ छन्दोभ्य.० इदं छन्दोभ्यो०॥यजुः–ॐ अन्तरिक्षाय० इदमन्तरिक्षाय०॥ ॐ वायवे० इदं वायवे०॥ ॐ ब्रह्मणे० इदं ब्रह्मणे०॥ ॐ छन्दोभ्यः० इदं छन्दोभ्यो० ॥ साम–ॐ दिवे० इदं दिवे० ॥ ॐ सूर्याय० इदं सूर्याय० ॥ ॐ ब्रह्मणे० इदं ब्रह्मणे० ॐ छन्दोभ्यः० इदं छन्दोभ्यो०॥ अथर्व-ॐदिग्भ्यः० इदं दिग्भ्यो० ॥ ॐचन्द्रमसे० इदं

चन्द्रमसे०॥ ब्रह्मणे० इदं ब्रह्मणे० ॥ ॐ छन्दोभ्यः० इदं छन्दोभ्यो०॥ ॐ प्रजापतये० इदं प्रजापतये०॥ ॐ देवेभ्यः० इदं देवेभ्यो०॥ ॐ ऋषिभ्यः० इदम् ऋषिभ्यो० ॥ ॐ श्रद्धायै० इदं श्रद्धायै० ॥ ॐ मेधायै स्वाहा इदं मेधायै०॥ ॐ सदसस्पतये० इदं सदसस्पतये०॥ ॐ अनुमतये० इदमनुमतये० ॥ एताः सप्तविंशत्याहुतयः आज्येन ॥ ततः प्रोक्षितधानाभिघारणम् ॥ स्रुवेण धाना अवदाय ॥ ॐ सदसस्पतिमद्भुतम्प्रियमिन्द्रस्य काम्म्यम्॥ सनिम्मेधामयासिषᳬस्वाहा ॥ $\frac{३२}{१३}$॥ इदं सदसस्पतये न मम॥ ततः उदुम्बरसमिन्त्रितयमभिघार्य हस्ते गृहीत्वा उत्थाय प्राङ्मुखस्तिष्ठन्तः॥ ॐ तत्सवितु० स्वाहा इदमग्नये न मम ॥ एवं द्वितीयां तृतीयां समिधं जुहुयात् ॥ ततः सर्वे उपविशेयुः ॥ एवं प्रत्येकं धानाः समित्त्रितयं पुनरपि द्विवारं कुर्यात् ॥ ततः अपरधानाः तिस्रः तिस्रः गृहीत्वा ॥ ॐ शन्नो भवन्तु वाजिनो हवेषु देवताता मितद्रवः स्वर्काः ॥ जम्भयन्तोऽहिं वृकᳬरक्षाᳬसि सनेम्यस्मद्युयवन्नमीवाः ॥ $\frac{१६}{२}$॥ इति सर्वे प्राश्नीयुः॥ द्विराचमनम् ॥ ॐ दधिक्राव्णो ऽअकारिषञ्जिष्णोरश्वस्य वाजिनः ॥ सुरभिनो मुखाकरत्प्रणऽआयूᳬषि तारिषत्॥ $\frac{३२}{३}$॥ इति मंत्रेण दधि भक्षेयुः॥ द्विराचमनम् ॥ ततः आचार्यो यावन्तं शिष्यगणम् आत्मन इच्छेत्तावतस्तिलान्गणयित्वा आकर्णफलकेनावदाय ॐ तत्सवितुरिति वा शुक्रज्योतिरित्यनुवाकेन जुहुयात् ॥ इदं सवित्रे न मम ॥

अथ ब्रह्मणाऽन्वारब्धः॥ ततो धानाभिः स्विष्टकृद्धोमः—ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते न मम ॥ ततो भूरादिनवाहुतयः ॥ ॐ भूः स्वाहा इदमग्नये० ॥ ॐ भुवः स्वाहा इदं वायवे० ॥ ॐ स्वः स्वाहा इदं सूर्याय० ॥ ॐ त्वन्नोऽअग्ने०। इदमग्नीवरुणाभ्यां० ॥ ॐ सत्वन्नोऽअग्ने०। इदमग्नीवरुणाभ्यां०॥ ॐ अयाश्चाग्ने०॥ इदमग्नये अयसे०॥ ॐ

येतेशतंवरुणये०। इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम ॥ ॐ उदुत्तमं वरुण० । इदं वरुणायादित्यायादितये० ॥ ॐ प्रजापतये० इदं प्रजापतये० ॥ इत्याज्येन जुहुयात् ॥ सर्वत्रैव अन्ते प्रोक्षणीपात्रे द्रव्यत्यागः॥ ततः त्र्यायुषं कुर्यात् ॥ त्र्यायुषं जमदग्नेः इति ललाटे । कश्यपस्य त्र्यायुषम् इति ग्रीवायाम् । यद्देवेषु त्र्यायुषम् इति दक्षिणबाहुमूले । तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषम् इति हृदि ॥ संस्रवप्राशनम् ॥ आचमनम् ॥ पवित्राभ्यां मार्जनम् ॥ अग्नौ पवित्रप्रतिपत्तिः॥ ब्रह्मणे पूर्णपात्रदानम् ॥ ब्रह्मन् अस्योपाकर्मणोऽगतया विहितं पूर्णपात्रं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐ द्यौस्त्वा ददातु पृथिवी त्वा प्रतिगृह्णातु ॥ इति ब्रह्मा पठन्गृह्णीयात् ॥ प्रणीताविमोकः ॥ ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शांताः शांततमास्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम् ॥ उपयमनकुशैर्मार्जयेत् ॥ उपयमनकुशानामग्नौ प्रक्षेपः ॥ तत्सवितु० इति त्रिः पठेत् ॥ पुनः इषेत्वादि ईशावास्यान्तम् ॥ व्रतमुपैष्यन्नित्यादिसंपूर्णमंत्रब्राह्मणयोरध्यायादि ब्रूयात् ॥ एवं सर्वं गुरुः शिष्याश्च पठित्वा । ॐ सह नोऽस्तु सह नोवतु सह नऽइदं वीर्यवदस्तु ब्रह्म ॥ इन्द्रस्तद्वेद येन यथा न विद्विषामहे ॥ इति मंत्रं पठित्वा ॥ कृतैतत्कर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थम् आचार्याय दक्षिणां दातुमहमुत्सृजे ॥ ततो न्यूनातिरिक्तदोषपरिहारार्थं नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो भूयसीं दक्षिणां विभज्य दातुमहमुत्सृजे ॥ ततः प्रार्थना–प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत् ॥ स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः॥ यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु॥ न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥ विष्णवे नमः । विष्णवे नमः । विष्णवे नमः ॥

॥ इति श्रावणीप्रयोगः समाप्तः ॥

॥ ७० ॥ अथ रक्षाबंधनविधिः ॥ रक्षाबंधनमस्यामेव पूर्णिमायां भद्रारहितायां कार्यम् ॥ तत्रादौ अपराह्ने ॥ सर्पपाक्षतहेमसहितां विचित्रक्षौमवस्त्रैर्वा कार्पासतंतुभिर्ग्रथितां शुभां रक्षापोटलिकां शुद्धभाजने संस्थाप्य कुंकुमाक्षतैरभ्यर्च्य ब्राह्मणान्संपूज्य दक्षिणाभिः संतोष्य पूर्वमुखो ब्राह्मणद्वारा रक्षाबंधनं कुर्यात् ॥ तत्र मंत्रः ॥ येन बद्धो बली राजा दानवेंद्रो महाबलः । तेन त्वामभिबध्नामि रक्षे मा चल मा चल ॥ १ ॥ इति । अनेन विधिना यस्तु रक्षाबंधं समाचरेत् ॥ स सर्वदोषरहितः सुखी संवत्सरं भवेत् ॥ २ ॥ इति रक्षाबंधनविधिः ॥

॥ ७१ ॥ अथ शिवपार्थिवेश्वरचिन्तामणिपूजाप्रयोगः ॥

तत्रादौ प्रातर्नित्यकर्म समाप्य उदीच्यां दिशि मृत्तिकानयनार्थं गत्वा तत्र भूमिपूजनम्—आगच्छ पृथिवि देवि त्वद्रूपमृत्तिकामिमाम् । ग्रहिष्यामि हि लिंङ्गार्थं मसन्ना भव सर्वदा ॥ ॐ भूम्यै नमः सकलपूजार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि ॥ इति संपूज्य " ॐ भूम्यै नमः " इति नमस्कृत्य ईशानभागस्थितां मृत्तिकां शस्त्रेण खनित्वा अष्टाङ्गुलां बहिर्निष्कास्य तदधःस्थमृत्तिकाग्रहणम्—ॐ उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना । मृत्तिके त्वां च गृह्णामि प्रजया च धनेन च ॥ "ॐ हराय नमः" इति मन्त्रेण शमीगर्भस्याम् अश्वत्थमूलस्थां वा मृत्तिकामादाय तूष्णीं गृहमागत्य पवित्रभूमौ निधाय कुशादिविहितासने उदङ्मुख उपविश्य

---

१ लिंगमानं मंत्रमहोदधौ—अङ्गुष्ठमानादधिकं वितस्त्यवधि सुंदरम् । पार्थिवं तु भवेल्लिंग न न्यूनं नाधिकं च तत् ॥ अथ पार्थिवेश्वरमण्डलाकृतिः—भानुवासरे सूर्याकृतिः । चन्द्रवासरे नागपाशम् । भौमवासरे त्रिकोणाकृतिः । सौम्यवासरे कच्छपाकृतिः । गुरुवासरे समचतुरस्रम् । भृगुवासरे षट्कोणाकृतिः । मन्दवासरे धनुराकृतिः ॥

शिवस्य जीव इह स्थितः । ॐ आँह्रीँक्रौँयँरँलँवँशँषँसँहँसः सोहं शिवस्य सर्वेन्द्रियाणि इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा । भो शिव इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ ततः स्ववामभागे जलपूरितकलशं दक्षिणभागे पूजोपहारं च निधाय कलशपूजनम्—ॐ कलशस्य मुखे० ॥ इति अङ्कुशमुद्रया सूर्यमंडलात्सर्वाणि तीर्थान्यावाह्य गन्धाक्षतपुष्पैः संपूज्य वं इति बीजेन धेनुमुद्रया अमृतीकृत्य मूलमंत्रेण अष्टवारम् अभिमंत्र्य तेन कलशोदकेन आत्मानं पूजोपहारं च प्रोक्षयेत्-ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ॥ इति प्रोक्ष्य गणपतिं षोडशोपचारैः संपूज्य न्यासाः—ॐ अस्य श्रीपार्थिवेश्वरचिन्तामणिविद्यामंत्रस्य निग्रहानुग्रहकर्ता ब्रह्मा ऋषिः। कामदुघा देवता । गायत्रीच्छंदः। शीघ्रवरदस्वरूपिणी श्रीपार्थिवेश्वरचिन्तामणिदेवता ह्रौं बीजं ह्रीँ शक्तिः नमः कीलकं मम चतुर्विधफलप्राप्तये श्रीपार्थिवेश्वरचिन्तामणिन्यासे पूजने च विनियोगः ॥ ॐ निग्रहानुग्रहकर्त्रे ब्रह्मणे नमः शिरसि । ॐ कामदुघादेवतायै नमो हृदि । ॐ गायत्रीच्छन्दसे नमो मुखे । ॐ शीघ्रवरदस्वरूपिणीश्रीपार्थिवेश्वरचिंतामणिदेवतायै नमो-हृदये । ॐ ह्रौं बीजाय नमो गुह्ये । ॐ ह्रीँ शक्तये नमः पादयोः । ॐ नमः कीलकाय नमः सर्वाङ्गे॥ करन्यासः—ॐह्रौँह्रीँ सर्वशक्तिधाम्ने शिवाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रौँह्रीँसर्वशक्तिधाम्ने शिवाय तर्जनीभ्यां नमः । ॐ ह्रौँह्रीँनित्यमलुप्तशक्तिधाम्ने शिवाय मध्यमाभ्यां नमः । ॐ ह्रौँह्रीँसर्वज्ञानशक्तिधाम्ने शिवाय अनामिकाभ्यां नमः। ॐह्रौँह्रीँनित्यानन्दशक्तिधाम्ने शिवाय कनिष्ठिकाभ्यां नम । ॐ ह्रौँह्रीँअनन्तशक्तिधाम्ने शिवाय करतलकरपृष्ठाभ्यां

नमः॥ षडङ्गन्यासः—ॐ ह्रौँह्रीँसर्वशक्तिधाम्ने शिवाय हृदयाय नमः। ॐ ह्रौँह्रीँसर्वशक्तिधाम्ने शिवाय शिरसे स्वाहा। ॐ ह्रौँह्रीँनित्यमलुप्तशक्तिधाम्ने शिवाय शिखायै वषट्। ॐ ह्रौँह्रीँ सर्वज्ञानशक्तिधाम्ने शिवाय कवचाय हुम्। ॐ ह्रौँह्रीँ नित्यानन्दशक्तिधाम्ने शिवाय नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐह्रौँह्रीँ अनन्तशक्तिधाम्ने शिवाय अस्त्राय फट्॥ इति न्यासान्विधाय ध्यानम्—ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम्। पद्मासीनं समन्तात्स्तुतम मरगणैर्व्याघ्रकृतिं वसानं विश्वाद्यं विश्ववन्द्यं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम्॥ इति रुद्ररूपमात्मानं ध्यात्वा मानसिकपूजां कुर्यात्—"ॐनमः शिवाय" मानसिकचन्दनपुष्पधूपदीपनैवेद्यानि कल्पयामि॥ ततः स्वहृदयकमलात्कुण्डलिनीमार्गेण ब्रह्मरंध्रद्वारा लिङ्गे आगतम् आत्मरूपं परं शिवं संभाव्य आवाहयेत्। आवाहनम्—ॐभूःपुरुषमावाहयामि। ॐभुवः पुरुषमावाहयामि। ॐस्वःपुरुषमावाहयामि। आयातु भगवान्महादेवः॥ सप्तमुद्राः—ॐ आवाहितो भव। स्थापितो भव। सन्मुखो भव। सन्निरुद्धो भव। विमलीकृतो भव। अवगुण्ठितो भव। अमृतीकृतो भव। इत्यावाह्य आसनम्—ॐह्रौँह्रीँजूंसः ॐ सद्योजातंप्रपद्यामिसद्योजातायवैनमो नमः आसनं समर्पयामि॥ ॐ ह्रौँह्रीँजूंसः ॐ भवेभवेनाति भवेभवस्व माम् पाद्यं सम०॥ ॐ ह्रौँह्रीँजूंसः ॐ भवोद्भवाय नमः अर्घ्यं सम०॥ ॐह्रौँह्रीँजूंसः ॐ वामदेवाय नमः आचमनं स०॥ ॐ ह्रौँह्रीँजूंसः ॐज्येष्ठाय नमः मधुपर्कं सम०॥ पयो दधि घृतं चैव मधु च शर्करान्वितम्।

पञ्चामृतं मयाऽऽनीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐ ह्रौंह्रींजूंसः शिवाय नमः पञ्चामृतस्नानं सम० ॥ पञ्चामृतस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानम् आचमनीयं सम० ॥ सकलपञ्चामृतस्नानपूजापरिपूरणार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि सम०॥ उत्तरे निर्माल्यं विसृज्य। ॐ सद्योजातं० इत्यादिपञ्चभिर्मन्त्रैः रुद्रमन्त्रैर्वा ॐ नमः शम्भवाय च० इत्येकेनैव मंत्रेण वा अभिषेकं कृत्वा (सुगन्धयुतजलार्द्रपुष्पेणसेचनमेवात्राभिषेकः) तर्पणम्—ॐ भवं देवं तर्पयामि। ॐ शर्वं देवं तर्प०। ॐ ईशानं देवं तर्प०। ॐ पशुपतिं देवं तर्प० ॐ उग्रं देवं तर्प० ॐ रुद्रं देवं तर्प०। ॐ भीमं देवं तर्प०। ॐ महान्तं देवं तर्प०। ॐ भवादिदेवानाम् अष्टौ पत्नीस्तर्प०॥ ॐ ह्रौंह्रींजूंसः ॐ ज्येष्ठाय नमः वस्त्रं कौपीनं सम०॥ ॐ ह्रौंह्रींजूंसः ॐ रुद्राय नमः यज्ञोपवीतं सम०॥ ॐ ह्रौंह्रींजूंसः ॐ कालाय नमः चंदनं सम०॥ ॐ ह्रौंह्रींजूंसः ॐ कलविकरणाय नमः अक्षतान्सम०॥ त्रिदलं त्रिगुणाकारं त्रिनेत्रं च त्रियायुधम्। त्रिजन्मपापसंहारमेकबिल्वं शिवार्पणम्॥ ॐ ह्रौंह्रींजूंसः ॐ बलविकरणाय नमः बिल्वपत्राणि पुष्पाणि च सम०॥ ॐ ह्रौंह्रींजूंसः ॐ बलाय नमः धूपमाघ्रापयामि॥ ॐ ह्रौंह्रींजूंसः ॐ बलप्रमथनाय नमः दीपं दर्शयामि॥ ॐ ह्रौंह्रींजूंसः ॐ सर्वभूतदमनाय नमः नैवेद्यं निवेदयामि॥ ॐ ह्रौंह्रींजूंसः ॐ मनोन्मनाय नमः आचमनं समर्पयामि॥ ॐ ह्रौंह्रींजूंसः ॐ शम्भवे नमः ताम्बूलं सम०॥ ॐ ह्रौं ह्रीं जूं सः ॐ शम्भवे नमः दक्षिणां सम०॥ ॐ ह्रौंह्रींजूंसः ॐ शम्भवे नमः नीराजनं सम०॥ ॐ ह्रौंह्रींजूंसः ॐ शम्भवे नमः पुष्पा-

ञ्जलिं सम० ॥ ॐ ह्रौंह्रींजूंसः ॐ शम्भवे नमः प्रदक्षिणां नमस्कारांश्च सम० ॥ अष्टमूर्तिपूजनम्—पूर्वे—भवाय क्षितिमूर्तये नमः ॥ ईशान्याम्—शर्वाय जलमूर्तये नमः। उत्तरे—रुद्राय अग्निमूर्तये नमः । वायव्याम्—उग्राय वायुमूर्तये नमः। पश्चिमे—भीमाय आकाशमूर्तये नमः। नैर्ऋत्याम्—पशुपतये यजमानमूर्तये नमः । दक्षिणे—महादेवाय सोममूर्तये नमः । आग्नेय्याम्—ईशानाय सूर्यमूर्तये नमः । इति अष्टदिक्षु गन्धाक्षतपुष्पैः संपूज्य यथाशक्तिशिवपञ्चाक्षरमंत्रं जपित्वा जपार्पणम्—अनेन जपेन शिवः प्रीयताम् । प्रार्थना—शान्तं पद्मासनस्थं शशिधरमुकुटं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रं शूलं वज्रं च खड्गं परशुमभयदं दक्षिणाङ्गे वहन्तम् । नागं पाशं च घंटां डमरुकसहितं चाङ्कुशं वामभागे नानालङ्कारयुक्तं स्फटिकमणिनिभं पार्वतीशं नमामि ॥ १ ॥ करचरणकृतं वाक्कायजं कर्मजं वा श्रवणनयनजं वा मानसं वाऽपराधम् । विहितमविहितं वा सर्वमेतत्क्षमस्व जय जय करुणाब्धे श्रीमहादेव शंभो ॥ २ ॥ इति संप्रार्थ्य "ॐ प्रयातु भगवान्महादेवः" इति विसृज्य निर्माल्यमभिवन्द्य ॥ अर्पणम्-अत्राय० अनेन पार्थिवलिङ्गपूजनकृतेन श्रीसाम्बसदाशिवः प्रीयताम् ॥ ततो निर्णजनोदकं पात्रे आदाय पिबेत्—कालमृत्युहरं पुण्यं ब्रह्महत्याविनाशनम् । व्याधिघ्नं पुण्यदं पास्ये शिवनिर्णजनोदकम् ॥ इति निर्माल्यपुष्पादिकं लिंगं च नद्यादौ जलमध्ये क्षिपेत् ॥

॥ इति शिवपार्थिवेश्वरचिन्तामणिपूजाप्रयोगः ॥

॥ ७२ ॥ अथ गायत्रीपुरश्चरणप्रयोगः ॥

कर्ता प्रारंभात्पूर्वदिने नित्यकर्म समाप्य सुमुहूर्ते गृहे तीर्थादौ बिल्ववृक्षाश्रये वा गत्वा । आचम्य प्राणानायम्य ॥ देशकालौ संकीर्त्य

करिष्यमाणगायत्रीपुरश्चरणे अधिकारसिद्ध्यर्थं कृच्छ्रत्रयममुकप्रत्याम्नायद्वारा अहमाचरिष्ये ॥ इति संकल्प्य धेनुदानहोमसुवर्णादिप्रत्याम्नायविधिना कृच्छ्राणि संपादयेत् ॥ पुनर्देशकालौ संकीर्त्य मम सकलपापक्षयद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं चतुर्विंशतिलक्षजपात्मकं गायत्रीपुरश्चरणं स्वयं विप्रद्वारा वाऽहं करिष्ये ॥ तदंगत्वेन गणपतिपूजनं स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं नांदीश्राद्धमाचार्यादिजपकर्तृवरणं च करिष्ये ॥ इति संकल्प्य सुमुखश्चेत्यादिना गणपतिपूजनादि नान्दीश्राद्धान्तं च विधाय नान्दीश्राद्धान्ते "सविता प्रीयताम्" इति पठित्वा देशकालौ संकीर्त्य गायत्रीपुरश्चरणे "जपकर्तारं त्वामहं वृणे" इति पृथक् पृथक् स्वयं जपार्थं विप्रान्वृणुयात् ॥ ततस्तान्वस्त्रासनकमंडलुमालादिभिः संपूज्य देवताः प्रार्थयेत् ॥ सूर्यः सोमो यमः कालःसंध्ये भूतान्यहः क्षपा ॥ पवमानो दिक्पतिर्भूराकाशं खेचरामराः ॥ ब्रह्मशासनमास्थाय कल्पध्वमिह सन्निधिम् ॥ इति पठित्वा ततः कुशाद्यासनोपविष्टः पवित्रपाणिराचम्य देशकालौ स्मृत्वा अमुकगोत्रोऽमुकशर्माऽहममुकशर्मणो मम यजमानस्य वा सकलपापक्षयद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं गायत्रीपुरश्चरणान्तर्गताऽमुकसंख्यापरिमितगायत्रीजपं करिष्ये ॥ इति प्रत्यहं जपार्थं संकल्प्य ॥ पूर्वोक्तरीत्या भूतशुद्ध्यादिमहान्यासान् कृत्वा भगवत्याः श्रीगायत्रीदेव्याश्च पूजनमपि निर्वर्त्य जपार्थं ब्राह्मणान् उपवेश्य शापमोचनं चतुर्विंशतिमुद्राणां प्रदर्शनादिकञ्च समाप्य मूलमंत्रेण आचमनं प्राणायामञ्च कृत्वा न्यासांश्च कुर्यात् ॥ ॐ तत्सवितुरिति गायत्र्या विश्वामित्रऋषिः सविता देवता गायत्री छंदः जपे विनियोगः ॥ ॐ विश्वामित्राय ऋषये नमः शिरसि ॥ ॐ गायत्रीछंदसे नमो मुखे । ॐ सवितृदेवतायै नमो हृदि ॥ इति न्यस्य ॐ तत्सवितुरित्यंगुष्ठाभ्यां नमः ॥ ॐ वरेण्यं तर्जनीभ्यां नमः ॥ ॐ भर्गो देवस्य

मध्यमाभ्यां न०॥ ॐधिमहनामिकाभ्यां नमः॥ॐ धियोयोनः कनिष्ठिका-भ्यांनमः॥ॐप्रचोदयात् करतलकरपृष्ठाभ्यां न०।इति करन्यासं कृत्वा एव-मेव हृदयादिषडंगन्यासं कुर्यात्। स यथा—ॐतत्सवितुरिति हृदयाय नमः ॥१॥ ॐवरेण्यमिति शिरसे स्वाहा ॥२॥ ॐभर्गो देवस्येति शिखायै वषट् ॥३॥ ॐधीमहीति कवचायहुम् ॥४॥ ॐधियो यो नः इति नेत्रयोवौषट ॥५॥ ॐप्रचोदयादिति अस्त्राय फट् ॥६॥ ततो जपार्थं रुद्राक्षमालां मूल-मन्त्रेण संप्रोक्ष्य ॐमां माले महामाये सर्वशक्तिस्वरूपिणि। चतुर्वर्गस्त्व-यि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव। इति प्रार्थ्य ॥ ॐअविघ्नं कुरु माले त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे॥ जपकाले च सिद्धयर्थं प्रसीद मम सिद्धये ॥ इति तामादाय मंत्रदेवतां सवितारं ध्यायन् हृदयसमीपे मालां धारयन् मंत्रार्थं स्मरन्मध्यांदिनावधि जपेत् ॥ अतित्वरायां सार्द्धत्रयप्रहरावधि जप्त्वाऽन्ते पुनः प्रणवमुक्त्वा "ॐ त्वं माले सर्वदेवानां प्रीतिदा शुभदा भव ॥ शिवं कुरुष्व मे भद्रे यशो वीर्यं च सर्वदा"॥ १ ॥ इति मालां शिरसि निधाय त्रिः प्राणानायम्य पूर्वोक्तं न्यासत्रयं कृत्वा सुरभिर्ज्ञान० इति अष्टौ मुद्राः प्रदर्शयेत्। जपमीश्वरायार्पयेत्॥ प्रत्यहं समानसंख्यया एव जपो न तु न्यूनाधिकः॥ उत्तमजपो द्विसाहस्रः मध्यमः सार्द्धद्विसाहस्रः अधमस्त्रिसाहस्रो ज्ञेयः॥ एवं पुरश्चरणजपसमाप्तौ होमः ॥ पुरश्चरणसां-गतासिद्धयर्थं होमविधिं करिष्ये ॥ इति संकल्प्य अग्निं प्रतिष्ठाप्य पीठे कलशस्थापनान्तं सूर्यादिनवग्रहपूजनादि कर्म कृत्वा कुशकण्डिकां कुर्यात्। ततः आज्यभागान्ते इदं हवनीयद्रव्यमन्वाधानोक्तदेवताभ्योऽस्तु न ममेति यजमानद्वारा त्यागं कृत्वा अर्कादिसमिच्चर्वाज्याहुतिभिर्ग्रहहो-मं संपाद्य प्रधानदेवतां सवितारं चतुर्विंशतिसहस्रतिलाहुतिभिस्त्रिसहस्रसं-ख्याकाभिः पायसाहुतीत्योदनाहुतिभिर्घृतमिश्रतिलाहुतिभिर्दूर्वाहुतिभिः

अश्वत्थोदुम्बरप्लक्षवरसमिधाहुतिभिश्च हुत्वा शेषेण स्विष्टकृद्धोमं कुर्यात्॥ होमे सप्रणवव्याहृतिरहिता स्वाहांता गायत्री। दूर्वात्रयस्यैकाहुतिः।दूर्वास-मिधो दधिमध्वाज्याक्ताः। ततो होमांते बलिदानं कृत्वा यजमानस्याभि-षेकः कार्यः॥तत प्रतिलक्षं सुवर्णनिष्कत्रयं तदर्धं वा शक्त्या वा दक्षिणा॥ होमांते जले देवं सवितारं संपूज्य होमसंख्यादशांशेन २४०००गायत्र्यंते "सवितारं तर्पयामि" इत्युक्त्वा तर्पणं कार्यम्॥तर्पणदशांशेन२४००गाय-त्र्यन्ते "आत्मानमभिषिंचामि नमः" इतियजमानमूर्ध्न्यभिषेकः। होमतर्प-णाभिषेकाणां मध्ये यदेव न संभवति तत्स्थाने तत्तद्द्विगुणो जपः कार्यः॥ अभिषेकसंख्यादशांशेन विप्रभोजनम्॥ पुरश्चरणं संपूर्णमस्त्विति विप्रान् वाचयित्वा ईश्वरार्पणं कार्यम् । प्रत्यहं यज्जाग्रत इति शिवसङ्कल्पमंत्रस्य त्रिः पाठः ॥ कर्त्ता ब्राह्मणैः सह हविष्याशी सत्यवाक् अधःशायी ब्रह्म-चारी भवेत् ॥ विष्णुशयनमासेषु पुरश्चरणं न कार्यम्॥ तीर्थादौ शीघ्रं सिद्धिः । बिल्ववृक्षाश्रयेण जपे एकाहात्सिद्धिः ॥

॥ इति गायत्रीपुरश्चरणप्रयोगः ॥

॥ ७२ ॥ अथ चतुर्विंशतिगायत्र्यः ॥

ब्रह्मगायत्री–ॐतत्सवितु० ॥ १ ॥ विष्णु०–ॐनारायणाय विद्महे । वासुदेवाय धीमहि ॥ तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ॥२॥ शिव०–ॐतत्पुरुषाय विद्महे । महादेवाय धीमहि ॥ तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ॥ ३ ॥ राम०–ॐदाशरथाय विद्महे । सीतावराय धीमहि ॥ तन्नो रामः प्रचोद-यात् ॥ ४ ॥ लक्ष्मण०–ॐदाशरथाय विद्महे । उर्मिलेशाय धीमहि ॥ तन्नो लक्ष्मणः प्रचोदयात् ॥५॥ कृष्ण०–ॐदेवकीनन्दनाय विद्महे । वासुदेवाय धीमहि ॥ तन्नः कृष्णः प्रचोदयात् ॥६॥ नृसिंह०–ॐनृसिंहाय विद्महे । वज्रदंताय धीमहि ॥ तन्नो नृसिंहः प्रचोदयात् ॥७॥ जल०–ॐ जलबिंबाय विद्महे नीलपुरुषाय धीमहि ॥ तन्नोऽम्बु प्रचोदयात् ॥ ८ ॥ सूर्य०–ॐभास्कराय विद्महे । दिवाकराय धीमहि ॥ तन्नः सूर्यः प्रचोदयात् ॥ ९ ॥ अग्नि०–ॐमहाज्वालाय विद्महे ॥ अग्निमथाय धीमहि ॥ तन्नः अग्निः प्रचोदयात् ॥ १० ॥ पृथ्वी०–ॐपृथ्वीदेव्यै च विद्महे । सहस्र-

मूर्तये धीमहि ॥ तनः पृथ्वी प्रचोदयात् ॥११॥ नारायण०—ॐनारायणाय विद्महे । शेषशायि-ने धीमहि ॥ तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ॥१२॥ हनुमद्गा०—ॐ अंजनीजाय विद्महे । वायुपुत्राय धीमहि ॥ तन्नो वीरः प्रचोदयात् ॥१३॥ गरुडगा०—ॐ तत्पुरुषाय विद्महे । स्वर्णपक्षाय धीमहि ॥ तन्नो गरुडः प्रचोदयात् ॥ १४ ॥ देवी०—ॐ देव्यै ब्रह्माण्यै विद्महे । महाशक्त्यै च धीमहि ॥ तन्नो देवी प्रचोदयात् ॥ १५ ॥ गोपालगा०—ॐगोपीप्रियाय विद्महे । वासुदेवाय धीमहि ॥ तन्नो गोपः प्रचोदयात् ॥ १६ ॥ परशुराम०—ॐ जामदग्न्याय विद्महे । महावीराय धीमहि ॥ तन्नो विप्रः प्रचोदयात् ॥१७॥ तुलसी०—ॐ तुलसीपत्राये विद्महे । विष्णुप्रियायै धीमहि ॥ तन्नो वृन्दा प्रचोदयात् ॥ १८ ॥ गुरु०—ॐ परब्रह्मणे विद्महे । गुरुदेवाय धीमहि ॥ तन्नो गुरुः प्रचोदयात् ॥ १९ ॥ आकाश०—ॐ आकाशाय विद्महे । नभोदेवाय धीमहि ॥ तन्नो ख हि प्रचोदयात् ॥२० ॥ चन्द्र०—ॐक्षीरपुत्राय विद्महे । अमृततत्वाय धीमहि ॥ तन्नश्चंद्रः प्रचोदयात् ॥ २१ ॥ हंस०—ॐ परमहंसाय विद्महे । महत्तत्त्वाय धीमहि ॥ तन्नो हंसः प्रचोदयात् ॥ २२ ॥ लक्ष्मी०— ॐमहालक्ष्म्यै च विद्महे । विष्णुप्रियायै धीमहि ॥ तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात् ॥ २३ ॥गंगा०—ॐ भागीरथ्यै च विद्महे ॥ विष्णुपद्यै च धीमहि ॥ तन्नो गंगा प्रचोदयात् ॥ ॥ २४ ॥ इति चतुर्विंशतिगायत्र्यः ॥

॥ ७४ ॥ **शताक्षरागायत्रीमन्त्रः** ॥ ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् ॥ ॐ जातवेदसेसुनवामसोममरातीयतो निदहाति वेदः । सनः पर्षदति दुर्गाणिविश्वानावेवसिन्धुदुरितात्यग्निः ॥ ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ॥

॥ ७५ ॥ **वेदाधिकाररहितानां गायत्रीमन्त्रः** ॥ ह्रीं यो देवः सवितास्माकं मनःप्राणेन्द्रियक्रियाः ॥ प्रचोदयति तद् भर्गं वरेण्यं समुपास्महे ॥

॥७६॥ **जपसिद्ध्यर्थं नियमाः** ॥ शान्तः स्वरासयुक्तो बिन्दुभूषितमस्तकः । ब्रह्मद्याद्यो मनुः प्रोक्तो भजतां कल्पभूरुहः । मनःसंवरणं शौचं मौनं मन्त्रार्थचिन्तनम् । अव्यग्रत्वमनिर्वेदो जपसम्पत्तिहेतवः ॥ धीरो धृतव्रतो मौनी जितक्रोधो जितेन्द्रियः । धौतवासास्त्वथ शायी रुद्रलोके महीयते ॥

॥ ७७ ॥ **जपफलम्** ॥ — गृहे चैकगुणः प्रोक्तो गोष्ठे दशगुणः स्मृतः । अयुतं पर्वते पुण्यं नद्यां लक्षगुणो जपः ॥ कोटिर्देवालये प्राप्ते अनन्तं शिवसन्निधौ । एवं [illegible] प्रत्यां कुर्याच्छित्रमायुःयमाप्नुयात् ॥ यस्मिन् स्थाने जपं कृत्वा शक्रो हरति तज्जपम् । तन्मृदा लक्ष्मं कुर्वीत ललाटे तिलकाकृति ॥

॥ ७८ ॥ अथ सन्तानगोपालमंत्रजपविधिः ॥

अस्य श्रीसंतानगोपालमंत्रस्य श्रीनारद ऋषिः । अनुष्टुप्छन्दः । श्रीकृष्णो देवता । ग्लौं बीजम् । नमः शक्तिः ॥ मम (यजमानस्य वा) संतानगोपालप्रसादसिद्ध्यर्थं जपे विनियोगः ॥ न्यासः—ॐदेवकीसुत गोविंद हृदयाय नमः ॥ ॐ वासुदेव जगत्पते शिरसे स्वाहा ॥ ॐ देहि मे तनयं कृष्ण शिखायै वषट् ॥ ॐ त्वामहं शरणं गतः कवचाय हुम् ॥ ॐ नमः अस्त्राय फट् ॥ अथ ध्यानम् ॥ ॐवैकुण्ठतेजसा दीप्तमर्जुनेन समन्वितम् ॥ समर्पयंतं विप्राय नष्टानानीय बालकान् ॥१॥ मंत्रोद्धारः ॥ ॐ (श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं) देवकीसुत गोविंद वासुदेव जगत्पते । देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः ॥ १ ॥ (मंत्रमहोदधौ) लक्षं जपोऽयुतं होमस्तिलैर्मधुरसंयुतैः ॥ अर्चा पूर्वोदिता चैवं मंत्रः पुत्रप्रदो नृणाम् ॥१॥ इति मूलमन्त्रः ॥ इति संतानगोपालमंत्रजपविधिः समाप्तः॥

॥ ७९ ॥ अथ (सर्वारिष्टशान्त्यर्थं) महामृत्युञ्जयजपविधिः ॥

आसने उपविश्य शिखां बद्ध्वा रुद्राक्षमालां भस्मपवित्रे च धृत्वा आचम्य प्राणानायम्य ललाटे तिलकं कृत्वा शान्तिपाठं पठित्वा गणेशादीन्नमस्कृत्य सुमुखश्चेत्यादि पठित्वा देशकालौ सङ्कीर्त्य अद्येत्यादि० मम यजमानस्य वा शरीरे स्थितस्य अमुकरोगस्य समूलनाशनेन अपमृत्युनिवारणार्थं क्षिप्रमारोग्यप्राप्त्यर्थं विषमस्थानस्थितसकलारिष्टनिवृत्तये श्रीमृत्युञ्जयदेवताप्रीत्यर्थम् अमुकप्रणवयुतमहामृत्युञ्जयजपं स्वयं ब्राह्मणद्वारा वा अमुकसंख्ययाऽहं करिष्ये॥ तदङ्गत्वेन गणपतिपूजनं पुण्याहवाचनं

---

१ वर्ज्यब्राह्मणाः—काणः कुष्ठी सदाऽशुद्धः स्वयंभूः श्यामदन्तकः । क्लीबोऽपि पतितः कृष्णः कुनखी शास्त्रवर्जितः ॥

मातृकापूजनं वसोर्धारायुष्यमन्त्रजपं नान्दीश्राद्धम् आचार्यादिवरणं च करिष्ये ॥ इति सङ्कल्प्य ब्राह्मणवरणान्तं कृत्वा हस्ते जलमादाय-अस्य श्रीमहामृत्युञ्जयमन्त्रस्य वसिष्ठऋषिः श्रीमृत्युञ्जयरुद्रो देवता अनुष्टुप्छन्दः हौंबीजं जूंशक्तिः सः कीलकं मृत्युञ्जयप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ॥ इति संकल्प्य यथाशक्ति न्यासान् कुर्यात् यथा-वसिष्ठऋषये नमः शिरसि। अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे। श्रीमहामृत्युञ्जयरुद्रदेवतायै नमः हृदये। हौं बीजाय नमः गुह्ये। जूं शक्तये नमः पादयोः। सः कीलकाय नमः सर्वाङ्गेषु ॥ ॐत्र्यंबकम् अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐयजामहे तर्जनीभ्यां नमः। ॐ सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनं मध्यमाभ्यां नमः। ॐ उर्वारुकमिव बन्धनात् अनामिकाभ्यां नमः। ॐ मृत्योर्मुक्षीय कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐमामृतात् करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ एवं हृदयादि ॥ ॐत्र्यम्बकं हृदयाय नमः। ॐयजामहे शिरसे स्वाहा। ॐ सुगन्धिं पुष्टिवर्धनं शिखायै वषट्। ॐ उर्वारुकमिव बन्धनात् कवचाय हुम्। ॐ मृत्योर्मुक्षीय नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ मामृतात् अस्त्राय फट् ॥ 'ध्यानम्'-चन्द्रोद्भासितमूर्धजं सुरपतिं पीयूषपात्रं महद्धस्ताब्जेन दधत्सुदिव्यममलं हास्यास्यपङ्केरुहम् ॥ सूर्येन्द्वग्निविलोचनं करतलैः पाशाक्षसूत्राङ्कुशाम्भोजं बिभ्रतमक्षयं पशुपतिं मृत्युञ्जयं तं स्मरे ॥१॥ मानसोपचारैः सम्पूज्य ॥ ॐ लं पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि। ॐ हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि। ॐ यं वाय्वात्मकं धूपं समर्पयामि। ॐ रं तेजसात्मकं दीपं समर्पयामि। ॐ वं अमृतात्मकं नैवेद्यं समर्पयामि। ॐ सं सर्वात्मकं मंत्रपुष्पं समर्पयामि ॥ मृत्युञ्जयं पूजयित्वा निम्नदर्शितप्रकारत्रयात्मकमन्त्राणाम् अन्यतमेन जपानुष्ठानं विधेयम् ॥

अथ मृत्युञ्जयमन्त्रः-॥१॥ ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ त्र्यम्बकं ॥

जामहेसुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम्।।उर्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात्। ॐ स्वः ॐ भुवः ॐ भूः ॐ। इत्यष्टचत्वारिंशद्वर्णात्मकः केवलमृत्युञ्जयमन्त्रः अष्टप्रणवयुतः ॥२॥ अथ द्वितीयो मृतसञ्जीवनीमृत्युञ्जयमन्त्रः- ॐ हौंजूंसः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ त्र्यम्बकँयजामहेसुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम् ॥ उर्व्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ॥ ॐस्वः भुवः भूः ॐसः जूंहौं ॐ इति द्विपञ्चाशद्वर्णात्मको मृतसञ्जीवनीमन्त्रःषट्प्रणवयुतः॥३॥ तृतीयो महामृत्युञ्जयमन्त्रः-ॐ हौं ॐ जूं ॐ सः ॐ भूः ॐभुवः ॐस्वः ॐत्र्यम्बकँयजामहेसुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम् ॥ उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ॥ ॐ स्वः ॐभुवः ॐभूः ॐ सः ॐ जूं ॐ हौं ॐ स्वाहा ॥ इति द्विपष्टिवर्णात्मको महामृत्युञ्जयमन्त्रश्चतुर्दशप्रणवयुतः ॥ जपसमाप्त्यनन्तरं पूर्वोक्तान् उत्तरन्यासान् कृत्वा देवाय जपनिवेदनं कुर्यात् । यथा-गुह्यातिगुह्यगोप्ता त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम् । सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादान्महेश्वर ॥ इति जपं निवेद्य प्रार्थयेत्-मृत्युञ्जय महारुद्र त्राहि मां शरणागतम् । जन्ममृत्युजराव्याधिपीडितं कर्मबन्धनैः ॥ 'अर्पणम्'—अनेन यथासंख्याकेन महामृत्युञ्जयजपाख्येन कर्मणा श्रीमहामृत्युञ्जयः प्रीयतां न मम ॥ ततो जपसांगतासिद्ध्यर्थं यथाकामनोद्रव्येण[1] तद्दशांशदुग्धाज्यसिक्तापामार्गसमिद्भिर्होमस्तद्दशांशेन तर्पणं तद्दशांशेन मार्जनं तद्दशांशेन ब्राह्मणभोजनं च कुर्यात् ॥

पुराणोक्तमृत्युञ्जयमंत्रः-ह्रीं मृत्युञ्जय महादेव त्राहि मां शरणागतम् ॥ जन्ममृत्युजराव्याधिपीडितं कर्मबन्धनैः ॥

॥ इति महामृत्युञ्जयजपविधिः ॥

---

१ कामनाविशेषपरत्वे 'होमद्रव्याणि'—पुत्रार्थे शाल्मिबीजेन धनार्थे बिल्वपत्रकैः । दूर्वाभिरायुष्कामस्तु पुष्टिकामस्तु वेतसैः ॥ कन्याकामस्तु लाजाभिः पशुकामो घृतेन तु ॥ विद्याकामस्तु पलाशैर्दशांशेन तु होमयेत् ॥ धान्यकामो यवैश्चैव गुग्गुलेन रिपुक्षये । तिलैरारोग्यकामस्तु व्रीहिभिः सुखमश्नुते ॥

॥ ८० ॥ अथ (संक्षेपतो) वेदोक्तसबीजनवग्रहमन्त्रजपप्रयोगः ॥

आचम्य प्राणानायम्य सङ्कल्पः—विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य० शुभपुण्यतिथौ ममात्मनः यजमानस्य वा जन्मराशेः नामराशेः सकाशाद्वा जन्मलग्नाद्वर्षलग्नाद्वा चतुर्थाष्टमद्वादशाद्यनिष्टस्थानस्थितामुकग्रहपीडापरिहारद्वारा तृतीयैकादशस्थानस्थितवच्छुभफलप्राप्त्यर्थम् आयुरारोग्यप्राप्त्यर्थं च अमुकग्रहस्य अमुकसङ्ख्यया जपं करिष्ये ॥ इति सङ्कल्प्य जपं कुर्यात् ॥

सूर्यमन्त्रजपप्रयोगः-आकृष्णेनेत्यस्य हिरण्यस्तूपाङ्गिरसऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः सूर्यो देवता सूर्यप्रीतये जपे विनियोगः ॥ ॐ ह्राँ ह्रीं ह्रौं सः ॐभूर्भुवः स्वः ॐआकृष्णेनरजसावर्त्तमानोनिवेशयन्नमृतम्मर्त्यञ्च ॥ हिरण्ययेन सविता रथेनादेवो याति भुवनानिपश्यन् । ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः ह्रौं ह्रीं ह्राँ ॐ सूर्याय नमः ॥ $\frac{३३}{३३}$ ॥ अस्य जपसङ्ख्या सप्तसहस्राणि ७००० ॥ जपान्ते अर्कसमित्तिलपायसघृतैर्दशांशहोमः तद्दशांशेन तर्पणं तद्दशांशेन मार्जनं तद्दशांशेन ब्राह्मणभोजनम् ॥ अथदानद्रव्याणि—माणिक्यगोधूमसवत्सधेनुः कौसुम्भवासागुडहेमताम्रम् ॥ आरक्तकं चन्दनमम्बुजं च वदन्ति दानं हि सुदीप्तधाम्ने ॥१॥

चन्द्रमन्त्रजपप्रयोगः—इममित्यस्य देववातऋषिः अत्यष्टिश्छन्दः चन्द्रो देवता चन्द्रप्रीतये जपे विनियोगः॥ ॐश्राँ श्रीँ श्रौँसः ॐभूर्भुवःस्वः ॐइमन्देवाऽअसपत्नꣳसुवद्ध्वम्महतेक्षत्रायमहतेज्ज्यैष्ठ्यायमहतेजानराज्ज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय ॥ इमममुष्ष्यपुत्रममुष्ष्यैपुत्रमस्यैविशऽएषवोमीराजासोमोस्माकम्ब्राह्मणानाꣳराजा । ॐस्वःभुवःभूःॐसः श्रौँ श्रीँ श्राँ ॐ सोमाय नमः॥ $\frac{९}{४०}$ ॥ जपसङ्ख्या एकादशसहस्राणि ११०००॥

जपान्ते पलाशसमित्तिलपायसघृतैर्दशांशहोमः तद्दशांशेन तर्पणं तद्दशांशेन मार्जनं तद्दशांशेन ब्राह्मणभोजनम् ॥ अथ दानद्रव्याणि—सद्वंशपात्रस्थिततन्दुलांश्च कर्पूरमुक्ताफलशुभ्रवस्त्रम् । गवोपयुक्तं वृषभं च रौप्यं चन्द्राय दद्याद् घृतपूर्णकुम्भम् ॥ २ ॥

भौममन्त्रजपप्रयोगः—अग्निर्मूर्द्धेति मन्त्रस्य विरूपाक्षऋषिः गायत्रीच्छन्दः भौमो देवता भौमप्रीतये जपे विनियोगः ॥ ॐ क्राँ क्रीँ क्रौँसः ॐभूर्भुवःस्वः ॐअग्निर्मूर्द्धादिवः ककुत्पतिः पृथिव्याऽअयम् ॥ अपाᳪरेताᳪसिजिन्वति । ॐ स्वःभुवःभूः ॐसः क्रौँ क्रीँ क्राँ ॐ भौमाय नमः । १२/३ । जपसङ्ख्या दशसहस्राणि १०००० ॥ जपान्ते खादिरसमित्तिलपायसघृतैर्दशांशहोमः तद्दशांशेन तर्पणं तद्दशांशेन मार्जनं तद्दशांशेन ब्राह्मणभोजनम् ॥ अथ दानद्रव्याणि-प्रवालगोधूममसूरिकाश्च वृषोऽरुणश्चापि गुडः सुवर्णम् । आरक्तवस्त्रं करवीरपुष्पं ताम्रं च भौमाय वदन्ति दानम् ॥३॥

बुधमन्त्रजपप्रयोगः—उद्बुध्यस्वेति मन्त्रस्य परमेष्ठी ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः बुधो देवता बुधप्रीतये जपे विनियोगः ॥ ॐब्राँ ब्रीँ ब्रौँ सः ॐभूर्भुवःस्वः ॐउद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्त्ते सᳪसृजेथामयञ्च ॥ अस्मिन्त्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन्विश्वेदेवायजमानश्चसीदत । ॐस्वःभुवःभूः ॐसः ब्रौँ ब्रीँ ब्राँ ॐ बुधाय नमः ॥ ६१/१८ ॥ जपसङ्ख्या चतुःसहस्राणि ४००० ॥ जपान्ते अपामार्गसमित्तिलपायसघृतैर्दशांशहोमः तद्दशांशेन तर्पणं तद्दशांशेन मार्जनं तद्दशांशेन ब्राह्मणभोजनम् ॥ अथ दानद्रव्याणि-चैलं च नीलं कलधौतकांस्यं मुद्गाज्यगारुत्मतसर्वपुष्पम् । दासी च दन्तो द्विरदस्य नूनं वदन्ति दानं विधुनन्दनाय ॥ ४ ॥

बृहस्पतिमन्त्रजपप्रयोगः—बृहस्पत इति मन्त्रस्य गृत्समदऋषिः

त्रिष्टुप्छन्दः बृहस्पतिर्देवता बृहस्पतिप्रीतये जपे विनियोगः॥ ॐ ज्रॉं ज्रीं ज्रौं सः ॐ भूर्भुवःस्वः ॐ बृहस्पतेऽअतियदर्य्योऽअर्हाद्द्युमद्विभातिक्रतुमज्जनेषु ॥ यद्दीदयच्छवसऽऋतप्रजाततदस्मासु द्रविणन्धेहिचित्रम् । ॐस्वः भुवः भूः ॐसः ज्रौं ज्रीं ज्रॉं ॐबृहस्पतये नमः ॥$\frac{3}{२६}$॥ जपसङ्ख्या एकोनविंशतिसहस्राणि १९००० ॥ जपान्ते अश्वत्थसमित्तिलपायसघृतैर्दशांशहोमः तद्दशांशेन तर्पणं तद्दशांशेन मार्जनं तद्दशांशेन ब्राह्मणभोजनम् । अथ दानद्रव्याणि—शर्करा च रजनी तुरङ्गमः पीतधान्यमपि पीतमम्बरम् । पुष्परागलवणे च काञ्चनं प्रीतये सुरगुरोः प्रदीयताम्॥५॥

शुक्रमन्त्रजपप्रयोगः—अन्नात्परिस्रुत इति मन्त्रस्य अश्विसरस्वतीन्द्रा ऋषयोऽतिजगती छन्दः शुक्रो देवता शुक्रप्रीतये जपे विनियोगः ॥ ॐद्रां द्रीं द्रौं सः ॐभूर्भुवःस्वः ॐ अन्नात्परिस्रुतोरसम्ब्रह्मणाव्यपिवत्क्षत्रम्पयः सोमम्प्रजापतिः॥ ऋतेनसत्यमिन्द्रियंविपानᳪ शुक्रमन्धसऽ इन्द्रस्येन्द्रियमिदम्पयोऽमृतम्मधु । ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः द्रौं द्रीं द्रां ॐशुक्राय नमः ॥$\frac{१९}{७५}$॥ जपसङ्ख्या षोडशसहस्राणि १६०००॥ जपान्ते औदुम्बरसमित्तिलपायसघृतैर्दशांशहोमः तद्दशांशेन तर्पणं तद्दशांशेन मार्जनं तद्दशांशेन ब्राह्मणभोजनम् ॥ अथ दानद्रव्याणि—चित्राम्बरं शुभ्रतुरङ्गमश्च धेनुश्च वज्रं रजतं सुवर्णम् । सुतण्डुलानुत्तमगन्धयुक्तान्वदन्ति दानं भृगुनन्दनाय ॥ ६ ॥

शनैश्चरमन्त्रजपप्रयोगः—शन्नोदेवीरिति मन्त्रस्य दध्यङ्ङाथर्वणऋषिः गायत्रीछन्दः आपो देवता शनैश्चरप्रीतये जपे विनियोगः॥ ॐखां खीं खौं सः ॐ भूर्भुवःस्वः ॐशन्नोदेवीरभिष्टयऽआपोभवन्तुपीतये ॥ शंय्योरभिस्रवन्तुनः ।ॐस्वः भुवः भूः ॐसः खौं खीं खां ॐशनैश्चराय

नमः ॥ ११/३६ ॥ जपसङ्ख्या त्रयोविंशतिसहस्राणि २३००० ॥ जपान्ते शमीसमित्तिलपायसघृतैर्दशांशहोमः तद्दशांशेन तर्पणं तद्दशांशेन मार्जनं तद्दशांशेन ब्राह्मणभोजनम् ॥ अथ दानद्रव्याणि-माषाश्च तैलं विमलेन्द्रनीलं तिलाः कुलित्था महिषी च लोहम् । कृष्णा च धेनू रविनन्दनाय दानं प्रदेयं विषमस्थिताय ॥ ७ ॥

राहुमन्त्रजपप्रयोगः-कयानश्चित्र इति मन्त्रस्य वामदेवऋषिः गायत्रीछन्दः राहुर्देवता राहुप्रीतये जपे विनियोगः ॥ ॐभ्रॉं भ्रीं भ्रौं सः ॐभूर्भुवःस्वःॐकया नश्चित्रऽ आभुवदूती सदावृधः सखा ॥ कया शचिष्ठया वृता । ॐस्वः भुवः भूः ॐ सः भ्रौं भ्रीं भ्रां ॐराहवे नमः ॥ ३६ ॥ जपसङ्ख्या अष्टादशसहस्राणि १८००० ॥ जपान्ते दूर्वासमित्तिलपायसघृतैर्दशांशहोमः तद्दशांशेन तर्पणं तद्दशांशेन मार्जनं तद्दशांशेन ब्राह्मणभोजनम् ॥ अथ दानद्रव्याणि-गोमेदरत्नं च तुरङ्गमश्च सुनीलचैलं च सुनीलकम्बलम् । तिलाश्च तैलं खलु लोहमिश्रं स्वर्भानवे दानमिदं प्रदेयम् ॥ ८ ॥

केतुमन्त्रजपप्रयोगः-केतुङ्कृण्वन्निति मन्त्रस्य मधुच्छन्दा ऋषिःअनिरुक्ता गायत्रीछन्दः केतवो देवताः केतुप्रीतये जपे विनियोगः-ॐप्रॉं प्रीं प्रौं सः ॐभूर्भुवःस्वः ॐ केतुङ्कृण्वन्नकेतवे पेशोमर्य्याऽअपेशसे ॥ समुषद्भिरजायथाः । ॐस्वः भुवः भूः ॐसः प्रौं प्रीं प्रॉं ॐकेतवे नमः ॥ ३६ ॥ जपसङ्ख्या सप्तदशसहस्राणि १७००० ॥ जपान्ते कुशसमित्तिलपायसघृतैर्दशांशहोमःतद्दशांशेन तर्पणं तद्दशांशेनमार्जनं तद्दशांशेन ब्राह्मणभोजनम् ॥ अथ दानद्रव्याणि-वैडूर्यरत्नं सतिलं च तैलं सुकम्बलं चापि मदो मृगस्य । शस्त्रं च केतोः परितोषहेतोश्छागस्य दानं कथितं मुनीन्द्रैः ॥ ९ ॥

॥ इति संक्षेपतो वेदोक्तसबीजनवग्रहमन्त्रजपप्रयोगः ॥

॥ ८१ ॥ अथ पुराणोक्तनवग्रहमन्त्राः ॥

अथ पुराणोक्तनवग्रहमन्त्राः-सूर्यमन्त्रः-जपाकुसुमसङ्काशं काश्यपेयं महाद्युतिम् ॥ तमोऽरिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम् ॥१॥ चन्द्रमन्त्रः-दधिशंखतुषाराभं क्षीरोदार्णवसन्निभम् ॥ नमामि शशिनं सोमं शम्भोर्मुकुटभूषणम् ॥ २ ॥ भौममन्त्रः-धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्कान्तिसमप्रभम् ॥ कुमारं शक्तिहस्तं च मङ्गलं प्रणमाम्यहम् ॥ ३ ॥ बुधमन्त्रः-प्रियङ्गुकलिकाश्यामं रूपेणाप्रतिमं बुधम् ॥ सौम्यं सौम्यगुणोपेतं तं बुधं प्रणमाम्यहम् ॥ ४ ॥ गुरुमन्त्रः-देवानाञ्च ऋषीणाञ्च गुरुङ्काञ्चनसन्निभम् ॥ बुद्धिभूतं त्रिलोकेशं तन्नमामि बृहस्पतिम् ॥५॥ शुक्रमन्त्रः-हिमकुंदमृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम् ॥ सर्वशास्त्रप्रवक्तारं भार्गवं प्रणमाम्यहम् ॥ ६ ॥ शनैश्चरमन्त्रः- नीलाञ्जनसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम् ॥ छायामार्तण्डसम्भूतं तन्नमामि शनैश्चरम् ॥ ७ ॥ राहुमन्त्रः-अर्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्यविमर्दनम् ॥ सिंहिकागर्भसंभूतं तं राहुं प्रणमाम्यहम् ॥ ८ ॥ केतुमन्त्रः- पलाशपुष्पसङ्काशं तारकाग्रहमस्तकम् ॥ रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं तं केतुं प्रणमाम्यहम् ॥ ९ ॥

॥ इति पुराणोक्तनवग्रहमन्त्राः ॥

। इति श्रावर्णाप्रयोगसहितो विविधमन्त्रात्मकः पञ्चमो विभागः समाप्तः ॥

॥ अथ षष्ठो विभागः ॥

॥ ग्रहशान्तिसहितषोडशसंस्कारात्मकः ॥

॥ ८२ ॥ अथ ग्रहशान्तिप्रयोगः ॥

कृतमङ्गलस्नानः स्वलङ्कृतः सम्भृतमङ्गलसम्भारः कृतनिर्णेजनान्तपञ्चमहायज्ञान्तनित्यक्रियः परिहिताहतसोत्तरीयवासा यजमानो मङ्गलरङ्गवल्लीमण्डितशुद्धस्थले श्रीपर्ण्यादिप्रशस्तदारुनिर्मिते कुशोत्तरकम्बलाद्यास्तृते स्वासने ऊर्णवस्त्राच्छादिते पीठे प्राङ्मुख उपविश्य पत्नीं स्वदक्षिणतः प्राङ्मुखीमुपवेशयेत् ॥ शिखां बद्ध्वा कुशपवित्रधारणम् पवित्रेस्थो० ॥ आचम्य प्राणानायम्य ॥

यजमानललाटे तिलकं कुर्यात्—ॐस्वस्तिनऽइन्द्रो० । भद्रसूक्तं पठेत् ॥८३॥ भद्रसूक्तम् ॥ ॐआनोभद्राः क्रतवोयन्तुविश्वतोदब्धासोऽअपरीतासऽउद्भिदः ॥ देवानोयथासदमिद्वृधेऽअसन्नप्रायुवोरक्षितारोदिवेदिवे ॥ १४/२५ ॥ देवानाम्भद्रासुमतिर्ऋजूयतान्देवानाᳬरातिरभिनोनिवर्त्तताम् ॥ देवानाᳬसख्यमुपसेदिमावयन्देवानऽआयुःप्रतिरन्तुजीवसे ॥ १५/२५ ॥ तान्पूर्वयानिविदाहूमहेवयम्भगम्मित्रमदितिन्दक्षमस्रिधम् ॥ अर्य्यमणंवरुणᳬसोमंमश्विनासरस्वतीनः सुभगामयस्करत् ॥ १६/२५ ॥ तन्नोवातोमयोभुवातुभेषजन्तन्मातापृथिवीतत्पितादयौः । तद्ग्रावाणः सोमसुतोमयोभुवस्तदश्विनाशृणुतन्धिष्ण्यायुवम् ॥ १७/२५ ॥ तमीशानञ्जगतस्तस्थुषस्पतिन्धियञ्जिन्वमवसेहूमहेवयम् ॥ पूषानोयथावेदसामसद्वृधेरक्षितापायुरदब्धः स्वस्तये । १८/२५ । स्वस्तिनऽइन्द्रोवृद्धश्रवाः स्वस्तिनः पूषाविश्ववेदाः ॥ स्वस्तिनस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमि-

विस्तरः प्रयोगः कर्तव्यश्चेदस्माकं ग्रहशान्तिप्रयोगो द्रष्टव्यः ॥

ᳫस्वस्तिनो बृहस्पतिर्द्दधातु ॥ १९/२५ ॥ पृषदश्वा मरुतᳫपृश्निमातरᳫशुभं-
यावानो विदथेषु जग्मयᳫ । अग्निर्जिह्वा मनवᳫसूरचक्षसो विश्वे नो
देवाऽअवसागमन्निह ॥ २०/२५ ॥ भद्रङ्कर्णेभिᳫशृणुयाम देवा भद्रम्पश्येम-
क्षभिर्य्यजत्राᳫ । स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाᳫसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदा-
युः ॥ २१/२५ ॥ शतमिन्नु शरदोऽअन्ति देवा यत्रा नश्चक्रा जरसन्तनूनाम् ॥
पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मद्ध्या रीरिषतायुर्गन्तोᳫ ॥ २२/२५ ॥ अदिति-
र्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्म्माता स पिता स पुत्रः ॥ विश्वे देवाऽअदिति-
ᳫपञ्च जनाऽअदितिर्ज्जातमदितिर्ज्जनित्वम् ॥ २३/२५ ॥ द्यौः शान्ति-
रन्तरिक्षᳫशान्तिः पृथिवी शान्तिरापᳫशान्तिरोषधयᳫ शान्तिः ॥ वन-
स्पतयᳫ शान्तिर्व्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिᳫसर्व्वᳫशान्तिᳫशान्तिरे-
व शान्तिᳫसा मा शान्तिरेधि ॥ १७/३६ ॥ यतो यतᳫसमीहसे ततो नोऽअभयं कुरु ॥
शन्नः कुरु प्रजाभ्योऽभयन्नᳫपशुभ्यः ॥ २२/३६ ॥ सुशान्तिर्भवतु ॥ ततः
सुमुखश्चेत्यादिना गणेशगुर्वादीन्नमस्कृत्य ॥ (एतत् शिवपञ्चायतन-
पूजाप्रयोगे २९ तमे पृष्ठे द्रष्टव्यम्) संकल्पं कुर्यात् ॥

॥८४॥ सङ्कल्पः—ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो० शेषेषु ग्रहेषु यथायथं राशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं गुणविशेषणविशिष्टायां शुभ-पुण्यतिथौ ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं मम सुतस्य करिष्यमाण उपनयने ग्रहानुकूलतासिद्ध्यर्थं ग्रहशान्तिं करिष्ये ॥

पुनर्जलमादाय—तदङ्गतया गणपतिपूजनं स्वस्तिपुण्याहवाचनम् अविघ्नपूजनं मण्डपदेवतापूजनं मातृकापूजनं वसोर्द्धारापूजनम् आयुष्य-मन्त्रजपं नान्दीश्राद्धं ग्रहाचार्यशिरवरणं दिग्रक्षणं पञ्चगव्यकरणं

१ अथवा करिष्यमाणे मम पुत्रस्य कन्याया. विवाह (वा अमुककर्मणि) इत्यादि वक्तव्यम् ॥

भूमिपूजनमग्निस्थापनं ग्रहस्थापनं च करिष्ये॥ पुनर्जलमादाय—तत्रादौ दिग्रक्षणं कलशार्चनं च करिष्ये। दिग्रक्षणं कलशार्चनं दीपपूजनं च (३१-३५ पृष्ठे द्रष्टव्यानि)

॥८५॥ गणपतिपूजनम्। ताम्रपात्रे सिद्धिबुद्धिसहितं महागणपतिं संस्थाप्य ध्यानम्-उच्चैर्ब्रह्माण्डखण्डद्वितयसहचरं कुम्भयुग्मं दधानं प्रेङ्खं नागारिपक्षप्रतिभटविकटश्रोत्रतालाभिरामम्॥ देवं शम्भोरपत्यं भुजगपतितनुस्पर्धिवर्धिष्णुहस्तं ध्याये पूजार्थमीशं गणपतिममलं धीश्वरं कुञ्जरास्यम्॥ ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः ध्यायामि॥ आवाहनम्-ॐगणानान्त्वा०।ॐ भू०सि०म० आवाहयामि॥ आसनम्-ॐ वर्ष्मोऽस्मिसमानानामुद्यतामिवसूर्यः। इमन्तमभितिष्ठामियोमाकश्चाभिदासति। ॐभू०सि०म० आसनं समर्पयामि॥ पाद्यम्-ॐ एतावानस्य०। ॐ भू० सि० म० पाद्यं समर्पयामि॥ अर्घ्यम्-ॐ धामन्तेविश्वम्भुवनमधिश्रितमन्तः समुद्रेहृद्द्यन्तरायुषि॥ अपामनीकेसमिथेयऽआभृतस्तमश्यामुमधुमन्तन्तऽऊर्मिम्॥ १७/२९ ॥ ॐ भू०सि०म० अर्घ्यं स०॥ आचमनीयम्-ॐइमम्मेंव्वरुणश्रुधीहवमुद्याचमृडय। त्वामवस्युराचके॥ २१/१॥ ॐ भू० सि० म० आचमनीयं स०॥ पयःस्नानम्-ॐ पयसोरूपंयद्यवांदुद्धनोरूपङ्कर्कन्धूनि॥सोमस्यरूपंव्वाजिनर्ठसौम्यस्यरूपमामिक्षा॥ १९/२३॥ ॐ भू०सि०म० पयःस्नानं स०। पयःस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं स०। शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं स०॥ दधिस्नानम्-ॐ दधिक्राव्णोऽअकारिषञ्जिष्णोरश्वस्यव्वाजिनः॥ सुरभिनोमुखाकरत्प्रणऽआयूर्ठषितारिषत्॥ २३/३२॥ ॐभू०सि०म० दधिस्नानं स०॥ घृतस्ना-

१ प्रतिस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानम् आचमनीयं च सम० इति वक्तव्यम्॥

नम्-ॐ घृतेनाञ्जन्त्सम्पथो देवयानान्प्रजानन्वाज्यप्येतु देवान्॥ अनु-ष्वासप्रदिशः सचन्ताᳪस्वधामस्मैयजमानाय धेहि॥ $\frac{२}{२२}$॥ ॐ भू० सि० म० घृतस्नानं स०। मधुस्नानम्-स्वाद्वीं त्वा स्वादुना तीव्रां तीव्रेणामृताममृतेन। मधुमतीं मधुमता सृजामि सᳪसोमेन सोमोऽस्यश्विभ्यां पच्यस्व सरस्वत्यै पच्यस्वेन्द्राय सुत्राम्णे पच्यस्व॥ $\frac{?}{?}$॥ ॐ भू० सि० म० मधुस्नानं स०॥ शर्करास्नानम्-ॐ अपाᳪरसमुद्वयसᳪसूर्ये सन्तᳪसमाहितम्॥ अपाᳪरसस्य यो रस-स्तं वो गृह्णाम्युत्तममुपयामगृहीतोसीन्द्राय त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते यो-निरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम्॥ $\frac{३}{?}$॥ ॐ भू० सि० म० शर्करास्नानं स०॥ गन्धो-दकस्नानम्-ॐ गन्धर्वस्त्वा विश्वावसुः परिदधातु विश्वस्यारिष्ट्यै यज-मानस्य परिधिरस्यग्निरिड ईडितः॥ $\frac{२}{३}$॥ ॐ भू० सि० म० गन्धोदकस्ना-नं स०। उद्वर्तनस्नानम्—ॐ अᳪशुना ते अᳪशुः पृच्यतां परुषा परुः॥ गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसो अच्युतः॥ $\frac{२}{२?}$॥ ॐ भू० सि० म० उद्व-र्तनस्नानं स०॥ सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्प्य निर्माल्यमुत्तरे विसृज्य अभिषेकः-ॐ आपो हि० यो वः० तस्मा० ॐ अमृताभिषेकोऽ-स्तु। ॐ भूर्भुवः स्वः सि० म० अभिषेकस्नानं समर्पयामि॥ शुद्धोदकस्नानम्-ॐ शुद्धवालः सर्वशुद्धवालो मणिवालस्तऽआश्विनाः श्येतः श्येताक्षोऽरुण-स्ते रुद्राय पशुपतये कर्णा यामाऽअवलिप्ता रौद्रा नभोरूपाः पार्जन्याः॥ $\frac{३}{२?}$॥ ॐ भू० सि० म० शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि॥ गणेशं वस्त्रेण प्रमृज्य रक्तवस्त्रप्रसारिते मृन्मये पीठे पट्टे वा अरुणाक्षतैर्गोधूमैर्वा कृतेऽष्टदले पद्मे गन्धानुलेपनपूर्वकं संस्थाप्य वस्त्रम्-ॐ सुजातो ज्योतिषा सह शर्म्म वरूथमासदत्स्वः॥ वासोऽअग्ने विश्वरूपᳪसंव्ययस्व विभावसो॥ $\frac{२०}{११}$॥ ॐ भू० सि० म० वस्त्रं स०॥ वस्त्रान्ते आ० स०॥ उपवी-तम्-यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्। आयुष्यमग्र्यं

१ गणपत्यथर्वशीर्षेण अभिषेकः कर्तव्यश्चेदस्मिन् पुस्तके स्तोत्रविभागे ४७२ तमे पृष्ठे द्रष्टव्यम्॥

प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः ॥ ॐभूर्भुवः स्वः सि० म० यज्ञो० समर्पयामि ॥ यज्ञोपवीतान्ते आ० स० ॥ गन्धम्–ॐत्वाङ्गन्धुर्व्वाऽअखनँस्त्वामिन्द्रस्त्वाम्बृहुस्पतिः ॥ त्वामौषधेसोमोराजाव्विद्वान्यक्ष्मादमुच्यत ॥ १८/१२ ॥ ॐभू० सि०म०गन्धं स० ॥ अक्षताः–ॐअक्षन्नमीमदन्तुह्यवप्प्रियाऽअधूषत ॥ अस्तोषतस्वभानवोव्विप्प्रानविष्ठया-मतीयोजान्विन्द्रतेहरी ॥ ३/३ ॥ ॐ भू० सि० म० अक्षतान्स० ॥ पुष्पाणि–ॐ ओषधीः प्रतिमोदद्ध्वम्पुष्पवतीः प्रसूवरीः । अश्वाऽइवसुजित्वरीर्व्वीरुधः पारयिष्ण्वः ॥ ७७/१२ ॥ ॐभूर्भुवःस्वः सि०म० पुष्पाणि स० ॥ दूर्वाङ्कुराः–काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्तीपरुषः परुषस्परि ॥ एवानोदूर्व्वेप्प्रतनुसहस्रेणशतेनच ॥ २०/१३ ॥ ॥ ॐ भू० सि० म० दूर्वाङ्कुरान्स० ॥ सौभाग्यद्रव्याणि-ॐ अहिरिवभोगैः पर्य्येतिबाहुञ्ज्यायाहेतिम्परिबाधमानः । हस्तुघ्नोव्विश्वाव्वयुनानिव्विद्वान्पुमान्पुमाँसम्परिपातुव्विश्वतः ॥ ५१/२९ ॥ ॐभू० सि० म० सौभाग्यद्रव्याणि स० ॥ धूपः–ॐ अश्वस्यत्वावृष्ष्णः शक्क्नाधूपयामिदेवयजनेपृथिव्व्याः । मखायत्त्वामखस्यत्वाशीर्ष्णे ॥ अश्वस्यत्वावृष्ष्णः शक्क्नाधूपयामिदेवयजनेपृथिव्व्याः । मखायत्त्वामखस्यत्वाशीर्ष्णे ॥ अश्वस्यत्वावृष्ष्णः शक्क्नाधूपयामिदेवयजनेपृथिव्व्याः । मखायत्त्वामखस्यत्वाशीर्ष्णे ॥ मखायत्त्वामखस्यत्वाशीर्ष्णे ॥ मखायत्त्वामखस्यत्वाशीर्ष्णे ॥ मखायत्त्वामखस्यत्वाशीर्ष्णे ॥ ९/३७ ॥ ॐभूर्भुवः स्वः सि० महागणपतये नमः धूपमाघ्रापयामि । दीपः–ॐचन्द्रमाऽअप्प्स्वन्तरासुपर्णोधावतेदिवि ॥ रयिम्पिशङ्गम्बहुलम्पुरुस्पृहँहरिरेतिकनिक्रदत् ॥ ९०/३३ ॥ ॐभू०सि०म० दीपं दर्शयामि ॥ नैवेद्यम्-ॐअन्नपतेन्नस्यनोदेह्यनमीवस्यशुष्मिणः ॥ प्रप्रदातारन्तारिषऽऊर्जन्नोधेहिद्विपदेचतुष्पदे ॥ ८३/११ ॥ गायत्रीमन्त्रेण सम्प्रोक्ष्य

धेनुमुद्रां प्रदर्श्य ग्रासमुद्रया—ॐ प्राणाय स्वाहा ॐ अपानाय स्वाहा ॐ व्यानाय स्वाहा ॐ उदानाय स्वाहा ॐ समानाय स्वाहा । ॐ भू० स्वः सि० म० नैवेद्यं निवेदयामि ॥ पूर्वापोशनं स० । नैवेद्यमध्ये पानीयम्–एलोशीरलवङ्गादिकर्पूरपरिवासितम् । प्राशनार्थं कृतं तोयं गृहाण परमेश्वर ॥ ॐ भू० सि० म० मध्येपानीयं स० । उत्तरापोशनं स० । हस्तप्रक्षालनं स० । मुखप्रक्षालनं स० । आचमनीयं स० । करोद्वर्तनार्थं गन्धं समर्पयामि ॥ मुखवासार्थे ताम्बूलं-ॐ उत स्मास्य द्रवतस्तुरण्यतः पुर्णं न वेरनु वाति प्रगर्द्धिनः । श्येनस्येव ध्रजतोऽअङ्कसं परि दधिक्राव्णः सहोर्ज्जा तरित्रतः स्वाहा ॥ १५/९ ॥ ॐ भू० सि० म० ताम्बूलं स० ॥ फलम्-ॐ याः फलिनीर्या ऽअफला ऽअपुष्पा याश्च पुष्पिणीः । बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुञ्चन्त्व ꣳ हसः ॥ ८९/१२ ॥ ॐ भू० सि० म० फलं स० ॥ दक्षिणा ॐ यद्दत्तं यत्परादानं यत्पूर्तं याश्च दक्षिणाः । तदग्निर्वैश्वकर्मणः स्वर्देवेषु नो दधत् ॥ ६४/१८ ॥ ॐ भू० सि० म० सुवर्णपुष्पदक्षिणां स० ॥ कर्पूरारार्तिक्यम्-ॐ आ रात्रि पार्थिव ꣳ रजः पितुरप्रायि धामभिः । दिवः सदा ꣳ सि बृहती वि तिष्ठस ऽआ त्वेषं वर्त्तते तमः ॥ ३२/३४ ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः सि० म० कर्पूरारार्तिक्यं दर्शयामि ॥ मन्त्रपुष्पाञ्जलिः–अञ्जलौ पुष्पाण्यादाय तिष्ठन् ॐ नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्च वो नमो नमो व्रातेभ्यो व्रातपतिभ्यश्च वो नमो नमो गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्च वो नमो नमो विरूपेभ्यो विश्वरूपेभ्यश्च वो नमः ॥ २५/१६ ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः सिद्धिबुद्धिसहितम० मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि ॥ प्रदक्षिणा-सप्तास्यां० ॐ भू० सि० म० प्रदक्षिणां समर्पयामि ॥ अर्घपात्रे जलं प्रपूर्य रक्तचन्दनपुष्पाक्षतसहितं नारिकेलं च धृत्वा विशेषार्घः–रक्ष रक्ष गणाध्यक्ष रक्ष त्रैलोक्यरक्षक । भक्तानामभयंकर्ता त्राता भव भवार्ण-

वात् ॥ द्वैमातुर कृपासिन्धो षाण्मातुराग्रज प्रभो । वरद त्वं वरं देहि वाञ्छितं वाञ्छितार्थद ॥ अनेन सफलार्घेण फलदोऽस्तु सदा मम ॥ ॐभूर्भुवः स्वः सि० म० विशेषार्घं स० ॥ प्रार्थना-विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय। नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते ॥ नमस्ते ब्रह्मरूपाय विष्णुरूपाय ते नमः। नमस्ते रुद्ररूपाय करिरूपाय ते नमः ॥ विश्वरूपस्वरूपाय नमस्ते ब्रह्मचारिणे । भक्तप्रियाय देवाय नमस्तुभ्यं विनायक ॥ लम्बोदर नमस्तुभ्यं सततं मोदकप्रिय । निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा ॥ त्वां विघ्नशत्रुदलनेति च सुन्दरेति भक्तप्रियेति सुखदेति वरप्रदेति । विद्याप्रदेत्यघहरेति च ये स्तुवन्ति तेभ्यो गणेश वरदो भव नित्यमेव ॥ ॐभू० सि० म० प्रार्थनापूर्वकं नमस्करोमि । अनया पूजया सिद्धिबुद्धिसहितः महागणपतिः साङ्गः सपरिवारः प्रीयतां न मम ॥

॥ इतिगणपतिपूजनम् ॥

॥ ८६ ॥ अथ पुण्याहवाचनप्रयोगः ॥

स्वपुरतः शुद्धायां भूमौ पञ्चवर्णस्तन्दुलैर्वाऽष्टदलं कर्तव्यम् ॥ तत्र भूमिं स्पृष्ट्वा—ॐमुहीद्द्यौः पृथिवीचनऽइमँयुज्ञम्मिमिक्षताम् ॥ पिपृताँनोभरीमभिः ॥ $\frac{३२}{८}$ ॥ तत्र यवप्रक्षेपः—ॐओषधयुः समवदन्तुसोमेनसुहराज्ञा ॥ यस्मैकृणोतिब्राह्मणस्तः राजन्पारयामसि ॥ $\frac{९६}{१२}$ ॥ अष्टदलोपरि कलशस्थापनम्—ॐ आजिंग्घ्रकुलशम्मुह्यात्वाविशुन्त्विन्दवः ॥ पुनरूर्ज्जानिवर्त्तस्वसानः सुहस्रन्धुक्ष्वोरुधारापर्यस्वतीपुनुर्म्माविशताद्रयिः ॥ $\frac{४२}{८}$ ॥ कलशे जलपूरणम्—ॐव्वरुणस्योत्तम्भनमसिव्वरुण-

स्यस्कम्भसर्जनीस्थो वरुणस्य ऽऋतसदन्यसि वरुणस्य ऽऋतसदन-
मसि वरुणस्य ऽऋतसदनमासीद ॥ ३६/४ ॥ गन्धप्रक्षेपः—ॐ त्वां गन्धर्वा-
ऽअखनँस्त्वामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः ॥ त्वामोषधे सोमो राजा विद्वान्य-
क्ष्मादमुच्यत ॥ ९८/१२ ॥ धान्यप्रक्षेपः—ॐ धान्यमसि धिनुहि देवान्प्राणा-
य त्वोदानाय त्वा व्यानाय त्वा ॥ दीर्घामनु प्रसितिमायुषे धान्देवो वः
सविता हिरण्यपाणिः प्रतिगृभ्णात्वच्छिद्रेण पाणिना चक्षुषे त्वा महीना-
म्पयोऽसि ॥ २०/१ ॥ सर्वौषधीप्रक्षेपः—ॐ या ऽओषधीः पूर्वा जाता देवे-
भ्यस्त्रियुगम्पुरा ॥ मनै नु बभ्रूणामहँ शतन्धामानि सप्त च ॥ ७५/१२ ॥
दूर्वाप्रक्षेपः—ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि ॥ एवा नो
दूर्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च ॥ २०/१३ ॥ पञ्चपल्लवप्रक्षेपः—ॐ अश्वत्थे वो
निषदनम्पर्णे वो वसतिष्कृता ॥ गोभाज ऽइत्किलासथ यत्सनवथ पूरुषम्
॥ ७९/१२ ॥ सप्तमृत्प्रक्षेपः—ॐ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी ॥ यच्छा
नः शर्म्म सप्रथाः ॥ १३/३६ ॥ फलप्रक्षेपः—ॐ याः फलिनीर्या ऽअफला ऽअ-
पुष्पा याश्च पुष्पिणीः ॥ बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुञ्चन्त्वँहसः ॥ ८९/१२ ॥
पञ्चरत्नप्रक्षेपः—ॐ परि वाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत् ॥ दधद्र-
त्नानि दाशुषे ॥ २५/११ ॥ हिरण्यप्रक्षेपः—ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भू-
तस्य जातः पतिरेक ऽआसीत् ॥ स दाधार पृथिवीन्द्यामुतेमाङ्कस्मै देवाय ह-
विषा विधेम ॥ ४/१३ ॥ रक्तसूत्रेण वस्त्रेण च वेष्टयेत्—ॐ युवा सुवासाः परि-
वीत ऽआगात्स ऽउ श्रेयान्भवति जायमानः ॥ तं धीरास कवय ऽउन्नयन्ति स्वा-
ध्यो मनसा देवयन्तः ॥ पा० गृ० का० २ कं० २ म० ९ ॥ पूर्णपात्रमुपरि न्यसेत्
—ॐ पूर्णा दर्वि परापत सुपूर्णा पुनरापत ॥ वस्नेव विक्रीणावहा ऽइषमू-
र्जँ शतक्रतो ॥ ४९/३ ॥ वरुणमावाहयेत्—ॐ तत्त्वा यामीत्यस्य शुनःशेप ऋषि-
स्त्रिष्टुप्छन्दः वरुणो देवता वरुणावाहने विनियोगः । ॐ तत्त्वा यामि ब्रह्मणा-

वन्दमानस्तदाशास्तेयजमानोहविर्भिः॥अहेडमानोवरुणेहबोद्ध्युरुशꣳसमानऽआयुः प्रमोषीः॥ २१ ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अस्मिन्कलशे वरुणं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकम् आवाहयामि स्थापयामि ॥ प्रतिष्ठापनम्-ॐमनोजूतिर्ज्जुषतामाज्ज्यस्यबृहस्पतिर्य्यज्ञमिमन्तनोत्वरिष्टंय्यज्ञꣳसमिमन्दधातु॥ विश्वेदेवासऽइहमादयन्तामोम्प्रतिष्ठ ॥ १३/२ ॥ ॐ वरुणाय नमः वरुण सुप्रतिष्ठितो वरदो भव ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः वरुणाय नमः चन्दनं समर्पयामि ॥ इत्यादिपञ्चोपचारैः संपूज्य तत्त्वायामीति पुष्पाञ्जलिं समर्प्य अनेन पूजनेन वरुणः प्रीयताम् ॥ ततः अनामिकया कलशं स्पृष्ट्वा अभिमन्त्रयेत्-कलशस्य मुखे० । कुक्षौ तु० । अङ्गैश्च सहिता० । आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः ॥ ततो गायत्र्यादिभ्यो नमः इत्यनेन पञ्चोपचारैरभ्यर्च्य कलशं प्रार्थयेत्-देवदानवसंवादे० । त्वत्तोये० । शिवः स्वयं० । त्वयि तिष्ठन्ति० । सान्निध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा ॥ नमो नमस्ते स्फटिकप्रभाय सुश्वेतहाराय सुमङ्गलाय । सुपाशहस्ताय झषासनाय जलाधिनाथाय नमो नमस्ते ॥ पाशपाणे नमस्तुभ्यं पद्मिनीजीवनायक । पुण्याहवाचनं यावत्तावत्त्वं सन्निधो भव ॥ ततः स्वस्तिवाचनार्थं युग्मविप्रान्संपूज्य ॥ अवनिकृतजानुमण्डलः कमलमुकुलसदृशमञ्जलिं शिरस्याधाय दक्षिणेन पाणिना स्वर्णपूर्णकलशं धारयित्वा वदेत्-ॐत्रीणिपदाविचक्रमेविष्णुर्गोपाऽअदाभ्यः ॥ अतोधर्म्माणिधारयन् ॥ ४३/३४ ॥ दीर्घा नागा नद्यो गिरयस्त्रीणि विष्णुपदानि च ॥ तेनायुःप्रमाणेन पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु ॥ विप्रा वदेयुः-तेनायुःप्रमाणेन पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु॥एवं वारत्रयं कृत्वा कलशं भूमौ धान्यराशौ संस्थाप्य ॥ ब्राह्मणानां हस्ते सुप्रोक्षितमस्तु ॥ शिवा आपः सन्तु । सन्तु शिवा

आपः ॥ सौमनस्यमस्तु । अस्तु सौमनस्यम् ॥ अक्षतं चारिष्टं चास्तु । अस्त्वक्षतमरिष्टं च ॥ गन्धाः पान्तु सौमङ्गल्यं चास्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु । ॐ गन्धाः पान्तु सौमङ्गल्यं चास्तु ॥ अक्षताः पान्तु आयुष्यमस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु । ॐ अक्षताः पान्तु आयुष्यमस्तु ॥ पुष्पाणि पान्तु सौश्रियमस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु । ॐपुष्पाणि पान्तु सौश्रियमस्तु ॥ ताम्बूलानि पान्तु ऐश्वर्यमस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु । ॐताम्बूलानि पान्तु ऐश्वर्यमस्तु ॥ पूगीफलानि पान्तु बहुफलमस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु । ॐपूगीफलानि पान्तु बहुफलमस्तु ॥ दक्षिणाः पान्तु बहुदेयं चास्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु । ॐदक्षिणाः पान्तु बहुदेयं चास्तु ॥ ॐदीर्घमायुः श्रेयः शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिः श्रीर्यशो विद्या विनयो वित्तं बहुपुत्रश्चास्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु । ब्राह्मणा वदेयुः-ॐदीर्घमायुः श्रेयः शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिः श्रीर्यशो विद्या विनयो वित्तं बहुपुत्रं चास्तु । यजमानो वदेत्—यद्कृत्वा सर्ववेदयज्ञक्रियाकरणकर्मारम्भाः शुभाः शोभनाः प्रवर्तन्ते तमहमोङ्कारमादिङ्कृत्वा ऋग्यजुःसामाथर्वणाशीर्वचनं बहुऋषिमतं समनुज्ञातं भवद्भिरनुज्ञातः पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये । ॐवाच्यताम् ॥ अथाशीर्वादः ॥ ब्राह्मणानां हस्तेष्वक्षतान्दद्यात् ॥ यजुः—ॐ भुद्रङ्कर्णेभिः शृणुयामदेवा भुद्रम्पश्येमाक्षभिर्य्यजत्राः । स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाᳬसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥ २१/२५ ॥ ॐदेवानाम्भद्रा सुमतिर्ऋजूयतान्देवानाᳬ रातिरभिनोनिवर्तताम् । देवानाᳬसख्यमुपसेदिमा वयन्देवानऽआयुः प्रतिरन्तुजीवसे ॥ १५/२५ ॥ ॐदीर्घायुस्तऽओषधेखनिता यस्मै च त्वा खनाम्यहम् ॥ अथो त्वन्दीर्घायुर्भूत्वा शतवल्शा विरोहतात् ॥ १००/१२ ॥ ऋक्—ॐद्रविणोदाद्रविणसस्तुरस्य द्रविणोदाः सनरस्य प्रयंसत् ॥ द्रविणोदावीरवतीमिषंनोद्रविणोदारासते दीर्घ-

मायुः ॥ अष्टक १ ६/७ ॥ यजुः—ॐद्रविणोदा?पिपीषतिजुहोतप्रचतिष्ठत ॥ नेष्ट्रादृतुभिरिष्यत ॥ २२/२६ ॥ ऋक्—ॐसविता पश्चातात्सविता पुरस्तात्सवितोत्तरात्तात्सविताधरात्तात् ॥ सवितानःसुवतुसर्वतातिंसवितानोरासतांदीर्घमायुः ॥ ७ २/६ ॥ यजुः—ॐसवितात्त्वासवानांᳪसुवतामग्निर्गृहपतीनाᳪसोमोवनस्पतीनाम् ॥ बृहस्पतिर्व्वाचऽइन्द्रोज्ज्यैष्ठ्यायरुद्र?पशुब्भ्योमित्र?सत्योवरुणोधर्म्मपतीनाम् ॥ ९/३९ ॥ ऋक्-ॐनवोनवोभवतिजायमानोह्नांकेतुरुषसामेत्यग्रम् ॥ भागंदेवेभ्योविदधात्यायन्प्रचन्द्रमास्तिरतेदीर्घमायुः ॥ ८ २/३ ॥ यजुः—ॐनतद्रक्षाᳪसिनपिशाचास्तरन्तिदेवानामोजः+प्रथमजᳪह्येतत् । योबिभर्तिदाक्षायणᳪहिरण्यᳪसदेवेषुकृणुतेदीर्घमायुःसमनुष्येषुकृणुतेदीर्घमायुः ॥ ५१/३४ ॥ ऋक्—ॐउच्चादिविदक्षिणावन्तोऽअस्थुर्येऽअश्वदाःसहतेसूर्येण ॥ हिरण्यदाऽअमृतत्त्वंभजंतेवासोदाःसोमप्रतिरंतऽआयुः ॥ ८ ३/६ ॥ यजुः—ॐउच्चातेजातमन्धसोदिविसद्भूम्म्याददे ॥ उग्रᳪशर्म्ममहिश्रवः ॥ २६/२६ ॥ इत्याशीर्वादः ॥ + व्रतजपनियमतपःस्वाध्यायक्रतुदयादमदानविशिष्टानां सर्वेषां ब्राह्मणानां मनः समाधीयताम् ॥ * समाहितमनसः स्मः ॥ + प्रसीदन्तु भवन्तः ॥ प्रसन्नाः स्मः ॥ + ॐ शान्तिरस्तु ॥ अस्तु [1] ॥ ॐपुष्टिरस्तु ॥ ॐतुष्टिरस्तु । ॐवृद्धिरस्तु । ॐअविघ्नमस्तु । ॐआयुष्यमस्तु । ॐआरोग्यमस्तु । ॐशिवं कर्मास्तु । ॐकर्मसमृद्धिरस्तु । ॐवेदसमृद्धिरस्तु । ॐशास्त्रसमृद्धिरस्तु । ॐधनधान्यसमृद्धिरस्तु । ॐपुत्रपौत्रसमृद्धिरस्तु । ॐइष्टसंपदस्तु । ॐअरिष्टनिरसनमस्तु ॥ ॐयत्पापं रोगमशुभमकल्याणं तद्दूरे प्रतिहतमस्तु ॥ ॐयच्छ्रेयस्तदस्तु ॥ ॐउत्तरे कर्मणि निर्विघ्नमस्तु ॥ ॐउत्तरोत्तरमहरहरभिवृद्धि-

+ यजमानो वदेत् ॥ * ब्राह्मणा वदेयुः ॥ १ अस्तु इति द्विवा. प्रतिवचनं वदेयुः ॥

रस्तु ॥ ॐउत्तरोत्तराः क्रियाः शुभाः शोभनाः संपद्यन्ताम् ॥ ॐतिथि-करणमुहूर्तनक्षत्रग्रहलग्नसंपदस्तु ॥ पात्रे उदकसेकः ॥ ॐतिथिकरण-मुहूर्तनक्षत्रग्रहलग्नाधिदेवताः प्रीयन्ताम् ॥ ॐतिथिकरणे समुहूर्ते सनक्षत्रे सग्रहे साधिदैवते प्रीयेताम् ॥ ॐदुर्गापाञ्चाल्यौ प्रीयेताम् ॥ ॐअग्नि-पुरोगा विश्वेदेवाः प्रीयन्ताम् ॥ ॐइन्द्रपुरोगा मरुद्गणाः प्रीयन्ताम् ॥ ॐमाहेश्वरीपुरोगा उमामातरः प्रीयन्ताम् ॥ ॐअरुन्धतीपुरोगा एक-पत्न्यः प्रीयन्ताम् ॥ ॐविष्णुपुरोगाः सर्वे देवाः प्रीयन्ताम् ॥ ॐब्रह्मपुरोगाः सर्वे वेदाः प्रीयन्ताम् ॥ ॐब्रह्म च ब्राह्मणाश्च प्रीयन्ताम् ॥ ॐश्रीसर-स्वत्यौ प्रीयेताम् ॥ ॐश्रद्धामेधे प्रीयेताम् ॥ ॐ भगवती कात्यायनी प्रीयताम् ॥ ॐ भगवती माहेश्वरी प्रीयताम् ॥ ॐ भगवती ऋद्धिकरी प्रीयताम् ॥ ॐ भगवती सिद्धिकरी प्रीयताम् ॥ ॐ भगवती पुष्टिकरी प्रीयताम् ॥ ॐ भगवती तुष्टिकरी प्रीयताम् ॥ ॐ भगवन्तौ विघ्नविनायकौ प्रीयेताम् ॥ ॐ सर्वाः कुलदेवताः प्रीयन्ताम् ॥ ॐ सर्वाः ग्रामदेवताः प्रीयन्ताम् ॥ बहिः—ॐ हताश्च ब्रह्मद्विषः ॥ ॐ हताश्च परिपन्थिनः ॥ ॐ हताश्च विघ्नकर्तारः ॥ ॐशत्रवः पराभवं यान्तु ॥ ॐ शाम्यन्तु घोराणि ॥ ॐ शाम्यन्तु पापानि ॥ ॐ शाम्यन्त्वीतयः ॥ पुनः पात्रे-ॐ शुभानि वर्द्ध-न्ताम् ॥ ॐशिवा आपः सन्तु । ॐ शिवा ऋतवः सन्तु । ॐशिवा ओषधयः सन्तु ॥ ॐशिवा नद्यः सन्तु ॥ ॐशिवा गिरयः सन्तु ॥ ॐशिवा अतिथयः सन्तु ॥ ॐ शिवा अग्नयः सन्तु ॥ ॐशिवा आहुतयः सन्तु ॥ ॐ अहोरात्रे शिवे स्याताम् ॥ यजुः—ॐ निकामेनिकामेनःᳵपर्जन्योवर्षतुफलव-त्योनऽओषधयᳵपच्यन्ताँय्योगक्षेमोनः—कल्पताम् ॥ $\frac{२२}{२२}$ ॥ ब्राह्मणम्—ॐनिकामेनिकामेनःᳵपर्जन्योवर्षत्विति निकामेनिकामेवैतत्रपर्जन्योवर्ष-तियत्रैतेनयज्ञेनयजन्तेफलवत्योनऽओषधयᳵपच्यन्तामितिफलवत्योवैत-

त्रौषधयꣳ पच्यन्तेयस्मैतेनयत्रेनयजन्तेयोगक्षेमोनꣳकल्पतामितियोगक्षेमो-
वैतत्रकल्पतेयस्मैतेनयत्रेनयजन्तेतस्माद्यस्मैतेनयज्ञेनयजन्तेक्लृप्तꣳप्रजानां-
योगक्षेमोभवति ॥ ॐ शुक्राङ्गारकबुधबृहस्पतिशनैश्चरराहुकेतुसोमसहिता
आदित्यपुरोगाः सर्वे ग्रहाः प्रीयन्ताम् ॥ ॐ भगवान्नारायणः प्रीयताम् ॥
ॐ भगवान्पर्जन्यः प्रीयताम् ॥ ॐ भगवान्स्वामी महासेनः प्रीयताम् ॥
ॐ पुरोनुवाक्यया यत्पुण्यं तदस्तु ॥ ॐ याज्यया यत्पुण्यं तदस्तु ॥
ॐ वषट्कारेण यत्पुण्यं तदस्तु ॥ ॐ प्रातःसूर्योदये यत्पुण्यं तदस्तु ॥
ॐ पुण्याहकालान्वाचयिष्ये । ॐ वाच्यताम् ॥ ब्राह्म्यं पुण्यं महद्यच्च
सृष्ट्युत्पादनकारकम् । वेदवृक्षोद्भवं नित्यं तत्पुण्याहं ब्रुवन्तु नः॥१॥भो
ब्राह्मणाः ! मह्यं सकुटुम्बिने महाजनान्नमस्कुर्वाणाय आशीर्वचनमपेक्षमा-
णाय मया क्रियमाणस्य ग्रहशान्त्याख्यस्य कर्मणः पुण्याहं भवन्तो
ब्रुवन्तु ॥ ॐ अस्तु पुण्याहम् । एवं त्रिः ॥ ऋक्-ॐ भद्रन्तेवदशकुने-
सामगायसिवह्मपुत्रऽइवसवनेपुशंससि ॥ वृषेववाजीशिशुमतीरपीत्या-
सर्वतोनःशकुनेभद्रमावदविश्वतोनःशकुने पुण्यमावद ॥ २ $\frac{११}{८}$ ॥ यजुः-
ॐ पुनन्तुमादेवजनाः पुनन्तुमनसाधियः ॥ पुनन्तुविश्वाभूतानिजात-
वेदꣳपुनीहिमा ॥$\frac{३}{१९}$॥ ब्राह्मणम्-ॐ सयःकामयेतमहत्प्राप्नुयामित्युद-
गयनऽआपूर्यमाणपक्षेपुण्याहेद्वादशाहमुपसद्व्रतीभूत्वौदुम्बरेकꣳसेचमसे-
वासर्वौषधम्फलानीतिसम्भृत्यपरिसमुह्यपरिलिप्याग्निमुपसमाधायावृता-
ज्यꣳसंस्कृत्यपुꣳसानक्षत्रेणमन्थꣳसन्नीयजुहोति ॥१॥ पृथिव्यामुद्धृतायां
तु यत्कल्याणं पुरा कृतम् । ऋषिभिः सिद्धगन्धर्वैस्तत्कल्याणं ब्रुवन्तु
नः ॥२॥ भो ब्राह्मणाः ! मह्यं सकुटुम्बिने महाजनान्नमस्कुर्वाणाय आशी-
र्वचनमपेक्षमाणाय मया क्रियमाणस्य ग्रहशान्त्याख्यस्य कर्मणः कल्याणं

भवन्तो ब्रुवन्तु ॥ ॐअस्तु कल्याणम् ॥ एवं त्रिः ॥ ऋक्—ॐअपाः सोममस्तमिन्द्रप्रयाहिकल्याणीर्जायासुरणंगृहेते ॥ यत्रारथस्यबृहतो निधानंविमोचनंवाजिनोदक्षिणावत् ॥ ३ ॥ यजुः—ॐयथेमांवाचंकल्याणीमावदानिजनेभ्यः ॥ ब्रह्मराजन्याभ्याᳪशूद्रायचार्यायचस्वायचारणायच ॥ प्रियोदेवानान्दक्षिणायैदातुरिहभूयासमयम्मेकामᳪसमृद्ध्यतामुपमादोनमतु ॥ २६ ॥ ब्राह्मणम्—ॐअथाध्वर्योᳪप्रतिगरेराशस्तुरिमेयजमानाभद्रमेभ्योयजमानेभ्योभूदितिकल्याणमेवैतन्मानुष्यैर्वाचोवदति ॥ २ ॥ सागरस्य यथा वृद्धिर्महालक्ष्म्यादिभिः कृता । सम्पूर्णा सुप्रभावा च तां च ऋद्धिं ब्रुवन्तु नः ॥ ३ ॥ भो ब्राह्मणाः! मह्यं सकुटुम्बिने महाजनान्नमस्कुर्वाणाय आशीर्वचनमपेक्षमाणाय मया क्रियमाणस्य ग्रहशान्त्याख्यस्य कर्मणः ऋद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु ॥ ॐकर्म ऋद्ध्यताम् ॥ एवं त्रिः ॥ ऋक्—ॐऋद्ध्यामस्तोमैःसनुयामवाजमानोमंत्रैःसरथेहोपयातम् ॥ यशोनपक्वंमधुगोष्वंतराभूतांशोऽअश्विनोःकाममप्राः ॥ ८६ ॥ यजुः—ॐसत्रस्यऽऋद्धिरस्यगन्मज्योतिरमृताऽअभूम ॥ दिवम्पृथिव्याऽअद्ध्यारुहामाविदामदेवान्स्वर्ज्योतिः ॥ ५२ ॥ ब्राह्मणम्—ॐतऽउत्तरस्यहविर्धानस्यजघन्यायाङ्कुबर्याᳪसामाभिगायन्तिसत्रस्यऽऋद्धिरितिराद्धिमेवैतदभ्युत्तिष्ठन्त्युत्तरवेदेर्वोत्तरायाᳪश्रोणाविस्तरंतुक्रतुत्तरम् ॥ ३ ॥ स्वस्तिस्तु याऽविनाशाख्या पुण्यकल्याणवृद्धिदा । विनायकप्रिया नित्यं तां च स्वस्तिं ब्रुवन्तु नः ॥ ४ ॥ भो ब्राह्मणाः! मह्यं सकुटुम्बिने महाजनान्नमस्कुर्वाणाय आशीर्वचनमपेक्षमाणाय मया क्रियमाणस्य ग्रहशान्त्याख्यस्य कर्मणः स्वस्तिं भवन्तो ब्रुवन्तु ॥ ॐ आयुष्मते स्वस्ति ॥ एवं त्रिः ॥ ऋक्—ॐ स्वस्तिरिद्धिप्रपथेश्रेष्ठारेक्णस्वत्यभियावाममेति ॥ सानोऽअमासोऽअरणेनिपातुस्वावे-

शाभवंतुदेवगोपा ॥ ८२ ॥ यजुः—ॐस्वस्तिनऽइन्द्रोव्वृद्धश्रवा स्वस्तिनःपूषाव्विश्ववेदाः ॥ स्वस्तिनस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिःस्वस्तिनोबृहस्पतिर्दधातु ॥ २५/१९ ॥ ब्राह्मणम्—ॐगातुंव्यज्ञायगातुंयज्ञपतयऽइतिगातुंह्येषयज्ञायेच्छतिगातुंयज्ञपतयेयोयज्ञस्यसंस्थान्देवीस्वस्तिरस्तु-नःस्वस्तिर्मानुष्येभ्यऽइतिस्वस्तिनोदेवत्रास्तुस्वस्तिर्मानुष्यत्रेत्येवै तदा-होध्र्वंजिगातुभेषजमित्यूर्ध्वोनोयज्ञोदेवलोकंगच्छत्वित्येवैतदाहशन्नोऽअस्तुद्विपदेशञ्चतुष्पदऽइत्येतावद्वाऽइदंसर्वंयावद्द्विपाच्चैवचतुष्पा-च्चतस्माऽएवैतद्यज्ञस्यसंस्थांगत्वाशंकरोतितस्मादाहशन्नोऽअस्तुद्विपदेशंचतुष्पदे।४।समुद्रमथनाज्जाता जगदानन्दकारिका।हरिप्रिया च माङ्गल्या तां श्रियं च ब्रुवन्तु नः।५।भो ब्राह्मणाः! मह्यं सकुटुम्बिने महाजनान्नमस्कुर्वाणाय आशीर्वचनमपेक्षमाणाय मया क्रियमाणस्य ग्रहशान्त्याख्यस्य कर्मणः श्रीरस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु ॥ ॐ अस्तु श्रीः ॥ एवं त्रिः ॥ ऋक्—ॐश्रियेजातःश्रियऽआनिरियायश्रियंवयो जरितृभ्योदधाति॥ श्रियंवसानाऽअमृतत्वमायन्भवन्तिसत्यासमिथामितद्रौ ॥ ७६ ॥ यजुः—ॐमनसःकाममाकूतिंवाचःसत्यमशीय ॥ पशूनांरूपमन्नस्यरसोयशःश्रीःश्रयतांमयिस्वाहा ॥ ३९/४ ॥ ब्राह्मणम्—ॐतेनोहततऽईजेदक्षःपार्वतस्तऽइ-ष्ट्येतर्हिदाक्षायणाराज्यमिवैवप्राप्ताराज्यमिहवैवप्राप्नोतियऽएवंविद्वाने-तेनयज्ञेनयजतेतस्माद्वाऽएतेनयजेतसवाऽएकैकऽएवानूचिनाह्नंपुरोडाशी भवत्येतेनोहास्यासपत्नानुपबाधाश्रीर्भवति॥५॥कृतेऽस्मिन्पुण्याहवाचने न्यूनातिरिक्तो यो विधिः स उपविष्टब्राह्मणानां वचनात् श्रीमहागणपतिप्रसादाच्च सर्वः परिपूर्णोऽस्तु ॥ अस्तु परिपूर्णः ॥ अथाभिषेकः ॥ कर्तुर्वामतः पत्नीम् उपवेश्य पात्रपातितकलशोदकेन अविधुराश्चत्वारो ब्राह्मणा दूर्वाम्रपल्लवैरुदङ्मुखास्तिष्ठन्तः सपत्नीकं यजमानमभिषिञ्चे-

युः ॥ तत्रमंत्राः-ॐपयः पृथिव्यांपयऽओषधीषुपयोदिव्यन्तरिक्षेपयो-
धाः ॥ पयस्वतीःप्रदिशः सन्तुमह्यम् ॥ ३६/१८ ॥ ॐपञ्चनद्यः सरस्वती-
मपियन्तिसस्रोतसः ॥ सरस्वतीतुपञ्चधासोदेशेभवत्सरित् ॥ ११/३४ ॥
ॐवरुणस्योत्तम्भनमसिवरुणस्यस्कम्भसर्जनीस्थोवरुणस्यऽऋतसद-
न्यसिवरुणस्यऽऋतसदनमसिवरुणस्यऽऋतसदनमासीद ॥ ३६/४ ॥ ॐ
पुनन्तुमादेवजनाः पुनन्तुमनसाधियः ॥ पुनन्तुविश्वाभूतानिजातवे-
दः पुनीहिमा ॥ ३९/१९ ॥ ॐदेवस्यत्वासवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यांपू-
ष्णोहस्ताभ्याम् ॥ सरस्वत्यैवाचोयन्तुर्यन्त्रियेदधामिबृहस्पतेष्ट्वासा-
म्राज्येनाभिषिञ्चाम्यसौ ।३०/९। ॐदेवस्यत्वासवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बा-
हुभ्यांपूष्णोहस्ताभ्याम् ॥ सरस्वत्यैवाचोयन्तुर्यन्त्रेणाग्नेः साम्रा-
ज्येनाभिषिञ्चामि ॥३७/१८॥ ॐ देवस्यत्वासवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहु-
भ्यांपूष्णोहस्ताभ्याम् ॥ अश्विनोर्भैषज्येनतेजसेब्रह्मवर्चसाया-
भिषिञ्चामिसरस्वत्यैभैषज्येन वीर्यायान्नाद्यायाभिषिञ्चामीन्द्रस्ये-
न्द्रियेणबलायश्रियैयशसेभिषिञ्चामि ।३/२०॥ ॐविश्वानिदेवसवितर्दुरिता-
निपरासुव ॥ यद्भद्रन्तन्नऽआसुव ॥३/३०॥ ॐधामच्छदग्निरिन्द्रोब्रह्मा-
देवोबृहस्पतिः ॥ सचेतसोविश्वेदेवायज्ञम्प्रावन्तुनःशुभे ॥७६/१८॥ ॐ त्वं-
यविष्ठदाशुषोनॄँपाहिशृणुधीगिरः ॥ रक्षातोकमुतत्मना ॥७७/१८॥ ॐ
अन्नपतेन्नस्यनोदेह्यनमीवस्यशुष्मिणः ॥ प्रप्रदातारन्तारिषऽऊर्जं-
न्नोधेहिद्विपदेचतुष्पदे ॥ ८३/११ ॥ ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षंशान्तिः पृथिवी-
शान्तिरापःशान्तिरोषधयःशान्तिः ॥ वनस्पतयःशान्तिर्विश्वेदेवाः
शान्तिर्ब्रह्मशान्तिःसर्वंशान्तिःशान्तिरेवशान्तिःसामाशान्तिरेधि ॥
॥१७/३६॥ ॐयतोयतःसमीहसेततोनोऽअभयंकुरु ॥ शन्नःकुरुप्रजाभ्यो-
ऽभयन्नःपशुभ्यः ॥२२/३६॥ ब्राह्मणम्-ॐपालाशंभवति ॥ तेनब्राह्मणो-

भिषिञ्चतिब्रह्मवैपलाशोब्रह्मणैवैनमेतदभिषिञ्चति ॥ औदुंबरंभवति ॥ तेनस्वोभिषिञ्चत्यन्नंवाऽऊर्गुदुंबरऽऊर्ग्वैस्वंयावद्वैपुरुषस्यस्वंभवतिनवैता-वदशनायतितेनोर्क्स्वंतस्मादौदुंबरेणस्वोभिषिञ्चति ॥ नैग्यग्रोधपादंभव-ति।तेनामित्रोराजन्योभिषिञ्चतिपद्भिर्वैन्यग्रोधः प्रतिष्ठितोमित्रेणवैराजन्यः प्रतिष्ठितस्तस्मान्नैग्यग्रोधपादेनमित्रोराजन्योभिषिञ्चति ॥ आश्वत्थंभव-ति ॥ तेनवैश्योभिषिञ्चतिसयदेवादोश्वत्थेतिष्ठतऽइन्द्रोमरुतऽउपामंत्रयते तस्मादाश्वत्थेनवैश्योभिषिञ्चति ॥ यदेवकल्पान्जुहोतिप्राणविकल्पाऽअ-मृतमुवैप्राणाऽअमृतेनैवैनमेतदभिषिंचति ॥ सर्वेषांवाऽएषवेदानाᳪर-सोयत्सामसर्वेषामेवैनमेतद्वेदानाᳪरसेनाभिषिञ्चति ॥ शान्तिः शान्तिः सुशान्तिर्भवतु ॥ स्वस्थाने उपविश्य हस्ते जलं गृहीत्वा—अभिषेककर्तृ-केभ्यो ब्राह्मणेभ्यो यथोत्साहं दक्षिणां दास्ये तेन श्रीकर्माधीशःप्रीयताम्॥ ततः पुत्रवतीभिर्वृद्धसुवासिनीभिर्नीराजनं कार्यम् ॥ तस्य मंत्रः—ॐअ-नाधृष्टा पुरस्तादग्नेराधिपत्यऽआयुर्म्मेदाᳪपुत्रवतीदक्षिणतऽइन्द्रस्याधि-पत्येप्रजाम्मेदाᳪ । सुषदापश्चाद्देवस्यसवितुराधिपत्येचक्षुर्म्मेदाऽआ-श्रुतिरुत्तरतोधातुराधिपत्येरायस्पोषम्मेदाᳪ ॥ विधृतिरुपरिष्टाद्बृह-स्पतेराधिपत्यऽओजोमेदाविश्वाभ्योमानाष्ट्राभ्यस्पाहिमनोरश्वासि ॥ २३/१७ ॥ अनेन पुण्याहवाचनेन कर्माङ्गदेवताः श्रीआदित्यादिनवग्रहाः प्रीयन्ताम् ॥ इति पुण्याहवाचनप्रयोगः ॥

॥ ८७ ॥ अथ मातृकापूजनप्रयोगः ॥

तत्रादौ वैश्वदेवं कुर्यात् ॥ तदकरणे सङ्कल्पः—इदं वैश्वदेवहवनीय-द्रव्यं सदक्षिणाकपात्रावसरे वैश्वदेवाकरणजनितप्रत्यवायपरिहारार्थं कर-

१ अविघ्नो मंडपश्चैव मातृणां पूजनं सकृत् । वैश्वदेवं वसोर्धारा नान्दीश्राद्धमतःपरम् ॥ आवीघ्नपूजनात्पूर्वं वैश्वदेवं विधाय च ॥

णजनितफलप्राप्त्यर्थम् अमुकशर्मणे ब्राह्मणाय विष्णुरूपाय तुभ्यमहं संप्रददे ॥ अनेन वैश्वदेवकरणजनितफलसिद्धिरस्तु ॥ ततो गोधूमादिधान्यपूरिते हरिद्रादिरञ्जिते मृन्मये अविघ्नाख्यकलशे मोदादिपड्विनायकानां प्रतिमाः कुंकुमादिना लिखित्वा आवाहयेत्–ॐमोदाय नमः मोदम् आवाहयामि ॥ ॐप्रमोदाय नमः प्रमोदम् आवाहयामि ॥ ॐ सुमुखाय नमः सुमुखम् आवाहयामि ॥ ॐदुर्मुखाय नमः दुर्मुखम् आवाहयामि ॥ ॐअविघ्नाय नमः अविघ्नम् आवाहयामि ॥ ॐविघ्नकर्त्रे नमः विघ्नकर्तारम् आवाहयामि ॥ प्रतिष्ठापनम्–ॐमनोजूति० । ॐभूर्भुवः स्वः मोदादिपड्विनायकाः सुप्रतिष्ठिता वरदा भवत ॥ ॐमोदादिषड्विनायकेभ्यो नमः इति षोडशोपचारैः संपूज्य अनया पूजया मोदादिपड्विनायकाः प्रीयन्ताम् ॥ इत्यविघ्नपूजनम् ॥

अथमण्डपमातृकास्थापनम् ॥ निश्चितकोणे गर्तं खनेत् ॥ गर्तसमीपे सभार्यो यजमानःपूर्वाभिमुख उपविश्य गोधूमनिर्मितगणपतिप्रतिमायां पूर्ववत् गणपतिं षोडशोपचारैः सम्पूजयेत् ॥ ततो यजमानश्चतुर्षु कोणेषु मध्ये च गर्तं कुर्यात् ॥ आचार्येण च दुर्वाशम्याम्रादिप्रशस्तवृक्षपत्राणां रक्तसूत्रेण पञ्च वेष्टनानि कार्याणि । एषां मण्डपमातृसंज्ञा ॥ ताश्च मण्डपमातृः मण्डपे स्थापयेत् ॥ तासां मध्ये एकां मदनफलेन युक्तां कुर्यात् ॥ ततस्तासां तैलहरिद्राकुङ्कुमादिसुगन्धद्रव्येणोद्वर्तनम् ॥ ततो यजमानो गर्तेषु अद्भिरासेचनं कुर्यात् दध्ना च ॥ ततस्ता आग्नेयादिचतुर्षु मण्डपकोणस्तंभेषु क्रमेण चतस्रो मध्ये चैका एवं पञ्च कृत्वा ततः स्थिरोभवेतिस्थिरीकरणम् ॥ ॐ स्थिरोभंवन्वीड्वङ्गऽआशुर्भवन्वा·

1 वृषादित्रये वह्निकोणे शुभं स्यात्तथा सिंहकादित्रये चेशकोणे । भवेद् वृश्चिकादित्रये वायुकोणे घटादित्रये नैर्ऋतौ खातमाहुः ॥ एवं कोणनिश्चय कुर्यात् ॥

उज्ज्यद्वेन ॥ पृथुर्बभवसुपदुस्त्वमग्ने? पुरीषवाहण८॥ २८/११ ॥ तत्र शाखास्तंभे ॥ अग्निकोणे—ॐ नन्दिन्यै नमः नन्दिनीमावाहयामि स्थापयामि ॥१॥ नैर्ऋत्यकोणे—ॐ नलिन्यै न० नलिनीमा० ॥ २ ॥ वायव्यकोणे-ॐ मैत्रायै न० मैत्रामा० ॥३॥ ईशानकोणे—ॐ उमायै न० उमामा० ॥४॥ मध्ये-पशुवर्धिन्यै न० पशुवर्धिनीमा० ॥५॥ मनोजूतिरिति ताः प्रतिष्ठापयेत् ॥ ॐ मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनोत्वरिष्टं यज्ञꣳ समिमन्दधातु ॥ विश्वेदेवास इह मादयन्तामो३ म्प्रतिष्ठ ॥ २/१३ ॥ इतिप्रतिष्ठाप्य ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः नन्दिन्यादिमण्डपमातृभ्यो नमः इत्यनेन मंत्रेणावाहनादिषोडशोपचारैस्ताः पूजयेत् ॥ अनया पूजया नन्दिन्यादिमण्डपमातरः प्रीयन्तां नमम ॥

अथ गौर्यादिमातृणां पूजनम् ॥ अग्निकोणे पीठोपरि रक्तवस्त्रं प्रसार्य तदुपरि गोधूमाक्षतपुञ्जेषु पूगीफलेषु वा सगणाधिपगौर्यादिचतुर्दशमातृणां दक्षिणोपक्रमाणाम् उदगपवर्गाणां प्रत्यगुपक्रमाणां प्रागपवर्गाणां वा स्थापनम् ॥ ॐ गणानान्त्वा० ॥ २३/१९ ॥ ॐ गणेशाय नमः गणेशम् आवाहयामि स्थापयामि । भो गणपते इहागच्छ इह तिष्ठ ॥१॥ ॐ आयङ्गौः पृश्निरक्रमीदसदन्मातरम्पुरः। पितरञ्च प्रयन्त्स्वः ॥ ३/६ ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः गौर्यै नमः गौरीम् आवाहयामि स्था० । भो गौरि इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ १ ॥ ॐ हिरण्यरूपाऽउषसो विरोकऽउभाविन्द्राऽउदिथः सूर्यश्च ॥ आरोहतं वरुणमित्र गर्तन्ततश्चक्षाथामदितिन्दितिञ्च मि-

१ गौरी पद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया । देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातरः॥ धृतिः पुष्टिस्तथा तुष्टिरात्मनः कुलदेवताः । गणेशेनाधिका ह्येता वृद्धौ पूज्याश्चतुर्दश ॥ अत्र चतुर्दशपदसमाहारान्मातरो लोकमातर इति सर्वासां विशेषणम् ॥ केचन मातृः लोकमातॄनपि आवाहयन्ति तदयुक्तम् ॥

त्रोसिवरुणोसि ॥ $\frac{२६}{१०}$ ॥ ॐभूर्भुवः स्वः पद्मायै नमः पद्मामावाहयामि स्था० ॥ भो पद्मे इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ २ ॥ ॐकदाचनस्तरीरसिनेन्द्रसश्चसिदाशुषे ॥ उपोपेन्नुमघवन्भूयइन्नुतेदानन्देवस्यपृच्च्यतऽआदित्येभ्यस्त्वा ॥ $\frac{३}{२}$ ॥ ॐभूर्भुवःस्वः शच्यै नमः शचीमावाहयामि स्थाप० ॥ भो शचि इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ ३ ॥ ॐमेधाम्मेवरुणोददातु मेधामग्निः प्रजापतिः ॥ मेधामिन्द्रश्चवायुश्चमेधान्धातादादातुमेस्वाहा ॥ $\frac{१५}{३२}$ ॥ॐभूर्भुवःस्वः मेधायै नमः मेधामावाहयामि स्था० ॥ भो मेधे इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ ४ ॥ ॐउपयामगृहीतोसिसावित्रोसिचनोधाश्चनोधाऽअसिचनोमयिधेहि ॥ जिन्वयज्ञञ्जिन्वयज्ञपतिम्भगायदेवायत्वासवित्रे ॥ $\frac{८}{७}$ ॥ ॐभूर्भुवःस्वः सावित्र्यै नमः सावित्रीम् आवाहयामि स्था० ॥ भो सावित्रि इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ ५ ॥ ॐविज्यन्धनुः कपर्दिनो० ॥$\frac{१६}{१०}$॥ ॐभूर्भुव स्वः विजयायै नमः विजयाम् आवाहयामि स्था० ॥ भो विजये इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ ६ ॥ ॐयातेरुद्रशिवा० ॥ $\frac{२}{१६}$ ॥ ॐभूर्भुवःस्वः जयायै नमः जयाम् आवाहयामि स्था०॥भो जये इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ ७ ॥ ॐदेवानाम्भद्रा सुमतिर्ऋजूयतान्देवानाᳬरातिरभिनोनिवर्त्तताम् ॥ देवानाᳬसख्यमुपसेदिमाव्वयन्देवानऽआयुःप्रतिरन्तुजीवसे ॥ $\frac{१५}{२५}$ ॥ ॐभूर्भुवःस्वः देवसेनायै नमः देवसेनाम् आवाहयामि स्थापयामि ॥ भो देवसेने इहागच्छ इ० ॥८॥ ॐपितृभ्यःस्वधायिभ्यःस्वधानमः पितामहेभ्यःस्वधायिभ्यःस्वधानमः प्रपितामहेभ्यस्वधायिभ्यःस्वधानमः ॥ अक्षन्पितरोमीमदन्तपितरोतीतृपन्तपितरःपितरःशुन्धध्वम् ॥ $\frac{३६}{१९}$ ॥ ॐभूर्भुवःस्वः स्वधायै नमः स्वधाम् आवाहयामि स्थापयामि ॥ भो स्वधे इ०इह तिष्ठ ॥९॥ ॐस्वाहायज्ञं मनसःस्वाहोरोरन्तरिक्षात्स्वाहाद्यावापृथिवीभ्याᳬस्वा·

ड्ढावातादारंभेस्वाहा ॥ $\frac{६}{?}$ ॥ ॐभूर्भुवःस्वः स्वाहायै नमः स्वाहाम् आवाहयामि स्थापयामि ॥ भो स्वाहे इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ १० ॥ ॐधृष्टिरस्यपांग्नेऽअग्निमामादंञ्जहिनिष्क्रव्व्यादंऽसेधांदेवयजंवह ॥ ध्रुवमसिपृथिवीन्दृ६ हब्रह्मवनिंत्वासत्रवनिंसजातवन्न्युपंदधामिभ्भ्रातृंव्व्यस्यवुधाय ॥ $\frac{१७}{१}$ ॥ ॐभूर्भुवःस्वः धृत्यै नमः धृतिमावाहयामि स्थापयामि ॥ भो धृते इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ ११ ॥ ॐत्वष्टांतुरीपोऽअद्भुतऽइन्द्राग्नीपुंष्टिवर्द्धना ॥ द्विपदाच्छन्दंऽइन्द्रियमुक्षागौर्न्नवयोंदधु६ ॥ $\frac{२०}{२१}$ ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः पुष्ट्यै नमः पुष्टिमावाहयामि स्थापयामि ॥ भो पुष्टे इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ १२ ॥ ॐ बृहस्पते० ॥ $\frac{३}{२६}$ ॥ ॐभूर्भुवः स्वः तुष्ट्यै नमः तुष्टिमावाहयामि स्थापयामि ॥ भो तुष्टे इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ १३ ॥ ॐ अम्बेऽअम्बिकेम्बांलिकेनमांनयतिकश्चन ॥ ससस्त्यश्श्वक? सुभद्रिकाङ्काम्पीलवासिनींम् ॥ $\frac{१८}{२३}$ ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः आत्मनः कुलदेवतायै नमः आत्मनः कुलदेवतामावाहयामि स्थापयामि ॥ भो आत्मनः कुलदेवते इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ १४ ॥ ॐ मनोजूति० ॥ $\frac{१२}{२}$ ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः सगणाधिपगौर्यादिमातरः सुप्रतिष्ठिताः वरदाः भवत ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः सगणाधिपगौर्यादिमातृभ्यो नमः इत्यनेन षोडशोपचारैः सम्पूजयेत् ॥

अथ श्र्यादिसप्तवसोर्द्धारापूजनम्—पात्रस्थेन विलीनेन सगुडेन घृतेन मातृणां संनिहितकुड्यलग्नाः दक्षिणाद्युदपवर्गाः पश्चिमादिप्रागपवर्गाः नातिनीचा न चोच्छ्रिताः सप्तवसोर्द्धाराः कर्तव्याः ॥ ॐवसोंःपवित्रमसिशतधांरंवसोंःपवित्रमसिसहस्रधारम् ॥ देवस्त्वासवितापुनातुवसोंःपवित्रेणशतधांरेणसुप्प्वा ॥ $\frac{३}{१}$ ॥ इत्यनेन सप्तधाराः कृत्वा ततः शिष्टाचारात् उर्ध्वभागे गुडेनैकीकरणम्-ॐकामधुक्षः

॥ ३/१ ॥श्रीपूर्वसप्तमातृश्च घृतमातृस्तथैव च । गुडेन मेलयिष्यामि ताः सर्वार्थप्रसाधिकाः ॥ इत्यनेनैकीकृत्य कुङ्कुमादिना बिन्दुकरणेनालङ्कृत्य प्रतिधारायामेकैकदेवतामावाहयेत्-ॐमनंसुदं ॥ ॐभू० श्रियै नमः श्रियम् आवाहयामि ॥ १ ॥ ॐश्रीश्चंते० ॥ ॐभू० लक्ष्म्यै नमः लक्ष्मीम् आवाहयामि ॥ २ ॥ ॐदृहरति० ॥ ॐभू० धृत्यै नमः धृतिम् आवाहयामि ॥ ३ ॥ ॐमेधाम्मे० ॥ ॐमेधायै नमः मेधाम् आवाहयामि ॥ ४ ॥ ॐदेवीजोष्ट्री० ॥ ॐभू० पुष्ट्यै नमः पुष्टिमावाहयामि ॥ ५ ॥ ॐव्रतेनंदीक्षा० ॥ ॐभू०श्रद्धायै नमः श्रद्धाम् आवाहयामि ॥ ६ ॥ ॐदेवीस्तिस्रस्तिस्त्र० ॥ ॐभू० सरस्वत्यै नमः सरस्वतीम् आवाहयामि ॥ ७ ॥ ॐमनोजूति० ॥ ॐभूर्भुवःस्वः श्र्यादिसप्तवसोर्द्धाराः सुप्रतिष्ठिताः वरदाः भवत ॥ ॐभूर्भुवस्व श्र्यादिसप्तवसोर्द्धारादेवताभ्यो नमः इत्यनेन षोडशोपचारैः पूजयेत् ॥ प्रार्थना—यदङ्गत्वेन भो देव्यः पूजिता विधिमार्गतः । कुर्वन्तु कार्यमखिलं निर्विघ्नेन क्रतूद्भवम् ॥

॥ इति मातृकापूजनप्रयोगः ॥

॥८८॥ अथायुष्यमन्त्रजपः-ॐआयुष्ष्यंवर्च्चस्यꣳरायस्पोषमौद्भिदम्॥ इदꣳहिरण्ण्यंवर्च्चस्वज्जैत्रायाविंशतादुमाम् ॥ ५०/३४ ॥ नतद्रक्षाꣳसिनपिशाचास्तरन्तिदेवानामोजंःप्प्रथमजꣳह्येतत्॥ योबिभर्त्तिदाक्षायणꣳहिरण्ण्यꣳसदेवेषुकृणुतेदीर्ग्घमायुꣳसमनुष्ष्येषुकृणुतेदीर्ग्घमायुः ॥ ५१/३४ ॥ यदाबध्नन्दाक्षायणाहिरण्ण्यꣳशतानीकायसुमनस्यमानाः॥तन्मऽआबध्नामिशतशारदायायुष्ष्माञ्जरदष्टिर्य्यथासम् ॥ ५२/३४ ॥

॥ ८९ ॥ अथ साङ्कल्पिकविधिना नान्दीश्राद्धप्रयोगः ॥

अथ यज्ञोपवीती प्राङ्मुखो दक्षिणं जानु पातयित्वा पात्रे उदङ्मुखान् प्राक्संस्थान् स्वयम् उदङ्मुखश्चेत् प्राङ्मुखान् उदक्संस्थान् वैश्वदेवस्थाने द्वौ सपत्नीकपितृपार्वणस्थाने द्वौ सपत्नीकमातामहपार्वणस्थाने द्वौ च एवं षट् कुशवटून् दूर्वाकाण्डानि वा संस्थाप्य क्षणदानं कुर्यात्॥यवान्गृहीत्वा—ॐ सत्यवसुसंज्ञकानां विश्वेषां देवानां नान्दीमुखानाम् अद्य कर्तव्यप्रधानसङ्कल्पोक्तकर्माङ्गसाङ्कल्पिकनान्दीश्राद्धे भवद्भ्यां क्षणः क्रियताम् ॥ इति यवान्निक्षिप्य ॥ ॐतथा ॥ प्राप्नुतां भवन्तौ ॥ प्राप्नवाव ॥ यवान् गृहीत्वा—गोत्राणां नान्दीमुखानां पितृपितामहप्रपितामहानां सपत्नीकानाम् अद्य कर्तव्यप्रधानसंकल्पोक्तकर्माङ्गसाङ्कल्पिकनान्दीश्राद्धे भवद्भ्यां क्षणः क्रियताम् ॥ इति यवान्निक्षिप्य॥ ॐतथा ॥ प्राप्नुतां भवन्तौ ॥ प्राप्नवाव ॥ यवान्गृहीत्वा—द्वितीयगोत्राणां नान्दीमुखानां मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहानां सपत्नीकानाम् अद्य कर्तव्यप्रधानसङ्कल्पोक्तकर्माङ्गसाङ्कल्पिकनान्दीश्राद्धे भवद्भ्यां क्षणः क्रियताम् । इति यवान्निक्षिप्य ॥ ॐतथा ॥ प्राप्नुतां भवन्तौ ॥ प्राप्नवाव ॥ पाद्यदानम्—सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः इदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धिः ॥ गोत्राः नान्दीमुखाः पितृपितामहप्रपितामहाः सपत्नीकाः इदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धिः॥ द्वितीयगोत्राः नान्दीमुखाः मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः इदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धिः॥ सङ्कल्पः—अद्य पूर्वोच्चारित०शुभपुण्यतिथौ साङ्कल्पिकविधिना नान्दीश्राद्धं करिष्ये ॥ आसनदानम्—सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः इदं वः आसनम् ॥ गोत्राः नान्दीमुखाः पितृपितामहप्रपितामहाः

सपत्नीकाः इदं वः आसनम् ॥ द्वितीयगोत्राः नान्दीमुखाः मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः इदं वः आसनम्॥गन्धादिदानम्—सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः इदं वो गन्धाद्यर्चनं यथाविभागं स्वाहा नमः ॥ गोत्राः नान्दीमुखाः पितृपितामहप्रपितामहाः सपत्नीका इदं वो गन्धाद्यर्चनं यथाविभागं स्वाहा नमः॥ द्वितीयगोत्राः नान्दीमुखाः मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः इदं वो गन्धाद्यर्चनं यथाविभागं स्वाहा नमः॥ भोजननिष्क्रयद्रव्यदानम्—सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः युग्मब्राह्मणभोजनपर्याप्तामनिष्क्रयीभूतं किञ्चिद्धिरण्यं दत्तम् अमृतरूपेण वः स्वाहा नमः ॥ गोत्राः नान्दीमुखाः पितृपितामहप्रपितामहाः सपत्नीकाः युग्मब्राह्मणभोजनपर्याप्तामनिष्क्रयीभूतं किञ्चिद्धिरण्यं दत्तम् अमृतरूपेण वः स्वाहा नमः ॥ द्वितीयगोत्राः नान्दीमुखाः मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः युग्मब्राह्मणभोजनपर्याप्तामनिष्क्रयीभूतं किञ्चिद्धिरण्यं दत्तम् अमृतरूपेण वः स्वाहा नमः॥सक्षीरयवमुदकदानम्—सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः प्रीयन्ताम् ॥ गोत्राः नान्दीमुखाः पितृपितामहप्रपितामहाः सपत्नीकाः प्रीयन्ताम् ॥ द्वितीयगोत्राः नान्दीमुखाः मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः प्रीयन्ताम् ॥ आशीर्ग्रहणम्—अघोराः पितरःसन्तु । सन्त्वघोराः पितरः॥ गोत्रं नो वर्धताम् । वर्धताम् वो गोत्रम् ॥ दातारो नोऽभिवर्द्धन्ताम् । अभिवर्द्धन्तां वो दातारः॥वेदाश्च नोऽभिवर्द्धन्ताम्। अभिवर्द्धन्तां वो वेदाः। सन्ततिर्नोऽभिवर्द्धताम्।अभिवर्द्धतां वः सन्ततिः॥श्रद्धा च नो मा व्यगमत्। मा व्यगमद्वः श्रद्धा ॥ बहुदेयं च नोऽस्तु। अस्तु वो बहुदेयम् ॥ अन्नं च नो बहु भवेत्। भवतु वो बह्वन्नम्। अतिथींश्च लभेमहि। अतिथींश्च लभध्वम् ॥

याचितारश्च नः सन्तु। सन्तु वो याचितारः॥ एता आशिषः सत्याः सन्तु। सन्त्वेताः सत्या आशिषः। दक्षिणादानम्-सत्यवसुसंज्ञकेभ्यो विश्वेभ्यो देवेभ्यो नान्दीमुखेभ्यः कृतस्य नान्दीश्राद्धस्य फलप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं द्राक्षामलकयवमूलनिष्क्रयीभूतां दक्षिणां दातुमहमुत्सृजे॥ गोत्रेभ्यः नान्दीमुखेभ्यः पितृपितामहप्रपितामहेभ्यः सपत्नीकेभ्यः कृतस्य नान्दीश्राद्धस्य फलप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं द्राक्षामलकयवमूलनिष्क्रयीभूतां दक्षिणां दातुमहमुत्सृजे। द्वितीयगोत्रेभ्यः नान्दीमुखेभ्यः मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहेभ्यः सपत्नीकेभ्यः कृतस्य नान्दीश्राद्धस्य फलप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं द्राक्षामलकयवमूलनिष्क्रयीभूतां दक्षिणां दातुमहमुत्सृजे॥ नान्दीश्राद्धं सम्पन्नम्। सुसम्पन्नम् ॥ विसर्जनम्-ॐ वाजेवाजेवतवाजिनोनोधनेषुविप्राऽअमृताऽऋतज्ञाः॥ अस्यमध्वःपिबतमादयध्वन्तृप्तायातपथिभिर्देवयानैः॥ १८/९॥ अनुव्रजनम्-ॐ आमावाजस्यप्रसवोजगम्यादेमेद्यावापृथिवीविश्वरूपे। आमागन्तांपितरामातराचामासोमोऽअमृतत्त्वेनगम्यात्॥ १९/९॥ हस्ते जलमादाय-मयाऽऽचरितेऽस्मिन्साङ्कल्पिकनान्दीश्राद्धे न्यूनातिरिक्तो यो विधिः स उपविष्टब्राह्मणानां वचनाच्छ्रीनान्दीमुखप्रसादाच्च सर्वः परिपूर्णोऽस्तु॥ अस्तु परिपूर्णः॥ अनेन साङ्कल्पिकविधिना नान्दीश्राद्धेन नान्दीमुखाः पितरः प्रीयन्ताम् ॥

॥ इति साङ्कल्पिकविधिना नान्दीश्राद्धप्रयोगः ॥

॥१०॥ आचार्यादि-ऋत्विग्वरणम्॥ एकस्मिन्ताम्रपात्रे शरावे वा आपः क्षीरं कुशाग्राणि दधि चन्दनम् अक्षताः दूर्वाः सर्षपाश्चेत्यष्ट द्रव्याणि निक्षिप्य पात्रान्तरेण पिधाय रक्तसूत्रेण संवेष्ट्य ततः साचार्यविप्राः ॐ पुण्याहमिति त्रिवारं वदन्तः यजमानहस्ते दद्युः। पत्नीहस्ते वाचनकलशं च दद्युः।

सपत्नीको यजमानः स्वासनादुत्थाय ब्राह्मणान्प्रार्थयेत् ॥ ब्राह्मणमार्थना-पावनाःसर्ववर्णानां ब्राह्मणा ब्रह्मरूपिणः । अनुगृह्णन्तु मामद्य ग्रहशान्त्याख्यकर्मणि ॥ स्वस्वकर्मरता नित्यं वेदशास्त्रार्थकोविदाः ॥ श्रोत्रियाः सत्यवाचश्च ग्रहध्यानरताः सदा ॥ यद्वाक्यामृतसंसिक्ता वृद्धिं यान्ति नरद्रुमाः । अङ्गीकुर्वन्तु मत्कर्म कल्पद्रुमसमाशिषः ॥ यथोक्तनियमैर्युक्ता मन्त्रार्थे स्थिरबुद्धयः । यत्कृपालोकनात्सर्वा ऋद्धयो वृद्धिमाप्नुयुः ॥ आयुरारोग्यपुत्रादिसुखश्रीप्राप्तये मम । आपद्विघ्नविनाशाय शत्रुबुद्धिक्षयाय च । आदित्याद्या ग्रहाः सर्वे राहुकेतुपुरःसराः॥ ग्रहदेवाधिदेवैश्च नक्षत्राणां च दैवतैः॥ इन्द्रादिभिश्च दिक्पालैर्ब्रह्मविष्णुमहेश्वरैः । वास्तुदुर्गागणेशैश्च क्षेत्रपालेन संयुतैः॥ भौमान्तरिक्षदेवैश्च कुलदेव्या च मातृभिः॥ चतुर्भिश्चैव वेदैश्च रुद्रेण सहितास्तथा ॥ स्वागतं वो द्विजश्रेष्ठा मदनुग्रहकारकाः । अयमर्घ इदं पाद्यं भवद्भिः प्रतिगृह्यताम् ॥ चरणक्षालनादेवास्तुष्यन्ति शुद्धमानसाः । तज्जलेन च संसिक्ताः पूर्णाः कामा भवन्तु मे ॥ इमं वोऽर्घं प्रयच्छामि गृह्णन्तु प्रीतमानसाः । पावयन्तु च मां नित्यं पूरयन्तु मनोरथान् ॥ अन्यः कश्चिद् ब्राह्मणः वदति—अर्घोऽर्घोऽर्घं ॥ यजमानो वदेत्—प्रतिगृह्यन्ताम् । इत्युक्त्वा ब्राह्मणहस्ते तदग्रे वा अर्घं स्थापयेत् ॥ ब्राह्मणा वदेयुः—प्रतिगृह्णीमः ॥ आचार्यवरणम्—यजमानः हस्ते पूगीफलं गृहीत्वा विप्रस्य दक्षिणजानुमालभ्य वदेत्—अमुकप्रवरान्वितामुकगोत्रःशुक्लयजुर्वेदाम्नायवाजिमाध्यन्दिनीयशाखाध्यायी अमुकशर्मा यजमानोऽहममुकप्रवरान्वितामुकगोत्रं शुक्लयजुर्वेदाम्नायवाजिमाध्यन्दिनीयशाखाध्यायिनममुकशर्माणं ब्राह्मणमस्मिन्ग्रहशान्त्याख्ये कर्मणि आचार्यत्वेन त्वामहं वृणे इत्युक्त्वा पूगीफलं दद्यात् ॥ यजमानेन दत्तं पूगीफलं गृहीत्वा विप्रो वदेत्—ॐ वृतोऽस्मि ॥ ॐ व्रतेनदीक्षामा—

प्नोतिदीक्षयाप्नोतिदक्षिणाम् ॥ दक्षिणाश्रुद्धामाप्नोतिश्रुद्धया-सत्यमाप्यते ॥$\frac{30}{30}$॥ वृताय एतत्ते पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनमेष तेऽर्घः ॥ गन्धाक्षतपुष्पमालादिभिः सम्पूज्य हस्ते रक्तसूत्ररूपकङ्कणबन्धनम्–ॐयदाबध्नन्दाक्षायणाहिरण्यꣳशतानीकायसुमनस्यमानाः ॥ तन्मऽआबध्नामिशतशारदायायुष्माञ्जरदष्टिर्यथासम् ॥$\frac{52}{34}$॥ यथाशक्ति सुवर्णहस्तमुद्रालङ्कारवस्त्रोपवस्त्रादिवरणसाहित्यं दत्वा वदेत्—आवाहयाम्यहं विप्रमाचार्यं यज्ञकारिणम् । पुराणन्यायमीमांसाधर्मशास्त्रार्थपारगम् ॥ आचार्यस्तु यथा स्वर्गे शक्रादीनां बृहस्पतिः । ग्रहशान्त्याख्ययज्ञेऽस्मिन्नाचार्यस्त्वं तथा भव ॥ यावत्कर्म समाप्येत तावत्त्वमाचार्यो भव ।' आचार्यो वदेत्-भवामि ॥२॥ ॐ बृहस्पते०॥ ब्रह्मवरणम्-पूर्ववद्गोत्रोच्चारणं कृत्वा अस्मिन् कर्मणि ब्रह्मत्वेन त्वामहं वृणे।ॐ वृतोऽस्मि ॥ ॐ व्रतेन०॥ वृताय एतत्ते पाद्यं० ॥ कङ्कणबन्धनम्—ॐयदाबध्नन्दाक्षायणा०॥ यथा चतुर्मुखो ब्रह्मा सर्वलोकपितामहः ।ग्रहशान्त्याख्ययज्ञेऽस्मिन् ब्रह्मा भव द्विजोत्तम॥१॥ यावत्कर्म समाप्येत तावत्त्वं ब्रह्मा भव । भवामि ॥ब्रह्मजज्ञानं०॥ततःगाणपत्यसदस्यवरणं कृत्वा ऋत्विग्वरणं पूर्ववद्गोत्रोच्चारणपूर्वकं कुर्यात् ॥ एवं चतुरोऽष्टौ वा ऋत्विजो वृणुयात् ॥ ऋत्विक्प्रार्थना-ब्राह्मणाः सन्तु मे शस्ताः पापात्पान्तु समाहिताः।देवानां चैव दातारः पातारःसर्वदेहिनाम्॥१॥जपयज्ञैस्तथा होमैर्दानैश्च विविधैः पुनः । देवानां च ऋषीणां च तृप्त्यर्थं याजकाः कृताः॥२॥ येषां देहे स्थिता वेदाः पावयन्ति जगत्त्रयम् । रक्षन्तु सततं ते मां ग्रहयज्ञे व्यवस्थिताः ॥ ३ ॥ ब्राह्मणा जङ्गमं तीर्थं त्रिषु लोकेषु विश्रुतम् । येषां वाक्योदकेनैव शुद्ध्यन्ति मलिना जनाः ॥ ४ ॥ पावनाः सर्ववर्णानां ब्राह्मणा ब्रह्मरूपिणः । सर्वकर्मरता नित्यं वेदशास्त्रार्थकोविदाः ॥ ५ ॥

श्रोत्रियाः सत्यवाचश्च ग्रहध्यानरताः सदा । यद्वाक्यामृतसंसिक्ता ऋद्धिं यान्ति नरद्रुमाः ॥६॥ अङ्गीकुर्वन्तु कर्मैतत्कल्पद्रुमसमाशिषः । यथोक्तनियमैर्युक्ता मंत्रार्थे स्थिरबुद्धयः ॥ ७ ॥ यत्कृपालोचनात्सर्वा ऋद्धयो वृद्धिमाप्नुयुः। ग्रहयज्ञे मया पूज्या सन्तु मे नियमान्विताः॥८॥ अक्रोधनाः शौचपराः सततं ब्रह्मचारिणः । ग्रहध्यानरता नित्यं प्रसन्नमनसः सदा ॥९॥ अदुष्टभाषणाः सन्तु मा सन्तु परनिन्दकाः । ममापि नियमा ह्येते भवन्तु भवतामपि ॥१०॥ ऋत्विजश्च यथा पूर्वं शक्रादीनां मखेऽभवन् । यूयं तथा मे भवत ऋत्विजो द्विजसत्तमाः ॥११॥ ग्रहयागस्य निष्पत्तौ भवन्तोऽभ्यर्थिता मया । सुप्रसन्नैः प्रकर्तव्यं शान्तिकं विधिपूर्वकम्॥१२॥ यजमानहस्ते कङ्कणबन्धनम् ॐ यदाबध्नन्दाक्षायणा हिरण्यꣳ शतानीकाय सुमनस्यमानाः। तन्म आबध्नामि शतशारदायायुष्माञ्जरदष्टिर्यथासम् ॥५१/३४॥ दाक्षायणा शतानीकमबध्नन्सुहिरण्यकम् । आबध्नामि तदेवाहमायुष्यस्याभिवृद्धये ॥ यजमानपत्न्याः वामहस्ते कङ्कणबन्धनम्-ॐ तम्पत्नीभिरनुगच्छेम देवाः पुत्रैर्भ्रातृभिरुत वा हिरण्यैः । नाकं गृभ्णानाः सुकृतस्य लोके तृतीये पृष्ठे अधि रोचने दिवः ॥५४/१५॥ ग्रहयज्ञफलावाप्त्यै कङ्कणं सूत्रनिर्मितम् । हस्ते बध्नामि सुभगे त्वं जीव शरदां शतम् ॥ दिग्रक्षणम्-कृणुष्व पाजः०। अपसर्पन्तु०॥ इति पूर्वोक्तरीत्या कार्यम् ॥ ९१ ॥ पञ्चगव्यकरणम्–कांस्यपात्रे मन्त्रान्ते गोमूत्रं क्षिपेत्–ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितु० ॥ गोमयं मन्त्रान्ते क्षिपेत्–ॐ मानस्तोके० ॥ क्षीरं मन्त्रान्ते क्षिपेत्–ॐ आप्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यम् ॥ भवा वाजस्य सङ्गथे ॥११२/१२॥ दधि मन्त्रान्ते क्षिपेत्-दधिक्राव्णो०॥ आज्यं मन्त्रान्ते क्षिपेत्–ॐ तेजोऽसि शुक्रमस्यमृतमसि धाम नामासि प्रियं देवानामनाधृष्टं देवयजनमसि ॥३१/१॥ कुशोदकं मन्त्रान्ते

क्षिपेत्-ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ॥ ॐ इति प्रणवेन यज्ञकाष्ठेनालोड्य प्रणवेनाभिमन्त्रयेत् ॥ कर्मभूमिं यज्ञसम्भारांश्च कुशैः सम्प्रोक्षयेत् । ॐ आपो हि ष्ठा० । यो वः शिवतमो० । तस्मा अरं० । भूमिप्रार्थना-हस्तौ बद्ध्वा भूमिं सम्प्रार्थयेत् ॐ स्योना पृथिवि नो० । ॐ मही द्यौः० । इत्येताभ्यामृग्भ्यां सम्प्रार्थ्य ॐ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः० ॥ "ॐ देवा आयान्तु ॥ यातुधाना अपयान्तु ॥ विष्णो देवयजनं रक्षस्व" इति पठित्वा भूमौ मादेशं कुर्यात् ॥ ९२ ॥ भूमिकूर्मानन्तपूजनम् होममानतो यथार्हकृतचतुरस्रस्थण्डिलस्याग्रे अक्षतपुञ्जत्रयोपरि पूगीफलानि संस्थाप्य भूमिकूर्मानन्तानावाह्य पूजयेत्-ॐ भूरसि भूमिरस्यदितिरसि विश्वधाया विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री ॥ पृथिवीं यच्छ पृथिवीं दृꣳह पृथिवीं मा हिꣳसीः ॥ भूम्यै नमः भूमिमावाहयामि ॥ ॐ यस्य कूर्म्मो गृहे हविस्तमग्ने वर्द्धया त्वम् ॥ तस्मै देवा अधि ब्रुवन्नयं च ब्रह्मणस्पतिः ॥ ॐ कूर्माय नमः कूर्ममावाहयामि ॥ ॐ स्योना पृथिवि नो० ॥ ॐ अनन्ताय नमः अनन्तमावाहयामि स्थापयामि ॥ प्रतिष्ठापनम्—ॐ मनो जूति० ॥ भूमिकूर्मानन्तदेवताः सुप्रतिष्ठिताः वरदाः भवत ॥ ॐ भूमिकूर्मानन्तदेवताभ्यो नमः इत्यनेन पूजयेत् ॥ ९३ ॥ स्थण्डिले पञ्चभूसंस्काराः-आचार्यः स्थण्डिलपश्चिमतः उपविशेत् । यजमानं स्वदक्षिणे ब्रह्मणः पश्चिमतः उपवेश्य आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य प्रारब्धग्रहशान्त्याख्ये कर्मणि पञ्चभूसंस्कारपूर्वकमग्निप्रतिष्ठापनं करिष्ये । । १ ॥ परिसमूहनम्—मूलघृतैस्त्रिभिर्दर्भाग्रैः पश्चिमतः आरभ्य प्रागन्तमुदक्संस्थं त्रिः 'परिसमूह्य' तान्कुशान् ईशान्यां पूर्वतो वा परित्यजेत् ॥ २ ॥ उपलेपनम् गोमयोदकेन त्रिरुपलिम्पयेत् ॥ ३ ॥ उल्लेखनम्-यज्ञकाष्ठेन स्रुवेण कुशैर्वा दक्षिणत उदक्संस्थं त्रिरुल्लेखयेत् ॥ ४ ॥ उद्धरणम्—

अङ्गुष्ठात् अनामिकापर्यन्तं यथोल्लिखिताभ्यो लेखाभ्यः पांसुं नीत्वा प्राग्वमुद्धरेत् ॥५॥ अभ्युक्षणम्-पतिरेखं न्युब्जमुष्टिना प्राजापत्यतीर्थेन उदकेनाभ्युक्षणम् ॥ इति पञ्चभूसंस्काराः ॥ ९४ ॥ अग्निस्थापनम्—सुवासिन्या श्रोत्रियागारात्स्वगृहाद्वा समृद्धं निर्धूमं तैजसेनासम्भवे मृण्मयेन वा पात्रयुग्मेन सम्पुटीकृतमाहृतमग्निं स्थण्डिलस्य आग्नेय्यां निदध्यात् ॥ तस्मादाचार्यः "हुं फट्" इति मन्त्रेण क्रव्यादांशं नैर्ऋत्यां क्षिप्त्वा आत्माभिमुखमग्निं स्थापयेत्—ॐ अग्निन्दूतम्पुरो दधेहव्यवाहमुपब्रुवे ॥ देवाँ२ऽआसादयादिह ॥ २२/१७ ॥ ॐ वरदनामानमग्निमुपसमादधे ॥ आचारात् अग्न्याहरणपात्रे साक्षतोदकं निषिच्य तत्र किञ्चिद्धिरण्यमाभूषणं वा निक्षिप्य तद्द्रव्यं सुवासिन्यै दापयेत् ॥ आवाहनम्-एषोहदेवः प्प्रदिशोनुसर्व्वाः पूर्वोहजातः सऽउगर्बेऽअन्तः ॥ सऽएवजातः सजनिष्यमाणः प्प्रत्यङ्जनास्तिष्ठति सर्वतोमुखः ॥ ३२/४ ॥ ॐ वरदनामानमग्निमावाहयामि ॥ प्रतिष्ठापनम्-ॐ मनोजूति० ॥ ॐ वरदनामाग्ने सुप्रतिष्ठितो वरदो भव ॥ मुखं कृत्वा ध्यायेत्—ॐ चत्वारिशृङ्गात्रयोऽअस्यपादाद्द्वेशीर्षेसप्तहस्तासोऽअस्य। त्रिधाबद्धोवृषभोरोरवीतिमहोदेवोमर्त्याँ२ऽआविवेश ॥ २ ॥ सप्तहस्तश्चतुःशृङ्गः सप्तजिह्वो द्विशीर्षकः। त्रिपात्प्रसन्नवदनः सुखासीनः शुचिस्मितः। स्वाहां तु दक्षिणे पार्श्वे देवीं वामे स्वधां तथा। बिभ्रद्दक्षिणहस्तैस्तु शक्तिमन्नं स्रुचं स्रुवम्। तोमरं व्यजनं वामे घृतपात्रं च धारयन्। आत्माभिमुखमासीन एवंरूपो हुताशनः॥ अग्ने वैश्वानर शाण्डिल्यगोत्र शाण्डिल्यासितदेवलेतित्रिप्रवर भूमिमातः वरुणपितः मेषध्वज प्राङ्मुख मम सम्मुखो भव।

॥९५॥ ततः स्थण्डिलस्य रुद्रदिग्भागे वेद्युपरि ग्रहमण्डलदेवतास्थापनम्॥ यजमानो हस्ते जलं गृहीत्वा अद्येत्यादि० प्रारब्धकर्मणः सांगता-

सिद्ध्यर्थमादित्यादिग्रहमण्डलदेवतानां स्थापनं पूजनं चाहं करिष्ये ॥
१-ॐ आकृष्णेन० ॥ (प्राङ्मुखं सूर्यं पीठमध्ये वर्तुले द्वादशाङ्गुले मण्डले-ॐभूर्भुवः स्वः कलिङ्गदेशोद्भव काश्यपसगोत्र रक्तवर्ण भो सूर्य इहागच्छ इह तिष्ठ)॥ ॐसूर्याय नमः सूर्यमावाहयामि स्थापयामि ॥
२-ॐइमन्देवा० ॥ (प्रत्यङ्मुखं सोममाग्नेय्यां चतुरस्रे चतुर्विंशत्यङ्गुले मण्डले-ॐभूर्भुवःस्वःयमुनातीरोद्भव आत्रेयसगोत्र शुक्लवर्ण भोसोम इ० इ०) ॐसोमाय नमः सोममावा०स्था०।३-ॐअग्निर्मूर्द्धा०। (दक्षिणाभिमुखं भौमं दक्षिणस्यां दिशि त्रिकोणे त्र्यङ्गुले मण्डले-ॐभूर्भुवः स्वः अवन्तिदेशोद्भव भारद्वाजसगोत्र रक्तवर्ण भो भौम इहागच्छ इहतिष्ठ) ॐभौमाय नमः भौममावाहयामि स्थापयामि ॥४-ॐउद्बुद्ध्यस्वाग्ने० ॥ (उदङ्मुखं बुधमैशान्यां दिशि बाणाकारे चतुरङ्गुले मण्डले ॐभूर्भुवः स्वः मगधदेशोद्भव आत्रेयसगोत्र पीतवर्ण भो बुध इहागच्छ इह तिष्ठ ॥) ॐबुधाय नमः बुधमावाहयामि स्थापयामि ॥ ५ॐबृहस्पते०॥(उदङ्मुखं बृहस्पतिमुत्तरस्यां दिशि लम्बदीर्घचतुरस्रे पद्माकारे षडङ्गुले मण्डले-ॐभूर्भुवःस्वः सिन्धुदेशोद्भव आङ्गिरसगोत्र पीतवर्ण भो बृहस्पते इहागच्छ इह तिष्ठ) ॐबृहस्पतये नमः बृहस्पतिमा०स्था०॥
६-ॐअन्नात्परिस्रुतो०। (प्राङ्मुखं शुक्रं पूर्वस्यां दिशि पञ्चकोणे नवाङ्गुले मण्डले-ॐभूर्भुवःस्वः भोजकटदेशोद्भव भार्गवसगोत्र शुक्लवर्ण भोशुक्र इहागच्छ इह तिष्ठ) ॐशुक्राय नमः शुक्रमा०स्था०॥७ ॐशन्नो देवी० । (प्रत्यङ्मुखं शनिं पश्चिमायां दिशि धनुराकारे द्व्यङ्गुले मण्डले-ॐभूर्भुवः-स्वः सौराष्ट्रदेशोद्भव काश्यपसगोत्र कृष्णवर्ण भो शनैश्चर इहागच्छ इह तिष्ठ) ॐशनैश्चराय नमः शनैश्चरमावाहयामि स्थापयामि ॥
८-ॐकयानश्चित्रऽआ०॥ (दक्षिणाभिमुखं राहुं नैर्ऋत्यां दिशि शूर्पा-

भो इन्द्र इहागच्छ इह तिष्ठ। शुक्रदक्षिणपार्श्वे-ॐ इन्द्राय नमः इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि॥ ७-ॐ यमाय त्वाङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहा॥ स्वाहा घर्माय स्वाहा घर्मः पित्रे॥ ३८/९॥ ॐ भूर्भुवः स्वः भो यम इहागच्छ इह तिष्ठ। शनिदक्षिणपार्श्वे-ॐ यमाय नमः यममावाहयामि स्थापयामि॥ ८-ॐ कार्षिरसि समुद्रस्य त्वाक्षित्या उन्नयामि॥ समापो अद्भिरग्मत समोषधीभिरोषधीः॥ ६/२८॥ ॐ भूर्भुवः स्वः भो काल इहागच्छ इह तिष्ठ॥ राहुदक्षिणपार्श्वे-ॐ कालाय नमः कालमा० स्था०॥ ९-ॐ चित्रावसो स्वस्ति ते पारमशीय॥ ३/१८॥ ॐ भूर्भुवः स्वः भो चित्रगुप्त इहागच्छ इह तिष्ठ। केतुदक्षिणपार्श्वे-ॐ चित्रगुप्ताय नमः चित्रगुप्तमा० स्था०॥ प्रत्यधिदेवतावाहनम्-१ ॐ अग्निं दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुप ब्रुवे॥ देवाँ २ आसादयादिह॥ २२/१७॥ ॐ भूर्भुवःस्वः भो अग्ने इहागच्छ इह तिष्ठ। सूर्यवामपार्श्वे-ॐ अग्नये नमः अग्निमा० स्था०। २ ॐ आपो हि ष्ठा०॥ ॐ भूर्भुवःस्वः भो आप इहागच्छत इह तिष्ठत॥ सोमवामपार्श्वे-ॐ अद्भ्यो नमः अप आ०स्था०॥ ३ ॐ स्योना पृथिवि नो०॥ ॐ भूर्भुवः स्वः भो पृथिवि इहागच्छ इह तिष्ठ॥ भौमवामपार्श्वे-ॐ पृथिव्यै नमः पृथिवीमा०स्था०॥ ४ ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्॥ समूढमस्य पाᳬसुरे स्वाहा॥ ५/१५॥ ॐ भूर्भुवःस्वः भो विष्णो इहागच्छ इह तिष्ठ॥ बुधवामपार्श्वे-ॐ विष्णवे नमः विष्णुमा० स्था०॥ ५ ॐ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रᳬ हवे हवे सुहवᳬ शूरमिन्द्रम्॥ ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्रᳬ स्वस्ति नो मघवा धात्विन्द्रः॥ २०/५०॥ ॐ भूर्भुवःस्वः भो इन्द्र इहागच्छ इह तिष्ठ॥ गुरुवामपार्श्वे-ॐ इन्द्राय नमः इन्द्रमा० स्था०॥ ६ ॐ अदित्यै रास्नासीन्द्राण्या उष्णीषः॥ पूषासि घर्माय दीष्व॥ ३८/३॥ ॐ भूर्भुवःस्वः भो इन्द्राणि इहागच्छ इह तिष्ठ॥ शुक्रवामपार्श्वे-ॐ इन्द्राण्यै

नमः इन्द्राणीमा० स्था० ॥ ७ ॐप्रजापतेनत्वदेतान्यन्योविश्वारूपा॰णिपरिताबभूव ॥ यत्कामास्तेजुहुमस्तन्नोऽअस्तुव्वयऽस्यामपतयोरयी॰णाम् ॥ $\frac{६५}{२३}$ ॥ ॐभूर्भुवःस्वः भो प्रजापते इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ शनि॰वामपार्श्वे—ॐप्रजापतये नमः प्रजापतिमा० स्था० ॥ ८ ॐनमोऽस्तुसर्पे॰भ्योयेकेचपृथिवीमनु ॥ येऽअन्तरिक्षेयेदिवितेभ्यः सर्पेभ्योनमः ॥ $\frac{६}{२३}$ ॥ ॐभूर्भुवःस्वः भो सर्पाः इहागच्छत इह तिष्ठत ॥ राहुवामपार्श्वे—ॐसर्पेभ्यो नमः सर्पानावा० स्था० ॥ ९ ॐब्रह्मजज्ञानम्प्रथमम्पुरस्ताद्वि॰सीमतः सुरुचोव्वेनऽआवः ॥ सबुध्न्याऽउपमाऽअस्यविष्ठाः सतश्च॰योनिमसतश्चविवः ॥ $\frac{३}{१३}$ ॥ ॐभूर्भुवःस्वः भो ब्रह्मन् इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ केतुवामपार्श्वे-ॐ ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणमा० स्था० ॥ पञ्चलो॰कपालदेवतावाहनम्—॥ १ ॐगणानान्त्वा० ॥ ॐभूर्भुवःस्वः भो गणपते इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ राहोरुत्तरतः-ॐगणपतये नमः गणपति॰मा० स्था० ॥ २ ॐ अम्बेऽअम्बिकेम्बालिकेनमानयतिकश्चन ॥ ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकाङ्काम्पीलवासिनीम् ॥ $\frac{२३}{१८}$ ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः भो दुर्गे इहागच्छ इह तिष्ठ । शनेरुत्तरतः-ॐ दुर्गायै नमः दुर्गामा० स्था० ॥ ३ ॐ वायोयेतेसहस्रिणोरथासस्तेभिरागहि ॥ नियुत्वान्सो॰मपीतये ॥ $\frac{२७}{२८}$ ॥ ॐभूर्भुवः स्वः भो वायो इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ रवेरुत्त॰रतः-ॐ वायवे नमः वायुमा० स्था० ॥ ४ ॐ घृतङ्घृतपावानः पिबतव्वसांव्वसापावानः पिबतान्तरिक्षस्यहविरसिस्वाहा ॥ दिशः प्रदि॰शऽआदिशोविदिशऽउद्दिशोदिग्भ्यः स्वाहा ॥ $\frac{६}{१९}$ ॥ ॐभूर्भुवःस्वः भो आकाश इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ राहोर्दक्षिणे-ॐ आकाशाय नमः आकाशमा० स्था० ॥ ५ ॐयावाङ्कशामधुमत्यश्विनासूनृतावती ॥ तयायज्ञम्मिमिक्षतम् ॥ $\frac{७}{११}$ ॥ ॐभूर्भुवःस्वः भो अश्विनौ इहागच्छतम् इह

तिष्ठतम् ॥ केतुदक्षिणे-ॐअश्विभ्यां नमः अश्विनावावाह० स्थाप० ॥ अथ क्षेत्राधिपतेः वास्तोष्पतेश्चावाहनम् ॥ १ ॐनुहिस्पशमविदन्नन्यमुस्माद्वैश्वानुरात्पुरऽएतारमुग्नेः ॥ एमेनमवृधन्नमृताऽअमर्त्यँवैश्वानुरङ्क्षैत्रजित्त्यायदेवाः ॥ ६०/३३ ॥ गुरोरुत्तरे-ॐभूर्भुवःस्वः क्षेत्राधिपतयेनमः क्षेत्राधिपतिमावाहयामि स्थापयामि ॥ भो क्षेत्राधिपते इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ १ ॐवास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मान्स्वावेशोऽअनमीवो भवानः । यत्त्वेमहे मतितन्नो जुपस्व शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे ॥ क्षेत्राधिपोत्तरे-ॐभूर्भुवःस्वः वास्तोष्पतये नमः वास्तोष्पतिमावाहयामि स्थापयामि ॥ भो वास्तोष्पते इ० इ० ॥ ॥ अथ मण्डलाद्बहिः प्रागादितः पीठसमन्तात् इन्द्रादिदशदिक्पालानामावाहनम् ॥ १ ॐत्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रुᳬहवेहवेसुहवुᳬशूरमिन्द्रम् ॥ ह्वयामि शुक्रम्पुरुहूतमिन्द्रᳬस्वुस्तिनोमुघवाधात्विन्द्रः ॥ ५०/२० ॥ मण्डलाद्बहिः पूर्वे-ॐभूर्भुवःस्वः इन्द्राय नमः इन्द्रमा०स्था० ॥ भोइन्द्र इहा०इह० ॥ २ ॐत्वन्नोऽअग्ने तव देवपायुभिर्म्मुघोनोरक्षतन्वश्चवन्द्य ॥ त्राताताकस्युतनयेगवामुस्यनिमेषुᳬरक्षमाणुस्तवव्व्रुते ॥ ७/३ ॥ मण्डलाद्बहिः आग्नेय्याम्-ॐभूर्भुवः स्वः अग्नये नमः अग्निमावाहयामि स्थापयामि ॥ भो अग्ने इ०इ० ॥ ३ ॐयुमायुत्वाङ्गिरस्वतेपितृमतेस्वाहा ॥ स्वाहा घुर्म्मायुस्वाहाघुर्म्मःपित्रे ॥ ३/३८ ॥ मण्डलाद्बहिः दक्षिणे-ॐभूर्भुवःस्वः यमाय नमः यममावा० स्थापयामि ॥ भो यम इ० इ० ॥ ४ ॐअसुन्वन्तुमयजमानमिच्छस्तेनस्येत्यामन्विहितस्करस्य ॥ अन्यमुस्मदिच्छुसातऽइत्त्यानमोदेविनिर्ऋते तुभ्यमस्तु ॥ ६२/१२ ॥ मण्डलाद्बहिः नैर्ऋत्याम्-ॐभूर्भुवःस्वः निर्ऋतये नमः निर्ऋतिमावाहयामि स्थापयामि ॥ भो निर्ऋते इ०इ० ॥ ५ ॐतत्त्वायामिब्रह्मणाव्वन्दमानुस्तदाशास्ते यजमानोहविर्भिः ॥ अहेडमानोव्वरुणेहवोः

हमिषुमूर्ज्जं समंगृभमुपयामगृहीतोसीन्द्राय त्वा जुष्टंगृहृण्णाम्येषते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम् ॥ ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः सूर्यादिग्रहमण्डलदेवताभ्यो नमः ध्यायामि ॥ ततः "ॐ भूर्भुवःस्वः सूर्याद्यावाहितग्रहमण्डलदेवताभ्यो नमः" इत्यनेन षोडशोपचारैः पूजयेत् ॥ अनया पूजया सूर्याद्यावाहितग्रहमण्डलदेवताः प्रीयन्ताम् ॥ तत ईशान्यां ग्रहसंबंधिरुद्रकलशस्थापनम् ॥ ततो ग्रहवेदीशानदिग्भागे सितैस्तंदुलैरष्टदलं कृत्वा भूरसीत्यादिक्रमेण पूर्णपात्रनिधानान्तं कलशं कृत्वा तत्वायामीतिवरुणमावाह्याभ्यर्च्य "सर्वे समुद्राः सरित"इति गंगाद्यावाहयेत् ॥ ततः प्रतिष्ठादिकृतं रुद्रकलशं स्पृष्ट्वा साङ्गरुद्रजपः कार्यः ॥

॥ इति ग्रहस्थापनप्रयोगः ॥

॥९६॥ अथ अग्न्युत्तारणम्-यदि ग्रहाणां मूर्तयश्चेत् हस्ते जलमादाय देशकालौ स्मृत्वा आसाम् अमुकामुकमूर्तीनाम् अग्नितपनताडनाद्याघातादिदोषपरिहारार्थम् अग्न्युत्तारणपूर्वकप्राणप्रतिष्ठां करिष्ये ॥ इति संकल्प्य मूर्तीर्घृतेनाभ्यज्य पात्रे निधाय तदुपरि दुग्धमिश्रितजलधारां पातयेत् ॥ ॐ समुद्रस्यत्वावकयाग्ग्नेपरिव्ययामसि ॥ पावकोऽअस्मभ्यंऽशिवोभव ॥ १७ ॥ हिमस्यत्वाजरायुणाग्नेपरिव्ययामसि ॥ पावकोऽअस्मभ्यंऽशिवोभव ॥ १७ ॥ उपज्ज्मन्नुपवेतसेवतरन्नदीष्वा ॥ अग्नेपित्तमपामसिमण्डूकिताभिरागहिसेमन्नोयज्ञम्पावकवर्ण्णंऽशिवङ्कृधि ॥ १७ ॥ अपामिदन्न्ययनंऽसमुद्रस्यनिवेशनम् ॥ अन्याँस्तेऽअस्मत्तपन्तुहेतयः पावकोऽअस्मभ्यंऽशिवोभव ॥ १७ ॥ अग्नेपावकरोचिषामन्द्रयादेवजिह्वया ॥ आदेवान्वक्षियक्षिच ॥ १७ ॥ सनःपावकदीदिवोग्नेदेवाँ २ ऽइहावह ॥ उपयज्ञहविश्चनः ॥ १७ ॥ पावकयायश्चितयन्त्याकृपा-

क्षामंञ्ररुचऽउ॒पसो॒नभा॒नुना॑ ॥ तूर्व॒न्नयामु॒न्नेतशस्य॒नूरणऽआयो॒घृणे॑नतत्तृपाणोऽअ॒जरं॑ ॥ १०/१७ ॥ नम॑स्ते॒हर॑से॒शो॒चिषे॒नम॑स्तेऽअस्त्व॒र्चिषे॑ ॥ अ॒न्याँस्तेऽअ॒स्मत्तप॑न्तुहे॒तयः॑पाव॒कोऽअ॒स्मभ्य॑ᳬशि॒वोभ॑व ॥ ११/१७ ॥ नृ॒षदे॒वेड॑प्सु॒षदे॒वेड्बर्हि॒षदे॒वेड्व॑न॒सदे॒वेड्स्व॒र्विदे॒वेट् ॥ १२/१७ ॥ येदे॒वादे॒वानां॑य॒ज्ञिया॑य॒ज्ञिया॑ना॒ᳬसंव॒त्स॒रीण॒मुप॑भा॒गमास॑ते ॥ अ॒हु॒तादो॑ह॒विषो॑य॒ज्ञेऽअ॒स्मिन्त्स्व॒यम्पि॑बन्तु॒मधु॑नो॒घृ॒तस्य॑ ॥ १३/१७ ॥ येदे॒वादे॒वेष्वधि॑देव॒त्वमाय॒न्येब्रह्म॑णः॒पुरऽए॒तारो॑ऽअ॒स्य ॥ येभ्यो॒नऽऋ॒तेप॑वते॒धाम॒किञ्च॒ननते॒दि॒वोनपृ॑थि॒व्याऽअधि॒स्नुषु॑ ॥ १४/१७ ॥ प्रा॒ण॒दाऽअ॑पान॒दाव्या॑न॒दाव॑र्चो॒दाव॑रिवो॒दाः ॥ अ॒न्याँस्तेऽअ॒स्मत्तप॑न्तुहे॒तयः॑पाव॒कोऽअ॒स्मभ्य॑ᳬशि॒वोभ॑व ॥ १५/१७ ॥ इत्यग्न्युत्तारणम् ॥९७॥ अथ प्राणप्रतिष्ठाप्रयोगः—अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुरुद्रा ऋषयः । ऋग्यजुःसामानि छन्दांसि । परा प्राणशक्तिर्देवता । आं बीजं । ह्रीं शक्तिः । क्रों कीलकम् । आसु अमुकामुकमूर्तिषु प्राणप्रतिष्ठापने विनियोगः ॥ ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ॐ क्षं सं हं सः ह्रीं ॐ आं ह्रीं क्रों आसां मूर्तीनां प्राणा इह प्राणाः ॥ ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ॐ क्षं सं हं सः ह्रीं ॐ आं ह्रीं क्रों आसां मूर्तीनां जीवा इह स्थिताः ॥ ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ॐ क्षं सं हं सः ह्रीं ॐ आं ह्रीं क्रों आसाम् अमुकामुकमूर्तीनां सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणपाणिपादपायूपस्थानि इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा ॥ ततः प्रतिष्ठादिकं कुर्यात् ॥ प्रतिष्ठापनम्—ॐमनो॑जू॒ति॰। ॐ ए॒षवै॑प्रति॒ष्ठाना॒मय॒ज्ञोयत्रै॒तेन॑य॒ज्ञेन॒यज॑न्ते॒सर्व॑मे॒वप्र॑ति॒ष्ठि॒तम्भ॑वति ॥ अमुकामुकदेवताः सुप्रतिष्ठिता वरदा भवत ॥ नेत्रोन्मीलनम्—ॐ वृ॒त्रस्या॑सिक॒नीन॑क॒श्चक्षु॒र्दाऽअ॑सि॒चक्षु॑र्मे॒देहि ॥ ३/६ ॥ गन्धादिपञ्चो-

पचारान्दत्वा षोडशसंस्कारसिद्धये षोडशप्रणवावृत्तीः कृत्वा आसाम् अमुकामुकमूर्तीनां षोडशसंस्काराः सम्पद्यन्ताम्। इति प्राणप्रतिष्ठाप्रयोगः।

।९८।वैकल्पिकपदार्थावधारणं देवताभिध्यानञ्च–आचार्यः अग्नेःपश्चिमत उपविशेत् ॥ यजमानस्तु दक्षिणतोऽग्नेर्ब्रह्मणः पश्चिमत उपविष्ट एवास्ते ॥ आचार्यः आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य करिष्यमाणग्रहशान्त्याख्ये कर्मणि वैकल्पिकपदार्थावधारणं देवताभिध्यानं च करिष्ये ॥ वैकल्पिकपदार्थावधारणम्–पूर्वेण ब्रह्मणो गमनमपरेण वा ॥ अग्नेः पश्चिमतः पात्रासादनमुत्तरतो वा ॥ त्रीणि पवित्राणि ॥ पवित्रे द्वे ॥ प्रोक्षणीपात्रम् ॥ आज्यस्थाली चरुस्थाली च तैजसी मृन्मयी वा ॥ पालाश्यः समिधो यज्ञीयवृक्षोद्भवा अन्या वा॥ प्राञ्चावाघारौ विदिशौ वा ॥ समिद्धतमेऽग्नौ आज्यभागौ आग्नेयमुत्तरपूर्वार्द्धे सौम्यं दक्षिणपूर्वार्द्धे ॥ पूर्णपात्रं दक्षिणावरो वा ॥ एतान्वैकल्पिकपदार्थानहमस्मिन्कर्मणि करिष्ये ॥ देवताभिध्यानम् (अन्वाधानम्) समिद्द्वयं गृहीत्वा प्रजापतिम् इन्द्रम् अग्निं सोमम् एकैकयाऽऽज्याहुत्या ॥ आदित्यं सोमं भौमं बुधं बृहस्पतिं शुक्रं शनैश्चरं राहुं केतुम् इति नवग्रहान् मधुसर्पिर्दध्याक्ताभिः अर्कादियथालाभसमिच्चरुतिलाज्यद्रव्यैः प्रत्येकं प्रतिद्रव्येण अष्टाष्टसंख्याकाभिराहुतिभिः ॥ ईश्वरम् उमां स्कन्दं विष्णुं ब्रह्माणम् इन्द्रं यमं कालं चित्रगुप्तमित्यधिदेवताः अग्निम् अपः धरां विष्णुम् इन्द्रम् इन्द्राणीं प्रजापतिं सर्पान् ब्रह्माणमेताः प्रत्यधिदेवताश्च तैरेव द्रव्यैः प्रतिद्रव्येण चतुश्चतुःसंख्याकाभिराहुतिभिः ॥ विनायकं दुर्गां वायुम् आकाशम् अश्विनाविति पञ्चलोकपालान् क्षेत्राधिपतिं वास्तोष्पतिम् इन्द्रम् अग्निं यमं निर्ऋतिं वरुणं वायुं कुबेरम् ईशानं ब्रह्माणम् अनन्तं तैरेव द्रव्यैः प्रतिद्रव्येण द्वाभ्यां द्वाभ्याम् आहुतिभ्यां न्यूनातिरिक्तदो-

पपरिहारार्थं घृताक्ततिलद्रव्येण व्यस्तसमस्तव्याहृत्या अष्टोत्तरसहस्रैः अष्टोत्तरशतैः अष्टाविंशतिराहुतिभिर्वा शेषेण स्विष्टकृत् ॥ अग्निं वायुं सूर्यम् अग्नीवरुणौ अग्नीवरुणौ अग्निं वरुणं सवितारं विष्णुं विश्वान्देवान्मरुतः स्वर्कान्वरुणम् आदित्यम् आदितिं प्रजापतिम् एता अङ्गप्रधानार्थदेवताः एकैकयाऽऽज्याहुत्या अस्मिन्ग्रहशान्त्याख्ये कर्मण्यहं यक्ष्ये इति समिद्द्वयम् अग्नावादध्यात् ॥ इति अन्वाधानम् ॥

॥ ९९ ॥ अथ कुशकण्डिका ॥ अग्नेर्दक्षिणतो ब्रह्मासनास्तरणम् ॥ तत्र पश्चाग्रकुशमयं यथासम्भवकुशमयं वा ब्रह्माणमुपवेश्य अस्मिन्कर्मणि त्वं ब्रह्मा भव ॥ भवामीति प्रतिवचनम् ॥ तत्र पूर्वेण ब्रह्मणो गमनम् ॥ उत्तरतः प्रणीताप्रणयनम् । ब्रह्मन् अपः प्रणेष्यामि ॥ ॐ प्रणय । यं देवतावर्द्धयत्त्वं नाकस्य पृष्ठे यजमानोऽस्तु ॥ सप्तऋषीणाँ सुकृतां यत्र लोकस्तत्रेमं यजमानं च धेहि ॥ ॐ प्रणय ॥ इति ब्रह्मानुज्ञातः अग्नेरुत्तरतः प्रागग्रैः कुशैः आसनत्रयप्रकल्पनम् ॥ तत्र एकम् अग्नेरुत्तरतः । द्वितीयं तदुत्तरतः तृतीयं तत्पश्चिमे (वायव्यामित्यर्थः) । वायव्याश्रितं वारणं चमसं दक्षिणहस्तेनादाय । वामपाणौ प्रागग्रं निधायादक्षिणहस्तोद्धृतपात्रोदकेन आत्माभिमुखं सम्पूर्य । पश्चिमासने निधाय । दक्षिणानामिकया जलमालभ्य ब्रह्मणो मुखमवलोकयन्–अग्नेरुत्तरतः प्राक्कल्पिते प्रणीतासने निदध्यात् ॥ ईशान्यादिपूर्वाग्रैस्त्रिभिस्त्रिभिर्दर्भैः अग्नेः परिस्तरणम् । तच्च प्रागुदगग्रैः । दक्षिणतः प्रागग्रैः । प्रत्यगुदगग्रैः । उत्तरतः प्रागग्रैः ॥ अग्नेरुत्तरतः पश्चाद्वा प्रयोजनवतां पात्राणां प्राक्संस्थमुदक्संस्थं वा प्रागग्रमुदगग्रं वा आसादनम् ॥ पवित्रच्छेदना दर्भास्त्रयः ॥ साग्रेऽनन्तर्गर्भे पवित्रे द्वे ॥ प्रोक्षणीपात्रम् ॥ आज्यस्थाली ॥ चरुस्थाली ॥ सम्मार्गकुशाः पञ्च ॥ उपयमनकुशाः सप्त ॥ समिधस्तिस्रः ॥ स्रुवः ॥ स्रुक् ॥

आज्यम् ॥ त्रिःप्रक्षालितास्तण्डुलाः ॥ पूर्णपात्रम् ॥ दक्षिणा वरो वा-यथाशक्ति हिरण्यादिद्रव्यम् ॥ अन्यान्युपकल्पनीयानि अर्कादि-समिधः तिलादिहवनीयद्रव्याणि ॥ इति पात्रासादनम् ॥

पवित्रे कृत्वा-प्रागग्रयोर्द्वयोः पवित्रयोरुपरि उदगग्राणि त्रीणि पवित्राणि निधाय उपरि प्रादेशमात्रमवशेषयित्वा अधोभागे द्वयोर्मूलेन द्वौ कुशौ प्रदक्षिणीकृत्य त्रयाणां मूलाग्राणि एकीकृत्य नखैरस्पृशन् अनामिकाङ्गुष्ठेन द्वयोरग्रे छेदयेत् द्वे ग्राह्ये द्वयोर्मूले त्रीण्युत्तरतः क्षिपेत् ॥ प्रणीतोत्तरतः प्रोक्षणीपात्रं निधाय तत्र चुलुकेन प्रणीतोदकं त्रिः प्रपूर्य पवित्राभ्यामुत्पूय[1] पवित्रे प्रोक्षणीषु निधाय दक्षिणेन हस्तेन प्रोक्षणीपात्रमुत्थाप्य सव्ये पाणौ कृत्वा दक्षिणहस्तमुत्तानं कृत्वा मध्यमानामिकाङ्गुल्योः मध्यमपर्वाभ्यामपामुदिङ्गनम् ॥ ताभिस्तासां[2] प्रोक्षणम् ॥ आज्यस्थाल्याः प्रोक्षणम् ॥ चरुस्थाल्याः प्रोक्षणम् ॥ सम्मार्गकुशानां प्रोक्षणम् ॥ उपयमनकुशानां प्रोक्षणम् ॥ समिधां प्रोक्षणम् ॥ स्रुवस्य प्रोक्षणम् ॥ स्रुचः प्रोक्षणम् ॥ आज्यस्य प्रोक्षणम् ॥ तण्डुलानां प्रोक्षणम् ॥ पूर्णपात्रस्य प्रोक्षणम् ॥ अन्येषामुपकल्पनीयहवनीयद्रव्याणां प्रोक्षणम् ॥ असञ्चरे[3] प्रोक्षणीपात्रं निधाय ॥ आज्यस्थाल्यामाज्यनिर्वापो ब्रह्मणा॥ चरुस्थाल्यां पवित्रे निधाय यजमान आचार्यो वा त्रिः प्रक्षालितांस्तण्डुलान् प्रक्षिप्य तत्र प्रणीतोदकमासिच्य अन्यदपि जलं निषिच्य चरुस्थालीस्थितपवित्रे प्रोक्षणीषु निधाय दक्षिणतः ब्रह्मणा आज्याधिश्रय-

---

१ केचन वामकरे पवित्राग्र दक्षिणे पवित्रयोर्मूलं धृत्वा मध्यतः पवित्राभ्यामुत्सवनम् इति वदन्ति तत्र मूलं न पश्याम ॥ २ ताभिः प्रणीतापात्रस्थाभिरद्भिः तासां प्रोक्षणीपात्रस्थापां प्रोक्षणमित्यर्थः ॥ विकल्पे प्रोक्षणीपात्रस्थाभिरद्भिः प्रणीतास्थानामपां प्रोक्षणम् ॥ ३ असञ्चर. प्रणीताम्न्योरन्तराल ॥

णम् मध्ये यजमानेन आचार्येण वा चरोरधिश्रयणं युगपत्॥ आज्योत्तरतः गृहीतेन ज्वलदुल्मुकेन उभयोः ऐशानीमारभ्य ऐशानीपर्यन्तं पर्यग्निकरणम् । इतरथावृत्तिः । अर्धशृते चरौ स्रुवस्य प्रतपनम् । दक्षिणेन हस्तेन स्रुवमादाय तं प्राञ्चमधोमुखमग्नौ तापयित्वा सव्ये पाणौ कृत्वा दक्षिणेन सम्मार्गाग्रैर्मूलतोऽग्रपर्यन्तं सम्मृज्य मूलैरग्रमारभ्य अधस्तान्मूलपर्यन्तं सम्मृज्य प्रणीतोदकेनाभ्युक्ष्य पुनः पूर्ववत्प्रतप्य दक्षिणतो निदध्यात् ॥ सम्मार्गकुशानग्नौ प्रास्य आज्योद्वासनम्—अग्नेः सकाशादाज्यं गृहीत्वा चरोः पूर्वेणोत्तरतो नीत्वा अग्नेरुत्तरतः प्रोक्षण्याः पश्चिमे निधाय चरुमुत्थाप्य पूर्वेणाग्नेरुत्तरतः आनीय आज्यस्य पश्चिमतो नीत्वा आज्यस्योत्तरतः निधाय आज्यमग्नेः पश्चादानीय स्थापयेत् । चरुं च आज्यस्य पूर्वेण प्रदक्षिणमानीय आज्यस्योत्तरत आसादयेत् । पवित्राभ्याम् आज्योत्पवनम् । अवेक्षणम् । अपद्रव्यनिरसनम् । ताभ्यामेवाज्यलिप्ताभ्यां पवित्राभ्यां प्रोक्षण्याः प्रत्युत्पवनम् । पवित्रे प्रोक्षण्यां निधाय दक्षिणहस्तेन उपयमनकुशानादाय सव्ये गृहीत्वा दक्षिणेन पाणिना घृताक्तास्तिस्रः समिधः तिष्ठन्नप्रबाधाय दक्षिणजुल्कृगृहीतेन सपवित्रेण प्रोक्षण्युदकेन अग्नेः ईशानकोणादारभ्य ईशानपर्यन्तं प्रदक्षिणवत्पर्युक्षणम् इतरथावृत्तिः । पवित्रयोः प्रणीतासु निधानम् । अग्नेः प्रदीप्तिकरणम् ॥

॥ १०० ॥ अथ आघारहोमः॥ स्थानोपविष्टः दक्षिणं जान्वाच्य कुशैर्ब्रह्मणाऽन्वारब्धः उपयमनकुशसहितं प्रसारिताङ्गुलिहस्तं हृदि निधाय समिद्धतमेऽग्नौ मनसा प्रजापतिं ध्यायन् प्रणवपूर्वकं तूष्णीं स्रुवेण प्राञ्चमूर्ध्वमृजुं सन्ततमाज्येन अग्नेरुत्तरप्रदेशे पूर्वाघारमाघारयेत् । १ मनसा ॐ प्रजापतये (अत्र न स्वाहाकारः) (प्रोक्षण्यां संस्रवप्रक्षेपः)

यजमानः-इदं प्रजापतये न मम ॥ २ अग्नेर्दक्षिणप्रदेशे उत्तराघारमाघारयेत्-ॐइन्द्राय स्वाहा (प्रोक्षण्यां संस्रवप्रक्षेपः) इदमिन्द्राय न मम ॥ इत्येतौ पूर्वोत्तराघाघारौ ॥ १०१ ॥ अथ आज्यभागहोमः ॥ ३ अग्नेरुत्तरार्धपूर्वार्द्धे—ॐअग्नये स्वाहा (प्रोक्षण्यां संस्रवप्रक्षेपः) इदमग्नये न मम ॥ ४ अग्नेर्दक्षिणार्द्धपूर्वार्द्धे—ॐसोमाय स्वाहा (प्रोक्षण्यां संस्रवप्रक्षेपः) इदं सोमाय न मम ॥१०२॥ अथ द्रव्यत्यागसङ्कल्पः ॥यजमानो हस्ते जलमादाय-इदमुपकल्पितं समिच्चरुतिलाज्यादिहवनीयद्रव्यं या या यक्ष्यमाणदेवतास्ताभ्यस्ताभ्यो मया परित्यक्तं न मम। यथादैवतमस्तु॥१०३॥अग्निपूजनम्-ॐअग्ने॒नय॑सु॒पथा॑रा॒येऽअ॒स्मान्विश्वा॑नि देव व॒युना॑नि वि॒द्वान् । यु॒यो॒ध्य॒स्मज्जु॑हुरा॒णमेनो॒भूयि॑ष्ठान्ते॒नम॑ऽउक्तिं विधेम ॥ ३६/५ ॥शान्तिके वरदनामाग्नयेनमः सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि। सप्तजिह्वाख्यमुद्रां प्रदर्श्य प्रार्थना—अग्ने त्वमैश्वर्यं तेजः पावनं परमं हि तत्। तस्मात्त्वदीयहृत्पद्मे सूर्यादीन्तर्पयाम्यहम् ॥ आचार्यादयः सावधानाः यजमानाभीष्टसिद्धिप्राप्त्यर्थं मधुसर्पिर्दध्याक्तार्कादिसमिदाज्यचरुतिलद्रव्यं चाभिप्रायं स्थापितदेवतानां होमं कुर्युः॥१०४॥प्रधानहोमः। प्रथमा तु वराहुतिः॥ ॐगणानान्त्वा-इति मन्त्रेण एकामाज्याहुतिं हुत्वा आकृष्णेनेत्याद्यावाहितमन्त्रैरादित्यादिनवग्रहान् क्रमेणपूर्वोक्तार्कादिसमिच्चरुतिलाज्यद्रव्यैरष्टाष्टसङ्ख्यया हुत्वा पूर्वोक्तग्रहहोमद्रव्येणावाहितमन्त्रैरधिप्रत्यधिदेवताश्चतुश्चतुःसङ्ख्ययाहुत्वा(यस्य ग्रहस्य या समित्सा तस्याधिदेवतायाः प्रत्यधिदेवतायाश्च योज्या) विनायकादिदिक्पालान्तदेवताःपलाशोदुम्बरान्यतमसमिच्चरुतिलाज्यद्रव्येणावाहितमन्त्रैर्द्विर्द्वि-

१ अर्कः पलाशखदिरावपामार्गोऽथ पिप्पलः॥उदुम्बरः शमी दूर्वा कुशाश्च समिधः क्रमात्॥

सङ्ख्यया जुहुयात् ॥ एवं प्रधानहोमं समाप्य ततः ॥ १०५ ॥ गुग्गुल-होमः ॥ अद्यपूर्वोच्च० तिथौ मम गृहे भूतप्रेतपिशाचदोषपरिहारार्थं त्र्यम्ब-कमन्त्रेण गुग्गुलहोममहं करिष्ये ॥ ॐत्र्यम्बकंयजामहे० स्वाहा॥।१०६॥ सर्षपहोमः ॥ सर्षपान् घृतेनाभिघार्य । अद्यपूर्वोच्च० मम गृहे सर्वा-रिष्टपरिहारार्थं सर्वशत्रुबलक्षयार्थं सर्षपहोममहं करिष्ये ॥ ॐसुजेपांऽ इन्द्र सगणो मरुद्भिः सोमम्पिब व्वृत्रहा शूर व्विद्वान् ॥ जहि शत्रूँ२ऽ रप मृधो नुदस्वाथाभयङ्कृणुहि व्विश्वतो नः स्वाहा ॥[३]॥ ॥ १०७॥ ततो लक्ष्मीहोमः ॥ क्षीरदूर्वादाडिमादिहोमद्रव्याणि एकीकृत्य घृतेना-भिघार्य अद्येत्यादि० मम गृहे अलक्ष्मीविनाशार्थं दशविधलक्ष्मीप्राप्त्यर्थं लक्ष्मीहोममहं करिष्ये॥ श्रीश्चतेलक्ष्मी०।१०८।व्याहृतिहोमः॥ यजमानः हस्ते जलमादाय-अस्मिन्ग्रहशान्त्याख्ये कर्मणि देशतः कालतस्तन्त्रतो मन्त्रतोवाज्ञानतोऽज्ञानतोवा अयथाकरणन्यूनकरणचतुर्विधकर्मातिरिक्त-करणप्रेपजातप्रत्यवायपरिहारद्वाराकर्मसाद्गुण्यसिद्ध्ये तथा प्रधानदेवता ग्न्योश्च मध्ये गमने तथा समिदाज्यचरुतिलादिहविषां मध्ये अन्यत मस्याभावे होमस्वाहाकारयोः पूर्वापराभावे अग्निमध्ये हविर्गतकीटा द्युपघाते प्रणीताग्न्योर्मध्ये गमने प्रणीतास्कन्दे इध्मपरिस्तरणादिदाहे कुण्डाद्बहिरग्निपतने समिच्चरुतिलाज्यमध्ये कृमिकीटकादिसंयोगे होम-मन्त्रपठनसमये स्वरवर्णादिविस्मृतौ देवतावदानमन्त्रतन्त्रकर्मविपर्या-

---

१ अत्र गुग्गुलहोमः सर्षपहोमः लक्ष्मीहोमश्च कृताकृतः ॥ २ अत्र केचन—ॐ जातवेदसे सुनवामसोममरातीयतो निदहाति वेदः ॥ सनः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः ॥ इत्यपि मन्त्रं पठन्ति परं चायं मन्त्र ऋग्वेदीयत्वात् परशाखीयः ॥ ३ सीताफलं क्षीरमाज्यं दाडिम मधु शर्करा॥ शमीपत्राणि दूर्वा च बिल्वपत्राणि तण्डुला-।कदलीफलमित्यादि कृत्वा वै जुहुयात्ततः॥

समक्षिकाकीटकेशादिभिर्हविर्दुष्टदग्धपाकाहितस्थाने होमाकरणादिज्ञाताज्ञातदोषपरिहारार्थम्—घृताक्तकृष्णतिलद्रव्येण व्यस्तसमस्तव्याहृत्या अष्टोत्तरसहस्रैरष्टोत्तरशतैरष्टाविंशतिभिराहुतिभिर्वा होमं करिष्ये ॥ पुनर्जलमादाय—भूर्भुवःस्वरिति तिसृणां महाव्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषिः गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दांसि क्रमेण अग्निवायुसूर्या देवताः सर्वासां वा प्रजापतिर्देवता प्रायश्चित्तहोमे विनियोगः ॥ १ ॐ भूः स्वाहा ॥ २ ॐ भुवः स्वाहा ॥ ३ ॐ स्वः स्वाहा ॥ ४ ॐ भूर्भुवःस्वः स्वाहा ॥ एवं सप्तवारं होमे अष्टाविंशत्याहुतयो भवन्ति । सप्तविंशतिवारं होमे अष्टोत्तरशताहुतयो भवन्ति । द्विपञ्चाशदधिकशतद्वयाहुतिहोमे (२५२) अष्टोत्तरसहस्राहुतयो भवन्ति ॥१०९॥ अथ उत्तरपूजनम् ॥ हस्ते जलमादाय-पूर्वोच्चारितशुभपुण्यतिथौ कृतस्य ग्रहशान्त्याख्यकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं स्थापितदेवतानां मृडाग्नेश्चोत्तरपूजनं करिष्ये ॥ गणपतिपूजनम्—ॐ गणानान्त्वा० ॐ भूर्भुवःस्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि ॥ मातृकापूजनम्—ॐसमख्ये देव्व्याधिया सन्दक्षिणयोरुचक्षसा ॥ मा म ऽआयुः प्प्रमोषीर्म्मोऽअहन्तव्वीरं व्विदेयतव देवि सन्दृशि ॥ २३/४ ॥ ॐव्वसोः पवित्रमसि शतधारं व्वसोः पवित्रमसि सहस्रधारम् ॥ देवस्त्वा सविता पुनातु व्वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्प्वा कामधुक्षः ॥ ३/१ ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः वसोर्द्धारासहितसगणेशगौर्याद्यावाहितमातृभ्यो नमः स–

---

१ उत्तराङ्गानि-पूजा स्विष्टं नवाहुत्यो बलि. पूर्णाहुतिस्तथा ॥ श्रेयः सम्पाद्य दानं च ह्यभिषेको विसर्जनम् ॥ २ अवकाशे सति षोडशोपचारैर्वा पूजयेत् ॥ बृहच्छौनकः—हूयमाने हविर्यंशे बहिः पतति यद्धविः । द्रप्सस्य स्कन्दमन्त्रेण तद्भो निक्षिपेत्पुनः ॥ इति तद्धूयमानचर्वाद्याहुतेः हस्ताद् भूमौ पाते ज्ञेयम् ॥

र्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि ॥ ग्रहमण्डलदेवतापूजनम्—ॐ ग्रहाऽऊर्ज्जाहुतयो व्यन्तो विप्राय मतिम्। तेषां विशिप्रियाणां वोहमिषमूर्ज्जꣳ समग्रभमुपयामगृहीतोसीन्द्राय त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम् ॥ $\frac{८}{२}$ ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः सूर्याद्यावाहितग्रहमण्डलदेवताभ्यो नमः सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि ॥ अग्निपूजनम्—ॐ अग्ने नय सुपथा राये ऽअस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नमऽउक्तिं विधेम। $\frac{३६}{५}$। ॐ भूर्भुवःस्वः स्वाहा स्वधायुताय मृडाग्नये नमः सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि॥ इत्युत्तरपूजनम्[1]।११०। स्विष्टकृद्धोमः—हविःशेषोत्तरार्धात् द्विर्द्विरवदानधर्मेणावदाय द्विरभिघार्य ब्रह्मणा अन्वारब्धः ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते न मम॥ उदकोपस्पर्शः॥ ॥१११॥ अथ नवाहुतिहोमः॥ ब्रह्मणाऽन्वारब्धः-१ ॐ भूःस्वाहा इदमग्नये न मम ॥ २ ॐ भुवः स्वाहा इदं वायवे न मम ॥ ३ ॐ स्वः स्वाहा इदं सूर्याय न मम ॥ ४ ॐ त्वन्नोऽअग्ने वरुणस्य विद्वान्देवस्य हेडोऽअवयासिसीष्ठाः। यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषाꣳसि प्रमुमुग्ध्यस्मत्स्वाहा॥ $\frac{२१}{३}$ ॥ इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम ॥५॥ ॐ स त्वन्नोऽअग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठोऽअस्याऽउषसो व्युष्टौ। अवयक्ष्व नो वरुणꣳ रराणो वीहि मृडीकꣳ सुहवो नऽएधि स्वाहा ॥ $\frac{२१}{४}$ ॥ इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम॥६ ॐ अयाश्चाग्नेस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्त्वमयाऽअसि ॥

---

1 अग्नये गन्धादिकं बहिरेव देयमिति कल्पद्रुमकाराः। अन्ये तु मध्ये पूजनमिच्छन्ति। विष्णुधर्मोत्तरे—मध्येऽपि गन्धपुष्पादीन्दद्यादग्नेर्न संशयः। बहिर्नैवेद्यमात्रन्तु दातव्यमिति निश्चितम्॥ 2 कल्पद्रुमे—उत्तरपूजाम् अन्वाधाने केचिन्मन्यन्ते अन्ये तु नवाहुतिहोमान्ते अपरे तु यममानाभिर्वदान्ते॥ 3 अनेकदिनसाध्यहोमश्चेत्तदा पर्युषितदोषपरिहारार्थं हविःशेषं स्विष्टकृदर्थं घृतमध्ये स्थापयेत्॥ नष्टे दुष्टे वा हविषि आज्येनैव स्विष्टकृद्धोमः॥

अयानोयज्ञंवहास्ययानोधेहिभेषजᳬस्वाहा ॥ इदमग्नये अयसे न मम ॥ ॥७॥ ॐ ये तेशतंवरुणयेसहस्रंयज्ञियाःपाशावितता महान्तः। तेभिर्नोऽअद्य-सवितोतविष्णुर्विश्वेमुञ्चन्तुमरुतःस्वर्काःस्वाहा ॥ इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम ॥८॥ ॐ उदुत्तमंवरुणपाशमस्मदवाधमंविमध्यमᳬश्रथाय। अथावयमादित्यव्रते तवानागसोऽअदितयेस्याम स्वाहा ॥ $\frac{१२}{१२}$ ॥ इदं वरुणाय आदित्याय अदितये च न मम ॥९॥ ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये न मम ॥ ॥ इति नवाहुतिहोमः ॥

॥ ११२ ॥ बलिदानप्रयोगः ॥

हस्ते जलमादाय—मारब्धस्य ग्रहमखकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं दिक्पालदेवतानां स्थापितदेवतानां च पूजनपूर्वकं बलिदानं करिष्ये ॥ दिक्पालदेवताबलिदानम्–१ ॐ त्रातारमिन्द्र०। प्राच्याम्–इन्द्रं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकम् एभिर्गन्धाद्युपचारैस्त्वामहं पूजयामि ॥ इन्द्राय साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय इमं सदीपमाषभक्त-

---

१ दिक्पालेभ्यः एकतन्त्रेण बलिदानपक्षे—ॐ प्राच्यै दिशे स्वाहार्वाच्यै दिशे स्वाहा दक्षिणायै दिशे स्वाहार्वाच्यै दिशे स्वाहा प्रतीच्यै दिशे स्वाहार्वाच्यै दिशे स्वाहोदीच्यै दिशे स्वाहार्वाच्यै दिशे स्वाहोर्ध्वायै दिशे स्वाहार्वाच्यै दिशे स्वाहावाच्यै दिशे स्वाहार्वाच्यै दिशे स्वाहा ॥ $\frac{३}{३}$ ॥ इन्द्रादिदशदिक्पालान् साङ्गान् सपरिवारान् सायुधान् सशक्तिकान् एभिर्गन्धाद्युपचारैः अहं पूजयामि ॥ इन्द्रादिदशदिक्पालेभ्यः साङ्गेभ्यः सपरिवारेभ्यः सायुधेभ्यः सशक्तिकेभ्यः इमं सदीपमाषभक्तबलिं समर्पयामि ॥ भो भो इन्द्रादि-दशदिक्पालाः दिशो रक्षत बलिं भक्षत मम सकुटुम्बस्याभ्युदयं कुरुत ॥ आयुःकर्तारः क्षेमकर्तारः शान्तिकर्तारः पुष्टिकर्तारः तुष्टिकर्तारः निर्विघ्नकर्तारः कल्याणकर्तारः वरदाः भवत ॥ अनेन बलिदानेन इन्द्रादिदशदिक्पालाः प्रीयन्ताम् ॥

२ संपूर्णमन्त्राः द्रष्टव्याश्चेद् ग्रहस्थापनप्रयोगे (३४७ पृष्ठे द्रष्टव्याः।)

बलिं समर्पयामि ॥ भो इन्द्र दिशं रक्ष बलिं भक्ष मम सकुटुम्बस्याभ्युदयं कुरु ॥ आयुःकर्त्ता क्षेमकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता निर्विघ्नकर्ता कल्याणकर्ता वरदो भव ॥ अनेन बलिदानेन इन्द्रः प्रीयताम् ॥(एवं सर्वत्र) २ ॐत्वन्नोऽ अग्ने०। आग्नेय्याम्—अग्निं साङ्गं०। अग्नये साङ्गाय सपरिवाराय०। भो अग्ने दिशं रक्ष०। आयुःकर्ता०। अनेन बलिदानेन अग्निः प्रीयताम् ॥ ३ ॐयमायत्त्वाङ्गिरस्वते०। दक्षिणस्याम्-यमं साङ्गं०। यमाय साङ्गाय०। भो यम दिशं रक्ष०। आयुःकर्ता०। अनेन बलिदानेन यमः प्रीयताम् ॥ ४ ॐअसुन्न्वन्त०। नैर्ऋत्याम्-निर्ऋतिं साङ्गं०। निर्ऋतये साङ्गाय०। भो निर्ऋते दिशं रक्ष०। आयुःकर्ता०। अनेन बलिदानेन निर्ऋतिः प्रीयताम्॥ ५ ॐ तत्त्वायामि०। पश्चिमायाम्-वरुणं साङ्गं०। वरुणाय साङ्गाय०। भो वरुण दिशं रक्ष०। आयुःकर्ता०। अनेन बलिदानेन वरुणः प्रीयताम् ॥ ६ ॐ आनोनियुद्भिः०॥ वायव्याम्-वायुं साङ्गं०॥ वायवे साङ्गाय०॥ भो वायो दिशं रक्ष०॥ आयुःकर्ता०॥ अनेन बलिदानेन वायुः प्रीयताम् ॥ ७ ॐ व्वयꣳसोम०॥ उदीच्याम्-सोमं साङ्गं०॥ सोमाय साङ्गाय०॥ भो सोम दिशं रक्ष०॥ आयुःकर्ता०॥ अनेन बलिदानेन सोमः प्रीयताम्०। ८ ॐ तमीशानं०॥ ईशान्याम्-ईशानं साङ्गं०। ईशानाय साङ्गाय०। भो ईशान दिशं रक्ष०। आयुःकर्ता० अनेन बलिदानेन ईशानः प्रीयताम् ॥ ९ ॐ अस्म्मेरुद्रा०। पूर्वेशानयोर्मध्ये ऊर्ध्वायाम्-ब्रह्माणं साङ्गं०। ब्रह्मणे साङ्गाय०। भो ब्रह्मन् दिशं रक्ष०। आयुःकर्ता०। अनेन बलिदानेन ब्रह्मा प्रीयताम् ॥ १० ॐ स्योना पृथिवि०। निर्ऋतिपश्चिमयोर्मध्ये अधःस्यां दिशि-अनन्तं साङ्गं०। अनन्ताय साङ्गाय०। भो अनन्त दिशं रक्ष०।

आयुः कर्ता० । अनेन बलिदानेन अनन्तः प्रीयताम् ॥ स्थापितदेवताबलिदानम् ॥ १ गणेशबलिः— ॐ गुणानान्त्वा० । गणपतिं साङ्गं०। गणपतये साङ्गाय० । भो गणपते इमं बलिं गृहाण मम सकुटुम्बस्याभ्युदयं कुरु ॥ आयुःकर्ता० । अनेन बलिदानेन गणपतिः प्रियताम् ॥ २ मातृकाबलिः—ॐ सपंवरुये देव्व्याधियासन्दक्षिणयोरुचंक्षसा ॥ मामुऽआयुढंप्पमोंषीम्मोंऽअहन्तवंव्वीरंविंदेयुतवंदेविसुन्द्दशि ॥ २३/२ ॥ वसोर्द्धारासहितसगणेशगौर्याद्यावाहितमातृः साङ्गाः० ॥ वसोर्द्धारासहितसगणेशगौर्याद्यावाहितमातृभ्यः साङ्गाभ्यः० । भो भो वसोर्द्धारासहितसगणेशगौर्याद्यावाहितमातरः इमं बलिं गृह्णीत मम सकुटुम्बस्याभ्युदयं कुरुत । आयुःकर्त्र्यः० । अनेन बलिदानेन वसोर्द्धारासहितसगणेशगौर्याद्यावाहितमातरः प्रीयन्ताम् ॥ ३ ग्रहबलिः—ॐग्रहाऽऊर्ज्जाहुतयोव्व्यन्तोविप्पायमतिम् ॥ तेषांविशिंप्रियाणांवोहमिषमूर्ज्जंसमग्रभमुपयामगृहीतोसीन्द्रायत्त्वाजुष्टंगृह्णाम्म्येषतेयोनिरिन्द्रायत्त्वाजुष्टतमम् ॥ ७/१ ॥ आदित्याद्यावाहितदेवताः साङ्गाः० ॥ वः अहं पूजयामि ॥ आदित्याद्यावाहितदेवताभ्यः साङ्गाभ्यः० । भो भो आदित्याद्यावाहितदेवताः इमं बलिं गृह्णीत मम० ॥ आयुः कर्त्र्यः० । अनेन बलिदानेन आदित्याद्यावाहितदेवताः प्रीयन्ताम् ॥ ४ क्षेत्रपालमहाबलिः—मण्डपाद्बहिः वंशपात्रे सदीपमाषभक्तदध्योदनताम्बूलदक्षिणाकूष्माण्डोदककुम्भयुतं बलिं संस्थाप्य हरिद्राकुङ्कुमसिन्दूरपताकायुतं कृत्वा । हस्ते जलमादाय० अद्य पूर्वोच्चारितशुभपुण्यतिथौ सकलारिष्टशान्तिपूर्वकं मारीप्सितस्य ग्रहशान्त्याख्यस्य कर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं क्षेत्रपालाय पूजनपूर्वकं बलिदानं करिष्ये ॥ बलिदा-

---

१ हेमाद्रि'—सोदकुम्भं सकूष्माण्ड क्षेत्रपालबलिं हरेत् ॥ चतुर्वर्तिसमायुक्तं दीपं तत्र निधापयेत्'॥

नपात्रे पूगीफले क्षेत्रपालमावाहयेत् ॥ ॐ नुहिस्पशुमविंदन्नुरयमुस्मादूर्द्ध्वानुराद्युरऽएतारंमृम्मे? ॥ एमेनमत्रपत्रमृताऽअमेर्त्यं वैश्वानुरह्मैत्रेजिरयायदेवा? ॥ $\frac{६१}{३५}$ ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः क्षेत्रपालाय नमः क्षेत्रपालमावाहयामि स्थापयामि ॥ क्षेत्रपालाय नमः इत्यनेन षोडशोपचारैः पञ्चोपचारैर्वा सम्पूजयेत् । प्रार्थयेत्—ॐ नमामि क्षेत्रपाल त्वां भूतप्रेतगणाधिप । पूजां बलिं गृहाणेमं सौम्यो भवतु सर्वदा ॥ आयुरारोग्यम्मे देहि निर्विघ्नं कुरु सर्वदा ॥ मा विघ्नं माऽस्तु मे पापं मा सन्तु परिपन्थिनः ॥ सौम्या भवन्तु तृप्ताश्च भूतप्रेताः सुखावहाः ॥ यं यं यं यक्षरूपं दशदिशिवदनं भूमिकम्पायमानं संसंसंहारमूर्तिं शिरमुकुटजटाशेखरं चन्द्रबिम्बम् । दं दं दं दीर्घकेशं विकृतनखमुखं चोर्ध्वरेखाकपालं पं पं पं पापनाशं प्रणतपशुपतिं भैरवं क्षेत्रपालम् ॥ ॐ नमः क्षेत्रपाल चित्रतुरङ्गवाहन सर्वभूतप्रेतपिशाचशाकिनीडाकिनीवेतालादिपरिवृत दध्योदनप्रियसकलशक्तिसहित इमां पूजां गृहाण।अनया पूजया क्षेत्रपालः प्रीयताम् ॥ क्षेत्रपालाय साङ्गाय सपरिवाराय बर्बरकेशाय भूतप्रेतपिशाचशाकिनीडाकिनीकूष्माण्डगणवेतालादियुताय सायुधाय सशक्तिकाय सवाहनाय इमं सदीपमाषभक्तबलिं समर्पयामि ॥ भो क्षेत्रपाल सर्वतो दिशं रक्ष बलिं भक्ष मम सकुटुम्बस्याभ्युदयं कुरु ॥ आयुःकर्ता क्षेमकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता निर्विघ्नकर्ता क. फ. वरदो भव॥ अनेन बलिदानेन क्षेत्रपालः प्रीयताम् ॥ पश्चादनवेक्षमाणेन दुर्म्राह्मणेन शूद्रेण वा बलिं नीत्वा चतुष्पथे स्थापयेत् ॥ यजमानस्तस्य पृष्ठतो द्वारपर्यन्तं गत्वा जलं सिंचेत्-ॐ–हिङ्कारायुस्वाहाहिङ्कृतायुस्वाहाक्रन्दतेस्वाहावक्रुन्दायुस्वाहाप्रोथतेस्वाहाप्प्रप्रोथायुस्वाहागन्धायुस्वाहाग्घ्रातायुस्वाहानिविष्टायुस्वाहोपविष्टायुस्वाहासन्दितायुस्वाहावल्गतेस्वा-

हासीनायस्वाहाशयानायस्वाहास्वपते स्वाहाजाग्रते स्वाहाकूजतेस्वाहा प्रबुद्धायस्वाहाविजृम्भमाणाय स्वाहाविचृताय स्वाहासंहानायस्वाहोपस्थितायस्वाहायनायस्वाहाप्रायणायस्वाहा ॥ २१ ॥ पाणिपादं प्रक्षाल्य आचामेत् ॥

॥११३॥ पूर्णाहुतिहोमः। तत्र उपकल्पनीयानि—आज्यस्थाली होमावशिष्टादाज्यादन्यदाज्यं वैकङ्कती स्रुक् खादिरः स्रुवः सम्मार्गकुशाःपवित्रे नारिकेलफलं ताम्बूलवीटकं पूगीफलं पट्टवस्त्रखण्डं रक्तसूत्रं पुष्पाणि पुष्पमाला च इत्येतान्युपकल्प्य हस्ते जलमादाय अद्यपूर्वोच्चारितशुभपुण्यतिथौ कृतस्य ग्रहशान्त्याख्यस्य सम्पूर्णतासिद्ध्यर्थं वसोर्धारासमन्वितं पूर्णाहुतिहोमं करिष्ये ॥ आज्यं निरूप्याग्नावधिश्रित्य स्रुवं स्रुचं च प्रतप्य सम्मार्गकुशैः सम्मृज्य प्रणीतोदकेनाभ्युक्ष्य पुनः प्रतप्य अग्नेः पश्चिमतो याम्यायां निदध्यात् ॥ आज्यमुद्वास्य पवित्राभ्यामुत्पूय अवेक्ष्य अपद्रव्यं निरस्य स्रुवेण चतुर्वारमाज्यं स्रुचि गृहीत्वा शिष्टाचारात्तस्यां सपूगीफलं ताम्बूलवीटकं निधाय तदुपरि रक्तवस्त्रवेष्टितं रक्तसूत्रबद्धं पुष्पमालापरिवेष्टितं सिन्दूरादिभिश्चर्चितं नारिकेलफलं निधाय अधोमुखस्रुवच्छन्नां तां स्रुचमादाय वामस्तनान्तमानीय यजमानान्वारब्धः आचार्यः आसीन एव पूर्णाहुतिं जुहुयात् ॥ ॐसमुद्द्रादूर्म्मिर्म्मधुमाँ२ऽ-

१ रुद्रकल्पद्रुमहोमपरिच्छेदे—केचित्तिष्ठन् पूर्णाहुतिमाचरन्ति तन्निर्मूलम् ॥ परशुराममहारुद्रप्रयोगे—होमोऽसौ द्विविधः प्रोक्तः श्रौतः स्मार्तश्च होतृभिः। श्रौतो यजतिसंज्ञोऽसौ स्मार्तो जुहोतिसंज्ञकः ॥ तिष्ठता हूयते यत्र याज्यया चानुवाक्यया। वषट्कारप्रदानेन स श्रौतः परिकीर्तितः ॥ यत्र होत्रोपविष्टेन स्वाहाकारेण हूयते। स स्मार्त इति विज्ञेयः पूर्णाहुत्यादिकर्मसु ॥ केचिदुत्थाय कुर्वन्ति कात्यायनमतं न तत्। तस्मादध्वर्युणा कार्या पूर्णासीनेन सर्वदा॥ कल्पद्रुमे तथा खण्डदीक्षितमहारुद्रपद्धतौ तु त्र्यृचा एव पूर्णाहुतिः ॥ अन्येषां मन्त्राणामपि विकल्पेनैव पूर्णाहुतिः प्रोक्ता यथा—सप्ततेअग्न इति मन्त्रेण वा अत्र इदमग्नये सप्तवत् इति त्यागः ॥ मूर्धानन्दिव इत्यनेन वा अत्र इदमग्नये वैश्वानरायेति त्यागः ॥ समुद्रादूर्मिरितित्र्यृचेन वा पुनस्त्वेति ॥ पूर्णा

उदारदुपाꣳशुनासममृतत्त्वमानट् ॥ घृतस्यनामगुह्यंयदस्तिजिह्वादे-
वानाममृतस्यनाभिः ॥ १/१७ ॥ वयन्नामप्रब्रवामाघृतस्यास्मिन्यज्ञेधा-
रयामानमोभिः ॥ उपब्रह्माशृणवच्छस्यमानञ्चतुःशृङ्गोवमीद्गौरऽए-
तत् ॥ २/१७ ॥ चत्वारिशृङ्गात्रयोऽअस्यपादाद्वेशीर्षेसप्तहस्तासोऽअस्य ॥
त्रिधाबद्धोवृषभोरोरवीतिमहोदेवोमर्त्याँ२ऽआविवेश ॥ ३/१७ ॥ त्रिधाहि-
तम्पणिभिर्गुह्यमानङ्गविदेवासोघृतमन्वविन्दन् ॥ इन्द्रऽएकꣳसूर्यऽएकं
जजानवेनादेकꣳस्वधयानिष्टतक्षुः ॥ ४/१७ ॥ एताऽअर्षन्तिहृद्यात्समु-
द्राच्छतव्रजारिपुणानावचक्षे॥घृतस्यधाराऽअभिचाकशीमिहिरण्ययो-
वेतसोमध्यऽआसाम् ॥५/१७॥ सम्यक्स्रवन्तिसरितोनधेनाऽअन्तर्हृदाम-
नसापूयमानाः॥एतेऽअर्षन्त्यूर्मयोघृतस्यमृगाऽइवक्षिपणोरीषमाणाः
॥६/१७॥सिन्धोरिवप्राध्वनेशूघनासोवातप्रमियःपतयन्तियह्वाः?॥ घृत-
स्यधाराऽअरुषोनवाजीकाष्ठाभिन्दन्नूर्मिभिःपिन्वमानः ॥७/१७॥ अभिप्र-
वन्तसमनेवयोषाःकल्याण्यःस्मयमानासोऽअग्निम् ॥ घृतस्यधाराः
समिधोनसन्तताजुषाणोहर्यतिजातवेदाः॥८/१७॥कन्याऽइववहतुमेतवाऽ
उऽअञ्ज्यञ्जानाऽअभिचाकशीमि॥यत्रसोमःसूयतेयत्रयज्ञोघृतस्यधाराऽ
अभितत्पवन्ते ॥ ९/१७ ॥ अभ्यर्षतसुष्टुतिङ्गव्यमाजिमस्मासुभद्रा
द्रविणानिधत्त ॥ इमंयज्ञन्नयतदेवतानोघृतस्यधारामधुमत्पवन्ते ॥ १०/१७ ॥
धामन्तेविश्वम्भुवनमधिश्रितमन्तः?समुद्रेहृद्यन्तरायुषि ॥ अपामनीके
समिथेयऽआभृतस्तमश्याममधुमन्तन्तऽऊर्मिम् ॥ ११/१७ ॥ पुनस्त्वा-

दर्भास्यनया वा त्र्यायामिदमनय इति त्यागः॥ केचन विकल्पं विहाय सर्वैरपि मन्त्रैः पूर्णाहुति-
होमं कुर्वन्ति तदेतत्करण मन्त्राणां विकल्पानुगमात् समुच्चये च प्रमाणाभावात् चिन्त्यमिति
वल्पद्रुमकाराः ॥

दिव्याॗरुद्रावसंवुदः समिन्धताम्पुनर्ब्ब्रह्माणोवसुनीथयुज्ञैः॥ घृतेनुत्त्वन्तुन्वं॑वर्द्धयस्वसुत्त्याः सन्तुयजमानस्युकामाः॥ ॥ सुप्तते॑ऽअग्नेसुमिधःसुप्तजिह्वाःसुप्तऽऋषयःसुप्तधाम प्रियाणि॥सुप्त होत्राःसप्तधात्वायजन्तिसप्तयोनीरापृणस्वघृतेनुस्वाहा॥ ॥ मूर्द्धानन्दिवोऽअरतिम्पृथिव्यावैश्वानरमृतऽआजातमुग्निम्॥ कुविᳬसम्राजमतिथिञ्जनानामासन्नापात्रञ्जनयन्तदेवाः॥ ॥ पूर्णादर्व्विपरापतसुपूर्ण्णापुनरापत॥ वस्नेवविक्रीणावहाऽइषमूर्जᳬशतक्रतो॥ ॥ अथमातुराहुतेवुाहुतेवावदुयाकामुयेतुसोस्याऽअनिरसितायैकुंभ्यैदव्योपहान्तिपूर्णादर्व्विपरापतसुपूर्णापुनरापत।वस्नेवविक्रीणावहाऽइषमूर्जᳬशतक्रतो-स्वाहा॥ कां० २। अ० ५। प्रपाठकः ४। ब्रा० ४॥ त्यागः—इदमग्नये वैश्वानराय वसुरुद्रादित्येभ्यः शतक्रतवे सप्तवतेऽग्नये अद्भ्यश्च न मम॥ संस्रवप्रक्षेपः॥ इति पूर्णाहुतिः॥

॥ ११४ ॥ वसोर्द्धाराहोमः—औदुम्बरीम् ऋज्वीमकोटरां बाहुमात्रप्रमाणां निर्मलघृतपूरितां स्रुचं धृत्वा अग्नेरुपरि वसोर्द्धारां पातयेत्॥ तस्यां च घृतधारायां स्रुवप्रणालिकया अग्नौ पतन्त्यां सत्यां वक्ष्यमाणमन्त्रान्पठेत्—

ॐसुप्तते॑ऽअग्नेसुमिधःसुप्तजिह्वाःसुप्तऽऋषयःसुप्तधामप्रियाणि॥सुप्तहोत्राःसप्तधात्वायजन्तिसुप्तयोनीरापृणस्वघृतेनुस्वाहा॥ ॥ शुक्रज्ज्योतिश्चचित्रज्ज्योतिश्चसुत्यज्ज्योतिश्चज्ज्योतिष्म्माँश्च॥ शुक्रश्चऽऋतुपाश्चात्त्यᳬहाः॥ ॥ ईदृङ्चान्यादृङ्चसुदृङ्चप्प्रतिसदृङ्॥ मितश्चसम्मितश्चसभराः॥ ॥ ऋतश्चसत्त्यश्चध्रुवश्चधरुणश्च॥ धुर्त्ताचविधुर्त्ताचविधारयः॥ ॥ ऋतुजिच्चसत्त्यजिच्चसेनुजिच्चसुषेणश्च॥ अन्तिमित्रश्चदूरेऽअमित्रश्चगुणः॥ ॥ ईदृक्षासऽएतादृक्षासऽऊषुणःसदृक्षा-

सुदृङ्प्रतिसदृक्षासुऽएतन॥ मितासंश्च सम्मितासोनोऽअद्य सभरसोमरु- तोयज्ञेऽअस्मिन् ॥ ८४/१७ ॥ स्वतवाँश्च प्रघासीचसान्तपनश्च गृहमेधीच ॥ क्रीडीचशाकीचोज्जेषी ॥ ८५/१७ ॥ इन्द्रन्दैवीर्विशोमरुतोनुवर्त्मानोभवन्य- थेन्द्रन्दैवीर्विशोमरुतोनुवर्त्मानोभवन् ॥ एवमिमंयजमानन्दैवीश्चविशो मानुषीश्चानुवर्त्मानोभवन्तु ॥ ८६/१७ ॥ इमꣳस्तनमूर्जस्वन्तन्धयापां प्रपीनमग्नेसरिरस्यमध्ये ॥ उत्सञ्जुषस्वमधुमन्तमर्वन्त्समुद्रियꣳसद- नमाविशस्व ॥ ८७/१७ ॥ घृतम्मिमिक्षेघृतमस्ययोनिर्घृतेश्रितोघृतम्वस्य- धाम ॥ अनुष्वधमावहमादयस्वस्वाहाकृतंवृषभवक्षिहव्यम् ॥ ८८/१७ ॥ वसोःपवित्रमसिशतधारंवसोःपवित्रमसिसहस्रधारम् । देवस्त्वासवि- तापुनातुवसोःपवित्रेणशतधारेणसुप्वाकामधुक्षः ॥ ३/१ ॥ ॐयत्क- र्मणात्यरीरिचं यद्वान्यूनमिहाकरम् ॥ अग्निष्टत्स्विष्टकृद्विद्वान्स्विष्टꣳसुहु- तंकरोतुस्वाहा ॥ इदमग्नये न मम ॥ नात्र संस्रवप्रक्षेपः ॥ अग्निप्रद- क्षिणां कुर्यात्-ॐसꣳप्रयन्तुऽइत्वाचनप्रतायावैविभेमीतिकातेनप्रतेत्यभित- एवमापरिस्तृणीयुरितितस्मादेतदग्निमभितःपरिस्तृणन्तितृण्यायावैविभे- मीतिकातेतृप्तिरितिब्राह्मणस्यैवतृप्तिमनुतृप्येयमितितस्मात्सꣳस्थितेयज्ञे- ब्राह्मणन्तर्पयितवैब्रूयाद्ब्राह्मणैस्तत्तर्पयति ॥ शतपथब्राह्मण काण्ड १ प्रपाठक ६ ब्राह्मण १ मन्त्र २८॥ इत्यग्निं प्रदक्षिणीकृत्य अग्नेः पश्चात् प्राङ्मुखो यजमान उपविशेत्॥ ११५॥ भस्मधारणम्॥-ॐत्र्यायुषञ्जमदग्नेरिति ललाटे । कश्यपस्यत्र्यायुषम्-ग्रीवायाम् । यद्देवेषुत्र्यायुषम्-बाह्वोः । तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषम्-हृदये ॥ ततः संस्रवप्राशनम् ॥ पवित्राभ्यां मार्जनम् ॥ अग्नौ पवित्रप्रतिपत्तिः । ब्रह्मणे पूर्णपात्रदानम्-प्रणीतोद- केन सङ्कल्पः-कृतस्य ग्रहशान्त्याख्यस्य कर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं ब्रह्मन् इदं पूर्णपात्रं सदक्षिणाकं तुभ्यमहं सम्प्रददे ॥ यजमानो यदेव

प्रतिगृह्यताम् ॥ ब्रह्मा प्रतिगृह्णामि–ॐ द्यौस्त्वा ददातु पृथिवी त्वा प्रतिगृह्णातु ॥ अग्नेः पश्चात् प्रणीताविमोकः—ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमास्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम् ॥

॥११६॥ श्रेयोदानम्-ब्रह्मादय ऋत्विजादयश्च आचार्यद्वारा श्रेयोदानं कुर्युः॥ उदङ्मुख आचार्यः प्राङ्मुखस्थितयजमानहस्ते श्रेयोदानं कुर्यात्—शिवा आपः सन्तु इति यजमानहस्ते उदकं दत्त्वा सौमनस्यमस्तु इति पुष्पाणि॥ अक्षतं चारिष्टं चास्तु इति अक्षतांश्च दत्त्वा ततो दीर्घमायुः शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिश्चास्तु इति पुनरुदकं दद्यात्॥ तत आचार्यः–हस्ते साक्षतसोदकपूगीफलं गृहीत्वा–भवन्नियोगेन मया अस्मिन् ग्रहशान्त्याख्ये कर्मणि यत्कृतम् आचार्यत्वं तथा च एभिर्ब्राह्मणैः सह यत्कृतं ब्रह्मत्वं गाणपत्यं सादस्यं च यः कृतो होमस्तस्मात् आचार्यत्वात् ब्रह्मत्वात् गाणपत्यात् सादस्यात् होमात् यदुत्पन्नं श्रेयः तत्तुभ्यमहं सम्प्रददे॥ तेन श्रेयसा त्वं श्रेयस्वी भव॥ प्रतिगृह्य "भवामि" इति यजमानो वदेत्॥११७॥ दक्षिणादानम्॥ सपत्नीको यजमानः अग्नेः पश्चिमतः उपविष्टः उदङ्मुखानाचार्यादीन्वरणक्रमेणपूजापूर्विकां दक्षिणां दद्यात्॥हस्ते जलमादाय देशकालौ स्मृत्वा मया आचरितस्य ग्रहशान्त्याख्यस्य कर्मणः साङ्गतासिद्धये आचार्यादिवृतेभ्यो ब्राह्मणेभ्यः पूजनपूर्वकं दक्षिणाप्रदानं करिष्ये॥ आचार्यपूजनम्–आचार्याय एतत्ते पाद्यं शिष्टाचारात्पादौ प्रक्षाल्य इदमर्घ्यम् इमे तुभ्यं बार्हस्पत्ये वाससी एष ते गन्धः। इमानि पुष्पाणि एष ते धूपः दीपः नैवेद्यताम्बूलादीनि इति दत्त्वा एतावतीं दक्षिणां तुभ्यमहं सम्प्रददे॥ आचार्याय गोप्रदानम्–अमुकशर्मणे आचार्याय गोनिष्क्रयभूतमिदं हिरण्यम् अग्निदैवतं तुभ्यमहं सम्प्रददे॥ हिरण्यासम्भवे रजतं दद्यात्॥ ततो

ब्रह्मन्नेतत्ते पाद्यमित्यादिना पूर्वोक्तप्रकारेण पूजापूर्वकं ब्रह्मणे दक्षिणां दद्यात् ॥ एवं सदस्याय उपद्रष्ट्रे गाणपत्याय ऋत्विग्भ्यः ग्रहजापकेभ्यश्च यथोक्तदक्षिणां दत्वा आशिषो गृह्णीयात् ॥ स्वर्णदानमन्त्रः—हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः ॥ अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥ इदं यथाशक्ति सुवर्णम् अग्निदेवतम् अमुकशर्मणे तुभ्यमहं सम्प्रददे ॥ प्रतिगृह्णामि ॥ ॐ देवस्यंत्त्वासवितुः प्प्रसुवेश्विनोर्ब्बाहुब्भ्याम्पूष्णोहस्ताब्भ्याम् ॥ भूमिदानमन्त्रः-सर्वभूताश्रया भूमिर्वराहेण समुद्धृता । अनन्तसस्यफलदा ह्यतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥ इमां भूमिं विष्णुदेवतां वा तन्निष्क्रयीभूतयथाशक्तिरजतद्रव्यम् अमुकशर्मणे आचार्याय तुभ्यमहं सम्प्रददे ॥ ॐ देवस्यंत्त्वा० । तिलपात्रदानम्—महर्षेर्गोत्रसम्भूताः काश्यपस्य तिलाः स्मृताः ॥ तस्मादेषां प्रदानेन मम दोषो व्यपोहतु ॥ एतांस्तिलान् प्रजापतिदैवतान् आचार्याय तुभ्यमहं सम्प्रददे न मम ॥ ॐ देवस्यंत्त्वा० ॥११८॥ अथाभिषेकः—आचार्यादयः सर्वे उदङ्मुखास्तिष्ठन्तः ग्रहवेदीशानस्थकलशोदकं पात्रान्तरे उद्धृत्य दूर्वापञ्चपल्लवैर्वक्ष्यमाणैर्वैदिकैः मन्त्रैः प्राङ्मुखोपविष्टं सकुटुम्बं यजमानं तद्वामत उपविष्टां तत्पत्नीञ्च अभिषिञ्चेयुः ॥ ॐ आपोहिष्ठा० । योवं शिवतमो० । तस्माऽअरङ्गमामवोयस्य क्षयायजिन्वथ । आपो० ॥ पयं÷पृथिव्यां०।देवस्यंत्त्वासवितुः प्प्रसुवेश्विनोर्ब्बाहुब्भ्याम्पूष्णोहस्ताब्भ्याम् ॥ सरस्वत्यैर्व्वाचोयन्तुर्य्यन्त्रियेंदधामिबृहस्पतेष्ट्वासाम्म्राज्ज्येनाभिषिञ्चाम्यसौ॥[२/१]॥देवस्यंत्त्वा० । सरस्वत्यैर्व्वाचोयन्तुर्य्यन्त्रेणाग्नेः साम्म्राज्ज्येनाभिषिञ्चामि॥[३/२]॥ देवस्यंत्त्वा० । अश्विनोर्भैषज्ज्येनतेः

१ दानानि—स्वर्णगोभूतिलान्दद्यात् सर्वदोषापनुत्तये ॥

२ सविस्तरः अभिषेकः कर्तव्यश्चेत् पुण्याहवाचने (३२८) पृष्ठे द्रष्टव्यः ।

जसे०ब्रह्मवर्चसायाभिषिञ्चामि सरस्वत्यै भैषज्येनवीर्यायान्नाद्या-याभिषिञ्चामीन्द्रस्येन्द्रियेणबलायश्रियैयशसेभिषिञ्चामि ॥ ३/२० ॥ द्यौः शान्ति० । यतोयतः० । विश्वानिदेव० । पलाशंभवति० सर्वेषांवा-ऽएषवेदानाᳫंरसोयत्सामसर्वेषामेवैतद्वेदानाᳫंरसेनाभिषिञ्चति। ॐ शान्तिः शान्तिः सुशान्तिर्भवतु ॥ हस्ते जलं गृहीत्वा-अभिषेककर्तृकेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो यथोत्साहदक्षिणां दास्ये तेन श्रीकर्माधीशः प्रीयताम् । अभिषिक्तः सपत्नीको यजमानः सर्वौषधिभिरुद्वर्तिताङ्गः गङ्गादिशुद्धोदकेन स्नात्वा उभाभ्यामभिषिक्ताभ्यां त्यक्तानि स्नानवस्त्राण्याचार्याय दत्वा शुक्लमाल्याम्बरधरो धृतमङ्गलतिलकः स्वासने उपविशेत् । घृतपात्रदानम्—घृतपूरितकांस्यपात्रे मुखावलोकनं कुर्यात्। रूपेण वोरूपमभ्यागान्तुथोवोविश्ववेदाविभजतु॥ऋतस्यपथाप्रेतचन्द्रदक्षिणावि-स्वःपश्यव्यन्तरिक्षंयतस्व सदस्यैः॥ ७/४५ ॥ इदम् आज्यपात्रं सदक्षिणाकम् आचार्याय तुभ्यमहं सम्प्रददे ॥ ब्राह्मणभोजनसङ्कल्पः—कृतस्य ग्रहशान्त्याख्यस्य कर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं यथाशक्ति ब्राह्मणान् भोजयिष्ये तेन श्रीकर्माङ्गदेवताः प्रीयन्ताम् ॥ भूयसीदक्षिणाप्रदानम्—हस्ते जलमादाय–नानावेदान्तर्गतनानाशाखाध्यायिभ्यो नानागोत्रेभ्यो नानाशर्मभ्यो ब्राह्मणेभ्यो दीनानाथेभ्यश्च यथाशक्ति भूयसीं दक्षिणां दातुमुत्सृजे॥ ॐ तत्सदिति वदन् भूयसीं दक्षिणां दत्वा तेषाम् आशिषो गृह्णीयात् ॥ देवताविसर्जनम् पुष्पाक्षतप्रक्षेपेण स्थापितदेवान्विसर्जयेत्-ॐ उत्तिष्ठब्रह्मणस्पतेदेवयन्तस्त्वेमहे॥उपप्रयन्तुमरुतःसुदानवऽइन्द्रप्राशूर्भवासचा ॥ ५६/३४ ॥ यान्तु देवगणाः सर्वे स्वशक्त्या पूजिता मया ॥ इष्टकामप्रसिद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च ॥ पीठादिदानम्–हस्ते जलं गृहीत्वा इमानि गणेशमातृकाग्रहपीठानि समूर्तिकानि सकलशानि सवस्त्राणि

अवशिष्टपूजोपस्कराणि च आचार्याय तुभ्यमहं सम्प्रददे ॥ अग्निविस र्जनम् ॐ अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम ॥ ३६/५ ॥ अग्नये नमः सकलोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि॥ ॐ यज्ञ यज्ञं गच्छ यज्ञ- पतिं गच्छ स्वां योनिं गच्छ स्वाहा ॥ एष ते यज्ञो यज्ञपते सहसूक्तवाकः सर्ववीरस्तं जुषस्व स्वाहा ॥ २२/८ ॥ गच्छ त्वं भगवन्नग्ने स्वस्थाने विश्वतोमुख ॥ हव्यमादाय देवेभ्यः शीघ्रं देहि प्रसीद मे ॥ गच्छ गच्छ सुरश्रेष्ठ स्वस्थाने परमेश्वर । यत्र ब्रह्मादयो देवास्तत्र गच्छ हुताशन ॥ सम्पूर्णतावाचनम् अञ्जलिं बद्ध्वा-मया यत्कृतं ग्रहशा- न्त्याख्यं कर्म तत् कालहीनं भक्तिहीनं शक्तिहीनं श्रद्धाहीनं च भवतां ब्राह्मणानां वचनात् सर्वं परिपूर्णमच्छिद्रं चास्तु ॥ विप्रा वदेयुः- अस्तु परिपूर्णमच्छिद्रम् ॥ ११९ ॥ अथ भेपात्मकपुण्याहवाचनम् ॥ स्वपुरतः पञ्चवर्णैः अष्टदलं कृत्वा तत्र भूमिं स्पृष्ट्वा-ॐ मही द्यौः० । यवप्रक्षेपः-ॐ ओषधयः सं० । तदुपरि कलशस्थापनम्-ॐ आजिघ्र० । जलपूरणम्-ॐ वरुणस्यो० । गन्धप्रक्षेपः-ॐ त्वां गन्धर्वा० । धान्यप्रक्षेपः- ॐ धान्यमसि० । सर्वौषधीप्रक्षेपः ॐ या ओषधीः० । दूर्वाप्रक्षेपः-ॐ का- ण्डात्काण्डा० । पञ्चपल्लवप्रक्षेपः ॐ अश्वत्थे वो० । सप्तमृत्प्रक्षेपः-ॐ स्यो- ना पृथिवि० । फलप्रक्षेपः-ॐ याः फलिनी० । पञ्चरत्नप्रक्षेपः-ॐ परि वाजप० । हिरण्यप्रक्षेपः ॐ हिरण्यगर्भः० । रक्तसूत्रवेष्टनम्-ॐ सुजातो० । पूर्णपा- त्रम्-ॐ पूर्णा दर्वि० । वरुणावाहनम् ॐ तत्त्वायामि० । अस्मिन् कलशे वरुणं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकम् आवाहयामि स्थापयामि ॥ प्रतिष्ठापनम्-ॐ मनो जूति० । ॐ वरुणाय नमः चन्दनं समर्पयामि । इत्या-

१ सम्पूर्णमन्त्रा- द्रष्टव्याश्चेत् ११९-२० पृष्ठे द्रष्टव्याः ।

दिपञ्चोपचारैः सम्पूज्य तत्त्वायामीति पुष्पाञ्जलिं समर्प्य अनेन पूजनेन वरुणः प्रीयताम् ॥ अनामिकया कलशं स्पृष्ट्वा अभिमन्त्रयेत् । कलशस्य०। दुरितक्षयकारकाः । 'गायत्र्यादिभ्यो नमः' इत्यनेन पञ्चोपचारैरभ्यर्च्य कलशं प्रार्थयेत्-देवदानवसंवादे० । प्रसन्नो भव सर्वदा ॥ नमो नमस्ते स्फटिकप्रभाय सुश्वेतहाराय सुमङ्गलाय ॥ सुपाशहस्ताय झषासनाय जलाधिनाथाय नमो नमस्ते ॥ पाशपाणे नमस्तुभ्यं पद्मिनीजीवनायक । पुण्याहवाचनं यावत्तावत्त्वं सन्निधो भव । ततो यजमानः युग्मविप्रान् गन्धमाल्यवस्त्रदक्षिणादिभिः सम्पूज्य तान् उदङ्मुखानुपवेश्य पूजित-कलशं कराभ्यामालभ्य—मम गृहे ॐपुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु ॥ विप्राः ॐअस्तु पुण्याहम् ॥ एवं त्रिः ॥ मम गृहे ॐ कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु ॥ विप्राः ॐ अस्तु कल्याणम् ॥ एवंत्रिः॥ मम गृहे ॐ ऋद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु ॥ विप्राः ॐ कर्म ऋद्ध्यताम् ॥ एवं त्रिः ॥ मम गृहे ॐस्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु ॥ विप्राः ॐ आयुष्मते स्वस्ति ॥ एवं त्रिः॥ मम गृहे ॐ श्रीरस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु ॥ विप्राः ॐ अस्तु श्रीः ॥ एवंत्रिः॥ इति पुण्याहं वाचयित्वा मन्त्रा-शिषो गृहीत्वा-प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत् । स्मरणा-देव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः ॥ यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु । न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥ ॐ विष्णवे नमः ॥ ॐ विष्णवे नमः ॥ ॐ विष्णवे नमः ॥ ततो ब्राह्मणान् भोजयित्वा दीनानाथांश्चान्नादिना सन्तोष्य स्वयं सुहृन्मि-त्रादियुतः सोत्साहः सन्तुष्टो हविष्यं भुञ्जीत ॥

॥ इति वैदिकग्रहशान्तिप्रयोगः ॥

॥ अथ षोडशसंस्कारप्रयोगः ॥

॥ १२० ॥ अथ गर्भाधानसंस्कारप्रयोगः ॥ १ ॥

अथर्तुमती स्त्री नूतनवस्त्रादिकं परिधाय शुभासने प्राङ्मुखमुपविशेत् ॥ तत पतिपुत्रवतीभिः कुलवृद्धसुमङ्गलस्त्रीभिर्गोधूमैर्नारिकेलादिनानाफलैस्तत्पङ्क्तैश्च प्रवेशनं यथावृद्धाचारं कारयेत् ॥ शान्त्यभावे पत्न्या सह कर्ता मातरभ्यङ्गस्नानं कृत्वा तथा सहोपविश्याचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य अस्या मम भार्यायाः प्रथमगर्भा तिशयद्वारा अस्यां जनिष्यमाणसर्वगर्भाणां बीजगर्भसमुद्भवैनोनिवर्हणार्थं गर्भाधानसंस्काराख्यं कर्माहं करिष्ये ॥ इति संकल्पयेत् ॥ पुनर्जलमादाय ॥ तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणपतिपूजनं स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं नान्दीश्राद्धं च करिष्ये ॥ तानि कृत्वा ॥ कर्तुः क्षपाकर्मणो मन्त्राभिज्ञाने सति सूर्यमवलोक्य कर्माङ्गब्राह्मणान् संभोज्य विप्राशिषो गृहीत्वा मातृगणं विसृज्य क्षपायामभिगमनादिकं कुर्यात् ॥ मन्त्राणामभिज्ञाने तु ॥ सूर्यावलोकनोत्तरं दिवैव मन्त्रजपमात्रं नाभिदेशाभिमर्शनादि हृदयालम्भनान्तं गर्भाधानाख्यं कर्म कृत्वा तदङ्गतया ब्राह्मणान् सम्भोज्य तेभ्यश्च दक्षिणां दत्त्वा तेषामाशिषो गृहीत्वा मातृगणं विसर्जयेदिति ॥ आदित्यं गर्भमित्यादित्यमवेक्षते ॥ ॐ आदित्यङ्गर्भम्पयसासमङ्ग्धिसहस्रस्यप्रतिमांविश्वरूपम् ॥ परिवृङ्धिहरसामाभिमᳬस्थाःशतायुषङ्कृणुहिचीयमानः ॥ ४१/१३ ॥ अनेन मन्त्रेण दम्प-

---

१ ऋतुदर्शनमारभ्य आद्यरात्रिचतुष्क पर्वादीनि षड्दिनानि च वर्जयित्वा ज्योतिशास्त्रोक्ते शुभे दिने शुभे काले पुत्रार्थिना युग्मासु रात्रिषु कन्यार्थिना । अयुग्मासु रात्रिषु च गर्भाधानं कार्यम् ॥ गर्भाधानसीमन्तोन्नयने तु स्त्रीसंस्कारत्वात्प्रतिगर्भं नावर्तेते किन्तु प्रथमगर्भे एव कार्ये ॥

तिभ्यां सूर्यविलोकनं नमस्कारश्च कार्यः ॥ ततः सायङ्कालीनं नित्यं सम्पाद्योभौ श्वेतवस्त्रधारणानुलेपनमाल्याभरणालङ्कृतौ सदीपशयनागारे प्रविश्य तत्र सुप्रसारितशय्यायामारुह्य सुमुहूर्ते प्राक्शिरः शयितस्त्रियमुत्तानां कृत्वा भर्ता तस्याः नाभिदेशे हस्तं दत्वाऽभिमृश्य जपेत् ॥ ॐ पूषाभगꣳसवितामेददातुरुद्रःकल्पयतुललामगुंविष्णुर्योनिङ्कल्पयतुत्वष्टारूपाणिपिꣳशतु ॥ आसिञ्चतुप्रजापतिर्धातागर्भन्दधातुते ॥ गर्भंधेहिसिनीवालिगर्भंधेहिपृथुष्टुके ॥ गर्भन्तेऽअश्विनौदेवावाधत्तांपुष्करस्रजौ ॥ तेजो वैश्वानरो दद्यात् ॥ अथब्रह्मानुमन्त्रयते ॥ ब्रह्मागर्भंदधातुते ॥ अथाभिगमनम्—गायत्रेणत्वाच्छन्दसामन्यामित्रैष्टुभेनत्वाच्छन्दसामन्यामिजागतेनत्वाच्छन्दसामन्यामि। रेतोमूत्रंविजहातियोनिम्प्रविशदिन्द्रियम्। गर्भोजरायुणावृतऽउल्वञ्जहातिजन्मना। ऋतेनसत्यमिन्द्रियंविपानꣳशुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदम्पयोमृतम्मधु ॥ ॥ अभिगमनोत्तरं तस्याः दक्षिणस्कन्धोपरि हस्तं नीत्वा तेन हृदयमालभते ॥ ॐ यत्ते सुसीमेहृदयन्दिविचन्द्रमसिश्रितम् ॥ वेदाहन्तन्मान्तद्विद्यात्पश्येम शरदःशतञ्जीवेमशरदःशतꣳशृणुयाम शरदःशतम् ॥ कृतस्य कर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं स्मृत्युक्तान् दशसङ्ख्याकान्ब्राह्मणान् भोजयिष्ये ॥ तेन श्रीकर्माङ्गदेवताः प्रीयन्ताम् ॥ ब्राह्मणेभ्यो दक्षिणां दत्वा तेषामाशिषो गृहीत्वा ॥ यान्तु मातृगणाः सर्वे० ॥ इति मातॄणां विसर्जनं कार्यम् ॥ इति गर्भाधानसंस्कारप्रयोगः ॥ १ ॥

॥ १२१ ॥ अथ पुंसवनसंस्कारप्रयोगः ॥ २ ॥

तत्र गर्भाधानोत्तरं द्वितीये तृतीये मासि शुभेऽहनि गर्भिणीमुपवासं

१ पुंसवनं तु गर्भसंस्कारत्वात्प्रतिगर्भं कार्यमिति धर्मसिन्धौ । पुंसवनसंस्कारे गुरुशुक्रास्तमलमासादिदोषो नास्तीति संस्काररत्नमालायाम् ॥

कारयित्वा शुचिः स्नात्वा भर्ता आचम्य प्राणानायम्य ॥ देशकाल कीर्तनान्ते अस्यां मम भार्यायामुत्पत्स्यमानस्य गर्भस्य बैजिकगार्भिक-दोषपरिहारार्थं पुंरूपताज्ञानोदयप्रतिरोधपरिहारद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं पुंसवनाख्यं कर्माहं करिष्ये।पुनर्जलमादाय–तदङ्गत्वेन गणपतिपूजनं स्व-स्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं नान्दीश्राद्धं च करिष्ये ॥ इति संकल्प्य गणपतिपूजनादि नान्दीश्राद्धान्तं सर्वं कुर्यात् ॥ (अत्र पुण्याहवाचनान्ते प्रजापतिः प्रीयतामिति वदेत् ।) ततस्तस्मिन्नहनि गर्भिणीं स्नापयित्वाऽह-ते वाससी परिधाप्योपवास्य रात्रौ न्यग्रोधावरोहाङ्कुरांश्चोदकेन पिष्ट्वा वस्त्रगालितं तदुदकं गर्भिणीदक्षिणनासिकायामासिञ्चति भर्ता ॥ तत्र मन्त्रौ॥ॐहिरण्यगर्भ॰।ॐअद्भ्यः सम्भृत॰॥ कूर्मपित्तं चोपस्थे कृत्वा गर्भमभिमन्त्रयते ॥ तत्र मन्त्रः ॥ ॐसुपर्णोऽसि गरुत्माँस्त्रिवृत्ते शिरो गायत्रं चक्षुर्बृहद्रथन्तरे पक्षौ ॥ स्तोमऽआत्मा छन्दाᳬस्यङ्गानि यजूᳬषि नाम ॥ साम ते तनूर्वामदेव्यं यज्ञायज्ञियम्पुच्छं धिष्ण्याः शफाः । सुपर्णोऽसि गरुत्मान्दिवं गच्छ स्वः पत ॥ ॥ कृतस्य कर्मणः साङ्गतासि-द्ध्यर्थं स्मृत्युक्तान् दशसङ्ख्याकान् ब्राह्मणान् भोजयिष्ये ॥ ब्राह्मणेभ्यो दक्षिणां दत्त्वा तेषामाशिषो गृहीत्वा ॥ यान्तु मातृगणाः सर्वे॰ । इति मातृगणं विसर्जयेत् ॥ इति पुंसवनसंस्कारप्रयोगः ॥ २ ॥

॥ १२२ ॥ अथ सीमन्तोन्नयनसंस्कारप्रयोगः ॥ ३ ॥

प्रथमे गर्भे षष्ठेऽष्टमे वा मासे पुंनक्षत्रे चन्द्रताराग्रहानुकूलदिने पत्न्या सह मङ्गलस्नानं कृत्वा अहतवासोयुगालङ्कृतः शुचिर्दर्भपाणिः पत्न्या सह बहिःशालायां शुभासने प्राङ्मुख उपविश्याचम्य प्राणा नायम्य देशकालसंकीर्तनान्ते तनुरुधिरप्रियालक्ष्मीभूतराक्षसीगणदूर-

निरसनक्षमसकलसौभाग्यनिदानभूतमहालक्ष्मीसमावेशनद्वारा प्रतिगर्भबीजगर्भसमुद्भवैनोनिबर्हणजनकातिशयद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं स्त्रीसंस्काररूपं सीमन्तोन्नयनाख्यं कर्म करिष्ये ॥ तत्र निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणपतिपूजनं स्वस्तिपुण्याहवाचनम् अविघ्नपूजनं मण्डपस्थापनं मातृकापूजनं वसोर्धारा आयुष्यमन्त्रजपं नान्दीश्राद्धं च करिष्ये ॥ तत्र बहिःशालायां स्थण्डिले पञ्चभूसंस्कारपूर्वकं मङ्गलनामाग्नेः स्थापनम् ॥ ततो दक्षिणतो ब्रह्मासनादि आज्यासादनानन्तरं तण्डुलतिलमुद्गानां पृथक्पृथगासादनम् ॥ तत्र उपकल्पनीयानि ॥ मृदु पीठम् ॥ युग्मान्यौदुम्बरफलान्यपक्वान्येकस्तबकनिबद्धानि ॥ त्रयोदशपरिमाणकास्त्रयोदर्भपिञ्जुलाः ॥ श्येणी शलली ॥ वीरतरशङ्कुः ॥ (अश्वत्थो बैल्वः शारेपीको वा) पूर्णपात्रम् ॥ वीणागाथिनौ चेति ॥ आज्यनिर्वपणानन्तरं चरुपात्रे मुद्गप्रक्षेपं कृत्वाऽधिश्रयणम् ॥ ईषच्छृतेषु तिलतण्डुलप्रक्षेपः ॥ पर्यग्निकरणान्ते आघारावाज्यभागौ स्रुवेण जुहुयात् ॥ (मनसा) ॥ ॐप्रजापतये (स्वाहा) इदं प्रजापतये न मम ॥ ॐइन्द्राय स्वाहा इदम् इन्द्राय न मम ॥ ॐअग्नये स्वाहा इदम् अग्नये न मम ॥ ॐसोमाय स्वाहा इदं सोमाय न मम ॥ हस्ते अक्षतान्गृहीत्वा ॥ ॐअग्निर्नय० । ॐभूर्भुवः स्वः मङ्गलनाम्ने वैश्वानराय नमः गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि ॥ ततश्चरुमभिघार्य स्रुवेण चरुं जुहुयात् ॥ ॐप्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये न मम ॥ इति हुत्वा स्थालीपाकेनोत्तरार्द्धात्स्विष्टकृत् ॥ ॐअग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते न मम ॥ ततः आज्येन भूराद्या नवाहुतयः ॥ ॐभूः स्वाहा इदमग्नये न मम ॥ ॐभुवः स्वाहा इदं वायवे न मम ॥ ॐस्वः स्वाहा

१ अत्र पुण्याहवाचनान्ते धाता प्रीयतामिति वदेत् ।

इदं सूर्याय न मम ॥ ॐ त्वन्नोऽअग्ने० । इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम ॥ ॐ सत्वन्नोऽअग्ने० । इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम ॥ ॐ अयाश्चाग्ने० । इदमग्नये अयसे न मम ॥ ॐ ये ते शतं० ॥ इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम ॥ ॐ उदुत्तमं० ॥ इदं वरुणायादित्यायादितये च न मम ॥ ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये न मम ॥९॥ इति नवाहुतयः॥ ततः संस्रवप्राशनादि प्रणीताविमोकान्तं होमशेषं समाप्य ॥ ततोऽग्नेः पश्चाद्भद्रपीठनिधानम् ॥ तदुपरि गर्भवतीमुपवेशयेत् ॥ ततो युग्मेन सटालुग्रप्सेनौदुम्बरेण त्रिभिश्च दर्भपिञ्जुलैस्त्रेण्या शलल्या वीरतरशङ्कुना पूर्णचात्रेण चेत्येतैः सर्वैः पुञ्जीकृतैः सीमन्तं मूर्ध्नि विनयति भर्ता ॥ ततो विनयनम् ॥ ॐ भूर्विनयामि ॥१॥ ॐ भुवर्विनयामि ॥ २ ॥ ॐ स्वर्विनयामि ॥ ३ ॥ इति त्रिभिर्मन्त्रैस्त्रिर्विनयति ॥ तत औदुम्बरस्यादिपञ्चकस्य वेण्यां बन्धनम् ॥ ॐ अयमूर्जावतो वृक्षऽऊर्जीव फलिनी भव ॥ १ ॥ ततो भर्ता वीणागाथिनौ राजानऽसंगायेतामिति प्रैषमाह । ततश्च तौ सोत्साहौ गायेताम् ॥ स च गाथामन्त्रः–ॐ सोमऽएवनोराजेमामानुषीःप्रजाः ॥ अविमुक्तचक्रऽआसीरंस्तीरेतुभ्यमसाविति ॥ १ ॥ असौ स्थाने समीपावस्थितायाः नद्या नामग्रहणं स्त्र्येव करोति ॥ गङ्गायमुनेत्येवमादिप्रथमान्तम् ॥ कृतस्य कर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं स्मृत्युक्तान्दशसङ्ख्याकान् ब्राह्मणान्भोजयिष्ये ॥ तेन श्रीकर्माङ्गदेवताः प्रीयन्ताम् ॥ ब्राह्मणान् गन्धादिभिः सम्पूज्य तेभ्यश्च दक्षिणां दत्वा तेषाम् आशिषो गृहीत्वा अग्निं विसृज्य मातॄणां विसर्जनम् ॥ इति सीमन्तोन्नयनसंस्कारः ॥३॥

१ ललाटान्तरमारभ्य केशान्द्विधा करोति भर्ता

॥ १२३ ॥ अथ शीघ्रप्रसवोपायो यन्त्रञ्च ॥

हिमवत्युत्तरे पार्श्वे शबरीनाम यक्षिणी ॥ तस्या नूपुरशब्देन विशल्या स्यात्तु गर्भिणी स्वाहा ॥ इति मन्त्रेणैकविंशतिदूर्वाङ्कुरैरेकपलं तिलतैलं प्रदक्षिणमावर्तयन्नष्टशतं मन्त्रं जपित्वा सचैलं किंचित्पाययेच्छेषमुदरे लेपयेदिति ॥ अथ सुखप्रसवयन्त्रमप्युक्तं यन्त्रप्रकाशे—गजाग्निवेदा उडुराट्शराङ्का रसर्षिपक्षा इति हि क्रमेण ॥ लिखेत्प्रसूतेः समये गृहे वै सुखेन नार्यः प्रसवन्ति शीघ्रमिति ॥ इति सुखप्रसवयन्त्रम् ॥

८	१	६
३	५	७
४	९	२

॥ १२४ ॥ अथ जातकर्मसंस्कारप्रयोगः ॥ ४ ॥

वटुना सह यजमानो मङ्गलस्नातः आचम्य प्राणानायम्य ॥ सुमुखश्चेत्यादि० पठित्वा हस्ते जलमादाय अद्येत्यादि० अमुकवारान्वितायां मम अस्य कुमारस्य जातकर्मनामकर्मनिष्क्रमणान्नप्राशनचौलान्तानां संस्काराणां स्वस्वकाले अकरणजनितप्रत्यवायपरिहारार्थं अनादिष्टं प्रायश्चित्तं होष्ये ॥

॥ १२५ ॥ अथ अनादिष्टप्रायश्चित्तहोमः ॥

यजमानः एवं संकल्प (ग्रहयज्ञस्थंडिलात् दक्षिणे) द्वादशाङ्गुलपरिमिते प्रादेशमात्रे वा स्थण्डिले पञ्चभूसंस्कारपूर्वकम् अग्निं संस्थापयेत् । यथा—सुवासिन्या आनीतमग्निमाग्नेय्यां स्थापयित्वा ततः ॐ

---

१ श्रुत्वा पुत्रं जातमात्रं सचैलं स्नात्वा कुर्याज्जातकर्मास्य तातः ॥ यावन्न छिद्यते नालं तावन्नाप्नोति सूतकम् । छिन्ने नाले ततः पश्चात्सूतकं तु विधीयते ॥

२ यदि स्वस्वकाले क्रियते तदा प्रतिसंस्कारे आदौ गणपतिपूजनं पुण्याहवाचनं मातृकापूजनपूर्वकम् आभ्युदयिकं श्राद्धं विधेयम् । यदि कालान्तरे एकस्मिन् दिवसे क्रियते तदा पूर्वोक्तरीत्यापि मातॄणां पूजनम् आभ्युदयिकं श्राद्धं आदौ कर्तव्यं न पृथक् पृथक् ।

३ प्रतिसंस्कारं वाऽनादिष्टहोतव्यं चात्र मर्दापर्वसनादि ।

हुंफट् इति क्रव्यादांशं नैर्ऋत्यां परित्यज्य ॥ विद्नामानमग्निम् आवाहयामि स्थापयामि ॥ इति अग्निं संस्थाप्य ॥ आज्यं निरूप्य ॥ अधिश्रित्य ॥ स्रुवं प्रतप्य ॥ संमृज्य उद्वास्य उत्पूय अवेक्ष्य जुहुयात् ॥ ॐ भूः स्वाहा इदमग्नये न मम ॥ १ ॥ ॐ भुवः स्वाहा इदं वायवे न मम ॥ २ ॥ ॐ स्वः स्वाहा इदं सूर्याय न मम ॥ ३ ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः स्वाहा इदं प्रजापतये नमम ॥ ४ ॥ ॐ त्वन्नोऽअग्ने वरुणस्यविद्वान्देवस्यहेडोऽअवयासिसीष्ठाः। यजिष्ठोवह्नितमः शोशुचानोविश्वाद्वेषा ᳪ सिप्रमुमुग्ध्यस्मत्स्वाहा॥१॥इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम ॥ ५ ॥ ॐ सत्वन्नोऽअग्नेवमोभवोतीनेदिष्ठोऽअस्याऽउषसोव्युष्टौ ॥ अवयक्ष्वनोवरुण ᳪ रराणोवीहिमृडीक ᳪ सुहवोनऽएधिस्वाहा ॥१॥ इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम ॥ ६ ॥ ॐ अयाश्चाग्नेस्यनभिशस्तिपाश्चसत्यमित्वमयाऽअसि ॥ अयानोयज्ञंवहास्ययानोधेहिभेषज ᳪ स्वाहा ॥ इदमग्नये अयसे न मम ॥ ७ ॥ ॐ येते शतंवरुणयेसहस्रंयज्ञियाः पाशाविततामहान्तः ॥ तेभिर्नोऽअद्यसवितोतविष्णुर्विश्वेमुञ्चन्तुमरुतः स्वर्काःस्वाहा ॥ इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम ॥ ८ ॥ ॐ उदुत्तमंवरुणपाशमस्मदवाधमंविमध्यम ᳪ श्रथाय ॥ अथाव्वयमादित्यव्व्रतेतवानागसोऽअदितये स्याम स्वाहा ॥१२॥ इदं वरुणायादित्यायादितये च न मम ॥ ९ ॥ अनेन अनादिष्टप्रायश्चित्तहोमकृतेन मम अस्य कुमारस्य जातकर्मादि चौलान्तानां संस्काराणां कालातिक्रमदोषनिवृत्तिरस्तु ॥ जलमादाय—अद्येत्यादि० मम अस्य कुमारस्य जातकर्मस्वकालातिक्रमदोषपरिहारार्थं पादकृच्छ्ररूपप्रायश्चित्तं रजतप्रत्याम्नायद्वारा अहमाचरिष्ये ॥ अनेन

१ अत्र मन्त्रोपवेशनाद्यभावात् त्यागदानं न किन्तु पठनमेव ।

अनादिष्टप्रायश्चित्तकृतेन मम अस्य कुमारस्य जातकर्मस्वकालातिक्रमदोषनिवृत्तिपूर्वकजातकर्मकरणाधिकारसिद्धिरस्तु ॥ इति अनादिष्टप्रायश्चित्तहोमः ॥

अथ जातकर्मसंस्कारप्रयोगः ॥ यजमान आचम्य प्राणानायम्य अद्येत्यादि० मम अस्य कुमारस्य गर्भाम्बुपानजनितसकलदोषनिबर्हणायुर्मेधाभिवृद्धिबीजगर्भसमुद्भवैनोनिबर्हणद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं जातकर्माख्यं कर्म करिष्ये ॥ ॐअद्येत्यादि० ॥ मम अस्य कुमारस्य जातकर्मसंस्काराङ्गनिमित्तं प्राक् पञ्चोपचारैः गणपतिपूजनमहं करिष्ये ॥ ॐ गणानान्त्वा० । ॐभूर्भुवःस्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि ॥ इति संपूजयेत्॥ अनया पूजया सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतिः प्रीयताम्॥ ततः अनामिकया सुवर्णान्तर्हितया कांस्यपात्रे मधुघृतं एकीकृत्य वा केवलं कुमारं प्राशयति ॥ ॐ भूस्त्वयि दधामि ॥ ॐ भुवस्त्वयि दधामि ॥ ॐ स्वस्त्वयि दधामि ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः सर्वं त्वयि दधामि ॥ इति मन्त्रेण सकृत्प्राशयति वा प्रणवमन्त्रेण प्राशयति॥ इति मेधाजननम् ॥

अथायुष्यकरणं करोति तद्यथा ॥ कुमारस्य नाभिसमीपे दक्षिणकर्णसमीपे वा अग्निरायुष्मानित्यादिमन्त्रान् जपति । यथा—ॐ अग्निरायुष्मान्स वनस्पतिभिरायुष्मांस्तेन त्वायुषायुष्मन्तं करोमि ॥ ॐ सोमऽआयुष्मान्सऽओषधिभिरायुष्मांस्तेन त्वायुषायुष्मन्तं करोमि ॥ ॐ ब्रह्मायुष्मत्तद्ब्राह्मणैरायुष्मत्तेन त्वायुषायुष्मन्तं करोमि ॥ ॐदेवाऽआयुष्मन्तस्तेऽमृतेनायुष्मन्तस्तेन त्वायुषायुष्मन्तं करोमि ॥ ॐऋषयऽआयुष्मन्तस्ते व्रतैरायुष्मन्तस्तेन त्वायुषायुष्मन्तं करोमि ॥ ॐपितरऽआयुष्मन्तस्ते स्वधाभिरायुष्मन्तस्तेन त्वायुषायुष्मन्तं करोमि ॥ ॐ

---

१ इदं नालच्छेदनात्प्राक् न इति चेत्सालंतरे न भवत्येव ।

यज्ञऽआयुष्मान्स दक्षिणाभिरायुष्मांस्तेन त्वायुषायुष्मन्तं करोमि ॥
ॐ समुद्रऽआयुष्मान्स स्रवन्तीभिरायुष्माँस्तेन त्वायुषायुष्मन्तं करोमि ॥
(इत्येतावत्पर्यन्तम् अग्निरायुष्मानित्याद्यारभ्य त्रिर्जपति ॥) तत
त्र्यायुषमिति च त्रिर्जपेत् ॥ ॐ त्र्यायुषञ्जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम् ॥
यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषम् ॥ इति त्रिः ॥ ६२/३ ॥ पिता यदि
कामयेदयं कुमारः सर्वमायुरियादिति तदा कुमारं दिवस्परीत्येकादश-
भिः ऋग्भिरभिमृशेत् ॥ ॐ दिवस्परि प्रथमं जज्ञेऽअग्निरस्मद्द्वि-
तीयं परि जातवेदाः ॥ तृतीयमप्सु नृमणाऽअजस्रमिन्धानऽएनं जरते
स्वाधीः ॥ १ ॥ १२/१८ ॥ विद्मा तेऽअग्ने त्रेधा त्रयाणि विद्मा ते धाम विभृता
पुरुत्रा ॥ विद्मा ते नाम परमं गुहा यद्विद्मा तमुत्सं यतऽआजगन्थ ॥ २ ॥
समुद्रे त्वा नृमणाऽअप्स्वन्तर्नृचक्षाऽईधे दिवोऽअग्नऽऊधन् ॥ तृतीये
त्वा रजसि तस्थिवांसमपामुपस्थे महिषाऽअवर्धन् ॥ ३ ॥ अक्रन्दद-
ग्निः स्तनयन्निव द्यौः क्षामा रेरिहद्वीरुधः समञ्जन् ॥ सद्यो जज्ञानो वि ही-
मिद्धोऽअख्यदा रोदसी भानुना भात्यन्तः ॥ ४ ॥ श्रीणामुदारो धरुणो
रयीणां मनीषाणां प्रार्पणः सोमगोपाः ॥ वसुः सूनुः सहसोऽअप्सु रा-
जा वि भात्यग्रऽउषसामिधानः ॥ ५ ॥ विश्वस्य केतुर्भुवनस्य गर्भऽ
आ रोदसीऽअपृणाज्जायमानः ॥ वीडुं चिदद्रिमभिनत्परायञ्जना यदग्नि-
मयजन्त पञ्च ॥ ६ ॥ उशिक्पावकोऽअरतिः सुमेधा मर्त्येष्वग्निरमृ-
तो नि धायि ॥ इयर्ति धूममरुषं भरिभ्रदुच्छुक्रेण शोचिषा द्यामिनक्षन्
॥ ७ ॥ दृशानो रुक्मऽउर्व्या व्यद्यौद्दुर्मर्षमायुः श्रिये रुचानः ।
अग्निरमृतोऽअभवद्वयोभिर्यदेनं द्यौरजनयत्सुरेताः ॥ ८ ॥ यस्तेऽ-
अद्य कृणवद्भद्रशोचेऽपूपं देव घृतवन्तमग्ने ॥ प्र तं नय प्रतरं वस्योऽअ-
च्छाभि सुम्नं देवभक्तं यविष्ठ ॥ ९ ॥ आ तं भज सौश्रवसेष्वग्नऽउक्थउक्थऽ

उंक्वथुऽआभंजशस्यमानेे॥प्रिय ९ सूर्ये प्रियोऽअग्नाभवाद्युज्जातेनंभिनदुज्जनिंत्वैः॥१०॥स्वामंग्नेयजमानाऽअनुद्यून्विश्वावसुंदधिरेवार्याणि॥ स्वयांसहद्रविणमिच्छमानाव्रजङ्नेमन्तमुशिजोविवव्रुः॥११॥ $\frac{२८}{१२}$॥

ततः कर्ता बालस्य पूर्वादिचतुर्ष्वपु दिक्षु चतुरो ब्राह्मणान् चैकं मध्ये नैर्ऋत्ये वाऽवस्थाप्य तान्प्रति इममनुप्राणेत्यादि प्रैषं ब्रूयात् ॥ ततस्ते प्रेषिताः पूर्वादिक्रमेण कुमारं लक्ष्यीकृत्य प्राणेत्यादि ब्रूयुः ॥ एवं प्रैषानुप्रैषं सर्वत्र ॥ यथा–इममनुप्राण । प्राण इति पूर्वः ॥ इममनुव्यान । व्यानेति दक्षिणः ॥ इममन्वपान । अपानेति अपरः ॥ इममनूदान । उदानेत्युत्तरः ॥ इममनुसमान ॥ समानेति पंचमः उपरिष्टादवेक्षमाणो ब्रूयात् ॥ (अविद्यमानेषु विप्रेषु स्वयमेव पूर्वादिदिशं परिक्रम्य प्राणेत्यादि ब्रूयात् ॥ नात्र प्रैषः ॥) स बालो यस्मिन्भूभागे जातो भवति तमभिमन्त्रयते ॥ ॐ वेदतेभूमिहृदयन्दिविचन्द्रमसिश्रितम् ॥ वेदाहन्तन्मान्तद्विद्यात्पश्येमशरदःशतञ्जीवेमशरदः शत ꣳ शृणुयामशरदः शतम् ॥ अथैनं शिशुमभिमृशति ॥ ॐ अश्मा भव परशुर्भव हिरण्यमस्तुतम्भव ॥ आत्मा वै पुत्रनामासि स जीव शरदः शतम् ॥ हस्ते जलमादाय– कृतस्य जातकर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थं स्मृत्युक्तान् दशसंख्याकान् ब्राह्मणान् भोजयिष्ये तेन श्रीकर्माङ्गदेवताः प्रीयन्ताम्॥ लम्बोदरनम०॥ यथाशक्त्या जातकर्मसंस्कारविधेः परिपूर्णताऽस्तु ॥ अस्तु परिपूर्णता ॥

॥ इति जातकर्मसंस्कारप्रयोगः ॥ ४ ॥

॥ १२६ ॥ अथ षष्ठीपूजनप्रयोगः ॥

आचम्य प्राणानायम्य । हस्ते जलमादाय–अद्येत्यादि० अनयोः सूतिकाबालकयोः आरोग्याभिवृद्ध्यर्थं सकलारिष्टशांतिद्वारा श्री-

परमेश्वरप्रीत्यर्थं विघ्नेशस्य जन्मदायाः षष्ठीदेव्या जीवन्तिकायाश्च यथा-मिलितोपचारैः पूजनं करिष्ये ॥ एतत्प्रतिमाः (कुंकुमादिना कुड्ये लेखनीयाः) पीठादौ वाऽक्षतपुञ्जेषु पूगीफलेषु विनिवेश्याः ॥ हस्ते अक्षतान् गृहीत्वा॥विघ्नेश इहागच्छ इहतिष्ठ विघ्नेशाय नमःविघ्नेशमावाहयामि स्था० ॥१॥ जन्मदे इहा०जन्मदायै०जन्मदामावा०स्था०॥२॥ षष्ठीदेवि इहा० षष्ठीदेव्यै० षष्ठीदेवीमावा० स्था०॥३॥जीवन्तिके इहा०जीवन्तिकायै० जीवन्तिकामावा०स्था०॥४॥ॐ मनोजूति० मंत्रेण प्रतिष्ठां कृत्वा "विघ्नेश-जन्मदाषष्ठीदेवीजीवन्तिकाभ्यो नमः" इति मूलमंत्रेण षोडशोपचारैः पूजनं कुर्यात् ॥प्रार्थना–षष्ठीदेवि नमस्तुभ्यं सूतिकागृहशालिनि । पूजिता परमा भक्त्या दीर्घमायुः प्रयच्छ मे ॥ १ ॥ जननी जन्मसौख्यानां वर्धिनी धनसंपदाम् । साधिनी सर्वभूतानां जन्मदे त्वां नता वयम्॥२॥ गौरीपुत्रो यथा स्कंदः शिशुत्वे रक्षितः पुरा ॥ तथा ममाप्ययं बालं षष्ठिके रक्ष ते नमः ॥ ३ ॥ सर्वविघ्नानपाकृत्य सर्वसौख्यप्रदायिनि ॥ जीवन्तिके जगन्मातः पाहि नः परमेश्वरि ॥ ४ ॥ इति संप्रार्थ्य ॥ अनया पूजया विघ्नेशजन्मदाषष्ठीदेवीजीवन्तिकाः प्रीयन्ताम् । ततः सूतिकागृहे सोपस्करं बलिं दद्यात् । बलिद्रव्याय नमः गंधं पुष्पं समर्पयामि । (जलं गृहीत्वा) क्षेत्रस्याधिपते देवि सर्वारिष्ट-विनाशिनि । बलिं गृहाण मे रक्ष क्षेत्रं सूतिं च बालकम् ॥ १ ॥ इमं सोपस्करबलिं क्षेत्राधिपत्यै देव्यै नमः समर्पयामि । ततः "खड्गदेवताः" अक्षतपुंजेषु आवाहयेत् । तद्यथा–राकायै० राकामावा०॥१॥ अनुमत्यै० अनुमतिमावा० ॥२॥ सिनीवाल्यै० सिनीवालीमावा०॥३॥ कुह्वै० कुहूमावा०॥ ४ ॥ वातघ्न्यै० वातघ्नीमावा० ॥ ५ ॥ इत्यावाह्य प्रतिष्ठां कृत्वा । "राकाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः" इति मूलमंत्रेण पंचो-

पचारैः संपूज्य । जलमादाय । अनेन पंचोपचारैः पूजनाख्येन कर्मणा राकाद्यावाहितदेवताः प्रीयन्ताम् । ततो बहिरागत्य द्वारस्योभयतः कज्जलेन द्वे द्वे मातरौ लिखेत् ॥ तासां नामानि । धिषणा वृद्धिमाता च तथा गौरी च पूतना । आयुर्दात्र्यो भवन्त्वेता अद्य बालस्य मे शिवाः॥ "धिषणादिचतसृमातृभ्यो नमः" इति मंत्रेण पंचोपचारैःसंपूज्य। हस्ते जलमादाय । अनया पूजया धिषणादिचतस्रमातरः प्रीयन्ताम् ॥ कृतस्य षष्ठीपूजनकर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थं यथाशक्ति सुवासिनीः भोजयिष्ये । विप्रेभ्यश्च खाद्यतांबूलदक्षिणादिकं दद्यात् । तेभ्य आशिषो गृह्णीयात् । दशमदिने षष्ठीदेवतादिविसर्जनम् ॥ इति षष्ठीपूजाविधिः ॥

॥ १२७ ॥ अथ नामकर्मसंस्कारप्रयोगः ॥ ५ ॥

आचम्य प्राणानायम्य ॥ सुमुखश्चेत्यादि० अद्येत्यादि० । मम अस्य कुमारस्य नामकरणस्य स्वकालाकृतजनितदोषप्रत्यवायपरिहारार्थं पादकृच्छ्ररूपं प्रायश्चित्तं रजतप्रत्याम्नायद्वारा अहमाचरिष्ये ॥ अनेन पादकृच्छ्ररूपप्रायश्चित्तकृतेन मम अस्य कुमारस्य नामकरणस्वकालातिक्रमदोषनिवृत्तिपूर्वकं नामकरणसंस्कारकरणे अधिकारसिद्धिरस्तु ॥ पुनर्जलमादाय-मम अस्य कुमारस्य [1]नामकर्मणि अधिकारार्थं सूत्रोक्तान् त्रिभ्योऽधिकान् ब्राह्मणान् यथाकाले भोजयिष्ये ॥ तेन ममास्य कुमारस्य नामकर्मण्यधिकारसिद्धिरस्तु ॥ अद्येत्यादि० मम अस्य शिशोः बीजगर्भसमुद्भवैनोनिबर्हणायुरभिवृद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं नामकरणसंस्काराख्यं कर्म करिष्ये ॥ तदङ्गत्वेन गणपतेः "महागणपतये नमः" इति पञ्चोपचारैः पूजनमहं करिष्ये इति संकल्प्य गणेशस्य पञ्चोपचारैः पूजनं कुर्यात् वा ॐ गणानान्त्वा० । इति

---

१ दशरात्रे व्युष्टे नामकरणमिति ।

मन्त्रेण सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि इति पूजनम् ॥ ततः शिष्टाचारात्कांस्यपात्रे तंडुलान् प्रसार्य तदुपरि सुवर्णशलाकया गणपतिस्वकुलदेवताभक्तनामलेख्यम् ॥ ततो मासनाम लेख्यम् ॥ ततो ज्योतिःशास्त्रोक्तावकहडाचक्रानुसारेण नक्षत्रनाम लेख्यम् ॥ ततो व्यवहारनाम लेख्यम् ॥ अद्येत्यादि० ममास्य शिशोः वह्वायुष्यप्राप्त्यर्थं नामदेवतापूजनमहं करिष्ये ॥ इति संकल्प्य । ॐमनोजूतिरिति नामदेवतायाः प्रतिष्ठा कार्या ॥ ततः ॐभूर्भुवःस्वः "नामदेवतायै नमः" इति नाममन्त्रेण आवाहनम् आसनं पाद्यम् अर्घ्यम् आचमनीयं स्नानं वस्त्रं यज्ञोपवीतं गंधपुष्पधूपदीपनैवेद्यफलतांबूलं हिरण्यदक्षिणां प्रदक्षिणां नमस्कारान्मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि इति वा पंचोपचारैः संपूजयेत् ॥ अनया पूजया नामदेवता प्रीयतां न मम ॥ ततः स्वदक्षिणतो मातुरुत्सङ्गस्थस्य शिशोर्दक्षिणकर्णे कथयति ॥ हे कुमार ! त्वं गणपतिभक्तोऽसि । सर्वान्ब्राह्मणान् अभिवादय ॥ अभिवादयामि ॥ आयुष्मान्भव सौम्य ॥ हे कुमार ! त्वं कुलदेव्या भक्तोऽसि । सर्वान्ब्राह्मणान् अभिवादय ॥ अभिवादयामि ॥ आयुष्मान्भव सौम्य ॥ हे कुमार ! त्वं मासनाम्ना अमुकशर्मासि । सर्वान्ब्राह्मणान अभिवादय ॥ अभिवादयामि ॥ आयुष्मान्भव सौम्य ॥ हे कुमार ! त्वं नक्षत्रनाम्ना अमुकशर्मासि । सर्वान्ब्राह्मणान अभिवादय॥अभिवादयामि॥आयुष्मान्भव सौम्य॥हे कुमार ! त्वं व्यवहारनाम्ना अमुकशर्मासि । सर्वान्ब्राह्मणान् अभिवादय ॥ अभिवादयामि ॥ आयुष्मान्भव सौम्य ॥ (ततो विप्राः वेदोसीति मंत्रेणाशिषं

१ कृष्णोऽनन्तोऽच्युतश्चक्री वैकुंठोऽथ जनार्दनः॥ उपेन्द्रो यज्ञपुरुषो वासुदेवस्तथा हरिः॥ योगीशः पुंडरीकाक्षो मासनामान्यनुक्रमात् ॥ चैत्रादिक्रमतो मार्गशीर्षादिक्रमतो वा मासनाम लेख्यम् ॥

शिशवे दद्युः) ॐ वेदोसि येन त्वं देव वेद देवेभ्यो वेदो भवस्तेन मह्यं वेदो भूयाः ॥ ३१/२ ॥ मनोजूतिरिति प्रतिष्ठा कार्या ॥ ॐ मनोजूतिर्जु० । एष वै प्रतिष्ठा नाम यज्ञो यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते सर्वमेव प्रतिष्ठितं भवति ॥ अमुकनाम्ना प्रतिष्ठितं भवतु ॥ हे कुमार सर्वान्ब्राह्मणान् अभिवादय । अभिवादयामि ॥ आयुष्मान्भव सौम्य ॥ अथैनमभिमृशति ॥ ॐ अश्मा भव परशुर्भव हिरण्यमस्तृतं भव । आत्मा वै पुत्रनामासि स जीव शरदः शतम् ॥ कृतस्य नामकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं स्मृत्युक्तान्दशसंख्याकान्ब्राह्मणान् यथाकाले यथासंपन्नेनान्नेनाहं भोजयिष्ये तेन कर्मांगदेवता प्रीयतां न मम ॥ लम्बोदर नमस्तुभ्यं० ॥ यथाशक्त्या नामकरणविधेः परिपूर्णताऽस्तु ॥ अस्तु परिपूर्णता ॥ इति नामकरणसंस्कारप्रयोगः ॥ ५ ॥

॥ १२८ ॥ अथ निष्क्रमणसंस्कारप्रयोगः ॥ ६ ॥

आचम्य प्राणानायम्य ॥ अद्येत्यादि० मम अमुकशर्मणः सुतस्य निष्क्रमणस्य स्वकालेऽकृतजनितदोषप्रत्यवायपरिहारार्थं पादकृच्छ्ररूपप्रायश्चित्तं रजतप्रत्याम्नायद्वाराऽहमाचरिष्ये ॥ अनेन पादकृच्छ्ररूपप्रायश्चित्तकृतेन मम अमुकशर्मणः सुतस्य निष्क्रमणकाले अकृतनिष्क्रमणसंस्कारजनितदोषनिवृत्तिपूर्वकनिष्क्रमणसंस्कारकर्मण्यधिकारसिद्धिरस्तु ॥ अद्येत्यादि० मम सुतस्य बीजगर्भसमुद्भवैनोनिबर्हणायुःश्रीवृद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं गृहनिष्क्रमणसंस्काराख्यं कर्माहं करिष्ये ॥ तदंगतया विहितं महागणपतेः पंचोपचारैः पूजनमहं करिष्ये ॥ ॐ गणानान्त्वा० । महागणपतये नमः सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि इति पूजनम् ॥ ततः पिता मातृगृहीतमलंकृतकुमारं सवा-

---

१ पारस्करः—चतुर्थे मासि निष्क्रमणम् ।

यद्योषं गृहाद्बहिरानीय सूर्यमुदीक्षयति ॥ ॐ तच्चक्षुर्देवहितंपुरस्ताच्छु-क्रमुच्चरत् ॥ पश्येमशरदः शतञ्जीवेमशरदः शत ँ शृणुयामशरदः श-तम्प्रब्रवामशरदः शतमदीनाः स्यामशरदः शतम्भूयश्चशरदः शतात् ॥ $\frac{36}{24}$ ॥ भूर्भुवः स्वः सवित्रे सूर्यनारायणाय नमः सर्वोपचारार्थे गंधाक्षतपु-ष्पाणि समर्पयामि इति सूर्यं पूजयेत् ॥ कृतस्य निष्क्रमणसाङ्गतासिद्ध्यर्थं स्मृत्युक्तान् दशसंख्याकान् ब्राह्मणान् यथाकाले यथासंपन्नेनान्नेनाहं भोजयिष्ये तेन कर्मांगदेवता प्रीयतां न मम ॥ लम्बोदर नमस्तुभ्यं० । यथाशक्ति निष्क्रमणविधेः परिपूर्णताऽस्तु । अस्तु परिपूर्णता ॥

॥ इति निष्क्रमणसंस्कारप्रयोगः ॥ ६ ॥

॥ १२९ ॥ अथ अन्नप्राशनसंस्कारप्रयोगः ॥ ७ ॥

आचम्य प्राणानायम्य॥सुमुखश्चैक० इत्यादि पठित्वा॥अद्येत्यादि० मम सुतस्य अन्नप्राशननियतकालातिक्रमदोषप्रत्यवायपरिहारार्थं पादकृच्छ्र-रूपप्रायश्चित्तरजतप्रत्याम्नायद्वाराऽहमाचरिष्ये॥ अनेन पादकृच्छ्ररूपप्रा-यश्चित्तकृतेन मम सुतस्य अन्नप्राशननियतकालातिक्रमदोषनिवृत्तिपूर्वक-मन्नप्राशनसंस्कारकर्मण्यधिकारसिद्धिरस्तु ॥ अद्येत्यादि० मम सुतस्य मातृगर्भमलप्राशनविशुद्ध्यर्थम् अन्नाद्यब्रह्मवर्चसतेजइन्द्रियायुर्बललक्ष-णफलसिद्ध्यर्थं बीजगर्भसमुद्भवैनोनिबर्हणद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थम् अन्नप्राशनसंस्काराख्यं कर्माहं करिष्ये ॥ तदङ्गतया महागणपतेः पंचोप-चारैः पूजनमहं करिष्ये ॥ ॐ गणानान्त्वा० ।महागणपतये नमः सर्वोपचा-रार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणिस० । इति गणेशपूजनं कार्यम् ॥ ततः स्थंडिले पंचभूसंस्कारपूर्वकमग्नेः स्थापनं कुर्यात् ॥ ततो दक्षिणतो ब्रह्मासनादि

१ पारस्कर --षष्ठे मासेऽन्नप्राशनम् ।

पवित्रयोः प्रणीतासु निधानान्तं कर्म कृत्वा ॥ दक्षिणं जान्वाच्य ब्रह्मान्वारब्धः स्रुवेण होमं कुर्यात् ॥ तूष्णीं (ॐ प्रजापतये स्वाहा) (त्यागः) इदं प्रजापतये न मम ॥ ॐ इन्द्राय स्वाहा इदम् इन्द्राय न मम ॥ ॐ अग्नये स्वाहा इदमग्नये न मम ॥ ॐ सोमाय स्वाहा इदं सोमाय न मम ॥ हस्ते अक्षतान्गृहीत्वा ॥ ॐ अग्नेनयं० ॥ ॐ शुचिनाम्ने वैश्वानराय नमः सर्वोपचारार्थे गंधाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि ॥ ततः आज्याहुतिद्वयं दद्यात् ॥ (षष्ठे मासेन्नप्राशनꣳस्थालीपाकꣳश्रपयित्वाज्यभागावि-ष्ट्वाज्याहुतीर्जुहोति) ॥ ॐ देवींवाचमजनयन्तदेवास्तांविश्वरूपाꣳपशवोव-दन्ति ॥ सानोमन्द्रेषमूर्ज्जंदुहानाधेनुर्वागस्मानुपसुष्टुतैतुस्वाहा ॥ इदं वाचे न मम ॥ १ ॥ ॐ देवींवाचमजनयन्तदेवास्तांविश्वरूपाꣳ पशवोव-दन्ति ॥ सानोमन्द्रेषमूर्ज्जंदुहाना धेनुर्वागस्मानुपसुष्टुतैतु ॥ ॐ वाजोनोऽअद्यप्रसुवातिदानंवाजोदेवाँ२ऽऋतुभिः कल्पयाति ॥ वाजोहिमासर्व-वीरंजजानविश्वाऽआशावाजपतिर्जयेयꣳस्वाहा ॥ २$\frac{33}{92}$ ॥ इदं देव्यै वाचे वाजाय च न मम ॥ ततः स्थालिपाकेन चतस्र आहुतयः ॥ ॐ प्राणेनान्नमशीय स्वाहा इदं प्राणाय न मम ॥ १ ॥ ॐ अपानेन गंधानशीय स्वाहा इदमपानाय न मम ॥ २ ॥ ॐ चक्षुषा रूपाण्यशीय स्वाहा इदं चक्षुषे न मम ॥ ३ ॥ ॐ श्रोत्रेण यशोशीय स्वाहा इदं श्रोत्राय नमम ॥ ४ ॥ चरुशेषेण स्विष्टकृत् ॥ ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते न मम ॥ ततो भूराद्या नवाहुतयः । ॐ भूः स्वाहा इदमग्नये न मम ॥ १ ॥ ॐ भुवः स्वाहा इदं वायवे नमम ॥ २ ॥ ॐ स्वः स्वाहा इदं सूर्याय नमम ॥ ३ ॥ ॐ त्वन्नोऽअग्ने० । स्वाहा इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम ॥ ४ ॥ ॐसत्वन्नोऽअग्ने० । स्वाहा इदमग्नी-वरुणाभ्यां न मम ॥ ५ ॥ ॐ अयाश्चाग्ने० । स्वाहा इदमग्नये अयसे

न मम ॥ ६ ॥ ॐ येतेशतं० । स्वाहा इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम ॥७॥ ॐ उदुत्तमं वरुण०। स्वाहा इदं वरुणायादित्यायादितये च न मम ॥८॥ ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये नमम ॥९॥ संस्रवप्राशनम् पवित्राभ्यां मार्जनम् ॥ अग्नौ पवित्रप्रतिपत्तिः ॥ ब्रह्मणे पूर्णपात्रदानम् ॥ कृतस्य अन्नप्राशनाख्यस्य कर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थं ब्रह्मन् अयं ते वरः ॥ प्रतिगृह्यताम् ॥ पश्चिमे प्रणीताविमोकः॥ आपःशिवा०।(प्राशनान्ते सर्वान् रसान् सर्वमन्नमेकतः उद्धृत्याथैनं प्राशयेत् ।।)ततः कटुक्षारतिक्तकषायमधुराम्लानि सर्वान्नानि शाल्यादीनि च यथासंभवं कांस्यपात्रे एकीकृत्य सकृदेव "हंत" इतिमंत्रेण कुमारं प्राशयेत् ॥"ॐ हंत"॥ ततः कुमारं भूमौ उपवेश्य तदग्रे पुस्तकशस्त्रहिरण्यवस्त्रादिशिल्पानि विन्यस्य जीविकापरीक्षां कुर्यात् ॥ शिशुः स्वेच्छया यत्प्रथमं स्पृशेत् साऽस्य जीविकेति विद्यात् ॥ ततो ब्राह्मणभोजनम् ॥ कृतस्य अन्नप्राशनाख्यस्य कर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थं स्मृत्युक्तान्दशसंख्याकान् ब्राह्मणान् यथाकाले यथासंपन्नेनान्नेनाहं भोजयिष्ये॥ तेन कर्मांगदेवता प्रीयतां न मम ॥ लम्बोदर नमस्तुभ्यं०॥ यथाशक्त्या अन्नप्राशनविधेः परिपूर्णताऽस्तु ॥ अस्तु परिपूर्णता ॥

॥ इति अन्नप्राशनसंस्कारप्रयोगः ॥ ७ ॥

॥ १२० ॥ अथ चौलसंस्कारप्रयोगः ॥ ८ ॥

आचम्य प्राणानायम्य ॥ सुमुखश्चेत्यादि पठित्वा ॥ अद्येत्यादि०

---

१ कुंवारनो गळ, मीठुं, आमली, मरी, हलधर, साकर. २ पुस्तक, शस्त्र, हिरण्य, वस्त्र, लेखिनी । ३ सांवत्सरिकस्य चूडाकरणम् ॥(द्वितीये वर्षे इत्यर्थः॥)तृतीयं वा प्रतिहते॥ (अथवा तृतीये संवत्सरे अपूर्णे चूडाकरणं कुर्यात्) यथा मङ्गलं वा सर्वेषाम् ॥ अथवा यथाकुलाचारं पञ्चमेऽब्दे वा उपनीत्या वा सह क्रियते तथा व्यवस्था ॥

मम सुतस्य चौलसंस्कारस्य स्वकालातिक्रमदोषमत्यवायपरिहारार्थम् अर्धकृच्छ्ररूपं प्रायश्चित्तं रजतप्रत्याम्नायद्वारा अहमाचरिष्ये ॥ अनेन अर्धकृच्छ्ररूपप्रायश्चित्तकृतेन मम अमुकशर्मणः सुतस्य चौलसंस्कारकर्मण्यधिकारसिद्धिरस्तु ॥ अद्येत्यादि० मम सुतस्य चौलसंस्कारकर्मण्यधिकारार्थं सूत्रोक्तान् त्रिभ्योऽधिकान् ब्राह्मणान् यथाकाले यथासंपन्नेनान्नेनाहं भोजयिष्ये ॥ अद्येत्यादि० मम सुतस्य बीजगर्भसमुद्भवैनोनिवर्हणेन बलायुर्वर्चोभिवृद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं चौलसंस्काराख्यं कर्म करिष्ये ॥ तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं श्रीमहागणपतेः पञ्चोपचारैः पूजनं करिष्ये ॥ "महागणपतये नमः" सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि स० ॥ इति पूजयेत् ॥ ततो बहिःशालायां स्थण्डिले पञ्चभूसंस्कारपूर्वकं सभ्यनामाग्नेः स्थापनम् ॥ (माता कुमारमादायाप्लाव्याहते वाससी परिधाप्याङ्के आधाय पश्चादग्नेरुपविशति ॥) ततो दक्षिणतो ब्रह्मासनमास्तीर्येत्यादि चरुवर्जं पात्रासादनान्तं कुर्यात् ॥ पात्रासादनानन्तरम् उपकल्पनीयानि ॥ शीतोदकम् ॥ उष्णोदकम् ॥ नवनीतपिण्डो घृतपिण्डो दधिपिण्डो वा ॥ श्येणी शलली ॥ साग्राणि सप्तविंशतिकुशतरुणानि ॥ ताम्रपरिष्कृत आयसः क्षुरः ॥ आनडुहगोमयपिण्डः ॥ नापितः वरश्चेति ॥ पवित्रीकरणादि पवित्रयोः प्रणीतासु निधानम् ॥ दक्षिणं जान्वाच्य ब्रह्मान्वारब्ध आघारावाज्यभागौ जुहुयात् ॥ (तूष्णीं) (ॐ प्रजापतये स्वाहा) इदं प्रजापतये न मम ॥ १ ॥ ॐ इन्द्राय स्वाहा इदमिन्द्राय न मम ॥ २ ॥ ॐ अग्नये स्वाहा इदमग्नये न मम ॥ ३ ॥ ॐ सोमाय स्वाहा इदं सोमाय न मम ॥४॥ हस्ते अक्षतान्गृहीत्वा ॥ ॐ अग्नेनय सुपथा० । चौले सभ्यनाम्ने वैश्वानराय नमः गंधाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि ॥ ततो

भूरादिनवाहुतयः ॥ ॐ भूः स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ १ ॥ ॐ भुवः स्वाहा इदं वायवे नमम ॥ २ ॥ ॐ स्वः स्वाहा इदं सूर्याय नमम ॥ ३ ॥ ॐ त्वन्नोऽअग्ने० । स्वाहा इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम ॥ ४ ॥ ॐ सत्त्वन्नोऽअग्ने० । स्वाहा इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम ॥ ५ ॥ ॐ अयाश्चाग्ने० । स्वाहा इदमग्नये अयसे न मम ॥ ६ ॥ ॐ येतेशतं० । स्वाहा इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम ॥ ७ ॥ ॐ उदुत्तमंव० । स्वाहा इदं वरुणायादित्यायादितये च न मम ॥ ८ ॥ ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये न मम ॥ ९ ॥ एवं नवाहुतीर्हुत्वा स्विष्टकृतादिकं कुर्यात् ॥ ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते न मम ॥ संस्रवप्राशनम् ॥ पवित्राभ्यां मार्जनम् ॥ अग्नौ पवित्रप्रतिपत्तिः ॥ ब्रह्मणे पूर्णपात्रदानम् ॥ ब्रह्मन् पूर्णपात्रम् अयं ते वरः प्रतिगृह्यताम् । एवं आचार्याय पूर्णपात्रं दत्वा पश्चिमे प्रणीताविमोकः तज्जलेन च मार्जनम् ॥ आपः शिवा० ॥ ततः अद्येत्यादि० अस्य कुमारस्य चूडाकर्मकर्तुमधिकारार्थं दक्षिणगोदानं मुण्डनं च करिष्ये ॥ तत एकस्मिन्पात्रे शीतास्वप्सूष्णाऽअप आसिंचति ॥ ॐ उष्णेन वायउदकेनेह्यदिते केशान्वप ॥ अथात्र नवनीतपिंडं घृतपिंडं दध्नो वा पिंडं प्रास्यति ॥ ततः उदकमादाय दक्षिणगोदानमुंदति ॥ ॐ सवित्राप्रसूतादैव्याऽआपऽउन्दन्तुतेतनूम् ॥ दीर्घायुत्वायवर्चसे ॥ ततस्त्र्येण्या शलल्या केशान् विनीय ॥ त्रीणि कुशतरुणान्यंतर्दधाति ॥ ओषधेत्रायस्वस्वधितेमैनꣳहिꣳसीः ॥ शिवोनामेतिलोहक्षुरमादधाति ॥ ॐ शिवोनामासिस्वधितिस्तेपितानमस्तेऽअस्तुमामाहिꣳसीः ॥ निवर्तयामीति मंत्रेण केशकुशक्षुरसंलग्नीकरणम् ॥ निवर्त्तयाम्म्यायुषेन्नाद्यायप्प्रजननायरायस्पोषायसुप्प्रजास्त्वायसुवीर्य्या–

य ॥ ६३/३ ॥ ततः छेदनम् ॥ छेदनमंत्रः ॥ ॐ येनावपत्सविताक्षुरेणसोमस्यराज्ञोवरुणस्याविद्वान् ॥ तेनब्रह्मणोवपते दमस्यायुष्यंजरदष्टिर्यथासम् ॥ अनेन सकेशानि कुशतरुणानि प्रच्छिद्यानडुहे गोमयपिंडे प्रास्यत्यग्नेरुत्तरतो ध्रियमाणे ॥ १ ॥ एवं द्विरपरं तूष्णीम् ॥ तद्यथा-उन्दनम् । विनयनम्॥त्रिकुशतरुणान्तर्धानम्।क्षुरग्रहणम्।संलग्नीकरणम्। छेदनम्॥ आनडुहे गोमयपिंडे प्रासनम् ॥२॥ पुनः उन्दनम् ॥ विनयनम् ॥ त्रिकुशतरुणान्तर्धानम् ॥क्षुरग्रहणम् ॥ संलग्नीकरणम् ॥ छेदनम् ॥ आनडुहगोमयपिंडे प्रासनम् ॥ ३ ॥ इति दक्षिणगोदानम् ॥ पुनर्जलमादाय-अस्य कुमारस्य चूडाकर्मकर्तुमाधिकारार्थमुत्तरगोदानं मुंडनं च करिष्ये ॥ उन्दनम्—ॐसवित्राप्रसूतादैव्याऽआपऽउन्दन्तुतेतनूम् ॥ दीर्घायुत्वायबलाय वर्चसे ॥ त्रेण्या शलल्या विनयनम् ॥ ततः त्रिकुशतरुणान्तर्धानम् ॥ ॐ ओपधेत्रायस्वस्वधितेमैनꣳहिꣳसीः ॥ शिवोनामा० । इति लोहक्षुरमादाय । निर्वर्त्तयाम्म्या० । इति लोहक्षुरं केशानामुपरि निधाय केशच्छेदने मंत्रविशेषः ॥ ॐत्र्यायुषञ्जमदग्नेःकश्यपस्यत्र्यायुषम् ॥ यद्देवेषुत्र्यायुषन्तन्नोऽअस्तुत्र्यायुषम् ॥ ६२/३ ॥ एवं तूष्णीं वारद्वयम् ॥ यथा-उन्दनम्॥ विनयनम्॥ त्रिकुशतरुणान्तर्धानम्॥ क्षुरग्रहणम् ॥ संलग्नीकरणम् ॥ छेदनम् ॥ गोमयपिण्डे निधानम् ॥२॥ पुनः ॥ ३ ॥ इति पश्चिमगोदानम् ॥ हस्ते जलमादाय-अस्य कुमारस्य चूडाकर्म कर्तुमाधिकारार्थमुत्तरगोदानं मुण्डनं च करिष्ये ॥ ॐ सवित्रामसूतादैव्याऽआपऽउन्दन्तुतेतनूम्॥ दीर्घायुत्वायबलायवर्चसे॥ इति उन्दनम् ॥ त्र्येण्या शलल्या विनयनम् ॥ त्रिकुशतरुणान्तर्धानकरणम् ॥ ॐ ओपधेत्रायस्वस्वधिते मैनꣳहिꣳसीः ॥ शिवोनामा० । इति लोहक्षुरमादाय । निर्वर्त्तयाम्म्या० । इति लोहक्षुरं केशानामुपरि निधाय

केशच्छेदने मंत्रविशेषः ॥ ॐ येनभूरिश्चरादिवंज्योक्चपश्चाद्धिसूर्यम् ॥ तेनतेवपामिब्रह्मणाजीवातवेजीवनायसुश्लोक्यायस्वस्तये ॥ इति छेदनम् ॥ गोमयपिंडे प्रासनम् ॥ १ ॥ एवं तूष्णीं द्विरपरम् ॥ यथा पुन: उन्दनम् ॥ विनयनम् ॥ त्रिकुशतरुणान्तर्धानम् ॥ क्षुरग्रहणम् ॥ संलग्नीकरणम् ॥ छेदनम् ॥ गोमयपिण्डे प्रासनम् ॥ २ ॥ ३ ॥ इति उत्तरगोदानम् ॥ ततस्त्रिःक्षुरेण शिरःप्रदक्षिणं परिहरति ॥ ॐयत्क्षुरेणमज्जयतासुपेशसावप्तावावपति केशाञ्छिन्धिशिरोमास्यायुःप्रमोषीः ॥ इतिसकृन्मन्त्रेण द्विस्तूष्णीम् ॥ ततस्तेनैवोदकेन सर्वं शिर आर्द्रं कृत्वा क्षुरं नापिताय प्रयच्छति ॥ ॐ अक्षुण्वन्परिवप ॥ वपामीति नापितो ब्रूयात् ॥ नापितः उदङ्मुखास्थितस्य कुमारस्य प्राक्संस्थं प्राङ्मुखस्थितस्योदक्संस्थं केशवपनं कुर्यात् ॥ कुलव्यवस्थया शिखास्थापनं केशशेषं करोति ॥ ततः सर्वान् केशान् गोमयपिंडे वस्त्रादिनाऽऽवेष्ट्य अनुगुप्तं कृत्वा गवां गोष्ठे स्थापयेत् अथवा तडागे जलमध्ये वा प्रक्षिपेत् ॥ ततः कुमारं स्नापयित्वा मस्तके स्वस्तिकं तथाच ललाटे तिलकं कुर्यात् ॥ आचार्याय वरं ददाति ॥ (गां केशान्त संवत्सरं ब्रह्मचर्यमवपनं च ॥ केशान्ते द्वादशरात्रऽ्षड्रात्रं त्रिरात्रमंततः॥) कृतस्य चौलाख्यस्य कर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थं स्मृत्युक्तान् दशसंख्याकान् ब्राह्मणान् यथाकाले यथासंपन्नेनान्नेनाहं भोजयिष्ये ॥ तेन कर्मांगदेवता प्रीयतां न मम ॥ लम्बोदरनमस्तु० ॥ यथाशक्त्या चौलविधेः परिपूर्णताऽस्तु ॥ अस्तु परिपूर्णता ॥

॥ इति चौलसंस्कारप्रयोगः ॥ ८ ॥

॥ १३१ ॥ अथ उपनयनसंस्कारप्रयोगः ॥ ९ ॥

तत्रोदगयने ज्योतिःशास्त्रोक्त शुभे मासे शुभे दिने सुमुहूर्ते उपनयनं

---

१ पारस्करः—अष्टवर्षं ब्राह्मणमुपनयेत् । गर्भाष्टमे वा । एकादशवर्षं राजन्यं (क्षत्रियं) द्वादशवर्षं वैश्यं यथामङ्गलं वा ॥ १

कर्तुं तत्पूर्वेद्युः यजमानः पत्नीकुमाराभ्यां सह मंगलस्नानं कृत्वा अहतवाससी परिधायालंकृत्य धृततिलको बहिःशालायां शुभासने प्राङ्मुख उपविश्य स्वदक्षिणतः पत्नीं तद्दक्षिणतः संस्कार्यं वटुं चोपवेश्य आचम्य प्राणानायम्य॥सुमुखश्चैकेत्यादि पठित्वा अद्येत्यादि० अमुकशर्मणो मम सुतस्य उपनयनसंस्कारकर्मणि अधिकारसिद्ध्यर्थं त्रीन्संख्याकान् प्राजापत्यान् रजतप्रत्याम्नायद्वारा अहमाचरिष्ये ॥ अनेन मम सुतस्य उपयनसंस्कारकर्मण्यधिकारासिद्धिरस्तु ॥ एवं कुमारस्यापि प्रायश्चित्तं कारयेत् ॥ यथा अद्येत्यादि० मम कामचारकामवादकामभक्षणादिदोषनिवृत्तिपूर्वकोपनयनसंस्कारकर्माधिकारार्थं त्रीन्संख्याकान् प्राजापत्यान् रजतप्रत्याम्नायद्वारा अहमाचरिष्ये ॥ तेन मम कामचारकामवादकामभक्षणादिदोषनिवृत्तिपूर्वकोपनयनसंस्कारकर्मण्यधिकारसिद्धिरस्तु ॥ अद्येत्यादि० । आचार्यो हस्ते जलमादाय अमुकशर्मा आचार्योऽहं अमुकशर्मणो यजमानसुतस्य उपनयनसंस्कारकर्माधिकारार्थं द्वादशसहस्रगायत्रीजपमहं करिष्ये ॥ ततो यजमानो हस्ते जलं गृहीत्वा अद्येत्यादि० मम सुतस्य द्विजत्वसिद्ध्यै वेदाध्ययनाधिकारार्थम् उपनयनाख्यं कर्म करिष्ये ॥ अद्येत्यादि० करिष्यमाणोपनयनकर्माङ्गभूतं निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं षोडशोपचारैः वा पंचोपचारैः महागणपतिपूजनमहं करिष्ये ॥ ॐ गणानान्त्वा० । इति मन्त्रेण गणपतिपूजनं कार्यम् ॥ततः कुमारस्य वपनं कारयेत् ॥ देशकालौ संकीर्त्य अद्येत्यादि० मम सुतस्य उपनयनं कर्तुं तत्प्राच्याङ्गभूतं वपनं च कारयिष्ये ॥ एवं वपनं कारयित्वा स्नापयेत् ॥ ततो ब्राह्मणत्रयभोजनम् ॥ अद्येत्यादि० अमुकशर्मणः मम सुतस्य उपनयनकर्मण्यधिकारार्थं

१ इदं प्रायश्चित्तम्-कृच्छ्रत्रयं चोपनेता त्रीन्कृच्छ्रांश्च बटुश्चरेत् । आचार्यो दशसाहस्रं गायत्रीं प्रजपेत्तथा ॥'

त्रिभ्योऽधिकान् ब्राह्मणान् अद्याहं भोजयिष्ये ॥ तेन अमुकशर्मणो मम सुतस्य उपनयनकर्मण्यधिकारसिद्धिरस्तु ॥ ततो ब्राह्मणपङ्क्तौ मुंडितशिरसं कुमारमपि भोजयेत् ॥ (मात्रा[1]सह भुञ्जीत यथाचारं वा ॥) ततो कुमारपिता बहिःशालायां वेद्यपरि पंचभूसंस्कारपूर्वकं समुद्भवनामानं लौकिकाग्निं स्थापयेत् ॥ ततः पुष्पमालादिभिरलंकृतं बटुम् आचार्यसमीपमानयति ॥ ततः आचार्य आनीतं कुमारम् अग्नेः पश्चात्स्वदक्षिणतः अवस्थापयेत् ॥ ततः मध्येऽन्तर्पटं धारयित्वा ॥ ब्राह्मणाः सुमङ्गलपद्यानि पठेयुः । भास्वान्काश्यपगोत्रजोऽरुणरुचिर्यः सिंहराशीश्वरः षट्त्रिस्थो दशशोभनो गुरुशशीभौमेषुमित्रं सदा ॥ शुक्रो मन्दरिपुः कलिङ्गजनितश्चाग्नीश्वरौ देवते मध्ये वर्तुलपूर्वदिग्दिनकरः कुर्यात् वटोर्मंगलम् ॥ ॐ मनोजूतिः० ॥१॥ एषवैप्रतिष्ठानामयज्ञोयत्रैतेन यज्ञेनयजन्तेसर्वमेव प्रतिष्ठितंभवति ॥ २ ॥ ॐसुमुहूर्तं सुप्रतिष्ठितमस्तु ॥ इतिमंत्रमाचाराद् द्विजाः पठेयुः ॥ ततः आचार्यः अंतर्पटं निःसार्य कुमारे आचार्यपादौ प्रणमति स्वदक्षिणतः पश्चादग्नेस्तमवस्थापयेत् ॥ ततः प्रेषद्वयम्-ब्रह्मचर्यमागामिति ब्रूहि (इति कुमारं प्रति आचार्यो वदति)॥ ब्रह्मचर्यमागाम् इति (कुमारो ब्रूयात्) ॥ ब्रह्मचार्यसानि इति ब्रूहि (इति आचार्यो वदति)॥ ब्रह्मचार्यसानि (इति माणवकः) ॥ अथैनं माणवकम् आचार्यो वासः परिधापयति।।येनेन्द्रायेतिमंत्रस्य आङ्गिरस ऋषिः बृहतीच्छंदः बृहस्पतिर्देवता वासः परिधाने विनियोगः।। ॐ येनेन्द्रायबृहस्पतिर्वासःपर्यदधादमृतम् ॥ तेनत्वापरिदधाम्यायुषेदीर्घायुत्वायबलायवर्चसे ॥ आचमनम् ॥ ततः आचार्यो ब्रह्मचारिणः कटिप्रदेशे यथोक्तमेखलां यथाप्रवरग्रन्थियुतां प्रदक्षिणं त्रिर्वेष्टयित्वा बध्नाति ॥ इयं दुरुक्तमिति वामदेव

1 उपनयने मात्रा सह भोजनमनुज्ञात सम्प्रदकारेण ॥ मात्रा सहोपनयने विवाहे भार्यया सह। अन्यत्र सह भुक्त्वेत्यातिन्य प्राप्नुयान्नर इति ॥

ऋषिः त्रिष्टुप् छंदः मेखला देवता मेखलाबंधने विनियोगः ॥ ॐ इयं-दुरुक्तंपरिबाधमानावर्णंपवित्रंपुनतीमऽआगात् ॥ प्राणापानाभ्यांबल-मादधानास्वसादेवीसुभगामेखलेयम् (इति माणवकस्य मंत्रपाठः) ॥ इत्यनेन युवासुवासा इति मंत्रेण वा बंधनं तूष्णीं वा ॥ अत्रावसरे आचारात् यज्ञोपवीतदानम् ॥ ततो यज्ञोपवीतपरिधानम् ॥ तत्रादावा-चार्येण आपोहिष्ठेतित्रिभिर्मन्त्रैर्यज्ञोपवीतं प्रक्षाल्य ॥ (आपोहिष्ठेति तिसृणां सिंधुद्वीप ऋषिः गायत्री छंदः आपो देवता यज्ञोपवीतप्रक्षालने विनि-योगः) ॥ ॐ आपोहिष्ठा० । ॐ योवःशिवतमो० । ॐ तस्माऽअरंग० । इति यज्ञोपवीतं प्रक्षाल्य करसम्पुटे धृत्वा दशधा गायत्र्या अभिमंत्र्य ॥ ॐ ब्रह्मजज्ञानं० । ॐ इदं विष्णुर्वि० । ॐ नमस्तेरुद्र० । इतित्रिभिर्मन्त्रै-रंगुष्ठमुपवीते भ्रामयित्वा ततो नवतंतुषु देवता आवाहयेत् ॥ प्रथमतंतौ-ॐकाराय नमः ॐकारम् आवाहयामि स्थापयामि ॥ १ ॥ द्वितीयतंतौ-ॐ अग्नये नमः अग्निम् आ० स्था० ॥ २ ॥ तृतीयतंतौ ॐ नागेभ्यो नमः नागान् आ० स्था० ॥ ३ ॥ चतुर्थतंतौ-ॐ सोमाय नमः सोमम् आ० स्था० ॥ ४ ॥ पंचमतंतौ-ॐ पितृभ्यो नमः पितॄन् आ० स्था० ॥ ५ ॥ षष्ठतंतौ-ॐ प्रजापतये नमः प्रजापतिम् आ० स्था० ॥ ६ ॥ सप्तमतंतौ-ॐ अनिलाय नमः अनिलम् आ० स्था० ॥ ७ ॥ अष्टमतंतौ-यमाय नमः यमम् आ० स्था० ॥ ८ ॥ नवमतंतौ-ॐ विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः विश्वान्देवान् आ० स्था० ॥ ९ ॥ ततः यज्ञोपवीतग्रन्थिदेवतावाहनम् ॥ ॐब्रह्मणे नमः ब्रह्माणम् आ०स्था० ॥ ॐ विष्णवे नमः विष्णुम् आ० स्था० ॥ ॐ रुद्राय नमः रुद्रम् आ० स्था० ॥ ततो ध्यानम् ॥ ॐ प्रजापतेर्यत्सहजं पवित्रं कार्पाससूत्रोद्भ-वब्रह्मसूत्रम् ॥ ब्रह्मत्वसिद्ध्यै च यशःप्रकाशं जपस्य सिद्धिं कुरु

ब्रह्मसूत्रम् ॥१॥ इति ध्यात्वा ॐ प्रणवादिनवतंतुदेवतासहितब्रह्मविष्णु-
रुद्रेभ्यो नमः सर्वोपचारार्थे गंधाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि ॥ इति संपूज्य
उदुत्यमिति सूर्याय दर्शयेत् ॥ (उदुत्यमिति प्रस्कण्व ऋषिः गायत्री
छंदः सूर्यो देवता सूर्यावलोकने विनियोगः ॥) ॐ उदुत्यञ्जातवेद-
सन्देवंवहन्तिकेतवः ॥ दृशेविश्वाय सूर्य्यम् ॥ ॥ इतिसूर्याय दर्श-
यित्वा धारणम् ॥ यज्ञोपवीतमिति मंत्रस्य परमेष्ठी ऋषिः त्रिष्टुप् छन्दः
लिंगोक्ता देवता श्रौतस्मार्तकर्मानुष्ठानसिद्ध्यर्थे यज्ञोपवीतधारणे विनि-
योगः॥ ॐयज्ञोपवीतंपरमंपवित्रंप्रजापतेर्यत्सहजंपुरस्तात् ॥ आयुष्यमग्र्यं
प्रतिमुञ्चशुभ्रंयज्ञोपवीतंबलमस्तुतेजः ॥ यज्ञोपवीतमसियज्ञस्यत्वायज्ञो-
पवीतेनोपनह्यामि ॥ इति मंत्र पठित्वा दक्षिणबाहुमुद्धृत्य वामस्कंधे
यज्ञोपवीतं धारयेत् ॥ आचमनम् ॥ अथाचार्यो माणवकस्याजिनं
प्रयच्छति ॥ मित्रस्य चक्षुरितिमंत्रस्य परमेष्ठी ऋषिः त्रिष्टुप् छंदः
लिंगोक्ता देवता अजिनधारणे विनियोगः ॥ ॐ मित्रस्यचक्षुर्द्धरुणं-
बलीयस्तेजोयशस्विस्थविरꣳसमिद्धम् ॥ अनाहनस्यंवसनञ्जरिष्णुःपरी-
दम्वाज्यजिनन्दधेहम् ॥ (इति माणवकस्य मंत्रपाठः)। आचमनम् ॥
ततः आचार्यो माणवकस्य दंडं प्रयच्छति ॥ योमेदंड इति प्रजापति-
ऋषिः यजुश्छंदः दंडो देवता दंडग्रहणे विनियोगः ॥ ॐ योमेदंडः
परापतद्वैहायसोधिभूम्याम् ॥ तमहम्पुनरादधाम्यायुषेब्रह्मणेब्रह्मवर्च-
साय ॥ (इति माणवकस्य मन्त्रपाठः) ॥ दंडं प्रतिगृह्णामि ॥ तत आचार्यः
स्वांजलिना अद्भिर्वटोरंजलिं पूरयति ॥ आचार्यपठितैस्त्रिभिर्मन्त्रैः
माणवकः सूर्यायार्घत्रयं दद्यात् ॥ ॐआपोहिष्ठा० ॥ श्रीसूर्याय नमः इदमर्घ्यं
दत्तं न मम ॥ ॐ योवः शिव० । श्रीसूर्याय० इदमर्घ्यं दत्तं० ॥ ॐ
तस्मा ऽअरंग० । श्रीसूर्याय० इदमर्घ्यं दत्तं० ॥ ततः आचार्यो माणवकं

प्रेषयति सूर्यमुदीक्षस्वेति ॥ ततो माणवकस्तच्चक्षुरिति सूर्यं पश्यति ॥ तच्चक्षुरिति दध्यङ्ङाथर्वण ऋषिः उष्णिक् छंदः सूर्यो देवता सूर्योदीक्षणे विनियोगः ॥ ॐ तच्चक्षुर्देवहितं० (इति माणवकस्य मंत्रपाठः ॥) तत आचार्यो माणवकस्य दक्षिणस्कंधोपरि हस्तं नीत्वा तस्य हृदयमालभते ॥ मम व्रते इति मंत्रस्य प्रजापतिर्ऋषिस्त्रिष्टुप् छन्दः बृहस्पतिर्देवता हृदयालंभने विनियोगः ॥ ॐ मम व्रतेतेहृदयंदधामिममचित्तमनुचित्तन्तेऽअस्तु ॥ ममवाचमेकमनाजुषस्व बृहस्पतिष्ट्वानियुनक्तुमह्यम् ॥ (इत्याचार्यस्य मंत्रपाठः ॥) तत आचार्यो माणवकस्य दक्षिणहस्तं गृहीत्वाऽऽह ॥ को नामासि ? ॥ एवं पृष्टे माणवकः प्रत्याह ॥ अमुकशर्मोऽहं भोः ॥ पुनराचार्यः पृच्छति माणवकम् ॥ कस्य ब्रह्मचार्यसीति ? ॥ "भवतः" इत्युच्यमाने माणवकेन तं प्रत्याचार्यो ब्रूयात् ॥ इन्द्रस्य ब्रह्मचार्यस्यग्निराचार्यस्तवाहमाचार्यस्तवासौ अमुकशर्मन्निति ॥ अथैनं माणवकंभूतेभ्यः परिददात्याचार्यः ॥ यथा-प्रजापतयेत्वा इत्यादीनां मन्त्राणां प्रजापतिर्ऋषिः यजुश्छंदः लिङ्गोक्ता देवता कुमाररक्षणे विनियोग ॥ॐ प्रजापतयेत्वापरिददामि देवायत्वासवित्रेपरिददाम्यद्भ्यस्त्वौषधीभ्यःपरिददामिद्यावापृथिवीभ्यान्त्वापरिददामिविश्वेभ्यस्त्वादेवेभ्यः परिददामिसर्वेभ्यस्त्वाभूतेभ्यःपरिददाम्यरिष्ट्यै ॥ इत्याचार्यपठितमन्त्रेण माणवकरक्षणम् ॥ प्रदक्षिणमग्निं पर्युक्ष्योपविशत्याचार्यस्योत्तरतो माणवकः ॥ततो ब्रह्मोपवेशनादि चरुवर्ज्यं सर्वं प्रकृतिवत् । पवित्रप्रणीतानिधानान्ते दक्षिणं जान्वाच्य ब्रह्मान्वारब्धः स्रुवेण मनसा ॥ (ॐ प्रजापतये) स्वाहा इदं प्रजापतये न मम ॥ॐ इन्द्राय स्वाहा इदमिन्द्राय न मम ॥ ॐ अग्नये स्वाहा इदमग्नये न मम ॥ ॐ सोमाय स्वाहा इदं सोमाय न मम ॥ ॐ अग्नेनर्य० ॥ व्रतादौ

जातवेदस्नाम्ने वैश्वानराय नमः गंधाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि ॥ (भूर्भुवःस्वरिति महाव्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषिः गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दांसि अग्निवायुसूर्या देवता उपनयनाङ्गप्रधानहोमे विनियोगः) ॥ ॐ भूः स्वाहा इदमग्नये न मम ॥ ॐ भुवः स्वाहा इदं वायवे न मम ॥ ॐस्वः स्वाहा इदं सूर्याय न मम ॥ॐ त्वन्नोऽअग्ने० । इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम। ॐ सत्वन्नोऽअग्ने०।इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम॥ ॐ अयाश्चाग्ने०। इदमग्नये अयसे न मम ॥ ॐ येतेशतं० । इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम।ॐ उदुत्तमं०।इदं वरुणायादित्यादितये च न मम ॥ ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये न मम ॥ ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदम् अग्नये स्विष्टकृते न मम ॥ संस्रवप्राशनम् ॥ पवित्राभ्यां मार्जनम् ॥ अग्नौ पवित्रप्रतिपत्तिः ॥ ब्रह्मणे पूर्णपात्रदानम् ॥ कृतस्य उपनयनाख्यस्य कर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थं ब्रह्मन् इदं पूर्णपात्रं तुभ्यमहं सम्प्रददे ॥ पश्चिमे प्रणीताविमोकः । तज्जलेन मार्जनम् ॥ ॐ आपः शिवाः शिवतमास्तासे० ॥ तत आचार्यः कुमारं शिक्षयति ॥ ब्रह्मचार्यसीत्याचार्य आह ॥ भवामीति ब्रह्मचारी वदति ॥ अपोशानेत्याचार्य आह ॥ अश्नानीति ब्रह्मचारी ॥ कर्म कुरु इत्याचार्यः ॥ करवाणीति ब्रह्मचारी ॥ मा दिवा सुषुप्थाः इत्याचार्यः॥ न स्वपानीति ब्रह्मचारी॥ वाचं यच्छेत्याचार्यः॥ यच्छामीति ब्रह्मचारी॥ समिधमाधेहीत्याचार्यः॥ आदधामीति ब्रह्मचारी ॥ अपोशानेत्याचार्यः॥ अश्नानीति ब्रह्मचारी ॥ अथास्मै आसीनाय ब्रह्मचारिणे अग्रेरुत्तरतः प्रत्यङ्मुखोपविष्टायोपसन्नसमीक्षमाणाय समीक्षिताय सावित्रीं ब्रूयात् आचार्यः ॥ अथोपदेशः ॥ तत्रादौ आचारात्कांस्यपात्रे तंडुलान्प्रसार्य तत्र सुवर्णशलाकया ॐ कारव्याहृतिपूर्वकं गायत्रीमंत्रं लिख-

त्वा वटुर्जलं गृहीत्वा अद्येत्यादि० मम ब्रह्मवर्चससिद्धिपूर्वकवेदाध्ययनाधिकारसिद्ध्यर्थं गायत्र्युपदेशाङ्गविहितं गायत्रीपूजनमाचार्यपूजनं चाहं करिष्ये ॥ तात्रादौ गणपतेः पञ्चोपचारैः पूजनमहं करिष्ये ॥ इति गणपतिं संपूज्य मनोजूतिरिति गायत्रीं प्रतिष्ठाप्य ॥ ॐ मनोजूतिर्ज्जुषता० ॥ ततो नाममंत्रेण यथालाभोपचारैः गायत्रीं संपूज्याचार्यं पूजयेत्। ततःक्षौमं कार्पासकं वा वस्त्रमवगुण्ठ्य उपदेशं माणवकाय दद्यात्। ॐतत्सवितुरिति विश्वामित्र ऋषिः गायत्रीछन्दः सूर्यो देवता उपदेशग्रहणे विनियोगः ॥ तत आचार्यो गायत्रीं ब्रूयात् ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः ॐ तत्सवितुर्वरेण्यम् । ॐ स्वस्ति ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि ॥ ॐस्वस्ति ॥ ॐभूर्भुवःस्वः ॐतत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि ॥ धियोयोनः प्रचोदयात् ॥ ॐस्वस्ति ॥ (एवमुक्तप्रकारेण उपदेशं गृहीत्वा प्रणवपूर्वकं स्वस्तीति ब्रूयाद् ब्रह्मचारी ॥) ततो यथोक्तमुपविश्य प्रकृतेऽग्नौ समिदाधानं करोति ब्रह्मचारी ॥ तत्र पूर्वमग्नेः संधुक्षणं पंचभिर्मंत्रैरिंधनप्रक्षेपेण ॥ तद्यथा ॥ (अग्ने सुश्रवादीनां ब्रह्मा ऋषिः यजुश्छन्दः अग्निर्देवता संधुक्षणे विनियोगः) ॥ ॐअग्ने सुश्रवःसुश्रवसंमाकुरु ॥ १ ॥ ॐयथात्वमग्नेसुश्रवःसुश्रवाऽअसि ॥२॥ ॐएवंमाᳬसुश्रवःसौश्रवसंकुरु ॥३॥ ॐयथात्वमग्नेदेवानांयज्ञस्यनिधिपाऽअसि ॥४॥ ॐएवमहंमनुष्याणांवेदस्यनिधिपोभूयासम् ॥५॥ प्रदक्षिणमग्निमुदकेन पर्युक्ष्य (इतरथावृत्तिः ॥) उत्थाय समिधमादधाति ॥ अग्नेसमिधमिति प्रजापतिर्ऋषिः आकृतिच्छंदः सविता देवता समिदाधाने विनियोगः ।) ॐ अग्नयेसमिधमाहार्षम्बृहते जातवेदसे ॥ यथात्वमग्ने

१ प्रथमतः पादैपादम् ॥ पुनरर्द्धम् ॥ पुनः समग्रं पठेत् ॥ २ शुष्कगोमयखंड इंधनप्रक्षेपः इति गदाधरः ॥

समिधासमिध्यसऽएवमहमायुषामेधयावर्चसाप्रजयापशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन-समिंधेजीवपुत्रोममाचार्योमेधाव्यहमसान्यनिराकरिष्णुर्यशस्वीतेजस्वी-ब्रह्मवर्चस्यन्नादोभूयासᳪंस्वाहा ॥ इत्यनेन मंत्रेण प्रथमां तथा द्वितीयां तथैव तृतीयां जुहुयात् ॥ (एषाते इति वा ॥ ॐएषातेअग्नेसमित्तयावर्ध-स्वचाप्यायस्व । वर्धिषीमहिच वयमाचप्यासिषीमहिस्वाहा ॥ अनयोर्म-न्त्रयोः समुच्चयो वा ॥) उपविश्य ॥ पुनः पूर्वोक्तपञ्चभिर्मन्त्रैः अग्नेः-सन्धुक्षणं पर्युक्षणं च समिदाधानं च कुर्यात् ॥ यथा-ॐ अग्नेसुश्रवःसुश्र-वसंमाकुरु ॥ १ ॥ ॐयथात्वमग्नेसुश्रवः सुश्रवाऽअसि ॥ २ ॥ ॐएवं माᳪंसुश्रवःसौश्रवसंकुरु ॥ ३ ॥ ॐयथात्वमग्नेदेवानांयज्ञस्य निधिपाऽ-असि ॥ ४ ॥ ॐएवमहंमनुष्याणांवेदस्यनिधिपो भूयासम् ॥ ५ ॥ इत्येतैः पंचभिर्मंत्रैः प्रतिमंत्रं समिंधनप्रक्षेपः ॥ अग्नेः पर्युक्षणम् ॥ ततः तूष्णीं पाणी प्रतप्य ॥ तनूपाऽअग्नेसि इत्यादिसप्तभिर्मन्त्रैः प्रति-मंत्रं मुखविमर्शनं करोति ब्रह्मचारी ॥ (तनूपाअग्नेइत्यादि सप्तमन्त्राणां बृहद्देवा ऋषयः यजुᳪंषि छन्दांसि अग्निर्देवता मुखविमर्शने विनि-योगः) ॥ ॐ तनूपाऽअग्नेसितन्वम्मेपाहि ॥ ॐ आयुर्दाऽअग्नेस्यायु-र्मेदेहि ॥ ॐ वर्चोदाऽअग्नेसिवर्चोमेदेहि ॥ ॐ अग्नेयन्मेतन्वाऽऊनन्त-न्मऽआपृण ॥ ॐ मेधाम्मेदेवः सविताऽआदधातु ॥ ॐमेधाम्मे देवी-सरस्वतीऽआदधातु ॐ मेधामश्विनौदेवावाधत्तांपुष्करस्रजौ ॥ इत्येते मुखविमर्शनमंत्राः ॥ अत्र शिष्टाचारतोऽनुष्ठेयाः पदार्थाः ॥ अंगानि-चमऽआप्यायतामितिशिरःप्रभृतिपादांतसर्वांगान्यालभते ॥ (अंगानि-चेत्यादिनां प्रजापतिर्ऋषिः यजुश्छंदः लिंगोक्ता देवता अंगाप्यायने विनियोगः) ॥ ॐ वाक्चमऽआप्यायतामिति मुखालंभनम् ॥ ॐ प्राणश्चमऽआप्यायतामिति नासिकयोरालंभनम् ॥ ॐ चक्षुश्चमऽआप्या-

यतामिति नेत्रयोरालंभनम् युगपत् ॥ ॐ श्रोत्रञ्चमऽआप्यायतामिति दक्षिणकर्णमालभ्यानेनैव मन्त्रेण वामकर्णालंभनम् ॥ ॐ यशोवलञ्चमऽ आप्यायतामिति मन्त्रजपः ॥ ततस्त्र्यायुषाणि करोति भस्मना ललाटे ग्रीवायां दक्षिणेऽसे हृदि च ॥ (त्र्यायुषमितिनारायण ऋषिः उष्णिक् छन्दः अग्निर्देवता भस्मना तिलककरणे विनियोगः) ॥ ॐत्र्यायुष-ञ्जमदग्नेरिति ललाटे ॥ ॐकश्यपस्यत्र्यायुषमिति ग्रीवायाम् ॥ ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषमिति दक्षिणांसे वामांसे च ॥ ॐ तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषमिति हृदि ॥ ततो गोत्रनामपूर्वकं वैश्वानरादीनाम् अभिवादनम् ॥ अमुकगोत्रः अमुकप्रवरान्वितः अमुकशर्मा अहं भो वैश्वानर त्वामभिवादयामि । आयुष्मान्भव सौम्य ॥ भो गुरो त्वामभिवादयामि । आयुष्मान्भव सौम्य ॥ भो आचार्य त्वामभिवादयामि । आयुष्मान्भव सौम्य ॥ भो मातापितरौ युवाम् अभिवादयामि । आयुष्मान्भव सौम्य ॥ भो सूर्याचन्द्रमसौ युवाम् अभिवादयामि । आयुष्मान्भव सौम्य ॥ सर्वान्ब्राह्मणान् अभिवादयामि । आयुष्मान्भव सौम्य ॥ इत्यभिवादनम् ॥ अथ भिक्षाचर्यचरणम् ॥ ब्रह्मचारी दण्डं भिक्षापात्रं च प्रतिगृह्य सावित्र्या आदित्यमुपस्थाय अग्निं प्रदक्षिणीकृत्य प्रथमं मातरं भिक्षेत् ॥ ॐभवति भिक्षां देहि ॥ ॐस्वस्ति ॥ इति ब्राह्मणः ॥ (भिक्षां भवति देहि ॥ इति क्षत्रियः ॥ भिक्षां देहि भवति ॥ इति वैश्यः ॥) तिस्रः षट् द्वादश वा अपरिमिता भिक्षा ग्राह्याः ॥ आचार्याय भैक्ष्यं निवेदयित्वा भुंक्ष्व इति आचार्यानुज्ञातो भिक्षां स्वीकुर्यात् ॥ वाग्यतोऽहश्शेषं तिष्ठेदित्येकेऽहिंसन्नरण्या समिध आहृत्य तस्मिन्नग्नौ पूर्वव-

१ इत्यभिवादनम् ॥ संध्यावंदनाधिकारोऽस्तु ॥ यावद् मन्त्रोपदेशो न तावत्संध्यादिकं च न ॥ ततो मध्याह्नसंध्यादि सर्वकर्म समाचरेत् ॥ अत्र मध्याह्नसंध्यां कुर्यादिति प्रयोगपारिजाते ॥ नेति कृष्णभट्टीये इति मतभेदः ॥

तू आधाय ततः पाणिनाऽग्निं परिसमूहति ॥ (अग्नेसुश्रवादीनां ब्रह्मा ऋषिः यजुश्छंदः अग्निर्देवता समिन्धने विनियोगः) ॥ ॐ अग्ने सुश्रवःसुश्रवसंमाकुरु ॥ १ ॥ ॐयथात्वमग्नेसुश्रवःसुश्रवाऽअसि ॥२॥ ॐ एवं माᳪंसुश्रवःसौश्रवसंकुरु ॥ ३ ॥ ॐ यथात्वमग्नेदेवानांयज्ञस्य निधिपाऽअसि ॥ ४ ॥ ॐएवमहंमनुष्याणांवेदस्यनिधिपोभूयासम् ॥ ५ ॥ प्रदक्षिणमग्निं पर्युक्ष्योत्तिष्ठन्समिधमादधाति ॥ (अग्नेसमिधमाहार्षमिति प्रजापतिर्ऋषिः आकृतिश्छंदः सविता देवता ॥ समिदाधाने विनियोगः) ॥ ॐअग्नयेसमिधमाहार्षंबृहतेजातवेदसे ॥ यथात्वमग्नेसमिधा समिध्यसऽएवमहमायुषामेधयावर्चसाप्रजयापशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनसमिंधे जीवपुत्रोममाचार्योमेधाव्यहमसान्यनिराकरिष्णुर्यशस्वीतेजस्वीब्रह्मवर्चस्व्यन्नादोभूयासᳪंस्वाहा ॥ एवं द्वितीयां तथा तृतीयां समिधमादधाति ॥ उपविश्य ॥ पूर्ववत्परिसमूहनम्-ॐ अग्नेसुश्रवः सुश्रवसंमाकुरु ॥ १ ॥

जपति ॥ ॐ अङ्गानिचमऽआप्यायताम् ॥ ॐ वाक्चमऽआप्यायताम् ॥ ॐ प्राणश्चमऽआप्यायताम् ॥ ॐ चक्षुश्चमऽआप्यायताम् ॥ ॐ श्रोत्रं चमऽआप्यायताम् ॥ ॐ यशोबलंचमऽआप्यायताम् ॥ ततो त्र्यायुषाणि करोति ॥ (ॐ त्र्यायुषमितिनारायण ऋषिः उष्णिक् छन्दः अग्निर्देवता भस्मना तिलककरणे विनियोगः) ॥ ॐ त्र्यायुषञ्जमदग्नेरिति ललाटे ॥ ॐ कश्यपस्यत्र्यायुषमिति ग्रीवायाम् ॥ ॐयद्देवेषुत्र्यायुषमिति दक्षिणांसे वामांसे च ॥ ॐ तन्नोऽअस्तुत्र्यायुषमिति हृदि ॥ ततो गोत्रनामपूर्वकवैश्वानरादीनामभिवादनम् ॥ अमुकगोत्रोत्पन्नः अमुकप्रवरान्वितः अमुकशर्माऽहं भो वैश्वानर त्वाम् अभिवादयामि । आयुष्मान्भव सौम्य ॥ भो गुरो त्वाम् अभिवादयामि । आयुष्मान्भव सौम्य ॥ भो आचार्य त्वाम् अभिवादयामि । आयुष्मान्भव सौम्य ॥ भो मातापितरौ युवाम् अभिवादयामि । आयुष्मान्भव सौम्य ॥ भो सूर्याचन्द्रमसौ युवाम् अभिवादयामि । आयुष्मान्भव सौम्य ॥ सर्वान्ब्राह्मणान अभिवादयामि । आयुष्मान्भव सौम्य ॥ इत्यभिवादनम् ॥ वाग्विसर्गः ॥ यावद् व्रतं तावदग्निरक्षणं त्रिरात्रं वा ॥ अत आरभ्य आ ब्रह्मचर्यसमाप्तेर्ब्रह्मचारिणो नियमाः कथ्यन्ते आचार्येण ॥ अधः शयीत ॥ अक्षारलवणाशी स्यात् ॥ दंडधारणम् ॥ अग्निपरिचरणं समिदाधानं कर्तव्यम् ॥ गुरुशुश्रषा कर्तव्या ॥ भिक्षाचर्यं कर्तव्यम् ॥ मधुमांसाशनं न कर्तव्यम् ॥ मज्जनं न कर्तव्यम् ॥ पर्यासनेनोपविशेत् ॥ स्त्रीणां मध्येऽवस्थानं न कर्तव्यम् ॥ अदत्तं न गृह्णीयात् ॥ अनृतं न वदेत् ॥ अस्तसमये भास्करावलोकनं न कुर्यात् ॥ कांस्यपात्रे मृन्मयपात्रे भोजनं न कुर्यात् ॥ तांबूलभक्षणं न कुर्यात् ॥ अभ्यंगमाल्यारंजनमुपानच्छत्रादर्शं च वर्जयेत् ॥ इति नियमाः ॥ पिता हस्ते

जलमादाय—कृतस्य मम पुत्रस्योपनयनाख्यस्य कर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थं स्मृत्युक्तान् पंचाशत्संख्याकान् ब्राह्मणान् यथाकाले यथासंपन्नेनान्नेनाहं भोजयिष्ये तेन कर्मांगदेवताः प्रीयन्ताम् ॥ ॐ लंबोदर नमस्तुभ्यं०॥१॥ यथाशक्त्या उपनयनविधेः परिपूर्णताऽस्तु । अस्तु परिपूर्णता ॥

॥ इति उपनयनसंस्कारप्रयोगः ॥ ९ ॥

॥ १३२ ॥ अथ वेदारम्भसंस्कारप्रयोगः ॥ १०-१३ ॥

आचम्य प्राणानायम्य ॥ सुमुखश्चैकेत्यादि पठित्वा अद्येत्यादि० अस्य ब्रह्मचारिणः स्वशाखापूर्वकं वेदारंभमहं करिष्ये ॥ ॐ गणानान्त्वा०। इति मन्त्रेण पञ्चोपचारैः गणपतिपूजनं कृत्वा ततो द्वितीयस्थंडिले पंचभूसंस्कारपूर्वकं लौकिकाग्नेः स्थापनं कृत्वा ततो दक्षिणतो ब्रह्मासनादिचरुवर्ज्यं प्रकृतिवत्सर्वं कुर्यात् ॥ ब्रह्मान्वारब्धे स्रुवेण होमः ॥ मनसा ॥ (ॐ प्रजापतये) स्वाहा इदं प्रजापतये न मम ॥ ॐ इन्द्राय स्वाहा इदम् इन्द्राय मम। ॐ अग्नये स्वाहा इदम् अग्नये न मम ॥ ॐ सोमाय स्वाहा इदं सोमाय न मम ॥ हस्ते अक्षतान्गृहीत्वा ॥ ॐ अग्नेनर्य०।व्रतादेशे समुद्भवनामानं वह्निम् आवाहयामि ॥ समुद्भवनाम्ने वैश्वानराय नमः गन्धं पुष्पं समर्पयामि ॥ ततः सर्वाश्च वेदाहुतयो होतव्याः॥ यथा (अथ यजुर्वेदाहुतयः) ॐ अन्तरिक्षाय स्वाहा इदमन्तरिक्षाय न मम ॥ ॐ वायवे स्वाहा इदं वायवे० ॥ ॐ ब्रह्मणे स्वाहा इदं ब्रह्मणे० ॥ ॐ छन्दोभ्यः स्वाहा इदं छन्दोभ्यो०॥४॥ (अथ ऋग्वेदाहुतयः) ॐ पृथिव्यै स्वाहा इदं पृथिव्यै०॥ ॐ अग्नये स्वाहा इदमग्नये० ॥ ॐ ब्रह्मणे स्वाहा इदं ब्रह्मणे० ॥ ॐ छन्दोभ्यः स्वाहा इदं छन्दोभ्यो०॥४॥ (अथ सामवेदाहुतयः) ॐ दिवे स्वाहा इदं दिवे०॥

ॐ सूर्याय स्वाहा इदं सूर्याय० ॥ ॐ ब्रह्मणे स्वाहा इदं ब्रह्मणे० ॥ ॐ छन्दोभ्यः स्वाहा इदं छन्दोभ्यो०॥४॥ (अथाथर्ववेदाहुतयः) ॐ दिग्भ्यः स्वाहा इदं दिग्भ्यो० ॥ ॐ चन्द्रमसे स्वाहा इदं चन्द्रमसे०॥ ॐ ब्रह्मणे स्वाहा इदं ब्रह्मणे०॥ ॐ छन्दोभ्यः स्वाहा इदं छन्दोभ्यो०॥ ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये० ॥ ॐ देवेभ्यः स्वाहा इदं देवेभ्यो० ॥ ॐ ऋषिभ्यः स्वाहा इदम् ऋषिभ्यो० ॥ ॐ श्रद्धायै स्वाहा इदं श्रद्धायै० ॥ ॐ मेधायै स्वाहा इदं मेधायै० ॥ ॐ सदसस्पतये स्वाहा इदं सदसस्पतये० ॥ ॐ अनुमतये स्वाहा इदम् अनुमतये० ॥११॥२३॥ (ततो नवाहुतयः)॥ ॐभूःस्वाहा इदमग्नये न मम ॥ॐभुवः स्वाहा इदं वायवे० ॥ ॐ स्वः स्वाहा इदं सूर्याय० ॥ ॐ त्वन्नोऽअग्ने० इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम ॥ ॐसत्वन्नोऽअग्ने० । इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम ॥ ॐ अयाश्चाग्ने० । इदमग्नये अयसे न मम॥ ॐ येतेशतं० । इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम ॥ ॐउदुत्तमं० । इदं वरुणायादित्यायादितये च न मम ॥ ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये न मम ॥ ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते न मम ॥ संस्रवप्राशनम् । पवित्राभ्यां मार्जनम् ॥ अग्नौ पवित्र-प्रतिपत्तिः ॥ ब्रह्मणे पूर्णपात्रदानम् ॥ कृतस्य वेदारंभसाङ्गतासिद्ध्यर्थं ब्रह्मन् अयं ते वरः प्रतिगृह्यताम् ॥ पश्चिमे प्रणीताविमोकः॥ आपःशिवाः०। कृतस्य वेदारंभकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं यथासंख्याकान् ब्राह्मणान् यथाकाले यथासंपन्नेनान्नेनाहं भोजयिष्ये । तेन कर्मांगदेवताः प्रीयन्तां न मम ॥ ततः शिष्टाचारात् वेदसरस्वतीपूजनम् । अद्येत्यादि० तिथौ ब्रह्मवर्चससिद्ध्यर्थं वेदसरस्वतीपूजनमहं करिष्ये ॥ ॐवेदोसियेन-त्वन्देवदेवेभ्योवेदोभवस्तेनमह्यंवेदोभूयाः॥ ॐपावकानःसरस्व-

तीव्राजेभिर्व्वाजिनीवती ॥ यज्ञंवष्टुधियावसुः ॥ ॐ भूर्भुवःस्वःभगवते वेदनारायणाय नमः तथाच भगवतीमहासरस्वत्यै नमः इति षोडशोपचारैः सम्पूज्य अंजलौ पुष्पाण्यादाय ॥ शुक्लां ब्रह्मविचारसारपरमामाद्यां जगद्व्यापिनीं वीणापुस्तकधारिणीमभयदां जाड्यान्धकारापहाम् ॥ हस्ते स्फाटिकमालिकां विदधतीं पद्मासने संस्थितां वन्दे तां परमेश्वरीं भगवतीं बुद्धिप्रदां शारदाम् ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः भगवतीमहासरस्वत्यै नमः प्रार्थनां समर्पयामि ॥ अनया पूजया वेदसरस्वत्यौ प्रीयेतां न मम ॥ ततो यजुर्वेदादिमारभेत ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि ॥ धियो यो नः प्रचोदयात् ॥१॥ ॐ इषेत्त्वोर्जेत्वावायवस्थदेवोवः सविताप्प्रार्पयतुश्रेष्ठतमाय कर्म्मणऽआप्प्यायद्ध्वमघ्न्याऽइन्द्राय भागम्प्रजावतीरनमीवाऽअयक्ष्मा मावस्तेनऽईशतमाघशः सोद्ध्रुवाऽअस्मिन्गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून्पाहि ॥ २ ॥ ॐ स्वस्ति ॥ ॐ यजुर्वेदाय नमः ॥ ॐ अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् ॥ होतारं रत्नधातमम् ॐ ॥ स्वस्ति ॥ ॐ ऋग्वेदाय नमः ॥ ॐ अग्नऽआयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये ॥ निहोता सत्सि बर्हिषि ॥ ॐ स्वस्ति ॥ ॐ सामवेदाय नमः ॥ ॐ शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये ॥ शंय्योरभिस्रवन्तु नः ॥ ॐ स्वस्ति ॥ ॐ अथर्ववेदाय नमः ॥ एवं वेदाध्ययनं कृत्वा संकल्पयेत् ॥ कृतस्य वेदारम्भाख्यस्य कर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं यथाशक्ति ब्राह्मणान् भोजयिष्ये तेन श्रीकर्माङ्गदेवता प्रीयतां न मम ॥ ॐ लम्बोदर० ॥ वेदारम्भविधिः परिपूर्णोऽस्तु ॥ अस्तु परिपूर्णता ।

॥ इति वेदारम्भसंस्कारप्रयोगः ॥ १०-१३ ॥

१ प्रणवं प्राक् प्रयुञ्जीत व्याहृतीस्तदनंतरम् ॥ सावित्रीं चानुपूर्व्येण ततो वेदान् समारभेत् ॥

॥ १३३ ॥ अथ केशान्तसंस्कारप्रयोगः ॥ १४ ॥

अत्र बहिःशाला ॥ पिता हस्ते जलमादाय-अस्य ब्रह्मचारिणः केशान्ताख्यं कर्माहं करिष्ये ॥ गणपतिपूजनं स्वस्तिपुण्याहवाचनमविघ्नपूजनं मण्डपस्थापनं मातृकापूजनं वसोर्धारापूजनमायुष्यमन्त्रजपं नान्दीश्राद्धान्तं कृत्वा अग्निं प्रतिष्ठाप्य ततो दक्षिणतो ब्रह्मासनमास्तीर्येत्यादि आचार्यवरणान्तं सर्वं चूडाकरणवत् ॥ तत्र विशेषः ॥ उपकल्पनीये वरस्थाने गौः ॥ उष्णेन वा उदकेनेद्यदितेकेशश्मश्रुवप इत्युदकासंके विशेषः ॥ त्रिः क्षुरेण शिरःप्रदक्षिणं परिहरति संमुखं केशान्ते ॥ ॐ यत्क्षुरेण० प्रमोषीर्मुखम् ॥ आचार्याय गोदानम् ॥ संवत्सरं ब्रह्मचर्यमवपनं च ॥ द्वादशरात्रं षड्रात्रं त्रिरात्रमन्ततः ॥

॥ इति केशान्तसंस्कारप्रयोगः ॥ १४ ॥

॥ १३४ ॥ अथ समावर्तनसंस्कारप्रयोगः ॥ १५ ॥

आचम्य प्राणानायम्य सुमुखश्चेत्यादि पठित्वा ॥ अद्येत्यादि० अस्य ब्रह्मचारिणः पश्चाद् गृहस्थाश्रमप्राप्तिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं समावर्तनाख्यं कर्म करिष्ये ॥ तदङ्गत्वेन गणपतेः पंचोपचारैः पूजनमहं करिष्ये ॥ इति संकल्प्य "श्रीमहागणपतये नमः" इति गणपतिं पूजयेत् ॥ ततः "भो आचार्य अहं स्नास्यामि" इति ब्रह्मचारिणः प्रश्नः ॥ "स्नाहीति" गुरुः ॥ पूर्ववदुपसंगृह्य गुरुम् ॥ ततः परिश्रिते पञ्चभूसंस्कारपूर्वकं सूर्यनामानमग्निं प्रतिष्ठाप्य ततो दक्षिणतो ब्रह्मासनमास्तीर्येत्यादि चरुवर्जं पात्रासादनान्तं कुर्यात् ॥ तत्र विशेषः ॥ पात्रासादनानन्तरम् उपकल्पनीयानि ॥ संधुक्षणानि । पर्युक्षणार्थमुदकम् ।

१ पारस्करः-षोडशवर्षस्य केशान्तः ॥ चालोक्तो मुहूर्तः ॥

तिस्रः समिधः । हरिताः कुशाः । अष्टौ वारिकुम्भाः । दधि तिला वा । धौतवस्त्रम् । नापितः । स्नानार्थमुदकम् । औदुम्बरं कनिष्ठिकाग्रवत्स्थूलं द्वादशाङ्गुलदीर्घं सरलं सत्वचं दन्तधावनकाष्ठं ब्राह्मणस्य । (दशाङ्गुलं राजन्यस्य । अष्टाङ्गुलं वैश्यस्य) उद्वर्तनद्रव्यम् । स्नानार्थमुष्णोदकम् । चंदनम् । अहते वाससी ॥ यज्ञोपवीते द्वे त्रीणि वा । पुष्पाणि । उष्णिग् । कर्णालंकारौ । अञ्जनम् । आदर्शः । छत्रम् । उपानहौ । वैणवदंडः । ततः पवित्रच्छेदनादिपर्युक्षणान्तं कृत्वा आघारावाज्यभागौ च जुहुयात् ॥ ब्रह्मान्वारब्धः । स्रुवेण होमः ॥ (मनसा)(ॐ प्रजापतये) स्वाहा इदं प्रजापतये न मम ॥ ॐ इन्द्राय स्वाहा इदमिन्द्राय न मम ॥ ॐ अग्नये स्वाहा इदमग्नये न मम ॥ ॐ सोमाय स्वाहा इदं सोमाय न मम ॥ हस्ते गन्धाक्षतपुष्पाण्यादाय ॐ अग्नेनय० । व्रतविसर्गे सूर्यनाम्ने वैश्वानराय नमः गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि इति सम्पूज्य होमं कुर्यात् ॥ अथ वेदाहुतिः । (ऋ०) ॐ अंतरिक्षाय स्वाहा इदम् अंतरिक्षाय न मम ॥ ॐ वायवे स्वाहा इदं वायवे न मम ॥ ॐ ब्रह्मणे स्वाहा इदं ब्रह्मणे न मम ॥ ॐ छन्दोभ्यः स्वाहा इदं छन्दोभ्यो न मम ॥ (यजु०) ॐ पृथिव्यै स्वाहा इदं पृथिव्यै न मम ॥ ॐ अग्नये स्वाहा इदमग्नये न मम ॥ ॐ ब्रह्मणे स्वाहा इदं ब्रह्मणे न मम ॥ ॐ छन्दोभ्यः स्वाहा इदं छन्दोभ्यो न मम ॥ (साम०) ॐ दिवे स्वाहा इदं दिवे न मम ॥ ॐ सूर्याय स्वाहा इदं सूर्याय न मम ॥ ॐ ब्रह्मणे स्वाहा इदं ब्रह्मणे न मम ॥ ॐ छन्दोभ्यः स्वाहा इदं छन्दोभ्यो न मम ॥ (अथ०) ॐ दिग्भ्यः स्वाहा इदं दिग्भ्यो न मम ॥ ॐ चन्द्रमसे स्वाहा इदं चन्द्रमसे न मम ॥ ॐ ब्रह्मणे स्वाहा इदं ब्रह्मणे न मम ॥ ॐ छन्दोभ्यः स्वाहा इदं छन्दोभ्यो न मम ॥ ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये न मम ॥ ॐ देवेभ्य स्वाहा इदं

देवेभ्यो न मम ॥ ॐ ऋषिभ्यः स्वाहा इदम् ऋषिभ्यो न मम ॥ ॐ श्रद्धायै स्वाहा इदं श्रद्धायै न मम ॥ ॐ मेधायै स्वाहा इदं मेधायै न मम ॥ ॐ सदसस्पतये स्वाहा इदं सदसस्पतये न मम ॥ ॐ अनुमतये स्वाहा इदमनुमतये न मम॥२३॥(ततो नवाहुतयः॥) ॐ भूःस्वाहा इदमग्नये न मम ॥ भुवः स्वाहा इदं वायवे न मम ॥ ॐ स्वः स्वाहा इदं सूर्याय न मम ॥ ॐ त्वन्नोऽअग्ने० । स्वाहा इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम ॥ ॐ सत्वन्नोऽअग्ने० । स्वाहा इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम ॥ ॐ अयाश्चाग्ने० । स्वाहा इदमग्नये अयसे न मम ॥ ॐ ये ते शतं० । स्वाहा इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम ॥ ॐ उदुत्तमं० । स्वाहा इदं वरुणायादित्यायादितये च न मम ॥ ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये न मम ॥ ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते न मम ॥ संस्रवप्राशनम् ॥ पवित्राभ्यां मार्जनम् ॥ अग्नौ पवित्रप्रतिपत्तिः ॥ ब्रह्मणे पूर्णपात्रदानम् ॥ कृतस्य समावर्तनाख्यस्य कर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं ब्रह्मन् इदं पूर्णपात्रं सदक्षिणाकं तुभ्यमहं संप्रददे ॥ एवमाचार्याय ॥ पश्चिमे प्रणीताविमोकः॥ ॐ आपः शिवा० भेषजम्॥ अत्र पूर्ववदग्नेः सन्धुक्षणं पञ्चभिर्मन्त्रैरिन्धनप्रक्षेपेण ॥ तद्यथा पाणिनाऽग्निं परिसमूहति ॥ (अग्ने सुश्रवादीनां ब्रह्मा ऋषिः यजुश्छन्दः अग्निर्देवता समिन्धने विनियोगः) ॥ ॐ अग्नेसुश्रवःसुश्रवसंमाकुरु ॥ ॐ यथात्वमग्नेसुश्रवःसुश्रवाऽअसि ॥ ॐ एवंमाᳬसुश्रवःसौश्रवसंकुरु ॥ ॐयथात्वमग्नेदेवानांयज्ञस्यनिधिपाऽअसि । ॐ एवमहं मनुष्याणां वेदस्यनिधिपोभूयासम् ॥ प्रदक्षिणमग्निमुदकेन पर्युक्ष्योत्थाय समिधमादधाति ॥ (अग्ने समिधमिति प्रजापतिर्ऋषिः आकृतिश्छन्दः सविता देवता समिदाधाने विनियोगः) ॥ ॐ अग्ने-

समिधमाहार्षं बृहते जातवेदसे ॥ यथात्वमग्ने समिधा समिध्यसऽएवमहमायुषा मेधया वर्चसा प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन समिन्धे जीवपुत्रो ममाचार्यो मेधाव्यहमसान्यनिराकरिष्णुर्यशस्वी तेजस्वी ब्रह्मवर्चस्यन्नादो भूयासᳬं स्वाहा ॥ एवं द्वितीयां तृतीयां च ॥ (मन्त्रसमुच्चयो वा) पूर्ववत्परिसमूहनम् ॥ तत उपविश्य पुन पंचभिर्मन्त्रैरग्नेः संधुक्षणं पूर्ववत् ॥ ॐ अग्ने सुश्रवः सुश्रवसं मा कुरु ॥ ॐ यथा त्वमग्ने सुश्रवः सुश्रवाऽअसि ॥ ॐ एवं माᳬं सुश्रवः सौश्रवसं कुरु ॥ ॐ यथा त्वमग्ने देवानां यज्ञस्य निधिपाऽअसि ॥ ॐ एवमहं मनुष्याणां वेदस्य निधिपो भूयासम् ॥ अग्नेः पर्युक्षणम् । पाणी प्रताप्य मुखं विमृष्टयेत् ॥ यथा–ॐ तनूपाऽअग्नेसि तन्वं मे पाहि ॥ ॐ आयुर्दाऽअग्नेसि आयुर्मे देहि ॥ ॐ वर्चोदाऽअग्नेसि वर्चो मे देहि ॥ ॐ अग्ने यन्मे तन्वाऽऊनं तन्मऽआपृण ॥ ॐ मेधां मे देवः सविता ऽआदधातु ॥ ॐ मेधां मे देवी सरस्वती ऽआदधातु ॥ ॐ मेधामश्विनौ देवावाधत्तां पुष्करस्रजौ ॥ (शिष्टाचारात् अङ्गान्यालभ्य जपति ॥) ॐ अङ्गानि च आप्यायतामिति शिरःप्रभृति पादान्तं सर्वाङ्गान्यालभते ॥ ॐ वाक्चमऽआप्यायताम् (मुखस्यालभनम्) ॥ ॐ प्राणश्चमऽआप्यायताम् (नासिकयोरालंभनम्) ॥ ॐ चक्षुश्चमऽआप्यायताम् (नेत्रयोरालंभनं युगपत्) ॥ ॐ श्रोत्रंचमऽआप्यायताम् ॥ (दक्षिणश्रोत्रस्यालंभनम् अनेनैव मंत्रेण वामश्रोत्रस्य) ॥ ॐ यशो बलं चमऽआप्यायताम् (इति बाह्वोरुपरपर्शनम्) ॥ ततस्त्र्यायुषकरणम् ॥ अनामिकया अग्नेर्भस्म गृहीत्वा ॥ (त्र्यायुषमिति नारायण ऋषिः उष्णिक् छन्दः अग्निर्देवता भस्मना तिलकधारणे विनियोगः ॥ ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेरिति ललाटे ॥ ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषमिति ग्रीवायाम् ॥ ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषम् इति दक्षिणांसे वामांसे च ॥

ॐ तन्नोऽअस्तुत्र्यायुषम् इति हृदि ॥ ततो ब्रह्मचारी दक्षिणश्रोत्रे समौ करौ कृत्वा गोत्रनामपूर्वकं वैश्वानरादीनामभिवादनं कुर्यात्॥अमुकगोत्रः अमुकप्रवरान्वितः अमुकशर्माऽहं भो वैश्वानर त्वामभिवादयामि। आयुष्मान्भव सौम्य॥ भो गुरो त्वामभिवादयामि। आयुष्मान्भव सौम्य॥ भो आचार्य त्वामभिवादयामि। आयुष्मान्भव सौम्य॥ भो मातापितरौ युवामभिवादयामि। आयुष्मान्भव सौम्य॥ भो सूर्याचन्द्रमसौ युवामभिवादयामि। आयुष्मान्भव सौम्य ॥ सर्वान्ब्राह्मणान् अभिवादयामि। आयुष्मान्भव सौम्य॥ ततः आचार्यः परिश्रितस्योत्तरतः भूरसीत्यादिना क्रमेण अष्टानामुदकुम्भानां दक्षिणोत्तरागतानां स्थापनं कुर्यात्॥ ॐ भूरसिभूमिरस्य० इति भूमिं स्पृष्ट्वा ॥ १ ॥ ॐ धान्यमसिधिनुहि० इति यवान्निक्षिप्य ॥२॥ ॐ आजिंघ्रकलशं० इति कुंभं संस्थाप्य ॥३॥ ॐ वरुणस्योत्तं० इति जलं प्रपूर्य ॥४॥ ॐ त्वाङ्गन्धर्वा० इति गन्धम् ॥ ५ ॥ ॐ याऽओषधीः० इति सर्वौषधीः ॥ ६ ॥ ॐ काण्डात्काण्डात्० इति दूर्वाः ॥ ७ ॥ ॐ अश्वत्थेवो० इति पंचपल्लवान् ॥ ८ ॥ ॐ स्योनापृथिवि० इति सप्त मृदः ॥ ९ ॥ ॐ याः फलिनीर्या० । इति पूगीफलम् ॥ १० ॥ ॐ परिवाजपतिः० इति पंचरत्नानि ॥ ११ ॥ ॐ हिरण्यगर्भः० इति हिरण्यं च क्षिप्त्वा ॥ १२ ॥ ॐ वसोः पवित्रमसि० इति रक्तवस्त्रेणावेष्टय ॥ १३ ॥ ॐ पूर्णादर्वी० इति तण्डुलपूर्णपात्रं निधाय ॥ १४ ॥ तत्र ॐ तत्त्वायामि० इति वरुणमावाह्य संपूज्य ॥१५॥ कलशस्य मुखे विष्णुरित्याभिमंत्र्य । देवदानवसंवादे० इत्यादिना प्रार्थयेत् ॥ ॐ मनोजूति०। उदकुम्भाधिष्ठातृदेवताः सुप्रतिष्ठा वरदा भवेयुः ॥ उदकुम्भाधिष्ठातृदेवताभ्यो नमः सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि सम० । इति गन्धादिपञ्चोपचारैः पूजनं कुर्यात् ॥ तत

उदकुम्भानां पुरस्तात्प्रागग्रकुशास्तरणम् ॥ तेषु स्नानकर्ता उदङ्मुखः स्थित्वा स्वयं च दक्षिणकलशादारभ्य प्रथमकलशात् ॥ ॐ येऽअप्स्वन्तरग्नयः प्रविष्टागोह्यऽउपगोह्योमयूषोमनोहास्खलोविरुजस्तनूदूषुरिन्द्रियहातान्विजहामि यो रोचनस्तमिह गृह्णामि ॥ इति मंत्रेण प्रथमकलशादुदकं गृहीत्वा तेनोदकेन ॥ ॐ तेनमामभिषिञ्चामिश्रियैयशसेब्रह्मणेब्रह्मवर्चसाय ॥ इति मन्त्रेण स्वस्य मस्तकेऽभिषिञ्चेत् ॥ १ ॥ ॐ येऽअप्स्वन्तरग्नयः० ॥ इति मन्त्रेणैव द्वितीयोदकुंभादुदकं गृहीत्वा ॥ ॐ येन श्रियमकृणुतांयेनावमृशतासुराम् ॥ येनाक्ष्यावभ्यषिंचतांयद्वांतदश्विना यशः इति मंत्रेणाभिषिंचेत् ॥ २ ॥ पुनः—ॐ येऽअप्स्वन्तरग्नयः० । इत्यनेन तृतीयोदकुंभादुदकमादाय ॥ ॐ आपो हिष्ठा० । इति मंत्रेणाभिषिंचेत् ॥ ३ ॥ पुनः—ॐ येऽअप्स्वन्तरग्नयः० । इत्यनेन चतुर्थोदकुंभादुदकमादाय ॥ ॐ यो वः शिवतमो० । इति मंत्रेणाभिषिंचेत् ॥ ४ ॥ पुनः—ॐ येऽअप्स्वन्तरग्नयः० । इत्यनेन पंचमोदकुंभादुदकमादाय ॥ ॐ तस्माऽअरङ्गमा० । इति मंत्रेणाभिषिंचेत् ॥ ५ ॥ पुनः—ॐ येऽअप्स्वंतरग्नयः० । इत्यनेन मंत्रेण षष्ठसप्तमाष्टमोदकुंभेभ्यः उदकमादाय तूष्णीं वारत्रयाभिषिंचेत् स्नानकर्ताऽऽत्मानम् ॥ ८ ॥ तत उदुत्तममिति शिरोमार्गेण मेखलामुन्मुच्य ॥ (उदुत्तममिति शुनःशेप ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः वरुणो देवता मेखलोन्मोचने विनियोगः) ॥ ॐ उदुत्तमंवरुणपाशमस्मदवाधमंविमध्यमꣳश्रथाय ॥ अथावयमादित्यव्रतेतवानागसोऽअदितयेस्याम ॥ १ ॥ तूष्णीं दंडं निधाय अजिनं च तूष्णीं निधाय स्नानकर्ता आदित्यमुपतिष्ठते ऊर्ध्वबाहू कृत्वा ॥ ॐ उद्यन्भ्राजभृष्णुरिन्द्रोमरुद्भिरस्थात्प्रातर्यावभिरस्थाद्दशसनिरसिदशसनिंमाकुर्वाविदन्मागमयोद्यन्भ्राजभृष्णुरिन्द्रोमरुद्भिरस्थाद्दिवायावभिरस्थाच्छतस-

निरसिशतसनिमाकुर्वाविदन्मागमयोयन्भ्राजभृष्णुरिन्द्रोमरुद्भिरस्थात्सा यंयावभिरस्थात्सहस्रसनिरसिसहस्रसनिमाकुर्वाविदन्मागमयेति ॥ ततस्तूष्णीं दधि तिलान्वा प्राश्य ॥ आचम्य जटालोमनखान्संहृत्य ॥ औदुम्बरेण काष्ठेन दन्तान् धावयेत् ॥ (अन्नाद्येति मन्त्रस्य अथर्वण ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः सोमो देवता दन्तधावने विनियोगः) ॥ ॐ अन्नाद्यायव्यूहध्वꣳसोमोराजायमागमत् ॥ समेमुखंप्रमार्क्ष्यते यशसा च भगेन च ॥ इति ॥ तत उदकेन मुखशोधनम् ॥ ततः पुनः उष्णोदकेन स्नानम् ॥ गन्धेन अनुलेपनं भाले ॥ चन्दनाद्यनुलेपनं हस्ते गृहीत्वा ॥ नासिकयोर्मुखे चोपगृह्णीयात् ॥ (प्राणापानौ मेति मंत्रस्य प्रजापतिर्ऋषिः यजुश्छंदः प्राणापानौ देवते चन्दनोपग्रहणे विनियोगः) ॥ ॐ प्राणापानौ मे तर्पय ॥ ॐ चक्षुर्मे तर्पय ॥ ॐ श्रोत्रम्मे तर्पय ॥ ततः पाण्योरवनेजनं कृत्वा तदुदकमादाय ॥ अपसव्यं कृत्वा ॥ दक्षिणाभिमुखो भूत्वा तदुदकं दक्षिणस्यां दिशि निनयेत् यथा-(ॐ पितरः शुन्धध्वमिति प्रजापतिर्ऋषिः यजुश्छन्दः अश्वीन्द्रासरस्वतीदेवताः पाण्यावनेजनस्य दक्षिणस्यां दिशि निषेके विनियोगः) ॥ ॐ पितरः शुन्धध्वमिति पितरःशुन्धध्वम् ॥ सव्यम् ॥ उदकस्पर्शः ॥ ततश्चन्दनादिना आत्मानमनुलिप्य जपेत् ॥ (सुचक्षा इति मंत्रस्य प्रजापतिर्ऋषिः यजुश्छन्दः आशीर्देवता जपे विनियोगः)॥ ॐ सुचक्षा अहमक्षीर्भ्याम्भूयासꣳसुवर्चामुखेन ॥ सुश्रुत्कर्णाभ्यां भूयासम् ॥ ततः अहतं वासो धौतं वा "परिधास्यै" इति मन्त्रेण परिधायात् ॥ (परिधास्य इति मन्त्रस्य आलम्बायन ऋषिः पंक्तिश्छन्दः वासो देवता वस्त्रपरिधाने विनियोगः ॥) ॐ परिधास्यैयशोधास्यै दीर्घायुत्वाजरदष्टिरस्मि ॥ शतं च जीवामिशरदःपुरूचीरायस्पोषमभि-

संव्ययिष्ये ॥ इति वासः परिधाय ॥ आचमनं कृत्वा ॥ ततः पूर्ववत् यज्ञोपवीतधारणं कुर्यात् । यथा-(यज्ञोपवीतमितिमन्त्रस्य प्रजापतिर्ऋषिः यजुश्छन्दः लिङ्गोक्ता देवता यज्ञोपवीतधारणे विनियोगः ॥) ॐ यज्ञोपवीतंपरमंपवित्रंप्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात् । आयुष्यमग्र्यंप्रतिमुञ्चशुभ्रंयज्ञोपवीतंबलमस्तुतेजः ॥ यज्ञोपवीतमसियज्ञस्यत्वायज्ञोपवीतेनोपनह्यामि ॥ इति यज्ञोपवीतधारणम् ॥ आचम्य । अथोत्तरीयधारणम् ॥ (यशसामेति मन्त्रस्य अवत्सार ऋषिः पङ्क्तिश्छन्दः लिङ्गोक्ता देवता उत्तरीयवस्त्रधारणे विनियोगः ॥) ॐ यशसामाद्यावापृथिवीयशसेन्द्राबृहस्पती ॥ यशोभगश्चमाविन्दद्यशोमामतिपद्यताम् ॥ इत्यनेन उत्तरीयं धारयेत् । यदि एकं चेद्वासो भवति तदा तस्यैव परिधानं कृत्वा तस्यैव वासस उत्तरार्द्धमुत्तरीयं कुर्यात् ॥ ततो "याऽआहरज्जमदग्निरि"ति सुमनोमालाग्रहणम् ॥ (याऽआहरज्जमदग्निरिति मन्त्रस्य भरद्वाज ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः सुमनसो देवताः पुष्पमालापरिग्रहणे विनियोगः) ॥ ॐ याऽआहरज्जमदग्निःश्रद्धायैकामायेन्द्रियाय॥ ताऽअहंप्रतिगृह्णामि यशसाचभगेनच ॥ (इत्यनेन पुष्पमालाग्रहणम्) ॥ ततस्तां पुष्पमालां "यद्यशोऽप्सरसामिति" शिरसि बध्नीयात् ॥ (यद्यशोऽप्सरसेति मन्त्रस्य भरद्वाज ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः सुमनसो देवताः पुष्पमालाबन्धने विनियोगः॥) ॐयद्यशोऽप्सरसामिन्द्रश्चकारविपुलंपृथु ॥ तेन संग्रथिताः सुमनसऽआबध्नामि यशो मयि ॥ तत "युवा-सुवासा" इति संग्रथिताः शिरो वेष्टयेत् ॥ (युवासुवासा इति मन्त्रस्य विश्वामित्र ऋषिः त्रिष्टुप् छन्दः सूर्यो देवता उष्णीषेण शिरोवेष्टने विनियोगः) ॐ युवासुवासाः परिवीतऽआगात्सऽउश्रेयान्भवति जायमानः।

---

१ यज्ञोपवीतधारणविधिस्तु उपनयनसंस्कारप्रयोगे १९५ पृष्ठे द्रष्टव्यः ॥

तन्धीरासःकवयऽउन्नयन्तिस्वाध्योमनसादेवयन्तः ॥ तत दक्षिणकर्णे अलङ्करणमिति सुवर्णकुण्डलधारणं करोति ॥ (अलंकरणमिति मन्त्रस्य भारद्वाज ऋषिः उष्णिक्छन्दः अलङ्करणदेवता अलङ्करणधारणे विनियोगः) ॐ अलङ्करणमसिभूयोलङ्करणम्भूयात् ॥ पुनर्वामकर्णे च ॥ ततो वृत्रस्येत्यक्षिणी अञ्जेत् (प्रथमं दक्षिणं ततो वाममनेनैव मन्त्रेण) (वृत्रस्येति मंत्रस्य प्रजापतिर्ऋषिः गायत्री छन्दः अञ्जनो देवता चक्षुरञ्जने विनियोगः) ॐ वृत्रस्यासिकनीनकश्चक्षुर्दाऽअसिचक्षुर्मेदेहि ॥१॥ ततो "रोचिष्णुरसीति" आदर्शे आत्मानं दर्शयेत् ॥ (रोचिष्णुरिति मंत्रस्य सूर्य ऋषिः यजुश्छन्दः आशीर्देवता आदर्शे आत्मदर्शने विनियोगः)॥ ॐ रोचिष्णुरसि ॥ (ततः छत्रं प्रतिगृह्णाति बृहस्पतेरिति ॥)(बृहस्पते० इतिमन्त्रस्य गौतम ऋषिः निचृद्गायत्री छन्दः छत्रं देवता छत्रग्रहणे विनियोगः ॥) ॐ बृहस्पतेश्छदिरसिपाप्मनोमामन्तर्धेहि तेजसोयशसोमामन्तर्धेहि ॥ इत्यनेन छत्रग्रहणम् ॥ (प्रतिष्ठेस्थ इत्युपानहौ प्रमुञ्चते पादयोर्युगपत् ॥) (प्रतिष्ठेति मंत्रस्य विश्वामित्र ऋषिः यजुश्छन्दः लिङ्गोक्ता देवता उपानह्परिधाने विनियोगः ॥) ॐ प्रतिष्ठेस्थो विश्वतोमांपातम् ॥ (ततो विश्वाभ्य इति दण्डदानम् ॥)(विश्वाभ्य इति मंत्रस्य याज्ञवल्क्य ऋषिः त्रिष्टुप् छन्दः दण्डो देवता दण्डग्रहणे विनियोगः) ॥ ॐ विश्वाभ्यो मानाष्ट्राभ्यस्परिपाहिसर्वतः ॥ (इति मंत्रेण वैणवदंडमादत्ते ॥ दन्तप्रक्षालनादीनि नित्यमपि वासश्छत्रोपानहश्चापूर्वाणि चेन्मन्त्रः ॥) तत आचार्यः स्नातकस्य नियमाञ्छ्रावयेत् ॥ यथा— शूद्रादिस्पर्शनं न कर्तव्यम् ॥ नृत्यगीतवादित्राणि न कुर्यान्न च गच्छेत् ॥ क्षेमे

१, अभिषेकादि दण्डग्रहणान्तं स्नातकः करोति ततः आचार्यः

सति रात्रौ ग्रामान्तरं न गच्छेत् अक्षेमे तु कामं गच्छेत् ॥ क्षेमे सति न धावेत् ॥ कूपमध्ये अवलोकनं न कर्तव्यम् ॥ वृक्षारोहणं न कर्तव्यम् ॥ फलत्रोटनं न कर्तव्यम् ॥ संध्यासमये गमनं न कर्तव्यम् ॥ नग्नस्नानं न कर्तव्यम् ॥ पर्वतगर्तादेर्लङ्घनं न कर्तव्यम् ॥ लज्जाकरं दुःखकरममङ्गलभाषणं न कर्तव्यम् ॥ संध्यासमये उपरक्त-सूर्यबिंबावलोकनं न कर्तव्यम् ॥ सवर्णं विना सिद्धभिक्षाचर्या न कर्तव्या ॥ जलमध्ये स्वमुखं न पश्येत् ॥ अनुत्पन्नलोम्नीं स्त्रीं पुरुषाकृतिं स्त्रीं नपुंसकं च एतान्नोपहसेत ॥ अभिगमनं च न कारयेत् ॥ गर्भिणीं विजन्या इति ब्रूयात् ॥ सकुलमिति नकुलं ब्रूयात् ॥ कपालं भगालमिति ब्रूयात् ॥ इन्द्रधनुः मणिधनुरिति ब्रूयात् ॥ परस्य गां वत्सं पाययन्तीं परस्मै स्वामिने वा न कथयेत् ॥ सस्यवत्यां भूमौ केवलायां तृणैरनंतर्हितायां मूत्रपुरीषोत्सर्गं न कुर्यात् ॥ धावमानः सन् उत्तिष्ठन् सन् मूत्रपुरीषोत्सर्गं न कुर्यात् ॥ स्वयं प्रशीर्णेनायज्ञियकाष्ठेन गुदं प्रमृजीत ॥ तृणाद्यन्तरभूमौ शिरः प्रावरणैरावेष्ट्य यज्ञोपवीतं निवीतं कृत्वा आलंबितं कर्णे कृत्वा दिवोदङ्मुखो रात्रौ दक्षिणमुख उपविश्य मौनी भूत्वा पुरीषोत्सर्गं कुर्यात् ॥ नीलयादिरंजितवस्त्रं न परिदधीत ॥ तिस्रो रात्रीर्व्रतं चरेत् ॥ अमांसाशी भवेत् ॥ मृन्मयेन पात्रेण उदकादिकं न पिबेत् ॥ स्त्रीशूद्रशवकाकशुनां चादर्शनमसंभाषा च तैः ॥ शवशूद्रसूतकान्नानि नाद्यात् ॥ मूत्रपुरीषे ष्ठीवनं चातपे न कुर्यात् ॥ सूर्यात्स्वमात्मानं छत्रादिना अंतर्हितं न कुर्यात् ॥ तप्तेन जलेन शौचाचमनादिकाः क्रिया न कुर्वीत ॥ रात्रौ दीपं प्रज्वाल्य भोजनं कुर्वीत । सत्यवा-क्योच्चारणमेव कुर्यात् ॥ इत्यादयो यमानियमाः कर्तव्याः ॥ ततः

कृतस्य समावर्तनाख्यस्य कर्मणः साङ्गतासिद्धयर्थे यथासंख्याकान् ब्राह्मणान् वटुकान् कुमारिकाः सुवासिनीश्च यथाकाले यथासंपन्नेनान्नेनाहं भोजयिष्ये तेन श्रीकर्माङ्गदेवता प्रीयतां नमम ॥ कृतस्य समावर्तनाख्यस्य कर्मणः सांगतासिद्धयर्थं नानागोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो यथोत्साहं भूयसीं दक्षिणां दातुमहमुत्सृजे तेन श्रीकर्मांगदेवता प्रीयतां न मम ॥ तत आचार्यादीन् गंधवस्त्रादिना संपूज्य तेभ्यश्च दक्षिणां दत्वा तेषामाशिषो गृह्णीयात् ॥ आशीर्वादः ॥ ॐ शतञ्जीवशरदो—वर्द्धमानःशतंहेमन्ताच्छतमुवसन्तान् ॥ शतमिन्द्राग्निसविता बृहस्पतिः शतायुषा हविषेमं पुनर्दुः ॥ १ ॥ ॐशतञ्जीवशरदो वर्धमानऽइत्यपिनिगमोभवति शतमिति शतंदीर्घमायुर्मरुतो मां वर्धयन्ति ॥ शतमेवशतमात्मानं भवति ॥ शतमितिशतं दीर्घमायुः ॥ शतमिन्नुशरदोऽअन्तिदेवायत्रांनश्चक्राजरसंन्तनूनाम् ॥ पुत्रासोयत्रंपितरोभवन्तिमानो मद्ध्यारीरिषतायुर्गन्तोः ॥२३॥ ॐ विश्वांनिदेवसवितर्दुरितानि परांसुव ॥ यद्भद्रन्तन्नऽआसुव ॥ ३३० ॥ इत्याशिषो गृहीत्वा देवताग्निविसर्जनं मातॄणां विसर्जनं च कृत्वा कर्मेश्वरार्पणं कुर्यात् ॥

॥ इति समावर्तनसंस्कारप्रयोगः ॥ १५ ॥

॥ १३५ ॥ अथ वाग्दानप्रयोगः ॥

ज्योतिर्विदादिष्टे विवाहनक्षत्रादियुते शुभे काले प्रशस्तवेषैर्युग्मब्राह्मणैः पुरंध्रीभिर्ज्ञातिबांधवैश्च सह वरपिता गंधाक्षतपुष्पयुग्मवस्त्रभूषणतांबूलादि गृहीत्वा तूर्यमंगलवाद्यादिभिर्युतः कन्यागृहमागत्य शुभवस्त्रपीठासने प्रत्यङ्मुख उपविशेत् ॥ तद्वदासने कन्यापिता प्राङ्मुख उपविश्य स्वदक्षिणतः प्राङ्मुखीं कन्यामुपवेश्य स्वपुरतः गणपतिं

कलशं च संस्थाप्य श्रीगणपत्यादिस्मरणपूर्वकं देशकालसंकीर्तनांते करिष्यमाणकन्याविवाहांगभूतं वाग्दानमहं करिष्ये इति संकल्पं कुर्यात् ॥ वरपिताऽपि करिष्यमाणपुत्रविवाहांगभूतं कन्यानिरीक्षणं पूजनं च करिष्ये इति संकल्पयेत्॥तदंगी[1]भूतं गणपतिपूजनं वरुणपूजनं च करिष्ये इति उभौ कुर्याताम्॥ततो वरपिता अमुकगोत्रोत्पन्नाय अमुकप्रवरान्विताय अमुकशर्मणे वराय अमुकगोत्रोत्पन्नाममुकप्रवरान्वितामुकनाम्नीं[2] कन्यां भार्यात्वेन वृणीमहे। इति कन्यापितरं प्रति ब्रूयात् ॥ ततो दाता भार्यासुहृद्बंध्वनुमतिं गृहीत्वा यथोक्तमनुवाद्य[3] वां वृणीध्वमिति वदेत् ॥ ततो वरपिता कन्यानिरीक्षणपूर्वकं कुंकुमाक्षतपुष्पयुग्मवस्त्रभूषणतांबूलादिभिः कन्यां स्थाने पूजयेत्संप्रदायागतमंत्रैः ॥ ततो दाता प्रत्यङ्मुखोपविष्टवरपितरं गंधतांबूलादिभिः पूजयेत् ॥ स च वरपिता दातारं पूजयेत् ॥ ततो दाता हरिद्राखंडयुतानि पंच वा सप्त पूगीफलानि गृहीत्वा पठेत् ॥ अव्यंगेऽपतितेऽक्लीबे दशदोषविवर्जिते ॥ इमां कन्यां प्रदास्यामि देवाग्निद्विजसन्निधौ ॥ १ ॥ अमुकसगोत्रोत्पन्नाय अमुकप्रवरान्विताय अमुकशर्मणः प्रपौत्राय अमुकशर्मणः पौत्राय अमुकशर्मणः पुत्राय अमुकशर्मणे वराय ॥ अमुकगोत्रोत्पन्नाम् अमुकप्रवरान्विताम् अमुकशर्मणः प्रपौत्रीम् अमुकशर्मणः पौत्रीम् अमुकशर्मणः पुत्रीम् अमुकनाम्नीमिमां कन्यां ज्योतिर्विदादिष्टे मुहूर्ते दास्ये इति वाचा संप्रददे ॥ सदावघ्नन्निति मंत्रेण हरिद्राखंडपूगीफलानि वरपितृवस्त्रप्रान्ते

१ गणपतिपूजनं कन्यापितुरेवोक्तं रत्नगदाधराभ्यां प्रयोगदर्पणे धर्मसिंधौ च। उभयोरप्युक्तम्। आचारात्पुण्याहवाचनमपि केचित् कुर्वन्ति ॥ २ गदाधरेण गोत्राद्युच्चार विनैव कन्यावरणमुक्तम्। ३ गोत्रोच्चारपूर्वकं वृणीध्वमित्यंतं पुनर्वारद्वयं कार्यमिति प्रयोगरत्नादयः। उक्तस्य पुनर्भाषणमनुवादः। कन्यापूजनं वाचा दत्तेति स्वीकाराते गदाधरेणोक्तम्।

बद्ध्वा ग्रन्थिं चंदनेनार्चयित्वा पठेत् ॥ वाचा दत्ता मया कन्या पुत्रार्थे स्वीकृता त्वया ॥ कन्यावलोकनविधौ निश्चितस्त्वं सुखी भव ॥ १ ॥ ततो वरपिता पूर्ववत् हरिद्राखंडयुतपूगीफलानि गृहीत्वा अमुकगोत्रोत्पन्नाम् अमुकप्रवरान्विताम् अमुकशर्मणः प्रपौत्रीम् अमुकशर्मणः पौत्रीम् अमुकशर्मणः पुत्रीम् अमुकनाम्नीमिमां कन्याम् अमुकसगोत्रोत्पन्नाय अमुकप्रवरान्विताय अमुकशर्मणः प्रपौत्राय अमुकशर्मणः पौत्राय अमुकशर्मणः पुत्राय अमुकशर्मणे वराय दातारो भवन्तो निश्चिता भवंत्विति दातृवस्त्रप्रांते पूर्ववन्मंत्रेण बद्ध्वा ग्रंथिं चंदनेनार्चयित्वा पठेत् ॥ वाचा दत्ता त्वया कन्या पुत्रार्थे स्वीकृता मया ॥ वरावलोकनविधौ निश्चिन्तस्त्वं सुखी भव ॥१॥ ततो दाता पात्रस्थसिततंडुलपुंजोपरि शचीमावाह्य कन्याहस्तेन संपूज्य प्रार्थयेत् ॥ देवेंद्राणि नमस्तुभ्यं देवेंद्रप्रियभामिनि ॥ विवाहं भाग्यमारोग्यं पुत्रलाभं च देहि मे ॥ १ ॥ पुरंध्रीभिर्नीराजनादि मांगलिकं कार्यम् ॥ विप्रान् गंधतांबूलदक्षिणादिभिः संपूज्य तेषामाशिषो गृहीत्वा गणपत्यादि विसर्जयेत् ॥ इति वाग्दानविधिः ॥

॥ १३६ ॥ अथ विवाहसंस्कारप्रयोगः ॥ १६ ॥

तत्र तावत्कन्यापिता अर्हणवेलायां मंडपे उदङ्मुख उपविश्य स्वदक्षिणतः पत्नीं चोपविश्य मंडपं समागताय वरायोपवेशनार्थं शुद्धमासनं दत्वा तत्र प्राङ्मुखं वरमूर्ध्वजानुं तिष्ठंतं मधुपर्केणार्चयेत् ॥

॥ १३७ ॥ अथ मधुपर्कप्रयोगः ॥

आचम्य प्राणानायम्य ॥ सुमुखश्चेत्यादि पठित्वा ॥ कन्यापिता ६९८ जलमादाय ॥ अद्येत्यादि० शुभपुण्यतिथौ कन्यार्थिनं मंडपम्

इत्युक्ते "प्रतिगृह्णामी"ति वरेणोक्ते वरहस्ते अर्घ्यं दद्यात् ॥ ततो वरः " ॐ आपस्थयुष्माभिःसर्वान्कामानवाप्नवानि " (इति शिरसार्घ्यंवंदनं कृत्वानिनयन्नभिमंत्रयते ॥)"ॐ समुद्रंवःप्रहिणोमिस्वांयोनिमभिगच्छत ॥ अरिष्टाऽअस्माकंवीरामापरासेचिमत्पयः ॥ " (प्राग्वाउदग्वा क्षिपेत्) ॥ ततः कन्यापिता आचमनीयपात्रं गृहीत्वा ॥ अन्येन " आचमनीयमुदकमाचमनीयमुदकमाचमनीयमुदकम् प्रतिगृह्यताम्" इत्युक्ते "प्रतिगृह्णामी"ति वरेणोक्ते च वरहस्ते आचमनीयपात्रं दद्यात् ॥ ततो वरः तस्मात् ॐ " आमागन्यशसासᳫंसृजवर्चसा ॥ तंमाकुरुप्रियंप्रजानामधिपतिंपशूनामरिष्टिं तनूनाम् ॥ " (इति मन्त्रेण सकृदाचमनं कुर्यात् ॥ द्विस्तूष्णीम्) ॥ ततः कन्यापिता कांस्यपात्रे दधिमधुघृतम् एकीकृत्य ॥ अन्येन"ॐमधुपर्को मधुपर्को मधुपर्कः प्रतिगृह्यताम्॥" इत्युक्ते (मित्रस्यत्वेति मधुपर्कं प्रतीक्षते) वरः कन्यापितुर्हस्तस्थितं मधुपर्कम् ईक्षते ॥ "ॐ मित्रस्य त्वा चक्षुषा प्रतीक्षे ॥" (ततो देवस्येति प्रतिगृह्णाति वरः॥)" ॐ देवस्यत्वासवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यांपूष्णोहस्ताभ्याम्॥प्रतिगृह्णाम्यग्नेष्ट्वास्येनप्राश्नामि॥"इति मन्त्रेण वरो मधुपर्कपात्रं गृहीत्वा सव्ये पाणौ कृत्वा ॥ दक्षिणस्यानामिकया त्रिः प्रयौति ॥(मधुपर्कं त्रिःप्रदक्षिणमालोडयति॥)"ॐनमः श्यावास्यायान्नशनेयत्तऽआविद्धंतत्तेनिष्कृन्तामि॥" (अनामिकांगुष्ठेनचत्रिर्निरुक्षयति॥) ततः (तस्य त्रिः प्राश्नाति ॥ प्रतिप्राशनं मंत्रावृत्तिः)" ॐ यन्मधुनोमधव्यंपरमᳫंरूपमन्नाद्यम् ॥ तेनाहंमधुनोमधव्येनपरमेणरूपेणान्नाद्येनपरमोमधव्योन्नादोसानिति ॥" इति मंत्रेण त्रिः प्राश्नीयात् ॥(मधुमतीभिर्वाप्रत्यृचंपुत्रायांतेवासिनेवोत्तरतः आसीनायोच्छिष्टं दद्यात् ॥ सर्वं वा प्राश्नीयात् प्राग्वासंचरे निनयेत्) आचमनं कुर्यात् ॥ ततो यज-

मानो वरवामहस्ते जलं दद्यात् ॥ वरः अङ्गन्यासं कुर्यात् ॥ (प्राणान् संमृशति ॥ मुखं कराग्रेण) ॐ वाङ्मऽआस्येस्तु ॥ (तर्जन्यंगुष्ठाभ्याम्) ॐ नसोर्मे प्राणोस्तु ॥ (अनामिकांगुष्ठाभ्याम्) ॐ अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु ॥ (मध्यमांगुष्ठाभ्याम्) ॐ कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु ॥ (कराग्रेण) ॐ बाह्वोर्मे बलमस्तु (युगपद्धस्तेन) ॥ ॐ ऊर्वोर्मे ओजोस्तु ॥ (शिरःप्रभृतिपादांतानि सर्वांगानि उभाभ्यां हस्ताभ्याम्) ॐ अरिष्टानि मेङ्गानितनूस्तन्वामेसहसन्तु इति ॥ (आचान्तोदकायसास्मादाय गौरीतित्रिःप्राहमरयाह ॥) ततोऽन्येन "गौर्गौर्गौः" इत्युक्ते यजमानेन गोरुत्सर्जनद्रव्ये स्थापिते वरः । "ॐ माता रुद्राणां दुहिता वसूनाᳬ स्वसादित्यानाममृतस्यनाभिः ॥ प्रनुवोचंचिकितुषेजनायमागामनागामदितिंवधिष्ट ॥ ममचामुष्य च पाप्मानᳬहनोमि इति (यद्यालभेत) ।"(अथयद्युत्सिसृक्षेन्मम चामुकशर्मणो यजमानस्य उभयोः पाप्माहतः ॥) इति उपांशु ॥ ततः उच्चैः ॥ " ॐ उत्सृजत तृणान्यत्तु " इति ब्रूयात् (नत्वेवामाᳬसोर्घःस्यादधियज्ञमधिविवाहंकुरुतेत्येवब्रूयाद्यद्यप्यसकृत्संवत्सरस्य सोमेनयजेतकृतार्घ्याऽएवैनंयाजयेयुर्नाकृतार्घ्या इति श्रुतेः ॥) अत्र शिष्टाचारप्राप्ताः केचन पदार्था लिख्यन्ते ॥ (गंधाद्यलंकारान्तेषु वरस्यैव मंत्रपाठः ॥) ॐ सुचक्षाऽअहमक्षीभ्यांभूयासᳬसुवर्चामुखेन ॥ सुश्रुत्कर्णाभ्याम्भूयासम् । इति मंत्रेण वरस्य ललाटे यजमानो गंधं कुर्यात् । ॐ अनाधृष्टापुरस्तादग्नेराधिपत्यऽआयुर्म्मेदाः ॥ पुत्रवती दक्षिणतऽइन्द्रस्याधिपत्ये प्रजाम्मेदाः ॥ सुषदापश्चाद्देवस्यसवितुराधिपत्येचक्षुर्म्मेदाऽ

१ अथ गवालम्भनम्—यद्यपि सूत्रकारेण गवालंभो नियमेन उक्तस्तथापि मधुपर्के यशोवर्धन इति स्मृत्यन्तरवचनात्याज्य एव ॥ अतः कलियुगे निषेधः ॥ तत्स्थाने तन्निष्क्रयद्रव्योत्सर्गः ॥

आ श्रुतिरुत्तरतोधातुराधिपत्येरायस्पोपंम्मेदाद ॥ विधृतिरुपरिष्टाद्-बृहस्पतेराधिपत्यऽओजोमेदा व्विश्वान्म्योमानाष्ट्रन्म्यंस्पाहिमनोरश्वांसि ॥ १२/३७ ॥ इति वरस्य ललाटे अक्षतान् दद्यात् ॥ ॐ यज्ञोपवीतंपरमं पवित्रंप्रजापतेर्यत्सहजंपुरस्तात् ॥ आयुष्यमग्र्यंप्रतिमुञ्चशुभ्रंयज्ञोपवीतं बलमस्तुतेजः ॥ इति मंत्रेण वराय यज्ञोपवीतदानम् ॥ ॐ परिधास्यै-यशोधास्यैदीर्घायुत्वायजरदष्टिरस्मि ॥ शतंचजीवामिशरदःपुरूचीराय-स्पोपमभिसंव्ययिष्ये इति ॥ मंत्रेण वराय वस्त्रं दद्यात् ॥ यजमानो हस्ते जलमादाय अनेन मधुपर्कार्चनेन लक्ष्मीनारायणौ प्रीयेताम् ॥

॥ इति मधुपर्कप्रयोगः ॥

अथ विवाहसंस्कारप्रयोगः ॥ ततो वरो विवाहवेद्यां गत्वा शुभासने उपविश्य आचम्य प्राणानायम्य ॥ अद्ये० तिथौ धर्मार्थ-काममजासिद्ध्यर्थं दारपरिग्रहणं करिष्ये । इति संकल्प्य ॥ तत्र पंचभू-संस्कारपूर्वकं योजकनामाग्निप्रतिष्ठापनं करिष्ये ॥ इति पुनः संकल्प्य योजकनामाग्निं स्थापयेत् ॥ ततः कन्यामानयेत् । अन्तर्पटं कुर्यात् ॥ अत्रावसरे मंगलघोषं कारयेत् ॥ ब्राह्मणाश्च मंगलाष्टकं पठेयुः ॥ विशेषका उच्चारणीयाः

॥ अथ मङ्गलाष्टकम् ॥

श्रीमत्पङ्कजविष्टरो हरिहरौ वायुर्महेन्द्रोऽनल-
श्चन्द्रो भास्करवित्तपालवरुणप्रेताधिपादिग्रहाः ॥

---

१ अत्रावसरे अग्निस्थापनं कृतं चेत् पश्चान्न कर्तव्यम् । संप्रति कन्यादानानन्तरमग्नि-प्रतिष्ठापनं कुर्वन्ति तत्र यथाचारं कर्तव्यम् ॥

२ कन्यादाता सावधान । कन्याप्रतिग्राही सावधान । प्रतिश्लोके ६०, ५०, ४०, ३०, २०, १०, ५, अक्षर० पूर्णनोसमय ए प्रमाणे पुरोहिते बोलवुं ॥

प्रद्युम्नो नलकूबरौ सुरगुरुश्चिंतामणिः कौस्तुभः
स्वामी शक्तिधरश्च लाङ्गलधरः कुर्यात्सदा मंगलम् ॥ १ ॥

गौरी श्रीरदितिर्दितिश्च सुभगा कद्रूः सुपर्णा शिवा
सावित्री च सरस्वती च सुरभिः सत्यव्रताऽरुन्धती ॥
स्वाहा जांबुवती च रुक्मभगिनी दुःस्वप्नविध्वंसिनी
वेला चांबुनिधेः सुमीनमकरा कुर्यात् सदा मंगलम् ॥ २ ॥

नेत्राणि त्रितयं महत्पशुपतेरग्नेस्तु पादत्रयं
तद्वद्विष्णुपदत्रयं त्रिभुवने ख्यातं च रामत्रयम् ॥
गंगौघस्य गतित्रयं सुविमलं तद्वदृषीणां त्रयं
संध्यायास्त्रितयं द्विजैरभिमतं कुर्यात् सदा मंगलम् ॥ ३ ॥

गंगा गोमतिगोपतिर्गणपतिर्गोविंदगोवर्धनौ
गीतागोमयगोरजो गिरिसुता गंगाधरो गौतमः ॥
गायत्री गरुडो गदाधरगयागंभीरगोदावरी
गांधर्वग्रहगोपगोकुलधरः कुर्यात् सदा मंगलम् ॥ ४ ॥

अश्वत्थो वटवृक्षचन्दनतरुर्मंदारकल्पद्रुमौ
जांबुनिंबकदंबकाम्रसरला वृक्षाश्च ये क्षीरिणः ॥
सर्वेस्तैः फलपुष्पपल्लववरैर्युक्तः सदा वंदितं
रम्यं चैत्ररथं सनंदनवनं कुर्यात् सदा मंगलम् ॥ ५ ॥

वाल्मीकिः सनकः सनंदनमुनिर्व्यासो वसिष्ठो भृगु-
र्जाबालिर्जमदग्निजह्नुजनको गर्गो गिरा गौतमः ॥
मांधाता ऋतुपर्णवैनसगरा धन्यो दिलीपो नलः
पुण्यो धर्मसुतो ययातिनहुषौ कुर्यात् सदा मंगलम् ॥ ६ ॥

गंगा सिंधुसरस्वती च यमुना गोदावरी नर्मदा ।
कावेरी सरयूर्महेन्द्रतनया चर्मण्वती वेदिका ॥
क्षिप्रा वेत्रवती महासुरनदी ख्याता गया गंडकी ॥
पुण्याः पुण्यजलैः समुद्रसहिताः कुर्यात् सदा मंगलम् ॥ ७ ॥
लक्ष्मीः कौस्तुभपारिजातकसुरा धन्वन्तरिश्चंद्रमा
गावः कामदुघा सुरेश्वरगजो रंभादिदेवाङ्गनाः ॥
अश्वः सप्तमुखः सुधा हरिधनुः शंखो विषं चांबुधे
रत्नानीति चतुर्दश प्रतिदिनं कुर्वन्तु वै मङ्गलम् ॥ ८ ॥

एवं मङ्गलाष्टकं पठित्वा ततो अन्तर्पटं निस्सार्य (मंगलस्मृतिपाठावसरे वध्वा पुष्पग्रथितवरमालां वरस्य कण्ठे धारयित्वा ।) ॐ मनोजूति० सुप्रतिष्ठितमस्तु दम्पत्योरविच्छिन्ना प्रीतिरस्त्वित्युक्त्वा अक्षतान् दंपत्योः शिरसि प्रक्षिपेयुः॥ ततः ॐ श्रीश्चतेलक्ष्मीश्चपत्न्यावहोरात्रेपार्श्वेनक्षत्राणिरूपमश्विनौव्यात्तम्॥इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाणसर्वलोकम्मऽइषाण॥ इतिमंत्रेण कन्यापादप्रक्षालनम्॥ (अथैनां वासः परिधापयति जरां गच्छेति मन्त्रेण) ॐ जरांगच्छपरिधत्स्ववासोभवाकृष्टीनामभिशस्तिपावा॥ शतंच जीवशरदःसुवर्चारयिंचपुत्राननुसंव्ययस्वायुष्मतीदंपरिधत्स्ववासः इति॥ अथोत्तरीयम् ॥ ॐ याऽअकृंतन्नवयंयाऽअतन्वत ॥ याश्चदेवीस्तंतूनभि-

१ कारिका–कन्यावस्त्रपरिधाने तथैव चोत्तरीयके । तथा समीक्षकाले तु पितुर्निष्क्रमणे गृहात् ॥१॥ अश्मनो रोहणे चैव हस्तग्रहे तथैव च ॥ तथा सप्तपदे चैव वधूमूर्ध्न्यभिषेचने ॥२॥ हृदयालम्भने चैव तथैव चाभिमन्त्रणे ॥ दम्पुत्ये क्रमेणैव एतान्मन्त्रान्वरः पठेत् ॥३॥ ॐ चत्वारः पाकयज्ञाहुतोऽहुतःप्रहुतः प्राशितऽइति पंचसुबहिः शालायाविवाहेचूडाकरणऽउपनयनेकेशान्ते सीमन्तोन्नयनऽइत्युपलिप्तऽउद्धृतावोक्षितेग्निमुपसमाधायनिर्मन्थ्यमेकेविवाहेऽउदगयनऽआपूर्यमाणपक्षेपुण्याहेकुमार्याःपाणिंगृह्णीयात् ॥ त्रिषुत्रिषूत्तरादिस्वातौमृगशिरसिरोहिण्यान्तिस्रो ब्राह्मणस्यवर्णानुपूर्व्येणद्वेराजन्यस्यैकावैश्यस्यसर्वेषांशूद्रामप्येकेमन्त्रवर्जम् ॥ (पा. गृ सू.)

तोततन्थ तास्त्वा देवीर्जरसे संव्ययस्वायुष्मतीदं परिधत्स्व वासः ॥ ततो
वधूवरौ परस्परं समंजयति ॥ ॐ समंजन्तु विश्वेदेवाः समापो हृदया-
नि नौ ॥ सम्मातरिश्वा संधाता समुदेष्ट्री दधातु नौ ॥ ततो द्विजाः परित्वा-
गिर्वणोगिरऽइत्यादि जुषाणोऽअप्तु राज्यस्य वेतु स्वाहेत्यन्तेनानुवाकेन
वधूवरावच्छिन्नचतुर्विंशतितन्तुभिर्द्विगुणीकृतसूत्रेण कंठे ईशानादि वेष्टयेत्
यथाचारम् ॥ अयं देशाचारः ॥ तत्रमंत्राः ॥ ॐ परित्वागिर्वणोगिरऽ-
इमाभवन्तु विश्वतः ॥ वृद्धायुमनुवृद्धयो जुष्टाभवन्तु जुष्टयः ॥ १ ॥
इन्द्रस्य स्यूरसीन्द्रस्य ध्रुवोसि ॥ ऐन्द्रमसि वैश्वदेवमसि ॥२॥ विभूरसि-
प्रवाहणो वह्निरसि हव्यवाहनः ॥ श्वात्रोसि प्रचेतास्तुथोसि विश्ववेदाः
॥ ३ ॥ उशिगसि कविरङ्घारिरसि बम्भारिरवस्यूरसि दुवस्वाञ्छुन्ध्यूर-
सि मार्जालीयः सम्राडसि कृशानुः परिषद्योसि पवमानो नभोसि प्रत-
क्वा मृष्टोसि हव्यसूदनऽऋतधामासि स्वर्ज्योतिः ॥ ४ ॥ समुद्रोसि वि-
श्वव्यचाऽअजोस्येकपादहिरसि बुध्न्यो वागस्यैन्द्रमसि सदोस्यृतस्य द-
्वारौ मामा संताप्तमध्वनामध्वपते प्रमा तिर स्वस्ति मेस्मिन्पथि देवयाने
भूयात् ॥५॥ मित्रस्य मा चक्षुषेक्षध्वमग्नयः सगराः सगरा स्थ सगरेण ना-
म्ना रौद्रेणानीकेन पात माग्नयः पिपृत माग्नयो गोपायत मा नमो वोस्तु मा मा-
हिंसिष्ट ॥६॥ ज्योतिरसि विश्वरूपं विश्वेषां देवानां समित् ॥ त्वं सो-
म तनूकृद्भ्यो द्वेषोभ्योन्यकृतेभ्यऽउरुयन्तासि वरूथं स्वाहा ॥ जुषाणोऽ
अप्तुराज्यस्य वेतु स्वाहा ॥७॥ ३९-१५ ॥(अत्रावसरे कन्यापिता यानानि-
कयादं कुर्यात् ॥) यथा-आचम्य ॥ प्रजापतिस्वरूपिणे वराय एतत्ते पाद्यं
पादावनेजनं पादप्रक्षालनं हस्ताभ्याम् एष तेऽर्घः ॥ इदमपोदकं सच-
न्दनं पुष्पम् ॥ पाद्योदकं परित्यज्य ॥ गौरीस्वरूपिणि कन्यके एतत्ते
पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनम् एष तेऽर्घः ॥ पाद्योदकं परित्यज्य ॥

आचम्य ॥ स्वपादौ करौ प्रक्षाल्याचम्य ॥ दिग्बंधनम् ॥ ॐ स्वस्तिनऽ इन्द्रो० ॥१॥ कन्यादाननिमित्तं वाचनिकश्राद्धोपहाराणां सर्वेषां पवित्रवास्तु ॥ देशकालपाकपात्रोपहारद्रव्यश्रद्धासंपदस्तु ॥ कन्यापिता हस्ते जलमादाय ॥ अद्येत्यादि० मम एकोत्तरशतकुलोद्धारणार्थं कन्यादानारम्भाङ्गनिमित्तं वाचनिकश्राद्धमहं करिष्ये ॥ प्रजापतिस्वरूपिणे वराय इदमासनम् ॥ गौरीस्वरूपकन्यकायै इदमासनम् ॥ प्रजापतिस्वरूपिणे वराय यथादत्तं गंधाद्यर्चनं कंकणकुंडलमुद्रिकावासांसि भोजनपात्रादीनि नानादैवतानि गंधपुष्पाद्यर्चितानि तन्निष्क्रयभूतं द्रव्यं वा तुभ्यमहं संप्रददे ॥ गौरीस्वरूपकन्यकायै यथा० संप्रददे । दीपादीनां प्रसादात् इदं वो ज्योतिः सुज्योतिः शेषोपचाराः संपूर्णाः संभवन्तु ॥ भोजनसंकल्पः ॥ यथातृप्तिपर्यन्तं ब्राह्मणभोजनं सपरिवाराय प्रजापतिस्वरूपिणे वराय अहं दास्ये वा अन्नाद्येनाहं तर्पयिष्ये ॥ यथातृप्ति०गौरीस्वरूपकन्यकायै अहं दास्ये ॥ दक्षिणासंकल्पः ॥ प्रजापतिस्वरूपिणे वराय फलमुखवासतांबूलं हिरण्यदक्षिणां तुभ्यमहं संप्रददे ॥ गौरीस्वरूपकन्यकायै फल० ॥ अस्य हिरण्यश्राद्धविधेः परिपूर्णताऽस्तु ॥ अस्तु परिपूर्णता ॥

॥ १३८ ॥ अथ कन्यादानसंकल्पः ॥

ततो दाता स्वदक्षिणास्थितपत्न्या सह वरपार्श्वभागे शुभासन उदङ्मुख उपविश्याचम्य प्राणानायम्य ॥ हस्ते जलमादाय-विष्णुर्विष्णुर्विष्णुःएवंगुणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अस्मिन्पुण्याहे अस्याः कन्याया अनेन वरेण धर्मप्रजया उभयोः वंशवृद्ध्यर्थं तथा च मम समस्तपितॄणां निरतिशयानंदब्रह्मलोकावाप्त्यादिकन्यादानकल्पोक्तफला-

वाप्तये अनेन वरेण अस्यां कन्यायामुत्पादयिष्यमाणसंतत्यां दश पूर्वान् दशापरान् मां च एकविंशतिपुरुषानुद्धर्तुं ब्रह्मविवाहविधिना श्रीलक्ष्मीनारायणप्रीतये गोत्रोच्चारपूर्वकं कन्यादानमहं करिष्ये ॥ (ततः आचारात् वरहस्ते सुप्रोक्षितादिकरणम् ॥ शिवा आपः सन्तु । सन्तु शिवा आपः ॥ सौमनस्यमस्तु । अस्तु सौमनस्यम् ॥ अक्षतं चारिष्टं चास्तु । अस्त्वक्षतमरिष्टं च ॥ अग्राः पान्तु सुप्रोक्षितमस्तु ॥ गन्धाः पान्तु सौमंगल्यं चास्तु॥ अक्षताः पान्तु आयुष्यमस्तु॥पुष्पाणि पान्तु सौश्रियमस्तु॥यत्पापं रोगमशुभमकल्याणं तद्दूरे प्रतिहतमस्तु ॥) ततः गोत्रोच्चारः—वरस्य प्रथमं पश्चात् कन्यायाः॥ अमुकगोत्रोत्पन्नस्य अमुकप्रवरस्य अमुकशर्मणः प्रपौत्राय ॥ १ ॥ अमुकगोत्रस्य अमुकप्रवरस्य अमुकशर्मणः पौत्राय ॥ २ ॥ अमुकगोत्रस्य अमुकप्रवरस्य अमुकशर्मणः पुत्राय ॥ ३ ॥ अमुकगोत्राय अमुकप्रवराय शुक्लयजुर्वेदान्तर्गतवाजिमाध्यंदिनीयशाखाध्यायिने अमुकशर्मणे वराय ॥ स्थिरस्थावरसंयोगो बहुपुत्रं बहुधनं चायुष्यं चास्तु ॥ ततः कन्याया गोत्रोच्चारः ॥ अमुकगोत्रस्य अमुकप्रवरस्य अमुकशर्मणः प्रपौत्रीम् ॥ १ ॥ अमुकगोत्रस्य अमुकप्रवरस्य अमुकशर्मणः पौत्रीम् ॥ २ ॥ अमुकगोत्रस्य अमुकप्रवरस्य अमुकशर्मणः पुत्रीम् ॥ ३ ॥ अमुकगोत्राम् अमुकप्रवराम् अमुकनाम्नीं श्रीरूपिणीमिमां कन्यां दास्ये ॥ उभयोः पाणिग्रहणं भवतु ॥ एवं पुनः द्विवारं[1] पठित्वा ॥ (अथ वरमातुलपक्षगोत्रोच्चारः) अमुकगोत्रोत्पन्नस्य अमुकप्रवरस्य अमुकशर्मणः प्रदौहित्राय ॥ अमुकगोत्रस्य अमुकप्रवरस्य अमुकशर्मणः दौहित्राय अमुकशर्मणे वराय ॥ (ततः कन्यामातुलपक्षगोत्रोच्चारः) अमुकगोत्रस्य अमुकप्रवरस्य अमुकशर्मणः प्रदौहित्रीम् ॥

१ वरस्य गोत्रोच्चारादि एकः पर्यायः एवमेव पुनः पर्यायद्वयमिति संप्रदायो वा ॥

अमुकगोत्रस्य अमुकप्रवरस्य अमुकशर्मणः दौहित्रीम् अमुकनाम्नीं श्रीरूपिणीमिमां कन्यां दास्ये ॥ अथ कन्यादानसंकल्पः॥ हस्ते जलमादाय-विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः० अथ मंडपाधस्तात्कुलशीलसौभाग्यसामुद्रिकलक्षणलावण्यावयवारोग्यां कांचनकुंडलकंकणवलयनूपुरकटिमेखलाभुजचूडिकेयूरांगदभूषितां यवनालिकेरहस्तां भ्रमरध्वनिसुगंधिमालालंकृतां कर्पूरागरुधूपितां गंधयक्षकर्दमद्रव्यादिसहितां मुकुटमालादिविविधालंकृतां शृंगारराशिशय्याम् आसनछत्रोपानद्वासःकमंडलुकांस्यपात्रसौवर्णरौप्यमुद्रिकोपेतां गजदंतकंकणान्विताम् एतेषां वस्तुमात्राणां स्वहस्तोपार्जितगृहवित्तानुसारेण भक्ष्यभोज्यपयःपानादिकिंचिन्मात्रद्रव्यादिसहितां श्रौतस्मार्तकर्मदक्षां प्रियंवदां कुंकुमकज्जलमुक्ताफलमालालंकृतां श्रीफलांजलिपूरिताम् आदर्शहस्तां मदनफलबद्धां त्रिमातुलशुद्धां दशपुरुषविरूपातां वेदशास्त्रपुराणनिगमान्वितां दूर्वांकुरप्रसारितप्रयागवटशाखाविस्तारेण एकोत्तरशतकोटिकुलोद्धारश्रेयसे अमुकगोत्राय अमुकप्रवरान्विताय यजुर्वेदमाध्यन्दिनीशाखाध्यायिने अमुकशर्मणे वराय मधुपर्केण पूजिताय तत्संतानपरंपरावृद्धये आचंद्रार्कं यावत् इमां कन्यां यथाशक्त्यलंकृतां गृहमंडपोपविष्टस्वजनसाक्षिभिर्विष्णुवह्निब्राह्मणसन्निधौ वेदशास्त्रपुराणोक्तशतगुणीकृतज्योतिष्टोमातिरात्रफलप्राप्तिकामः भार्यत्वेन तुभ्यमहं संप्रददे ॥ तेन भगवन्तौ लक्ष्मीनारायणौ प्रीयेतां न मम ॥ कृतस्य कन्यादानस्य साङ्गतासिद्ध्यर्थं सुवर्णनिष्कयीं दक्षिणां तुभ्यमहं संप्रददे ॥ इत्युक्त्वा सकुशजलाक्षतकन्यादक्षिणहस्तं वरदक्षिणहस्ते दद्यात् ॥ "ॐ स्वस्ति" इति वरो ब्रूयात् ॥ ततः कन्यामातापितरौ उभौ पठतः ॥ कन्यां लक्षणसंपन्नां कनकाभरणैर्युताम् ॥ दास्यामि ब्रह्मणे तुभ्यं ब्रह्मलोकजिगीषया ॥ पृथिव्यादिमहाभूता

साक्षिण्यः सर्वदेवताः ॥ इमां कन्यां प्रदास्यामि पितॄणां तारणाय च ॥ मम वंशकुले जाता यावद्वर्षाणि पोषिता ॥ तुभ्यं वर मया दत्ता पुत्रपौत्रविवर्धिनी ॥ गौरीं कन्यामिमां विप्र यथाशक्ति विभूषिताम् ॥ गोत्राय शर्मणे तुभ्यं दत्तां विप्र समाश्रय ॥ "मयापि दत्ता" इति माता वदेत् "मया प्रतिगृहीता" इति वरः ॥ कोदात् इति पठेत् ॥ ॐ कोदात्क-स्मांऽअदात्कामोदात्कामायादात्।कामोदाताकामः प्रतिग्रहीताकामैतत्ते ॥४८॥ "यस्त्वया धर्मश्चरितव्यः सोऽनया सह धर्मे चार्थे च कामे च त्वयेयं नातिचरितव्या" ॥ "अहं न अतिचरामि" इति वरः ॥ एवं त्रिवारं पठित्वा वरमालार्पणम् ॥ वस्त्रग्रन्थि (छेडाछेडी) बन्धनम् ॥ गोदानम् ॥ कन्यादानसांगतासिद्ध्यर्थमिमां गां रुद्रदैवत्यां वा गोनिष्क्रयीभूतमिदं द्रव्यं प्रजापतिरूपिणे वराय तुभ्यमहं संप्रददे ॥ ततः कन्यामाता कृतांजलिः कन्यादक्षिणकर्णे पठति ॥ (ब्रह्मासावित्रीनुं सौभाग्य । ईश्वरपार्वतीनुं सौभाग्य) ततः पित्रा भक्तामादाय गृहीत्वा निष्क्रामति ॥ यदैषि मनसा दूरं दिशोनुपवमानो वा ॥ हिरण्यवर्णो वैकर्णः स त्वा मन्मनसां करोत्वित्यसाविति ॥ अथैनां समीक्षयति ॥ ॐ अघोरचक्षुरपतिघ्न्येधि शिवा पशुभ्यः सुमनाः सुवर्चाः । वीरसूर्देवकामा स्योना शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे ॥ सोमः प्रथमो विविदे गंधर्वो विविदऽउत्तरः ॥ तृतीयोग्निष्टे पतिस्तुरीयस्ते मनुष्यजः ॥ सोमोददद् गंधर्वाय गंधर्वोददग्नये ॥ रयिं पुत्रांश्चा-दादग्निर्मह्यमथोऽइमाम् ॥ सा नः पूषा शिवतमामैरयसानऽऊरूऽउशती विहर ॥ यस्यामुशन्तः प्रहराम शेपं यस्यामु कामा बहवो निविष्ट्या इति ॥ ततः आचारप्राप्तं स्वस्तिपुण्याहवाचनं कुर्यात् ॥ ततः आपोहिष्ठेति त्रिभिर्मन्त्रैः पंचवारुणैश्चाभिषेकः ॥ ॐ आपोहिष्ठा० ।

ॐ योवः शिवतमो० । ॐ तस्माऽअरङ्ग० ॥ ॐ पयः पृथिव्यां० ॥ ॐ त्रातारमिन्द्र०॥ ॐ वरुणस्यो० ॥ ॐ इमम्मे० ॥ ॐ तत्वायामि० ॥ अथ आशीर्वादः ॥ शतं जीवशरदो० ॥ ॐ शतमिन्नुशरदो० ॥ कृतस्य कन्यादानकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं यथासंख्याकान् ब्राह्मणान् कुमारिकाः वटुकान् सुवासिन्यादीन् अद्याहं भोजयिष्ये ॥ कृतस्य कन्यादानकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं नानागोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो यथोत्साहं दक्षिणां दास्ये ॥ लम्बोदर नमस्तुभ्यं० ॥ इति कन्यादानप्रयोगः॥

॥ १२९ ॥ अथ विवाहहोमः ॥

वरो हस्ते जलमादाय अद्येत्यादि० प्ारीप्सितकर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थं भार्यात्वसिद्ध्यर्थं विवाहहोममहं करिष्ये ॥ तदंगत्वेन गणपतिपूजनमहं करिष्ये इति संकल्प्य गणपतिं षोडशोपचारैः पूजयेत् ॥ ततः आचार्यः पंचभूसंस्कारपूर्वकम् अग्निं संस्थापयेत् ॥ अग्नेरुत्तरतो भूरसि०इत्यादिक्रमेण उदककुंभस्थापनम् ॥ ततो दक्षिणतो ब्रह्मासनमास्तीर्येत्यादि चरुवर्ज्यं पात्रासादनादि प्रोक्षण्याः प्रत्युत्पवनान्तं कर्म कृत्वा तिष्ठेत् ॥ तत्र उपकल्पनीयानि ॥ उत्तरे शमीपलाशमिश्रा लाजाः ॥ अश्मा ॥ अखंडलोहितम् ॥ आनडुहं चर्म ॥ कुमारीभ्राता ॥ शूर्पम् ॥ दृढपुरुषः ॥ पूर्णपात्रं वरो वा ॥ (प्रोक्षणकाले उपकल्पनीयानां प्रोक्षणम् ॥) ततः उपयमनकुशानादाय तिष्ठन् समिधोऽभ्याधाय ॥ प्रोक्षणीशेषोदकेन अग्निं प्रदक्षिणीकृत्य इतरथाऽऽवृत्तिः॥पवित्रयोः प्रणीतासु निधानम् ॥ (वरेणान्वारब्ध आचार्यो वा) ब्रह्मणा दक्षिणहस्तेनान्वारब्धः वरः दक्षिणं जान्वाच्य स्रुवेण जुहुयात् ॥ (मनसा) (ॐ प्रजापतये)

---

१ पूर्वमग्निस्थापनं कृतं चेत्तत्प्रति न कर्तव्यम् ॥ २ वर एव दृढपुरुष इति गदाधरः ॥

ऋक्सामभ्योप्सरोभ्यऽएष्टिभ्यो नमम ॥१२॥$\frac{४३}{१८}$॥ इति राष्ट्रभृद्धोमः ॥

॥१४१॥ अथ जयाहोमः॥ (चित्तंचेत्यादित्रयोदशमंत्राणां परमेष्ठी ऋषिः सर्वाणि यजूंषि छन्दांसि लिंगोक्ता देवताः विवाहकर्मणि जयाहोमे विनियोगः) ॥ ॐ चित्तं च स्वाहा इदं चित्ताय नमम ॥१॥ ॐ चित्तिश्च स्वाहा इदं चित्त्यै नमम ॥ २ ॥ ॐ आकूतं च स्वाहा इदम् आकूताय नमम ॥ ३ ॥ ॐ आकूतिश्च स्वाहा इदम् आकूत्यै नमम ॥ ४ ॥ ॐ विज्ञातं च स्वाहा इदं विज्ञाताय नमम ॥ ५ ॥ ॐ विज्ञातिश्च स्वाहा इदं विज्ञात्यै नमम ॥ ६ ॥ ॐ मनश्च स्वाहा इदं मनसे नमम ॥ ७ ॥ ॐ शक्वरीश्च स्वाहा इदं शक्वरीभ्यो नमम ॥८॥ ॐ दर्शश्च स्वाहा इदं दर्शाय नमम ॥ ९ ॥ ॐ पौर्णमासं च स्वाहा इदं पौर्णमासाय नमम ॥ १० ॥ ॐ बृहच्च स्वाहा इदं बृहते नमम ॥ ११ ॥ ॐ रथन्तरं च स्वाहा इदं रथन्तराय नमम ॥ १२ ॥ ॐ प्रजापतिर्जयानिन्द्रायवृष्णेप्रायच्छदुग्रःपृतनाजयेषु ॥ तस्मैविशः समनमन्त सर्वाः सऽउग्रः सऽइहव्यो बभूव स्वाहा ॥ इदं प्रजापतये जयानिन्द्राय नमम ॥ १३ ॥ इति जयाहोमः ॥

॥१४२॥ अथाभ्यातानहोमः ॥ (अग्निर्भूतानामित्याद्यष्टादशानां मंत्राणां प्रजापतिर्ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः तत्तन्मंत्रोक्ता देवताः अभ्यातानहोमे विनियोगः) ॐ अग्निर्भूतानामधिपतिःसमावत्वस्मिन्ब्रह्मण्यस्मिन्क्षत्रेस्यामाशिष्यस्यापुरोधायामस्मिन्कर्मण्यस्यांदेवहूत्याᳯस्वाहा ॥ इदमग्नये भूतानामधिपतये नमम ॥ १ ॥ (एवमभ्यातानहोमे प्रत्याहुतौ समावत्वस्मिन्नित्यारभ्यसर्वत्रसमानम्) ॐ इन्द्रो ज्येष्ठानामधिपतिः समावत्व० स्वाहा ॥ इदमिन्द्राय ज्येष्ठानामधिपतये नमम ॥ २ ॥ (अन्तर्पटं कुर्यात् ॥) ॐ यमः पृथिव्या अधिपतिः समावत्व० स्वाहा ॥

इदं यमाय पृथिव्या अधिपतये नमम ॥ ३ ॥ (दक्षिणस्याम् अन्यपात्रे निधाय तन्मध्ये त्यागः॥ अन्तर्पटं निःसार्य॥ मणीतोदकस्पर्शः॥) ॐवायुरन्तरिक्षानामधिपतिः समावत्व० स्वाहा ॥ इदं वायवे अन्तरिक्षानामधिपतये नमम ॥ ४ ॥ ॐसूर्यो दिवोऽधिपतिः समावत्व० स्वाहा ॥ इदं सूर्याय दिवोऽधिपतये नमम ॥ ५ ॥ ॐ चंद्रमा नक्षत्राणामधिपतिः समावत्व० स्वाहा ॥ इदं चंद्रमसे नक्षत्राणामधिपतये नमम ॥ ६ ॥ ॐ बृहस्पतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिः समावत्व० स्वाहा ॥ इदं बृहस्पतये ब्रह्मणोऽधिपतये नमम ॥ ७ ॥ ॐ मित्रः सत्यानामाधिपतिः समावत्व० स्वाहा ॥ इदं मित्राय सत्यानामधिपतये नमम ॥ ८ ॥ ॐ वरुणोऽपामधिपतिः समावत्व० स्वाहा ॥ इदं वरुणायापामधिपतये नमम ॥ ९ ॥ ॐ समुद्रः स्रोत्यानामधिपतिः समावत्वस्मि० स्वाहा ॥ इदं समुद्राय स्रोत्यानामधितये नमम ॥१०॥ ॐ अन्नःसाम्राज्यानामधिपतिः समावत्व० स्वाहा ॥ इदमन्नाय साम्राज्यानामधिपतये नमम ॥ ११ ॥ ॐ सोमऽओषधीनामधिपतिः समावत्वस्मि० स्वाहा ॥ इदं सोमाय ओषधीनामधिपतये नमम ॥ १२ ॥ ॐ सविता प्रसवानामधिपतिः समावत्व० स्वाहा ॥ इदं सवित्रे प्रसवानाधिपतये नमम ॥ १३ ॥ (अन्तर्पटं कुर्यात् ॥) ॐ रुद्रः पशूनामधिपतिः समावत्व० स्वाहा ॥ इदं रुद्राय पशूनामधिपतये नमम ॥ १४ ॥ (ऐशान्याम् अन्यपात्रे निधाय तन्मध्ये त्यागः॥ अन्तर्पटं निःसार्य, मणीतोदकस्पर्शः ॥) ॐ त्वष्टा रूपाणामधिपतिः समावत्व० स्वाहा ॥ इदं त्वष्ट्रे रूपाणामधिपतये नमम ॥ १५ ॥ ॐ विष्णुः पर्वतानामाधिपतिः समावत्व० स्वाहा ॥ इदं विष्णवे पर्वतानामधिपतये नमम ॥ १६ ॥ ॐ मरुतो गणानामधिपतयः समावत्व० स्वाहा ॥ इदं मरुद्भ्यो गणानामधिपतिभ्यो नमम ॥ १७ ॥ (अन्तर्पटं

कुर्यात्॥) ॐ पितरः पितामहाः परेऽवरेततास्ततामहाः समावत्व० स्वाहा॥ इदं पितृभ्यः पितामहेभ्यः परेभ्योऽवरेभ्यस्ततेभ्यस्ततामहेभ्यश्च नमम ॥ १८ ॥ (दाक्षिणाग्न्योर्मध्ये अन्यपात्रं निधाय तन्मध्ये त्यागः ॥ अन्तर्पटं निस्सार्य प्रणीतोदकस्पर्शः) इति अभ्यातानहोमः ॥

॥१४३॥ अथ अग्निरित्यादिपंचाहुतयः॥(अग्निरैत्वित्यादिपंचानां प्रजापतिर्ऋषिरेतिमस्य संकर्षणर्षिराग्निर्देवता चतुर्थस्य वैवस्वतो देवता पंचमस्य मृत्युर्देवता त्रिष्टुप्छन्दः सर्वेषां होमे विनियोगः ॥) ॐ अग्निरैतुप्रथमोदेवतानाᳪसोऽस्यै प्रजांमुञ्चतुमृत्युपाशात् ॥ तदयᳪराजा वरुणोनुमन्यतांयथेयᳪस्त्रीपौत्रमघन्नरोदात्स्वाहा ॥ इदमग्नये नमम ॥१॥ ॐ इमामग्निस्त्रायतांगार्हपत्यःप्रजामस्यैनयतुदीर्घमायुः ॥ अशून्योपस्थाजीवतामस्तुमातापौत्रमानंदमभिविबुध्यतामियᳪस्वाहा ॥ इदमग्नये नमम ॥२॥ ॐ स्वस्तिनोऽअग्नेदिवऽआपृथिव्याविश्वानिधेह्ययथायजत्र॥ यदस्यांमहिदिविजातंप्रशस्तंतदस्मासुद्रविणंधेहिचित्रᳪस्वाहा॥ इदमग्नये नमम ॥ ३ ॥ ॐ सुगन्नुपन्थांप्रदिशन्नऽएहिज्योतिष्मध्येह्यजरन्नऽआयुः॥ अपैतुमृत्युरमृतंनऽआगाद्वैवस्वतोनोऽअभयंकृणोतु स्वाहा ॥ इदं वैवस्वताय नमम ॥ ४ (दक्षिणस्याम् अन्यपात्रे त्यागः ॥ प्रणीतोदकस्पर्शः ॥) (अन्तर्पटं कुर्यात्) ॐ परंमृत्योऽअनुपरेहिपन्थांयस्तेऽअन्यऽइतरोदेवयानात् ॥ चक्षुष्मतेशृण्वतेतेब्रवीमिमानःप्रजाᳪरीरिषोमोतवीरान् स्वाहा ॥ ५ ॥ ॥[1]॥ इदं मृत्यवे नमम ॥ (इत्यग्नौ त्यागो वा भूमौ त्यागः ॥ अन्तर्पटं निस्सार्य ॥ प्रणीतोदकस्पर्शः ॥) इति पञ्चकहोमः॥

॥१४४॥ अथ लाजाहोमः॥ अथ कुमार्या भ्राता शमीपलाशमिश्रा-

---

१ अग्निरैतामन्—अथाहोमग्रये मंत्रान्तरप्रकारोऽप्ने तथा ॥ अथाव येऽ मत्र व कन्यर्ति पंचमन् ॥ पुनर्दत्त्वाऽप्ने च पठ्ये दशहनः । भद्याभिर्मंत्रमा दानं हस्तिविमिश्र॥ कन्या होमे प्रकर्तिं मार्षंतु च मंत्रके ॥ २ ऐषु—अग्नौ मनुष्यो त्याज्यको दर्शनेव मैद॥

नासादितशूर्पस्थान्लाजानंजलिनाऽऽदाय कुमार्या अंजलावावपति ॥ तान् लाजान् प्राङ्मुखी तिष्ठन्ती कुमारी अंजलिना जुहोति ॥ (अर्य्यमणमित्यादित्रयाणामाथर्वणऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दस्तृतीयस्यानुष्टुप्छन्दोऽग्निर्देवतालाजाहोमे विनियोगः ॥) ॐ अर्यमणंदेवंकन्याऽअग्निमयक्षत ॥ सनोऽअर्यमा देवः प्रेतो मुञ्चतुमापतेः स्वाहा ॥ इदमर्यम्णे नमम ॥ १ ॥ (अनेन मंत्रेण अञ्जलिस्थलाजानां तृतीयांशं जुहोति ॥) ॐ इयंनार्युपब्रूतेलाजानावपन्तिका ॥ आयुष्मानस्तुमेपतिरेधन्तांज्ञातयोमम स्वाहा ॥ इदमग्नये नमम ॥ २ ॥ (अनेन अंजलिस्थलाजार्द्धं जुहोति ॥) ॐ इमांल्लाजानावपाम्यग्नौसमृद्धिकरणंतव ॥ ममतुभ्यंचसंवननंतदग्निरनुमन्यतामियᳪं स्वाहा ॥ इदमग्नये नमम ॥ ३ ॥ (इत्यनेन मंत्रेणाञ्जलिस्थान्सर्वाल्लाजाञ्जुहोति ॥ इदं मंत्रत्रयं कन्यैव पठति ॥) वरः कन्याया दक्षिणहस्तं सांगुष्ठम् उत्तानं गृह्णाति पठति च ॥ (गृभ्णामीत्यादीनां चतुर्णां याज्ञवल्क्यभरद्वाजात्रिप्रजापतय ऋषयः ॥ त्रिष्टुबुष्णिगनुष्टुब्यजुश्छंदांसि लिंगोक्ता देवताः वध्वाः पाणिग्रहणे विनियोगः) ॥ ॐ गृभ्णामितेसौभगत्वायहस्तंमयापत्या जरदष्टिर्यथासः ॥ भगोऽअर्यमासवितापुरंधिर्मह्यंत्वादुर्गार्हपत्यायदेवाः ॥ १ ॥ अमोहमस्मिसात्वᳪंसात्वमस्यमोऽअहम् ॥ सामाहमस्मिऽऋक्त्वंद्यौरहं पृथिवीत्वम् ॥ २ ॥ तावेवविवहावहै सहरेतोदधावहै ॥ प्रजांप्रजनयावहैपुत्रान्विन्द्यावहैबहून् ॥ ३ ॥ तेसन्तुजरदष्टयः संप्रियौरोचिष्णूसुमनस्यमानौपश्येमश-

१ रेणुः—वधूभ्राताऽञ्जली तस्या लाजानंजलिनाऽऽवपेत् । तिष्ठन्त्यास्तिष्ठता पत्या गृहीतांजलिनैव सा । जुहोत्यर्यमणं देवमित्याद्यैस्त्रिभिरेव तान् । अंजलिस्थाँस्त्रिधा सर्वान्प्राङ्मुखी प्रतिमंत्रतः ॥ प्राजापत्येन तीर्थेन दैवेनेति बह्वृचाः ॥ २ अथास्यै दक्षिणं हस्तं वरो गृह्णाति साङ्गुष्ठम् ॥

रदः शतंजीवेमशरदःशतᳪशृणुयामशरदःशतम् ॥ ४ ॥ (वरस्य मन्त्र-पाठः) ततः वधूमग्रे कृत्वा अग्नेरुत्तरतो गत्वा तत्र वरो वध्वा दक्षिणपादं सव्यहस्तेन गृहीत्वा दक्षिणेन वा गृहीत्वा ॥ पूर्वोपकल्पितदृषदुपरि करोति ॥ (आरोहेममिति मंत्रस्य आथर्वणऋषिः त्रिष्टुप्छंदः अग्निर्देवता अश्मारोहणे विनियोगः) ॥ ॐ आरोहेममश्मानमश्मेवत्वᳪस्थिराभव ॥ अभितिष्ठपृतन्यतोववाधस्वपृतनायतः॥(इत्यश्मारोहणे वरस्य मंत्रपाठः।) अथ गाथां गायति ॥ ॐ सरस्वतिप्रेदमवसुभगेवाजिनीवती ॥ यान्त्वा-विश्वस्यभूतस्यप्रजायामस्याग्रतः ॥ यस्यांभूतᳪसमभवद्यस्यांविश्वमिदं-जगत् ॥ तामद्यगाथांगास्यामियास्त्रीणामुत्तमंयशः ॥ (इत्यन्तं वरो गाथां गायति ॥) अथ परिक्रामतः (अग्रे कन्या वरः पृष्ठतः) (तुभ्यमग्रे-इत्याथर्वण ऋषिः ॥ अनुष्टुप् छंदः ॥ अग्निर्देवता ॥ अग्निपरि-क्रमणे विनियोगः) ॥ ॐ तुभ्यमग्नेपर्यवहन्सूर्यांवहतुनासह ॥ पुनः पतिभ्योजायांदाग्नेप्रजयासह ॥ (इति परिक्रमणे वरस्य मंत्रपाठः ॥) एवं कुमार्या भ्राता शमीपलाशमिश्रॉल्लाजानञ्जलिनाञ्जलावावपति ॥ इत्या-रभ्य परिक्रमणान्तं पुनः वारद्वयं कुर्यात् ॥ ततः तृतीयप्रदक्षिणानन्तरं शूर्पकोणप्रदेशेन कुमार्या भ्राता कुमार्यंजलौ सर्वांल्लाजान् आवपति ॥ कुमारी तिष्ठन्ती सर्वान् लाजाञ्जुहोति ॥ ॐ भगाय स्वाहा इदं भगाय नमम ॥ ('इति मंत्रं कन्याया वाचयति वरः ॥') ततः समाचारात् तूष्णीं चतुर्थपरिक्रमणं कुरुतः॥ (तत्र अग्रे वरः पृष्ठे कन्या ॥) नेतरयाहुतिः ॥ (परिक्रमणान्ते वरः कन्याया आसने स्वयं स्थित्वा कन्यां च स्वस्यासने उपवेशयेत् ॥) ततश्च पुनः उभौ पश्चादग्नेः प्राग्वत् स्वासने उपविशेताम् ॥ वरो ब्रह्मान्वारब्धः प्राजापत्यहोमं कुर्यात् ॥ ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये नमम ॥ इति प्रोक्षण्यां त्यागः ॥ इति लाजाहोमः ॥

॥१४५॥ अथ सप्तपदाक्रमणम् ॥ तत्रादौ शिष्टाचारात् अग्नेरुत्तरत उदकसंस्थान् सप्ततंडुलपुंजान्कृत्वा वरः तत्र सप्ताचलपूजनं कुर्यात् ॥ यथा—वरो हस्ते जलमादाय देशकालौ संकीर्त्य मम गृहीतकन्यापातित्वसिद्धये सप्ताचलपूजनमहं करिष्ये ॥ ॐप्रतिपदसिप्रतिपदेत्वानुपदस्यनुपदेत्वासम्पदसिसम्पदेत्वातेजोसितेजसेत्वा ॥[१]॥ इतिमंत्रेणगंधादिपंचोपचारैःसंपूज्य वरः सप्तपदानि मक्रमस्वेति प्रैषं कुर्यात् ॥ ॐएकमिषे विष्णुस्त्वा नयतु ॥ इति वरोक्ते वधूर्दक्षिणैकपदमुद्गृधान्याचले दद्यात् ॥ एवं सर्वत्र ॥ॐ द्वे ऊर्जे विष्णुस्त्वा नयतु ॥ इति द्वितीयम् ॥ ॐत्रीणि रायस्पोषाय विष्णुस्त्वा नयतु ॥ इति तृतीयम् ॥ ॐ चत्वारि मायोभवाय विष्णुस्त्वा नयतु ॥ इति चतुर्थम् ॥ ॐ पंच पशुभ्यो विष्णुस्त्वा नयतु ॥ इति पंचमम् ॥ ॐषड् ऋतुभ्यो विष्णुस्त्वा नयतु ॥ इति षष्ठम् ॥ ॐ सखे सप्तपदा भव सा मामनुव्रता भव विष्णुस्त्वा नयतु ॥ इति सप्तमम् ॥ केचिदत्र प्रतिपदं वधूः प्रतिज्ञावचनं पठेदित्याहुः ॥

॥ १४६ ॥ सप्तपदी—गुर्जरटीकोपेता ॥ वरवचनानि ॥

ॐ एकमिषे विष्णुस्त्वानयतु ॥ १ ॥

हे वधु ! तने सर्व पुरुषार्थना साधनभूत एवा आ मुख्य भूलोकमां बधां सौभाग्य विगेरे इच्छित फलनी प्राप्ति थाय ते माटे अने मारा घरमां अन्न, वस्त्र, द्रव्य विगेरे घरनी बधी वस्तुओ संभाळवामां मदद करवा माटे तुं मारा घरनी अधिकारिणी था ॥ १ ॥

ॐ द्वे ऊर्जे विष्णुस्त्वानयतु ॥ २ ॥

हे वधु ! तने भूर्लोक अने भुवर्लोकना स्थानमां बळवती रहेवा माटे

---

१ अथैनामुदीची ॐ सप्तपदानि प्रक्रमयति ॥

परमात्मा सहायरूप थाओ, कारण के तारा बळथी मारा बळनो वधारो थशे ॥ २ ॥

ॐ त्रीणि रायस्पोषाय विष्णुस्त्वानयतु ॥ ३ ॥

हे वधु ! तुं भूर्लोक, भुवर्लोक अने स्वर्गलोकना स्थानमां मारा धननी वृद्धि अने संभाळ माटे मारा घरनी अधिकारिणी था ॥ ३ ॥

ॐ चत्वारि मायोभवाय विष्णुस्त्वानयतु ॥ ४ ॥

हे वधु ! भूर्लोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक अने महर्लोकमां मारा सुखनी उत्पत्ति माटे मारा घरनी तुं अधिकारिणी था ॥ ४ ॥

ॐ पंच पशुभ्यो विष्णुस्त्वानयतु ॥ ५ ॥

हे वधु ! तुं भूर्लोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक आ पांच लोकनां स्थानोमां परमात्माने एवी रीतथी प्राप्त कर के, जेनाथी घरमां रहेलां पशुओनी संभाळ तुं सारी रीते राखी शके ॥ ५ ॥

ॐ षड् ऋतुभ्यो विष्णुस्त्वानयतु ॥ ६ ॥

हे वधु ! तुं भूर्लोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक अने तपोलोकना स्थानमां अने वसंतादि छ ऋतुओमां मारी साथे उत्तम सुख भोगवनारी था ॥ ६ ॥

ॐ सखे सप्तपदा भव सा मामनुव्रता भव ॥ ७ ॥

हे वधु ! तुं भूर्लोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक, तपोलोक अने सत्यलोकना सुखोनी प्राप्ति माटे पातिव्रत्य धर्मनुं यथार्थ रीते परिपालन करी उत्तम सुख भोगवनारी अने मारी आज्ञानुं पालन करनारी था ॥ ७ ॥

आ प्रमाणे वर सात पगलां उत्तर तरफ चालीने बोले छे ते वखते कन्या पण पोताना पतिने नीचे प्रमाणे कहे छे.

॥ १४७ ॥ कन्याप्रतिज्ञा ॥

त्वत्तो मेऽखिलसौभाग्यं पुण्यैस्त्वं विविधैः कृतैः ॥
देवैः संपादितो मह्यं वधूराद्ये पदेऽब्रवीत् ॥ १ ॥

हे स्वामिनाथ ! मारां अनेक पुण्योना प्रभावथी आपनाथी आ जगत्‌मां मने सौभाग्य मळ्युं छे, अने देवोए आपने मारा स्वामी बनाव्या छे अने तेथी आपनाथीज मारुं सर्व प्रकारनुं कल्याण छे. (आ प्रमाणे पहेलुं पगलुं भरती वखते कन्या बोले छे.) ॥ १ ॥

कुटुंबं पालयिष्यामि ह्यावृद्धबालकादिकम् ॥
यथालब्धेन संतुष्टा ब्रूते कन्या द्वितीयके ॥ २ ॥

हे स्वामिनाथ ! आपना कुटुंबना वृद्ध पुरुषोना वचननुं पालन करी तेओनी आज्ञामां रही तेओनुं, बाळकोनुं तथा कुटुंबनुं हुं पालन करीश, अने जेटलुं धन प्राप्त थाय तेथी संतुष्ट रहीश (अने आपने खोटुं लागे तेवुं वचन कदापि बोलीश नहि). (आ प्रमाणे कन्या बीजुं पगलुं भरती वखते बोले छे.) ॥ २ ॥

मिष्टान्नव्यञ्जनादीनि काले संपादये तव ॥
आज्ञासंपादिनी नित्यं तृतीये साऽब्रवीद्वरम् ॥ ३ ॥

हे प्राणनाथ ! आप तथा आपना कुटुंबने दररोज समयसर उत्तम रसोई करी भोजन करावीश अने निरंतर तमारी आज्ञा प्रमाणे वर्तीश. (आ प्रमाणे कन्या त्रीजुं पगलुं भरती वखते बोले छे.) ॥ ३ ॥

शुचिः शृङ्गारभूषाऽहं वाङ्मनःकायकर्मभिः ॥
क्रीडिष्यामि त्वया सार्धं तुरीये साऽब्रवीदिदम् ॥ ४ ॥

हे स्वामिन् ! हुं हंमेश पवित्र रही सौभाग्यना शणगारने धारण करी, मनथी, वचनथी तथा सत्कर्मोथी आपने प्रसन्न करीश अने

आपनुं शुभचिंतन करीश. (आ प्रमाणे कन्या चोथुं पगलुं भरती वखते बोले छे.) ॥ ४ ॥

दुःखे धीरा सुखे हृष्टा सुखदुःखविभागिनी ॥
नाहं परतरं गच्छे पञ्चमे साऽब्रवीत्पतिम् ॥ ५ ॥

हे नाथ ! आपना आपत्तिना समयमां हुं धीरज राखीश अने आपना सुखथी हुं प्रसन्न रहीश अने आपना सुखदुःखमां हुं भाग लईश, तेमज कोई पण परपुरुषनी कदापि इच्छा करीश नहि. (आ प्रमाणे कन्या पांचमुं पगलुं भरती वखते बोले छे.) ॥ ५ ॥

सुखेन सर्वकर्माणि करिष्यामि गृहे तव ॥
सेवां श्वशुरयोश्चापि बन्धूनां सत्कृतं तथा ॥
यत्र त्वं वा ह्यहं तत्र नाहं वञ्चे प्रियं क्वचित् ॥
नाहं प्रियेण वञ्चयाऽस्मि कन्या षष्ठे पदेऽब्रवीत् ॥ ६ ॥

हे नाथ ! हुं आपना घरनुं सर्व काम सारी रीते करीश अने आपना मातापितानी सेवा करीश अने आपना भाईओनो पण सत्कार करीश. आप ज्यां जशो त्यां हुं आपनी साथे आवीश अने कदापि आपनाथी दूर रहीश नहि अने क्यारेय पण तमने छेतरीश नहि.तेम आपे मने पणछेतरवी नहि. (आ प्रमाणे कन्या छठुं पगलुं भरती वखते बोले छे.) ॥ ६ ॥

होमयज्ञादिकार्येषु भवामि च सहायकृत् ॥
धर्मार्थकामकार्येषु मनोवृत्तानुसारिणी ॥
सर्वे च साक्षिणस्त्वं मे पतिभूतोऽसि सांप्रतम् ॥
देहो मयाऽर्पितस्तुभ्यं सप्तमे साऽब्रवीद्वरम् ॥ ७ ॥

हे स्वामिनाथ ! होम तथा यज्ञादि धर्मकार्यने विषे हुं आपने सहाय करीश. धर्म, अर्थ तथा काम ए त्रण पुरुषार्थना दरेक कार्यमां

हुं आपनी इच्छा प्रमाणे वर्तीश. देव ब्राह्मण विगेरेनी साक्षीमां आप मारा पति थया छो अने में मारुं शरीर आपने अर्पण कर्युं छे. (आ प्रमाणे कन्या सातमुं पगलुं भरती वखते बोले छे.) ॥७॥

॥ इति सप्तपदाक्रमणम् ॥

(निष्क्रमणमारभ्य वरः अग्नेर्दक्षिणतः स्थितस्य वाग्यतस्य दृढपुरुषस्य वा स्वस्य स्कंधधृतोदकुंभाद्धस्तेन जलमादाय एनां वधूं शिरसि आपः शिवाश्च आपोहिष्ठेतित्रिभिर्मंत्रैरभिषिंचति ॥) ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमास्तास्ते कुण्वन्तु भेषजम् ॥ ॐ आपोहिष्ठामं० ॥ ॐ योवंःशिवतंमो० ॥ ॐ तस्माऽअरंङ्गमा० ॥ ततो दिवा विवाहश्चेद्वरः सूर्यमुदीक्षस्वेति वधूं प्रेरयति ॥ सा च तच्चक्षुरित्यादि शरदः शतादिति स्वपठितमंत्रेण सूर्यमुदीक्षते ॥ ॐ तच्चक्षुर्देवहितं० ॥ (वध्वा एव मंत्रपाठः ॥ ततो वरो वध्वा दक्षिणस्कंधोपरि हस्तं नीत्वा ममव्रतेति स्वपठितमंत्रेण तस्या हृदयमालभते ॥ ममव्रतेतेहृदयंदधामिममचित्तमनुचित्तन्तेऽअस्तु ॥ मम वाचमेकमनाजुषस्वप्रजापतिष्ट्वानियुनक्तुमह्यम् ॥ ततो वरोऽनामिकाग्रे वधूशिरसि धृत्वा एनामभिमंत्रयते ॥ ॐ सुमंगलीरियंवधूरिमाᳪसमेतपश्यत ॥ सौभाग्यमस्यैदत्त्वायाथास्तंविपरेतन ॥ अत्र आचाराचतस्रः स्त्रियो मंगलं कुर्वन्ति ॥ ततो

---

१ (रेणुः—पतिपुत्रान्विना भव्याश्चतस्रः सुभगा अपि । सौभाग्यमस्यै दद्युस्ता मंगलाचारपूर्वकम् ॥) चतस्रः सुवासिन्यः प्रथम वरस्य कन्यायाश्च भाले तिलकं कृत्वा कन्यायाः पृष्ठभागे गत्वा कन्याया वस्त्रान्तरे लाजान् प्रक्षिपन्त्यः दक्षिणकर्णे कथयेयुः । महासाविष्णोः सौभाग्यम् । इन्द्रेन्द्राण्योः सौभाग्यम् । शिवपार्वत्योः सौभाग्यम् । लक्ष्मीनारायणयोः सौभाग्यम् । अखंड सौभाग्यवती पुत्रपौत्रवती भव ॥ अनन्तरं कन्या लाजान् स्वकीयांजलौ गृहीत्वा शिष्टाचारात् स्वस्य पत्युः शिरसि प्रक्षिपेत् ॥

वधूं वरस्य वामभागे उपवेशयति ॥ अत्र च वध्वाः सीमन्ते वरः सिंदूरं ददाति ॥ ॐव्वाममद्यसवितर्व्वाममुश्वोदिवेदिवे व्वाममस्मभ्यंꣳसावीः ॥ व्वामस्यहिक्षयस्यदेवभूरेरयाधियावाममभाजः स्याम ॥ ६/८ ॥ (इति मंत्रपाठो वरस्य) ततस्तां दृढपुरुषेणोन्मथ्याग्नेः प्राग्वोदग्वानुगुप्तऽआगारेप्राग्ग्रीवऽउत्तरलोमास्तीर्णेरोहितेऽआनडुहचर्मण्युपवेशयतीहगावइति) ॥ ॐ इहगावोनिषीदंत्विहाश्वाऽइहपूरुषाः ॥ इहोसहस्रदक्षिणोयज्ञऽइहपूषानिषीदतु ॥ (इति मंत्रपाठो दृढपुरुषस्य ॥) तत आगत्य पूर्ववद्यथास्थानमुपविश्य ब्रह्मणान्वारब्धो वरः स्विष्टकृते जुहोति ॥ ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते नमम ॥ संस्रवप्राशनम् ॥ पवित्राभ्यां मार्जनम् ॥ अग्नौ पवित्रप्रतिपत्तिः ॥ पूर्णपात्रदानम् ॥ कृतस्य कर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थं ब्रह्मणे पूर्णपात्रं तुभ्यमहं संप्रददे ॥ कृतस्य कर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थम् आचार्याय पूर्णपात्रं तुभ्यमहं संप्रददे ॥ प्रणीताविमोकः ॥ आपः शिवा० इति मार्जनम् ॥ परिस्तरणान्युत्तरे विसृजेत् ॥ ततः स्वकीयाचार्याय गां ददाति ब्राह्मणश्चेद्वरः ॥ अत्र ग्रामवचनं च कुर्युर्विवाहश्मशानयोरित्येनं यथाकुलाचारं तिलककरणादिकं कुर्यात् ॥ ततोऽस्तमिते ध्रुवं दर्शयति दिवा विवाहश्चेद्रात्रौ चेत्तदा वरदानानंतरं ध्रुवमसीति ॥ तत्र वरो वधूं मेषयति ध्रुवमीक्षस्वेति । ॐ ध्रुवमसिध्रुवंत्वापश्यामिध्रुवैधिपोष्येमयि ॥ मह्यंत्वादात् बृहस्पतिर्मयापत्याप्रजावतीसंजीवशरदः शतम् ॥ इति ॥ सा यदि ध्रुवं न पश्येत्तदा पश्यामीत्येव ब्रूयात् ॥ ततो विवाहदिनमारभ्य दंपत्योर्नियमाः ॥ त्रिरात्रमक्षारलवणाशिनौ स्याताम् ॥ त्रिरात्रमधः

---

१ गौर्ब्राह्मणस्य वरः । ग्रामो राजन्यस्य । अश्वो वैश्यस्य । २ ग्रामशब्देन स्वकुलवृद्धाः स्त्रिय इति गदाधरः ॥ ग्रामवचनं लोकवचनमिति भर्तृयज्ञः ॥

शयीयाताम् ॥ संवत्सरं न मिथुनमुपेयातां द्वादशरात्रऽ षड्रात्रं त्रिरात्रमन्ततः ॥ कृतस्य विवाहाख्यस्य कर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थं यथासंख्याकान् ब्राह्मणान् यथाकाले यथासंपन्नेनान्नेनाहं तर्पयिष्ये तेन कर्माङ्गदेवताः प्रीयन्तां नमम ॥ कृतस्य विवाहहोमकर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थम् आचार्यादिनानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो गंधादिभिः सम्पूज्य यथोत्साहं दक्षिणां दास्ये ॥ अथाशीर्वादमंत्राः ॥ ॐ शतंजीवशरदो० ॥ ॐ शतमिन्नुशरदो० ॥ ॐ विश्वानिदेव० ॥ इत्याशीर्वादः इति ॥

॥ इति विवाहसंस्कारप्रयोगः समाप्तः ॥ १६ ॥

॥ १४८ ॥ अथ चतुर्थीकर्मप्रयोगः ॥

विवाहदिवसाच्चतुर्थ्यामपररात्रे[1] भार्यया सह मंगलं स्नात्वाऽहतवाससी परिधाय धृतमंगलतिलकः शुभासने वर उपविशति ॥ तत्र दक्षिणतो वधूः ॥ वरः आचम्य प्राणानायम्य ॥ सुमुखश्चेति पठित्वा ॥ अद्येत्यादि० विवाहांगभूतं चतुर्थीकर्म करिष्ये ॥ तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणपतेः षोडशोपचारैः पूजनमहं करिष्ये ॥ तत्र गृहाभ्यंतरतः स्थंडिले पंचभूसंस्कारपूर्वकं वैवाहिकाग्नेः स्थापनं कुर्यात् ॥ ततो अग्नेर्दक्षिणतः ब्रह्मासनाद्यासादनं कृत्वा अग्नेरुत्तरत उदकुंभं स्थापयेत् ॥ ॐ भूरसिभूमिरसि० ॥ इति भूमिं स्पृष्ट्वा ॥ ॐ आजिघ्र० । इति कलशस्थापनम् ॥ ॐ वरुणस्यो० इति जलपूरणम् ॥ ॐ सुजात० । इति मंत्रेण सूत्रवेष्टनम् ॥ ॐ याऽओषधी० । इतिं सर्वौषधीप्रक्षेपः ॥ ॐ स्योनापृथिवि० । इति

---

१ चतुर्थ्यामपररात्रेऽ (विवाहमारभ्य चतुर्थेऽहनि अपररात्रे इत्यर्थः) भ्यन्तरतोऽग्निमुपसमाधाय ॥

मृत्तिकाप्रक्षेपः ॥ ॐ याःफलिनीः० । इति फलम् ॥ ॐ हिरण्यगर्भ० । इति हिरण्यम् ॥ ॐ परिवाजपतिः० । इति पंचरत्नानि ॥ ॐ पूर्णादर्वी० इति पूर्णपात्रम् ॥ ॐ मनोजूति० । इति मंत्रेण प्रतिष्ठा कार्या ॥ "ॐ उदकुंभाधिष्ठातृदेवताभ्यो नमः" इति षोडशोपचारैः पूजनं कार्यम् ॥ ततः पात्रासादनादिक्रम् । आज्योद्वासनं चरोरुद्वासनं च आज्योत्पवनादिनोत्पवाः प्रत्युत्पवनान्तं कृत्वा उपयमनकुशानादाय ॥ ॐ तिष्ठन् समिधोऽभ्याधाय ॥ प्रोक्षणीशेषोदकेन अग्निं प्रदक्षिणीकृत्य पवित्रयोः प्रणीतासु निधानम् ॥ इतरथावृत्तिः ॥ ब्रह्मान्वारब्धेन स्रुवेण होमः ॥ (मनसा ॥ ॐ प्रजापतये स्वाहा) इदं प्रजापतये न मम ॥ ॐ इन्द्राय स्वाहा इदमिन्द्राय न मम ॥ ॐ अग्नये स्वाहा इदमग्नये न मम ॥ ॐ सोमाय स्वाहा इदं सोमाय न मम ॥ हस्ते अक्षतान् गृहीत्वा ॥ ॐ अग्नेनय० ॥ चतुर्थीकर्मणि साक्षिनाम्नि वैश्वानराय नमः गंधाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि ॥ ततो वर आज्येन पञ्चाज्याहुतीर्जुहुयात् (उदपात्रे सर्वासां त्यागः) यथा—ॐ अग्नेप्रायश्चित्तेत्वंदेवानांप्रायश्चित्तिरसिब्राह्मणस्त्वानाथकामऽउपधावामि यास्यैपतिघ्नीतनूस्तामस्यै नाशय स्वाहा ॥ इदमग्नये न मम ॥ १ ॥ ॐ वायोप्रायश्चित्तेत्वंदेवानांप्रायश्चित्तिरसिब्राह्मणस्त्वानाथकामऽउपधावामियास्यैप्रजाघ्नीतनूस्तामस्यैनाशयस्वाहा ॥ इदं वायवे न मम ॥२॥ ॐ सूर्यप्रायश्चित्तेत्वंदेवानांप्रायश्चित्तिरसिब्राह्मणस्त्वानाथकामऽउपधावामियास्यैपशुघ्नीतनूस्तामस्यैनाशयस्वाहा ॥ इदं सूर्याय न मम ॥ ३ ॥ ॐ चन्द्रप्रायश्चित्तेत्वंदेवानांप्रायश्चित्तिरसिब्राह्मणस्त्वानाथकामऽउपधावामियास्यैगृहघ्नीतनूस्तामस्यैनाशयस्वाहा ॥ इदं चन्द्रमसे न मम ॥ ४ ॥ ॐ गन्धर्वप्रायश्चित्तेत्वंदे-

[illegible]

वानांप्रायश्चित्तिरसिब्राह्मणस्त्वानाथकामउपधावामियास्यैयशोघ्नीतनू-स्तामस्यैनाशयस्वाहा ॥ इदं गंधर्वाय न मम ॥ ५ ॥ ततः स्थालीपाकेन एकाधाहुतिं जुहुयात् ॥ चरुमभिघार्य ॥ ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये न मम ॥ ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते न मम ॥ ततो आज्येन भूराद्या नवाहुतयः ॥ ॐ भूः स्वाहा इदमग्नये न मम ॥ ॐ भुवः स्वाहा इदं वायवे न मम ॥ ॐ स्वः स्वाहा इदं सूर्याय न मम ॥ ॐ त्वन्नोऽअग्ने० । स्वाहा ॥ इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम ॥ ॐ सत्वन्नों अग्ने० । स्वाहा ॥ इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम ॥ ॐ अयाश्चाग्ने० । स्वाहा ॥ इदमग्नये अयसे न मम ॥ ॐ येतेशतं० । स्वाहा ॥ इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम ॥ ॐ उदुत्तमं० । स्वाहा ॥ इदं वरुणायादित्यायादितये च न मम ॥ ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये नमम ॥ ततः संस्रवप्राशनम् ॥ पवित्राभ्यां मार्जनम् ॥ अग्नौ पवित्रप्रतिपत्तिः ॥ ब्रह्मणे पूर्णपात्रदानम् ॥ कृतस्य चतुर्थीकर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थं ब्रह्मन् पूर्णपात्रं तुभ्यमहं संप्रददे ॥ तत आचार्याय पूर्णपात्रं तुभ्यमहं सम्प्रददे ॥ पश्चिमे प्रणीताविमोकः ॥ तज्जलेन ॐ आप शिवा० इति मार्जनम् ॥ (तत उदपात्रजलेन वरो वधूमूर्ध्न्यभिषिंचति यातेपतिघ्नीरिति ॥) ॐ, यातेपतिघ्नीप्रजाघ्नीपशुघ्नीगृहघ्नीयशोघ्नीनिंदितातनूर्जारघ्नीततऽएनांकरोमिसाजीर्यत्वंमयासहासौ ॥ (असौस्थाने नामग्रहणं करोति वरः) अमुकी देवी इति ॥ अथैनां वधूं स्थालीपाकं (कंसार) वरः प्राशयति । कन्यामात्रा चतुर्वारं परिवेषणं कार्यम् ॥ ततो वर एनां प्राशयति ॥ प्राणैस्ते प्राणान्संदधामि ॥ १ ॥ अस्थिभिरस्थीनि संदधामि ॥ २ ॥ मांसैर्मांसं संदधामि ॥ ३ ॥ त्वचा त्वचं संदधामि

॥ ४ ॥ अत्र वधूः शुद्ध्यर्थमाचामेत् ॥ अत्र समाचारात् वधूः वरमा पूर्वोक्तैर्मन्त्रैः प्राशयेत्॥ तत आचार्यो हस्तेअक्षतान्गृहीत्वा॥ ॐमनोजूति०॥ उभयोर्वधूवरयोःसुप्रतिष्ठितमस्तु॥ इति तयोः शिरसि क्षिपेत् ॥ ततो वरः वधूदक्षिणस्कंधोपरि हस्तं नीत्वा पठेत्॥ ॐ यत्तेसुसीमेहृदयंदिविचंद्रमसिश्रितम्॥वेदाहंतन्मांतद्विद्यात्पश्येमशरदःशतंजीवेमशरदःशतꣳशृणुयामशरदःशतम् इति ॥ कृतस्य चतुर्थीकर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थं यथासंख्याकान् ब्राह्मणान् कुमारिका वटुकान यथाकाले यथासंपन्नेनान्नेनाहं तर्पयिष्ये॥कृतस्य कर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थं नानागोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो यथोत्साहं दक्षिणां दास्ये ॥ अथाशीर्वादः ॥ ॐ विश्वानिदेव० ॥ ॐ पुनस्त्वा० ॥ ॐ शतं जीव शरदो० ॥ ॐ शतमिन्नुशरदो० ॥ ततो वध्वा सह वरो गृहान्तगत्वा कुलदेव्याः पूजनं कुर्यात् । पूज्यान् वृद्धांश्च नमस्कृत्य यथासुखं विहरेत् ॥ इति चतुर्थीकर्म समाप्तम् ॥

॥ इति षोडशसंस्कारप्रयोगः समाप्तः ॥

॥ १४९ ॥ अथ विवाहहोमकाले कन्यायामृतुमत्यां होमविधिः॥

कन्या सुस्नाता शुभासने उपविश्य । ऋतुदोषविनाशार्थं प्राप्तकर्मणि योग्यतासिद्ध्यर्थं युञ्जानहवनं पयस्विनीगोदानं पयःप्राशनं च करिष्ये इति संकल्प्य निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणेशं सम्पूज्य । युञ्जानहोमकर्तुं स्थंडिले आचार्यद्वारा पंचभूसंस्कारपूर्वकं विटनामानमग्निं प्रतिष्ठाप्य सम्पूजयेत् । ततो दक्षिणतो ब्रह्मासनाद्याज्यभागान्तं कुर्यात् । नात्र चरुः । युञ्जा-

१ अत्र स्त्रिया सह भोजनेऽपि न दोष इत्यादि ॥ एकयानसमारोह एकपात्रे च भोजनम् ॥ विवाहे पथि यात्रायां कृत्वा विप्रो न दोषभाक् ॥ अन्यथादोषमाप्नोति पश्चाच्चान्द्रायणं चरेत् ॥

न॒ऽ प्र॒थ॒मं० यु॒ञ्जते॒मनं॒ऽइति ऋग्भ्यां चतुर्दशावृत्त्याऽष्टाविंशत्याहुतीराज्येन जुहुयात्। तौ च मंत्रौ। ॐ यु॒ञ्जा॒नः प्र॑थ॒मं मन॑स्त॒त्त्वाय॑ सवि॒ता धिय॑ः। अ॒ग्नेर्ज्योति॑र्नि॒चाय्य॑ पृथि॒व्या अध्याभ॑र॒त्स्वाहा ॥ इदं सवित्रे न मम ॥ १ ॥ ⁱ⁄₁₁ ॥ यु॒ञ्जते॒मन॑ऽउ॒त यु॑ञ्जते॒ धियो॒ विप्रा॒ विप्र॑स्य बृह॒तो वि॑प॒श्चित॑ः। वि होत्रा॑ दधे वयुना॒विदेक॒ऽइन्म॒ही दे॒वस्य॑ सवि॒तुः परि॑ष्टुति॒ः स्वाहा ॥ २ ॥ ⁱ⁄₁₂ ॥ इदं सवित्रे न मम ॥ ततो भूराद्याः स्विष्टकृदन्ता दशाहुतयः। संस्रवप्राशनादि प्रणीताविमोकान्तं होमशेषं समाप्य ततः पयस्विनीं गां दद्यात् ॥ अथवा गोनिष्क्रयीभूतं निष्कं निष्कार्धं वा सुवर्णमूल्यरजतद्रव्यं दद्यात् ॥ ततः पयःप्राशनम्। कामधेनुसमुद्भूतं घृतबीजं शशिप्रभम्। तस्य प्राशनमात्रेण रजोदोषो विनश्यतु। इदं रजोदोषनिवृत्त्यन्तं त्रिदिनं पयः प्राश्यम्। अग्निं विसृजेत् ॥ इति युञ्जानहोमविधिः ॥

॥ १५० ॥ कन्यागृहे भोजनविचारः ॥

मदनरत्ने भविष्ये—अप्रजायां तु कन्यायां न भुञ्जीत कदाचन। दौहित्रस्य मुखं दृष्ट्वा किमर्थमनुशोचति ॥ अपरार्के आदित्यपुराणे—विष्णुं जामातरं मन्ये तस्य कोपं न कारयेत्। अप्रजायां तु कन्यायां नाश्नीयात्तस्य वै गृहे। यदि भुञ्जीत मोहाद्वा पूयाशी नरकं व्रजेत् ॥

॥ १५१ ॥ अथार्कविवाहः ॥

वरो विवाहसम्भारान्गृहीत्वा स्वकीयतृतीयविवाहात्प्राक् दिनचतुष्टयाधिकव्यवहिते हस्तनक्षत्रयुते शुभे शनिवारे रविवारे वा ग्रामाद्बहिः

१ धर्माब्धौ—तृतीया मानुषी कन्या नोद्वाह्या म्रियते हि सा। विधवा वा भवेत्तस्मात्तृतीयेऽर्के समुद्वहेत् ॥ सद्गृहे—चतुर्थादिविवाहार्थं तृतीयेऽर्कं समुद्वहेत्। आदित्यदिवसे वापि हस्तर्क्षे वा शनैश्चरे ॥

प्राच्यामुदीच्यां वा पुष्पफलाद्यैर्युतम् अर्कं सम्पाद्य तत्र गत्वा तस्य समीपे स्थण्डिलं कृत्वा तस्य पश्चिमतः पूर्वाभिमुख उपविश्य आचमनं प्राणायामं पवित्रधारणञ्च कृत्वा प्रधानसङ्कल्पं कुर्यात् ॥ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः । श्रीमद्भगवतो०इत्यादि पठित्वा एवंगुणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ मम तृतीयमानुषीविवाहजन्यदोषनिवृत्त्यर्थं श्रीपरमेश्वरप्रीतये तृतीयमर्कविवाहमहं करिष्ये ॥ पुनर्जलं गृहीत्वा । तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्धये गणपतिपूजनं स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं वसोर्धारापूजनम् आचाराद्वैश्वदेवसङ्कल्पं नान्दीश्राद्धम् आचार्यादिवरणञ्च करिष्ये । तत्रादौ दिग्रक्षणं कलशार्चनञ्च करिष्ये ॥ इति दिग्रक्षणं कलशार्चनं गणपतिपूजनाद्याचार्यवरणान्तं च कर्म कृत्वा आचार्यं प्रार्थयेत् ॥ (अत्राचार्यद्वयम् ॥ कर्मार्थं स्वकुलाचार्यमपरकन्यादानार्थं च) "कन्यापिता यथा सूर्यो देवानाञ्च प्रजापतिः । तथा त्वमर्कदानार्थमाचार्यत्वं कुरु प्रभो" ॥ एवं संप्रार्थित आचार्यस्ततो वरस्य मधुपर्केणार्चनं कुर्यात् ॥ सङ्कल्पः–अद्येत्यादि० शुभपुण्यतिथौ अर्कविवाहार्थम् आगतं वरं मधुपर्केणार्चयिष्ये इति सङ्कल्पं कृत्वा "पद्यर्घ्या भवन्त्याचार्य०इत्यारभ्य [.पृ.४१९] अनेन मधुपर्कार्चनेन परमेश्वरः प्रीयताम् ॥" इत्यन्तं कुर्यात् ।

ततो वरः अर्कस्य समीपे स्थित्वा अर्कं प्रार्थयेत् । "त्रिलोकवासिन् सप्ताश्व छायया सहितो रवे । तृतीयोद्वाहजं दोषं निवारय सुखं कुरु ।" ततो वरः अर्कवृक्षे ॐ "आकृष्णेन०" इति मंत्रेण छायया सहितं सूर्यम् आवाह्य प्रतिष्ठापयेत् । ॐ भूर्भुवः स्वः छायासहिताय सूर्याय नमः छायासहितं सूर्यमस्मिन्नर्के आवा०स्थाप० ॥ ततः "ॐ छायासहिताय श्रीसूर्याय नमः" इति मंत्रेण षोडशोपचारैः पूजनं कुर्यात् । तत्र

गुडौदनं नैवेद्यं दक्षिणां दत्त्वा आरार्तिक्यं कृत्वा। अनेन पूजनेन छाया-सहितः श्रीसूर्यः प्रीयतां न मम॥ इति पूजनान्तं कुर्यात्॥ एवं संपूज्य ततोऽर्कं वस्त्रेण सूत्रेण च आवेष्ट्य "ॐ आपोहिष्ठा०" इति मंत्रेण अर्कं जलैरभिषिच्य वरोऽर्कस्य प्रदक्षिणां कुर्यात्॥ "अर्कप्रीतिकरा येयं त्वया सृष्टा पुरातनी। अर्कजा ब्रह्मणा सृष्टा ह्यस्माकं परिरक्षतु॥ नमस्ते मङ्गले देवि नमः सवितुरात्मजे। त्राहि मां कृपया देवि पत्नी त्वं म इहागता॥" इति प्रदक्षिणां कृत्वा वरोऽर्कं प्रार्थयेत्-"अर्कस्त्वं ब्रह्मणा सृष्टः सर्वप्राणिहिताय च॥ वृक्षाणामादिभूतस्त्वं देवानां प्रीतिवर्धनः॥ तृतीयोद्वाहजं मृत्युं त्वं मे भो सुविनाशय॥" इति॥ तदनन्तरम् आचार्यः अर्कस्य वरस्य च मध्येऽन्तर्पटं धृत्वा मङ्गलाष्टकं [पृ.४२३] पठेत्॥ ततोऽन्तर्पटं निःसार्यार्कस्योपरि अक्षतान् दद्यात्॥

तत आचार्यो हस्ते जलं गृहीत्वा देशकालौ सङ्कीर्त्य एवंगुणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अस्य वरस्य तृतीयोद्वाहजनितसर्वारिष्ट-विनाशार्थं तथा च श्रीसवितृसूर्यनारायणप्रीतये (ब्रह्मविवाहविधिना) अर्कविवाहविधिना अर्कविवाहं करिष्ये॥ इति सङ्कल्प्य वरस्य हस्ते सुप्रोक्षितादिकं कुर्यात्॥ "शिवा आपः सन्तु। सन्तु शिवाः आपः॥ सौमनस्यमस्तु। अस्तु सौमनस्यम्॥ अक्षतं चारिष्टञ्चास्तु। अस्त्वक्षतमरिष्टञ्च॥ गन्धाः पान्तु सौमङ्गल्यं चास्तु॥ अक्षताः पान्तु आयुष्यमस्तु॥ पुष्पाणि पान्तु सौश्रियमस्तु इति॥" तृतीयोद्वाहजन्य-दोषपरिहारोऽस्तु॥ इति वदेत्॥

ततो वरस्य गोत्रोच्चारपूर्वकदानसङ्कल्पः-"अमुकगोत्रस्य अमुक-प्रवरान्वितस्य अमुकवेदशाखाध्यायिनः अमुकनाम्नः प्रपौत्राय। अ०गो० अ० प्र० अ० वे० अ० ना० पौत्राय। अ०गो०अ०प्र०अ०वे०अ०ना० पुत्राय। अमुकनाम्ने वराय। काश्यपगोत्रस्य काश्यपवत्सारनैध्रुवेति

त्रिप्रवरान्वितस्य आदित्यस्य प्रपौत्रीम् । सवितुः पौत्रीम् । सूर्यस्य पुत्रीम् । आर्कीनाम्नीं कन्यां सूर्यदैवत्यां भार्यात्वेन तुभ्यमहं सम्प्रददे ॥ इति वरहस्ते सकुशं जलं दद्यात् ॥ तथाच "अर्ककन्यामिमां विप्र यथाशक्तिविभूषिताम् ॥ गोत्राय शर्मणे तुभ्यं दत्तां विप्र समाश्रय ॥" इति दानमन्त्रं पठेत् ॥ पुनर्जलं गृहीत्वा । कृतस्यार्कदानकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थम् इमां दक्षिणां तुभ्यमहं सम्प्रददे । इति दक्षिणां दद्यात् ॥ वरः "ॐ स्वस्ति" इति ब्रूयात् ॥

ततो वरः अर्कवृक्षस्योपरि गन्धाक्षतपुष्पसमन्विताञ्जलाञ्जलीन् दद्यात् ॥ यथा मन्त्रः– "ॐ यज्ञो मे कामः समृद्ध्यताम् । ॐ धर्मो मे कामः समृद्ध्यताम् । ॐ यशो मे कामः समृद्ध्यताम् ।" इति जलाञ्जलिदानम् ॥ ततो गायत्रीमन्त्रेण "ॐ परित्वा" इति मन्त्रेण च पञ्चावृता सूत्रेणार्कमावेष्टयेत् ॥ पुनः पञ्चगुणेन सूत्रेण अर्कस्य दक्षिणस्कन्धं "बृहत्साम०" इति मन्त्रेण "ॐ यदाबध्नन्०" इति मन्त्रेण च रक्षार्थं बध्नीयात् ॥ यथा–"बृहत्सामक्षत्रभृद्वृद्धवृष्ण्यं त्रिष्टुभौजःशुभितमुग्रवीरम् । इन्द्रस्तोमेन पञ्चदशेन मध्यमिदं वातेन सगरेण रक्ष ॥" "ॐयदाबध्नन्०॥" ततोऽर्कस्य दिक्षु विदिक्षु च अष्टौ कुम्भान् संस्थाप्य वस्त्रेण त्रिसूत्रेण चावेष्ट्य हरिद्रागन्धादीन् कुम्भे क्षिप्त्वा तेषु कुम्भेषु "ॐ विष्णवे नमः" इति नाममंत्रेण महाविष्णुम् आवाह्य षोडशोपचारैः पूजयेत् ॥ ततः स्थण्डिले पञ्चभूसंस्कारपूर्वकम् आचार्यद्वाराऽग्निस्थापनं कृत्वा ब्रह्माणञ्च वृत्वा प्रोक्षण्याः प्रत्युत्पवनान्तं विधाय उपयमनकुशानादाय "तिष्ठन् समिधोऽभ्याधाय" इत्यारभ्य पर्युक्षणान्तं कृत्वाऽऽघारावाज्यभागौ जुहुयात (मनसा) ॥ "ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजा० । ॐ इन्द्राय० इदमिन्द्राय० । ॐ अग्नये० इदमग्नये० । ॐ सोमाय स्वाहा

इदं सोमाय० ।" एवमाघारावाज्यभागौ हुत्वा ॐ सङ्गोभिः० । इति मंत्रेण होमं कुर्यात् ॥

ॐ सङ्गोभिराङ्गिरसो नक्षमाणोभगऽइवेदर्यमणंनिनाय । जनेमित्रोनदम्पतीऽअनक्तिबृहस्पतेवाजयाशूंरिवाजौ स्वाहा ॥ इदं बृहस्पतये न मम ॥१॥ यस्मै त्वा कामकामाय वयं सम्राड् यजामहे । तामस्मभ्यं कामं दत्त्वा यथेयं घृतं पिब स्वाहा ॥ इदमग्नये न मम ॥ २ ॥

ततो व्यस्तसमस्तव्याहृतिभिरष्टोत्तरशतम् अष्टाविंशतिरष्टौ वा होमः। ॐ भूः स्वाहा इदमग्नये० । ॐ भुवः स्वाहा इदं वायवे० । ॐ स्वः स्वाहा इदं सूर्याय० । ॐ भूर्भुवःस्वः स्वाहा इदं प्रजापतये० । इति हुत्वा ततो भूराद्याः स्विष्टकृदन्ता दशाहुतयः । ततः संस्रवप्राशनादि प्रणीताविमोकान्तं सर्वं कुर्यात् ।

ततो वरः अर्कं प्रदक्षिणीकृत्य प्रार्थयेत् ॥ "मया कृतमिदं कर्म स्थावरेषु जरायुणा । अर्कापत्यानि नो देहि तत् सर्वं क्षन्तुमर्हसि ॥" इति ॥ तत आचार्यः "ॐ ऋचंवाचम्" इति शान्त्यध्यायं जपेत् । ततो वर आचार्याय गोयुग्मं वा तन्मूल्यं दद्यात् । यथाकालेऽष्टौ ब्राह्मणान् भोजयिष्ये इति भोजनसंकल्पं कृत्वा अन्येभ्यो ब्राह्मणेभ्यो भूयसीम् आचार्याय च दक्षिणां सर्वोपस्करं च दद्यात् ॥ ततो वरो गणेशं कुम्भस्थितं महाविष्णुम् अग्निञ्च विसृज्य जलं गृहीत्वा—अनेन यथाज्ञानेन कृतेनार्कविवाहकर्मणा श्रीपरमेश्वरस्वरूपी श्रीसूर्यनारायणः प्रीयतां न मम । अनेन कर्मणा तृतीयमानुषीविवाहजन्यदोषपरिहारोऽस्तु ॥ पुनर्विष्णुं प्रार्थयेत्—" यस्य स्मृत्या० " ॐ विष्णवे नमः । ॐ विष्णवे नमः । ॐ विष्णवे नमः । इति अर्कविवाहः ॥

॥ १५२ ॥ अथ कुम्भविवाहः ॥

[1]पिता सपत्नीकः कुम्भविवाहोक्तान् सम्भारानादाय देवालये गत्वा शुभासने प्राङ्मुख उपविश्य आचमनं प्राणायामञ्च कृत्वा स्वकन्याया विषकन्यात्वदोषपरिहारार्थं कुम्भविवाहं कुर्यात् ॥

सङ्कल्पः—विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो० इत्यादि पठित्वा एवंगुणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ मम अस्याः कन्याया नक्षत्रादियोगेन ग्रहयोगेन च विषाख्ययोगजननसूचितवैधव्यारिष्टपरिहारार्थं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं कुम्भविवाहाख्यं कर्म करिष्ये ॥ पुनर्जलमादाय। तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणपतिपूजनं स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं वसोर्धारापूजनं वैश्वदेवसङ्कल्पं नान्दीश्राद्धम् आचार्यवरणञ्च करिष्ये। तत्रादौ दिग्रक्षणं कलशार्चनञ्च करिष्ये। इति दिग्रक्षणादि कृत्वा ततो गणपतिपूजनाद्याचार्यवरणान्तं कुर्यात्।

ततो मुख्यदेवतायाः स्थापने कलशं निधाय स्वर्णमयविष्णुरूपाश्वत्थद्रुमप्रतिमाया अग्न्युत्तारणं कुर्यात्। मूर्तिं घृतेनाभ्यज्य तदुपरि "ॐसमुद्रस्यत्वा०" इत्यादि पठित्वा जलधारया अग्न्युत्तारणं विधाय

---

१ अथ कुम्भविवाहो विषयोगसमुत्पन्नायाः कन्याया वैधव्यदोषपरिहारार्थं कार्यः। विषयोगस्त्रिविधः। सूर्यभौमार्किवारेषु तिथिभद्राशताभिधम्॥ आश्लेषाकृत्तिकानागे तत्र जाता विषाङ्गना। जनुर्लग्ने रिपुक्षेत्रे संस्थितः पापखेचरः। द्विसाम्यमपि योगेऽस्मिन्सञ्जाता विषकन्यका॥ लग्ने शनैश्चरो यस्याः सुतेऽर्को नवमे कुजः। विषाख्या सापि नोद्वाह्या त्रिविधा विषकन्यका॥ तद्दोषपरिहारोपाय—सावित्र्यादिव्रतं कृत्वा वैधव्यादिनिवृत्तये। अश्वत्थादिभिरुद्वाह्या दद्यात्तां चिरजीविने॥ बालवैधव्ययोगे तु कुम्भद्रुप्रतिमादिभिः। कृत्वा लग्नं ततः पश्चात् कन्योद्वाहेति चापरे॥ तथैव—वैधव्ययोगे विदिते च कन्या विवाहमादौ विदधीत कुम्भे। पश्चाद्विवाह्या विधिवद्वधूः सा विधिस्तु तस्यान्तरतोऽवधार्यः॥ स्वर्णद्रुपिप्पलानां च प्रतिमा विष्णुरूपिणी। तया सह विवाहे तु पुनर्भूत्वं न जायते॥ इति विधानखण्डे॥

णप्रतिष्ठां कुर्यात् । मूर्तौ दक्षिणहस्तं न्युब्जं धृत्वा पठेत् ॥ ॐ आँ क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हं सः अस्याः विष्णुमूर्तेः प्राणा प्राणाः ॥ ॐ आँ० । अस्याः विष्णुमूर्तेः जीव इह स्थितः । ॐ आँ० स्याः विष्णुमूर्तेः सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणपाणिपा-पायूपस्थानीहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा । गर्भाधानादिषोडश-संस्कारार्थं षोडश प्रणवान् जपेत् । तत आवाहनादिषोडशोपचारपर्यन्तं पूजनं कृत्वा प्रार्थयेत् ॥ "वरुणाङ्गस्वरूपाय जीवनानां समाश्रय । पतिं जीवय कन्यायाश्चिरं पुत्रसुखं कुरु ॥ देहि विष्णो वरं देहि कन्यां पालय दुःखतः ॥" इति संप्रार्थ्य अनेन पूजनेन स्वर्णमयविष्णुस्वरूपा-श्वत्थः प्रीयताम् इति जलमुत्सृजेत् ॥

ततो यथोचितं मधुपर्कं कृत्वा वस्त्रालङ्काराणि समर्पयेत् ॥ ततः कन्याकुम्भयोरन्तरे अन्तर्पटं धृत्वा कन्यां तस्य सम्मुखे प्रत्यङ्मुखी-मुपवेश्य मङ्गलाष्टकं पठेत् । "ॐ प्रतिष्ठ" इति पठित्वा अन्तर्पटं निष्कास्य कन्यायै वस्त्रोपवस्त्रे दत्त्वा मंगलतंतुबंधनसमीक्षणान्तं कृत्वा दशवारमधस्तादुपरि च कुम्भं कन्यां च "परित्वा०" इत्यनुवाकेन सूत्रेण संवेष्ट्य कुंभरूपविष्णवे कन्यादानं कुर्यात् ॥

कन्यादानसङ्कल्पः– विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णो० इत्यादि पठित्वा । एवंगुणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अस्याः कन्याया विषाख्ययोगजननवैधव्यदोषापनुत्तये श्रीविष्णु-स्वरूपिणे अश्वत्थकुम्भाय श्रीरूपिणीमिमां कन्यां तुभ्यमहं सम्प्रददे । इति पठित्वा कन्याया दक्षिणहस्ते जलं दत्त्वा तद्धस्तं विष्णुस्वरूपाया-श्वत्थकुम्भाय समर्प्य मन्त्रं पठेत् ॥ "गौरीं कन्यामिमां श्लक्ष्णां यथा-शक्ति विभूषिताम् । ददामि विष्णवे तुभ्यं सौभाग्यं देहि सर्वदा ॥"

विष्णुरूपिणे कुंभायेमां कन्यां संप्रददे ॥ इति समर्पयेत् ॥ अनन्तरं वस्त्रग्रन्थिकादिकं विमुच्य कुम्भं गृहीत्वा जले निक्षिपेत् ॥

ततः आचार्यः शुद्धजलेन "ऐन्द्रवारुणपावमानीयमंत्रैः" कन्यां पञ्चपल्लवेनाभिषिच्य शुद्धवाससी परिधापयेत् ॥

ततः कन्या शुद्धोदकेन स्नात्वा स्वयं धारितानि नूतनानि वस्त्राणि सालङ्काराणि आचार्याय दत्वा आचार्यायान्येभ्यश्च दक्षिणां दद्यात्। ततः आचार्यादीनां समीपे उपविश्य "भो ब्राह्मणाः अहम् अनेन कुम्भविवाहकर्मणा अनघाऽस्मि ?" इति त्रिवारं पृच्छेत्। "त्वमनघाऽसि एवमस्तु" इति आचार्यादयोऽपि त्रिवारं ब्रूयुः ॥ ततः कर्मेश्वराय समर्प्य गणपतिप्रभृतिदेवानां विसर्जनं कुर्यात् ॥ इति कुम्भविवाहः ॥

॥ इति ग्रहशान्तिसहितषोडशसंस्कारात्मकः षष्ठो विभागः ॥

॥ अथ विविधशांतिप्रयोगात्मकः सप्तमो विभागः ॥

॥ १५२ ॥ अथ रजोदोषे श्रीशान्तिः ॥

वधूवरमातृरजःप्राप्तौ नान्दीश्राद्धोत्तरं मुहूर्तान्तरालाभे संकटे कर्माधिकारार्थं श्रीशान्तिं कुर्यात् ॥ यथा यजमानः आचम्य प्राणानायम्य अद्येत्यादितिथौ० अस्य संस्कार्यस्य (संस्कार्याया वा) विवाहादिमंगलकर्मणि मम पत्न्या रजोदोषनिरासार्थं सकलारिष्टशां-त्यर्थं संस्कारस्य (संस्कार्याया वा) बलायुष्यप्राप्त्यर्थं श्रीशान्तिमहं करिष्ये। तदङ्गत्वेन दिग्रक्षणादीनि करिष्ये इति संकल्प्य दिग्रक्षणादि अग्निप्रतिष्ठापनान्तं कर्म कृत्वा पुरतो भद्रपीठे महीद्यौरित्यादिना कलशं संस्थाप्य तदुपरि कृताग्न्युत्तारणप्राणप्रतिष्ठां स्वर्णमयीं श्रीमूर्तिं श्रीश्चते० इत्याद्य मनोजूर्ति० इति प्रतिष्ठाप्य पुरुषसूक्तेन श्रीसूक्तेन

॥ १५५ ॥ अथ गोमुखप्रसवशांतिप्रयोगः ॥

दुष्टकालप्रसवे बहवः शान्तयः सन्ति । तासां मध्ये आश्लेषाज्येष्ठा-मूलनक्षत्रेषु वैधृतिव्यतीपातादियोगेषु च बालके जाते सति गोमुख-प्रसवशान्तिपूर्विका शान्तिः कार्या ॥ तत्र प्रथमं सर्वशान्तिसाधारणो गोमुखप्रसवशांतिप्रयोगः कथ्यते ॥ सपत्नीको यजमानः प्राङ्मुख उपविश्य शान्तिपाठपठनपूर्वकं देवब्राह्मणान्नमस्कृत्य ॥ जलमादाय ॥ अद्येत्यादि० तिथौ अस्य बालकस्य अमुकनक्षत्रयोगोत्पत्तिसूचितारिष्टशान्त्यर्थं गोमुखप्रसवशान्तिं करिष्ये ॥ तत्रादौ दिग्रक्षणं कलशाराधनं गणपतिपूजनमाचार्यवरणं च करिष्ये ॥ पूर्वोक्तरीत्या दिग्रक्षण-मारभ्य आचार्यवरणान्तं कुर्यात् ॥ तत आचार्यः श्वेतचूर्णैः गृहाद्बहि-रीशानदिग्भागे पद्मं कृत्वा तत्र व्रीहिराशिं कृत्वा तत्र शूर्पं स्थापयित्वा शूर्पे रक्तवस्त्रं प्रसार्य तत्र तिलान् विकीर्य शूर्पे प्राङ्मुखं शिशुं निधाय सूत्रेण सशिशुं शूर्पं वेष्टयित्वा शिशुसमीपे गोमुखमानीय प्रसवं विभाव्य पठेत् ॥ योनिं विष्णुः कल्पयतु त्वष्टा रूपाणि पिंशतु ॥ प्रजापतिः प्रसिञ्चतु धाता गर्भं दधातु ते ॥ १ ॥ धेहि गर्भं सिनीवालि धेहि गर्भं पृथुष्टुके ॥ ते देवावश्विनौ गर्भमाधत्तां पुष्करस्रजौ ॥ २ ॥ हिरण्ययीऽअरणीयम् अश्विनानिर्मथतः ॥ गर्भं हवामहे तं ते दशमे मासि सूतवे ॥ ३ ॥ परापते न जायेत पुनः सुपुत्र आपतत् ॥ मेस्य च पुत्रकामायै गर्भ धेहि प्रसूतये ॥ ४ ॥ इति ॥

ततो गां सर्वाङ्गेषु वामाङ्गेषु वा स्पृष्ट्वा पठेत् । गवामंगेषु तिष्ठन्ति भुवनानि चतुर्दश ॥ यस्मात्तस्माच्छिवं मे स्यादिह लोके परत्र च ॥१॥ तत आचार्यः शिशुमादाय मात्रे दद्यात् ॥ विष्णोः श्रेष्ठेन रूपेण गवि नार्यां प्रसूतके ॥ पुत्रान् पुमांसमाधेहि दशमे मासि सूतवे ॥ १ ॥

तासावर्यादींश्च प्रक्षिप्य तदुपरि पूर्णपात्रं निधाय सुवर्णमय्या बृहस्पतिमूर्तेः "ॐ समुद्रस्यत्वा०" इत्यादिमन्त्रैरग्न्युत्तारणादि कृत्वा "ॐ बृहस्पते ऽअति०" इति मन्त्रेण बृहस्पतिमावाह्य "ॐ मनोजूतिर्जुष०॥" इति प्रतिष्ठां कुर्यात्॥ ततः स्थण्डिले पञ्चभूसंस्कारपूर्वकम् अग्निस्थापनं कृत्वा ब्रह्माणं वृत्वा अन्वाधानं कुर्यात्॥ समिद्द्वयं गृहीत्वा—प्रजापतिम् इन्द्रम् अग्निं सोमम् एकैकयाऽऽज्याहुत्या बृहस्पतिम् अश्वत्थसमिद्भिराज्यप्लुताभिः सर्पिर्मिश्रपायसेन आज्यमिश्रितयवव्रीहितिलैश्च प्रतिद्रव्यम् अष्टोत्तरशताहुतिभिः शेषेण स्विष्टकृतम् अग्निं वायुं सूर्यम् अग्नीवरुणौ अग्नीवरुणौ अग्निं वरुणं सवितारं विष्णुं विश्वान् देवान्मरुतः स्वर्कान् वरुणम् आदित्यम् अदितिं प्रजापतिम् एता अङ्गप्रधानार्थां देवता एकैकयाऽऽज्याहुत्या अस्मिन् बृहस्पतिशान्तिकर्मण्यहं यक्ष्ये॥इति समिद्द्वयम् अग्नावादध्यात्॥ ततः प्रणीताप्रणयनाद्याज्योत्पवनान्तां सर्वां कुशकण्डिकां कुर्यात्॥ "ॐ बृहस्पते ऽअति०" इति वैदिकमन्त्रेण ॐ "बृहस्पतये नमः" इति नाममन्त्रेण वा षोडशोपचारैर्बृहस्पतिपूजनं कुर्यात्। तत्र च पीतं वस्त्रद्वयम्, पीतं यज्ञोपवीतम्, पीतं चन्दनम्, पीताक्षताः, पीतपुष्पाणि, घृतदीपम्, मोदकनैवेद्यम्, दक्षिणार्थं मणिरत्नं सुवर्णं वा दद्यात्॥ ततः कुशकण्डिकोक्तं कृत्वा आघारावाज्यभागौ हुत्वा॥ ॐ बृहस्पते ऽअति० इति वैदिकमन्त्रेण आज्यप्लुताश्वत्थसमिद्भिः घृतमिश्रितपायसेनाज्यमिश्रितव्रीहियवतिलैश्चान्वाधानानुसारेण होमं विदध्यात्॥ ततो बृहस्पतेरुत्तरपूजनं कृत्वा नूतने ताम्रपात्रे जलं गृहीत्वा पीताक्षतान्, पीतचन्दनम्, पीतपुष्पाणि, सुवर्णं च निधाय अर्घं दद्यात्। तत्र मन्त्रः—"गम्भीर दृढरूपाङ्ग देवेज्य सुमते प्रभो। नमस्ते वाक्पते तुभ्यं गृहाणार्घं नमोऽस्तु ते॥" इति दत्त्वा प्रार्थयेत्॥ "भक्त्या यत्ते सुराचार्य होमपूजादिसाधनम्। तत्सर्वं गृहाण सानन्दं बृहस्पते नमो नमः॥ जीवो बृहस्पतिः सूरिराचार्यो गुरुरङ्गिराः। वाचस्पतिर्देवमन्त्री शुभं कुर्यात्सदा मम॥ इति नत्वा पूर्णाभिरुद्रं विधाय स्विष्टकृतं हुत्वा नवाहुतीश्च हुत्वा ततो पूर्णाहुत्यन्तं समापयेत्॥ ततो बृहस्पतेः कलशाज्जलं गृहीत्वा कुशैः कुमार्यो धौतवस्त्रे शान्तिपाठं पठन् यजमानस्य शिरसि॥ ॐ आपोहिष्ठा० इति तृचेन, ॐ त्वमर्यमा०, ॐ पावमानी०, ॐ समुद्रज्येष्ठा०, इत्यादिभिः पुनन्तु मा० इत्यादिभिर्मन्त्रैः तथा पुराणोक्त० सुरास्त्वा० इत्यादिभिरभिषेकं कुर्यात्॥ ततोऽभिषेकानन्तरं यजमानो अग्निं हुत्वा पूर्वाभिमुखं विसर्जयेत् सपात्रमादित्यम् आचार्याय दत्त्वा ब्राह्मणेभ्यो यथाशक्त्या आचार्याय च दक्षिणां प्रदाय भोजयेत्॥

॥ इति बृहस्पतिशान्तिः॥

---

(१) पारस्करगृह्यसूत्रम् (वीरेश्वरः) ५५३ तमे पृष्ठे द्रष्टव्यः॥
(२) सदर्भाग्निप्रयोगस्तु पृष्ठ ३१५ तः ३७१ पर्यन्तं द्रष्टव्यः॥

॥२८॥ इति वा) होमं कुर्यात् ॥ ततो ग्रहमंत्रैश्चैकैकाहुतिं दधिमध्वाज्येन जुहुयात् ॥ ततः स्विष्टकृन्नवाहुतीर्हुत्वा संस्रवप्राशनं पवित्राभ्यां मार्जनम् अग्नौ पवित्रप्रतिपत्तिः ॥ ब्रह्मणे पूर्णपात्रदानम् ॥ प्रणीताविमोकोदकेन मार्जनं ब्राह्मणभोजनसंकल्पं च कुर्यात् ॥ ततो "यान्तु देव०" इति मंत्रेण देवताविसर्जनमग्नेश्च "यज्ञयज्ञं०" इति "गच्छ गच्छ०" इति वा विसर्जनं कुर्यात् ॥ इति गोमुखप्रसवशान्तिः ॥

॥ १५६ ॥ अथ मूलशांतिप्रयोगः ॥

सपत्नीको यजमानः शुभासने प्राङ्मुख उपविश्य आचम्य प्राणानायम्य शांतिपाठपठनपूर्वकदेवब्राह्मणान् नमस्कृत्य ॥ जलमादाय ॥ अद्येत्यादि० तिथौ ममास्य बालकस्य कुमार्या वा मूलप्रथमचरणादिजननसूचितसर्वारिष्टविनाशार्थं शुभफलप्राप्त्यर्थं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं सनवग्रहमखां मूलजननशान्तिं करिष्ये ॥ तदंगभूतं गणपतिपूजनं पुण्याहवाचनं मातृकापूजनं वसोर्द्धारां नांदीश्राद्धं ब्राह्मणवरणं पंचगव्यकरणं भूमिपूजनमग्निस्थापनं देवतास्थापनानि च करिष्ये ॥ तत्रादौ दिग्रक्षणं कलशार्चनं च करिष्ये इति दिग्रक्षणादि वह्निस्थापनान्तं सर्वं समापनीयम् ॥ ततः अग्नेः प्राच्यां पीठोपरि श्वेतवस्त्रं प्रसार्य तदुपरि पंचवर्णैः स्वस्तिकं कृत्वा तन्मध्ये पूर्णपात्रान्तं कलशं संस्थाप्य तस्य कलशस्य चतुर्दिक्षु चतुरोऽन्यान् कलशान् स्थापयित्वा मध्यकुंभोपरि कृताग्न्युत्तारणपूर्विकां सुवर्णमयीं रुद्रमूर्तिं संस्थाप्य ॥ ॐ त्र्यंब०॥ "रुद्राय नमः।" इति यथालाभोपचारैः संपूज्य तत्र "नमस्ते०" इति रुद्रसूक्तं पठेत् । अन्ये चत्वारो ब्राह्मणाश्चतुरः कलशान् स्पृष्ट्वा पूर्वादिक्रमतः शांतिसूक्तम्, अग्निसूक्तम्, रुद्रसूक्तम्, त्र्यंबकमंत्रांश्च जपेयुः ॥

इति । ततो माता पित्रे दद्यात् ॥ पिता मात्रे दद्यात् ॥ ततः पिता वस्त्रम् उद्घाट्य पुत्रमुखमीक्षेत ॥ तत आचार्यः पंचगव्येन-ॐ आपोहिष्ठा० । ॐ योवः०। ॐ तस्मा० इति मंत्रत्रयेण अपवित्रः पवित्रोवा० इति मंत्रेण च शिशुमभिषिंचेत् ॥ ततः पिता शिशुं मूर्धनि जिघ्रेत् ॥ अंगादंगात्संभवसि हृदयादधि जायसे ॥ आत्मा वै पुत्रनामासि स जीव शरदां शतम् ॥१॥ सकृत् मंत्रेण द्विस्तूष्णीम् ॥ ततो ब्राह्मणैः पंचवाक्यैः पुण्याहं वाचयेत् । भो ब्राह्मणाः अस्य कर्मणः पुण्याहं भवंतो ब्रुवन्तु ॥ विप्राः अस्तु पुण्याहम् ॥ एवं कल्याणम् ऋद्धिं स्वस्ति श्रीरस्तु इत्यादि ब्रूयु ॥ तत आचार्याय गां वा गोरभावे तन्निष्क्रयं दद्यात् ॥ ततः पंचभूसंस्कारपूर्वकं स्थण्डिलोपरि अग्निं संस्थाप्य अधिप्रत्यधिदेवतारहितानाम् केवलं सूर्यादिनवग्रहाणां स्थापनं कृत्वा यथाशक्त्या पूजनं कुर्यात् ॥ ततो अग्नेरीशान्यां पीठोपरि श्वेतवस्त्रं प्रसार्य तदुपरि तंडुलेनाष्टदलं निर्माय मध्ये महीद्यौरित्यादिना कलशं संस्थाप्य तस्मिन्कलशे पंचगव्यं तिलान् क्षीरद्रुमकषायं (अश्वत्थवटोदुम्बरवृक्षाणां क्वाथितं जलं) क्षिप्त्वा वस्त्रयुग्मेन वेष्टयित्वा तदुपरि कृताग्न्युत्तारणपूर्वकं सुवर्णमयं तद्विष्णो० इति विष्णोः । तत्त्वायामि० इति वरुणस्य । च ॐ नाशयित्रीबलासस्यार्शसउपचितामसि । अथो शतस्य यक्ष्माणाम्पाकारोरसिनाशनी ॥ ¹ ॥ इति यक्ष्मणश्च इति मूर्तित्रयं प्रतिष्ठाप्य । " विष्ण्वाद्यावाहितदेवेभ्यो नमः " इति मूलमंत्रेण यथाशक्त्या पूजनं कुर्यात् ॥ ततो यजमानः द्रव्यत्यागं कृत्वा प्रधानदेवतानां मिलितदधिमध्वाज्यैः विष्णुं सकृत् अपश्चतुर्वारं यक्ष्माणमष्टाविंशतिसंख्ययाऽष्टौ वा तत्तन्मंत्रैर्नाममंत्रैर्वा यथा-(विष्णवे स्वाहा १। वरुणाय स्वाहा ४। यक्ष्मणे स्वाहा

१ मन्त्रे म इति पुंनिर्देशात् कन्यायास्तूष्णीं म ।

ति०॥२२॥ विशाखाधिष्ठितौ इन्द्राग्नी इहागच्छतम् इह तिष्ठतम् ॥२३॥ अनुराधाधिष्ठित मित्र इहा०इ०ति० ॥२४॥ तत इन्द्रादिदशदिक्पालान् आवाह्य ॥ ॐ मनोजूतिरिति प्रतिष्ठां कृत्वा ॥"निर्ऋत्याद्यावाहितदेवेभ्यो नमः" इत्यनेन तान् यथाशक्ति षोडशोपचारैः संपूज्य ॥ तदुत्तरतः ग्रहपीठे आकृष्णेन०। इत्यादिभिर्मन्त्रैः ग्रहाणां स्थापनं कृत्वा पूर्वोक्तप्रकारेण पूजनं कृत्वाऽग्निप्रतिष्ठादि ग्रहहोमान्तं कर्म कुर्यात् ॥ ततः प्रधानहोमं कुर्यात्। घृतमिश्रपायससमिदाज्यचरूणां प्रत्येकस्य प्रधानमधिदेवताः प्रत्यधिदेवताश्चतुर्विंशतिदेवांश्चोद्दिश्य तत्तन्मन्त्रैः नाममन्त्रेण वा क्रमेणाष्टोत्तरशताष्टाविंशत्यष्टसंख्याभिराहुतीर्दद्यात्। तद्यथा॥ "निर्ऋतये स्वाहा" ॥१०८॥ "इन्द्राय स्वाहा" ॥२८॥ "वरुणाय स्वाहा" ॥२८॥ विश्वेभ्यो देवेभ्यः०॥८॥ विष्णवे०॥ वसुभ्यः०॥ वरुणाय० ॥ अजैकपदे० ॥ अहिर्बुध्न्याय० ॥ पूष्णे० ॥ अश्विभ्यां० ॥ यमाय०॥ अग्नये०॥ प्रजापतये०॥ सोमाय०॥ रुद्राय०॥ अदितये०॥ बृहस्पतये० ॥ सर्पाय० ॥ पितृभ्यः० ॥ भगाय० ॥ अर्यम्णे० ॥ सवित्रे० ॥ त्वष्ट्रे० ॥ वायवे० ॥ इन्द्राग्निभ्यां० ॥ मित्राय० ॥ ८ ॥ ॥२७॥ इत्याहुतीर्दत्वा इन्द्रादिदशलोकपालानां प्रतिद्रव्यमेकैकाहुतिं दद्यात् ॥ यथा ॥ इन्द्राय स्वाहा ॥ अग्नये०॥ यमाय०॥ निर्ऋतये० वरुणाय०॥ वायवे०॥ सोमाय०॥ ईशानाय०॥ ब्रह्मणे०॥ अनन्ताय०॥ ततः पायसमध्ये तिलान् निक्षिप्य। अयमेव कृसरपायसः ॥ तेनैव कृसरपायसेन वक्ष्यमाणहोमं कुर्यात् ॥ निर्ऋतये०॥८॥ सवित्रे०॥८॥ दुर्गायै० ॥८॥ वास्तोष्पतये० ॥८॥ अग्नये० ॥८॥ क्षेत्राधिपतये०॥८॥ मित्रावरुणाभ्यां० ॥ ८ ॥ अग्नये० ॥ ८ ॥ श्रियं समिदाज्यचरुद्रव्यैः "श्रियै स्वाहा" ॥८॥ सोमं पायसद्रव्येण त्रयोदशवारं (१३) सोमाय

अथ प्रधानदेवतास्थापनम् ॥ मध्ये पीठोपरि श्वेतवस्त्रं प्रसार्य तदुपरि पंचवर्णैस्तण्डुलैश्चतुर्विंशतिपत्रात्मकं पंकजं कृत्वा ॥ तन्मध्ये पूर्णपात्रान्तं कलशं संस्थाप्य ॥ तन्मध्ये शतमूलानि तदभावे सप्तविंशति-मूलानि तदभावे विष्णुक्रान्तां सहदेवीं तुलसीं शतावरीं कुशं कुंकुमं च प्रक्षिप्य तदुपरि कृताष्टदलं क्षौमं वस्त्रं प्रसार्य तदुपरि कर्णिकायां कृताग्न्युत्तारणपूर्विकाः सुवर्णमयीः निर्ऋत्यादिप्रतिमा आवाहयेत् ॥ ॐ असुन्व० । मूलनक्षत्राधिष्ठित निर्ऋते इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ १ ॥ तद्दक्षिणे ॐत्रातार० । ज्येष्ठाधिष्ठित इन्द्र०इहा०इह० ॥२॥ तद्वामे तत्त्वायामि० पूर्वाषाढाधिष्ठित वरुण इहा० इह० ॥ ३ ॥ ततः पंकजस्य चतुर्विंशतिदलेषु पूर्वमारभ्य प्रदक्षिणक्रमेण ॥ उत्तराषाढाधिष्ठिता विश्वेदेवा इहागच्छत इह०॥१॥श्रवणाधिष्ठित विष्णो०इ०इ० ॥२॥ धनिष्ठाधिष्ठिता अष्टवसवः इहा०इ०॥३॥शतभिषाधिष्ठित वरुण इहा०इह०॥४॥ पूर्वाभाद्रपदाधिष्ठित अजैकपाद् इहा०इ०ति०॥५॥उत्तराभाद्रपदाधिष्ठित अहिर्बुध्न्य इहा०इ० तिष्ठ ॥६॥ रेवत्यधिष्ठित पूषन् इहा० इह तिष्ठ ॥ ७ ॥ अश्विन्यधिष्ठित अश्विनौ० इहागच्छतम् इह तिष्ठतम् ॥ ८ ॥ भरण्यधिष्ठित यम इहा० इ०ति०॥९॥कृत्तिकाधिष्ठित अग्ने०इहा०इ०ति० ॥१०॥ रोहिण्यधिष्ठित प्रजापते इहा०इ०ति०॥११॥मृगशीर्षाधिष्ठित सोम इहा०इ०ति०॥१२॥ आर्द्राधिष्ठित रुद्र इहा० इ०ति० ॥ १३ ॥ पुनर्वस्वधिष्ठित अदिते इहा० इ०ति०॥१४॥पुष्याधिष्ठित बृहस्पते इहा०इ०ति०॥१५॥ आश्लेषाधिष्ठित सर्प इहा०इ०ति०॥१६॥ मघाधिष्ठितपितरः इहागच्छत इह तिष्ठत॥१७॥ पूर्वाफाल्गुन्यधिष्ठित भग इहा०इ०ति० ॥१८॥ उत्तराफाल्गुन्यधिष्ठित अर्यमन्निहा०इ०ति० ॥१९॥ हस्ताधिष्ठित सूर्य इहा० इह तिष्ठ ॥२०॥ चित्राधिष्ठित त्वष्टः इहा०इ०तिष्ठ ॥२१॥ स्वात्यधिष्ठित वायो इहा०इ०

मूलादिसर्वगंडान्तं दोषमाशु व्यपोहतु ॥ ८ ॥ विघेशः क्षेत्रपो दुर्गा लोकपाला नवग्रहाः ॥ सर्वदोषप्रशमनं सर्वे कुर्वन्तु शान्तिदाः ॥ ९ ॥ मूलनक्षत्रजातस्य मातापित्रोर्धनस्य च ॥ भ्रातृज्ञातिकुलोत्थानां दोषं सर्वं व्यपोहतु ॥ १० ॥ पितरः सर्वभूतानां रक्षन्तु पितरः सदा ॥ मूलनक्षत्रजातस्य वित्तं च ज्ञातिबांधवान् ॥ ११ ॥ सुरास्त्वामभिषिंचन्तु० ॥ इत्यादिकान् टिप्पणीस्थान् मंत्रान् पठित्वा अमृताभिषेकोऽस्तु ॥ अभिषेकानन्तरं स्नायात् ॥ कांस्यपात्रे घृतं मपूर्य तस्मिन् पिता पुत्रपत्न्योः मुखं पश्येत् ॥ छायापात्रं सुवर्णसहितमाचार्याय दद्यात् ॥ ततः तिलपात्रादि दानं दत्वा ब्राह्मणेभ्यो दक्षिणां दद्यात् ॥ तेभ्यो आशीर्वादं गृहीत्वा देवान् विसृजेत् ॥ ततो ब्राह्मणान् संभोज्य स्वयं सपरिवारो भुञ्जीत ॥ ॥ इति मूलशान्तिप्रयोगः ॥

---

१ सुरास्त्वामभिषिंचन्तु ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥ वासुदेवो जगन्नाथस्तथा संकर्षणो विभुः ॥ १ ॥ प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च भवन्तु विजयाय ते ॥ आखण्डलोऽग्निर्भगवान् यमो वै निर्ऋतिस्तथा ॥ २ ॥ वरुणः पवनश्चैव धनाध्यक्षस्तथा शिवः । ब्रह्मणाऽनन्तसहिता दिक्पालाः पान्तु ते सदा ॥ ३ ॥ कीर्तिर्लक्ष्मीर्धृतिर्मेधा पुष्टिः श्रद्धा क्रिया मतिः ॥ बुद्धिर्लज्जा वपुःशान्तिस्तुष्टिःकान्तिश्च मातरः ॥ ४ ॥ एतास्त्वामभिषिंचन्तु देवपत्न्यः समागताः ॥ आदित्यश्चंद्रमा भौमो बुधजीवसितार्कजाः ॥ ५ ॥ ग्रहास्त्वामभिषिंचन्तु राहुकेतुश्च तर्पिताः ॥ ६ ॥ ऋषयो मुनयो गावो देवमातर एव च ॥ देवपत्न्यो द्रुमा नागा दैत्याश्चाप्सरसां गणाः ॥ ७ ॥ अस्त्राणि सर्वशस्त्राणि राजानो वाहनानि च ॥ औषधानि च रत्नानि कालस्यावयवाश्च ये ॥ ८ ॥ सरितः सागराः शैलास्तीर्थानि जलदा नदाः ॥ एते त्वामभिषिंचन्तु सर्वकामार्थसिद्धये ॥ ९ ॥ सहस्राक्षं शतधारमृषिभिः पावनं कृतम् ॥ तेन त्वामभिषिंचामि पावमान्यः पुनन्तु ते ॥ १० ॥ भगं ते वरुणो राजा भगं सूर्यो बृहस्पतिः ॥ भगमिन्द्रश्च वायुश्च भगं सप्तर्षयो ददुः ॥ ११ ॥ यत्ते केशेषु दौर्भाग्यं सीमन्ते यच्च मूर्धनि । ललाटे कर्णयोरक्ष्णोरापो निघ्नन्तु ते सदा ॥ १२ ॥

स्वाहा इति ॥ स्रुवेण स्रुचिं पूरयित्वा "रुद्राय स्वाहा" ॥ १ ॥ इति जुहुयात् ॥ एवं प्रधानहोमं समाप्य लक्ष्मीहोमं गुग्गुलहोमं सर्षपहोमं च कृत्वा उत्तरपूजां नवाहुत्यादिप्रणीताविमोकान्तं कुर्यात् ॥ तत आचार्यादयः सर्वकलशोदकं पात्रान्तरे गृहीत्वा सर्वौषध्यनुलिप्ताङ्गमुभयधृतैकनववस्त्रं सपत्नीकं सबालं यजमानमग्रेः पश्चादुपवेश्य तस्योपरि शिक्यादौ सहस्रछिद्रं शतछिद्रं वा कुंभं निधाय कुंभे पूर्वोक्तानि शतमूलानि यथा मिलितानि वा मूलानि क्षिप्त्वा शूर्पमन्तर्धायाभिषिंचेयुः ॥ अभिषेके पत्नी वामतः ॥ प्राक् आपोहिष्ठा० इत्यादिवारुणमन्त्रैरभिषिच्य ततो पौराणिकमन्त्रैरभिषेकं कुर्यात् ॥ योऽसौ वज्रधरो देवो महेन्द्रो गजवाहनः ॥ मूलजातं शिशोर्दोषं मातापित्रोर्व्यपोहतु ॥ १ ॥ योऽसौ शक्तिधरो देवो हुतभुङ् मेषवाहनः ॥ सप्तजिह्वश्च देवोऽग्निर्मूलदोषं व्यपोहतु ॥ २ ॥ योऽसौ दंडधरो देवो धर्मो महिषवाहनः ॥ मूलजातं शिशोर्दोषं व्यपोहतु यमो मम ॥ ३ ॥ योऽसौ खड्गधरो देवो निर्ऋती राक्षसाधिपः ॥ प्रशामयतु मूलोत्थं दोषं गंडान्तसंभवम् ॥ ४ ॥ योऽसौ पाशधरो देवो वरुणश्च जलेश्वरः ॥ नक्रवाहः प्रचेतानो मूलदोषं व्यपोहतु ॥ ५ ॥ योऽसौ देवो जगत्प्राणो मारुतो मृगवाहनः ॥ प्रशामयतु मूलोत्थं दोषं बालस्य शान्तिदः ॥ ६ ॥ योऽसौ निधिपतिर्देवः खड्गभृद्वाजिवाहनः ॥ मातापित्रोः शिशोश्चैव मूलदोषं व्यपोहतु ॥ ७ ॥ योऽसौ पशुपतिर्देवः पिनाकी वृषवाहनः ॥

---

१ मूलशांतौ-अभिषेके "मूलदोषं", "मूलोत्थं", "मूलनक्षत्रजातस्य" इत्येषां स्थाने । ज्येष्ठायां-"ज्येष्ठादोषं", "ज्येष्ठोत्थं", "ज्येष्ठानक्षत्रजातस्य" आश्लेषायां-"सर्पदोषं" "सार्पोत्थं", "सार्पनक्षत्रजातस्य" वैधृतौ-"वैधृतिजं", "वैधृत्यं" "वैधृतियोगजातस्य" । व्यतिपाते-"पातदोषं", "पातोत्थं", "पातयोगे तु जातस्य" त्रिकशान्तौ-"त्रिकदोषं", "त्रिकोत्थं", "त्रिकप्रसूतिजातस्य" इत्यादिकं वक्तव्यम् ॥

कुर्यात् ॥ ततः आज्यभागांतं द्रव्यत्यागं च कृत्वा ग्रहहोमं विधाय प्रधानहोमं त्रातारमिन्द्र० । इति इन्द्राय घृतमिश्रितपायससमिदाज्यचरुभिः प्रत्येकं १०८ षड्विंशतिनक्षत्रदेवताभ्यः ८ आहुतिभिः लोकपालेभ्यः एकैकाज्याहुत्या च कुर्यात् । ततः पूजा स्विष्टं नवाहुत्यो बलिः पूर्णाहुतिस्तथा ॥ श्रेयः संपाद्य दानं चेति कुर्यात् ॥ ततः आचार्यादयो भार्याशिशुसहितयजमानस्याभिषेकं पूर्वोक्तरीत्या वारुणमंत्रैः योऽसौ वज्रधरो० सुरास्त्वा० इति मंत्रैश्च कुर्युः ॥ अभिषेकान्ते आज्यावलोकनं तद्दानं च ॥ ब्राह्मणेभ्यो दक्षिणां दत्त्वा तेभ्यः आशिषो गृहीत्वा देवताविसर्जनं कृत्वा ब्राह्मणान् भोजयित्वा सपरिवारः स्वयं भुंजीतेति ॥

॥ १५८ ॥ अथ आश्लेषाशांतिप्रयोगः ॥

आदौ पूर्ववत् गोमुखप्रसवशांतिं कृत्वा सपत्नीको यजमानः प्राङ्मुख उपविश्य आचम्य प्राणानायम्य शांतिपाठपठनपूर्वकं देवब्राह्मणान् नमस्कृत्य ॥ जलमादाय ॥ मम अस्य बालकस्य कुमार्या वा आश्लेषानक्षत्रप्रथमचरणादिजननसूचितसकलारिष्टनिरसनद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं सग्रहमखाम् आश्लेषानक्षत्रजननशान्तिं करिष्ये ॥ तदङ्गत्वेन दिग्रक्षणादिदेवतास्थापनान्तानि करिष्ये इति संकल्प्य दिग्रक्षणकलशाराधनगणपतिपूजनादि अग्निस्थापनान्तं कर्म कृत्वा पूर्ववत् अग्नेः ईशान्यां महीद्यौरित्यादिना कलशं प्रतिष्ठाप्य तस्य चतुर्दिक्षु चतुरः कलशान् संस्थाप्य तेषु सर्वौषध्यादिमिश्रितसर्षपांश्च प्रक्षिप्य वरुणपूजनं च कृत्वा ॥ मध्यकलशोपरि क्षौमं वस्त्रं प्रसार्य तत्र पूर्ववद्रुद्रप्रतिमां संस्थाप्य पूजयेत् । एको विप्रः तं कलशम् अन्ये च चत्वारो विप्राः कलशचतुष्टयं

---

१. कुंभाभावे एक एव कुंभं स्थापयित्वा तत्र सर्वाणि सूक्तानि पठेत् ।

॥ १५७ ॥ अथ ज्येष्ठाशान्तिप्रयोगः ॥

प्रथमतः पूर्वोक्तप्रकारेण गोमुखप्रसवशांतिं संपाद्य सपत्नीको यजमानः शुभासने उपविश्य । आचम्य प्राणानायम्य शान्तिपाठपठनपूर्वकं देवब्राह्मणान्नमस्कृत्य जलमादाय ॥ अद्येत्यादि० तिथौ अस्य शिशोः ज्येष्ठाजननसूचितसकलारिष्टशान्तिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं सनवग्रहमखां ज्येष्ठाजननशान्तिं करिष्ये ॥ तदंगभूतं दिग्रक्षणं कलशाराधनं गणपतिपूजनं० देवतास्थापनानि च करिष्ये इति संकल्प्य दिग्रक्षणं कलशाराधनं गणपतिपूजनादि अग्निस्थापनान्तं कृत्वा ॥ स्थंडिलात्पूर्वे पीठोपरि श्वेतवस्त्रं प्रसार्य तदुपरि तंदुलैरष्टदलं षड्विंशतिदलं वा कमलं विरच्य तन्मध्ये महीद्यौः इत्यादिना पूर्णपात्रान्तं कलशं संस्थाप्य तदुपरि क्षौमं वस्त्रं प्रसार्य तन्मध्ये ॐ त्रातारमिन्द्र० । इत्यनेन मंत्रेण इन्द्रमावाह्य स्थापयेत् ॥ ततः कलशाधोभागे निर्ऋत्यादिषड्विंशतिनक्षत्राधिपतीनावाह्य संस्थाप्य ततो मंडलाद्बहिः इन्द्रादिलोकपालानावाह्य मनोजूति० इति प्रतिष्ठापयेत् ॥ ततः षोडशोपचारैः संपूज्य तत्पुरतः उत्तरतो वा पीठे श्वेतवस्त्रोपर्यष्टदलं कृत्वा तदुपरितश्चतुरोऽक्षतपुञ्जान् कृत्वा मध्ये शतच्छिद्रं बृहत्कलशं तच्चतुर्दिक्षु चतुरः कलशान् पूर्वमारभ्य प्रादक्षिण्येन महीद्यौरित्यादिना संस्थाप्य मध्ये पंचगव्यादिकं क्षिप्त्वा ॥ मध्यमकलशे ॥ ॐ तत्त्वायामि० ॥ १ ॥ पूर्वकलशे ॥ ॐ त्वन्नोऽअग्ने० ॥२॥ दक्षिणकलशे ॥ ॐ सत्वन्नोऽअग्ने० ॥ ३ ॥ पश्चिमकलशे ॐ समुद्रोसिनभ० ॥४॥ उत्तरकलशे ॥ इमम्मे० ॥५॥ इति यथावत् वरुणस्य प्रतिष्ठादिमंत्रपुष्पाञ्जलिपर्यन्तं पूजनं कृत्वा विप्राः पूर्वादिक्रमतः शांतिसूक्तम्, अग्निसूक्तम्, रुद्रसूक्तम्, त्र्यम्बकमन्त्रान् १०८ जपेयुः। ततो ग्रहस्थापनं

चतुर्वारं स्रुचिं पूरयित्वा त्र्यंबकं० इति त्र्यम्बकमंत्रेण "रुद्राय स्वाहा" इति वा जुहुयात् ॥ तत आचारात् फलहोमं विधाय व्याहृतिहोमं च कृत्वा उत्तरपूजनं च कृत्वा स्विष्टकृदाहुतिं हुत्वा नवाहुतीर्हुत्वा बलिदानं पूर्णाहुतिहोमं च विधाय प्रणीताविमोकान्तं कृत्वा सर्वकलशोदकं गृहीत्वा सबालं सपत्नीकं यजमानमाचार्यादयो वारुणमंत्रैः—योऽसौ वज्र०।इति सुरास्त्वादिमंत्रैश्च पूर्ववदभिषिंचेयुः।।ततः स्नात्वा आज्यावलोकनदानं तिलादिदानं च कृत्वा ब्राह्मणेभ्यो दक्षिणादिकं दत्त्वा तेभ्य आशिषो गृहीत्वा देवताविसर्जनं कृत्वा ब्राह्मणान् संभोज्य भुञ्जीत ॥

॥ १५९ ॥ अथ वैधृतिशांतिप्रयोगः ॥

तत्रादौ पूर्ववद् गोमुखप्रसवं कृत्वा शान्तिपाठपठनपूर्वकं देवब्राह्मणान्नमस्कृत्य ॥ जलमादाय ॥ अद्येत्यादि० अस्य शिशोर्वैधृतिजननसूचितसर्वारिष्टशान्तिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं वैधृतिजननशान्तिं करिष्ये ॥ तत्रादौ दिग्रक्षणादि देवतास्थापनान्तं कर्म करिष्ये इतिसंकल्प्य दिग्रक्षणादि अग्निस्थापनान्तं पूर्ववत् कुर्यात् ॥ ततः स्थंडिलस्य पूर्वस्यां पीठोपरि श्वेतवस्त्रं प्रसार्य तदुपरि व्रीहिराशिंच कृत्वा तदुपरि वस्त्रं तदुपरि तंदुलराशिं तदुपरि वस्त्रं तदुपरि तिलराशिं कृत्वा तदुपरि वस्त्रं प्रसार्य तदुपरि पंचवर्णतंडुलैरष्टदलं कृत्वा मध्ये ॥ महीद्यौः० इत्यादिना पूर्णपात्रान्तं कुंभं संस्थाप्य तत्र अधिदेवप्रत्यधिदेवप्रधानमूर्तीनामग्न्युत्तारणपूर्वकप्राणप्रतिष्ठां कृत्वा स्थापनं कुर्यात् ॥ यथा ॐ नमस्ते० । रुद्राय नमः रुद्रम् आ० स्था० । तद्दक्षिणे ॐ आकृष्णेन०।सूर्याय०सूर्यम् आ०स्था०। तदुत्तरे ॐ इमन्देवा०। सोमाय० सोमम् आ० स्था०॥ मनोजूर्ति० इति प्रति-

---

१ अत्र सार्पशीर्षे विनश्यतु इत्यादिकं वदेयुः ॥ ४६४ पृष्ठे दृष्टव्यम् ॥

स्पृष्ट्वा नमस्ते० इति सकलं रुद्राध्यायम् ॥ आशुःशिशान इति अप्रतिरथसूक्तम् । शांतिसूक्तम् । अग्निसूक्तम् । कृणुष्वपाजः० । इति पंचर्चं रक्षोघ्नं च जपेत् ॥ ततो रुद्रस्थापनादुत्तरतो द्वितीयपीठे चतुर्विंशतिपत्रात्मकं दलं विरच्य तत्र महीद्यौः० इति कलशं संस्थाप्य तत्र शतौषधानि तदभावे शतावरीं हिरण्यमूलं सप्तधान्यानि वस्त्रे बद्धानि निःक्षिपेत् ॥ ततः कलशोपरि सुवर्णमयीं सर्पमूर्तिमग्न्युत्तारणप्राणप्रतिष्ठापूर्वकमावाह्य ॥ नमोस्तु सर्पेभ्य० ॥ इति मंत्रेण प्रतिष्ठाप्य ॥ तद्दक्षिणे पुष्याधिपतिबृहस्पतिं बृहस्पते० । इति वामे च मघाधिपतीन् पितॄन् उदीरता० । इति प्रतिष्ठाप्य षोडशोपचारैः संपूज्य सर्पदेवतायाः पूर्वादिदिक्षु नागाष्टकमावाह्य पूजयेत् ॥ यथा–ॐअनन्ताय० ॥ वासुकये० ॥ तक्षकाय० ॥ कर्कोटकाय० ॥ पद्माय० ॥ शेषाय० ॥ कंबलाय० ॥ शंखपालाय० ॥ ततः चतुर्विंशतिदलेषु पूर्वाफाल्गुन्यधिष्ठितभगादिमारभ्य पुनर्वस्वधिष्ठितादित्यन्तान् देवानावाह्य दिक्षु दिक्पालांश्चावाह्य पूजयेत् ॥ ततो ग्रहपीठे ईशान्यां ग्रहमंडलदेवानावाह्य संपूज्य कुशकंडिकां कृत्वा आघारादिभागान् हुत्वाऽग्निं संपूज्य द्रव्यत्यागं कृत्वा वराहुतिं दत्वा ग्रहहोमं विधाय प्रधानहोमं कुर्यात् ॥ तत्र घृतमिश्रितपायससमिदाज्यचरूणां प्रत्येकस्य "नमोस्तुसर्पेभ्य०" इति १०८ । "बृहस्पतये०" इति २८ "उदीरता०" इति २८ । चतुर्विंशतिभगादिदेवानुद्दिश्य ८ अष्ट आहुतीर्लोकपालेभ्यो नामभ्यश्च एकैकाहुतिं दद्यात् । ततः पायसमध्ये तिलान् निक्षिप्य तेन कृसरेण निर्ऋतये स्वाहा ।८। सवित्रे० । रुद्राय० । दुर्गायै० । वास्तोष्पतये० । अग्नये० । क्षेत्राधिपतये० । मित्रावरुणाभ्यां० । अग्नये० । इति ८ अष्टाष्टाहुतीर्हुत्वा समिदाज्यचरुद्रव्यैरष्टसंख्यया "श्रियै नमः" इति हुत्वा केवलपायसेन "सोमाय नमः" इति अष्टाहुतीर्दद्यात् ॥ ततः

होमान्तं पूर्ववत् कुर्यात् ॥ प्रधानहोमः सूर्याय १००८ ॥ अग्नये २८ ॥ रुद्राय २८ तत्तन्मन्त्रैर्नाममंत्रैर्वा जुहुयात् । त्र्यम्बकमन्त्रेण १०८ आहुतीर्हुत्वा लक्ष्मीहोमादिकं कृत्वा पूजा स्विष्टं इत्यादि विसर्जनान्तं पूर्ववत् कृत्वा ब्राह्मणान् संभोज्य स्वयं भुञ्जीत ॥

॥ इति व्यतीपातशांतिप्रयोगः ॥

॥ १६१ ॥ अथ त्रिकप्रसवशांतिप्रयोगः ॥

आदौ गोमुखप्रसवशांतिं कृत्वा शांतिपाठं पठित्वा आचम्य प्राणानायम्य हस्ते जलमादाय । मम सुतत्रयजन्मानन्तरं कन्याजनन (वा कन्यात्रयजन्मानन्तरं पुत्रजन्म) सूचितसर्वारिष्टनिवृत्तिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं त्रिकप्रसवशांतिं करिष्ये ॥ तदङ्गत्वेन दिग्रक्षणादि देवतास्थापनान्तं करिष्ये इति संकल्प्य दिग्रक्षणादि अग्निस्थापनं ग्रहस्थापनं च कृत्वा ग्रहस्थापनान्ते कलशपंचके ॥ ॐ ब्रह्मजज्ञा० । इति ब्रह्माणम् ॥ ॐ इदं विष्णुर्वि० इति विष्णुम् ॥ ॐ त्र्यंबकं० । इति त्र्यंबकम् ॥ ॐ त्रातारमिन्द्र० । इति इन्द्रम् ॥ ॐ नमस्ते० । इति रुद्रम् । इत्यावाह्य षोडशोपचारैः पूजयेत् ॥ ततः कुशकंडिकां कृत्वा क्रमेण पूर्ववत् ग्रहहोमान्तं संपाद्य ॥ ततो ब्रह्मादिदेवेभ्यः प्रत्येकं समिदाज्यचरुतिलैः १०८ अष्टोत्तरशताहुतीर्दद्यात् ॥ एवं प्रधानहोमं संपाद्य पूजास्विष्टकृतादिनवाहुतीर्बलिं पूर्णाहुतिंच कृत्वा होमशेषं समाप्य श्रेयः संपाद्य दक्षिणादानं च कृत्वा सकुटुंबम् अभिषेकं कारयित्वा आज्ये मुखावलोकनं कृत्वा तद्दानं कृत्वा ब्राह्मणान् भोजयित्वा च स्वयं भुञ्जीत इति ॥

॥ इति त्रिकप्रसवशांतिप्रयोगः ॥

---

१ सुतत्रये सुता चेत्स्यात्तत्रये वा सुतो यदि ॥ मातापित्रोः कुलस्यापि तदाऽनिष्टं महद्भवेत् ॥ ज्येष्ठनाशो विवादादिर्दुःखं वा समहद्भवेत् ॥

ष्ठाप्य "रुद्राद्यावाहितदेवेभ्यो नमः" इति षोडशोपचारैः संपूजयेत् ॥ अत्र मूर्तिं कुंभं च स्पृष्ट्वा रुद्रसूक्तम्, अप्रतिरथसूक्तम्, इन्दुसूक्तम्, त्र्यम्बकमन्त्रांश्च विप्रा जपेयुः ॥ तत ऐशाने ग्रहमंडलस्थापनं कृत्वा कुशकंडिकां पात्रासादनादिकं च कृत्वा ग्रहहोमान्तं पूर्ववत् विधाय प्रधानं रुद्रं समिदाज्यचरुद्रव्यैः अष्टसहस्रमष्टोत्तरशतंवा १०८ सूर्यसोमौ तैरेवाष्टाविंशतिभिराहुतिभिर्जुहुयात् । ततः त्र्यम्बकमन्त्रेणाष्टोत्तरशतं तिलैर्होमः ॥ ततः पूजा स्विष्टं नवाहुत्यो बलिः पूर्णाहुतिस्तथा ॥ श्रेयः संपाद्य दानं च इति कृत्वा पूर्ववत् अभिषेकं कृत्वा देवता विसृज्य ब्राह्मणान् संभोज्य स्वयं भुञ्जीत ॥

॥ इति वैधृतिशांतिप्रयोगः ॥

॥ १६० ॥ अथ व्यतीपातशांतिप्रयोगः ॥

तत्रादौ गोमुखप्रसवशांतिं कृत्वा जलमादाय ॥ अद्येत्यादि० ॥ अस्य शिशोः व्यतीपातजननसूचितसर्वारिष्टशान्तिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं व्यतीपातजननशान्तिं करिष्ये॥तदङ्गत्वेन दिग्रक्षणादि देवतास्थापनान्तं कर्म करिष्ये इति संकल्प्य दिग्रक्षणाद्यग्निप्रतिष्ठान्तं पूर्ववत् कृत्वा॥ पूर्वस्यां पीठोपरि श्वेतवस्त्रोपरि व्रीहिराशिं तदुपरि वस्त्रं तंदुलराशिं तदुपरि वस्त्रं तिलराशिं तदुपरि वस्त्रमष्टदलं च कृत्वा तत्र महीद्यौरिति कलशं संस्थाप्य तत्र ॥ ॐ आकृष्णेन० । सूर्याय नमः सूर्यमा० स्था० इति सूर्यम् ॥ ॐ अग्निंदूतं० । अग्नये० इत्यग्निम् ॥ ॐ नमस्ते० । रुद्राय० इति रुद्रम् आवाह्य प्रतिष्ठाप्य ॥ "सूर्याद्यावाहितदेवेभ्यो नमः" इति मंत्रेण यथाशक्त्या संपूज्य ॥ ततः विप्राः कलशं स्पृष्ट्वा विभ्राट्०, अग्निसूक्तम्०, रुद्रसूक्तं तथा च त्र्यम्बकमंत्रं जपेयुः ॥ ततः ऐशाने ग्रहाणां स्थापनादि

द्वितीयोऽसि । त्वं प्रत्यक्षं ब्रह्मासि । त्वं ज्ञानमयो विज्ञानमयोऽसि सर्वं जगदिदं त्वत्तो जायते । सर्वं जगदिदं त्वत्तस्तिष्ठति । सर्वं जगदिदं त्वयि लयमेष्यति । सर्वं जगदिदं त्वयि प्रत्येति । त्वं भूमिरापोऽनलोऽनिलो नभः । त्वं चत्वारि वाक्पदानि ॥ त्वं गुणत्रयातीतः । त्वमवस्थात्रयातीतः । त्वं देहत्रयातीतः । त्वं कालत्रयातीतः । त्वं मूलाधारस्थितोऽसि नित्यम् । त्वं शक्तित्रयात्मकः । त्वां योगिनो ध्यायन्ति नित्यम् । त्वं ब्रह्मा त्वं विष्णुस्त्वं रुद्रस्त्वमिन्द्रस्त्वमग्निस्त्वं वायुस्त्वं सूर्यस्त्वं चन्द्रमास्त्वं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम् ॥ गणादीन्पूर्वमुच्चार्य वर्णादींस्तदनन्तरम् । अनुस्वारः परतरः । अर्धेन्दुलसितम् । तारेण रुद्धम् । एतत्तव मनुस्वरूपम् । गकारः पूर्वरूपम् । अकारो मध्यमरूपम् । अनुस्वारश्चान्त्यरूपम् । बिन्दुरुत्तररूपम् । नादः सन्धानम् । संहिता सन्धिः । सैषा गणेशविद्या । गणक ऋषिः । निचृद्गायत्रीछन्दः । गणपतिर्देवता ॥ ॐ गं गणपतये नमः । एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि । तन्नो दन्ती प्रचोदयात् ॥ एकदन्तं चतुर्हस्तं पाशमङ्कुशधारिणम् । रदं च वरदं हस्तैर्बिभ्राणं मूषकध्वजम् ॥ रक्तं लम्बोदरं शूर्पकर्णकं रक्तवाससम् । रक्तगन्धानुलिप्ताङ्गं रक्तपुष्पैः सुपूजितम् ॥ भक्तानुकम्पिनं देवं जगत्कारणमच्युतम् । आविर्भूतं च सृष्ट्यादौ प्रकृतेः पुरुषात्परम् ॥ एवं ध्यायति यो नित्यं स योगी योगिनां वरः ॥ नमो व्रातपतये नमो गणपतये नमः प्रमथपतये नमस्तेऽस्तु लम्बोदरायैकदन्ताय विघ्ननाशिने शिवसुताय श्रीवरदमूर्तये नमः ॥ एतदथर्वशीर्षं योऽधीते । स ब्रह्मभूयाय कल्पते । स सर्वविघ्नैर्न बाध्यते । स सर्वतः सुखमेधते । स पञ्चमहापापात्प्रमुच्यते ॥ सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति । प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं

॥ १६२ ॥ कृष्णचतुर्दशीशान्तिः॥—चतुर्भिः कलशैः सह मध्यकुंभे रुद्रस्थापनं होमे च अश्वत्थप्लक्षपलाशखदिरसमिच्चर्वाज्यमापतिलसर्पैश्च प्रतिद्रव्यं १०८।२८ वा त्र्यम्बकं० इति मन्त्रेण "रुद्राय स्वाहा" इति वा होमः इति विशेषः। अन्यत् पूर्ववत्॥ इति. कृ. च. शांतिः॥

॥१६३॥ दर्शशांतिः॥—कुंभं संस्थाप्य तत्र न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थचूतानिंबवृक्षाणां मूलत्वक्पल्लवांश्च निक्षिप्य वरुणं पूजयेत्। तस्य पश्चिमे हरिद्राक्तताम्रकृष्णतंडुलैः भद्रमंडलं विरच्य तत्र कलशोपरि मध्ये पितॄन् दक्षिणे चन्द्रं वामे च सूर्यं सुवर्णरजतताम्रमयान् प्रतिष्ठाप्य पूजयेत्॥ होमे समिच्चर्वाज्याहुतिभिः पितृभ्यः १०८ चन्द्राय २८ सूर्याय च २८ आहुतिभिर्जुहुयात्॥ इति विशेषः। अन्यत् पूर्ववत्॥

॥ इति दर्शशांतिः॥

॥ इति विविधशांतिप्रयोगात्मकः सप्तमो विभागः॥

॥ अथ स्तोत्रादिसंग्रहात्मकः अष्टमो विभागः॥

॥ १६४ ॥ अथ गणपत्यथर्वशीर्षम्॥

ॐ नमस्ते गणपतये। त्वमेव प्रत्यक्षं तत्त्वमसि। त्वमेव केवलं कर्तासि। त्वमेव केवलं धर्तासि। त्वमेव केवलं हर्तासि। त्वमेव सर्वं खल्विदं ब्रह्मासि। त्वं साक्षादात्मासि नित्यम्। ऋतं वच्मि। सत्यं वच्मि। अव त्वं माम्। अव वक्तारम्। अव श्रोतारम्। अव दातारम्। अव धातारम्। अवानूचानमव शिष्यम्। अव पश्चात्तात्। अव पुरस्तात्। अवोत्तरात्तात्। अव दक्षिणात्तात्। अव चोर्ध्वात्तात्। अवाधरात्तात्। सर्वतो मां पाहि पाहि समन्तात्। त्वं वाङ्मयस्त्वं चिन्मयः। त्वमानन्दमयस्त्वं ब्रह्ममयः। त्वं सच्चिदानन्दा-

द्वितीयोऽसि । त्वं प्रत्यक्षं ब्रह्मासि । त्वं ज्ञानमयो विज्ञानमयोऽसि सर्वं जगदिदं त्वत्तो जायते । सर्वं जगदिदं त्वत्तस्तिष्ठति । सर्वं जगदिदं त्वयि लयमेष्यति । सर्वं जगदिदं त्वयि प्रत्येति । त्वं भूमिरापोऽनलोऽनिलो नभः । त्वं चत्वारि वाक्पदानि ॥ त्वं गुणत्रयातीतः । त्वमवस्थात्रयातीतः । त्वं देहत्रयातीतः । त्वं कालत्रयातीतः । त्वं मूलाधारस्थितोऽसि नित्यम् । त्वं शक्तित्रयात्मकः । त्वां योगिनो ध्यायन्ति नित्यम् । त्वं ब्रह्मा त्वं विष्णुस्त्वं रुद्रस्त्वमिन्द्रस्त्वमग्निस्त्वं वायुस्त्वं सूर्यस्त्वं चन्द्रमास्त्वं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम् ॥ गणादीन्पूर्वमुच्चार्य वर्णादींस्तदनन्तरम् । अनुस्वारः परतरः । अर्धेन्दुलसितम् । तारेण रुद्धम् । एतत्तव मनुस्वरूपम् । गकारः पूर्वरूपम् । अकारो मध्यमरूपम् । अनुस्वारश्चान्त्यरूपम् । बिन्दुरुत्तररूपम् । नादः सन्धानम् । संहिता सन्धिः । सैषा गणेशविद्या । गणक ऋषिः । निचृद्गायत्रीछन्दः । गणपतिर्देवता ॥ ॐ गं गणपतये नमः । एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि । तन्नो दन्ती प्रचोदयात् ॥ एकदन्तं चतुर्हस्तं पाशमङ्कुशधारिणम् । रदं च वरदं हस्तैर्बिभ्राणं मूषकध्वजम् ॥ रक्तं लम्बोदरं शूर्पकर्णकं रक्तवाससम् । रक्तगन्धानुलिप्ताङ्गं रक्तपुष्पैः सुपूजितम् ॥ भक्तानुकम्पिनं देवं जगत्कारणमच्युतम् । आविर्भूतं च

नाशयति । सायम्प्रातः प्रयुञ्जानोऽपापो भवति । सर्वत्राधीयानोऽपविघ्नो भवति । धर्ममर्थं कामं मोक्षं च विन्दति ॥ इदमथर्वशीर्षमशिष्याय न देयम् । यो यदि मोहाद्दास्यति । स पापीयान्भवति ॥ सहस्रावर्तनाद्यं यं काममधीते । तं तमनेन साधयेत् ॥ अनेन गणपतिमभिषिञ्चति । स वाग्मी भवति ॥ चतुर्थ्यामनश्नञ्जपति । स विद्यावान्भवति ॥ इत्यथर्वणवाक्यम् ॥ ब्रह्माद्याचरणं विद्यान्न बिभेति कदाचनेति ॥ यो दूर्वाङ्कुरैर्यजति । स वैश्रवणोपमो भवति ॥ यो लाजैर्यजति । स यशोवान् भवति । स मेधावान् भवति ॥ यो मोदकसहस्रेण यजति । स वाञ्छितफलमवाप्नोति ॥ यः साज्यसमिद्भिर्यजति । स सर्वं लभते स सर्वं लभते ॥ अष्टौ ब्राह्मणान्सम्यग्ग्राहयित्वा सूर्यवर्चस्वी भवति ॥ सूर्यग्रहे महानद्यां प्रतिमासन्निधौ वा जप्त्वा सिद्धमन्त्रो भवति ॥ महाविघ्नात्प्रमुच्यते । महादोषात्प्रमुच्यते । महाप्रत्यवायात्प्रमुच्यते ॥ स सर्वविद्भवति स सर्वविद्भवति । य एवं वेद ॥ इत्युपनिषत् ॥

॥ इति गणपत्यथर्वशीर्षम् ॥

॥ १६५ ॥ अथ श्रीसूक्तम् ॥

ॐ हिरण्यवर्णामितिपञ्चदशर्चस्य सूक्तस्य आनन्दकर्दमचिक्लीतेन्दिरासुता ऋषयः श्रीर्देवता आद्यास्तिस्रोऽनुष्टुभः चतुर्थी बृहती पञ्चमीषष्ठ्यौ त्रिष्टुभौ ततोऽष्टावनुष्टुभः अन्त्या प्रस्तारपङ्क्तिः जपे विनियोगः॥ हरिः ॐ हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम् । चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो मऽआवह ॥१॥ तां मऽआवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् । यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ॥ २ ॥ अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रबोधिनीम् । श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम् ॥३॥ कांसोस्मितां हिरण्यप्राका-

हुस्पतिर्वरुणंधनमश्विनौ ॥वैनतेयसोमंपिबसोमंपिबतुवृत्रहा । सोमंधनस्यसोमिनोमह्यंददातुसोमिनः ॥ नक्रोधोनचमात्सर्यंनलोभोनाशुभामतिः । भवंतिकृतपुण्यानांभक्तानांश्रीसूक्तंजपेत् ॥ सरसिजनिलये सरोजहस्ते धवलतरांशुगन्धमाल्यशोभे ॥ भगवति हरिवल्लभे मनोज्ञेत्रिभुवनभूतिकरिप्रसीदमह्यम् ॥ विष्णुपत्नींक्षमांदेवीं माधवींमाधवप्रियाम् ॥ लक्ष्मींप्रियसखींदेवींनमाम्यच्युतवल्लभाम् ॥ महालक्ष्मीचविद्महेविष्णुपत्नीचधीमहि ॥ तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात् ॥ श्रीवर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधात्पवमानंमहीयते ॥ धान्यंधनंपशुं बहुपुत्रलाभंशतसंवत्सरंदीर्घमायुः ॥ इति श्रीसूक्तं समाप्तम् ॥

॥ १ ॥ अथ शिवमहिम्नःस्तोत्रम् ॥

श्रीगणेशायनमः॥ पुष्पदन्त उवाच ॥ महिम्नः पारं ते परमविदुषो यद्यसदृशी स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः ॥ अथावाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधि गृणन्ममाप्येष स्तोत्रे हर निरपवादः परिकरः ॥१॥ अतीतः पन्थानं तव च महिमा वाङ्मनसयोरतद्व्यावृत्त्या यं चकितमभिधत्ते श्रुतिरपि ॥ स कस्य स्तोतव्यः कतिविधगुणः कस्य विषयः पदे त्वर्वाचीने पतति न मनः कस्य न वचः ॥२॥ मधुस्फीता वाचः परमममृतं निर्मितवतस्तव ब्रह्मन्किं वागपि सुरगुरोर्विस्मयपदम् ॥ मम त्वेतां वाणीं गुणकथनपुण्येन भवतः पुनामीत्यर्थेऽस्मिन्पुरमथन बुद्धिर्व्यवसिता ३ ॥ तवैश्वर्यं यत्तज्जगदुदयरक्षाप्रलयकृत्त्रयीवस्तु व्यस्तं तिसृषु गुणभिन्नासु तनुषु ॥ अभव्यानामस्मिन्वरद रमणीयामरमणीं विहन्तुं व्याक्रोशीं विदधत इहैके जडधियः ॥ ४ ॥ किमीहः किंकायः स खलु किमुपायस्त्रिभुवनं किमाधारो धाता सृजति किमु-

पादान इति च ॥ अतर्क्यैश्वर्ये त्वय्यनवसरदुःस्थो हतधियः कुतर्कोऽयं काँश्चिन्मुखरयति मोहाय जगतः ॥ ५ ॥ अजन्मानो लोकाः किमवयवन्तोऽपि जगतामधिष्ठातारं किं भवविधिरनादृत्य भवति । अनीशो वा कुर्याद्भुवनजनने कः परिकरो यतो मन्दास्त्वां प्रत्यमरवर संशेरत इमे ॥६॥ त्रयी सांख्यं योगः पशुपतिमतं वैष्णवमिति प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदः पथ्यमिति च ॥ रुचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिलनानापथजुषां नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव ॥ ७ ॥ महोक्षः खट्वाङ्गं परशुरजिनं भस्म फणिनः कपालं चेतीयत्तव वरद तन्त्रोपकरणम् ॥ सुरास्तां तामृद्धिं दधति तु भवद्भ्रूप्रणिहितां न हि स्वात्मारामं विषयमृगतृष्णा भ्रमयति ॥ ८ ॥ ध्रुवं कश्चित्सर्वं सकलमपरस्त्वध्रुवमिदं परो ध्रौव्याध्रौव्ये जगति गदति व्यस्तविषये ॥ समस्तेऽप्येतस्मिन्पुरमथन तैर्विस्मित इव स्तुवन् जिह्रेमि त्वां न खलु ननु धृष्टा मुखरता ॥९॥ तवैश्वर्यं यत्नाद्यदुपरि विरिञ्चिर्हरिरधः परिच्छेत्तुं यातावनलमनलस्कन्धवपुषः ॥ ततो भक्तिश्रद्धाभरगुरुगृणद्भ्यां गिरिश यत्स्वयं तस्थे ताभ्यां तव किमनुवृत्तिर्न फलति ॥ १० ॥ अयत्नादापाद्य त्रिभुवनमवैरव्यतिकरं दशास्यो यद्बाहूनभृत रणकण्डूपरवशान् ॥ शिरःपद्मश्रेणीरचितचरणाम्भोरुहबलेः स्थिरायास्त्वद्भक्तेस्त्रिपुरहर विस्फूर्जितमिदम् ॥ ११ ॥ अमुष्य त्वत्सेवासमधिगतसारं भुजवनं बलात्कैलासेऽपि त्वदधिवसतौ विक्रमयतः ॥ अलभ्या पातालेऽप्यलसचलिताङ्गुष्ठशिरसि प्रतिष्ठा त्वय्यासीद् ध्रुवमुपचितो मुह्यति खलः ॥ १२ ॥ यदृद्धिं सुत्राम्णो वरद परमोच्चैरपि सतीमधश्चक्रे बाणः परिजनविधेयत्रिभुवनः ॥ न तच्चित्रं तस्मिन्वरिवसितरि त्वच्चरणयोर्न कस्या उन्नत्यै भवति शिरसस्त्वय्यवनतिः ॥ १३ ॥ अका-

ण्डब्रह्माण्डक्षयचकितदेवासुरकृपाविधेयस्याऽऽसीद्यस्त्रिनयन विषं संहृतवतः ॥ स कल्माषः कण्ठे तव न कुरुते न श्रियमहो विकारोऽपि श्लाघ्यो भुवनभयभङ्गव्यसनिनः ॥ १४ ॥ असिद्धार्था नैव क्वचिदपि सदेवासुरनरे निवर्तन्ते नित्यं जगति जयिनो यस्य विशिखाः ॥ स पश्यन्नीश त्वामितरसुरसाधारणमभूत् स्मरः स्मर्तव्यात्मा न हि वशिषु पथ्यः परिभवः ॥ १५ ॥ मही पादाघाताद्व्रजति सहसा संशयपदं पदं विष्णोर्भ्राम्यद्भुजपरिघरुग्णग्रहगणम् ॥ मुहुर्द्यौर्दौस्थ्यं यात्यनिभृतजटाताडिततटा जगद्रक्षायै त्वं नटसि ननु वामैव विभुता ॥ १६ ॥ वियद्व्यापी तारागणगुणितफेनोद्गमरुचिः प्रवाहो वारां यः पृषतलघुदृष्टः शिरसि ते ॥ जगद्द्वीपाकारं जलधिवलयं तेन कृतमित्यनेनैवोन्नेयं धृतमहिम दिव्यं तव वपुः ॥ १७ ॥ रथः क्षोणी यन्ता शतधृतिरगेन्द्रो धनुरथो रथाङ्गे चन्द्रार्कौ रथचरणपाणिः शर इति ॥ दिधक्षोस्ते कोऽयं त्रिपुरतृणमाडम्बरविधिर्विधेयैः क्रीडन्त्यो न खलु परतन्त्राः प्रभुधियः ॥ १८ ॥ हरिस्ते साहस्रं कमलबलिमाधाय पदयोर्यदेकोने तस्मिन्निजमुदहरन्नेत्रकमलम् ॥ गतो भक्त्युद्रेकः परिणतिमसौ चक्रवपुषा त्रयाणां रक्षायै त्रिपुरहर जागर्ति जगताम् ॥१९॥ क्रतौ सुप्ते जाग्रत्त्वमसि फलयोगे क्रतुमतां क्व कर्मप्रध्वस्तं फलति पुरुषाराधनमृते॥ अतस्त्वां सम्प्रेक्ष्य क्रतुषु फलदानप्रतिभुवं श्रुतौ श्रद्धां बद्ध्वा दृढपरिकरः कर्मसु जनः ॥ २० ॥ क्रियादक्षो दक्षः क्रतुपतिरधीशस्तनुभृतामृषीणामार्त्विज्यं शरणद सदस्याः सुरगणाः ॥ क्रतुभ्रंशस्त्वत्तः क्रतुफलविधानव्यसनिनो ध्रुवं कर्तुः श्रद्धाविधुरमभिचाराय हि मखाः ॥ २१ ॥ प्रजानाथं नाथ प्रसभमभिकं स्वां दुहितरं गतं रोहिद्भूतां रिरमयिषुमृष्यस्य वपुषा ॥ धनुष्पाणेर्यातं दिवमपि

सपत्राकृतममुं त्रसन्तं तेऽद्यापि त्यजति न मृगव्याधरभसः ॥ २२ ॥ स्वलावण्याशंसा धृतधनुषमह्नाय तृणवत्पुरः प्लुष्टं दृष्ट्वा पुरमथन पुष्पायुधमपि ॥ यदि स्त्रैणं देवी यमनिरत देहार्धघटनादवैति त्वामद्धा बत वरद मुग्धा युवतयः ॥ २३ ॥ श्मशानेष्वाक्रीडा स्मरहर पिशाचाः सहचराश्चिताभस्मालेपः स्रगपि नृकरोटीपरिकरः ॥ अमङ्गल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलं तथापि स्मर्तॄणां वरद परमं मङ्गलमसि ॥ २४ ॥ मनः प्रत्यक्चित्ते सविधमवधायात्तमरुतः प्रहृष्यद्रोमाणः प्रमदसलिलोत्सङ्गितदृशः ॥ यदालोक्याह्लादं ह्रद इव निमज्ज्यामृतमये दधत्यन्तस्तत्त्वं किमपि यमिनस्तत्किल भवान् ॥ २५ ॥ त्वमर्कस्त्वं सोमस्त्वमसि पवनस्त्वं हुतवहस्त्वमापस्त्वं व्योम त्वमु धरणिरात्मा त्वमिति च ॥ परिच्छिन्नामेवं त्वयि परिणता बिभ्रतु गिरं नविद्मस्तत्तत्त्वं वयमिह तु यत्त्वं न भवसि ॥२६॥ त्रयीं तिस्रो वृत्तीस्त्रिभुवनमथो त्रीनपि सुरानकाराद्यैर्वर्णैस्त्रिभिरभिदधत्तीर्णविकृति ॥ तुरीयं ते धाम ध्वनिभिरवरुन्धानमणुभिः समस्तव्यस्तं त्वां शरणद गृणात्योमिति पदम् ॥ २७ ॥ भवः शर्वो रुद्रः पशुपतिरथोग्रः सहमहांस्तथाभीमेशानाविति यदभिधानाष्टकमिदम् ॥ अमुष्मिन्प्रत्येकं प्रविचरति देवश्रुतिरपि प्रियायास्मै धाम्ने प्रविहितनमस्योऽस्मि भवते ॥२८॥ नमो नेदिष्ठाय प्रियदवदविष्ठाय च नमो नमः क्षोदिष्ठाय स्मरहर महिष्ठाय च नमः ॥ नमो वर्षिष्ठाय त्रिनयन यविष्ठाय च नमो नमः सर्वस्मै ते तदिदमिति शर्वाय च नमः ॥ २९ ॥ बहलरजसे विश्वोत्पत्तौ भवाय नमो नमः प्रबलतमसे तत्संहारे हराय नमो नमः ॥ जनसुखकृते सत्त्वोद्रिक्तौ मृडाय नमो नमः प्रमहसि पदे निस्त्रैगुण्ये शिवाय नमो नमः ॥ ३० ॥ कृशपरिणति चेतः क्लेशवश्यं क्व चेदं क्व च तव

गुणसीमोल्लंघिनी शश्वदृद्धिः । इतिचकितममन्दीकृत्य मां भक्तिराधाद्वरदचरणयोस्ते वाक्यपुष्पोपहारम् ॥ ३१ ॥ असितगिरिसमं स्यात्कज्जलं सिन्धुपात्रे सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वी । लिखति यदि गृहित्वा शारदा सर्वकालं तदपि तव गुणानामीश पारं न याति ॥ ३२ ॥ असुरसुरमुनीन्द्रैरर्चितस्येन्दुमौलेर्ग्रथितगुणमहिम्नो निर्गुणस्येश्वरस्य ॥ सकलगणवरिष्ठः पुष्पदन्ताभिधानो रुचिरमलघुवृत्तैः स्तोत्रमेतच्चकार ॥ ३३ ॥ अहरहरनवद्यं धूर्जटेः स्तोत्रमेतत्पठति परमभक्त्या शुद्धचित्तः पुमान्यः ॥ स भवति शिवलोके रुद्रतुल्यस्तथात्र प्रचुरतरधनायुः पुत्रवान्कीर्तिमांश्च ॥ ३४ ॥ महेशान्नापरो देवो महिम्नो नापरा स्तुतिः ॥ अघोरान्नापरो मन्त्रो नास्ति तत्त्वं गुरोः परम् ॥ ३५ ॥ दीक्षा दानं तपस्तीर्थं ज्ञानं यागादिकाः क्रियाः ॥ महिम्नःस्तवपाठस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥ ३६ ॥ कुसुमदशननामा सर्वगन्धर्वराजः शिशुशशधरमौलेर्देवदेवस्य दासः ॥ सगुरुनिजमहिम्नो भ्रष्ट एवास्य रोषात्स्तवनमिदमकार्षीद्दिव्यदिव्यं महिम्नः ॥ ३७ ॥ सुरवरमुनिपूज्यं स्वर्गमोक्षैकहेतुं पठति यदि मनुष्यः प्राञ्जलिर्नान्यचेताः ॥ व्रजति शिवसमीपं किन्नरैः स्तूयमानः स्तवनमिदममोघं पुष्पदन्तप्रणीतम् ॥३८॥ श्रीपुष्पदन्तमुखपङ्कजनिर्गतेन स्तोत्रेण किल्बिषहरेण हरप्रियेण ॥ कण्ठस्थितेन पठितेन समाहितेन सुप्रीणितो भवति भूतपतिर्महेशः ॥ ३९ ॥ इत्येषा वाङ्मयी पूजा श्रीमच्छङ्करपादयोः ॥ अर्पिता तेन देवेशः प्रीयतां मे सदाशिवः ॥ ४० ॥

। इति पुष्पदन्तगन्धर्वराजविरचितं श्रीशिवमहिम्नःस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

॥ १६७ ॥ श्रीमद्भगवद्गीतायाः पञ्चदशोऽध्यायः ।

श्रीभगवानुवाच ॥ ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम् । छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित् ॥१॥ अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखा गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः । अधश्च मूलान्यनुसन्ततानि कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके॥२॥ न रूपमस्येह तथोपलभ्यते नान्तो न चादिर्न च सम्प्रतिष्ठा। अश्वत्थमेनं सुविरूढमूलमसङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्वा ॥३॥ ततः पदं तत्परिमार्गितव्यं यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः । तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी ॥४॥ निर्मानमोहा जितसङ्गदोषा अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः । द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसंज्ञैर्गच्छन्त्यमूढाः पदमव्ययं तत् ॥५॥ न तद्भासयते सूर्यो न शशाङ्को न पावकः । यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम ॥६॥ ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः।मनःषष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति॥७॥ शरीरं यदवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वरः । गृहीत्वैतानि संयाति वायुर्गन्धानिवाशयात्।८।श्रोत्रं चक्षुः स्पर्शनं च रसनं घ्राणमेव च । अधिष्ठाय मनश्चायं विषयानुपसेवते।९। उत्क्रामन्तं स्थितं वापि भुञ्जानं वा गुणान्वितम् । विमूढा नानुपश्यन्ति पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः।१०।यतन्तो योगिनश्चैनं पश्यन्त्यात्मन्यवस्थितम् । यतन्तोऽप्यकृतात्मानो नैनं पश्यन्त्यचेतसः ॥११॥ यदादित्यगतं तेजो जगद्भासयतेऽखिलम् । यच्चन्द्रमसि यच्चाग्नौ तत्तेजो विद्धि मामकम् ॥१२॥ गामाविश्य च भूतानि धारयाम्यहमोजसा । पुष्णामि चौषधीः सर्वाः सोमो भूत्वा रसात्मकः ।१३। अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः । प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम् । १४ । सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टो मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च । वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहम्।१५।द्वाविमौ पुरुषौ

लोके क्षरश्चाक्षर एव च। क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते।१६। उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः। यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः।१७। यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः। अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः।१८। यो मामेवमसम्मूढो जानाति पुरुषोत्तमम्। स सर्वविद्भजति मां सर्वभावेन भारत।१९। इति गुह्यतमं शास्त्रमिदमुक्तं मयाऽनघ। एतद्बुद्ध्वा बुद्धिमान्स्यात्कृतकृत्यश्च भारत ॥२०॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे "श्रीपुरुषोत्तमयोगो" नाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥

॥ १६८ ॥ अथ पुराणोक्तपुरुषसूक्तम् ॥

ह्रीं जितं ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन। नमस्तेऽस्तु हृषीकेश महापुरुषपूर्वज ॥ १ ॥ नमो हिरण्यगर्भाय प्रधानाव्यक्तरूपिणे। ह्रीं नमो वासुदेवाय शुद्धज्ञानस्वरूपिणे ॥ २ ॥ देवानां दानवानां च सामान्यमसि दैवतम्। सर्वदा चरणद्वंद्वं व्रजामि शरणं तव ॥ ३ ॥ एकस्त्वमसि लोकस्य स्रष्टा संहारकस्तथा। अध्यक्षश्चानुमन्ता च गुणमायासमावृतः ॥ ४ ॥ संसारसागरं घोरमनन्तं क्लेशभाजनम्। त्वामेव शरणं प्राप्य निस्तरन्ति मनीषिणः ॥ ५ ॥ न ते रूपं न चाकारो नायुधानि न चास्पदम्। तथापि पुरुषाकारो भक्तानां त्वं प्रकाशसे ॥६॥ नैव किञ्चित्परोक्षं ते प्रत्यक्षोऽसि न कस्यचित्। नैव किञ्चिदसिद्धं ते न च सिद्धोऽसि कस्यचित् ॥ ७ ॥ कार्याणां कारणं पूर्वं वचसां वाच्यमुत्तमम्। योगिनां परमा सिद्धिः परमं ते पदं विदुः ॥ ८ ॥

---

१ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय इति ब्राह्मणानाम् ऋग्विधानोक्तः पाठः ॥ २ सृष्टिसंहारकारकः इत्यपि पाठः ३ प्रत्यक्षोऽसि न कस्यचित् इत्यपि पाठः। ४ परं ते परमं विदुः इत्यपि केचन पठन्ति।

अहं भीतोऽस्मि देवेश संसारेऽस्मिन्भयावहे । त्राहि मां पुण्डरीकाक्ष न जाने शरणं परम् ॥९॥ कालेष्वपि च सर्वेषु दिक्षु सर्वासु चाच्युत । शरीरे च गृहे चापि वर्तते मे महद्भयम् ॥ १० ॥ त्वत्पादकमलादन्यन्न मे जन्मान्तरेष्वपि । निमित्तं कुशलस्यास्ति येन गच्छामि सद्गतिम् ॥११॥ विज्ञानं यदिदं प्राप्तं यदिदं ज्ञानमर्जितम् । जन्मान्तरेऽपि मे देव मा भूदस्य परिक्षयः ॥ १२ ॥ दुर्गतावपि जातायां त्वं गतिस्त्वं मतिर्मम । यदि नाथं च विन्देयं तावताऽस्मि कृती सदा ॥ १३ ॥ अकामकलुषं चित्तं मम ते पादयोः स्थितम् । कामये विष्णुपादौ तु सर्वजन्मसु केवलम् ॥ १४ ॥ पुरुषस्य हरेः सूक्तं स्वर्ग्यं धन्यं यशस्करम् । आत्मज्ञानमिदं पुण्यं योगज्ञानमिदं परम् ॥ १५ ॥ इत्येवमनया स्तुत्या स्तुत्वा देवं दिनेदिने । किंकरोऽस्मीति चात्मानं देवायैव निवेदयत् ॥१६॥ फलाहारो जपेन्मासं पश्यन्नात्मानमात्मनि । फलानि भुक्त्वोपवसेन्मासमद्भिश्च वर्तयेत् ॥ १७ ॥ अरण्ये निवसेन्नित्यं जपन्निदमृषिः सदा । अग्निभिस्त्रिषवणं काले यजेदप्सु समाहितः ॥ १८ ॥ आदित्यमुपतिष्ठेत सूक्तेनानेन नित्यशः । आज्याहुतेनैव हुत्वा चिन्तयेद्दृषिभिस्तथा ॥१९॥ ऊर्ध्वं मासात्फलाहारस्त्रिभिर्वर्षैर्जपेदिदम् । तद्भक्तस्तन्मना युक्तो दशवर्षाण्यनन्यभाक् ॥ २० ॥ साक्षात्पश्यति तं देवं नारायणमनामयम् । प्राप्यमत्यन्तयत्नेन स्रष्टारं जगतोऽव्ययम् ॥२१॥ अथवा साधमानोऽपि भक्तिं न परिहापयेत् । भक्तानुकम्पी भगवाञ्जायते पुरुषोत्तमः ॥२२॥ येन येन च कामेन जपेत प्रयतः सदा । स स कामः समृद्धः स्याच्छ्रद्धानस्य कुर्वतः ॥२३॥ होमं वाऽप्यथवा जाप्यमुपहारमनुत्तमम् । कुर्वीत येन कामेन तत्सिद्धिमवधारयेत् ॥ २४ ॥ इति पुराणोक्तपुरुषसूक्तम् ॥

॥ १६९ ॥ अथ चण्डीकवचम् ॥

ॐनमश्चण्डिकायै । मार्कण्डेय उवाच । ॐयद्गुह्यं परमं लोके सर्वरक्षाकरं नृणाम् । यन्न कस्य चिदाख्यातं तन्मे ब्रूहि पितामह ॥१॥ ब्रह्मोवाच । अस्ति गुह्यतमं विप्र सर्वभूतोपकारकम् । देव्यास्तु कवचं पुण्यं तच्छृणुष्व महामुने ॥२॥ प्रथमं शैलपुत्रीति द्वितीयं ब्रह्मचारिणी। तृतीयं चन्द्रघण्टेति कूष्माण्डेति चतुर्थकम् ॥३॥ पञ्चमं स्कन्दमातेति षष्ठं कात्यायनीति च । सप्तमं कालरात्रिश्च महागौरीति चाष्टमम् ॥४॥ नवमं सिद्धिदा प्रोक्ता नवदुर्गाः प्रकीर्तिताः । उक्तान्येतानि नामानि ब्रह्मणैव महात्मना ॥५॥ अग्निना दह्यमानस्तु शत्रुमध्ये गतो रणे । विषमे दुर्गमे चैव भयार्ताः शरणं गताः ॥ ६ ॥ न तेषां जायते किञ्चिदशुभं रणसङ्कटे । नापदं तस्य पश्यामि शोकदुःखभयं नहि ॥ ७ ॥ यैस्तु भक्त्या स्मृता नूनं तेषामृद्धिः प्रजायते । प्रेतसंस्था तु चामुण्डा वाराही महिषासना ॥ ८ ॥ ऐन्द्री गजसमारूढा वैष्णवी गरुडासना । माहेश्वरी वृषारूढा कौमारी शिखिवाहना ॥९॥ लक्ष्मीः पद्मासना देवी पद्महस्ता हरिप्रिया । श्वेतरूपधरा देवी ईश्वरी वृषवाहना ॥१०॥ ब्राह्मी हंससमारूढा सर्वाभरणभूषिता । इत्येता मातरः सर्वाः सर्वयोगसमन्विताः ॥ ११ ॥ नानाभरणशोभाढ्या नानारत्नोपशोभिताः ॥१२॥ दृश्यन्ते रथमारूढा देव्यः क्रोधसमाकुलाः। शङ्खं चक्रं गदां शक्तिं हलं च मुसलायुधम्॥१३॥ खेटकं तोमरं चैव परशुं पाशमेव च । कुन्तायुधं त्रिशूलं च शार्ङ्गमायुधमुत्तमम् ॥ १४ ॥ दैत्यानां देहनाशाय भक्तानामभयाय च । धारयन्त्यायुधानीत्थं देवानां च हिताय वै ॥ १५ ॥ नमस्तेऽस्तु महारौद्रे महाघोरपराक्रमे । महाबले महोत्साहे महाभयविनाशिनि ॥ १६ ॥ त्राहि मां देवि दुष्प्रेक्ष्ये शत्रूणां भयवर्द्धिनि ॥ प्राच्यां रक्ष-

तु मामैन्द्री आग्नेय्यामग्निदेवता॥१७॥ दक्षिणेऽवतु वाराही नैर्ऋत्यां खड्ग-धारिणी। प्रतीच्यां वारुणी रक्षेद्वायव्यां मृगवाहिनी। उदीच्यां रक्ष कौबेरी ईशान्यां शूलधारिणी॥१८॥ ऊर्ध्वं ब्रह्माणी मे रक्षेदधस्ताद्वैष्णवी तथा। एवं दश दिशो रक्षेच्चामुण्डा शववाहना॥१९॥ जया मे चाग्रतः पातु विजया पातु पृष्ठतः। अजिता वामपार्श्वे तु दक्षिणे चापराजिता॥२०॥ शिखां मे द्योतिनी रक्षेदुमा मूर्ध्नि व्यवस्थिता। मालाधरी ललाटे च भ्रुवौ रक्षेद्यशस्विनी॥२१॥ त्रिनेत्रा च भ्रुवोर्मध्ये यमघण्टा च नासिके। शङ्खिनी चक्षुषोर्मध्ये श्रोत्रयोर्द्वारवासिनी॥२२॥ कपोलौ कालिका रक्षेत्कर्णमूले तु शाङ्करी। नासिकायां सुगन्धा च उत्तरोष्ठे च चर्चिका॥२३॥ अधरे चामृतकला जिह्वायां च सरस्वती। दन्तान् रक्षतु कौमारी कण्ठमध्ये तु चण्डिका॥२४॥ घण्टिकां चित्रघण्टा च महामाया च तालुके। कामाक्षी चिबुकं रक्षेद्वाचं मे सर्वमङ्गला॥२५॥ ग्रीवायां भद्रकाली च पृष्ठवंशे धनुर्धरी। नीलग्रीवा बहिः कण्ठे नलिकां नलकूबरी॥२६॥ खड्गधारिण्युभौ स्कन्धौ बाहू मे वज्रधारिणी। हस्तयोर्दण्डिनी रक्षेदम्बिका चाङ्गुलीस्तथा॥२७॥ नखाञ्छूलेश्वरी रक्षेत्कुक्षौ रक्षेन्नलेश्वरी। स्तनौ रक्षेन्महालक्ष्मीर्मनःशोकविनाशिनी॥२८॥ हृदये ललिता देवी उदरे शूलधारिणी। नाभौ च कामिनी रक्षेद्गुह्यं गुह्येश्वरी तथा॥२९॥ कट्यां भगवती रक्षेज्जानुनी विन्ध्यवासिनी। भूतनाथा च मेढ्रं मे ऊरू महिषवाहिनी॥३०॥ जङ्घे महाबला प्रोक्ता सर्वकामप्रदायिनी। गुल्फयोर्नारसिंही च पादौ चामिततेजसी॥३१॥ पादाङ्गुलीः श्रीर्मे रक्षेत्पादाधस्तलवासिनी। नखान्दंष्ट्राकराली च केशांश्चैवोर्ध्वकेशिनी॥३२॥ रोमकूपेषु कौबेरी त्वचं वागीश्वरी तथा। रक्तमज्जावसामांसान्यस्थिमेदांसि पार्वती॥३३॥ अन्त्राणि कालरात्रिश्च पित्तं च मुकुटेश्वरी। पद्मावती

पद्मकोशे कफे चूडामणिस्तथा॥३४॥ ज्वालामुखी नखज्वाला अभेद्या सर्वसन्धिषु। शुक्रं ब्रह्माणी मे रक्षेच्छायां छत्रेश्वरी तथा॥३५॥ अहङ्कारं मनो बुद्धिं रक्ष मे धर्मचारिणी। प्राणापानौ तथा व्यानं समानोदानमेव च॥३६॥ यशः कीर्तिं च लक्ष्मीं च सदा रक्षतु वैष्णवी। गोत्रमिन्द्राणी मे रक्षेत्पशून्मे रक्ष चण्डिके॥३७॥ पुत्रान्रक्षेन्महालक्ष्मीर्भार्यां रक्षतु भैरवी। मार्गं क्षेमकरी रक्षेद्विजया सर्वतः स्थिता॥३८॥ रक्षाहीनं तु यत्स्थानं वर्जितं कवचेन तु। तत्सर्वं रक्ष मे देवि जयन्ती पापनाशिनी॥३९॥पदमेकं न गच्छेत्तु यदीच्छेच्छुभमात्मनः। कवचेनावृतो नित्यं यत्र यत्राधिगच्छति॥४०॥तत्र तत्रार्थलाभश्च विजयः सार्वकामिकः। यं यं कामयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम्॥४१॥ परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यते भूतले पुमान्। निर्भयो जायते मर्त्यः सङ्ग्रामेष्वपराजितः॥४२॥त्रैलोक्ये तु भवेत्पूज्यः कवचेनावृतः पुमान्। इदं तु देव्याः कवचं देवानामपि दुर्लभम्॥४३॥यः पठेत्प्रयतो नित्यं त्रिसन्ध्यं श्रद्धयान्वितः। दैवी कला भवेत्तस्य त्रैलोक्येष्वपराजितः॥४४॥जीवेद्वर्षशतं साग्रमपमृत्युविवर्जितः। नश्यन्ति व्याधयः सर्वे लूताविस्फोटकादयः॥४५॥ स्थावरं जङ्गमं वापि कृत्रिमं चापि यद्विषम्। अभिचाराणि सर्वाणि मन्त्रयन्त्राणि भूतले॥४६॥ भूचराः खेचराश्चैव जलजाश्चोपदेशिकाः। सहजाः कुलजा मालाः शाकिनी डाकिनी तथा॥४७॥ अन्तरिक्षचरा घोरा डाकिन्यश्च महाबलाः। ग्रहभूतपिशाचाश्च यक्षगन्धर्वराक्षसाः॥४८॥ ब्रह्मराक्षसवेतालाः कूष्माण्डा भैरवादयः। नश्यन्ति दर्शनात्तस्य कवचे हृदि संस्थिते॥४९॥ मानोन्नतिर्भवेद्राज्ञस्तेजोवृद्धिकरं परम्। यशसा वर्धते सोऽपि कीर्तिमण्डितभूतले॥५०॥ जपेत्सप्तशतीं चण्डीं कृत्वा तु कवचं पुरा। यावद्भूमण्डलं धत्ते सशैलवनकाननम्॥५१॥तावत्तिष्ठति मेदिन्यां सन्ततिः पुत्रपौत्रिकी।

देहान्ते परमं स्थानं यत्सुरैरपि दुर्लभम् ॥ ५२ ॥ प्राप्नोति पुरुषो नित्यं महामायाप्रसादतः ॥ ५३ ॥
॥ इति श्रीवाराहपुराणे हरिहरब्रह्मविरचितं देव्याः कवचं सम्पूर्णम् ॥

॥ १७० ॥ अथ तान्त्रिकं रात्रिसूक्तम् ॥

विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थितिसंहारकारिणीम् ॥ निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः ॥ १ ॥ ब्रह्मोवाच । त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारः स्वरात्मिका ॥ सुधा त्वमक्षरे नित्ये त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता ॥ २ ॥ अर्धमात्रा स्थिता नित्या याऽनुच्चार्या विशेषतः ॥ त्वमेव सन्ध्या सावित्री त्वं देवि जननी परा ॥ ३ ॥ त्वयैतद्धार्यते विश्वं त्वयैतत्सृज्यते जगत् ॥ त्वयैतत्पाल्यते देवि त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा ॥ ४ ॥ विसृष्टौ सृष्टिरूपा त्वं स्थितिरूपा च पालने ॥ तथा संहृतिरूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये ॥ ५ ॥ महाविद्या महामाया महामेधा महास्मृतिः ॥ महामोहा च भवती महादेवी महेश्वरी ॥ ६ ॥ प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुणत्रयविभाविनी ॥ कालरात्रिर्महारात्रिर्मोहरात्रिश्च दारुणा ॥ ७ ॥ त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोधलक्षणा ॥ लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिः क्षान्तिरेवच ॥८॥ खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ॥ शङ्खिनी चापिनी बाणभुशुण्डीपरिघायुधा ॥९॥ सौम्या सौम्यतरा शेषसौम्येभ्यस्त्वतिसुन्दरी ॥ परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी ॥१०॥ यच्च किंचित्क्वचिद्वस्तु सदसद्वाऽखिलात्मिके ॥ तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे मया ॥ ११ ॥ यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पात्यत्ति यो जगत् ॥ सोऽपि निद्रावशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः ॥ १२ ॥ विष्णुश्शरीरग्रहणमहमीशान एव च ॥

कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान्भवेत् ॥१३॥ सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि संस्तुता॥मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ मधुकैटभौ॥१४॥ प्रबोधं च जगत्स्वामी नीयतामच्युतो लघु ॥ बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ महासुरौ ॥ १५ ॥ इति तान्त्रिकं रात्रिसूक्तम् ॥

॥ १७१ ॥ शक्रादिकृता देवीस्तुतिः ॥

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ शक्रादयः सुरगणा निहतेऽतिवीर्ये तस्मिन्दुरात्मनि सुरारिबले च देव्या ॥ तां तुष्टुवुः प्रणतिनम्रशिरोधरांसा वाग्भिः प्रहर्षपुलकोद्गमचारुदेहाः ॥ २ ॥ देव्या यया ततमिदं जगदात्मशक्त्या निःशेषदेवगणशक्तिसमूहमूर्त्या ॥ तामम्बिकामखिलदेवमहर्षिपूज्यां भक्त्या नताः स्म विदधातु शुभानि सा नः ॥ ३ ॥ यस्याः प्रभावमतुलं भगवाननन्तो ब्रह्मा हरश्च नहि वक्तुमलं बलं च ॥ सा चण्डिकाऽखिलजगत्परिपालनाय नाशाय चाशुभभयस्य मतिं करोतु ॥ ४ ॥ या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः ॥ श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम् ॥ ५ ॥ किं वर्णयाम तव रूपमचिन्त्यमेतत्किंचातिवीर्यमसुरक्षयकारि भूरि॥ किंचाहवेषु चरितानि तवातियानि सर्वेषु देव्यसुरदेवगणादिकेषु ॥ ६ ॥ हेतुः समस्तजगतां त्रिगुणापि दोषैर्न ज्ञायसे हरिहरादिभिरप्यपारा॥ सर्वाश्रयाऽखिलमिदं जगदंशभूतमव्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या ॥ ७ ॥ यस्याः समस्तसुरता समुदीरणेन तृप्तिं प्रयाति सकलेषु मखेषु देवि ॥ स्वाहाऽसि वै पितृगणस्य च तृप्तिहेतुरुच्चार्यसे त्वमतएव जनैः स्वधा च ॥ ८ ॥ या मुक्तिहेतुरविचिन्त्य महाव्रता त्वमभ्यस्यसे सुनियतेन्द्रियत-

त्त्वसारैः ॥ मोक्षार्थिभिर्मुनिभिरस्तसमस्तदोषैर्विद्याऽसि सा भगवती परमा हि देवी ॥ ९ ॥ शब्दात्मिका सुविमलर्ग्यजुषां निधानमुद्गीथरम्यपदपाठवतां च साम्नाम् ॥ देवी त्रयी भगवती भवभावनाय वार्तासि सर्वजगतां परमार्तिहंत्री ॥ १० ॥ मेधाऽसि देवि विदिताऽखिलशास्त्रसारा दुर्गाऽसि दुर्गभवसागरनौरसंगा ॥ श्रीः कैटभारिहृदयैककृताधिवासा गौरी त्वमेव शशिमौलिकृतप्रतिष्ठा ॥ ११ ॥ ईषत्सहासममलं परिपूर्णचंद्रबिम्बानुकारि कनकोत्तमकान्तिकान्तम् ॥ अत्यद्भुतं प्रहृतमात्तरुषा तथापि वक्त्रं विलोक्य सहसा महिषासुरेण ॥ १२ ॥ दृष्ट्वा तु देवि कुपितं भ्रुकुटीकरालमुद्यच्छशांकसदृशच्छवियन्न सद्यः ॥ प्राणान्मुमोच महिषस्तदतीव चित्रं कैर्जीव्यते हि कुपितांतकदर्शनेन ॥ १३ ॥ देवि प्रसीद परमा भवती भवाय सद्यो विनाशयसि कोपवती कुलानि ॥ विज्ञातमेतदधुनैव यदस्तमेतन्नीतं बलं सुविपुलं महिषासुरस्य ॥ १४ ॥ ते संमता जनपदेषु धनानि तेषां तेषां यशांसि न च सीदति बंधुवर्गः ॥ धन्यास्त एव निभृतात्मजभृत्यदारा येषां सदाऽभ्युदयदा भवती प्रसन्ना ॥ १५ ॥ धर्म्याणि देवि सकलानि सदैव कर्माण्यत्यादृतः प्रतिदिनं सुकृती करोति ॥ स्वर्गं प्रयाति च ततो भवतीप्रसादाल्लोकत्रयेऽपि फलदा ननु देवि तेन ॥ १६ ॥ दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजंतोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि ॥ दारिद्र्यदुःखभयहारिणि का त्वदन्या सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता ॥ १७ ॥ एभिर्हतैर्जगदुपैति सुखं तथैते कुर्वन्तु नाम नरकाय चिराय पापम् ॥ संग्राममृत्युमधिगम्य दिवं प्रयांतु मत्वेति नूनमहितान्विनिहंसि देवि ॥ १८ ॥ दृष्ट्वैव किं न भवती प्रकरोति भस्म सर्वासुरानरिषु यत्प्रहिणोषि शस्त्रम् ॥ लोकान्प्रयान्तु रिपु-

योऽपि हि शस्त्रपूता इत्थं मतिर्भवति तेष्वहितेषु साध्वी ॥१९॥ खङ्ग-
प्रभानिकरविस्फुरणैस्तथोग्रैः शूलाग्रकांतिनिवहेन दृशोऽसुराणाम् ॥ य-
न्नागता विलयमंशुमदिंदुखंडयोग्याननं तव विलोकयतां तदेतत् ॥२०॥
दुर्वृत्तवृत्तशमनं तव देवि शीलं रूपं तथैतदविचिंत्यमतुल्यमन्यैः ॥ वीर्यं
च हंतृ हृतदेवपराक्रमाणां वैरिष्वपि प्रकटितैव दया त्वयेत्थम् ॥ २१ ॥
केनोपमा भवतु तेऽस्य पराक्रमस्य रूपं च शत्रुभयकार्यतिहारि कुत्र ॥
चित्ते कृपा समरनिष्ठुरता च दृष्टा त्वय्येव देवि वरदे भुवनत्रयेऽपि ॥२२॥
त्रैलोक्यमेतदखिलं रिपुनाशनेन त्रातं त्वया समरमूर्धनि तेऽपि हत्वा ॥
नीता दिवं रिपुगणा भयमप्यपास्तमस्माकमुन्मदसुरारिभवं नमस्ते
॥२३॥ शूलेन पाहि नो देवि पाहि खङ्गेन चाम्बिके ॥ घण्टास्वनेन
नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च ॥ २४ ॥ प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च
चण्डिके रक्ष दक्षिणे ॥ भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथे-
श्वरि ॥ २५ ॥ सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरंति ते ॥
यानि चात्यंतघोराणि तैरक्षास्मांस्तथा भुवम् ॥ २६ ॥ खङ्गशूलगदा-
दीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके ॥ करपल्लवसंगीनि तैरस्मान्रक्ष
सर्वतः ॥ २७ ॥ ऋषिरुवाच ॥ २८ ॥ एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः कुसुमै-
र्नंदनोद्भवैः ॥ अर्चिता जगतां धात्री तथा गंधानुलेपनैः ॥ २९ ॥
भक्त्या समस्तैस्त्रिदशैर्दिव्यैर्धूपैः सुधूपिता ॥ प्राह प्रसादसुमुखी सम-
स्तान्प्रणतान्सुरान् ॥ ३० ॥ देव्युवाच ॥ ३१ ॥ व्रियतां त्रिदशाः सर्वे
यदस्मत्तोऽभिवांछितम् ॥ ३२ ॥ देवा ऊचुः ॥ ३३ ॥ भगवत्या कृतं
सर्वं न किंचिदवशिष्यते ॥ यदयं निहतः शत्रुरस्माकं महिषासुरः ॥३४॥
यदि चापि वरो देयस्त्वयाऽस्माकं महेश्वरी ॥ संस्मृता संस्मृता त्वन्नो
हिंसेथाः परमापदः ॥ ३५ ॥ यश्च मर्त्यः स्तवैरेभिस्त्वां स्तोष्यत्यम

लानने ॥ तस्य वित्तर्धिविभवैर्धनदारादिसंपदाम् ॥ ३६ ॥ वृद्धयेऽस्मत्प्रसन्ना त्वं भवेथाः सर्वदाऽम्बिके ॥ ३७ ॥ ऋषिरुवाच ॥ ३८ ॥ इति प्रसादिता देवैर्जगतोऽर्थे तथाऽऽत्मनः ॥ तथेत्युक्त्वा भद्रकाली बभूवांतर्हिता नृप ॥ ३९ ॥ इत्येतत्कथितं भूप संभूता सा यथा पुरा ॥ देवी देवशरीरेभ्यो जगत्त्रयहितैषिणी ॥ ४० ॥ पुनश्च गौरीदेहात्सा-समुद्भूता यथाऽभवत् ॥ वधाय दुष्टदैत्यानां तथा शुभनिशुंभयोः ॥४१॥ रक्षणाय च लोकानां देवानामुपकारिणी ॥ तच्छृणुष्व मयाऽऽख्यातं यथावत्कथयामि ते ॥ ह्रीं ॐ ॥ ४२ ॥ इति शक्रादिकृता देवीस्तुतिः ॥

॥ १७२ ॥ देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम् ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ न मंत्रं नो यंत्रं तदपि च न जाने स्तुतिमहो न चाह्वानं ध्यानं तदपि च न जाने स्तुतिकथाः ॥ न जाने मुद्रास्ते तदपि च न जाने विलपनं परं जाने मातस्त्वदनुशरणं क्लेशहरणम् ॥ १ ॥ विधेरज्ञानेन द्रविणविरहेणालसतया विधेयाशक्यत्वात्तव चरणयोर्या च्युतिरभूत् ॥ तदेतत्क्षन्तव्यं जननि सकलोद्धारिणि शिवे कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥ २ ॥ पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि बहवः संति सरलाः परं तेषां मध्ये विरलतरलोऽहं तव सुतः ॥ मदीयोऽयं त्यागः समुचितमिदं नो तव शिवे कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥ ३ ॥ जगन्मातर्मातस्तव चरणसेवा न रचिता न वा दत्तं देवि द्रविणमपि भूयस्तव मया ॥ तथाऽपि त्वं स्नेहं मयि निरुपमं यत्प्रकुरुषे कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥ ४ ॥ परित्यक्त्वा देवान्विविधविधिसेवाकुलतया मया पंचाशीतेरधिकमपनीते तु वयसि ॥ इदानीं चेन्मातस्तव यदि

कृपा नापि भविता निरालंबो लंबोदरजननि कं यामि शरणम् ॥ ५॥ श्वपाको जल्पाको भवति मधुपाकोपमगिरा निरातंको रंको विहरति चिरं कोटिकनकैः ॥ तवापर्णे कर्णे विशति मनुवर्णे फलमिदं जनः को जानीते जननि जपनीयं जपविधौ ॥ ६ ॥ चिताभस्मालेपो गरलमशनं दिक्पटधरो जटाधारी कण्ठे भुजगपतिहारी पशुपतिः ॥ कपाली भूतेशो भजति जगदीशैकपदवीं भवानि त्वत्पाणिग्रहणपरिपाटीफलमिदम् ॥ ७ ॥ न मोक्षस्याकांक्षा न च विभववाञ्छाऽपि च न मे न विज्ञानापेक्षा शशिमुखि सुखेच्छाऽपि न पुनः । अतस्त्वां संयाचे जननि जननं यातु मम वै मृडानी रुद्राणी शिव शिव भवानीति जपतः ॥ ८ ॥ नाराधितासि विधिना विविधोपचारैः किं रुक्षचिंतनपरैर्न कृतं वचोभिः ॥ श्यामे त्वमेव यदि किंचन मय्यनाथे धत्से कृपामुचितमंब परं तवैव ॥९॥ आपत्सु मग्नः स्मरणं त्वदीयं करोमि दुर्गे करुणार्णवेशि ॥ नैतच्छठत्वं मम भावयेथाः क्षुधातृषार्ता जननीं स्मरंति ॥१०॥ जगदंब विचित्रमत्र किं परिपूर्णा करुणाऽस्ति चेन्मयि ॥ अपराधपरम्पराहृतं नहि माता समुपेक्षते सुतम् ॥ ११ ॥ मत्समः पातकी नास्ति पापघ्नी त्वत्समा न हि ॥ एवं ज्ञात्वा महादेवि यथायोग्यं तथा कुरु ॥१२॥ ॥ इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

॥ १७३ ॥ अथ कुञ्जिकास्तोत्रम् ॥

ईश्वर उवाच ॥ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि कुञ्जिकामन्त्रमुत्तमम् ॥ येन मन्त्रप्रभावेण चण्डीपाठफलं लभेत् ॥ १ ॥ न वर्म नार्गलास्तोत्रं कीलकं न रहस्यकम् ॥ न सूक्तमपि न ध्यानं न न्यासश्च न पूजनम् ॥ २ ॥ कुञ्जिकापाठमात्रेण दुर्गापाठफलं लभेत् ॥ अतिगुह्यतरं देवि देवानामपि दुर्लभम् ॥ ३ ॥ स्वयोनिवत्प्रयत्नेन गोपनीयं हि पार्वति ॥ मारणं मोहनं

वश्यं स्तम्भनोच्चाटनादिकम् ॥ कुञ्जिकोत्तममन्त्रस्य पाठमात्रेण सिद्ध्यति ॥ ४ ॥ अथ मन्त्रः ॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं श्लूँ ग्लैं जूं सः ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल मन्त्र प्रबल हँसँलँक्षँफट्स्वाहा ॥ नमस्ते रुद्ररूपायै नमस्ते मधुमर्दिनि ॥ नमस्ते कैटभारिण्यै नमस्ते महिषासनि ॥ १ ॥ नमस्ते शुम्भहन्त्र्यै च निशुम्भासुरघातिनि ॥ जागृहि श्रीमहादेवि जपसिद्धिं कुरुष्व मे ॥ २ ॥ ऐंकारिसृष्टिरूपायै ह्रींकारिप्रतिपालिके ॥ क्लींकारिकालरूपिण्यै बीजरूपे नमोऽस्तु ते ॥ ३ ॥ चामुण्डाचण्डनाशिन्यै यैकारि वरदायिनि ॥ विच्चे नोऽभयदे नित्यं नमस्ते मन्त्ररूपिणि ॥४॥ धाँधींधूँधूर्जटेः पत्नि वाँवींवागीश्वरीति च ॥ क्राँक्रींक्रूँकालिके देवि श्राँश्रींश्रूँश्रीः शुभं कुरु ॥५॥ हूँहूँहूँ काररूपिण्यै जंजांजूंभालनादिनि । भ्राँभ्रींभ्रूँभैरवी भद्रे भवान्यै ते नमो नमः ॥६॥ ॐअंकंचं टंतंपंयंसंबिन्दुराविर्भव विमर्दय विमर्दय हंक्षं मलय मलय जाग्रय जाग्रय त्रोटय त्रोटय दीप्तं कुरु दीप्तं कुरु स्वाहा॥ पाँपींपूँपार्वति पूर्णे खाँखींखूँखेचरीति च ॥ साँसींसूँसप्तशति सिद्धिं कुरुष्व जपमात्रतः ॥ ७ ॥ इदं तु कुञ्जिकास्तोत्रं मन्त्रजागृतिहेतवे ॥ अभक्ताय न दातव्यं गोपनीयं हि पार्वति ॥ ८ ॥ कुञ्जिकारहितां देवि यस्तु सप्तशतीं पठेत् ॥ न तस्य जायते सिद्धिररण्ये रोदनं यथा ॥ ९ ॥

॥ इति डामरतन्त्रे ईश्वरपार्वतीसंवादे कुञ्जिकास्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

॥ १७४ ॥ शीतलाष्टकम् ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीशीतलास्तोत्रस्य महादेव ऋषिः ॥ अनुष्टुप् छन्दः ॥ शीतला देवता ॥ लक्ष्मी बीजम् ॥ भवानी शक्तिः ॥ सर्वविस्फोटकनिवृत्तये जपे विनियोगः ॥ ईश्वर उवाच ॥ वन्देऽहं शीतलां देवीं रासभस्थां दिगम्बराम् ॥ मार्जनीकलशोपेतां शूर्पालंकृतमस्तकाम् ॥ १ ॥ वन्देऽहं शीतलां देवीं सर्वरोगभयापहाम् ॥ यामासाद्य निवर्तेत विस्फोटकभयं महत् ॥ २ ॥ शीतले शीतले चेति यो ब्रूयाद्दाहपीडितः ॥ विस्फोटकभयं घोरं क्षिप्रं तस्य प्रणश्यति ॥ ३ ॥ यस्त्वामुदकमध्ये तु धृत्वा पूजयते नरः ॥ विस्फोटकभयं घोरं गृहे तस्य न जायते ॥ ४ ॥ शीतले ज्वरदग्धस्य पूतिगन्धयुतस्य च ॥ प्रनष्टचक्षुषः पुंसस्त्वामाहुर्जी-

वनौषधम् ॥ ५ ॥ शीतले तनुजान्रोगान्नृणां हरसि दुस्त्यजान् ॥ विस्फोटकविदीर्णानां त्वमेकाऽमृतवर्षिणी ॥ ६ ॥ गलगंडग्रहा रोगा ये चान्ये दारुणा नृणाम् ॥ त्वदनुध्यानमात्रेण शीतले यान्ति संक्षयम् ॥ ७ ॥ न मन्त्रा नौषधं तस्य पापरोगस्य विद्यते ॥ त्वामेकां शीतले धात्रीं नान्यां पश्यामि देवताम् ॥ ८ ॥ मृणालतन्तुसदृशीं नाभिहृन्मध्यसंस्थिताम् ॥ यस्त्वां संचिन्तयेद्देवि तस्य मृत्युर्न जायते ॥ ९ ॥ अष्टकं शीतलादेव्या यो नरः प्रपठेत्सदा ॥ विस्फोटकभयं घोरं गृहे तस्य न जायते ॥ १० ॥ श्रोतव्यं पठितव्यं च श्रद्धाभक्तिसमन्वितैः ॥ उपसर्गविनाशाय परं स्वस्त्ययनं महत् ॥ ११ ॥ शीतले त्वं जगन्माता शीतले त्वं जगत्पिता ॥ शीतले त्वं जगद्धात्री शीतलायै नमोनमः ॥ १२ ॥ रासभो गर्दभश्चैव खरो वैशाखनन्दनः ॥ शीतलावाहनश्चैव दूर्वाकन्दनिकृन्तनः ॥ १३ ॥ एतानि खरनामानि शीतलाग्रे तु यः पठेत् । तस्य गेहे शिशूनां च शीतलारुङ् न जायते । १४ ॥ शीतलाष्टकमेवेदं न देयं यस्य कस्यचित् । दातव्यं च सदा तस्मै श्रद्धाभक्तियुताय वै ॥ १५ ॥

॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे शीतलाष्टकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

॥ १७५ ॥ विष्णोरष्टोत्तरशतनामावलिः ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ अद्येत्यादि पू० पुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं ममेप्सितकामनासिद्ध्यर्थं श्रीमहाविष्णुप्रीत्यर्थं तद्दिव्याष्टोत्तरशतनामभिः अष्टोत्तरशतसंख्याकममुकद्रव्यसमर्पणं करिष्ये ॥ अथ ध्यानं ॥ शांताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभांगम् ॥ लक्ष्मीकांतं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं वंदे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ॥ ॐ विश्वस्मै नमः । विष्णवे० वषट्काराय० भूतभव्यभवत्प्रभवे० भूतकृते० भूतभृते० भावाय० भूतात्मने० भूतभावनाय० पूतात्मने० परमात्मने० मुक्तानां परमायै गतये० अव्ययाय० पुरुषाय० साक्षिणे० क्षेत्रज्ञाय० अक्षराय० योगाय० योगविदां नेत्रे० प्रधानपुरुषेश्वराय० नारसिंहवपुषे० श्रीमते० केशवाय० पुरुषोत्तमाय० सर्वाय० शर्वाय० शिवाय० स्थाणवे० भूतादये० निधये० अव्ययाय० संभवाय० भावनाय० भर्त्रे० प्रभवाय० प्रभवे० ईश्वराय० स्वयंभुवे० शंभवे० आदित्याय० पुष्कराक्षाय० महास्वनाय० अनादिनिधनाय० धात्रे० विधात्रे० धातुरुत्त-

माय० अप्रमेयाय० हृषीकेशाय० पद्मनाभाय० अमरप्रभवे० विश्वकर्मणे० मनवे० त्वष्ट्रे० स्थविष्ठाय० स्थविरध्रुवाय० अग्राह्याय० शाश्वताय० कृष्णाय० लोहिताक्षाय० प्रतर्दनाय० प्रभूताय० त्रिककुब्धाम्ने० पवित्राय० मंगलाय० परस्मै० ईशानाय० प्राणदाय० प्राणाय० ज्येष्ठाय० श्रेष्ठाय० प्रजापतये० हिरण्यगर्भाय० भूगर्भाय० माधवाय० मधुसूदनाय० ईश्वराय० विक्रमिणे० धन्विने० मेधाविने० विक्रमाय० क्रमाय० अनुत्तमाय० दुराधर्षाय० कृतज्ञाय० कृतये० आत्मवते० सुरेशाय० शरणाय० शर्मणे० विश्वरेतसे० प्रजाभवाय० अह्नाय० संवत्सराय० व्यालाय० प्रत्ययाय० सर्वदर्शनाय० अजाय० सर्वेश्वराय० सिद्धाय० सिद्धये० सर्वादये० अच्युताय० वृषाकपये० अमेयात्मने० सर्वयोगविनिःसृताय० वसवे० वसुमनसे० सत्याय० (वनमालिने० देवकीनंदनाय नमः) ॥ १०८ ॥

॥ अनेनाष्टोत्तरशतनामसंख्याकामुकद्रव्यसमर्पणेन भगवान् श्रीमहाविष्णुः प्रीयताम् ॥

॥ १७६ ॥ विष्णोर्नीराजनम् ॥

जयदेव २ वन्दे गोपालं प्रभु व० मृगमदशोभितभालं करुणाकल्लोलम्॥ जयदेव० ॥ निर्गुणसगुणाकारं संहृतभूभारम् २ करुणापारावारं गोवर्धनधारम् । कुंचितकुंतलनीलं शारदिन्दुवदनम् २ मणिगणमण्डितकुण्डलराजच्छ्रुतियुगलम् ॥ जयदेव० ॥ ॥१॥ फुल्लेन्दीवरनयनं विलसितभ्रूयुगलम् २ बिंबाधरमतिसुन्दरनासामणिलोलम् ॥ कम्बुग्रीवं कौस्तुभमणिकण्ठाभरणम् २ श्रीवत्साङ्कितवक्षोलंबितवनमालम् ॥ जयदेव० ॥ २ ॥ मुरलीवादनलीलासप्तस्वरगीतं २ जलचरस्थलचरवनचररञ्जितसमगीतम् । निर्मलयमुनातीरे अगणिततवचरितं २ गोपीजनमनमोहन दधतं श्रीकान्तम् ॥ जयदेव० ॥ ३ ॥ रासक्रीडामण्डितवेष्टितव्रजललनम् २ मत्स्येतापहवमण्डितकुवलयदलनयनम् ॥ कुसुमाकारं रञ्जितमन्दस्मितवदनम् २ कालियफणिवरदमनं पक्षीश्वरगमनम् ॥ जयदेव० ॥ ४ ॥ किंकिणिमेखलमध्ये पीताम्बरवसनम् १ तोडरनूपुरगर्जितविलसितभ्रूयुगलम् । गोपीजनपरिवेष्टितयमुनातटसंस्थं २ दासाभयदं सुखदं भुवनत्रयपालम्॥ जयदेव० ॥ ५ ॥ भासुरमणिगणराजितभूषणलसदंगं२ मृगमदकेशरभालं पदनखभवगङ्गम् । विश्वंभरहेस्वामिन्नगणितगुणसंगं २ त्वामहमीडे माधव तनु भवभङ्गम् ॥ जयदेव० ॥ ६ ॥

॥ १७७ ॥ श्रीशिवनीराजनम् ॥

ॐ जय गङ्गाधर हर शिव, जय गिरिजाधीश, त्वं मां पालय कृपया जगदीश ॥ हरहरहरमहादेव ॥ कैलासे गिरिशिखरे, कल्पद्रुमविपिने शिव० ॥ गुंजति मधुकरपुंजे, कुंजवने गहने ॥ हरहर० ॥ कोकिलकूजति खेलति, हंसावनललिता ॥ शिव० ॥ रचयति कलाकलापं, नृत्यति मुदसहिता ॥ हरहर० ॥ तस्मिंल्ललितसुदेशे, शाला मणिरचिता ॥ शिव० तन्मध्येहरनिकटे, गौरी मुदसहिता ॥ हरहर० ॥ क्रीडां रचयति भूषा, रंजितनिजमीशम् ॥ शिव० ॥ ब्रह्मादिकसुरसेवित, प्रणमति ते शीर्षम् ॥ ॥ हरहर० ॥ विबुधवधू बहु नृत्यति, हृदये मुदसहिता ॥ शिव० ॥ किन्नरगानं कुरुते, सप्तस्वरसहिता ॥ हरहर० ॥ धिनकतथैथैधिनकत, मृदङ्गवादयते ॥ शिव० ॥ क्वणक्वणललितसुवेणुमंधुरं नादयते ॥ हरहर० ॥ रुणुरुणुचरणे रचयति, नूपुरमुज्वलिता ॥ शिव० ॥ चक्रावर्ते भ्रमयति कुरुते तां धिक् ताम् ॥ हरहर० ॥ तांतां लुपचुप तालं, मधुरं नादयते ॥ शिव० ॥ अंगुष्ठाङ्गुलिनादं, लास्यकतां कुरुते ॥ हरहर० ॥ कर्पूरद्युतिगौरं, पंचाननसहितम् ॥ शिव० ॥ त्रिनयनशशिधरमौले, विषधरकण्ठयुतम् ॥ हरहर० ॥ सुन्दरजटाकलापं, पावकयुतभालम् ॥ शिव० ॥ त्रिशूलडमरुपिनाकं, करधृतनृकपालम् ॥ हरहर० ॥ शंखनिनादं कृत्वा, झल्लरी नादयते ॥ शिव० ॥ नीराजयते ब्रह्मा, वेद ऋचां पठते ॥ हरहर० ॥ इतिमृदुचरणसरोजे, हृदिकमले धृत्वा ॥ शिव० ॥ अवलोकयति महेशम् ॥ ईशम् अभिनत्वा ॥ हरहर० ॥ रुंडरचितउरमाला, पन्नगमुपवीतम् ॥ ॥ शिव० ॥ वामविभागे गिरिजा, रूपम् अतिललितम् ॥ हरहर० ॥ सकलशरीरे मनसिज, कृतभस्माभरणम् ॥ शिव० इतिवृषभध्वजरूपं, तापत्रयहरणम् ॥ हरहर० ॥ ध्यानम् आरतिसमये, हृदये इतिकृत्वा ॥ शिव० ॥ रामं त्रिजटानाथम् ईशम् अभिनत्वा ॥ हरहर० ॥ प्रतिदिनमेवं पठनं संगीतं कुरुते ॥ शिव० ॥ शिवसायुज्यं गच्छति, भक्त्या यः शृणुते ॥ हरहर० ॥ १७ ॥

॥ १७८ ॥ देवीनीराजनम् ॥ पृष्ठ २१९ ॥

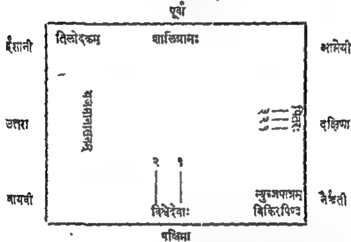
॥ इति स्तोत्रादिसंग्रहात्मकः अष्टमो विभागः ॥

परिशिष्टप्रकरणम् ।

॥ १७९ ॥ वैदिकमहालयघटश्राद्धप्रयोगः ।

॥ १८० ॥ टिप्पणीस्थ-मासिक—सांवत्सरिक-श्राद्धसहितः ।

॥ श्राद्धमण्डलम् ॥



श्रीगणेशाय नमः ॥ तत्रादौ ब्रह्मयज्ञपूर्वकनित्यतर्पणविष्णुपूजनादिकं कृत्वा श्राद्धारम्भः कर्तव्यः । तत्रादौ देवस्थाने द्वौ घटौ पितृस्थाने त्रयश्चटाः स्थापनीयाः । महाविष्णुस्थाने शालिग्रामः घटो वा ॥ देवस्थानीययोर्घटयोर्मुखं पूर्वस्यां पितृस्थानीयानां मुखम् उत्तरस्यां च महाविष्णुस्थानीयस्य मुखं पश्चिमस्यां दिशि कर्तव्यम् । एवं श्राद्धेषु सर्वत्र बोध्यम् । श्राद्धकर्ता स्वयं पूर्वाभिमुखो ब्रह्मयज्ञतो विष्णुपूजनान्तं सर्वं समाप्य दक्षिणाभिमुखः श्राद्धमाचरेत् अपि तु विष्णोः पूजने पूर्वाभिमुखो विश्वेदेवानां पूजने पश्चिमाभिमुखः पित्र्यादीनां पूजने पिण्डदाने च दक्षिणाभिमुखो भूत्वा सर्वश्राद्धं कुर्यात् ॥

१ ब्रह्मयज्ञः ९६ पृष्ठे, नित्यतर्पणम् १०२ पृष्ठे द्रष्टव्ये ।

आचम्य प्राणानायम्य । पवित्रधारणम् । ॐ पवित्रेस्त्थो० ॥ अत्रावसरे घृतपूरितं दीपं प्रज्वालयेत् ॥

संकल्पः-अद्य पू० तिथौ ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं कुरुकुरुसंज्ञकानां विश्वेषां देवानां तथा च द्वितीयविश्वेषां देवानाम् (अपसव्यं कृत्वा) अमुकगोत्राणाम् अस्मत्पितृ-पितामह-प्रपितामहानां सपत्नीकानां वसुरुद्रादित्यस्वरूपाणाम् अमुकामुकानां, द्वितीयगोत्राणां मातामह प्रमातामह वृद्धप्रमातामहानां सपत्नीकानां वसु० अमुका० गोत्राणां मदीयसमस्तपूर्वजानां(पत्नी-सुत-पितृव्य मातुल-भ्रातृ-पितृष्वसृ-मातृष्वसृ-आत्मभगिनी-श्वशुर-गुर्वाप्तानां चात्र सर्वेषामूहः कार्यः) मम पितुर्वा अमुकस्य कन्यागते सवितरि महालयापरपक्षश्राद्धं विश्वेदेवपूर्वकम् अर्घ्यपिण्डसहितं गयागमनादिश्राद्धफलप्राप्त्यर्थं पार्वणैकोद्दिष्टविधिना सद्यः करिष्ये ॥ (सव्यम्) यवान् गृहीत्वा । श्राद्धकर्ता स्वदक्षिणहस्तेन प्रथमदेवस्थानीयं दर्भचटं स्पृष्ट्वा 'दैवे क्षणः क्रियताम्' तथा 'प्राप्नोतु भवान् । प्राप्नवानि' ॥ अक्रोधनैः शौचपरैः सततं ब्रह्मचारिभिः ॥ भवितव्यं भवद्भिश्च मया च श्राद्धकारिणा ॥ सर्वायासविनिर्मुक्तैः कामक्रोधविवर्जितैः ॥ भवद्भिर्दैवकार्यं नः संपाद्यं मे प्रसीदत ॥ कुरुकुरुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः आगतं वः । सुस्वागतम् ॥ एतद्वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनम् एष वोऽर्घः ॥ ॐसहस्रशीर्षा० ॥ कुरुकुरुस-

---

१. मासिके सांवत्सरिके च "पुरूरवार्द्रसंज्ञकौ विश्वेदेवौ" ॥ (वाचस्पती इष्टिश्राद्धे क्रतुर्दक्षौ नान्दी सप्यवसू तथा । पुरूरवार्द्रवौ चाब्दे तीर्थे च धूरिलोचनौ । कालकामौ सपिण्ड्यां च कुरुकुरुौ महालये ॥) २. मासिके सांवत्सरिके च—अमुकगोत्राणाम् अस्मत्पितृ पितामह-प्रपितामहानाममुकामुकशर्मणां वसुरुद्रादित्यस्वरूपाणां पार्वणविधिना मम पितुः अमुकमासिकश्राद्धमहं करिष्ये ॥ (सांवत्सरिके) सांवत्सरिकश्राद्धमहं करिष्ये ॥ मातुस्तुमासिके सांवत्सरिके च अमुकगोत्राणाम् अस्मन्मातृपितामहीप्रपितामहीनां पार्वणविधिना मम मातुः अमुकमासिकश्राद्धमहं करिष्ये ॥ (सांवत्सरिके) सांवत्सरिकश्राद्धमहं करिष्ये ॥

संज्ञकाः विश्वेदेवाः एष वोऽर्घः संपद्यताम् । अस्तु पादार्घः। एवं द्वितीयचटे क्षणमर्घं च दद्यात् ॥ (अपसव्यम् ।) तिलान्गृहीत्वा । श्राद्धकर्ता प्रथमपितृस्थानीयचटं स्पृष्ट्वा 'पित्र्ये क्षणः क्रियताम्' तथा 'प्राप्नोतु भवान् । प्राप्नवानि' । अक्रोधनैः० ॥ भवाद्भिः पितृकार्यं नः संपाद्यं मे प्रसीदत । अमुकगोत्राः अस्मत्पितृ–पितामह–प्रपितामहाः सपत्नीकाः अमुकामुकाः वसुरुद्रादित्यस्वरूपाः आगतं वः । सुस्वागतम् ॥ एतद्वः पाद्य पादावनेजनं पादप्रक्षालनम् एष वोऽर्घः ॥ ॐ पि॒तृभ्यः॑ स्वधा॒यिभ्यः॑ स्व॒धा नमः॑ पि॒ताम॒हेभ्यः॑ स्वधा॒यिभ्यः॑ स्व॒धा नमः॑ प्रपि॑तामहेभ्यः स्वधा॒यिभ्यः॑ स्व॒धा नमः॑ । अक्ष॒न्पित॑रोऽमीमदन्त पि॒तरो॑ऽतीतृपन्त पि॒तरः॒ पित॑रः॒ शुन्ध॑ध्वम् ॥ ३६/१२ ॥ इति मन्त्रेणार्घदानम् ॥ द्वितीयपितृस्थानीयचटं स्पृष्ट्वा । क्षणादिकं दत्वा ॥ द्वितीयगोत्राः मातामह–प्रमातामह–वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः अमुकामुकाः वसुरुद्रादित्यस्वरूपाः आगतं वः । सुस्वागतम् ॥ एतद्वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनम् एष वोऽर्घः ॥ 'ॐ पि॒तृभ्यः॑ ०' ॥ इति मन्त्रेणार्घदानम् ॥ तृतीयपितृस्थानीयचटं स्पृष्ट्वा । क्षणादिकं दत्वा नानाविधगोत्राः अस्मदेकोद्दिष्टसमस्तपूर्वजा अमुकामुकाः वसुस्वरूपाः आगतं वः । सुस्वागतम् ॥ एतद्वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनम् एष वोऽर्घः ॥ 'ॐ पि॒तृभ्यः॑ ०' ॥ इति मन्त्रेणार्घदानम् ॥ (सव्यम् ॥) शालिग्रामं स्पृष्ट्वा क्षणादिकं दत्वा । अतिथये महाविष्णवे नमः एतत्ते पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनमेष तेऽर्घः । ॐ स॒हस्र॑शीर्षा० ॥ महाविष्णवे एष तेऽर्घः ॥ स्वपादकरान् प्रक्षाल्याचम्य प्राणानायम्य ॥

१ मासिके सांवत्सरिके च—एकचटपक्षेऽयं विधिः । यदा त्रयश्चटास्तदा पित्रादीनां भिन्नं भिन्नं क्षणादिकं कर्तव्यम् । यथा—अमुकगोत्र अस्मत्पितः अमुकशर्मन् वसुरूप आगतम् । सुस्वागतम् ॥ एवं पितामहस्य प्रपितामहस्यापि । सर्वस्मिन्नपि विधा एवं भिन्नक्रमो ज्ञेयः ॥

(अपसव्यम् ॥) तिलाक्षतैर्दिग्बन्धः कार्यः । अग्निष्वात्ताः पितृगणाः प्राचीं रक्षन्तु मे दिशम् ॥ तथा बर्हिषदः पान्तु याम्यां ये पितरस्तथा ॥ प्रतीचीमाज्यपास्तद्वदुदीचीमपि सोमपाः ॥ उद्र्ध्वतस्त्वर्यमा रक्षेत् कव्यवाडनलोऽप्यधः ॥ रक्षोभूतपिशाचेभ्यस्तथैवासुरदूषितः ॥ सर्वतश्चाधिपस्तेषां यमो रक्षां करोतु मे ॥ वायुभूतपितॄणां च तृप्तिर्भवति शाश्वती ॥ य इमं श्राद्धकाले तु कुर्याद्वै पितृपंजरम् ॥ अक्षय्यं तद्भवेच्छ्राद्धं पितृभ्यः परिरक्षतु ॥ तिला रक्षन्त्वसुरात् (सव्यम्) दर्भा रक्षन्तु राक्षसात् । पंक्तिं वै श्रोत्रियो रक्षेदातिथिः सर्वरक्षकः ॥ (अपसव्यम् ।) दक्षिणकटौ नीवीबन्धनम् । तिलकुशानादाय ॥ सोमस्यनीविरसिविष्णोश्शर्म्मासिशर्म्मयजमानस्येन्द्रस्ययोनिरसिसुसस्याः कृषीस्कृधि ॥ १० ॥ इति मन्त्रेण नीवीबन्धनम् ॥ (सव्यम्) कुशोपरि भूमिप्रार्थना । श्राद्धभूमौ गयां ध्यात्वा ध्यात्वा देवं गदाधरम् ॥ ताभ्यां कृत्वा नमस्कारं ततः श्राद्धं प्रवर्त्तयेत् ॥ सप्तव्याधा दशारण्ये मृगाः कालंजरे गिरौ ॥ चक्रवाकाः शरद्वीपे हंसाः सरसि मानसे ॥ तेऽपि जाताः कुरुक्षेत्रे ब्राह्मणा वेदपारगाः ॥ प्रस्थिता दीर्घमध्वानं यूयं तेभ्योऽवसीदथ ॥ देवताभ्यश्च (अपसव्यम्) पितृभ्यश्च (सव्यम्) महायोगिभ्य एव च ॥ नमः स्वाहायै स्वधायै नित्यमेव नमो नमः ॥ गयायां पितृरूपेण स्वयमेव जनार्दनः ॥ तं ध्यात्वा पुण्डरीकाक्षं मुच्यते च ऋणत्रयात् ॥

तिलोदककरणम्—ईशानकोणे त्रिदर्भासनम् । आसने पात्रे पात्रे शन्नो देवीरिति जलपूरणम् ॥ ॐ शन्नोदेवी० ॥ ॐ पवित्रेस्थो० इति

१ सव्यं नीवी तु विप्रस्य चतुर्दर्भैश्च संयुता । एकैकन्यूनमात्रेण वर्णे वर्णे यथाक्रमात् । पुनश्च–सव्यं नीवी तु विप्राणामपसव्यं (वर्णे) त्रयात्मके । वर्णभेदं न जानाति निराशाः पितरो गताः ॥ पर्च–का० प० सू० श्राद्धप्रयोगे–तिलकुशान्वितानां पलाशपत्रे (आच्छादितानां) परिहितवासः स्थितदशानां वामकटिसंलग्नवस्त्रबहिर्भागेन संवेष्ट्य गोपनम् कुर्यादेतन्नीवीबन्धनमुच्यते ॥

नत्रदर्भात्मककुशकूर्चप्रक्षेपः ॥ यवोसीति यवाः । ॐ यवोऽसियवया-स्म्मद्द्वेषोयवयारातीर्द्दिवेत्त्वान्तरिक्षायत्त्वा पृथिव्यैत्त्वाशुन्धन्ताँल्लोकाः पितृषदनाःपितृषदनमसि ॥ २६/५ ॥ तिलोसि सोमदेवत्यो गोसवो देवनिर्मितः ॥ प्रत्नमद्भिः पृक्तःस्वधया पितृँल्लोकान् प्रीणाहि नः स्वाहा । इति तिलप्रक्षेपः ॥ 'त्वाङ्गन्धर्वा०' इति गंधप्रक्षेपः । तूष्णीं पुष्पम् ॥ तुलसीशतपत्राणि भृंगराजस्तथैव च ॥ मालती मोगरं चैव पितॄणां दत्तमक्षयम् ॥ तूष्णीं पूगीफलम् । हिरण्यप्रक्षेपः ॥ पुनन्तुमेति नवभिस्तिलोदकाभिमन्त्रणम् ॥ ॐ पुनन्तुमापितरःसोम्म्यासः पुनन्तुमापितामहाःपुनन्तुप्प्रपितामहाः॥पवित्रेणशतायुषा॥पुनन्तुमापितामहाःपुनन्तुप्प्रपितामहाः॥पवित्रेणशतायुषाविश्वमायुर्व्यश्नवै॥१॥ अग्नआयूँषिपवसऽआसुवोर्ज्जमिषञ्चनः ॥ आरेबाधस्वदुच्छुनाम् ॥ २ ॥ पुनन्तुमादेवजनाःपुनन्तुमनसाधियः ॥ पुनन्तुविश्वाभूतानिजातवेदः पुनीहिमा ॥ ३ ॥ पवित्रेणपुनीहिमाशुक्रेणदेवदीद्यत् ॥ अग्नेक्रत्वाक्रतूँऽरनु ॥ ४ ॥ यत्तेपवित्रमर्च्चिष्यग्नेवितत्मन्तरा । ब्रह्मतेनपुनातुमा ॥ ५ ॥ पवमानःसोऽअद्यनःपवित्रेणविचर्षणिः । यः पोतासपुनातुमा ॥ ६ ॥ उभाभ्यान्देवसवितःपवित्रेणसवेनच ॥ माम्पुनीहिविश्वतः ॥ ७ ॥ वैश्वदेवीपुनतीदेव्यागाद्यस्यामिमाबह्व्यस्तन्न्वोवीतपृष्ठाः ॥ तयामदन्तः सधमादेषुवयँस्यामपतयोरयीणाम् ॥ ८ ॥ १७-२४/१९ चित्पतिर्म्मापुनातुवाक्पतिर्म्मापुनातु देवोमासवितापुनात्त्वच्छिद्द्रेणपवित्रेणसूर्य्यस्य रश्मिभिः ॥ तस्यतेपवित्रपतेपवित्रपूतस्ययत्कामःपुनेतच्छकेयम् ॥ ९ ॥ ४/४ ॥ पुष्कराद्यानि तीर्थानि गङ्गाद्याः सरितस्तथा ॥ आगच्छन्तु पवित्राणि श्राद्धकाले सदा मम ॥

ततः कुशकूर्चेण श्राद्धीयद्रव्यप्रोक्षणम् ॥ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थाङ्गतोऽपि वा ॥ यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ॥

तत एकस्मिन्पात्रे तिलोदकं गृहीत्वा तज्जलं ॐ यद्देवादेवहेडनन्देवासश्चकृमावयम् ॥ अग्निर्म्मातस्म्मादेनसोविश्वान्मुञ्चत्वᳬहंसः ॥ १ १५/२० ॥ ॐ यदिदिवायदिनक्तमेनाᳬसिचकृमावयम् ॥ व्वायुर्म्मातस्म्मादेनसोविश्वान्मुञ्चत्वᳬहंसः ॥ २ १५/२० ॥ ॐ यदिजाग्रद्यदि स्वप्नऽएनाᳬसिचकृमावयम् ॥ सूर्य्योमातस्म्मादेनसोविश्वान्मुञ्चत्वᳬहंसः ॥ ३ १६/२० ॥ इति त्रिभिर्मंत्रैर्गायत्र्या चाभिमन्त्र्य पाकशालायां गत्वा (अपसव्येन) पाकप्रोक्षणम् ॥ उदक्याद्दिक्षुद्रदृष्टिनिपतिताः पाकादिदोषाः पाकादीनां पवित्रताऽस्तु ॥ देशकालपाकपात्रद्रव्यश्रद्धासंपदस्तु ॥ सर्वे पाकाः शुचयो भवन्तु ॥ (सव्यम्) आसने उपविश्य। अद्यपूर्वो० तिथौ कुरुकुरसंज्ञकानां विश्वेषां देवानां (अपसव्यम्) गोत्राणां पितृपितामहप्रपितामहानां सपत्नीकानां द्वितीयगोत्राणां मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहानां सपत्नीकानां मम समस्तपूर्वजानां मम पितुर्वा कन्यागते सवितरि महालयापरपक्षश्राद्धं पार्वणं विश्वेदेवपूर्वकम् अर्घ्यपिण्डसहित युष्मदनुज्ञयाऽहं करिष्ये। कुरुष्व ॥ (सव्यम्) आसनदानम्। देवदक्षिणे आसनार्थे द्वौ दर्भौ दद्यात् ॥ यथा–कुरुकुरसंज्ञकानां विश्वेषां देवानामिदमासनम्। स्वासनम् ॥ अत्रास्यतां धर्मोसि आपः। दैवे क्षणः क्रियतां तथा प्राप्नोतु भवान्। प्राप्नवानि ॥ हस्तप्रक्षालनं दत्त्वा निष्रार्थे यवकुशानादाय अयं विष्टरः। सुविष्टरः ॥ एवं द्वितीयपक्षेऽपि आसनदानम् ॥ (अपसव्यम्) पितॄणां वामभागे त्रीन्दर्भानासनार्थे दद्यात् ॥ यथा–अमुकगोत्राणामस्मत्पितृ–पितामह प्रपितामहानां सप-

१ मासिके सांवत्सरिके च–पुरूरवार्द्रवसंज्ञकानां विश्वेषां देवानाम् इदमासनम् ॥२॥ पितृ मासिके सांवत्सरिके एकतन्त्रेण–अमुकगोत्राणाम् अस्मत्पितृपितामहप्रपितामहानाम् अमुकामुकशर्मणां वसुरुद्रादित्यस्वरूपाणाम् इदमासनम् ॥ भिन्नपक्षे– (१) अमुकगोत्रस्य अस्मत्पितुः अमुकशर्मणः वसुरूपस्य इदमासनम् ॥ (२) अमुकगोत्रस्य अस्मत्पितामहस्य अमुकशर्मणो रुद्ररूपस्य इदमासनम् ॥ (३) अमुकगोत्रस्य अस्मत्प्रपितामहस्य अमुक

त्नीकानां वसुरुद्रादित्यस्वरूपाणाम् अमुकामुकानाम् इदमासनम् । स्वासनम् ॥ अत्रास्यतां धर्मोसि आपः । पित्र्ये क्षणः क्रियतां तथा प्राप्नोतु भवान् । प्राप्नवानि ॥ हस्तप्रक्षालनं दत्त्वा विष्टरार्थे तिलकुशानादाय अयं विष्टरः । सुविष्टरः ॥ द्वितीयगोत्राणामस्मन्मातामह-प्रमातामह-वृद्धप्रमातामहानां सपत्नीकानाम् अमुकामुकानां वसुरुद्रादित्यस्वरूपाणामिदमासनम् । स्वासनम् ॥ अत्रास्यतां धर्मोऽसि आपः । पित्र्ये क्षणः क्रियतां तथा प्राप्नोतु भवान् । प्राप्नवानि ॥ हस्तप्रक्षालनं दत्त्वा विष्टरार्थे तिलकुशानादाय अयं विष्टरः । सुविष्टरः ॥ गोत्राणामस्मदेकोद्दिष्टसमस्तपूर्वजानां वसुरूपाणामिदमासनम् । स्वासनम् ॥ अत्रास्यतां धर्मोसि आपः । पित्र्ये क्षणः क्रियताम् तथा प्राप्नोतु भवान् प्राप्नवानि ॥ हस्तप्रक्षालनं दत्त्वा विष्टरार्थे तिलकुशानादाय अयं विष्टरः । सुविष्टरः ॥ (सव्यम्) आतिथिस्वरूपिणे महाविष्णवे इदमासनम् । स्वासनम् ॥ अत्रास्यतां धर्मोसि आपः । महाविष्णो क्षणः क्रियताम् तथा प्राप्नोतु भवान् । प्राप्नवानि ॥ हस्तप्रक्षालनं दत्त्वा विष्टरार्थे यवकुशानादाय अयं विष्टरः । सुविष्टरः ॥

अथ आवाहनम् । कुरुकुलससंज्ञकान्विश्वान्देवान्भवत्सु आवाहयिष्ये । आवाहय ॥ ॐ विश्वेदेवासऽआगतशृणुतामऽइमꣳहवम् । एदम्बुर्हिर्निषीदत ॥ ३४/७ प्रदक्षिणं यवानवकीर्य ॥ ॐ विश्वेदेवाꣳ शृणुतेमꣳहवम्मे येऽअन्तरिक्षेयऽउपद्यविष्ठ ॥ येऽअग्निजिह्वाऽउतवायजत्राऽआसद्या-

शर्मण आदित्यरूपस्य इदमासनम् ॥ मातु श्राद्धे एकतन्त्रपक्षे- (१) अमुकगोत्राणाम् अस्मन्मातृपितामहीप्रपितामहीनाम् अमुकामुकदानाम् वसु० इदमासनम् ॥ मातु श्राद्धे भिन्नपक्षे-(१) अमुकगोत्राया अस्मन्मातुः अमुकदाया वसुस्वरूपाया इदमासनम् ॥ (२) अमुकगोत्राया अस्मत्पितामह्या अमुकदाया रुद्रस्वरूपाया इदमासनम् ॥ (३) अमुकगोत्राया अस्मत्प्रपितामह्या अमुकदाया आदित्यस्वरूपाया इदमासनम् ॥

१. मासिके मातामहिके च-पुरूरवार्द्रवसंज्ञकान् विश्वान्देवान् भवत्सु आवाहयिष्ये ॥

स्मिन्बर्हिषि मादयध्वम् ॥ ५३/३३ ॥ आगच्छन्तु महाभागा विश्वेदेवा महाबलाः ॥ ये चात्र विहिताः श्राद्धे सावधाना भवन्तु ते ॥ एवं द्वितीये ॥ (अपसव्यम्) अमुकगोत्रान् अस्मत्पितृ–पितामह–प्रपितामहान् सपत्नीकान् वसुरुद्रादित्यस्वरूपान् भवत्सु आवाहयिष्ये । आवाहय ॥ अप्रदक्षिणं तिलानवकीर्य ॥ ॐ उशन्तस्त्वा निधीमह्युशन्तः समिधीमहि ॥ उशन्नुशत ऽआवह पितॄन्हविषे ऽअत्तवे ॥ ७०/१९ ॥ आयन्तु नः इति जपेत् ॥ ॐ आयन्तु नः पितरः सोम्यासोऽग्निष्वात्ताः पथिभिर्देवयानैः ॥ अस्मिन्यज्ञे स्वधया मदन्तोऽधिब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान् ॥ ५८/१९

द्वितीयगोत्रान् अस्मन्मातामह–प्रमातामह–वृद्धप्रमातामहान् सपत्नीकान् वसुरुद्रादित्यस्वरूपान् भवत्सु आवाहयिष्ये । आवाहय ॥ अप्रदक्षिणं तिलानवकीर्य पूर्ववत् मन्त्रद्वयपठनम् । यथा । ॐ उशन्तस्त्वा० ॥ ॐ आयन्तु नः० ॥ अमुकगोत्रान् अस्मदेकोद्दिष्टसमस्तपूर्वजान् वसुरूपान् भवत्सु आवाहयिष्ये । आवाहय ॥ अप्रदक्षिणं तिलानवकीर्य ॥ ॐ उशन्तस्त्वा० ॥ ॐ आयन्तु नः० ॥ (सव्यम्) विष्णवे आवाहनं नास्ति ॥

अर्घकरणम् । ततो देव–पितृ–विष्णुसन्निधौ पलाशपत्रनिर्मितपद्पात्राणि स्थापयित्वा तन्मध्ये अधोलिखितद्रव्याणि निक्षिपेत् ।

---

१ पितृ मासिके सांवत्सरिके च एकतन्त्रे–अमुकगोत्रान् अस्मत्पितृपितामहप्रपितामहान् अमुकामुकशर्मणो वसुरुद्रादित्यस्वरूपान् भवत्सु आवाहयिष्ये ॥ पितृभिन्नपक्षे–(१) अमुकगोत्रम् अस्मत्पितरम् अमुकशर्माणं वसुरूपं भवत्सु आवाहयिष्ये ॥ (२) अमुकगोत्रम् अस्मत्पितामहम् अमुकशर्माणं रुद्ररूपं भवत्सु आवाहयिष्ये ॥ (३) अमुकगोत्रम् अस्मत्प्रपितामहम् अमुकशर्माणम् आदित्यरूपं भवत्सु आवाहयिष्ये ॥ एवं मातृपक्षे यथा–

अनुमासिके सांवत्सरिकश्राद्धे एकतन्त्रपक्षे–अमुकगोत्राः अस्मन्मातृपितामहीप्रपितामही अमुकामुकदा वसुरुद्रादित्यस्वरूपा भवत्सु आवाह० ॥ मातृभिन्नपक्षे—(१) अमुकगोत्राम् अस्मन्मातरम् अमुकदां वसुरूपां भवत्सु आवा० ॥ (२) अमुकगोत्राम् अस्मत्पितामहीम् अमुकदां रुद्ररूपां भवत्सु आवा० (३) अमुकगोत्राम् अस्मत्प्रपितामहीम् अमुकदाम् आदित्यरूपां भवत्सु आवा० ॥

देवपात्रयोः ॐ पवित्रेस्थो० इति मन्त्रेण द्वौ द्वौ साग्रौ कुशौ निधापयेत् । ॐ पवित्रेस्थो० ॥ ॐ शन्नोदेवीत्युदकपूरणम् । ॐ शन्नोदेवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये० ॥ ॐ यवोसीति मन्त्रेण यवान्विक्षिपेत् ॥ ॐ यवोसि० । तूष्णीं गन्धपुष्पे निक्षिप्य । देवपात्रे सम्पन्ने । सुसम्पन्ने ॥ (अपसव्यम्) पितृपात्राणि पूरयेत् ॥ पवित्रेस्थो० इति मन्त्रेण पवित्रत्रयं निधाय । ॐ शन्नोदेवीत्युदकपूरणम् ॥ तिलोसीति मन्त्रेण तिलान् ॥ तूष्णीं गन्धपुष्पाणि निक्षिप्य । पितृपात्राणि सम्पन्नानि । सुसम्पन्नानि ॥ (सव्यम्) महाविष्णुपात्रे ॐ पवित्रेस्थो० । इति मन्त्रेणैकं पवित्रम् ॥ जलपूरणम् । ॐ शन्नोदेवी० ॥ यवोसीति यवाः ॥ तूष्णीं गन्धपुष्पे च । महाविष्णोरर्घपात्रं सम्पन्नम् । सुसम्पन्नम् ॥

ततः अर्घदानम् ॥ 'ॐदेवेभ्यो नमः' इति द्वे पवित्रे पुष्पं चार्पयित्वा ॥ अर्घं गृहीत्वा । ॐया दिव्याऽआपः पयसा सम्बभूवुर्याऽअन्तरिक्षा उत पार्थिवीर्याः ॥ हिरण्यवर्णा यज्ञियास्तानऽआपः शिवाः शश्स्योनाः सुहवा भवन्तु ॥ कुरुकुरससंज्ञकाः विश्वेदेवाः एष वोऽर्घः संपद्यताम् । अस्त्वर्घः । सर्वपात्रेषु किंचिज्जलमवशेषणीयम् ॥ एवं द्वितीयघटे ॥ (अपसव्यम्) 'ॐ पितृभ्यो नमः' इति सपवित्राणि पुष्पाण्यर्पयित्वा । अर्घं गृहीत्वा । ॐ या दिव्याऽआपः० ॥ अमुकगोत्रेभ्यः अस्मत्पितृ-पितामहप्रपिता-

---

१ मासिक सांवत्सरिके च-पुरूरवार्द्रवसंज्ञका विश्वेदेवा एष वोऽर्घः सम्पद्यताम् ॥

२ एकतन्त्रे पितृ श्राद्धेऽनुमासिके सांवत्सरिके च—अमुकगोत्रा अस्मत्पितृपितामहप्रपितामहा अमुकामुकशर्माणो वसुरुद्रादित्यस्वरूपा एष० ॥ पितृश्राद्धे भिन्नपक्षे—(१) अमुकगोत्र अस्मत्पितः अमुकशर्मन् वसुरूप एष तेऽर्घः (२) अमुकगोत्र अस्मत्पितामह अमुकशर्मन् रुद्ररूप एष० ॥ (३) अमुकगोत्र अस्मत्प्रपितामह अमुकशर्मन् आदित्यरूप एष तेऽर्घः ॥

महेभ्यः सपत्नीकेभ्यः वसुरुद्रादित्यस्वरूपेभ्यः एष वोऽर्घः। अस्त्वर्घः॥ द्वितीयगोत्रेभ्यः अस्मन्मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहेभ्यः सपत्नीकेभ्यः वसुरुद्रादित्यस्वरूपेभ्यः एष वोऽर्घः । अस्त्वर्घः ॥ गोत्रेभ्यः अस्मदेकोद्दिष्टसमस्तपूर्वजेभ्यः वसुरूपेभ्यः एष वोऽर्घः। अस्त्वर्घः ॥ (सव्यम्) 'ॐ महाविष्णवे नमः' इति पवित्रं पुष्पं चार्पयित्वा। ॐ या दिव्याऽआपः०॥ अतिथिस्वरूपिणे महाविष्णवे एष तेऽर्घः। अस्त्वर्घः ॥ (अपसव्यम्) प्रथमपितृपात्रे संस्रवान्समवनीय। शुन्धन्तांल्लोकाः पितृषदनाः पितृषदनमसि । इति मन्त्रेण पितृवामे प्रथमविश्वेदेवघटस्य दक्षिणे भूमिं प्रोक्ष्य दर्भं च तत्र निधाय तदुपरि "पितृभ्यः स्थानमसि" इति पात्रं न्युब्जं करोति । तदुपरि सर्वाणि पितृपवित्राणि निदधाति । तदुपरि अन्यानि त्रीणि च॥पूजनम्॥स्थानमसि अन्नं नमः। स्थानमसि गंधं नमः। स्थानमसि तिलाक्षतपुष्पं नमः। स्थानमसि नमो नमः॥ न्युब्जपात्रोदकेन स्वमूर्ध्नि मार्जनम् ॥ ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमास्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम् ॥ (सव्यम्) अत्रावसरे गंधादिदानम् । (घटपूजनम्) देवघटे । देवेभ्यः अन्नाः । स्वन्नाः॥ देवेभ्यो गंधः । सुगन्धः॥ देवेभ्यः अक्षतपुष्पम् । स्वक्षतपुष्पम् ॥ यवमाच्छादनम् ॥ फलार्थे पूगीफलम् । सुफलम्॥ब्रह्मकर्मार्थे यज्ञोपवीतम्। सुयज्ञोपवीतम्॥ आच्छादनार्थे वस्त्रं वा किंचिद्व्यावहारिकं द्रव्यम् । स्वाच्छादनम् ॥ शेषोपचारार्थे इमौ कुशौ । सुकुशौ ॥ जलं गृहीत्वा । इदमनुलेपनम् एतावत्सुमनस एष वो धूपः सुधूपः इदं वो ज्योतिः सुज्योतिः शेषोपचारार्थे इमौ कुशौ यथादत्तं गन्धा-

---

एवं मातृपक्षे यथा-एकतंत्रेण श्राद्धकर्मणि मातृश्राद्धेऽनुमासिके सांवत्सरिके । अमुकगोत्रा अस्मन्मातृ-पितामही प्रपितामह्यः अमुकामुकदा वसुरुद्रादित्यस्वरूपा एष वोऽर्घः०॥ भिन्नपक्षे-(१) अमुकगोत्रे अस्मन्मातः अमुकदे वसुरूपे एष तेऽर्घः. (२) अमुकगोत्रे अस्मत्पितामहि अमुकदे रुद्ररूपे एष तेऽर्घः० ॥ (३) अमुकगोत्रे अस्मत्प्रपितामहि अमुकदे आदित्यरूपे एष तेऽर्घः० ॥

घर्चनं कुरुकूरसंज्ञकेभ्यो विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा संपद्यतां न मम ॥ एवं द्वितीयघटे ॥ (अपसव्यम्) पितृस्थानीयघटे । पितृभ्यः अत्राः । स्वत्राः ॥ पितृभ्यः गन्धः । सुगन्धः ॥ पितृभ्यः तिलाः । सुतिलाः ॥ माल्यार्थे इमानि वः पुष्पाणि तुलसीदलसहितानि । सुपुष्पाणि ॥ तिलमाच्छादनम् ॥ फलार्थे पूगीफलम् । सुफलम् ॥ ब्रह्मकर्मार्थे यज्ञोपवीतम् । सुयज्ञोपवीतम् ॥ आच्छादनार्थे वस्त्रं वा किंचिव्द्यावहारिकं द्रव्यम् । स्वाच्छादनम् ॥ शेषोपचारार्थे इमे कुशाः । सुकुशाः ॥ जलमादाय । इदमनुलेप० गन्धाद्यर्चनम् अमुकगोत्रेभ्यः अस्मत्पितृ-पितामह-प्रपितामहेभ्यः सपत्नीकेभ्यः स्वधा सम्पद्यतां न मम ॥ द्वितीयगोत्रस्थानीयघटे पूर्ववत्पूजनम् । जलं गृहीत्वा । इदमनुलेप० गन्धाद्यर्चनं द्वितीयगोत्रेभ्यः अस्मन्मातामह-प्रमातामह-वृद्धप्रमातामहेभ्यः सपत्नीकेभ्यः स्वधा सम्पद्यतां न मम ॥ तृतीयघटे पूर्ववत्पूजनम् । जलं गृहीत्वा । इदमनुलेप० गन्धाद्यर्चनम् अस्मत्समस्तपूर्वजेभ्यः वसुरूपेभ्यः यथायथाविभागं स्वधा सम्पद्यतां न मम ॥ (सव्यम्) अतिथये महाविष्णवे अत्राः । स्वत्राः ॥ गन्धः । सुगन्धः । यवाः । सुयवाः ॥ माल्यार्थे इमानि पुष्पाणि तुलसीदलसहितानि । सुपुष्पाणि ॥

१ मासिके सांवत्सरिके च–पुरूरवार्द्रवसंज्ञकेभ्यो विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा संपद्यतां न मम ॥

२ एकतंत्रेण—पितुः श्राद्धे मासिके सांवत्सरिके च–अमुकगोत्रेभ्यःअस्मत्पितृपितामहप्र-पितामहेभ्यः वसुरुद्रादित्येभ्यः स्वधा सम्पद्यतां न मम ॥ भिन्नपक्षे (१) अमुकगोत्राय अस्मत्पित्रे अमु० वसु० स्वधा सम्पद्यतां न मम (२) अमुकगोत्राय अस्मत्पितामहाय अमु० रुद्र० स्वधा० । (३) अमुकगोत्राय अस्मत्प्रपितामहाय अमु० आदित्य०स्वधा सम्पद्यतां न मम् ॥

एवं मातृश्राद्धेऽनुमासिके सांवत्सरिके च एकतंत्रेण—अमुकगोत्राभ्यः अस्मन्मातृपितामहीप्रपितामहीभ्यः वसु० स्वधा० ॥ भिन्नपक्षे—(१) अमुकगोत्रायै अस्मन्मात्रे अमु०वसु० स्वधा० ॥ (२) अमुकगोत्रायै अस्मत्पितामह्यै अ०रुद्र० स्वधा ॥ (३)अमुकगोत्रायै अस्मत्प्रपितामह्यै अ० आदि० स्वधा० ॥

यवमाच्छादनम् ॥ फलार्थे पूगीफलम् । सुफलम् ॥ ब्रह्मकर्मार्थे यज्ञोपवीतम् । सुयज्ञोपवीतम् ॥ आच्छादनार्थे वस्त्रं वा किंचिद्व्यावहारिकं द्रव्यम् । स्वाच्छादनम् ॥ शेषोपचारार्थे इमौ कुशौ । सुकुशौ ॥ जलं गृहीत्वा । इदमनुलेप० गन्धाद्यर्चनं महाविष्णवे स्वाहा सम्पद्यतां न मम ॥

अथ तिलोद्धरणं पात्रासादनं मण्डलकरणं च॥ हस्ते जलं गृहीत्वा 'तिलोद्धरणं पात्रासादनं मण्डलकरणं च करिष्ये ।' (ॐकुरुष्व) (अपसव्यम्) अर्घपात्राणि निष्कास्य भूमौ स्थितान् तिलादीनुद्धृत्य (सव्यम्) परिवेषणार्थं पात्राणामासादनं कुर्यात् ।

यथा-(अपसव्यम्) पितृस्थानीयचटसमीपे भूमौ स्थितान तिलादीनुद्धृत्य पात्राणामासादनञ्च भस्मना पङ्क्तिवारणं कुर्यात् ॥ प्रथमा दक्षिणा रेखा द्वितीया वामतो न्यसेत् । तृतीया चाग्रभागे तु मेलनं कुरु दक्षिणे ॥ इत्यनया रीत्या यावन्ति पात्राणि तावन्ति ॐपरीत्त्य-भूतानिपरीत्त्यलोकान्परीत्त्यसर्वाःप्रदिशोदिशश्च ॥ उपस्थाय-प्रथमजामृतस्यात्मनात्मानमभिसंविवेश ॥ १/२ ॥ एवं मातामहादीनां समस्तपितॄणां चटसमीपे च पात्रासादनं पंक्तिवारणं च कुर्यात्

ततः प्रथमविश्वेदेवस्थानीयचटसमीपे पात्रमासाद्य पात्रस्य परितः॥ 'यथाचक्रधरो विष्णुस्त्रैलोक्यं परिरक्षति । भस्मना मण्डलं तद्वत्सर्वभूतानि रक्षतु ॥ सर्वेषां पापदृष्टीनां चक्षुर्बध्नाति केशवः । मंत्रः-ॐपरीत्त्यभूतानि० ॥ इत्यनेन भस्मना पङ्क्तिवारणम् । एवं द्वितीयविश्वेदेवसमीपेऽपि पात्रासादनं पङ्क्तिवारणम् ॥

महाविष्णोः समीपेऽपि एवमेव पात्रासादनं पङ्क्तिवारणञ्च कार्यम् ।

(अपसव्यम्) पिशाचादीनां करानुद्धचर्थं तिलोदकाञ्जलं गृहीत्वा ॐ रेतांदर्यानि० इति पठित्वा सर्वेषु चटेषु दद्यात् ॥ (सव्यम्) देवानां

करशुद्ध्यर्थं द्वयोर्विश्वेदेवयोर्घटयोरपि महाविष्णोरपि करशुद्ध्यर्थं ॐयेतीर्थानि० इत्यनेन तिलोदकाञ्जलं देयम् ।

अथाग्नौकरणम्—ततो घृताक्तमन्नं प्रयच्छति । पलाशपत्रपुटे अन्नमानीय गायत्रीमंत्रेण संप्रोक्ष्य जलं गृहीत्वा—अप्स्वग्नौकरणं करिष्ये । कुरुष्व ॥ तत्र पत्रावलीसमीपे अन्यपात्रं जलपूरितं संस्थाप्य हस्ते गायत्र्याऽभिमंत्रितमोदनमादाय (अपसव्येन) पातितवामजानुः पितृतीर्थेनाथदानधर्मेण द्विराहुतिं जले जुहुयात् ॥ ॐ अग्नये कव्यवाहनाय स्वाहा इदमग्नये कव्यवाहनाय न मम ॥ ॐ सोमाय पितृमते स्वाहा इदं सोमाय पितृमते न मम ॥ इति द्विराहुतिं जले हुत्वा शेषमन्नं पिण्डार्थमवशेषणीयम् ॥

ततः पितृपितामहप्रपितामहपात्रे परिवेषणीयम् ॥ एवं मातामहादीनां पात्रे समस्तपितृणां पात्रे च परिवेषणीयम् ॥ (सव्यम्) देवपात्रयोः परिवेषणीयम् । महाविष्णुपात्रे परिवेषणीयम् ॥ देवपात्रस्थमन्नं गायत्रीमंत्रेण संप्रोक्ष्य । देवाः अन्नं रक्षध्वम् । ॐ इदं विष्णु० इति अंगुष्ठमन्नेऽवगाह्य । ॐ इदं विष्णु० ॥ अपहता० इति यवान्विकीर्य । ॐ अपहता० ॥ दक्षिणहस्तेन पात्रमालभ्य जपति । ॐ पृथ्वी ते पात्रं द्यौरपिधानं ब्राह्मणस्य मुखेऽमृतेऽमृतं जुहोमि स्वाहा ॥ जलं गृहीत्वा । इदमन्नं कुरुकुरसंज्ञकेभ्यो विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा सम्पद्यतां हव्यं न मम ॥ एवं द्वितीयघटे ॥ (अपसव्यम्) पितृपात्रस्थमन्नं सावित्र्याऽभ्युक्ष्य । पितरः कव्यं रक्षध्वम् । इदं विष्णु० इति मन्त्रेण अंगुष्ठमन्नेऽवगाह्य । अपहता० इति तिलान्विकीर्य । पात्रमालभ्य जपति । ॐ पृथ्वी ते पात्रं० । जलं गृहीत्वा । इदमन्नमस्मत्पितृ—पितामह-

प्रपितामहेभ्यः सपत्नीकेभ्यः स्वधा सम्पद्यतां कव्यं न मम ॥ एवं द्वितीये मातामहादीनां घटे पूर्ववत्कृत्वा । जलं गृहीत्वा । इदमन्नमस्मन्मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहेभ्यः सपत्नीकेभ्यः स्वधा सम्पद्यतां कव्यं न मम ॥ एवं तृतीयघटे पूर्ववत्कृत्वा । जलं गृहीत्वा । इदमन्नमस्मत्समस्तपूर्वजेभ्यः स्वधा सम्पद्यतां कव्यं न मम ॥ इति जलमुत्सृजेत् ॥ (सव्यम्) महाविष्णुपात्रस्थमन्नं गायत्र्या संप्रोक्ष्य महाविष्णो हव्यं रक्ष । इदं विष्णु० इति मंत्रेणांगुष्ठमन्नेऽवगाह्य । अपहता० इति यवान्विकीर्य । पात्रमालभ्य । ॐ पृथ्वी ते पात्रं० । जलं गृहीत्वा । इदमन्नं महाविष्णवे स्वाहा सम्पद्यतां हव्यं न मम ॥ संकल्पः । जलं गृहीत्वा । ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम् ॥ ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना ॥ हरिर्दाता हरिर्भोक्ता हरिरन्नं प्रजापतिः ॥ हरिर्विप्रशरीरस्थो भुंक्ते भोजयते हरिः॥ चतुर्भिश्च चतुर्भिश्च द्वाभ्यां पंचभिरेव च ॥ हूयते च पुनर्द्वाभ्यां स मे विष्णुः प्रसीदतु ॥ ॐतत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥ (अपसव्यम्) पितॄणामपोशनार्थं सकृत्सकृदपो दत्वा । (सव्यम्) देवानां विष्णोश्चापोशनं दत्वा देवतानैवेद्यं कृत्वा । (अपसव्यम्) एको विष्णुर्महद्भूतं पृथग्भूतान्यनेकशः ॥ त्रींल्लोकान् व्याप्य भूतात्मा भुंक्ते विश्वभुगव्ययः ॥ अनेन भोजनसमाराधनेन मम समस्तपितृस्वरूपी जनार्दनवासुदेवः प्रीयताम् ॥ निवीती भूत्वा प्रार्थयेत् ।

ईशानविष्णुकमलासनकार्तिकेयवह्नित्रयार्करजनीशगणेश्वराणाम् ॥ क्रौंचामरेंद्रकलशोद्भवकश्यपानां पादान्नमामि सततं पितृमुक्तिहेतोः ॥ (सव्यम्) देवाः अमृतं जुषध्वम् ॥ (अपसव्यम्) पितरः अमृतं जुषध्वम् ॥ (सव्यम्) महाविष्णो अमृतं जुषस्व ॥ श्रद्धया प्राणेन जुहोमि । ॐ प्राणाय स्वाहा ॥ ॐ अपानाय स्वाहा ॥ ॐ व्यानाय स्वाहा ॥ ॐ उदानाय स्वाहा ॥ ॐ समानाय स्वाहा ॥ मधुवाता० इति त्र्यृचं जपेत् ॥ गायत्रीपठनम् ॥ तृप्तान्ज्ञात्वा अन्नं विकिरेत् । विकिरासनं दद्यात् ॥[1] (अपसव्यम्) असंस्कृतप्रमीतानां त्यागिनां कुलदूषिणाम् ॥ उच्छिष्टभागधेयानां दर्भेषु विकिरासनम् ॥ इति नैर्ऋत्यकोणे दर्भासनं दत्वा विकिरपिण्डदानम् । पिण्डमादाय । अग्निदग्धाश्च ये जीवा येऽप्यदग्धाः कुले मम ॥ भूमौ दत्तेन पिण्डेन तृप्ता यान्तु पराङ्गतिम् ॥ ये अग्निदग्धाः ये अनग्निदग्धास्तेभ्यः अस्मत्कुलप्रसूतेभ्योऽयं विकिरपिण्डः स्वधा न मम ॥ (सव्यम्) पवित्रत्यागः ॥ पाणिपादौ प्रक्षाल्याचम्य प्राणानायम्य पवित्रधारणम् ॥ ॐ पवित्रेस्थो० ॥ (अपसव्यम्) पितॄणामुत्तरापोशानं दत्वा । (सव्यम्) देवानां विष्णवे चोत्तरापोशानं दत्वा । पूर्ववद्गायत्रीं जपित्वा । (अपसव्यम्) रेखाकरणम् । ॐ अपहताऽअसुरारक्षा ँ सिवेदिषदः ॥ उदकोपस्पर्शः । रेखायामवनेजनम् । अमुकगोत्राः अस्मत्पितृ-पिता-मह-प्रपितामहादिसमस्तपूर्वजाः पिण्डस्थाने अवनेनिग्ध्वम् ॥

पिण्डदानम् । (श्राद्धकर्ता एकस्मिन्पात्रे पिण्डद्रव्यं निष्कास्य तत्र घृतं तिलान् तिलोदकं शर्करां पयः दधि मधु गन्धं पुष्पञ्च प्रक्षिप्य

[1] तीर्थश्राद्धे गयाश्राद्धे श्राद्धे मातामहे तथा । विकिरं नैव दातव्यं श्राद्धे षोडशके तथा ॥

पिण्डान् कृत्वा दद्यात्) यथा— ॥ अमुकगोत्र अस्मत्पितः अमुकशर्मन्वसुरूप एतत्तेऽन्नं स्वधा । इदम् अमुकगोत्राय अस्मत्पित्रे अमुकशर्मणे वसुरूपाय अयं पिण्डः स्वधा न मम॥ एतच्च गोदावर्यां दत्तमस्तु गयागदाधरस्तृप्यतु ॥ एवं सर्वत्र ॥ अमुकगोत्र अस्मत्पितामह अमुकशर्मन्रुद्ररूप एतत्तेऽन्नं स्वधा । इदं० । एतच्च० ॥ अमुकगोत्र अस्मत्प्रपितामह अमुकशर्मन् आदित्यरूप एतत्तेऽन्नं स्वधा । इदं० । एतच्च० ॥ अ० गो० अस्मन्मातः अमुकदे वसुरूपे एतत्तेऽन्नं स्वधा । इदं० । एतच्च० ॥ अ० गो० अस्मत्पितामहि अमुकदे रुद्ररूपे एतत्तेऽन्नं स्वधा० । इदं० । एतच्च० ॥ अ० गो० अस्मत्प्रपितामहि अमुकदे आदित्यरूपे एतत्तेऽन्नं स्वधा । इदं० । एतच्च० ॥ (ततो द्वितीयगोत्रेभ्यः) अ० गो० अस्मन्मातामह अमुकशर्मन् वसुरूप एतत्तेऽन्नं स्वधा । इदं० । एतच्च० ॥ अ० गो० अस्मत्प्रमातामह अमुकशर्मन् रुद्ररूप एतत्तेऽन्नं स्वधा । इदं० । एतच्च गो०॥ अ० गो० अस्मद्वृद्धप्रमातामह अमुकशर्मन् आदित्यरूप एतत्तेऽन्नं स्वधा । इदं० । एतच्च गोदा० ॥ एवं मातामहीप्रमातामहीवृद्धप्रमातामहीभ्यः ॥ एवं मृतेभ्यः समस्तेभ्यः स्वसंबंधिभ्यः (पत्नी-सुत-पितृव्य-मातुल-भ्रातृ-पितृष्वसृ-मातृष्वसात्मभगिनी-श्वशुर-गुरु-शिष्या-प्तेभ्यः क्रमेण प्रत्येकं) पृथक्पृथक् पिण्डान् दद्यात् ॥ ततः पिण्डं गृहीत्वा वदति । आब्रह्मणो ये पितृवंशजाता मातुस्तथा वंशभवा मदीयाः ॥ वंशद्वयेऽस्मिन् मम दासभूता भृत्यास्तथैवाश्रितसेवकाश्च ॥ मित्राणि सख्यः पशवश्च वृक्षा दृष्टाश्च पृष्टाश्च कृतोपकाराः ॥ जन्मान्तरे ये मम

१ पितुः श्राद्धे मासिके, सांवत्सरिके वा—(१) अमुकगोत्राय अस्मत्पित्रे अमुकशर्मणे वसुरूपाय एतत्तेऽन्नं०॥ (२) अमुकगोत्राय अस्मत्पितामहाय अमुकशर्मणे रुद्ररूपाय एतत्तेऽन्नं०॥ (३) अमुकगोत्राय अस्मत्प्रपितामहाय अमुकशर्मणे आदित्यरूपाय एतत्तेऽन्नं० ॥ २ मातुः श्राद्धे मासिके सांवत्सरिके वा (१) अमुकगोत्रायै अस्मन्मात्रे अमुकदायै वसुरूपायै एतत्तेऽन्नं० ॥ (२) अमुकगोत्रायै अस्मत्पितामह्यै अमुकदायै रुद्ररूपायै एतत्तेऽन्नं० ॥ (३) अमुकगोत्रायै अस्मत्प्रपितामह्यै अमुकदायै आदित्यरूपायै एतत्तेऽन्नं० ॥

संगताश्च तेभ्यः स्वधा पिण्डमहं ददामि ॥ पितृवंशे मृता ये च मातृवंशे तथैव च । गुरुश्वशुरबन्धूनां येचान्ये बान्धवाः स्मृताः ॥ ये मे कुले लुप्तपिण्डाः पुत्रदारविवर्जिताः । क्रियालोपगता ये च जात्यन्धाः पङ्गवस्तथा ॥ विरूपा आमगर्भाश्च ज्ञाताज्ञाताः कुले मम । तेभ्यः पिण्डो मया दत्तो ह्यक्षय्यमुपतिष्ठतु ॥ असिपत्रवने घोरे कुंभीपाके च ये गताः । तेषामुद्धरणार्थाय इमं पिण्डं ददाम्यहम् ॥ उच्छिन्नकुलवंशानां येषां दाता कुले नहि ॥ धर्मपिण्डो मया दत्तो ह्यक्षय्यमुपतिष्ठतु ॥ शेषमन्नं पुरतः स्थाप्य । हस्तलेपभाजः पितरः प्रीयन्ताम् ॥ पिण्डोपरि प्रत्यवनेजनं स्वधा इत्यवनेजनं कुर्यात् ॥ पिण्डसमीपे नीवीविसर्जनम् । नमो वः इति षडंजलिं करोति ॥ ॐ नमोवः पितरोरसाय १ । ॐ नमोवः पितरः शोषाय २ । ॐ नमोवः पितरो जीवाय ३ । ॐ नमोवः पितरः स्वधायै ४ । ॐ नमोवः पितरो घोराय ५ । ॐ नमोवः पितरो मन्यवे । नमोवः पितरः पितरो नमोवः ६ ॥ ॐ गृहान्नः पितरो दत्त सतोवः पितरो देष्मैतद्वः पितरो वासऽआधत्त ॥ उदङ्मुखः श्वासं नियम्य पुनरावृत्य प्रतिपिण्डं " एतद्वः पितरोवासः " इत्युक्त्वा त्रीणि सूत्राणि दद्यात् ॥ (सव्यम्) कुलाभिवृद्ध्यर्थं पिण्डपूजां करिष्ये ॥ पिण्डसंस्थाः पितरः अन्नं स्वधा नमः । पिण्डसंस्थाः पितरः गंधं स्वधा नमः । पिण्डसंस्थाः पितरः यवतिलाक्षताः स्वधा नमः । पिण्डसंस्थाः० तुळसीदलानि भृंगराजपत्रसहितानि स्वधा नमः । पिंडसंस्थाः पितरः धूपं स्व० न० ॥ पिंडसंस्थाः० दीपं स्व० न० ॥ पिंडसंस्थाः पितरः नैवेद्यं स्व० न० ॥ पिंडसंस्थाः पितरः फलमुखवासताम्बूलंसदक्षिणाकं स्वधा नमः । पिंडसंस्थाः पितरः नीराजनं स्व० न० । पिण्डसंस्थाः० पुष्पांजलिः स्वधा नमः । सर्वैः सह पिण्डान् नमस्कृत्य पिण्डस्यार्चनविधेः परिपूर्णताऽस्तु । अस्तु परिपूर्णता ।

चटोपरि सुप्रोक्षितादिकरणम् । शिवा आपः सन्तु । सन्तु शिवा आपः॥ सौमनस्यमस्तु । अस्तु सौमनस्यम् ॥ अक्षतं चारिष्टं चास्तु । अस्त्वक्षतमरिष्टं च ॥ जलं गृहीत्वा कुरुकुलसंज्ञकानां विश्वेषां देवानां यद्दत्तं कन्यागते सवितरि महालयापरपक्षश्राद्धे इदमन्नमुदकादिकं तदक्षय्यमस्तु ॥ एवं द्वितीयचटे ॥ (अपसव्यम्) पितृस्थानीयचटेषु । शिवा आपः सन्तु । सन्तु० ॥ सौमनस्यमस्तु । अस्तु सौ० ॥ अक्षतं चारिष्टं चास्तु । अस्त्वक्षत० ॥ अ० गोत्रेभ्यः अस्मत्पितृपितामहप्रपितामहेभ्यः सपत्नीकेभ्यः द्वितीयगोत्रेभ्यः मातामह–प्रमातामह–वृद्धप्रमातामहेभ्यः सपत्नीकेभ्यश्च मम समस्तपूर्वजेभ्यो यद्दत्तं कन्यागते सवितरि महालयापरपक्षश्राद्धे इदमन्नमुदकादिकं तदक्षय्यमस्तु ॥ (सव्यम्) महाविष्णवे शिवा आपः सन्तु० इत्यादि पूर्ववत् ॥ महाविष्णवे यद्दत्तं कन्या० इदमन्नमुदकादिकं तदक्षय्यमस्तु ॥ (अपसव्यम्) न्युब्जपात्रस्योपरिस्थितानि पवित्राणि पिण्डेषु न्यस्य पात्रमुत्तानं कृत्वा । (सव्यम्) अघोराः पितरः सन्तु । गोत्रं नोऽभिवर्द्धताम् । अभिवर्द्धतां वो गोत्रम् ॥ दातारो नोऽभिवर्द्धताम् । अभिव० ॥ संततिर्नोऽभिवर्द्धताम् । अभिव० ॥ श्रद्धा च नो मा व्यगमत् । मा व्यग० ॥ बहुदेयं च नोऽस्तु । अस्तु वो० ॥ अन्नं च नो बहु भवेत् । भवतु वो० ॥ अतिथींश्च लभामहे । लभ० ॥ एता आशिषः सत्याः सन्तु । सन्त्वेताः सत्याशिषः ॥ (अपसव्यम्) भो पितरः स्वधोच्यताम् । अस्तु स्वधा ॥ पिण्डमूले तिलोदकं निषिंचेत् । ॐ ऊर्जं वहन्तीरमृतं घृतम्पयः कीलालं परि-

१ पितुः मासिके सांवत्सरिक श्राद्धे–अमुकगोत्राणाम् अस्मत्पितृपितामहप्रपितामहानाम् अमुकामुकशर्मणां यद्दत्तमन्नमु० ॥ मातुः मासिके सांवत्सरिकश्राद्धे–अमुकगोत्राणाम् अस्मन्मातृपितामहीप्रपितामहीनाम् अमुकामुकदानां यद्दत्तमन्नमु०

रिप्सुतंम् ॥ स्वधास्थर्यंतुर्प्यतमेपितृन् ॥ $\frac{३४}{२}$ ॥ (सव्यम्) दक्षिणासंकल्पः। कुरुकुलससंज्ञकेभ्यो विश्वेभ्यो देवेभ्यो देवानां सुवर्णं तदभावे किंचिद्यथावद्दारिकं द्रव्यं दक्षिणामुखवाससताम्बूलं स्वाहा॥ एवं द्वितीयघटे ॥ (अपसव्यम्) मम प्रथमद्वितीयनानाविधगोत्रेभ्यः पितृभ्यः पितृणां रजतं तदभावे किंचिद्व्यावहारिकं द्रव्यं दक्षिणामुखवासताम्बूलं स्वधा॥ (सव्यम्) अतिथये महाविष्णवे दक्षिणामुखवासताम्बूलं स्वाहा ॥ स्वभाले तिलकं कुर्यात् । पिण्डोद्धरणम् ॥ स्थाल्यामवघ्राणमिघ्रति ॥ संवरमभ्युक्ष्य । पिण्डानां स्वस्थाने वासः ॥ पिण्डस्थाने इदमन्नं चंदनपुष्पे ॥ कुले कुलदीपकवृद्धिरस्तु ॥ (सव्यम्) वाजेवाजेति(दर्भैः) विसर्जनम्॥ॐ वाजेवाजेवतवाजिनोनोधनेषुविप्राऽअमृताऽऋतज्ञाः॥ अस्यमद्ध्वःपिबतमादयंद्ध्वन्तृप्तायातपथिभिर्देवयानैः ॥ ॥ $\frac{११}{२१}$ ॥ (अपसव्यम्।) उत्तिष्ठन्तु पितरः। (सव्येन) विश्वेदेवैः सह॥ (अपसव्यम्।) तिलोदकविसर्जनम्। भोजनपात्राण्युचालयेत् ॥ विकिरं त्यजेत्। (सव्यम्। आचम्य)। आशीर्वादः। आयुः प्रजां धनं विद्यां स्वर्गं मोक्षं सुखानि च ॥ प्रयच्छन्तु तथा राज्यं पितरः श्राद्धतर्पिताः ॥ यं यं कामं कामयते सोऽस्मिं समृद्ध्यते ॥ पूर्वोच्चरित० कुरुकुरससंज्ञकानां विश्वेषां देवानाम् (अपसव्यम्।) गोत्राणामस्मत्पितृ-पितामहप्रपितामहानां सपत्नीकानां द्वितीयगोत्राणामस्मन्मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहानां सपत्नीकानां गोत्राणामस्मत्समस्तपूर्वजानां वसुरूपाणां मम पितुर्वा अमुकस्य कन्यागते सवितरि महालयापरपक्षश्राद्धयज्ञाख्येन कर्मणा मम समस्तपितृस्वरूपी भगवान् जनार्दनवासुदेवः

१ पितृश्राद्धे मासिके मम पितु (अमुक) मासिकश्राद्धयज्ञाख्येन० ॥ सांवत्सरिके—मम पितु सांवत्सरिकश्राद्धयज्ञाख्येन० ॥ मातृश्राद्धे मासिके—मम मातुः (अमुक) मासिकश्राद्धयज्ञाख्येन० ॥ सांवत्सरिके—मम मातुः सांवत्सरिकश्राद्धयज्ञाख्येन० ॥

प्रीयताम् ॥ कृतेऽस्मिन् श्राद्धे यन्यूनमतिरिक्तं तत्सर्वं महाविष्णोः प्रसादात् परिपूर्णमस्तु । अस्तु०॥ (सव्यम्) तुलसीदलं गृहीत्वा। यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपःश्राद्धक्रियादिषु ॥ न्यूनं संपूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥ आचार्यभाले तिलककरणम् ॥ यथाशक्ति दक्षिणां दद्यात् ॥ श्राद्धसांगतासिद्ध्यर्थं यथाशक्ति दक्षिणां तुभ्यमहं संप्रददे ॥ गोनिष्क्रयीभूतं द्रव्यं श्राद्धयज्ञसिद्ध्यर्थमाचार्याय तुभ्यमहं संप्रददे ॥ आचार्यो ब्रूयात्। गयाकृतश्राद्धसफलमस्तु । पितॄणां प्रसादोऽस्तु। धनकनकसमृद्धिरस्तु॥ ॐ अच्युताय नमः। ॐ गयायै नमः ॐ गदाधराय नमः । ॐ पुण्डरीकाक्षाय नमः । ॐ विष्णवे नमः ॥

ब्राह्मणभोजनसङ्कल्पः— अद्यपूर्वोच्चरित० मम पितुः अमुक श्राद्धनिमित्तब्राह्मणभोजनसमाराधनेन मम पितृस्वरूपी जनार्दन वासुदेवः प्रियतां नमम ॥

गोग्राससङ्कल्पः— सुरभिर्वैष्णवी माता नित्यं विष्णुपदे स्थिता गोग्रासं च मया दत्तं सुरभे प्रतिगृह्यताम् ॥ इदं गोभ्यो न मम ॥

श्वानग्रासमंत्रः—द्वौ श्वानौ श्यामशबलौ वैवस्वतकुलोद्भवौ ताभ्यामन्नं प्रदास्यामि रक्षेतां पथि मां सदा ॥ इदं श्वभ्यां न मम ।

वायसान्नमंत्रः— यमोऽसि यमदूतोऽसि वायसोऽसि महाबलः तुभ्यमन्नं प्रदास्यामि वायस प्रतिगृह्यताम् ॥ इदं वायसेभ्यो न मम ।

इति ठाकरोपाह्वगीर्वाणविद्याभूषणशास्त्रिदुर्गाशङ्करतनूजयज्ञदत्तशर्मणा संयोजितो महालयचटश्राद्धप्रयोगः समाप्तः ॥

॥ इति महालयचटश्राद्धप्रयोगः ॥

॥ समाप्तोऽयं ग्रन्थः ॥

